Index/अनुक्रमणिका

01. Index/ अनुक्रमणिका 01
02. Regional Editor Board / Editorial Advisory Board 06/07
03. Referee Board 08
04. Spokesperson 10/11

(Science / विज्ञान)

05. Chromosomal Study In Some Medicinal Plants Of Central India (Dr. Manju Jain,Rimsha Rizvi) 12
06. Photocatalytic Degradation Of Cod In The Palakmati River Water By ZnO 18
(Dr. Kiran Patel, Dr. O. N. Choubey)
07. Beautiful Insulin Plant *Costus Igneus* Found In Mandleshwar District Khargon (M.P.) India 22
(Prof. Nirbhay Singh Solanki, Prof. S.C. Mehta)
08. Municipal Solid Waste Management In India- A Review (Suman Singh) 24
09. Some Ethnomedicinal Climbers Plants Used To Different Diseases By Local People 28
Of Vidisha District Of Madhy Pradesh (Dr. Sarita Ghanghat)
10. Ethanomedicinal Survey Of Plants Of Sehore District Showing Wound Healing Activity 30
(Dr. Rajesh Bakoriya)
11. Piles, Its Natural Treatment And Prevention (Dr. Rajesh Masatkar) 32
12. Photocatalytic Degradation Of Organic Contamination By ZnO - A Review 34
(Veer Singh Barde, Dr. Brijesh Pare)
13. Decline Of The Urban House Sparrow Passer Domesticus Population In Rewa (Nidhi Jaiswal) 38
14. Antagonism of normal leaf mycoflora of Aloe vera against the pathogenic Fusarium 41
oxysporum (Akhilesh Ayachi, Shilpa Kaurav)
15. Stochastic Analysis Of Two-Unit Cold Standby Repairable System Models (Dr. Ubed Afzal) 44
16. Soil Fertility Problems Of New Cropping Patterns In Madhya Pradesh (Dr. S. K. Udaipure) 52
17. Herbal Plant Catharanthus Roseus (Dr. Sushama Singh Majhi) 55
18. Extraction And Isolation Of Naringenin Using TLC Technique 57
(Supriya Chouhan, Dhananjay Dwivedi, Anil Kumar Gharia)
19. Foliar Sprays With Boron (Dr. S. K. Udaipure) 59
20. Sea Water As A Source Of Drinking Water- Desalting (Dr. Sadhna Goyal) 61

(Home Science / गृह विज्ञान)

21. Attributes Responsible For Changing Trends In Mojari And Jutti Craft 63
(Simerjeet Kaur, Karanjeet Kaur)
22. विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि पर शिक्षा के माध्यम के प्रभाव का अध्ययन (डॉ. आहुति साहू,डॉ. आभा तिवारी) 70
23. प्रभावशाली व्यक्तित्व के गुण एवं तकनीक 'व्यक्तित्व विकास के संदर्भ में' (कृष्णा शर्मा) 73

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

24. Consumers perception On Green Marketing (Dr. Shweta Mathur, Dr. Shiv Kumar Shriastava) 75

25. Cloud Accounting - A New Concept, Awreness & Challanges 79
(Dr. Rajendra Singh Waghela, Pawan Pushad)

26. Human Resource Management Strategies In Organisational Redesign (Dr. Vinita Tak) 83

27. Forensic Audit: Need Of The Hour For Fraud Investigations And Litigation Support 86
(Dr. Jyoti Chawla, Prof. Shuchi Gupta)

28. A Study Of Sickness Of Small And Cottage Industries And Resurgence Schemes 89
(Dr. Subodh Kumar Nalwaya)

29. A Study Of Impact Of Factors Affecting Loans Granted By Private Banks In Indore District 92
(Dr. Sandhya Amga)

30. Customer Satisfaction In E-Marketing In India (Akbar Ali) 94

31. राष्ट्रीकृत बैंको का मन्दसौर जिले के ग्रामीण अंचल के आर्थिक विकास में गैर कृषि (कुटीर उद्योग, लघु उद्योग) 97
में योगदान, प्रभाव एवं उनका विश्लेषण (नीरज राठौर)

32. पारिश्रमिक व्यवस्था का अध्ययन मालनपुर औद्योगिक क्षेत्र के संबंध में (डॉ. लॉरेन्स कुमार बौद्ध) 103

33. पश्चिम निमाड़ नगर पालिकाओं की आय के आर्थिक संसाधनों का अध्ययन (डॉ. प्रीति शाह) 106

34. किसान क्रेडिट कार्ड योजना में जिला सहकारी केंद्रीय बैंक मर्यादित मंदसौर का योगदान 108
(कीर्ति सक्सेना, डॉ. एन. के. पाटीदार)

35. सामुदायिक विकास में नाबार्ड का अभिदान (डॉ. संध्या आमगा) 111

36. बचत एवं विनियोग संबंधी अवधारणा (डॉ. एन. एल. गुप्ता, ऊँकार सिंह रावत) 114

37. भारतीय जनसंख्या, आवास एवं आवास ऋण (डॉ. एकता कक्कड़) 116

(Economics / अर्थशास्त्र)

38. Role Of Green Economy In India - Challenges And Opportunities (Dr. Snighdha Bhatt) 120

39. Gender Equality Is Smart Economics (Sujata Naik) 123

40. 'मेक-इन इंडिया' के द्वारा वैश्विक विनिर्माण की पहल (एक -भावी रूप रेखा के रूप में) (डॉ. लता जैन) 126

41. म. प्र. के धार जिले के बाग ब्लॉक मे सेंव उद्योग का आर्थिक अध्ययन (सुमन भंवर) 130

42. मध्य प्रदेश में मानव ससांधन से शिक्षा व रोजगार विकास (डॉ. आमोद कस्तवार) 133

43. भारत में लोहा इस्पात उद्योग - समस्याएँ एवं सुझाव (डॉ. सुनीता वाथरे, आस्था रजक) 136

44. शहरीकरण की समस्या (चुनौतियां) एवं समाधान हेतु प्रयास (डॉ. शाहीन परवीन) 138

45. प्लास्टिक के खतरे एवं निदान (डॉ. विभा वासुदेव) 140

46. भारतीय बैं किंग के विकास के चरण (डॉ. विजय प्रकाश मिश्रा) 142

47. वैश्वीकरण और भारत में बेरोजगारी, गरीबी एवं लिंगानुपात (स्नेहलता सिंह) 144

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

48. Legislative Control over Administration through Motion of Thanks on Governor's Address in Uttar Pradesh : A Case Study (Dr. Anvita Massand) 146

49. शहडोल जिले की बैगा जनजाति का शैक्षणिक स्वरूप- एक अध्ययन (डॉ. लता सिंह) 149

50. भारत में प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग - एक दृष्टिकोण (शानो खान) 153

51. संसदीय लोकतंत्र में सत्तापक्ष एवं विपक्ष में अंतर सम्बन्ध (डॉ. सीमा भार्गव) 156

52. गाँधी अम्बेडकर समझौता - (पूना पैक्ट 1932) (डॉ. मुकेश शारदे, डॉ. कमला गौतम) 158

53. पर्यावरण संरक्षण में भारतीय संविधान की भूमिका (डॉ. रजनी दुबे) 160

54. देश के विकास की योजना, नदी - जोड़ों परियोजना (डॉ. ज्ञानसिंह वास्कले) 162

(History / इतिहास)

55. जिला सतना की प्रमुख धर्मशालाओं का ऐतिहासिक महत्व - एक अध्ययन (डॉ. मो. स्वालकीन खान) 164

56. जिला सीधी की प्रमुख सरायें एवं धर्मशालाओं का ऐतिहासिक महत्व (डॉ. मो. स्वालकीन खान) 167

57. प्राचीन काल से स्वतन्त्रता प्राप्ति तक काशी नगरी की शिक्षा व्यवस्था का अध्ययन (कृष्ण कुमार पाण्डेय, डॉ. रामरतन साहू) 170

58. भीम बैठका का ऐतिहासिक महत्व (डॉ.कुन्ती वराठे) 173

(Geography / भूगोल)

59. जनपद रूद्रप्रयाग के ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक - आर्थिक कारकों का स्वास्थ्य दशाओं पर प्रभाव (सुनीता रावत, मनोज टम्टा) 175

60. सागर जिले में सिंचाई का कृषि उत्पादकता पर प्रभाव (भावना पटेल) 180

61. मन्दसौर जिले में कृषि व्यवस्था में बदलते प्रतिरूप (डॉ. श्यामसुन्दर कुमावत) 183

(Sociology / समाजशास्त्र)

62. भील जनजाति में सामाजिक -आर्थिक समस्याएँ (त्रिभुवन सिंह झाला) 186

63. भारतीय संविधान में आदिवासी (प्रो. अनामिका प्रजापति) 189

64. शासन की पर्यावरण नीति का आदिवासी क्षेत्रों में क्रियान्वयन एवं उनके जनजीवन पर प्रभाव (मध्यप्रदेश राज्य के विशेष सन्दर्भ में) (डॉ. हुक्का कटारा) 192

65. भील जनजाति की लोक कथाओं में संवेदना (डॉ. बारु पटेल) 195

66. वैश्वीकरण का भारतीय परिवारों पर प्रभाव- एक विवेचन (डॉ. ज्योति सिंह) 197

67. भारत में सरोगेसी और कानून (डॉ. ज्योति मेहता) 199

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

68. Doctorine Of Welfare State In The Novel Of Amish Tripathi's Sita - Warrior Of Mithila 201
(Rakesh Prasad Pandey, Lok Narayan Mishra)
69. Nature, In The Poetry Of Tagore & Page (Dr. Manisha Joshi) 204
70. Diasporic Writings In English Literature (Dr. Vedprakash Malani) 207
71. Thematic Re-Appraisal Of Girish Karnad's Plays (Dr. Niranjana Shrivastava Malani) 209
72. A Verbal Opera, Blended With The Wordly And Cynical (Dr. Manisha Mathur) 211
73. Mahesh Dattani's Tara - A Sociological Study Of Women (Sonakshi Solanki) 213

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

74. अस्तित्ववादी चेतना और मोहन राकेश - औपन्यासिक संदर्भ में (रेखा) 215
75. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में राजनीतिज्ञों का प्रश्रय प्राप्त असामाजिक तत्त्वों द्वारा उत्पन्न....................... 218
राजनैतिक साम्प्रदायिकता के सन्दर्भों का अनुशीलन (भारती वर्मा)
76. आधुनिक हिन्दी कविता में दलित - काव्यधारा (डॉ. आशुतोष तिवारी) 221
77. समकालीन हिन्दी कविता एवं कवयित्रियाँ (डॉ. संध्या दुबे) 224
78. अजहर हाशमी के पद्य साहित्य में व्यंग्य (डॉ. मंशाराम बघेल) 227
79. वेदों में शिव तत्व (प्रमिला यादव)... 229
80. मालती जोशी का कृतित्व (सुरेश प्रसाद चौधरी) 231
81. रामचरित मानस में सामाजिक समरसता (डॉ. मंजुला जोशी) 233
82. इलेक्ट्रानिक मीडिया साहित्य के नये प्रयोग (डॉ. अमित शुक्ल)... 235
83. बाणभट्ट का वैशिष्ट्य एवं अवदान (डॉ. कल्पना मकवाने).. 237
84. हिन्दी की संतकाव्य परंपरा में मुनि क्षमासागर का योगदान (नीलम जैन) 239
85. निमाड़ अँचल के आदिवासियों का सामाजिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन (डॉ. मनजीत अरोरा) 241
86. हिन्दी काव्य धारा में दलित भावना के विविध आयामों का अध्ययन (डॉ. आशुतोष तिवारी) 243
87. 'मन्नू भंडारी के कथा साहित्य में' नारी मुक्ति आंदोलन : गतिरोध की मीमांसा और खीझ (डॉ. अंजना यादव) ... 245
88. जयशंकर प्रसाद के नाटक और राष्ट्रीय बोध (डॉ. संगीता निर्वेल) 247
89. बलचनमा - नागार्जुन की वैचारिक क्रान्ति (डॉ. विजय लक्ष्मी राय) 249
90. नागार्जुन के उपन्यास में नारी विमर्श (कुम्भीपाक उपन्यास के विशेष संदर्भ में) (देवेन्द्र सिंह ठाकुर, डॉ. मंजुला जोशी)251
91. भारतीय शिक्षण प्रणाली में ऋग्वेद का महत्व (डॉ. कोयल विश्वास) 253
92. महिलाओं के विकास के बढते कदम में महिला पत्रकारिता की अहम भूमिका (डॉ. एम.चंद्रशेखर) 255
93. मृणाल पाण्डे के साहित्य में स्त्री-विमर्श (डॉ. मंजू देवी मिश्रा) 257
94. प्रेमचंद की कहानियों का तात्कालिक प्रभाव (प्रीति बबेले).. 259
95. अजहर हाशमी के गद्य साहित्य में व्यंग्य (डॉ. मंशाराम बघेल) 261
96. कथा साहित्य में अमृतलाल नागर के मानवीय मूल्यों का अध्ययन (अलका चौहान)................................ 263
97. इक्कीसवीं सदी के हिन्दी साहित्य में नारी लेखन (प्रो. झेलम चंद्रकांत झेंडे) 265
98. 'डोआठन' कहानी दी पार राधा इक आदर्श मां दे रूपै च (कामिनी देवी) 267

(Music / संगीत) (Design)

99. जैन भक्त कवि भागचंद जी की रचनाओं का अध्ययन (डॉ. श्रीपाद आरोणकर) 268
100. सौंदर्य की अवधारणा कला एवं संगीत के परिप्रेक्ष्य में (प्रो. वनिता धुर्वे , प्रो. रवीन्द्र कु. धुर्वे) 271
101. कत्थक नृत्य में सहायक वाद्यों की भूमिका एवं प्रयोग ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य के संदर्भ में (चन्द्रसिंह केलवा) 273
102. Jodha Akbar Costumes - A Timeless Inspiration For Indian Weddings 275
(Sameeksha Gautam, Rajeev Kumar)
103. Designing The Costume For Mythological Show Mahadev - By Modern Fashion 279
Designer (Aparna Joshi, Rajeev Kumar)

(Education / शिक्षा) (Physical Education / शारीरिक शिक्षा)

104. शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय के विद्यार्थियों में मित्रता की भावना का अध्ययन 282
(डॉ. निशा श्रीवास्तव, पूनम रावत, शाहिना बेगम)

105. भारत की अभिनव पहल - निरक्षरता के अंधकार का हल (रूपेन्द्र मुनि, डॉ. अश्विनी गौड) 285

106. विभिन्न भारतीय शिक्षा आयोगों में अध्यापक शिक्षा (डॉ. रश्मि पण्ड्या) 288

107. A Comparison Between Anthropometric Measurements Of Football And Hockey 290
Players (Ankush Kanwar, Dr. Om Prakash Aneja)

(Others / अन्य)

108. The Heritage Of Undivided Punjab (Sikh Wall Paintings) (Dr. Rupali Razdan) 294

109. Age Of Dependent Child And Social Support (Dr. Mamta Barman) 296

110. क्या पेरिस जलवायु समझौता अफ्रीका को जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न हुई समस्याओं से निजात दिलाने में 298
सक्षम हो सकता है ? (डॉ. रश्मि कपूर)

111. चिकित्सकीय पद्धति में आचार्य चाणक्य के नीतिगत विधान (देवदास साकेत) 301

112. जागनी अभियान और सामाजिक चेतना का दार्शनिक चिन्तन (मौसमी सोलंकी) 304

113. राजस्थान के किसान आंदोलन (डॉ. चित्रा तंवर) 306

114. वैदिक आख्यान एवं उनका महत्व (डॉ. कल्पना मकवाने) 308

115. स्वामी विवेकानंद दर्शन के अनुसार युवा शक्ति की आवश्यकता है (डॉ. इन्दु डुडवे) 310

116. वेदवर्णित राष्ट्रधर्म (डॉ. सुरेन्द्र प्रसाद तिवारी) 312

117. Einstein: Glimpses From Personal Life & Legacy (Ashok Kumar Verma) 313

118. Shape of a Node in Tracing of Algebraic Curves (Anil Maheshwari, Bhuvnesh Kumar Sharma) 319

119. A Research Study on the Challenges and Best Practices of Multi-Skill Development 321
Among Human Resources Professionals (Dr. Syed Saleem Aquil)

120. Rajarao's Profound Exploration of Traditional Indian Themes in his Novels (Dr. Sitaram) 324

121. शहडोल जिले के पर्यटन एवं धार्मिक स्थल के महत्व का सामन्य परिचय (अमित सिंह भदौरिया) 327

122. Party System in India: One-Party Dominance System to Bi-Nodal Multiparty System 330
(D.C. Chauhan)

123. Indian Foreign Policy With Reference To The Emergence Of Non-Alignment 338
(Dr. Abhimanyu Singh Chauhan)

124. Socio-Emotional Impact of the World of Warcraft (Dr. Chakrapani Upadhyay) 340

125. अर्थशास्त्र का इतिहास : एक व्यापक अध्ययन (डॉ. दिलीप पीपाड़ा) 342

126. राजा रणमत सिंह का ऐतिहासिक परिचय (डॉ. फिरोज मोहम्मद शेख) 345

Regional Editor Board - International & National

1.	Dr. Manisha Thakur	-	Fulton College, Arizona State University, America.
2.	Mr. Ashok Kumar	-	Employbility Operations Manager, Action Training Centre Ltd. London, U.K.
3.	Ass. Prof. Beciu Silviu	-	Vice Dean (Management) Agriculture & Rural Development, UASVM, Bucharest, Romania.
4.	Mr. Khgendra Prasad Subedi	-	Senior Psychologist, Public Service Commission, Central Office, Anamnagar, Kathmandu, Nepal.
5.	Prof. Dr. G.C. Khimesara	-	Former Principal, Govt. PG College, Mandsaur (M.P.) India
6.	Prof. Dr. Pramod Kr. Raghav	-	Research Guide, Jyoti Vidhyapeeth Women University, Jaipur (Raj.) India
7.	Prof. Dr. N.S. Rao	-	Director, Janardhanrai Nagar Raj. Vidhyapeeth University, Udiapur (Raj.) India
8.	Prof. Dr. Anoop Vyas	-	Former Dean, Commerce, Devi Ahilya University, Indore (India) India
9.	Prof. Dr. P.P. Pandey	-	HOD, Commerce(Dean), Avadesh Pratapsingh University, Rewa (M.P.) India
10.	Prof. Dr. Sanjay Bhayani	-	HOD, Business Management Deptt., Saurashtra University, Rajkot (Guj.) India
11.	Prof. Dr. Pratap Rao Kadam	-	HOD, Commerce, Govt. Girls PG College, Khandwa (M.P.) India
12.	Prof. Dr. B.S. Jhare	-	Professor, Commerce Deptt., Shri Shivaji College, Akola (Mh.) India
13.	Prof. Dr. Sanjay Khare	-	Prof., Sociology, Govt. Auto. Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.) India
14.	Prof. Dr. R.P. Upadhayay	-	Exam Controller, Govt. Kamlaraje Girls Auto. PG College, Gwalior (M.P.) India
15.	Prof. Dr. Pradeep Kr. Sharma	-	Professor, Govt. Hamidia Arts & Commerce College, Bhopal (M.P.) India
16.	Prof. Akhilesh Jadhav	-	Prof., Physics, Govt. J. Yoganandan Chattisgarh College, Raipur (C.G.) India
17.	Prof. Dr. Kamal Jain	-	Prof., Commerce, Govt. PG College, Khargone (M.P.) India
18.	Prof. Dr. D.L. Khadse	-	Prof., Commerce, Dhanvate National College, Nagpur (Maharastra) India
19.	Prof. Dr.Vandna Jain	-	Prof., Hindi, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.) India
20.	Prof. Dr. Hardayal Ahirwar	-	Prof.,Economics, Govt. PG College, Shahdol (M.P.) India
21.	Prof. Dr. Sharda Trivedi	-	Retd. Professor, Home Science, Indore (M.P.) India
22.	Prof. Dr. Usha Shrivastav	-	HOD, Hindi Deptt., Acharya Institute of Graduate Study, Soldevanali, Bengaluru (Karnataka) India
23.	Prof. Dr. G. P. Dawre	-	Professor, Commerce, Govt. College, Badwah (M.P.) India
24.	Prof. Dr. H.K. Chouarsiya	-	Prof., Botany, T.N.V. College, Bhagalpur (Bihar) India
25.	Prof. Dr. Vivek Patel	-	Prof., Commerce, Govt. College, Kotma, Distt., Anooppur (M.P.) India
26.	Prof. Dr. Dinesh Kr. Chaudhary	-	Prof., Commerce, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.) India
27.	Prof. Dr. P.K. Mishra	-	Prof., Zoological, Govt. PG College, Betul (M.P.) India
28.	Prof. Dr. Jitendra K. Sharma	-	Prof., Commerce, Maharishi Dayanand Uni. Centre, Palwal (Haryana) India
29.	Prof. Dr. R. K. Gautam	-	Prof., Govt. Manjkuwar Bai Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.) India
30.	Prof. Dr. Gayatri Vajpai	-	Professor, Hindi, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.) India
31.	Prof. Dr. Avinash Shendare	-	HOD, Pragati Arts & Commerce College, Dombivali, Mumbai (Mh.) India
32.	Prof. Dr. J.C. Mehta	-	Fr. HOD, Research Centre, Commerce, Devi Ahilya Uni., Indore (M.P.) India
33.	Prof. Dr. B.S. Makkad	-	HOD, Research Centre Commerce, Vikram University, Ujjain (M.P.) India
34.	Prof. Dr. P.P. Mishra	-	HOD, Maths, Chattrasal Govt. PG College, Panna (M.P.) India
35.	Prof. Dr. Sunil Kumar Sikarwar	-	Professor, Chemistry, Govt. PG College, Jhabua (M.P.) India
36.	Prof. Dr. K.L. Sahu	-	Professor, History, Govt. PG College, Narsinghpur (M.P.) India
37.	Prof. Dr. Malini Johnson	-	Professor, Botany, Govt. PG College, Mahu (M.P.) India
38.	Prof. Dr. Vishal Purohit	-	M.L.B. Govt. Girls PG College, Kila Miadan, Indore (M.P.) India

Editorial Advisory Board, INDIA

1. Prof. Dr. Narendra Shrivastav - Scientist , ISRO, Bengaluru (Karnataka) India
2. Prof. Dr. Aditya Lunawat - Director, Swami Vivekanand Career Guidance deptt. M.P. Higher Education, M.P. Govt., Bhopal (M.P.) India
3. Prof. Dr. Sanjay Jain - Former Controller, Madhya Pradesh Professional Examination Board Bhopal (M.P.) India
4. Prof. Dr S.K. Joshi - Former Principal, Govt. Arts & Science College, Ratlam (M.P.) India
5. Prof. Dr. J.P.N. Pandey - Fr. Principal, Govt. Auto.Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.) India
6. Prof. Dr. Sumitra Waskel - Principal, Govt. Girls PG College, Moti Tabela, Indore (M.P.) India
7. Prof. Dr. P.R. Chandelkar - Principal, Govt. Girls PG College, Chhindwara (M.P.) India
8. Prof. Dr. Mangal Mishra - Principal, Shri Cloth Market, Girls Commerce College, Indore (M.P.) India
9. Prof. Dr. R.K. Bhatt - Former Principal, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.) India
10. Prof. Dr. Ashok Verma - Former HOD, Commerce (Dean) Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
11. Prof. Dr. Rakesh Dhand - HOD, Student Welfare Deptt., Vikram University, Ujjain (M.P.) India
12. Prof. Dr. Anil Shivani - HOD, Commerce /Management Deptt. Shri Atal Bihari Vajpai Hindi University, Bhopal (M.P.) India
13. Prof. Dr. PadamSingh Patel - HOD, Commerce Deptt., Govt. College, Mahidpur (M.P.) India
14. Prof. Dr. Manju Dubey - HOD (Dean), Home Science Deptt. Jiwaji University, Gwalior (M.P.) India
15. Prof. Dr. A.K. Choudhary - Professor, Psychology, Govt. Meera Girls College, Udiapur (Raj.) India
16. Prof. Dr. T. M. Khan - Principal, Govt. College, Dhamnod, Distt. Dhar (M.P.) India
17. Prof. Dr. Pradeep Singh Rao - Principal, Govt. College, Sailana, Distt. Ratlam (M.P.) India
18. Prof. Dr. K.K. Shrivastava - Professor, Eco., Vijaya Raje Govt. Girls PG College, Gwalior (M.P.) India
19. Prof. Dr. Kanta Alawa - Professor, Pol. Sci., S.B.N.Govt. PG College, Badwani (M.P.) India
20. Prof. Dr. S.K. Jain - Professor, Commerce, Govt. PG College, Jhabua (M.P.) India
21. Prof. Dr. Kishan Yadav - Asso. Professor, Research Centre Bundelkhand College, Jhasi (U.P.) India
22. Prof. Dr. B.R. Nalwaya - Chairman,Commerce Deptt.,Vikram University, Ujjain (M.P.) India
23. Prof. Dr. Purshottam Gautam - Dean, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
24. Prof. Dr. Natwarlal Gupta - HOD, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
25. Prof. Dr. S.C. Mehta - Professor/HOD, Govt. Bhagat Singh PG College, Jaora (M.P.) India
26. Prof. Dr. Tapan Chore - HOD,Economics, Vikram University, Ujjain (M.P.) India

****

Referee Board

Maths - (1) Prof. Dr. V.K. Gupta, Director Vedic Maths - Research Centre, Ujjain (M.P.)
Physics - (1) Prof. Dr. R.C. Dixit, Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.)
(2) Prof. Dr. Neeraj Dubey, Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.)
Computer Science - (1) Prof. Dr. Umesh Kumar Singh, HOD, Computer Study Centre, Vikram University, Ujjain (M.P.)
Chemistry - (1) Prof. Dr. Manmeet Kaur Makkad, Govt. Kalidas Girls College,Ujjain (M.P.)
Botany - (1) Prof. Dr. Suchita Jain, Govt. Girls PG College, Kota (Raj.)
(2) Prof. Dr. Akhilesh Aayachi, Govt. Adarsh Science College, Jabalpur (M.P.)
Life Science - (1) Prof. Dr. Manjulata Sharma, M.S.J. Govt. College, Bharatpur (Raj.)
- (2) Prof. Dr. Amrita Khatri, Mata Jijabai Govt. Girls PG College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
Statitics - (1) Prof. Dr. Ramesh Pandya, Govt. Arts - Commerce College, Ratlam (M.P.)
Military Science - (1) Prof. Dr. Kailash Tyagi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
Biology - (1) Dr. Kanchan Dhingara, Govt. M.H. Home Science College, Jabalpur (M.P.)
Geology - (1) Prof. Dr. R.S. Raghuvanshi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
(2) Prof. Dr. Suyesh Kumar, Govt. Adarsh College, Gwalior (M.P.)
Medical Science - (1) Dr.H.G. Varudhkar, R.D. Gardi Medical College, Ujjain (M.P.)
Microbiology Sci. - (1) Anurag D. Zaveri, Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat)

***** Commerce *****

Commerece - (1) Prof. Dr. P.K. Jain, Govt. Hamidia College, Bhopal (M.P.)
(2) Prof. Dr. Shailendra Bharal, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.)
(3) Prof. Dr. Laxman Parwal, Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.)

***** Management *****

Management - (1) Prof. Dr. Rameshwar Soni, HOD, Research Centre, Vikram University, Ujjain (M.P.)
(2) Prof. Dr. Anand Tiwari, Govt. Autonomus PG Girls Excellence College, Sagar (M.P.)
Human Resources - (1) Prof. Dr. Harwinder Soni, Pacific Business School, Udaipur (Raj.)
Business Administration - (1) Prof. Dr. Kapildev Sharma, Govt. Girls PG College, Kota (Raj.)

***** Law *****

Law - (1) Prof. Dr. S.N. Sharma, Principal, Govt. Madhav Law College, Ujjain (M.P.)
(2) Prof. Dr. Narendra Kumar Jain, Principal, Shri Jawaharlal Nehru PG Law College, Mandsaur (M.P.)

***** Arts *****

Economics - (1) Prof. Dr. P.C. Ranka, Sri Sitaram Jaju Govt. Girls PG College, Neemuch (M.P.)
(2) Prof. Dr. J.P. Mishra, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.)
(3) Prof. Dr. Anjana Jain, M.L.B. Govt. Girls PG College, Kila Maidan, Indore (M.P.)
Political Science - (1) Prof. Dr. Ravindra Sohoni, Govt. PG College, Mandsaur (M.P.)
(2) Prof. Dr. Anil Jain, Govt. Girls College, Ratlam (M.P.)
(3) Prof. Dr. Sulekha Mishra, Mankuwar Bai Govt. Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.)
Philosophy - (1) Prof. Dr. Hemant Namdev, Govt. Madhav Arts, Commerce & Law College, Ujjain (M.P.)
Sociology - (1) Prof. Dr. Uma Lavania, Govt. Girls College, Bina (M.P.)
(2) Prof. Dr. H.L. Phulvare, Govt. PG College, Dhar (M.P.)
(3) Prof. Dr. Indira Burman, Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P.)
Hindi - (1) Prof. Dr. Kala Joshi , ABV Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.)

	(2)	Prof. Dr. Chanda Talera Jain, HOD Research Centre, Devi Ahilya University, Indore (M.P.)
	(3)	Prof. Dr. Jaya Priyadarshini Shukla, Vansthali Vidyapeeth (Raj.)
	(4)	Prof. Dr. Amit Shukla, Govt. Thakur Ranmatsingh College, Rewa (M.P.)
English -	(1)	Prof. Dr. Ajay Bhargava, Govt. College, Badnagar (M.P.)
	(2)	Prof. Dr. Manjari Agnihotri, Govt. Girls College, Sehore (M.P.)
Sanskrit -	(1)	Prof. Dr. Bhawana Srivastava, Govt. Autonomus Maharani Laxmibai Girls PG College, Bhopal (M.P.)
	(2)	Prof. Dr. Balkrishan Prajapati, Govt. PG College, Ganjbasauda, Distt. Vidisha (M.P.)
History -	(1)	Prof. Dr. Naveen Gidiyan, Govt. Autonomus Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.)
Geography -	(1)	Prof. Dr. Rajendra Srivastava, Govt. College, Pipliya Mandi, Distt. Mandsaur (M.P.)
	(2)	Prof. Kajol Moitra, Dr. C.V. Raman University, Bilaspur (C.G.)
Psychology -	(1)	Prof. Dr. Kamna Verma, Principal, Govt. Rajmata Sindhiya Girls PG College, Chhindwara (M.P.)
	(2)	Prof. Dr. Saroj Kothari, Govt. Maharani Laxmibai Girls PG College, Indore (M.P.)
Drawing -	(1)	Prof. Dr. Alpana Upadhyay, Govt. Madhav Arts-Commerce-Law College. Ujjain (M.P.)
	(2)	Prof. Dr. Rekha Srivastava, Maharani Laxmibai Govt. Girls PG College, Bhopal (M.P.)
	(3)	Prof. Dr. Yatindera Mahobe, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.)
Music/Dance -	(1)	Prof. Dr. Bhawana Grover (Kathak),Swami Vivekanand Subharti University, Meerut (U.P.)
	(2)	Prof. Dr. Sripad Aronkar, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.)

***** Home Science *****

Diet/Nutrition Science -	(1)	Prof.Dr. Pragati Desai, Govt. Maharani Laxmibai Girls PG College, Indore (M.P.)
	(2)	Prof. Madhu Goyal, Swami Keshavanand Home Science College, Bikaner (Raj.)
	(3)	Prof. Dr. Sandhya Verma, Govt. Arts & Commerce College, Raipur (Chhattisgarh)
Human Development -	(1)	Prof. Dr. Meenakshi Mathur, HOD, Jainarayan Vyas University, Jodhpur (Raj.)
	(2)	Prof. Dr. Abha Tiwari, HOD, Research Centre, Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.)
Family Resource Management -	(1)	Prof. Dr. Manju Sharma, Mata Jijabai Govt. Girls PG College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
	(2)	Prof. Dr. Namrata Arora, Vansthali Vidhyapeeth (Raj.)

***** Education *****

Education -	(1)	Prof. Dr. Manorama Mathur, Mahindra College of Education, Bangluru (Karnataka)
	(2)	Prof. Dr. N.M.G. Mathur, Principal/Dean, Pacific EducationCollege, Udaipur (Raj.)
	(3)	Prof. Dr. Neena Aneja, Principal, A.S. College Of Education, Khanna (Punjab)
	(4)	Prof. Dr. Satish Gill, Shiv College of Education,Tigaon, Faridabad (Haryana)

***** Architecture *****

Architecture -	(1)	Prof. Kiran P. Shindey, Principal,School of Architecture,IPS Academy, Indore (M.P.)

***** Physical Education *****

Physical Education -	(1)	Prof. Dr. Joginder Singh, Physical Education, Pacific University, Udaipur (Raj.)

***** Library Science *****

Library Science -	(1)	Dr. Anil Sirothia, Govt. Maharaja College, Chhattarpur (M.P.)

****

Spokesperson's

1. Prof. Dr. Davendra Rathore - Govt. PG College, Neemuch (M.P.)
2. Prof. Smt. Vijaya Wadhwa - Govt. Girls PG College, Neemuch (M.P.)
3. Dr. Surendra Shaktawat - Gyanodaya Institute of Management - Technology, Neemuch (M.P.)
4. Prof. Dr. Devilal Ahir - Govt. College, Jawad, Distt. Neemuch (M.P.)
5. Shri Ashish Dwivedi - Govt. College, Manasa, Distt. Neemuch (M.P.)
6. Prof. Manoj Mahajan - Govt. College, Sonkach, Distt. Dewas (M.P.)
7. Shri Umesh Sharma - Krishna Education College, Javi, Distt. Neemuch (M.P.)
8. Prof. Dr. S.P. Panwar - Govt. PG College, Mandsaur (M.P.)
9. Prof. Dr. Puralal Patidar - Govt. Girls College, Mandsaur (M.P.)
10. Prof. Dr. Kshitij Purohit - Jain Arts, Commerce & Science College, Mandsaur (M.P.)
11. Prof. Dr. N.K. Patidar - Govt. College, Pipliyamandi, Distt. Mandsaur (M.P.)
12. Prof. Dr. Y.K. Mishra - Govt. Arts & Commerce College, Ratlam (M.P.)
13. Prof. Dr. Suresh Kataria - Govt. Girls College, Ratlam (M.P.)
14. Prof. Dr. Abhay Pathak - Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.)
15. Prof. Dr. Malsingh Chouhan - Govt. College, Sailana, Distt. Ratlam (M.P.)
16. Prof. Dr. Gendalal Chouhan - Govt. Vikram College, Khachrod, Distt. Ujjain (M.P.)
17. Prof. Dr. Prabhakar Mishra - Govt. College, Mahidpur, Distt. Ujjain (M.P.)
18. Prof. Dr. Prakash Kumar Jain - Govt. Madhav Arts, Commerce & Law College, Ujjain (M.P.)
19. Prof. Dr. Kamla Chauhan - Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.)
20. Prof. Abha Dixit - Govt. Girls PG College, Ujjain (M.P.)
21. Prof. Dr. Pankaj Maheshwari - Govt. College, Tarana, Distt. Ujjain (M.P.)
22. Prof. Dr. D.C. Rathi - Swami Vivekanand Career Gudiance Deptt., Higher Education Deptt., M.P. Govt., Indore (M.P.)
23. Prof. Dr. Anita Gagrade - Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.)
24. Prof. Dr. Sanjay Pandit - Govt. M.J.B. Girls PG College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
25. Prof.Dr. Rambabu Gupta - Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.)
26. Prof. Dr. Anjana Saxena - Govt. Maharani Laxmibai Girls PG College, Indore (M.P.)
27. Prof. Dr. Sonali Nargunde - Journalism & Mass Comm .Research Centre, D.A.V.V., Indore (M.P.)
28. Prof. Dr. Bharti Joshi - Life Education Department, Devi Ahilya University, Indore (M.P.)
29. Prof. Dr. M.D. Somani - Govt. M.J.B. Girls PG College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
30. Prof. Dr. Priti Bhatt - Govt. N.S.P. Science College, Indore (M.P.)
31. Prof. Dr. Sanjay Prasad - Govt. College, Sanwer, Distt. Indore (M.P.)
32. Prof. Dr. Meena Matkar - Suganidevi Girls College, Indore (M.P.)
33. Prof. Dr. Mohan Waskel - Govt. College, Thandla Distt. Jhabua (M.P.)
34. Prof. Dr. Nitin Sahariya - Govt. College, Kotma Distt. Anooppur (M.P.)
35. Prof. Dr. Manju Rajoriya - Govt. Girls College, Dewas (M.P.)
36. Prof. Dr. Shahjad Qureshi - Govt. New Arts & Science College, Mundi, Distt. Khandwa (M.P.)
37. Prof. Dr. Shail Bala Sanghi - Maharani Lakshmibai Govt. Girls PG College, Bhopal (M.P.)
38. Prof. Dr. Praveen Ojha - Shri Bhagwat Sahay Govt. PG College, Gwalior (M.P.)
39. Prof. Dr. Omprakash Sharma - Govt. PG College, Sheopur (M.P.)
40. Prof. Dr. S.K. Shrivastava - Govt. Vijayaraje Girls PG College, Gwalior (M.P.)
41. Prof. Dr. Anoop Moghe - Govt. Kamlaraje Girls PG College, Gwalior (M.P.)
42. Prof. Dr. Hemlata Chouhan - Govt. College, Badnagar (M.P.)
43. Prof. Dr. Maheshchandra Gupta - Govt. PG College, Khargone (M.P.)
44. Prof. Dr. Mangla Thakur - Govt. PG College, Badhwah, Distt. Khargone (M.P.)
45. Prof. Dr. K.R. Kumhekar - Govt College, Sanawad, Distt. Khargone(M.P.)
46. Prof. Dr. R.K. Yadav - Govt. Girls College, Khargone (M.P.)

47.	Prof. Dr. Asha Sakhi Gupta	-	Govt. PG College, Badwani (M.P.)
48.	Prof. Dr. Hemsingh Mandloi	-	Govt. PG College, Dhar (M.P.)
49.	Prof. Dr. Prabha Pandey	-	Govt. PG College, Mehar, Distt. Satna (M.P.)
50.	Prof. Dr. Rajesh Kumar	-	Govt. College, Amarpatan, Distt. Satna (M.P.)
51.	Prof. Dr. Ravendra singh Patel	-	Govt. PG College, Satna (M.P.)
52.	Prof. Dr. Manoharlal Gupta	-	Govt. PG College, Rajgarh, Biora (M.P.)
53.	Prof. Dr. Madhusudan Prakash	-	Govt. College, Ganjbasauda, Distt. Vidisha (M.P.)
54.	Prof. Dr. Yuwraj Shirvatava	-	Dr. C.V. Raman Univeristy, Bilaspur (C.G.)
55.	Prof. Dr. Sunil Vajpai	-	Govt. Tilak PG College, Katni (M.P.)
56.	Prof. Dr. B.S. Sisodiya	-	Govt. PG College, Dhar (M.P
58.	Prof. Dr. A. K. Pandey	-	Govt. Girls College, Satna (M.P.)
58.	Prof. Dr. Shashi Prabha Jain	-	Govt. PG College, Agar-Malwa (M.P.)
59.	Prof. Dr. Niyaz Ansari	-	Govt. College, Sinhaval, Distt. Sidhi (M.P.)
60.	Prof. Dr. ArjunSingh Baghel	-	Govt. College, Harda (M.P.)
61.	Dr. Suresh Kumar Vimal	-	Govt. College, Bansadehi, Distt. Betul (M.P.)
62.	Prof. Dr. Amar Chand Jain	-	Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.)
63.	Prof. Dr. Rashmi Dubey	-	Govt. Autonomus Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.)
64.	Prof. Dr. A.K. Jain	-	Govt. PG College, Bina, Distt. Sagar (M.P.)
65.	Prof. Dr. Sandhya Tikekar	-	Govt. Girls College, Bina, Distt. Sagar (M.P.)
66.	Prof. Dr. Rajiv Sharma	-	Govt. Narmada PG College, Hoshangabad (M.P.)
67.	Prof. Dr. Rashmi Srivastava	-	Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P.)
68.	Prof. Dr. Laxmikant Chandela	-	Govt. Autonomus PG College, Chhindwara (M.P.)
69.	Prof. Dr. Balram Singotiya	-	Govt. College, Saunsar, Distt. Chhindwara (M.P.)
70.	Prof. Dr. Vimmi Bahel	-	Govt. College, Kalapipal, Distt. Shajapur (M.P.)
71.	Prof. Aprajita Bhargava	-	R.D.Public School, Betul (M.P)
72.	Prof. Dr. Meenu Gajala Khan	-	Govt. College, Maksi, Distt. Shajapaur (M.P.)
73.	Prof. Dr. Pallavi Mishra	-	Govt. College, Mauganj Distt. Rewa (M.P.)
74.	Prof. Dr. N.P. Sharma	-	Govt. College, Datia (M.P.)
75.	Prof. Dr. Jaya Sharma	-	Govt. Girls College, Sehore (M.P.)
76.	Prof. Dr. Sunil Somwanshi	-	Govt. College, Nepanagar, Distt. Burhanpur (M.P.)
77.	Prof. Dr. Ishrat Khan	-	Govt. College, Raisen (M.P.)
78.	Prof. Dr. Kamlesh Singh Negi	-	Govt. PG College, Sehore (M.P.)
79.	Prof. Dr. Bhawana Thakur	-	Govt. College, Rehati, Distt. Sehore (M.P.)
80.	Prof. Dr. Keshavmani Sharma	-	Pandit Balkrishan Sharma New Govt. College, Shajapur (M.P.)
81.	Prof. Dr. Renu Rajesh	-	Govt. Nehru Leading College ,Ashok Nagar (M.P.)
82.	Prof. Dr. Avinash Dubey	-	Govt. PG College, Khandwa (M.P.)
83.	Prof. Dr. V.K. Dixit	-	Chhatrasal Govt. PG College, Panna (M.P.)
84.	Prof. Dr. Ram Awdesh Sharma	-	M.J.S. Govt. PG College, Bhind (M.P.)
85.	Prof. Dr. Manoj Kr. Agnihotri	-	Sarojini Naidu Govt. Girls PG College, Bhopal (M.P.)
86.	Prof. Dr. Sameer Kr. Shukla	-	Govt. Chandra Vijay College, Dhindori (M.P.)
87.	Prof. Dr. Anoop Parsai	-	Govt. J. Yoganand Chattisgarh PG College, Raipur (Chattisgarh)
88.	Prof. Dr. Anil Kumar Jain	-	Vardhaman Mahavir Open University, Kota (Rajasthan)
89.	Prof. Dr. Kavita Bhadiriya	-	Govt. Girls College, Barwani (M.P.)
90.	Prof. Dr. Archana Vishith	-	Govt. Rajrishi College, Alwar (Rajasthan)
91.	Prof. Dr. Kalpana Parikh	-	S.S.G. Parikh PG College, Udaipur (Rajasthan)
92.	Prof. Dr. Gajendra Siroha	-	Pacific University, Udaipur (Rajasthan)
93.	Prof. Dr. Krishna Pensia	-	Harish Anjana College, Chhotisadri, Distt. Pratapgarh (Rajasthan)
94.	Prof. Dr. Pradeep Singh	-	Central University Haryana, Mahendragarh (Haryana)
95.	Prof. Dr. Smriti Agarwal	-	Research Consultant, New Delhi

Chromosomal Study In Some Medicinal Plants Of Central India

Dr. Manju Jain* Rimsha Rizvi**

Abstract - India is rich in traditional medicines. The present studies were carried out to investigate the karyotype analysis of some plants in central India. The paper deals about identifying the plants ie.*Tinospora cordifolia*,*Asparagus racemous* and *Swertia chirata*in Vidisha,Raisen and Hoshangabad districts of MP.More than 50 different sites were selected and their chromosomal analysis were done.
Key Words - Chromosomal Study,*Tinospora cordifolia*,*Asparagus racemous, Swertia chirata.*

Introduction - Since ancient time medicinal plants are being by human population. In India the economic importance of medicinal plants are more than other countries because of rich in traditional medicinal plant diversity (Joy *et al.*,2001). Here we will work on the chromosome of three highly important traditional medicinal plants of central India (Tinospora cordifolia, Asparagus racemous, Swertia chirata) which are endangered and require conservation. Our study area are three district Vidisha (It covers area of 7,371Km^2), Raisen (It covers area of 8,395Km^2) and Hoshangabad (It covers area of 5408.23Km^2) which cover an Area of 21,174.23 Km in Central India.

Tinospora cordifolia - Tinospora cordifolia(Wild) Miers ex Hook. F and Thomas A. belonging to the family Menispermaceae is a large, glabrous, found throughout India in forests (Gururaj *et al.* 2007). The plant is used in Ayurvedic, “Rasayan” to improve the immune system and the body resistance against infection. The pharmaceutical significance of this plant is mainly because of various bioactive compounds such as glucoside, alkaloidal constituents including berberine, fatty alcohols, a bitter glucosidegiloin, anonglucosidic bitter substance gilonin etc., found in this plant. Tinospora cordifolia contains fiber (15.9%),protein (4.5% -11.2%), carbohydrate (61.66%), fat (3.1%), potassium (0.845%), chromium (0.006%), iron (0.28%) and calcium (0.131%) (Nile and Khobragde,2009).

***Asparagus racemosus* -** *Asparagous racemosus (A.racemosus)* belonging to the genus Asparagus which has recently moved from the subfamily Asparagae in the family Liliaceae to a newly created family Asparagaceae and commonly known as Satawar. Out of several species of *A.racemosus* growing in India. *A. racemosus* is most commonly used in indigenous medicine.Reports indicate that the pharmacological activities of *A.racemosus* root extract includes anti-ulcer, antioxidant and anti-diarrhoeal, Anti-diabetic and immunomodulatory activities. Shatvari is known to possess a wide range of phytochemical constituents which are steroidal saponins (Gaitonde et al., 1969; Joshi 1988; Nair *et al.*,1969; Patricia *et al.*,2006 oligospirostanoside (Handa *et al.*, 2003), polycyclic alkaloid (Kukasawa *et al.*,1994;),isoflavones-8-methoxy-5,6,4-trihydroxyisoflavone-7-0-beta-D glucopyranoside.

***Swertia chirata* -** *Swertia chirata* Buch. Ham commonly Known as “Chirata” is medicinal plant of family Genetianaceae, it is an annual medical herb growing in the Himalaya from Kashmir to Bhuton and Khasi hills at altitude of 1000-3500m. The bitterness, antihelmintic, hypoglycemic and anti-pyretic properties are attributed to amarogentin (most bitter compound isolated till date) (Karan *et al.*,1996) swerchirin , swertiamarin and other active principles of the herb. *S. chirata* belonging to family Genetianaceae, which record the occurrence of the taxonomically informative molecules,namelyiridoids,xanthones, mangiferin and C-glucoflavones (Jensen *et al.*,2002) Cytological work done on the species is poor .

Material and Methods -

Collection of plants and seeds - Harbarium preparation were done from plants, leaves, flowers, fruits and seeds collected from different selected sites of Madhya Pradesh (50 different sites of Vidisha, Raisen and Hoshangabad district).

Method of Fixation - Seeds of experimental plants of *Tinospora cordifolia, Swertia chirata* were germinated at 25^{0}C in sterile petridishes on moist filter paper. After some days when roots were becomes 1-2 cm. long, then it were cut into small pieces with the help of sterilized seizers at morning hours. The pieces of root tip of germinated seeds were treated with 0.05% colchine solution for 2 hours at 26^{0}C.After treating with colchine solution the root tip were transferred to fixative with 3part absolute alcohol and 1 part

*Department of Botany and Biotechnology, Govt. Girls College, Vidisha (M.P.) INDIA
** Department of Botany and Biotechnology, Govt. Girls College, Vidisha (M.P.) INDIA

glacial acetic acid solution in specified vials. For further studies, the experimental materials were preserved 70% ethanol and kept in cool place or in refrigerator at 4^0C.Mark it sample no.1.in bottle.

Chromosomal Preparation - For chromosomal preparation the root tip were thoroughly washed in distilled water with the help of brush to remove the excess of different reagent particles from root tip and after that it were hydrolyzed in 1N HCl for about 30 minutes at 55^0C.The root tips are again washed with distilled water and it were placed into 2% aceto-orcin stain for 20 min at 60^0C.Preparation of slide were done. Root tip were cut 1to2 mm pieces and placed on slide. Then add one drop of acetoorcin solution carefully and coverslip were placed on it. The cell suspension were achieved by trapped with flat headed needle to achieve the cell suspension. Slightly heating the slide on spirit lamp repeatedly to avoid the boiling of cell suspension. Then slides were placed on table with leveled surface and pressed it to get a good spread of chromosomes. After that slides were sealed and observed under oil immersion microscope.

Chromosome observation - Under an optical microscope the prepared slides were observed. Karyotype analysis will be carried out following Lavan *et al.*(1964).

Tissue culture studies - The standard techniques of plant tissue culture were applied for in vitro regeneration.

Stock solution preparation - The composition of Murashige and skoog (MS) medium were prepared.

Collection of explants - For plant tissue culture studies, seeds, axillary shoot tips and stem were used.

Surface sterilization of seeds - To remove soil or dust seeds surface sterilization were done. It was done for several times by washing with tab water. Then treated the with 70% (v/v) ethanol for one minute. After that thrice, rinsed with distilled water. Finally the seeds were dipped in 0.1% mercuric chloride solution for about 3 to 5 minutes and rinsed 4-5 times with sterilized distilled water .

In-vitro seeds germination - To study the seeds germination potential, surfaced sterilized seeds of *Tenospora cordifolia, Asparigus racemous* and *Swertia chirata* were inoculated in MS medium for further culture and study.The seeds were transferred to full strength solid basal MS medium, salts and vitamins, 3%sucrose, 0.7% (w/v) agar. The pH of medium was adjusted to 5.7 in culture vessels. The seeds were germinated at 2^0C under dark for 2 days with 16 hours light and 8 hours dark cycle were maintained.

Result - More than 50 samples collected from different locations.Some of seeds were taken for cytologocal Examination.In the enumeration all the plant species are arranged with their family, local name,morphology and status.Ethnomedicinal uses have been reported.

Discussion - Most of the Plant species are diploid. The number of chromosomes in a species normally remains constant through generations and these results into the constancy of the characters. There is, however great diversity in the number of chromosomes in different species. The Chromosome number is one of the characters that differentiates one species from another. Despite the great economic importance, only a few reports are available about cytogenetics of *Tinospora cordifolia.* These older reports (Joshi,1934;Joshi and Rao,1935) have shown ambiguity regarding the exact chromosome number of *Tinospora cordifolia* revealing a haploid number of chromosomes in Tinosporacordifolia, to be either 12 or 13.Karyo-type study of A.racemosus is very poorly Known. But Darlington and Wyle (1955) reported that like many other Liliaceous genera, the cytological studies carried out in *Asparagus* confined that *Asparagus* has ploidy from diploid to hexaploid with basic number of 2n=10. Karyotype analysis increasing information on the mitotic behavior of *Asparagus racemosus*. Chromosome may give important insights on the numerical and structural chromosome may give important insights in the numerical and structural chromosome changes involved in the evolution on the genus.The existing germplasm of *S. chirata* and help in the conservation of the plant. Khoshoo and Tandon (Khoshoo and tondon, 1963) used pollen-mother cells for cytological studies in some Himalayan species of *Swertia.* The authors counted thirteen bivalents at metaphase I, and observed that one of them was bigger than rest.

Acknowledgement - The authors are grateful to MPCST for funding this project work.

References :-

1. Darlington CD and Wylie, Chromosome Alas of Flowering Plants.Georage Allen Unwin Ltd., London, 1955,.
2. Gaitonde BB Jetmalani MH Anti-oxytoxcic action of saponin isolated from Asparagus racemosus Willd (Shatavri) on uterine muscle. Arch.Int. Pharmacodyn. Thes1966;1979 121-129.
3. GRIN.Germplasm Resources information network. Unitedstates:development of agriculture; 2009.
4. Gururaj HB , Giridhar P, Ravishankar GA., Micro propagation of *Tinospora cordifolia* (wild .) Miers ex Hook . F and Thomas – a multipurpose medicinal plant .Curr Sci.2007, pp.23-26.
5. Handa SS OP ,Gupta VN , Suri KA, *Sayti rostanoside* NK, bhardwaj V, *et al.* Oligospirostanoside from *Asparigous racemosusas* immunomodulator . US patent no 66497542 .2003.
6. Jensen,S.R. and Schrip sema , J., Gentainaceae – Systemics and Natural History (eds stuwe ,L, and Albert,V. Cambridge University Press London 2002. pp.573-632.
7. Joshi JDS. Chemistry of Ayurvedic crude drugs: Part VIII :Shatavari 2 . Structure elucidation of bio active shatavarin I and other Glycosides. Indian J Chem Section B Organ Chem1988,12-16.

8. Joshi, A.C.andRao , B.R.V. (1935): A study of microsporogenesis in two Menispermaceae.la cellule.;vol.44,pp.221-234.
9. Joshi , A.C. Chromosome numbers in Menispermaceae. Nature ,1934(3375),pp.29.
10. Joy PP., Thomas J., Mathew S. and Skaria BP. (2001): Bose, T K., KabirJ., Das P. and Joy pp. (Eds) : Medicinal Plants .Tropical horticulture NayaProkash, Calcutta; vol.2 pp. 499-632.
11. Karan , M., Vasisht, K. and Handa , S.S., In Supplement to Cultivation and Utilision of Medicnal Plants (edsHanda , S.S. And Kaul, M,K.) RRL., Jammu-Tawi, 1996, pp.349-354.
12. Khoshoo, T.N. and Tandon , S.R., Cytological , morphological and pollination studies on some Himalayan species of SwertiaCaryologia .1963,pp. 445-477 .III.
13. Kukasawa N,S Sekine T , Kashiwagi Y, Ruangrungsi N , MurakoshiI.Structure of asparaamine A. novel polycyclic alkaloid From *Asparagus racemosus.* Chem. Pharm. Bull. 1994;pp 1360-1362.
14. Lavan A., Fredge K. and Sandberg AA. (1964): Nomenclature for centromeric position on chromosomes. Hereditas; vol.25, pp201-220.
15. Murashige T. and Skoog (1962): A revised medium for rapid growth and bioassays with tobacco tissue culture. Physiol.Planta; vol. 15, pp. 437-497.
16. Nile S H. and Khobragade CNN. (2009): Determination of nutritive value and mineral elements of some important medicinal plants from western pert of India. J. Med. Plants; vol.8(5),pp.79-88.

TABLE No.1 - PLANTS LISTED BELOW WITH THEIR LOCAL NAME, MORPHOLOGY AND STATUS

S.No.	BOTANICAL NAME	LOCAL NAME	FAMILY	MORPHOLOGY	STATUS
1	*Tinosporacordifolia*	Amrita /Giloy /Guguchi	Menispermaceae	Climbing herb	Wild
2.	*Asparagus racemous*	Aparajita / Satawar	Liliaceae	Climbing herb	Wild
3.	*Swertiachirata*	Kalmegh / Chirayta	Genetianaceae	Herb	Wild

TABLE No.2 - COMPARATIVE STUDY OF PLANTS

S.No.	Name of Plant	*Tinosporacordifolia*	*Asparagus recemous*	*Swertiachirata*
1.	**Local name**	Gyloy, Guruchi	Satawar Chirayta	
2.	**Classification:** **Kingdom:** **Phylum:** **Class:** **Order:** **Family:** **Genus:** **Species:**	 Plantae Magnoliophyta Magnoloipsida Ranuculales Menispermaceae *Tinospora* *Cordifolia*	 Plantae Magnoliophyta Magnoloipsida Asparagales Liliaceae *Asparagus* *racemosus*	 Plantae Tracheophyta Magnoliopsida Gentianales Genetianaceae *Swertia* *Sewertiachirata*
3.	**Stem**	Rapidly growing with trilacular node	Climbing and woody	Robust cyndrical
4.	**Flower**	Perfect Flowers in Tiliacora acuminate Flowering during Summer seasons	Arrange along the stem, Flowering during Feb- March	Actimomorphic, bisexual
6.	**Leaves**	Alternate Spiral Leaves, lobed to palmatifid	Simple and elongated with veins parallel to edeges	Opposite, alternate or whorled
8.	**Fruit**	Compound,each unit in a straight or flattened	Generally wind dispersed capsule	Dehiscantsepticidal
9.	**Soil**	Acid , neutral or basic alkaline	Sandy, lomany and clay type	Acidic, alkaline
10.	**Study area**	More than 50 Locations in MP	More than 50 Locations in MP	More than 50 Locations in MP
11.	**Plant type**	Herd	Herb	Herb

TABLE No.3 - COLLECTION OF PLANTS FROM DIFERENT LOCATIONS

PLACES	NAME OF PLANT Tinosporacordifolia	NAME OF PLANTA Asparagus racemous	NAME OF PLANT Swertiachirta
• VIDISHA	Railway station	Govt.Girls College	Agaya Ram colony
• **Kurwai**	From Jonakhedi	Bhabamora	Bandrawtha
• **Lateri**	Bajna	Alliganj	MalaniyaVill. Forest
• **Nateran**	Bheta	Ddandhon	Chamraha
• **Sironj**	SemralKhedi	Forest nurrssary	Kadikhedi
• **Ganjbasoda**	Pawai	Udaipura	Amwaha Nagar
• RAISEN	Forest area	Home	Forest area
• **Barali**	Kamton	Bhawariya	Khergi
• **Sultanpur**	Sindhi camp	Sultanpur Road	Semri
• **Mandideep**	Near Bus stand	Near Bus stand	Near bus stand
• **Sanchi**	Kharbai	Salamatpur	Bharkhedi
• **Obaidullhaganj**	Mahaveer colony	Mahaveer colony	Mahaveer colony
• HOSHANGABAD	Narmada park	Narmada park	Chandpura
• **Piparya**	Pachmari	Pipariya city	Banwari
• **Itarsi**	Bhatti	House	Chandan
• **Babai**	Kulamdi	Talnagiri	Babai Form
• **Bankhedi**	Mahraghat	Jasalpur	Khedlo

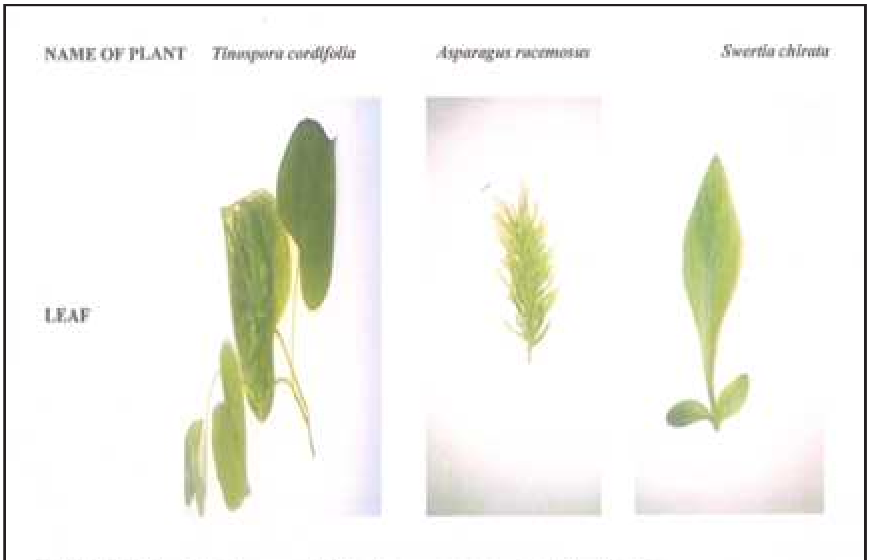

FIGURE No. 1:Leaf of *Tinospora cordifolia, Asparagus racemosus* and *Swertia chirata.*

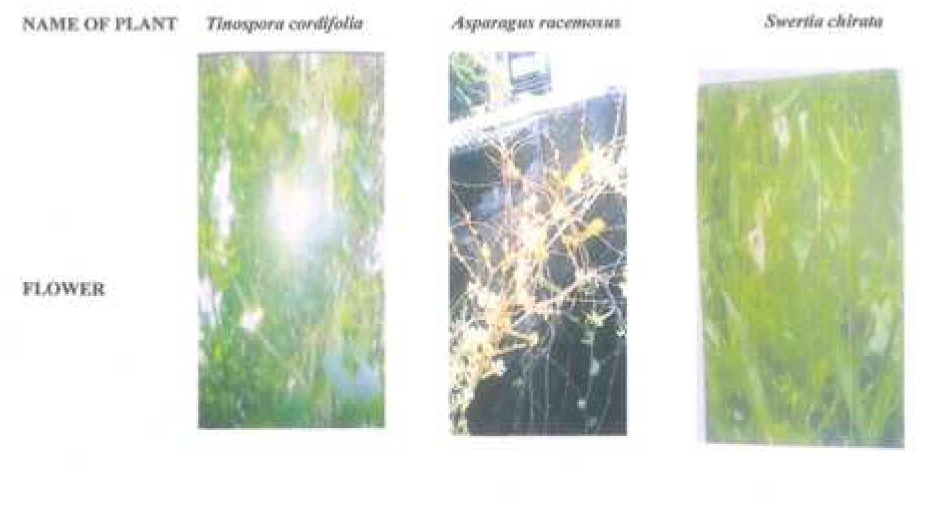

FIGURE No.2:Flower of *Tinospora cordifolia, Asparagus racemosus* and *Swertia chirata.*

FIGURE No.3:Fruit of *Tinospora cordifolia, Asparagus racemosus* and *Swertia chirata.*

FIGURE No.4:Field survey of *Tinospora cordifolia* from different locations.

• *Asparagus racemosus*

FIGURE No.5:Field survey of *Asparagus racemosus* from different locations.

• *Swertia chirata*

FIGURE No.6:Field survey of *Swertia chirata* from different locations.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

Photocatalytic Degradation Of Cod In The Palakmati River Water By ZnO

Dr. Kiran Patel * Dr. O. N. Choubey **

Abstract - This paper represents the results of the photocatalytic degradation of COD from the water sample of palakmati river has been investigate in the presence of ZnO photocatalyst.

The photo catalytic degradation of organic pollutants in the palakmati river water was investigated under several experimental parameters such as pH, Irradiation time, stirring and catalyst load. The rate of photo catalytic degradation of sample was observed spectrophotometrically. The effect of variation of different COD concentration on the rate o photo bleaching was also observed. It tentative mechanism for photo catalytic degradation or removal of COD has been proposed. The degradation of COD was observed to be affected by photo characteristics and the photo catalytic removal of pollutants and its degradation efficiency was evaluated by determination of chemical oxygen demand values. Kinetics of the reaction was found to be affected by parameters like concentration of solution, amount of semiconductor and light intensity.

Key Words – Chemical oxygen demand (COD), photocatalytic degradation, ZnO Semiconductor, Band gap, Irradiation time.

Introduction - Water is one of the most important components of the environment. It is used for drinking, industrial purpose, irrigation of the fields, production of fish and other aquatic animals and plants. But now a days various kinds of natural man made activities like industrial domestic and agriculture and other create water pollution particularly in fresh water system. Surface water a limited commodity is being continuously contaminated by various activities like industrial effluents.

Sewage, agricultural run-off containing insecticides, pesticides and various other chemicals. We know these pollutants cause harmful ecological effects and can be harmful hazards to human health. In order to evaluate the quality of river Palakmati examine the various physical & chemical parameters because all the sewage and drainages are connected with the river.

Sewage consists of water born wastes of the community and contains about 99% water and soil. The major problem associated with sewage are the production of odour and spread of enteric diseases, besides organic pollution which leads to oxygen depletion and fish. Fig. – 1 shows the effect of organic pollutants present in the water and schematic representation of the advantages of photo catalysis in the treatment of organic pollutants in waste water.

The Present work is an attempt to examine the quality parameters specially COD of the Palakmati river pre monsoon ,monsoon and post monsoon of year 2008-2009-2010. The Palakmati river is located in Sohagpur at Hoshangabad district of Madhya Pradesh. The Palakmati River is situated at $22^0$36, 35" N and 78^0 11, 25". The Sangam with Narmada situated at Pamli Village at N 22^0 02' 10" and 78^0 06' 55" S. Palakmati River is utilize in various purpose by villagers like Rabi irrigation domestic uses for drinking purpose etc. In this paper we are studying the removal of (COD) chemical oxygen demand.

Material and Method - In carrying out the present study the sample is collected from Palakmati rive located in Hoshangabad district.

COD is estimated under this sample it may be kept as low as possible. High COD may cause health hazards and affected the aquatic flora and fauna. WHO (1984) had given the guide line value for 10 mg/l in drinking water.

Determine the COD is done by closed reflux method.

2.1 Reagents and Apparatus –

(i) 0.25 Std Potassium dichromate
(ii) 0.1 N Std Ferrous ammonium sulphate
(iii) Sulphuric, acid reagent.
(iv) Ferroin indicator

Analytical grade, mercuric sulphate, round bottom flask, pipette, measuring cylinder, burette etc.

(See in the last page)

Experimental Procedure - All solutions were prepared by dissolving the desired amount of compound in distilled water. The photocatalytic reaction was carried out in a batch reactor with dimension of 7.5 x 6 cm. (height x diameter) provide with a water circulation arrangement in order to maintain the temperature in the range of 25-300C. The

*Teacher (Chemistry) High School, Sarakiya, Distt. Raisen (M.P.) INDIA
**H.O.D. (Industrial Chemistry) Govt. Narmada P.G. College, Hoshangabad (M.P.) INDIA

irradiation was carried out using 500 w halogen lamp. In all cases during the photolysis experiments, the slurry composed of the solution and catalyst was placed in the reactor and stirred magnetically with simultaneously exposure to visible light. Sample was withdrawn at periodic intervals from the reactor to assess the extent of decolourisation and degradation. A systronic uv-vis spectro photometer was used for measuring absorbance at different time interval at specific range (wave length). The COD was measured by the closed reflux method was employing potassium dichromate as the oxidant was determined by titrating with ferrous ammonium sulphate using ferroin indicator.

The photo degradation efficiency % for each sample was calculated from the following expression were –

$$n = \frac{COD_0 - COD_t}{COD_0}$$

COD_0 = COD of solution before irradiation
COD_t = COD of solution after irriadiation for time to time
n = % of photo degradation efficiency

ZnO as a Photocatalyst - ZnO is a semiconductor used catalyst. Generally semiconductors have large band gaps are good photocatalyst. ZnO & TiO_2 with band gaps larger than 3ev – show strong activity. The application of illuminated semiconductors for the remediation of contaminants such has been successfully for a wide variety compounds. In many cases complete mineralization of organic compounds has Kbeen reported semiconductor ZnO is a powerful photo catalyst used in various photo catalytic reaction.

With this cause in mind we have undertaken the ZnO as photo catalyst. ZnO act as a sensitizer due to its electronic structure characterized by filled valence band and an empty conduction band. Band gap ZnO is large then 3ev-.

S.No.	Photo catalyst	Band Gap(eV)
1.	ZnO	3.2
2.	TiO_2	3.1
3.	CdS	2.3

Result & discussion - The result of typical run for photoelectrocatalytic degradation of COD are shown in Table 1 to Table 4 and graphically represented in Fig 1 to Fig 4. The reaction rate constant was determined using expression k = 2.303 x slope.

The effect of concentration of sample (COD) on the rate of photoelectrocatalytic degradation was observed by taking different concentrations of sample. The results are reported in Table-5. It is observed that the concentration of COD sample was increased the rate of photoelectron catalytic degradation of COD was increased. It is also observed that the concentration of COD sample was increased the value of K is also increased (except 5 concentration).

Table 1 - Typical Run (See in the next page)

Table 2 Typical Run (See in the next page)

Table 3 Typical Run (See in the next page)

Table 4 Typical Run (See in the next page)

Typical Run -1 For 0.005M Concentration
(See in the next page)

Typical Run For 0.010M Concentration
(See in the next page)

Typical Run For 0.015M Concentration
(See in the next page)

Effect of Concentration of Solution - The effect of concentration of sample (COD) on the rate of photoelectrocatalytic degradation was observed by taking different concentrations of sample. The results are reported in Table 5. It is observed that the concentration of COD sample was increased the rate of photoelectron-cytalytic degradation of COD was increased. It is also observed that the Concentration of COD sample was increased the value of K is also increased (except 5 concentration)

Table 5 Light intensity-460 nm

S.No.	Concentration of Solution	Value of K
1	5 x 10-3m	3.6 x 10-1
2	10 x 10-2m	2.2 x 10-1
3	15 x 10-2m	2.5 x 10-1
4	20 x 10-2m	2.7 x 10-1

Effect of Amount of Photo catalyst - We have the ZnO as photo catalyst because band gap of ZnO is larger than 3ev-. The effect of amount of photocatalytic of COD was observed. We have taken different amount of cam of COD keeping same amount of catalyst. The results are shown in table 6. We have observed that the photocatalytic degradation of COD increases with increase in the amount of semiconductor, but a certain amount (250 mg) the rate of photocatalytic degradation of COD becomes constant.

Table 6 For 0.015M Concentration , Light intensity-460 nm

S.No.	Amount of Semiconductor	Value of K
1	50 mg	1.58 x 10-2
2	100 mg	1.95 x 10-2
3	150 mg	2.09 x 10-2
4	200 mg	2.48 x 10-2
5	250 mg	3.24 x 10-2
6	300 mg	2.65 x 10-2

References :-

1. Pirkanniemi K etal complexing agent in waste water of finish electrolytic and chemical surface treatment plant environmental science pollution. 15 (3) 218 to 221.2008.
2. Huang x etal water quality in southern Tibetan plateau chemical evolution of river yarlung tsangpo (Brahmputra) river resiorviour appl, DOI 10, 1002/ rra 1332.
3. Kudesia V.P. 2000 Environmental chemistry, Pragati Prakashan Publication, 1st Edition.
4. National Academy of Sciences Drinking wate and

helath register 132, 1977.

5. Water and waste water analysis, A manual from Neeri Nagpur, 1986.
6. APHA, A WWA and WPEF, standard Method for the examination o wate and waste water APHA, New Work, 1987.
7. Mills A.S.L. Hunte 1997. An Overview of semiconductor photo catalysis journal of photochemistry and photobiology a chemistry.
8. Fengna C.X. Yanga, H.K.C. Makb, D.W.T. Chan 2010 photo catalytic oxidation for antimicrobial control in built environment. A brief literature overview. Journal of building environment Vol.45 747-1754
9. Shivaraju H.P. Removal of organic pollutants in the municipal Sewage water by TiO_2 photo catalysis. International journal of environmental sciences vol. no. 5 2011.
10. Darshana Badholiya, O.N. Chaubey photo catalytic degradation of Aniline yellow in aqueous solution by ZnO using visible radiations, Int. chemistry science 10(1), 52-62 2012.

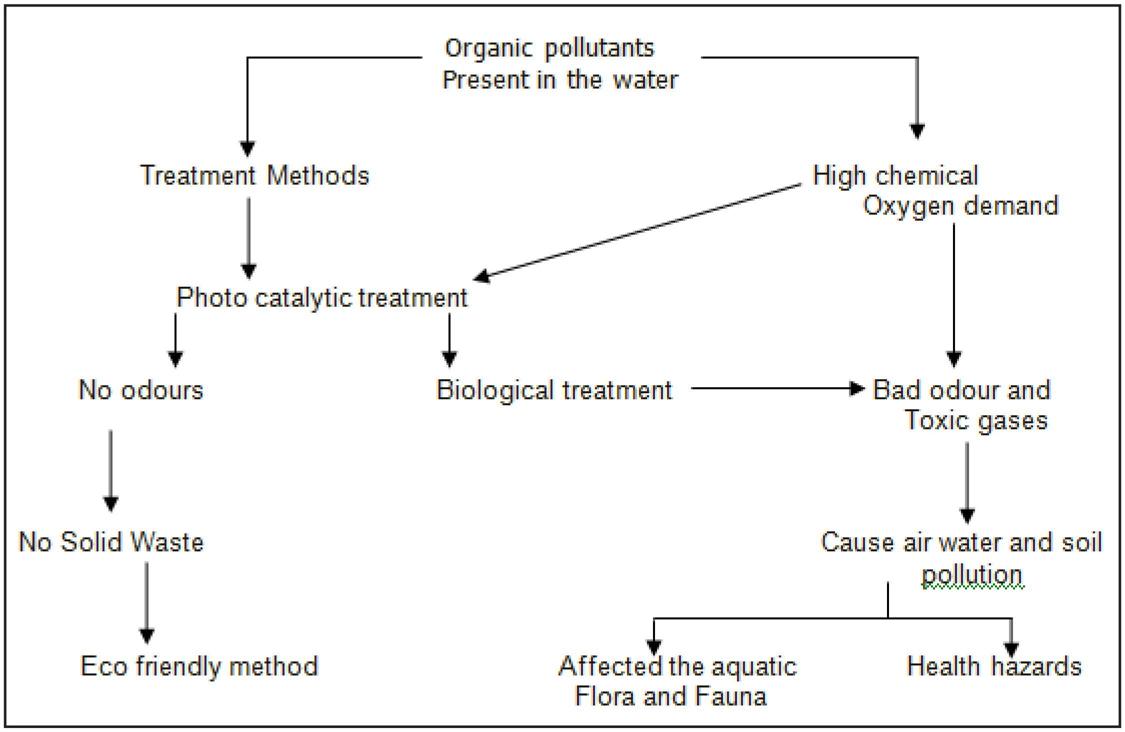

Fig. 1 Shows the effect of organic pollutants and schematic representation of the advantages of photo catalysis in the treatment of organic pollutants in waste water.

Table 1 - Typical Run

For 0.005M Concentration

S.No.	Time	Photodegradation %
1	0 min	0
2	15 min	14.8
3	30 min	32.9
4	45 min	47.8
5	60 min	100

Table 2 Typical Run

For 0.010M Concentration

S.No.	Time	Photodegradation %
1	0 min	0
2	15 min	8
3	30 min	19
4	45 min	32
5	60 min	46
6	75 min	57
7	90 min	66
8	105 min	81

Table 3 Typical Run
For = 0.015M Concentration

S.No.	Time	Photodegradation %
1	0 min	0
2	15 min	5
3	30 min	15
4	45 min	25
5	60 min	38
6	75 min	50
7	90 min	60
8	105 min	69
9	120 min	77.7
10	135 min	83.3
11	150 min	88.8
12	165 min	93.3

Table 4 Typical Run
For = 0.015M Concentration

S.No.	Time	Photodegradation %
1	0 min	0
2	15 min	16.6
3	30 min	18.6
4	45 min	30.7
5	60 min	41.8
6	75 min	47.4
7	90 min	54.6
8	105 min	58.4
9	120 min	62.6
10	135 min	68.8
11	150 min	74.0
12	165 min	79.2
13	180 min	83.7
14	195 min	88.9
15	210 min	92.7
16	225 min	94.1

Typical Run -1 For 0.005M Concentration

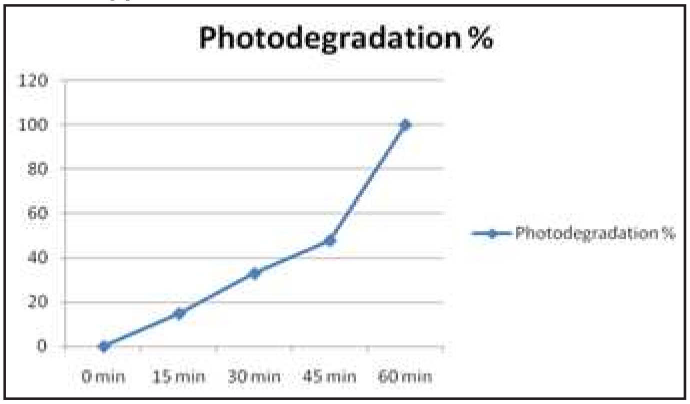

Typical Run For 0.010M Concentration

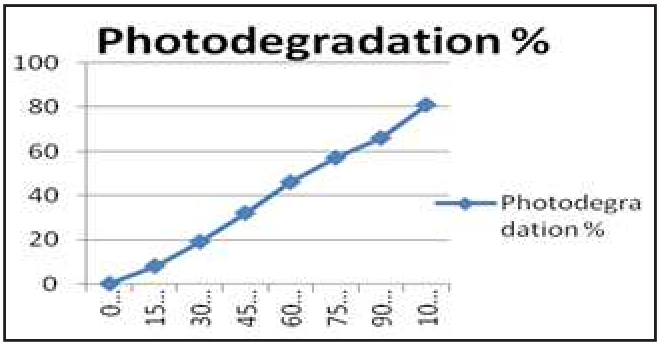

Typical Run For 0.015M Concentration

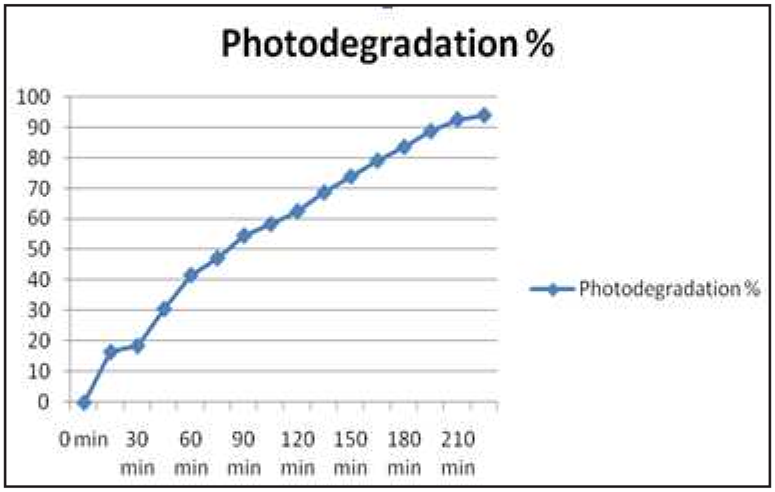

****

Beautiful Insulin Plant *Costus Igneus* Found In Mandleshwar District Khargon (M.P.) India

Prof. Nirbhay Singh Solanki* Prof. S.C. Mehta**

Abstract - ***Costus igneus*** has found in Mandleshwar district Khargon ,Madhya Pradesh .This plant is used in cure the diabetes. The dried powder of leaves of this plant is taken in the dose of 1/2 to 1 gram twice a day in diabetes.This plant has antimicrobial property.

Indian Traditional Medicine this herbal plant is also used to promote Long life, take care of skin complaint, Reduce fever, Treatment of asthma, Bronchitis treatment and to Eliminates intestinal worms. In Indian traditional literature this plant is mentioned as an ingredient in a cosmetic to be used on the eyelashes to give a nice look.
Key Words - Antimicrobial, diabetes, hyperglycemia.

Introduction - *Costus igneus* is very beautiful pteridophytes. It has antibeterial and antimicrobial properties.

Methodology - I took some photographs by digital camera.

Definition of Diabetes - Diabetes mellitus is a syndrome characterised by disordered metabolism and abnormally high blood sugar (hyperglycemia) resulting from low levels of the hormone insulin with or without abnormal resistance to insulin's effects.

Diabetes mellitus is a metabolic disorder characterized by hyperglycemia. The World Health Organization (WHO) warns that the deaths due to diabetes will increase all over the world by 80% in some regions, over the next ten years. Among these, India host to the largest diabetes population in the world with an estimated 35 million people, amounting to 8% of the adult population. WHO also predicts that the diabetes currently affects almost two hundred million people worldwide. Only 5% of the diabetes in the world is type 1 (IDDM). The remaining 95% is type 2 (IIDDM).

Study area

Mandleshwar is located at 22.18°N 75.67°E, and has an average elevation of 153 metres (501 feet). **Mandleshwar** is a town and nagar panchayat in the Khargone district of the Indian state of Madhya Pradesh. It is on the Narmada River 8 kilometres (5.0 mi) east of Maheshwar and 99 kilometres (62 mi) south of Indore.

Domain - Eukaryota
Kingdom - Plantae
Subkingdom - Viridaeplantae
Phylum - Tracheophyta
Subphylum - Euphyllophytina
Infraphylum - Radiatopses
Class - Liliopsida
Subclass - Commelinidae
Superorder - Zingiberanae
Order - Zingiberales
Family - Costaceae
Subfamily - Asteroideae
Tribe - Coreopsideae
Genus - Costus
Specific epithet - Igneus

Synonyms - Costus heiroglyphica,Costus maicanus , Costus congestus

Common name- Painted Spiral Ginger, Spotted Spiral Ginger

Name in other languages of the Insulin plant -

Bengali – Piasal
Hindi- Banda, Bija-sal, Peisar , JARUL, Keukand
Kannada – Kempu honne
Malayalam – Honne, Karintakara, Vengai, Venna-maram
Marathi – Honi , Pushkarmula
Odisha – Vengis
Sanskrit – Asana, Bandhukapushpa
Tamil – Neyccarikamaram, Venkai-c-ciray , Kostam
Telugu – Peddavesiga, Yeangesha
Urdu- Bijasar, Damal akhwain
Gujarati – Pakarmula
English – Banaba

Plant Description - It is a perennial, upright, spreading plant reaching about two feet tall, with the tallest stems falling over and lying on the ground. Leaves are simple, alternate, entire, oblong, evergreen, 4-8 inches in length with parallel venation. The large, smooth, dark green leaves of this tropical evergreen have light purple undersides and are spirally arranged around stems, forming attractive, arching clumps arising from underground rootstocks. Beautiful, 1.5-inch diameter, orange flowers are produced in the warm months, appearing on cone-like heads at the

*Asst. Professor, Govt. P.G. College, Dhar (M.P.) INDIA
**Retd. Professor, Govt .P.G.College, Jaora (M.P.) INDIA

tips of branches.Fruits are inconspicuous, not showy, less than 0.5 inch, and green-colored.

Antimicrobial activity of extract Methanol extracts obtained from Costus igneus stem and root showed mild to moderate activity against most of the tested bacteria. The plates were then made to check the antimicrobial activity compared with those of "Gentamycin" as a standard antibiotic using methanol extract of root showed strong activity against Klebsiella Oxytoca, Pseudomonas Fragi, Enterobacter aerogens and using the agar diffusion assay was observed. The antioxidant and radical scavenging activities of Costus igneus the following methods were used in which both Stem extract and Root extract exhibited antioxidant activity. root extract showed high inhibition than stem extract. We cosidered root extract has more potent antioxidant activity compared to stem extract In this estimation methanol extract of Costus igneus of stem exhibit high activity (mg/g equivalent of Gallic acid) and the phenol contents were increased in Root extract. Among the stem and root extracts of Costus igneus, the total phenolic contents were found to be greater for roots extracts rather than stem. Root extraction from methanol is Suitable for total phenolic extraction. Root extract of Costus igneus from have high amount of vitamin E.

Used by tribal people of Kolli hills of Tamilnadu for diabetes - In Indian Traditional Medicine this herbal plant is also used to promote Long life, Take care of skin complaint, Reduce fever, Treatment of asthma, Bronchitis treatment and to Eliminates intestinal worms. In Indian traditional literature this plant is mentioned as an ingredient in a cosmetic to be used on the eyelashes to give a nice look.

Siddha Medicinal Uses -

1. The leaves of this medicinal plant is used in the management of Diabetes.
2. The dried powder of leaves of this plant is taken in the dose of 1/2 to 1 gram twice a day in diabetes.
3. The fresh leaves of this plant is chewed two times daily for 1 week after 1 week, 1 leaf should be chewed twice a day this dosage should be continued for 1 month. It is said that this treatment is effective in bringing blood sugar levels under control in diabetes patients.

Discussion - My main aim of making this research paper is that I want to spread awareness about the plants and people should conserve and protect the environment. We should take these plant as herbal medicine with right direction and doctors prescription.

References :-

1. Prakash K. Hegde, Harini A. Rao, and Prasanna N. Rao[1] Pharmacogn Rev. 2014 Jan-Jun; 8(15): 67–72. **A review on Insulin plant (*Costusigneus* Nak)** https://www.ncbi.nlm.nih.gov/pmc/articles/PMC3931203/
2. http://www.flowersofindia.net/catalog/slides/Painted%20Spiral%20Ginger.html
3. http://www.happylifestyletips.com/insulin-plant-for-diabetes/
4. https://wikivisually.com/wiki/Mandleshwar
5. http://siddham.in/costus-igneus-or-insulin-plant-natural-remedy-for-diabetes
6. A. Saravanan , S. Karunakaran1 , P. Vivek , S. Dhanasekaran Studies On Antibacterial Activity Of Root Extract Of Costus Igneus International Journal of ChemTech Research CODEN (USA): IJCRGG ISSN : 0974-4290 Vol.6, No.9, pp 4201-4206, September 2014
7. Ramya Urs SK and Jyoti Bala Chauhan. PHYTOCHEMICAL SCREENING, ANTIMICROBIAL ACTIVITY AND ANTIOXIDANT ACTIVITY OF COSTUS IGNEUS / European Journal of Molecular Biology and Biochemistry. 2015;2(2):93-96.
8. http://www.stuartxchange.org/InsulinPlant
9. http://www.happylifestyletips.com/insulin-plant-for-diabetes/

Costus Igneus plant

Costus Igneus flowering plant

****

Municipal Solid Waste Management In India- A Review

Suman Singh*

Abstract - Municipal solid waste management (MSWM), a critical element towards sustainable metropolitan development comprises segregation, storage, collection, relocation, carriage, processing and disposal of solid waste to minimize its adverse impact on environment. India is rapidly shifting from agriculture based nation to industrial and services-oriented country. About 31.2% population is now living in urban areas. No comprehensive studies have been conducted to cover almost all cities and towns of India to characterize the waste generated and disposed on landfill. There are three mega cities- Greater Mumbai, Delhi, and Kolkata-having population of more than 10 millions, 53 cities having more than 1 million population and 415 cities having population of 100,000 or more (Census,2011). The aim of this study is to present the status of MSW and other important aspects like challenges for integrated SWM An attempt has been made to evaluate major parameters of MSWM, by comprehensive review of MSW generation, its characterization, collection, and treatment options as practiced in India.
Key Words - MSW, Urbanization; Solid waste; Biodegradable; Challenges; Landfill; Policies; Environment & Management.

Introduction - India is a vast country comprising 29 states and 7 Union Territories (UTs). The cities having population more than 10 millions are basically state capitals, Union Territories and other business/ industrial-oriented centres. The population residing in Urban regions increased from 18 to 31.2% from 1961 to 2011 (Census of India, 2011). India has different geographic and climatic regions (tropical wet, tropical dry, subtropical humid climate and Mountain climate) and four seasons. Residents living in these zones have different consumption and waste generation pattern. Over 377 million urban people are living in 7,935 towns/ cities. Urbanization contributes enhanced Municipal Solid Waste (MSW) generation and unscientific handling of MSW degrades the urban environment and causes health hazards. So it is important to plan and implement sustainable low-cost SWM strategies. Lack of awareness, inappropriate technical knowledge, inadequate funding, unaccountability, implementation of legislation and policies are major reasons for the failure of MSWM. Issues of MSW management include proper site selection, adequate financial support and proper human resource management. One of the significant problems in urban India is almost no segregation of MSW and disposal of construction and demolition debris (C&D), plastic wastes, commercial and industrial refuses, and e-waste (CPCB, 2000a; Position paper on the solid waste management sector in India, 2009).

Composition and characteristics of Indian municipal solid waste - Following major categories of waste are generally found in MSW of India • Biodegradable Waste: Food and kitchen waste, green waste (vegetables, flowers, leaves, fruits) and paper. • Recyclable Material: Paper, glass, bottles, cans, metals, certain plastics, etc. • Inert Waste Matter: C&D, dirt, debris. • Composite waste: Waste clothing, Tetra packs, waste plastics such as toys. • Domestic Hazardous Waste (also called "household hazardous waste") and toxic waste: Waste medicine, e-waste, paints, chemicals, light bulbs, fluorescent tubes, spray cans, fertilizer and pesticide containers, batteries, and shoe polish.

MSW in India has approximate 40–60% compostable, 30–50% inert waste and 10% to 30% recyclable. Analysis carried out by NEERI reveals that in totality Indian waste consists of Nitrogen content (0.64 ± 0.8) %, Phosphorus (0.67 ± 0.15)%, Potassium (0.68 ± 0.15)%, and C/N ration (26 ± 5) %. Change in the physical and chemical composition of Indian MSW with time is shown in Table 1

Table 1. (See in the last page)

Challenges - In India, uncontrolled growth rate of population and rapid urbanization are main reasons for MSW to become severe problem. Per capita waste generation rate and its growth during a decade are indicated in Table 1 (Annepu, 2012). It is anticipated that population of India would be about 1,823 million by 2051 and about 300 million tons per annum of MSW will be generated and around 1,450 km^2 of land will be required to dispose it, if Urban Local Bodies in India continue to rely on landfill route for MSW management. These projections are on conservative side keeping 1.33% annual growth per capita generation of MSW (Bhide & Shekdar CPCB, 2000a Pappu, Saxena & Asoleker, 2007; Shekdar, 2009). So, area required for disposal of

* Professor (Zoology) Govt. Model Science College, Rewa (M.P.) INDIA

waste could be many folds (CPCB, 2013). Currently around 15 lakh, metric tons (MT) per annum e-waste is generated and its compound annual growth is about 25% (ASSOCHAM, 2014). E-waste comprises around 7% of total solid waste generated in India (United Nations University, 2014). Almost 60 percent of e-waste is a mix of large and small electrical and electronic equipment used in homes and businesses. Planning Commission Report (2014) reveals that 377 million people residing in urban area generate 62 million tons of MSW per annum currently and it is projected that by 2031 these urban centres will generate 165 million tons of waste annually and by 2050 it could reach 436 million tons. In India, It is difficult to assess the land requirement and select appropriate treatment/disposal techniques due to lack of availability of primary data on per capita waste generation, inadequate data on waste characteristics and influence of informal sectors. Different reports give different values and projections.

Management of MSW- Several studies suggest that reutilizing solid waste is not only a viable option to MSWM but also desirable socially, economically and environmentally (Mishra & Pandey, 2005). The study carried out in 59 cities (35 Metro cities and 24 state Capitals) by the National Environmental Engineering Research Institute (NEERI) reveals that 39,031 TPD of MSW was generated from these cities/ towns during the year 2004-2005. For the same 59 cities, a study was again carried out by CIPET during 2009-2010 for CPCB wherein it was seen that these cities are generating 50,592 TPD of waste (CPCB, 2013). During the last decade, solid waste generation has increased 2.44 times (CPCB, 2013). About 23.5x107 cubic meter of landfill space is required and in terms of area it would be 1,175 hectare of land per year for MSW. The area required from 2031 to 2050 would be 43,000 hectare for landfills piled in 20 meter height (0.45 kg/capita/day waste generation).

Landfilling - Land filling would continue to be extensively accepted practice in India. Though metropolitan cities centres like Delhi, Mumbai, Kolkata, and Chennai have limited availability of land for waste disposal and designated landfill sites are running beyond their capacity. The development of new sanitatary landfills /expansion landfill is reported in different states. According to CPCB, 2013 report, till date, India has 59 constructed landfills.

Contribution of Rag-pickers in SWM in India - The role of rag-pickers is very important in Indian scenario for MSWM. Rag-pickers save almost 14% of the municipal budget annually. Their role is largely unrecognized and they are generally deprived of the right to work (Chintan NGO report). According to an estimate, the rag-pickers reduce up to the 20% load on transportation and on landfill (Pappu et al., 2007). Their role in waste management stream had not been given any weightage. They move from one community bin to open dump/ landfilling sites in search of recyclable items (paper, plastic, tin ,etc.) Usually the middle men get the major profit on purchase of recyclable item from rag-pickers on pre-decided rates.

Hazardous of Landfilling - From landfills mainly methane (CH_4) and Carbon Di Oxide, (CO_2) gases are produced. These gases have significant green house effect. CH_4 emission from landfill is about 13% of global CH_4 emission and is about 818 million metric tons per annum in terms of CO_2 equivalent In India, estimated methane emission is about 16 million metric CO_2 equivalent per annum through landfills (International Energy Agency, 2008)

Biological treatment of organic waste - The waste generated in India has about 50% organic content as compared to 30% generated by developed countries. In India in aerobic composting biological conversion of organic matter existing in MSW takes place .The end product of composting, is humus (compost). In smaller towns labour intensive composting is carried out. However in big Indian cities, power-driven composting units have been installed (Bhide & Shekdar, 1998). Vermi-composting is carried out by introducing earthworms on semi-decomposed organic waste.

Management of MSW for Energy - The utilization of landfill gas, particularly CH_4 for energy production is important as it finally converts into primary constituents (i.e. CO_2 and H_2O). Biogas is liberated by biomethanation process from biodegradable part of MSW .The biogas has 55–60% methane and it can be used as fuel for power generation. In India biomethanation technology is utilizing industrial, agricultural and municipal wastes (vegetable market and yard wastes) in Delhi, Bangalore, and Lucknow. (Ambulkar & Shekdar,2004). The energy potential from landfill gas available at selected sites in Delhi (Balswa, Gazipur and Okhla) is 8.4 MW, Mumbai (Deonar and Gorai) 5.6 MW, Ahmadabad (Pirana) 1.3 MW, and Pune (Urli) had 0.7 MW annually (Siddiqui & Khan, 2011). Planning Commission Report (2014) indicated that 62 million tons of annual MSW generated in urban area can produce 439 MW of power from combustible component and RDF, 72 MW of electricity from landfill gas and 5.4 million metric tons of compost for agriculture use as CH_4 has 23 times higher global warming potential than CO_2. Ministry of New and Renewable Energy (MNRE), Government of India installed 3 Mega Watt (MW) capacity plant at Solapur, Maharashtra, 16 (MW) capacity at Okhla, Delhi and planned to support few more waste to-energy projects at Bangalore (8 MW), Hyderabad (11 MW), Pune (10 MW), and Delhi at Gazipur (12 MW) (MNRE Annual Report, 2014–2015) also in Delhi, Narela (24 MW) waste-to -energy plant is under installation.

Thermal treatment of solid wastes by Incineration in Indian MSW is not suitable as the MSW has high organic constituents, moisture content, or inert content in the waste in the range of 30% to 60%. Usually in India, for burning hospital waste, small incinerators are used (Sharholy, Ahmad, Mahmood, & Trivedi, 2005).

Policy and Guidelines for waste Management - General guidelines and policies prevailing in India for waste

management is governed by the Ministry of Environment and Forests and Climate Change (MoEF), the Ministry of Urban Development (MoUD), the National Environmental Engineering Research Institute (NEERI), CPCB, and State Pollution Control Boards (SPCBs) and ground level implementation responsibility lies with Urban Local Bodies. The main objective of the committee constituted in 1990 was to identify the recyclable contents in solid waste picked up by rag-pickers.

- **Strategy Paper:** A manual on SWM has been developed by the MoUD in collaboration with the NEERI in August, 1995.
- **Policy Paper:** MoUD and the Central Public Health and Environmental Engineering Institute prepared a strategy paper for the treatment of wastewater, appropriate hygiene, SWM, and efficacy in drainage system.
- **Master plan of Municipal Solid Waste -** A stratagem was formulated by the combined efforts of MoEF, CPCB, and ULBs to develop a master plan for SWM with emphasis to biomedical waste in March, 1995.

All the above efforts, culminated into preparation of many acts and regulations to protect the environment which came into force from time to time. Needs and aspirations of stake holders demand appropriate MSWM and accordingly the GOI is continuously encouraging ULBs to implement these rules at ground level and recently draft notification for MSW (Management and Handling rules 2015) is also under formulation (Ministry of Environment, Forest and Climate Change, 2015).

Indian Ministry of Environment, Forest and Climate Change, notified e-waste rules which came into force with effect from 1st May 2012. Implementation of EPR (Extended Producers Responsibility) and mandatory registration of e-waste recycling firms with Pollution Control Boards are the key salient features of e-waste rules. (CPCB, 2014)

Recommendation and conclusion - Following are various recommendations that evolve from the study to improve the existing MSWM practices in India -

1. Community should pay to augment inadequate resources for MSWM of municipal bodies. Community participation in SWM is the key to sustain a project related to management of solid waste. The people should be educated to realize the importance of source segregation at generation point as biodegradables, inert and recyclable material for proper waste management.
2. Viable decentralized composting plants should be installed to reduce the load on ULBs for collection and transportation of MSW, which subsequently culminates in reduction of the pressure exerted on the landfills.
3. Manufacturing of non-recyclable polyethylene bags should be banned or research should be initiated to develop biodegradable polyethylene.

A study conducted by United Nations Environmental Program (UNEP) has shown that green house gas emission from landfill can be significantly reduced by following environmentally sound management of hazardous and other wastes (UNEP, 2010): (1) Waste minimization. (2) Recycling and reuse. (3) Reductions in fossil fuel by substituting energy recovered from waste combustion. To change people's views and perspective, awareness regarding this important service to community should be initiated and manpower engaged in such activities should be named as Green brigade/Crew.

References :-

1. Annepu, Ranjith Kharvel. Sustainable Solid Waste Management in India.January10,2012.
2. Bhide, A.D., & Shekdar, A.V.(1998). Solid waste management in Indian urban centres. International Solid Waste Association Times(ISWA)),1,26-28).
3. Status of municipal solid waste generation, collection, treatment and disposal in class I cities (Series: ADSORBS/ 31/ 1999-2000) Retrieved from http: www. bvucoepune. edu. in/ pdf's/ Research% 20and% 20Publication, Research% 20Publication-2007-08 International%20 Conference- 2007-08 Municipal% 20Solid% 20Pr0f%20Gidde.pdf
4. CPCB. (2013). Status report on municipal solid waste management. Retrieved from http://www.cpcb.nic.in/ divisions of head office/pcp/MSW_Report.pdfhttp:// pratham. org/ images/ paper_on_ragpickers.pdf
5. Federation of Indian Chambers of Commerce and Industry (2009) Survey on the Current International Energy Agency.(2008). Turning a liability into an Asset:Landfill methane utilization potential in India. Retrieved from https// www. iea.org/ publications/ freepublications/publication/India-methane.pdf
6. Joshi, R & Ahmed, S(2016) A Review Article on Status and challenges of municipal solid waste management in India Cogent Environmental Science (2016), 2: 1, Page 13 of 18 http/ / dx.doi.org/10.108023311843. 2016.1139434
7. Ministry of Environment, Forest and Climate Change (2015) Government of India. Retrieved from http:// envfor.nic.in/content/draft-municipal-waste-management-handlingrules-2015
8. Ministry of New and Renewable Energy (2014-2015). Annual report. Government of India. Retrieved from http://mnre.gov.in/mission-and-vision-2/publication/ annual-report-2.
9. Misra ,V& Pandey, S.D. (2005). Hazardous waste, impact on health and environment for development of better waste management strategies in future in India. Environment International, 31, 417-431. http:dx.doi. org.10.1016/ j.envint2004.08.005
10. Pappu, A., Saxena, M.,& Asolekar, S.R.(2007). Solid wastes generation in India and their recycling potential in building materials. Building and Environment , 42,2311-2320.
11. Planning Commission Report.(2014).Report.of the task force on waste to enrgy (Vol-)(in the context of

Intrgrated MSW management).Retriieved from http://planning commission nic.in /reports/generep/rep wte 1205.pdf

12. Sharholy, M., Ahmad, K., Mahmood, G., & Trivedi, R. C. (2005). Analysis of muncipalsolid waste management systems in Delhi—A review. In Proceedings for the second International Congress of Chemistry and Environment (pp. 773–777). Indore.

13. Status of Municipal Solid Waste Management in Indian Cities and the Potential of Landfill Gasto Energy Projects in India. https//www.globalmethane Science(2016),2:1,Page13 of 18

14. UNEP "Recycling from E-waste to Resources" Sustainable innovation and Technology Transfer Industrial Studies, United Nations Environment Programme, 2010

Table 1. Change in composition of municipal solid waste with time (in %)

Year Inert	Biodegradables	Paper	Plastic/rubber	Metal	Glass	Rags	Others
1996 45.13	42.21	3.63	0.60	0.49	0.60	–	–
2005 25.16	47.43	8.13	9.22	0.50	1.01	4.49	4.02
2011 17.00	42.51	9.63	10.11	0.63	0.96	–	–

✼✼✼✼✼✼✼✼✼✼✼✼✼

Some Ethnomedicinal Climbers Plants Used To Different Diseases By Local People Of Vidisha District Of Madhy Pradesh

Dr. Sarita Ghanghat*

Abstract - The present study deals ethno medicinal uses of climbers that are used by tribal Like bhils, shariya of vidisha district (m.p.).The area is very rich in indigenous ethno medicinal plants .There collected by Local inhabitant for the preparation of medicines. Study shows that different plant parts such as leaves, roots, seeds etc, use traditionally in treatment various ailments by the tribal people. 12 climbers are used in traditional medicament. The plant species are enumerated alphabetically with their botanical names ; family ,local name, plant part and medicinal uses.
Key Words - Ethno-medicinal, Tribes, climbers plant, Traditional medicine, Health care.

Introduction - Ethno botany is the systematic study of botanical knowledge of a social group and its use of locally available plants in food, medicines, clothing or religious rituals. Rudimentary drugs derived from plants used in folk medicines have been found to be beneficial in the treatment of many illnesses, both physical and mental.

Ethno botanists focus their studies on the plant role of tribal peoples for several reasons. There groups are often both highly dependent on and extra ordinarily knowledge about local plants.

In some Asian and African countries, 80% of the populations depend on traditional medicine for primary health care. In many developed countries, 70% to 80% of the population has used some form of alternative or complementary medicine.

People living in the developing countries realy quite effectively on traditional medicine for primary health care (Sullivan and shealy 1997;singh, 2002). Indian tradition medicine is based on different system such as Ayurveda, Siddha and Unani used by various communities (Gadgil, 1996).

The Study Area:- Vidisha district is one of the most important and centrally located district of M.P. The total area of the district is about 7,433sq K.M. which lies between 23º21'and 24º22'N latitude and 77º15.30'and 78º18'E longitude forming eastern part of Malwa region. The forest cover is about two fifth of the total area in the district.(Fig.1)

Material And Methods – The information of local medicine men like vaidya, ojhas , etc of different sectors in the study area was obtained from the local peoples.The indigenous knowledge about how these people use the plants/ plant part and products to cure different elements was gathered by personal interviews with them . Information with respect to plant species or their parts preparation recipes, does, method of administration, types of diseases treated etc. were critically and patiently inquired. The plants were identified with the help of Flora of Bhopal by Oommachan (1977) and Flora of M.P. from Wikipedia.

Fig.1 Map (VidishaDdistrict) **(See in the next page)**

Observation - The Ethno medicinal climbers used by Bhils, Shariya, Tribes in Vidisha district.

Table -1 **(See in the next page)**

Enumeration - In the following enumeration, plant names have been arranged alphabetically in disease wise. (Table1)

Result And Discussion- The present study reveals that ethno medicinal climbers of the area represented by 12 species of 6 families the plant parts used for medical preparation were bark ,flowers, roots ,leaves ,seeds and whole plants. The paper a brief account of the uses of various ethno medicinal climbers plants parts against the diseases, like headache, blood pressure, diabetes, Jaundice, typhoid , Stomach, bleeding, gastro-intestinal diseases by the people of vidisha district.

Acknowlegment- The author express thanks to knowledgeable Persons who co- operated in sharing their knowledge at the time of study and also thankful to all information for providing information regarding medicinal plants.

References:-

1. Gudgil ,M ; 1996 Documentriy diversity : An experiment curr.ci ; 70 (1) : 36
2. Ghanghat,Sarita and Sahu, Brajesh (2006) Medicinal climbers of Vidisha District . I.J.Applied Life Science.,Vol 1,no 1,pp 24-25.
3. Jain. s. k. 1987. A manual of Ethnobotany. Scientific Publishers , Jodhpur , India.ISBN 8185046603
4. Jain , s. k., 1991 Dictionary of Indian Folk medicine and Ethnobotany .Deep publication, New Delhi. ISBN : 8185622000.
5. Jain,S.K.(1995): Ethnobotanical studies around vidisha

*H.O.D. (Botany) Govt. S.G .S .P .G .College, Ganjbasoda , Vidisha (M.P.) INDIA

district . Ph-D Thesis. Barkatullah University, Bhopal.
6. Sullivan,K.and C.N.Shealy ,1997 Complete Natural Home Remedies.Element Book Limited, Shaftsbury, U.K.
7. Oommachan, M. (1977): The flora of Bhopal J.K. jain Brothers, Bhopal .
8. Flora of M.P. from Wikipedia.

Fig.1 Map (VidishaDdistrict)

Table -1 Use of different Climbers plant species by the tribes of vidisha district.

S.No	Botanical Name	Family	Local Name	Used part of the plant
1	*Asparagus racemosus Willd.*	Liliaceae	Satavar	Tuberous roots given to induce lactation in females.,
2	*Clitoria ternateah.*	Fabaceae	Aprajita	Roots are used in headache.
3	*Citrullus nulgaris. schard .var.*	Cucurbitaceae	Tinda	Fruits used in blood pressure normal.
4	*Coccinia grandis L. voigt .*	Cucurbitaceae	Kunduru	Leaf juice used in diabetes, paste of leaves used in high fever .
5	*Convolvulous microphyllus sieb.*	Convolvulaceae	Safed Shankh pushpi	Whole plant used as brain tonic .
6	*Cuscuta reflexa Roxb.*	Convolvulaceae	Amarbel	Used in jaundice- plant paste warmed with musterd oil and wheat flour is applied on joint pain
7	*Diplocyclos palmatus Linn.*	Cucurbitaceae	Shivlingi	Seeds used for female sexual health and proper pregnancy.
8	*Luffa cuttangula L.*	Cucurbitaceae	Kali torai	Fruits use full in jaundice, stomach.
9	*Momordica charantia Linn.*	Cucurbitaceae	Karela	Fruits use full in gastro-intestinal problems and diabetes .
10	*Tinospora cordifolia Willd.*	Menispermaceae	Giloy	Stem decoction along with sugar is given to cure typhoid. Also used for malaria , blood purifier.
11	*Trichosanthes dioca Roxb.*	Cucurbitaceae	Parwal	Useful for stomach complaints.
12	*Vitis vinifera L.*	Vitaceae	Angoor	Leaves are used to stop bleeding pain and inflammation of hemorrhoids

****

Ethanomedicinal Survey Of Plants Of Sehore District Showing Wound Healing Activity

Dr. Rajesh Bakoriya *

Abstract - The present paper reports 12 ethno medicinal plants of Sehore district which is used by villagers for wound healing and other diseases. Out of 12 plants reported in the present study. *Mimosa pudica, Aloe vera,* leaf gel*Annona squmosa* pultis, *Vitex nigundo* latex have shown healing effect much faster than other plant extract.
Key words - Ethano-medicine, Wound healing, Re-epithilization.

Introduction - Ethano-botany is a multidisciplinary subject which deals with the use of medicinal plants for various ailments based on ethnic knowledge. The present paper reports 12 plants of Sehore district of M.P. which are more frequently used by the villagers in remote areas for cut, wounds and other injuries. Similarly observation on ethano-medicinal use of herbal plants based on different ethnic communities of the country have been reported earlier which emphasized the need of such studies for exploring more and more hidden informations. Saxena Lal *et al, (*1994), Malviya *et al,*(2008), Manjunath *et al, (2006)*, Patel (2007), Shetty *et al, (2007)*, have evaluated the wound healing effect of alcoholic extract of *Ocimum sanctum.* Recently Sharma *et al,* (2010) have also reported the Ethanomedicinal study of edible plants used by Gond and Bharia tribes of Chhindwara district of M.P. Looking to the wide occurrence of burn wound in the modern societies and the ointments used showing irritation on skin, it was thought important to work out such plants which possess wound healing activities.

Material And Methods - The plant listed in table 1 have been collected after one year survey of the remote villages of Sehore district and the knowledge gained from the local peoples. The plants belong to 11 different families of dicot except *Aloe vera* of family Liliaceae. The plants were identified at Botany department of Govt. Girls College Sehore (M.P.) India.

Result And Discussion - The study is quit significance for pharmacologist, botanist and agricultural scientist who are engaged in the field of pharmacology. The plants listed in the table have been used invariable in several ailments including wound healing. The leaves of *Mimosa pudica* of Fabaceae have been reported to be useful in bleeding piles where as its root deoxidation is found to be used in wound healing. Similarly *Curcuma longa* family Zinziberaceae, Lawsonia inermis family Lythraceae and *Ficus religiosa* family Moraceae bark extract when applied topically give relief to the deep incision wound as well as other skin diseases. It has patent antioxidant “Curcumin” which is antibacterial and antifungal that seems to be used in wound healing. *Citrus aurantifolia* family Rutaceae fruits juice is useful in ring worm and to remove the dark spot of skin. Also other plants listed in the table 1 such as *Aloe vera* is well known for its anti-inflammatory activities Zuneja (2008). The other plants *Terminaliaarjuna*, *Annona squamous,Delbergiasissoo*,*Vitex nigundo*,*Maducaindica* and*Syzygiumcuminii* have been found to be useful in deep incision wound which were re-epithilized completely with 14 days periods. Recently Sheetal and kunul (2010),Nath (2010) and Abbas lone (2009) have reported the ethno-medicinal plants used in folk remedies including wound healing activity.This supports the present study.

Table – 1 (See in the next page)

References :-

1. Lal B., Vats S.K., Singh R.D. Gupta A.K., plants used in ethanomedicine by gaddis in Kangra and Chamba district of Himachal Pradesh in ternety cong. Ethno. NBRI Lucknow 143 (1994).
2. Lone M.A., Malviya D., Mishra P., Dubey A. and Saxena R.C., Anti-inflammatory and antibacterial activity of anthraquenome isolated from Aloe vera (Liliaceae) Asian J. Chem.21 (2): 1807-1811 (2009).
3. Manjunath B.K., Vidhya M., Krishna V., Mankani K.L., Wound healing activity of Leucashirta. Ind. J. of Pharma Sci.5: 380-384 (2006).
4. Malviya D., Shrivastava P.N., Rajput S. and Saxena R.C., Wound healing activity of Achyranthusaspera L., in experimental rats. Environmental conservation journal 19 (1-2):83-85(2008).
5. MinzSheetal Sharma and Kandirkunl. Folk herbal medicine used for male sterility in Ranchi district of Jharkhand. Journal of Annal of pharmacy and pharmaceutical sciences,1: 56-58 (2010).
6. NathDwijen Ethanomedicinal herbs,Apharmaceutical

*Asst. Professor (Botany) Govt. Girls College, Sehore (M.P.) INDIA

prospect of hepatitisdrugs Journal of Annal of pharmacy and pharmaceutical sciences (2010).

7. Patel S., Ethno-botanical studies of indigenous plants of Betul district and isolation of active principles for antiasthamatic activities Ph-D Thesis Botany Barkatullahauniversity Bhopal M.P.India.
8. Saxena B.R., Ethnobotanical and pharmacological studies of medicinal plants of Hamirpur district of Bundelkhand region Ph-D thesis , Botany Barkatullah University Bhopal ,M.P.India.
9. Sharma Vikas ,DiwanR.K.,Saxena R.C.,Shrivastava P.N., Ethanomedicinal studies on Edible plant species used by Gound and Bharia Tribes of Chhindwara district of M.P. Flora and Fauna 16 (2): 213-216 (2010).
10. Shetty S., Udupa S and Udupa L.N., Evaluation of antioxidant and wound healing effect of alcoholic and aqueous extract of Ocimum sanctum Linn in rats. Evidence based complementary and alternative medicine 5 (1):95-101 (2007).

Table – 1

S.No.	Common Name	Botanical Name	Family	Part Used
1.	Chhuimui	*Mimosa pudica*	Fabaceae	Root
2.	Mehandi	*Lawsonia inermis*	Lythraceae	Bark
3.	Haldee	*Curcuma longa*	Zingibaraceae	Rhizome
4.	Peepal	*Ficus religiosa*	Moraceae	Bark
5.	Gawarpatha	*Aloe vera*	Liliaceae	Leaf gel
6.	Seetafal	*Anonasquamosa*	Anonaceae	Leaves
7.	Arjun	*Terminaliaarjuna*	Combretaceae	Bark
8.	Sheesham	*Delbergiasissoo*	Fabaceae	Leaves
9.	Nirgundi	*Vitex nigundo*	Verbenaceae	Leaves oil
10.	Neembu	*Citrus aurantifolia*	Rutaceae	Fruits
11.	Jamun	*Syzygiumcuminii*	Myrtaceae	Leaves and Seed
12.	Mahua	*Madhucaindica*	Sapotaceae	Leaves and bark

****

Piles, Its Natural Treatment And Prevention

Dr. Rajesh Masatkar *

Abstract - Although piles is not dangerous disease. It can be curable. But my intention is to aware people about this disease is that, please keeps your digestion system healthy and adds fiber in your daily diet. Then you will not be suffering from this disease. This disease is more horrible because of long time inflammation take place in the anal region of affected person and he feels very difficulty during defecation. This condition of an affected person makes it more horrible than dangerous disease.
Keywords – Piles, Constipation, Ingestion, Digestion, Absorption, Excretion.

Introduction - Stomach is the main analyzer of human being. If function of stomach take place properly then whole body may feel well. If there is problem in our stomach then person may feel uneasiness. Health of human being is totally dependent on stomach. Guessing of good health is dependent on four action of our body. That is ingestion, digestion, absorption and excretion. If these four actions are going well in your body then we understand that our body is healthy. Another indication of our good health is soft stool and it's easily defecation.

Objective –

1. To identify and cures piles in their initials stage.
2. To saves the time of people from unnecessary treatments.
3. To increases the economical status of the people.
4. To reduces the cost of treatment at zero level.
5. To make the people of the country healthy and strong.
6. To make the people of the country useful in the development of our nation.
7. To minimizes the intake of medicines.

Methodology – To solve the above problem, I focused on digestion of the human being.

Causes of Piles – A number of factors are responsible for the development of piles.

1. Irregularity in bowel movement with susceptibility towards constipation and diarrhea is one of the causes.
2. Prolonged standing or sitting.
3. Constipation aids the condition of piles by giving way to prolonged straining.
4. Straining during defecation.
5. Hereditary factors may also be responsible for the pathogenic condition of piles.
6. Other factors contributing to the pathological condition of piles include age and vascular structure guarding the anal passage lacking in valves.
7. An obstruction or abnormal growth on the way to the anal canal can also lead to piles.
8. Pregnancy may well give rise to the condition of piles with the developing fetus exerting pressure on the vascular structures.
9. Absence of fiber, imbalanced diet with insistence on junk food contributes towards piles.
10. Obese people and those prone to long hours of sitting are also more likely to develop piles.

Common Symptoms of Piles -

1. A hard lump may be felt around the anus. It consists of coagulated blood, called thrombosed external hemorrhoid. This can be painful.
2. Bleeding during defecation.
3. Itchiness around the anus.
4. Mucous secretions from piles masses.
5. Pain while defecating.

Why do piles occur ? – The blood vessels around the anus and in the rectum will stretch under pressure and may swell or bulge. Inflamed veins (hemorrhoids) can develop when pressure increases in the lower rectum. This may be due to -

1. Chronic constipation
2. Chronic diarrhea
3. Lifting heavy weights
4. Pregnancy
5. Straining when passing a stool

The tendency to develop hemorrhoids may also be inherited. This risk of developing piles grows with age. Another factor is that low fiber diet or absence of fiber in diet is the main cause of piles. Due to the absence of fiber in diet constipation may develop in the human being. With the development of constipation or diarrhea, digestion of our food in our alimentary canal is not take place properly. Therefore chance of toxic substance increase in our body,

*Assistant Professor (Botany) Govt. Degree College, Nainpur, Distt. Mandla (M.P.) INDIA

due to that condition (sufferer) may invite several other diseases in their body.

Types of piles (hemorrhoids)

Internal hemorrhoids – are classified into four grades.

Grade 1 –There are small inflammations, usually inside the lining of the anus. They are not visible.

Grade 2 – Larger than grade 1 hemorrhoid, but also inside the anus. When passing a stool, they may get pushed out, but return unaided.

Grade 3 – Often called prolapsed hemorrhoids, these appear outside the anus. The patient may feel them hanging out. They can be pushed back in if the patient presses with their finger.

Grade 4 – These cannot be pushed back in and need to be treated by a doctor. They are large and stay outside the anus all the time.

External hemorrhoids – are called perianal hematoma. These are small lumps that are located on the outside edge of the anus.

Natural treatment of piles – Piles can be treated naturally in many ways.

Whey with ash of coconut hair – Take a fresh one tumbler whey and mix 3gm ash of coconut hair and drink it in the morning with empty stomach. You can take this mixer after lunch also in the noon. This mixer can be continuing by seeing the condition of person. If person may affect more then it will be continue for a month.

High fiber diet – During piles and constipation people may take high fiber diet in their daily routine for the proper movement of stool. Person may take daily 100gm sprouted grams or moong in their breakfast and evening snack time. Due to high fiber diet stool may passes easily through anus.

Discussion - Due to disturbance in daily routine of life style and eating junk food constipation and piles may develop. But my intention is that we must take care of our stool movement regularly. If anybody feels that his stool movement is not taking properly then it may correct it with following above method. If you are not taking it seriously then you will be in trouble of above problem. Body's health depends on type of food we take.

Findings –

1. Absence of fibers in diet for long time is the main cause of constipation and piles.
2. Intake of fiber is very necessary for regular stool movement.
3. Due to intake of fiber we can save our health from other disease also.
4. Soft stool and its easy defecation are the symbol of good health and it is achieved by intake of fiber.

Suggestions –

1. Avoid straining during defecation.
2. Take plenty of fibers in diet like sprout grams, moongs, vegetables, salad, and fresh fruits to prevent this disease.
3. Drink plenty of water (5-6 liters/day).
4. Eat fresh curd during lunch and drink fresh whey after one hour of lunch.
5. Do not take sour curd and whey.
6. Do not take junk food, fried food, chilies and other spices during this disease.

Conclusion – in initials stage piles can be cured permanently by following above methodology Due to piles person are not able to do work properly in their daily life. In this way person loss his valuable time and also suffer his development side of life. This loss bears not only his family, but indirect this effect comes on our society, state and our nation, because progress of any nation is totally dependent on citizens of their country.

References :-

1. www.medicalnewstoday.com/articles/239454.php.
2. www.medicinenet.com/hemorrhoids.piles/article.htm.
3. www.Healthkart.com/resources/9-lifestylee-lead-painful-symptoms-piles/#.We3sotO6zMw.
4. www.ayurvedapilescure.com/blog/piles-treatment-doctors-delhi-ghaziabad.
5. www.prokerala.com/health/diseases/piles.htm.
6. www.livescience.com/51998-dietary-fiber.html.

****

Photocatalytic Degradation Of Organic Contamination By ZnO - A Review

Veer Singh Barde* Dr. Brijesh Pare**

Abstract - Various forms of ZnO catalyst involved towards waste water treatment on surface or as suspension. Photocatalytic decomposition with ZnO catalysts is mainly applied for treating organic contaminants dyes in wastewater because of their ability to attain fully mineralization of the organic contaminants under mild reaction conditions. Author reviewed more than hundred available papers related to photocatalytic oxidation of organic dyes present in waste water effluent and are summarized.
Keywords - ZnO nanoaprticles, Dye degradation, Photocatalysis, Visible light.

Introduction - The importance of the wastewater treatment and its disposal gradually enhances in the modern times because of environmental concern and public health. All existing procedures for treatment of wastewater are categorized as physical, chemical and biological processes.[1] Limitations in terms of execution, competence, and cost are the factors, however, biological processes, have been extensively used and exhibit potential towards industrial and agricultural wastewater treatment.[2] The chemical process deals with the photocatalysts like TiO_2, ZnO etc. mediated degradation of the industrial waste water.[3] These processes have some limitations which can potentially affect degradation efficiency through control pH range, rapid organic-load variations, and also the effluent's physicochemical behavior.[4]

The use of a heterogeneous photocatalyst is a conventional method for water purification which includes reduction and oxidation reactions from adsorbed wastewater, oxygen molecules and hydroxyl anions, or other organic molecules.[5-8] Uses of metal oxides like TiO_2, ZnO etc. in photocatalysis employ semiconductors in suspension.[9] However, this method could be a more expensive when recovery of the photocatalyst particles is done, it is a difficult task as well as costly process. A feasible alternative is the preparation of photocatalyst layers in different substances or uses the catalytic support without hampering the photocatalyst activity. Many efforts have been made in which few studies have demonstrated continuous flow reactors with fixed-bed photocatalyst.[10] Integral to this study was an assessment of the efficiency of heterogeneous photocatalyst processes for industrial and agricultural wastewater treatment with immobilized ZnO to reduce organic pollutants.[11] The treatment was done by the application of catalysts[12]/photocatalyst[13] or by using the porous carbon or silica as a supporter for the catalyst. Moreover, solar emission was also used as UV-Visible source.[14]

Recent review is focused on the most important photocatalysts i.e. titanium dioxide and zinc oxide and their photocatalytic activity towards wastewater treatment. These applications were comprised of photodecomposition of various industrial pollutants, killing tumor cell and killing bacteria in cancer treatments.[15, 16]

The efficiency of a photocatalytic system is also affected by the form of ZnO/TiO_2 nanoparticle catalysts used as immobilized on surface or as colloidal suspension[17-18]. The photocatalysis reaction is very effective for the degradation of various organic impurities in waste water; however, its practical application as slurry type suspensions is limited due to the difficulty in separating the nanocatalysts particles after the photocatalytic reaction[19-20]

The present review aims to provide a comprehensive analysis on the mechanism of ZnO photocatalytic oxidation process, using UV-visible light photocatalyst material, irradiation sources, effect of pH, temperature, dye concentration and catalyst mass on photocatalysis and the application towards wastewater treatment.

Review - In the present review we have undertaken mainly ZnO as catalyst. Above all, ZnO has the ability to demonstrate a multifaceted nature that has a diverse group of growth morphologies such as nano wires, nano cages, nano combs, nano springs, nano rings, nano helix and nano rods etc. In short, many studies have successfully used ZnO as a photocatalyst to degrade harmful and toxic-compound streams, with many finding it to be superior to other photocatalysts.

Some researchers also focused on comparative study of ZnO with other catalysts using similar reaction conditions

***Research Scholar (Chemistry) Govt. Madhav Science P. G. College, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA**
****Professor (Chemistry) Govt. Madhav Science P. G. College, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA**

to find out the efficiency of catalyst for photocatalytic degradation of waste material particularly dyes in water, while some other scientists focused ZnO with other supporting material to enhance the photocatalytic efficiency. Kabraet al.[21] determined an optimum photocatalytic activity, the optimal catalyst loading depends entirely on the type and dimensions of the reactor as well as the type and concentration of the oxidised compound.

Daneshvar et al.[22] and Behnajadey et al.[23] found that photodegradation efficiency of Acid Red 14 and Acid Yellow 23 respectively increases with an increase in ZnO concentration, and then decreases on further increase in concentration. This decrease was due to the non-availability of active sites on the catalyst surface and the penetration of UV-Visible light into the suspension. Total active surface area available for photocatalysis is directly proportional to the amount of catalyst powder. Daneshvar et al. also studied the effect of pH on photocatalytic degradation rate of colour removal efficiency of acid solution using powdered ZnO as a photocatalyst.

Deneshvar et al.[24] observed less penetration of UV-visible light due increased turbidity of suspension, which ultimately decreases the photo-activated volume of suspension. Sakthivelet al.[25] concluded that the photocatalytic reaction rate was decreased for the same reasons.

Chakrabarti et al.[26] studied the photocatalytic degradation by using powdered ZnO. They noted that is photocatalytic activity decreased under acidic pH, attributed to high adsorption at low pH. However they also found that an excess of OH anions, under basic conditions, facilitated the photodegradation of hydroxyl radicals. Finally they concluded that change in pH shifts the redox potentials of the valence and conduction band, which may affect the interfacial charge transfer.

Poulios et al,[27] reported a higher pH reduced the overall adsorption of pyridinyloxyacetic ion on the oxide surface, and a gradual increase in electrostatic repulsion between pyridinyloxyacetic anion and the oxide surface ultimately reduced the overall photocatalyticactvity.

Zouaghi et al.[28] showed that overall photocatalytic activity of Monolinuron and Linuron decreases because of the decrease in the rate of formation of an OH radical due to decreased OH ions concentration at a low pH. At a higher pH near to ZPC, an increased photocatalytic activity was noticed because of the increased rate of formation of the OH radical up to a certain pH closely associated with the zero point charge. With further increase in pH beyond the zero point charge the photocatalytic activity decreases because of the retardation in the rate of formation of the OH radical at the higher pH.

Singh et al.[29] reported a novel biological approach for the formation of zinc oxide nanoparticles using Maddar*(Calotropisprocera)* latex at room temperature. They characterized the formed ZnO NPs by X-Ray diffraction pattern which reveals the formation of ZnO nanoparticles, which showed crystallinity and transmission electron microscopy (TEM) suggested particles size in the range of 5-40 nm and reported simple and cost-effective biological approach for the formation of ZnO NPs which has promising application in biosensing, electronics and photonics.

Baruahet et al.[30] studied the heterogeneous photocatalytic systems via metal oxide semiconductors like TiO_2 and ZnO which are capable of effectively and efficiently for treatment of waste water. They used ZnO nanostructures for multifunctional photocatalytic membranes and reported the advantageous over freely suspended nanoparticles due to the ease of its removal from the purified water.

Ravelli Davide et al.[31] prepared ZnO nanorods, Silver- and copper-doped ZnOnanorods and silver, copper-doped ZnO nanorods by a simple precipitation technique and theses photocatalysts were characterized by various techniques such as XRD, SEM and FT-IR. They also studied influence of dopants content on the optical properties they have been found that the Ag or Cu doping leads to the optical band gap narrowing.

Lanje et al.[32] used the cost effective and simple precipitation process for the synthesis of zinc oxide. They used single step process with the large scale production without an unwanted impurity is desirable for the cost-effective preparation of ZnOnanparticles. For this they used, the low cost precursors such as zinc nitrate and sodium hydroxide for synthesize of ZnO nanoparticles they used. In order to reduce the agglomeration among the smaller particles, the starch molecule this contains many O-H functional groups and could bind surface of nanoparticles in initial nucleation stage.

Ameta G. et al.[33] reported the sonolytic, photo-catalytic and sono photo-catalytic degradation of toluidine blue in the presence of ZnO. They found that rate of the degradation is enhanced by the presence of visible light, ultrasound and photo-catalyst.

S. Shanthi et al.[34] applied solar photo-catalytic oxidation technique using ZnO NPs for the treatment of waste water for the removed of organics and dye staffs. They reported that when ZnO NPs were used instead of ZnO photo-catalytic activity enhanced. They used co-precipitation method for the synthesis of ZnO NPs. They used different energy source for photo-catalytic degradation.

Akbar Mohammad et al.[35] reported one pot room temperature synthesis of ZnO nano-flowers (ZnO-NFs) using asymmetric Zinc dimeric complex as a single molecular precursor. They used these nano-flowers for the photo-catalytic degradation of different dyes like Methyle orange, Chicago sky blue, Congo red and Eosin blue which are major river pollutant and industrial wastes. They found that it has better activity against Methyle orange compare to other dyes used under similar condition.

Umair Alam et al.[36]synthesized a series of Y and Co doped ZnO(YVZ) nanoparticles by surfactant assisted sol-gel technique to enhance photo-catalytic activity for degradation of organic pollutants under visible light. They

studied photo-catalytic degradation of Rhodamine B, Methylene blue, 4-nitrophenol dyes under UV-light irradiation or other light. The effect of operational parameters such as, catalyst dosage and effect of pH solution on degradation of Rhodamine B was investigated. Maghdad Pirsaheb et al.[37]synthesized Cr-doped ZnO NPs under mild hydrothermal conditions using chromium oxide and n-butyle amine as dopant and surface modifier respectively. They use this nearly prepared Cr-doped ZnO NPs for the photo-catalytic degradation of aniline in continuous reactor. They also investigated photo-degradation operational parameters and applying optimum conditions 93% of aniline can be degraded.

Conclusions - Reviewing the recent representative publications, the function of various operating parameters on the photocatalytic decomposition of various organic dyes in wastewater explored in this review. ZnO has been recommended to be efficient photocatalysts for the degradation and mineralisation of various toxic organic pollutants such as azo dyes in wastewater water. The investigations also suggest that the coexistence of photocatalyst and lights exposure is necessary for photocatalytic degradation of dyes. Various operating parameters such as nature light source, pH of the reaction medium, temperature, dye concentration, catalyst loading and type of catalysts have a considerable effect on degradation efficiency of dyes in wastewater. Optimization of the photodecomposition parameters is essential from the viewpoint of efficient design and the application of photocatalytic oxidation processes to guarantee sustainable wastewater purification process.

So, we need to focus for developing more reliable photocatalysts which can absorb visible and solar radiation or both. In addition, further work is essential on the designing and understanding the working parameters for oxidation of pollutant dyes in wastewater.

Acknowledgement - One of the authors is thankful to RGNF, New Delhi for providing Junior Research Fellowship and laboratory facilities provided by Department of Chemistry, Govt. Madhav Science P.G. College, Ujjain (M.P.) India.

References :-

1. Neppolian B., Choi H. C, Sakthivel S., Arabindoo B., Murugesan V., *J. Haz. Mat.,* 89 (2-3), (2002) 303-17.
2. Sin J.C., Lam S.M., Mohamed A.R., Lee K.T.,*Inter. J. Photoenergy,*(2012) 185159.
3. Nakata K., Fujishimaa A., *Journal of Photochemistry and Photobiology C: Photochemistry Reviews,* 13(3), (2012) 169-89.
4. Vilar V. J. P., Gomes A. I. E., Ramos V. M., Maldonado M. I., Boaventura R. A. R., *Photochem. &Photobio.Sc.,* 8(5), (2009) 691-8.
5. Chong M. N., Jin B., Chow C. W. K., Saint C., *Water Research,* 44(10), (2010) 2997-3027.
6. RizzoL., Meric S., Guida M., Kassinos D., BelgiornoV.,*Water Research*, 43(16), (2009) 4070-8.
7. Abhang R. M., Kumar D., Taralkar S. V., *Inter. J. ChemEnggAppl,* 2(5), (2011) 337-41.
8. Ibhadon A. O., Fitzpatrick P., *Heterogeneous photocatalysis: Recent advances and applications. Catalysts,* 3, (2013) 189-218.
9. Ni M., Leung M. K. H., Leung D. Y. C., Sumathy K., *Renewable and Sustainable Energy Reviews,* 11, (2007) 401-25.
10. Samanamud G. R. L., Loures C. C. A., Souza A. L., Salazar R. F. S., Oliveira IS, Silva M. B., , *ISRN Chemical Engineering,* 275371, (2012) 1-8.
11. Homem V., Santos L., *Journal of Environmental Management,* 92(10), (2011) 2304-47.
12. Mondal K., Kumar J., Sharma A., *Colloids and Surfaces A: Physicochemical and Engineering Aspects,* 427, (2013) 83-94.
13. Mondal K., Kumar J., Sharma A., *Nanomaterials and Energy* (2013) 1-12.
14. Rizzo L., Fiorentino A., Anselmo A., *Chemosphere,* 92(2), (2013) 171-6.
15. Priya S. S., Premalatha M., Anantharaman N., *ARPN Journal of Engineering and Applied Sciences,* 3(6), (2008) 36-41.
16. Attia A. J., Kadhim S. H., Hussen F. H., *E- Journal of Chemistry*, 5(2), (2008) 219-23.
17. Ali R., Hassan S. H., *The Malaysian Journal of Analytical Sciences* 12(1), (2008) 77-87.
18. Baruah S., Pal S. K., Dutta J., *Nanoscience& Nanotechnology-Asia* 2, (2012) 90-102.
19. Mehrvar M., Anderson W. A., Moo-Young M., *Int. Journal of Photoenergy*3, (2001) 187-91.
20. Khezrianjoo S., Revanasiddappa H*., Chemical Sciences Journal (CSJ-85)*, (2012) 1-7
21. Kabra K. R., Chaudhary and Sawhney R. L., *Ind. Engg. Chem. Res.,* 43(24) (2004) 7683-7696.
22. Daneshvar N., Salari D. &Khataee A. R., *Journal of Photochemistry and Photobiology A: Chemistry*, 162 (2004) 317.
23. Behnajady M.A., Modirshahla N. and Hamzavi R., *Journal of Hazardous Materials*, 133(1-3), (2006) 226-232.
24. Daneshvar, N., Rasoulifard M. H. Khataee A. R. and Hosseinzadeh F., *Journal of Hazardous Materials,* 143 (2007) 95-101.
25. JagadishC., S.J. andPearton S. J., *Science Direct, Zinc oxide bulk, Amsterdam ; London : Elsevier,*(2006).
26. Chakrabarti S. and Dutta B. K., *Journal of Hazardous Materials*, 112(3) (2004) 269-278.
27. Poulios I., Kositzi M. and Kouras A., *J. Photochem. Photobio. A: Chemistry*, 115(2) (1998)175-183.
28. Zouaghi R.,*Journal of Water Science*, 20 (2007)163-172.
29. Singh R. P., Shukla V. K., Yadav R. S., Sharma P. K., Singh P. K., Pandey A. C., *Adv. Mat. Lett.,* 2(4), (2011) 313-317.
30. Baruah S., Pal S. K. and JoydeepDutta, *Nanoscience&*

Nanotechnology-Asia, 2 (2012) 90-102.

31. Davide R., *Chemical Society Reviews*, 38,7 (2009)1999-2011.
32. Lanje A. S., Sharma S. J., Ningthoujam R. S., and Pode, R.B, *Adv. Powder Technol.,* 24, (2013)331-335.
33. Ameta G., Vaishnav P., Malkani R. K. &Ameta S. C., *J. Ind. Coun. Chem.,* 26 (2009) 100.
34. Santhi S., Manjula R., Vinulakshmi M. &Rathina B. R., *Int. Journal of Research in Pharmacy and Chemistry,* 4(3) (2014) 571.
35. Mohammad A., Kappor K. &Mobin S. M., *Chemistry Select*, (2016) 3483.
36. Alam U., Khan A., Raza W., Khan A., Bahnemann D. &Muneer M., *Catalysis Today,* (2016)1.
37. Pirsaheb M., Shahmoradi B., Beikmohammadi M., Azizi E., Hossini H. & Ashraf G. M., *Scientific Reports*, (2017) 7:1473.

****

Decline Of The Urban House Sparrow Passer Domesticus Population In Rewa

Nidhi Jaiswal *

Abstract - The population of House sparrow (*Passer domesticus*), once a very common bird, has declined markedly in most parts of the world including India. Sparrows were distributed widely in the district Rewa, Madhya- Pradesh, India. However over the past few decades, they became not so common in this part of the world. A study has been conducted to establish the database for their current population and to assess the possible causes of their decline at Rewa. After prolonged searching, a relatively dense population of sparrow was found in busy areas of railway station and a nearby market in Rewa. The behavior of these birds was studied extensively from early morning to late night. Sparrows residing at the Rewa station are habituated with the loud noise, being undisturbed by passing trains. Thus, it can be concluded that in spite of heavy noise of trains, crowdy travelers, and lack of nest sites, they remain at the station because of availability of food in the nearby roadside market. Based on this observation, sound pollution and availability of food are not responsible for their decline.

Key Words - House-sparrow decline, sound-pollution, bird-pollution, mobile- towers network and prolonged search.

Introduction - Birds are common inhabitants of our ecosystem The house sparrow is a member of the family Passeridae and it is one of the larger sparrows, The house sparrow has a historical commensal relationship with man and has followed his colonisation of the majority of the earth. It has become one of the most widely distributed land birds in the world (Summers-Smith, 1988). The house sparrow is primarily associated with human habitations e.g., agricultural land, villages and urban areas (Lowther and Cink, 1992). The optimum habitat for House Sparrows in temperate regions is a combination of buildings with holes under tiles or eaves to provide suitable nesting sites and sufficient green areas to provide food for the young (Summers-Smith, 1988). House sparrows are normally found in flocks that associate in many activities, ranging from communal roosting to feeding, dust and water bathing, and 'social singing' when the birds collect in bushes and call together. This can occur when they emerge from their roosting sites prior to searching for food and regularly on dull winter afternoons (Summers-Smith, 1988). The house sparrow is primarily a seed eater, in rural areas specializing on the seeds of cultivated grain crops such as oats, wheat, barley, corn, and maize. House sparrows use a broad range of materials for nest building including feathers, grass inflorescences, stalks and roots of plants, bark, threads, string and even pieces of paper and wool (Indykiewicz, 1991). Within nest-boxes, the nest may be merely a cup of vegetation at the bottom of the box or built up so that the nest material covers the sides as well as the top of the chamber (Lowther and Cink, 1992). The breeding season starts in April and runs through to August, allowing pairs to produce up to four clutches over the summer (Summers-Smith, 1988).

According to the latest sparrow census reported by various environmental organizations, there has been an 80 percent decline in their numbers during the past decades in India. The disappearance of sparrows in India has been widely reported, although responses have been quite muted. Their recent decline around the world has put them in the list of the International Union for the Conservation of Nature (IUCN). In an effort to draw the attention of government agencies and scientific community for more conservation measure and research on common bird's species and biodiversity, 20th march has been designated world house sparrow day.

Materials and Methods - After a prolong searching in the neighboring areas of Rewa region, a group of sparrows were spotted at Rewa railway station (sampling site 1) and nearby market (sampling site 2) are identified as the residential area of house sparrows. This is unexpected, as sparrows are known to reside in old houses. Normally they remain at the same place in the early morning. After that, they go out together to the nearby roadside market near the railway station in search of food. Hence, early morning is chosen as the ideal time for counting of house sparrows in the railway station. The same method was applied to count sparrows in the market place in the afternoon. Thus, their population was counted twice a day. On both the occasions, the number of sparrows was not many, while the counting was not seen to be constant.

*Research Scholar (Zoology) APS University, Rewa (M.P.) INDIA

Government agencies and the scientific community fo Of Government agencies and the scientific community for More conservation measures and researches on Common bird species and urban biodiversity, March 20 has been designated as World House sparrow Day More conservation measures and researches on Common bird species and urban biodiversity, March 20 has been designated as World House sparrow Day.

Hence, other counting methods like the line transect method or 'marking' method was not used. The observations were carried out from October 2011 to May 2012. Because both locations are busy and noisy, the noise levels were also measured from 4:30 am to 10:30 pm (once in every thirty minutes). As the sparrows take nest in a tree of the railway station full of halogen lights, the illumination level was also measured using a digital lux meter in several places of the study areas twice per day. To collect the opinions regarding the decline of sparrow in that locality, a survey was also conducted among the local people with age group of 20-70 years.

Table 1. Counting of Sparrow Population in Rewa

Place	Sept-Nov	Dec-Feb	March-May
Rewa Station	115	122	112
Market	150	128	165
Total	265	250	277

Table02.Public Survey report on the cause of decline of sparrow population

Age Group	Number	Comment
(60-70) years	13	Full of sparrows. Major decrease in past 5 years
(50-60) years	15	Drastically declined
<50 years	17	The decline is very prominent

Results and Discussion -

General aspects of sparrow population - The size of sparrow populations is quantified at different seasons varied from about 112-165, as presented in Table 1. It is found that the abundance of house sparrow in different locations is significantly different. Changes in the population do not appear to vary between seasons. At about 4am to 4:30 pm, they came back to the nest to spend the night. It is also noticed that they prefer the dark. It is interesting to find that the number of sparrows spotted at the market is always greater than those spotted at the railway station. It proves that because of the food availability, sparrows also came from other locations to the station. To obtain the opinion about the decline of sparrow from local public, a survey was conducted among the age group (20-70) in the local areas. All of them agreed with the situation of a rapid decline of house sparrow, although none of them were not sure about the reason for such changes. The survey report is given in Table 2.

Possible causes of decline in sparrow population -

Predation - There are three major candidate predators that could conceivably affect house sparrow numbers, the tawny owl, the domestic cat, the sparrow hawk (*Accipiter nisus*). As predation is only one of the several factors affecting prey populations, any regulatory effect it may have been supported or counteracted by other factors (Newton, 1998).

Competition - Inter-specific or intra-specific competition for food is another factor that can regulate house sparrow numbers. An overlap in food and other resources provides the potential for competition because some of the resources removed by one species might otherwise have been available for a second species (Newton, 1998). When different species feed together on the same food, individuals of a dominant species can greatly reduce the feeding rates of individuals of subordinate species. The collared dove and wood pigeon (*Columba palumbus*) are both granivorous species. As such, they can be the two most likely competing species against housesparrows for food (Snow and Perrins, 1998).

Lack of nest sites - A lack of holes suitable for nest sites on modern or renovated buildings has been proposed as a possible cause of the sparrow's declining population in London, UK (Vincent, 2005). There has been an increase in the use of plastic fascia boards and the use of contoured tiles (or roofing sheets) to prevent the entry of birds on modern housing. house sparrows predominantly nest in holes and gaps in soffit boards and under tiles. Therefore, this tendency may have an impact on the availability of nest sites. This work has shown that newer buildings with modern materials, and constructed to conform to current building regulations, seem to be generally less suitable for the sparrow's habitation due to the limited access to the roof space (Wotton et al., 2002).

Disease - house sparrows have the potential to serve as a reservoir of disease in urban and suburban areas (Juricova et al., 1998). The infectious disease salmonella is common during winter and spring in free-living wild house sparrows (Macdonald, 1978). In cases of fatality, the birds show enlargement and congestion of the liver and spleen with liver, lung, muscle and skin abscesses. The spread of disease may be promoted by the close proximity of birds in gardens for communal feeding with bird table and feeders (Macdonald, 1978). As disease spreads between individual birds, they will become weak prone to more diseases.

Food availability - David Lack (1954) argued in the natural regulation of animal numbers' that initial populations must be regulated by density-dependent mortality factors such as food shortage, predation, parasitism or disease. However, Lack (1954) believed that food shortage was the chief natural factor limiting the numbers of many birds in particular, reproductive rate. Food shortage can also affect individuals directly, by causing the breeding failure or starvation (Newton, 1998).

Environmental pollutants - Many toxic chemicals are now added continuously to the natural environment, either as pesticides, industrial effluents, or combustion emissions. Some of these chemicals are now regarded as important sources of bird population declines, influencing their distribution and abundance patterns on both local and

widespread scales (Newton, 1998). Also zinc, cadmium, and lead concentrations were higher in the livers of nestlings with delayed development (reduced body weight) as compared to ones with typical weights (Romanowski et al., 1991).

Mobile tower and Radio signals - Communication towers and wires are death traps for bird species. Tower have proliferated in recent years; with an estimated 5000 new towers erected per year during the 1990s, mainly for the cell phone and digital TV industries. Any tall structure will kill birds by collision and lighted towers attract birds at night. Theoretically cell-phone towers are less dangerous than the taller structures. Due to urbanization whole city covered with electric wire like spider web. Many birds build their nest in electric poles, which could be reason for bird mortality.

Pesticides - Pesticides are significant sources of avian mortality. In our agriculture fields chemical fertilizer used in vast scale, especially DDT. DDT was the well-known culprit in the near-demise of many species feeding at the top of the food chain.

Conclusion - This study was conducted to provide insights in to the changes in population density of house sparrow in different localities of Rewa. It was also observed that the sparrows take rest on the site of the tree where the illumination level is low (30-45 lux). Considering all these aspects, it is most likely that sparrow population is not decreasing because of a single factor. Based on the public opinion, it can be concluded that the sparrow's population is decreasing without specifications of the causes. However, several factors (like predation, ecological reason, competition among the same or similar species, lack of nest sites, disease, food availability and pollution) should interact each other to cause the decrease of sparrow population.

References :-

1. Daniels, R.J.R., (2008). Can we save the sparrow. Current Science, 95, 1527-1528.
2. Indykiewicz, P. (1991). Nests and Nest-Sites of the House sparrow, *Passer domesticus* in Urban, Suburban and Rural environments. Acta Zoological Cracov, 34, 475-495.
3. Juricova, Z., Pinowski, J., Literak, I., Hahm, K., and Romanowski, J., (1998), Antibodies to Alphaviruses, Fla- vivirus, and Bunyavirus Arboviruses in House Sparrows in Warsaw. Avian Diseases, 42, 182-185.
4. Karolewski, M., Lukowski, A., Pinowski, J., and Trojan-owski, J., 1991, The International Symposium of the Working Group on Granivorous Birds. Chlorinated hydrocarbons in eggs and nestlings of Passer montanus and *Passer domesticus* from urban and suburban Warsaw-Preliminary Report. In Pinowski, J., Kavanagh, B., and Gorski, W. (eds.), Nestling mortality of granivorous birds due to microorganisms and toxic substances. Polish Scientific Warsaw, Poland, 189-196.
5. Lack, D.,(1954). The natural regulation of animal numbers. Clarendon Press, Oxford, UK, 214 p.
6. Lowther, P. and Cink, C. (1992) The House Sparrow.
7. Macdonald, J.,(1978).Cutaneous Salmonellosis in a House Sparrow. Bird Study, 25, p. 59.
8. Newton, I., 1998, Population Limitation in Birds. Aca-demic Press Limited, USA, 147 p.
9. Romanowski, J., Pinowski, J., Sawicka-Kapusta, K. and Wlostowski, T. (1991). The effect of heavy metals upon development and mortality of *Passer domesticus* and *Passer montanus nestlings*. In Pinowski, J., Kavanagh,B., and Gorski, W. (eds.), Nestling mortality of granivo-
10. rous birds due to microorganisms and toxic substances. The International Symposium of the Working Group on Granivorous Birds, 197-204.
11. Snow, D.W. and Perrins, C., (1998).The Birds of the Western Palearctic; Volume 1 nonpasserines. Oxford Univer- sity Press, UK, 143 p.
12. Summers-Smith, D., (1999). Current status of the House sparrow in Britain. British Wildlife, UK, 381-386.
13. Summers-Smith, D., (2000). Decline of House Sparrows in Large Towns. British Birds, UK, 93 p.
14. Vincent, K.E., (2005) Investigating the causes of the decline of the urban house sparrow population in Britain. Ph.D. thesis, De Montfort University, 302 p.
15. Wotton, S., Field, R., Langston, R., and Gibbons, D., (2002). Homes for Birds: The use of houses for nesting bybirds in the UK. British Birds, 95, 586-592

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

Antagonism of normal leaf mycoflora of Aloe vera against the pathogenic Fusarium oxysporum

Akhilesh Ayachi* Shilpa Kaurav**

Abstract - *Fusarium oxysporum* is known to cause leaf and basel root disease to the economically important *Aloe vera* leaves. In order to biologically control the pathogen, the present study investigated the role of the mycoflora, otherwise present on the *A. vera* leaf for their potency to counter the pathogenic *F. oxysporum.* Endophytic *Penicillium sclerotigenum* was isolated from healthy *A. vera* leaves and the antagonistic effect was measured using dual culture and culture filtrate methods. In both the methods, *P. sclerotigenum* was able to suppress the growth of *F. oxysporum* significantly.
Key Words - *Aloe vera*, Leaf and Basel root diseases, *Fusarium oxysporum*, Antagonism, Biological control

Introduction - *Aloe barbadensis* Miller (most common name: *Aloe vera*) is known for its gel filled leaves which has been shown to exert many biological activities and nutritional benefits (Kawuri et al., 2012). The *Aloe vera* gel is widely used in drug and cosmetics industries as well as in healthcare products, and thus has great economic importance. A destructive disease with leaf rot symptom in *A. vera* due to *Fusarium oxysporum* is well known fact (Bahekar et al., 2017). The infection causes leaves to became dry, rot and brownish in color, shrinking and eventually broken. The tips of the leaves become rotten and dried. Since the aloe plants are used in medicine and cosmetics (Olusegun, 2000), the contamination with fungal pathogen in the plants is of public importance, as *Fusarium* produce mycotoxin trichothecenes which is very toxic for human (Miller and Trenholm, 1994). Alexoupolos et al. (1996) reported this toxin can cause cancer, hemorrhage, edema and immune deficiency.

In order to reduce the economic loss and to protect the crop from pathogen different control methods are being used. Universal requisite to implement the practice of sustainable agriculture, using environment-friendly strategies and less damaging to soil and water resources. Biological control (biocontrol) agents, natural plant metabolites, and cultural methods, are being explored for possible use in integrated disease management platforms. Most of these biological control agents are the live biological cultures or organisms, materials and extracts with the ability to counter the pathogen.

Endophytic fungi are important source for new biologically active metabolites and can be used as biocontrol agents by intelligent screening (Schulz et al., 2002). They grow within their plant hosts without causing apparent disease symptoms (Petrini 1991, Wilson 1995) and growth in this habitat involves continual metabolic interaction between fungus and host. Additionally, in comparison to fungal plant pathogens and fungal soil isolates, relatively few secondary metabolites have been isolated from endophytic fungi (Tan & Zou 2001). The present study deals with the antagonistic activity of endophytic *Penicillium sclerotigenum* against *Fusarium oxysporum* during *in vitro* trials.

Materials And Methods - *Collection of* Aloe vera *leaves*

The *A. vera* leaves were collected from the local farm situated in the premises of Jawaharlal Nehru Agricultural University campus. The apperantly healthy leaves were chosen, cut from the base and immediately transported to the laboratory. The leaves were washed with water and the leaf surface was sterilized using 90% alcohol.

Isolation and identification of endophytic fungi

The surface sterilized leaves were cut in to small parts under laminar air flow. The cut peices were cultured on potato dextrose agar medium for 3-7 days at 28 ± 1°C. The fungi grown on to the leaves were isolated and subcultured. These isolated fungi were identified using cultural and microscopic characters using standard literature.

Pathogenic strain of *Fusarium oxysporum* MTCC 4162 was procured from Microbial Type Culture Collection and Gene Bank (MTCC), CSIR-Institute of Microbial Technology, Chandigarh, India. The culture was maintained on potato dextrose agar at 28 ± 1°C.

Antagonistic activity

1. Dual culture method - Dual culture method was adopted from Mishra (2010). A 5 mm diameter mycelial

*(Botany and Microbiology) Govt. M. H. College of Home Science and Science for Women, Jabalpur (M.P.) INDIA
** Department of P.G.Studies and Research (Biological Sciences) Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.) INDIA

disc from the actively growing culture of *Penicillium sclerotigenum* and the *Fusarium oxysporum* MTCC 4162 were placed on the opposite of the plate at equal distance from the periphery. The experimental design used was completely randomized with four Petri dishes for each isolates. In control plates, a sterile agar disc was placed at opposite side of the *Fusarium oxysporum* MTCC 4162 inoculated plates. Inoculated plates were incubated at 28 ± 1°C upto 7 days. The radial mycelial growth was measured after 7 days and was calculated in relation to growth of the controls as follows (Hajieghrari et al., 2008). % growth inhibition = [(Radial growth in control – radial growth with *P. sclerotigenum*)/ Radial growth in control] x 100

2. Culture filtrate method - The inhibition of the mycelial growth of plant pathogen was tested by metabolites secreted by *P. sclerotigenum* in liquid medium. One hundred milliliters (ml) of potato dextrose broth was dispensed into 250 ml Erlenmeyer flasks and inoculated with 5 mm diameter disc from edge of 7 days old culture of the *P. sclerotigenum* and incubated for 15 days at 28 ± 1°C. After the optimum period, the cultures were filtered through sterile Whatman No.1 and stored at 4°C till further use. The sterilized filtrate were amended in PDA to make three concentrations (25%, 50% and 100%) in Petri plates. Mycelial discs (5 mm diameter) of the pathogen (*F. oxysporum*) were placed at the centre of solidified agar plates and incubated at optimum temperature for 7 days. Plates devoid of culture filtrates served as control. Radial growth of *F. oxysporum* was measured and its inhibition percentage of mycelia growth was calculated as shown above.

Results - The *Penicillium sclerotigenum* isolated from the healthy leaves of Aloe vera plants in Jabalpur area was isolated and maintained in PDA media. This endophyte was identified by Microbial Culture Collection, National Centre for Cell Science (NCCS), Pune, India using molecular techniques (data not shown).

When the antagonism of *P. sclerotigenum* was analyzed against pathogenic form of *Fusarium oxysporum* MTCC 4162 using dual culture method, the *P. sclerotigenum* showed complete emergence on to the plate, suppressing the growth of *F. oxysporum* MTCC 4162 almost completely (Fig 1). While, *P. sclerotigenum* covered almost all the space available (radial growth = 40 mm), the 5 mm disc of *Fusarium oxysporum* MTCC 4162 only grew up to 11 mm. In this way, the *P. sclerotigenum* showed 72.5 % inhibition of *F. oxysporum* MTCC 4162, pathogenic to *Aloe vera*. **(See in the last page)**

When the culture filtrate of *Penicillium sclerotigenum* was fused in PDA plates and *Fusarium oxysporum* MTCC 4162 was inoculated on it, the *Fusarium oxysporum* MTCC 4162 grew slower as shown by the radial growth after 7 d. While control (without *P. sclerotigenum* extract) showed the mean radial growth as 78.6 ± 4.3 mm after 7d, the 25% concentration showed 61.1 ± 2.5 mm, 50% concentration showed radial growth as 43.9 ± 5.6 mm and 100% extract of *P. sclerotigenum* reduced the radial growth of *F. oxysporum* as 25.9 ± 3.9 mm after 7 days of incubation. Fig 2 shows the inhibition pattern of *F. oxysporum* by the culture filtrate of *Penicillium sclerotigenum.*

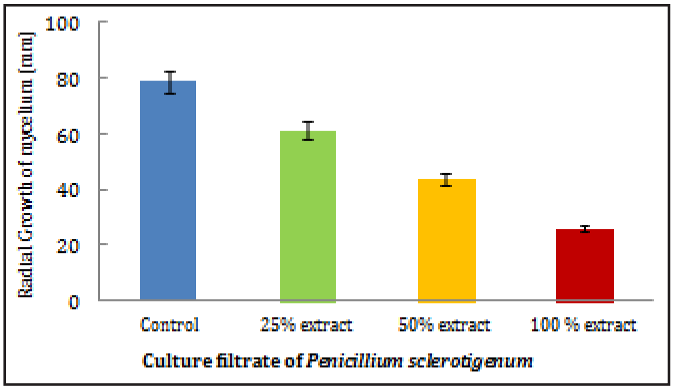

Fig 2: Radial growth of *Fusarium oxysporum* MTCC 4162 without (control) or with different concentrations of culture filtrate of *Penicillium sclerotigenum* after an incubation time of 7 days. Data are shown as mean ± standard deviation (n=3).

Discussion- The knowledge on plant-associated fungi and their antagonistic potential is essential not only for understanding their ecological role and the interaction with plants, but also for future biotechnological application, e.g., biological control of plant pathogens or the isolation of bioactive compounds. Bioloigcal control of pathogenic fungi are being prioritized these days over the use of fungicides, as the former is more economical, environment friendly and effective method (Bloemberg and Lugtenberg, 2001).

The species *Fusarium oxysporum* is well represented among the communities of soilborne fungi, in every type of soil all over the world (Burgess, 1981). Some strains of *F. oxysporum* are pathogenic to different plant species, including the *Aloe vera*, in which this fungi can cause root and leaf rottening, leaving the economically valuable plant of less use. The biological control of *Fusarium oxysporum* has been shown by different ways, i.e. by non-pathogenic strain of *Fusarium oxysporum* (Fravel et al., 2003) and by fluorescent *Pseudomonas* bacteria (Haas and Défago, 2005). Non-clavicipitalean endophytes (including *Penicillium*) represent a broad range of species and probably occur in all plant species of the temperate zones including grasses (Sieber et al. 1988).

Our study presents a novel approach for the biocontrol of *Fusarium oxysporum* by using the endophytic fungi residing in the leaves of *Aloe vera* plant itself. *Penicillium sclerotigenum* is a member of the family Trichocomaceae, and known for production of benzodiazepine and griseofulvin antibiotics (Joshi et al., 1999).

The fungal endophytes have not been screened for antagonistic activities, especially against other pathogenic fungi, and we believe it to be the first report of its kind. Since, *Penicillium sclerotigenum* is not known to cause pathogenicity in many plants except the Japanese Yam, we may speculate that the use of *Penicillium sclerotigenum* as a biocontrol agent in the fields of *Aloe vera* is effective

and safe against the pathogenic *Fusarium oxysporum.* However, the effectiveness of real time field trials will provide the proper insight before the method can be used for *Aloe vera* and other plants.

References :-

1. Alexoupolos CJ, Mims CW, Blackwell, M (1996). Introductory Mycology. John Wiley and Sons. Inc. Singapore.
2. Bahekar, A.M., Ingle, R.W. and Kendre, V.P., 2017. Efficacy of fungicides and bioagent against fungal pathogens of *Aloe vera*. *IJCS*, *5*(4), pp.1540-1543.
3. Bloemberg, G.V. and Lugtenberg, B.J., 2001. Molecular basis of plant growth promotion and biocontrol by rhizobacteria. *Current opinion in plant biology*, *4*(4), pp.343-350.
4. *Burgess LW. 1981. General Ecology of the Fusaria. In: NelsonPE, ToussounTA, CookRJ, eds. Fusarium: diseases, biology and taxonomy. University Park, PA, USA: The Pennsylvania State University Press, 225 – 235.*
5. Fravel, D., Olivain, C. and Alabouvette, C., 2003. *Fusarium oxysporum* and its biocontrol. *New phytologist*, *157*(3), pp.493-502.
6. Haas D, Défago G. Biological control of soil-borne pathogens by fluorescent pseudomonads. Nature reviews. Microbiology. 2005 Apr 1;3(4):307.
7. Hajieghrari, B., Torabi-Giglou, M., Mohammadi, M.R. and Davari, M., 2008. Biological potential of some Iranian Trichoderma isolates in the control of soil borne plant pathogenic fungi. *African Journal of Biotechnology*, *7*(8).
8. Joshi, B.K., Gloer, J.B., Wicklow, D.T. and Dowd, P.F., 1999. Sclerotigenin: a new antiinsectan benzodiazepine from the sclerotia of *Penicillium sclerotigenum*. *Journal of Natural products*, *62*(4), pp.650-652.
9. Kawuri, R., Suprapta, D.N., Nitta, Y. and Homma, T., 2012. Destructive leaf rot disease caused by *Fusarium oxysporum* on *Aloe barbadensis* Miller in Bali. *Agricultural Science Research Journal*, *2*(6), pp.295-301.
10. Miller JD, Trenholm HL (1994). Mycotoxins in grain: compounds other than aflatoxin. Eagan Press, USA.
11. Mishra, V.K., 2010. In vitro antagonism of Trichoderma species against *Pythium aphanidermatum*. *Journal of Phytology*, *2*(9).
12. Olusegun A (2000). One hundred medicinal uses of *Aloe vera*. Good health Inc. Lagos.
13. Petrini, O. (1991) Fungal endophytes of tree leaves. In *Microbial Ecology of Leaves* (J. Andrews & S. Hirano, eds): 179±197. Springer-Verlag, New York.
14. Schulz, B., Boyle, C., Draeger, S., Römmert, A.K. and Krohn, K., 2002. Endophytic fungi: a source of novel biologically active secondary metabolites. *Mycological Research*, *106*(9), pp.996-1004.
15. Sieber TN, Riesen TK, Mu¨ ller E, Fried PM, 1988. Endophytic fungi in four winter wheat cultivars (*Triticum aestivum* L.) differing in resistance against *Stagonospora nodorum* (Berk.) Cast. & Germ. ¼ Septoria nodorum (Berk.) Berk. Journal of Phytopathology 122:289–306.
16. Tan, R. X. & Zou, W. X. (2001) Endophytes: a rich source of functional metabolites. *Natural Products Rep*. **18**: 448±459.
17. Wilson, D. (1995) Endophyte: the evolution of a term, and clarification of its use and definition. *Oikos* **73**: 274±276.

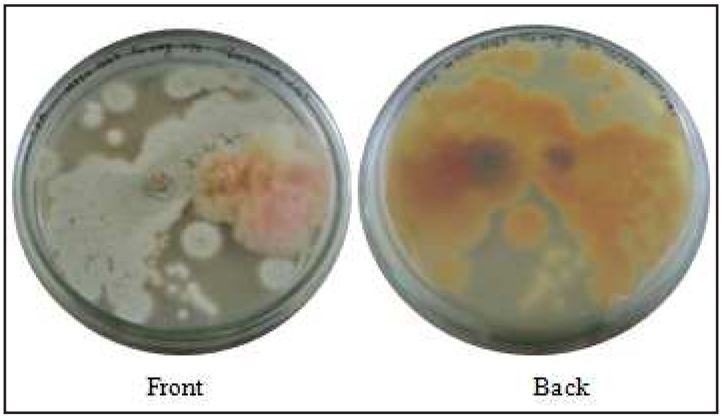

Fig 1: Antagonistic effect of *Penicillium sclerotigenum,* an endophyte isolated from *Aloe vera* leaves against *Fusarium oxysporum* MTCC 4162 pathogenic to *Aloe vera.* The green coloured *Penicillium sclerotigenum* shows the complete inhibition of growth of *Fusarium oxysporum* MTCC 4162.

****

Stochastic Analysis Of Two-Unit Cold Standby Repairable System Models

Dr. Ubed Afzal *

Introduction - Two-unit cold standby system models have been analysed by several authors including Goel et.al. (1983-86). Gupta and Sammerwar (2000) have analysed a delicate system with two protective devices and a transfer switch. They have used a transfer switch to switch online the standby protection device. Gupta and Pandya (1998) have analysed a system model in which they used a transfer switch, which takes some time to switch the standby unit online. When the transfer switch fails its repair gets priority over the operation of the system.

The present paper extends their assumptions in the direction that the transfer switch works, instantaneously and if it fails, to start the operation of the system, it is not repaired first and an early operation of the system gets priority over its repair.

This paper analyse a two-identical-unit cold standby system in which a transfer switch is available to switch standby unit online. The transfer switch works instantaneously if it is good. If it fails then the standby unit is switched online by the repair facility. After starting the operation of the system, the repair facility takes up the repair of transfer switch first. Assuming the repair time of the system is less as compared to repair time of a unit, the repair of transfer switch gets priority over the repair of the unit and it continues even when second unit also fails. Repair discipline is first come first served. Assuming exponential failure time distribution and all other distributions time dependent, various reliability measures of interest to system designers and operations managers are obtained.

System Description And Assumptions

(i) The system consists of two-identical units. Initially one unit is operative and the other is kept as cold standby.

(ii) Upon failure of the operative unit, the standby unit is connected online through a transfer switch.

(iii) The transfer switch may switch on the standby unit successfully with fixed probability p(=1-q). After switching online the standby unit starts operation instantaneously.

(iv) There is a single repair facility which is available instantaneously at the time of need. The repair facility transfers the standby unit online (when the transfer switch fails to switch the standby unit online) and it repairs the failed unit and the transfer switch one by one.

(v) After switching on the standby unit, the transfer switch goes under repair instantaneously and the failed unit waits for repair i.e. priority for repair is given to transfer switch.

(vi) Failure of the transfer switch is detected at the time of need.

(vii) Failure time distribution of the units is exponential, while both the repair time distributions and the distribution of manual transfer time is time dependent i.e. arbitrary function of time t.

Notations And States Of The System - We define the following symbols for generating the various possible states of the system.

O	:	Normal unit operating satisfactorily.
S	:	Normal unit kept as standby.
T	:	Transfer switch which is assumed to be good.
T_f	:	Transfer switch failed.
T_r	:	Failed transfer switch under repair started afresh.
T_R	:	Repair of the failed transfer switch continued from earlier state.
F_w	:	Failed unit waiting for repair.
F_r	:	Failed unit under repair started afresh.
F_R	:	Failed unit under repair continued from earlier state.

Keeping the above symbols and in view of the assumptions written in section, we have the following states of the system:

Up States -

$S_0 \equiv (O,S,T)$, $S_1 \equiv (F_r, O,T)$, $S_3 \equiv (F_w,O,T_r)$.

Down States:

$S_2 \equiv (F_w,S,T_f)$, $S_4 \equiv (F_w,F_w,T_R)$, $S_5 \equiv (F_R,F_w,T)$, $S_6 \equiv (F_r,F_w,T)$.

It is observed that the epochs of transitions into the state S_4 from S_3 and into S_5 from S_1 are non-regeneration time points. Therefore, states S_4 and S_5 are non-regenerative states. The transition diagram of the system model alongwith failure rates is shown in Fig 2.1.

Transition Diagram (See in the last page)

(ellipse) : Up State

(rectangle) : Down State

*(Statistics) Royal Institute of Management & Advanced Studies, Ratlam (M.P.) INDIA

$\times$: non-regenerative point

The other notations used in this paper are defined as follows-

E : Set of regenerative states. $\equiv \{ S_0, S_1, S_2, S_3, S_6 \}$

$\bar{E}$: Set of non-regenerative states. $\equiv \{ S_4, S_5 \}$

α : Constant failure rate of an operating unit

f(.), F(.) : pdf and cdf of repair time of a failed unit.

g(.),G(.) : pdf and cdf of repair time of a transfer switch

h(.),H(.) : pdf and cdf of manual switching time of an offline unit online.

p/q : The probability that the transfer switch works/fails at the time of need.

n_1 : mean repair time of a failed unit

$$\equiv \int_0^\infty \overline{F}(t)dt$$

n_2 : mean repair time of a failed transfer switch

$$\equiv \int_0^\infty \overline{G}(t)dt$$

n_3 : mean time to transfer manually standby unit online

$$\equiv \int_0^\infty \overline{H}(t)dt$$

Transition Probabilities And Expected Sojourn Times-

Let $T_0(=0)$, $T_1, T_2, \ldots$ denote the epochs at which the system enters into any state $S_i \in E$ and let X_n be the state visited at time instant T_n+ i.e. just after the transition at T_n. Then $\{X_n, T_n\}$ is a Markov renewal process with state space E. If

$Q_{ij}(t) = P[X_{n+1} = S_j, T_{n+1} - T_n \leq t \mid X_n = S_i]$

then the transition probability matrix (tpm) is given by

$$P = \{p_{ij}\} = \{Q_{ij}(\infty)\} = Q(\infty)$$

(a) By simple probabilistic arguments, the non-zero elements of $Q = \{Q_{ij}(t)\}$ may be obtained as follows :

For the system to reach the state S_1 from S_0 on or before time t, we suppose that the system transits from S_0 to S_1 during (u,u+du), u£t while it does not transit to any other state like S_2 up to time u. The probability of this event is

$$p.\alpha e^{-p\alpha u} du. e^{-q.\alpha u}$$

Since u varies from 0 to t, therefore

$$Q_{01}(t) = \int_0^t p.\alpha e^{-\alpha u} du$$

$$= p.\alpha[1 - e^{-\alpha t}] / \alpha = p[1 - e^{-\alpha t}]$$

Similarly,

$$Q_{02}(t) = \int_0^t p\alpha e^{-\alpha u} du$$

$$= p.[1 - e^{-\alpha t}]$$

$$Q_{10}(t) = \int_0^t e^{-\alpha u} dF(u)$$

$$Q_{23}(t) = \int_0^t dH(u)$$

$$= H(t)$$

$$Q_{31}(t) = \int_0^t e^{-\alpha u} dG(u)$$

$$Q_{61}(t) = \int_0^t dF(u)$$

$$= F(t) \qquad (1\text{-}6)$$

To write the expression for $Q_{11}^{(5)}(t)$, suppose that the system passes from state S_1 to S_5 during (u, u+du), ud $\leq$ t; the probability of this event is $\alpha e^{-\alpha u} du \overline{F}(u)$, equal to the product of the product of probabilities that an operating unit fails totally during (u, u+du) and the probability that the repair of the failed unit is not completed upto the time u. Further, suppose that the system passes from S_5 to S_1 during the interval $(v, v+dv)$, in (u,t). The probability of this later contingency is $dF(v) / \overline{H}(v)$,the conditional probability that the repair of the failed unit is completed during $(v, v+dv)$ given that it was not completed during (o,u). Thus

$$Q_{11}^{(5)}(t) = \int_0^t \alpha e^{-\alpha u} du \overline{F}(u) \int_u^t \frac{dF(v)}{\overline{F}(u)}$$

Changing the order of integration

$$Q_{11}^{(5)}(t) = \alpha \int_0^t \int_0^v e^{-\alpha u} du. dF(v)$$

$$= \alpha \int_0^t \frac{1 - e^{-\alpha v}}{\alpha} dF(v)$$

$$= \int_0^t (1 - e^{-\alpha v}) dF(v)$$

$$= (1 - e^{-\alpha t}) F(t) - \alpha \int_0^t e^{-\alpha v} F(v) dv \qquad (7)$$

Similarly, we can verify that

$$Q_{36}^{(4)}(t) = \int_0^t (1 - e^{-\alpha u}) dG(u)$$

$$= (1 - e^{-\alpha t}) G(t) - \alpha \int_0^t e^{-\alpha t} G(u) du \quad (8)$$

The unconditional probability that the system will transit from state Si to any stateÎ E on or before time t is

$$Q_i(t) = \sum_j [Q_{ij}(t) + \sum_K Q_{ij}^{(k)}(t)]$$

Thus, $Q_0(t) = Q_{01}(t) + Q_{02}(t) = 1 - e^{-\alpha t}$

$$Q_1(t) - Q_{10}(t) + Q_{11}^{(5)}(t) - \int_0^t dF(u) - F(t)$$

$$Q_2(t) = Q_{23}(t) = H(t)$$

$$Q_3(t) = Q_{31}(t) + Q_{36}^{(4)}(t) = G(t)$$

$$Q_6(t) = Q_{61}(t) = F(t) \quad (9\text{-}13)$$

(b) Taking limit as $t \to \infty$ the steady state non-zero transition probabilities (p_{ij}) are obtained by

and

$$p_{ij} = \lim_{t \to \infty} Q_{ij}(t)$$

From equations (1-8), we have

$p_{01} = p$, $p_{02} = q$

$p_{10} = \tilde{F}(\alpha)$, $p_{23} = 1$

$p_{31} = \tilde{G}(\alpha)$, $p_{61} = 1$

$p_{11}^{(5)} = 1 - \tilde{F}(\alpha)$, $p_{36}^{(4)} = 1 - \tilde{G}(\alpha)$ (14-21)

We observe the following relationships:

$$p_{01} + p_{02} = 1$$

$$p_{10} + p_{11}^{(5)} = 1$$

$$p_{31} + p_{36}^{(4)} = 1$$

$$p_{61} = p_{23} = 1 \quad (22\text{-}25)$$

Expected or mean sojourn time in state S_i is defined as the expected time of stay of the system in state S_i before transiting to any other state. If T denotes the sojourn time in S_i then mean sojourn time in S_i is

$$\mu_i = E(T) = \int_0^\infty P[T > t] dt$$

To calculate the mean sojourn time μ_0 in state S_0, we observe that so long as the system is in state S_0, there is no transition to state S_1 and S_2. Hence if T_0 denotes the sojourn time in S_0, then

$$\mu_0 = \int_0^\infty P[T_0 > t] dt$$

$$= \int_0^\infty e^{-\alpha t} dt$$

$$= 1/\alpha \quad (26)$$

Similarly,

$$\mu_1 = \int_0^\infty e^{-\alpha t} \bar{F}(t) dt$$

$$= [1 - \tilde{F}(\alpha)]/\alpha$$

$$\mu_2 = \int_0^\infty \bar{H}(t) dt = \int_0^\infty t dH(t) = n_3$$

$$\mu_3 = \int_0^\infty e^{-\alpha t} \bar{G}(t) dt$$

$$= [1 - \tilde{G}(\alpha)]/\alpha$$

$$\mu_6 = \int_0^\infty \bar{F}(t) dt = n_1 \quad (27\text{-}30)$$

(d) We define m_{ij} as the mean sojourn time by the system in state S_i when the system is to transit to regenerative state S_j i.e.

$$m_{ij} = \int_0^\infty t dQ_{ij}(t) = \int_0^\infty t q_{ij}(t) dt$$

Therefore,

$$m_{01} = \int_0^\infty t . p\alpha e^{-\alpha t} dt = p^\alpha/\alpha^2 = p/\alpha$$

$$m_{02} = \int_0^\infty t . q\alpha e^{-\alpha t} dt = q^\alpha/\alpha^2 = q/\alpha$$

$$m_{10} = \int_0^\infty t . e^{-\alpha t} dF(t)$$

$$m_{11}^{(5)} = \int_0^\infty t . (1 - e^{-\alpha t}) dF(t)$$

$$m_{23} = \int_0^\infty t . dH(t) = n_3$$

$$m_{31} = \int_0^\infty t . e^{-\alpha t} dG(t)$$

$$m_{36}^{(4)} = \int_0^\infty t . (1 - e^{-\alpha t}) dG(t)$$

$$m_{61} = \int_0^\infty t . dF(t) = n_1$$

The following relations among m_{ij} are observed:

$$m_{01} + m_{02} = \mu_0$$

$$m_{10} + m_{11}^{(5)} = n_1$$

$$m_{23} = n_3 = \mu_2$$

$$m_{31} + m_{36}^{(4)} = n_2$$

$$m_{61} = n_1 = \mu_6 \quad (31\text{-}35)$$

Analysis Of Reliability And Mtsf - Let the random variable T_i denotes the time to system failure (TSF) when the system starts its operation from state $S_i \in E$, then the reliability of the system is given by

$$R_i(t) = P[T_i > t]$$

In order to determine , we regard the failed states S_2, S_4, S_5 and S_6 of the system as absorbing states. By simple probabilistic reasoning we observe that $R_0(t)$ is the sum of the following two mutually exclusive contingencies -

(i) System remains up in state S_0 without making any transition to any other state up to time t. The probability of this contingency is

$$e^{-p\alpha t}.e^{-q\alpha t} = e^{-\alpha t} = z_0(t) \text{, say}$$

(ii) System first enters the regenerative state S_1 , during (u,u+du), u£t and then starting from S_1, it remains up without any breakdown for the time duration (t-u). The probability of this contingency is

Therefore, we have

$$R_0(t) = z_0(t) + q_{01}(t) \copyright R_1(t) \qquad (1)$$

Similarly, we have

$$R_1(t) = z_1(t) + q_{10}(t) \copyright R_0(t) \qquad (2)$$

where $z_1(t) = e^{-\alpha t}.\bar{F}(t)$.

Taking Laplace transform of the relations (1-2), we can write the solution of resulting set of algebraic equations in the matrix form as follows -

$$\begin{bmatrix} R_0^* \\ R_1^* \end{bmatrix} = \begin{bmatrix} 1 & -q_{01}^* \\ -q_{10}^* & 1 \end{bmatrix} \begin{bmatrix} z_0^* \\ z_1^* \end{bmatrix} \qquad (3)$$

For brevity, we have omitted the argument's from $q_{ij}^*(s), Z_i^*(s)$ and $R_{ij}^*(s)$ Solving the above matrix

$$R_0^*(s) = \frac{N_1(s)}{D_1(s)}, \qquad (4)$$

Where $N_1(s) = z_0^* + q_{01}^* z_1^*$

and

$$D_1(s) = 1 - q_{01}^* q_{10}^*$$

Taking the inverse Laplace transform of (4), one can get the reliability of the system when initially system starts from state S_0. One may also be interested to get the reliability of the system when it starts from state S_1. This may be obtained by solving the equation (3) For $R_i^*(s)$ which leads to the following result.

$$R_1^*(s) = \frac{z_1^* + q_{10}^* z_0^*}{D_1(s)}, \qquad (5)$$

where is same as obtained earlier.

The mean time to system failure (MTSF) can be obtained by using the formula

$$E[T_0] = \int_0^t R_0(t)\,dt$$

$$= \lim_{s\to 0} R_0^*(s)$$

$$= \frac{N_1(0)}{D_1(0)}, \qquad (6)$$

To determine N1(0) and D1(0), we first obtain Z_i^*(s), using the result

$$= \lim_{s\to 0} z_i^*(s)$$

$$= \int_0^\infty z_i(t)\,dt$$

Therefore,

$$z_0^*(0) = \mu_0 = 1/\alpha \qquad (7)$$

$$z_1^*(0) = \mu_1 \qquad (8)$$

Using $q_{ij}^*(0) = p_{ij}$ and the above equations (7) and (8), we get

$N_1(0) = \mu_0 + p_0\mu_1$ and

$D_1(0) = 1 - p_{01}p_{10}$.

Availability Analysis - Let be the probability that the system is up (operative) at epoch t when initially the system starts from state By simple probabilistic laws we observe that is the sum of the following mutually exclusive contingencies.

(i) The system continues to be up in state S_0 till time t. The probability of this event is

$$e^{-\alpha t} = z_0(t)$$

(ii) The system transits to state S_1 from S_0 during (u,u+du), u£t and then starting from state S_1 it is observed to be up at epoch t. The probability of this contingency is

$$\int_0^t q_{01}(u).du.A_1(t-u) = q_{01}(t) \copyright A_1(t)$$

(iii) System transits from state S_0 to S_2 during (u,u+du), u£t and then starting from state S_2, it is observed to be up at epoch t. The probability of this contingency is

$$\int_0^t q_{02}(u)\,du.A_2(t-u) = q_{02}(t) \copyright A_2(t)$$

Therefore,

$$A_0(t) = z_0(t) + q_{01}(t) \copyright A_1(t) + q_{02}(t) \copyright A_2(t) \qquad (1)$$

By the similar arguments, we have

$$A_1(t) = z_1(t) + q_{10}(t) \copyright A_0(t) + q_{11}^{(5)}(t) \copyright A_1(t)$$

$$A_2(t) = q_{23}(t) \copyright A_3(t)$$

$$A_3(t) = z_3(t) + q_{31}(t) \copyright A_1(t) + q_{36}^{(4)}(t) \copyright A_6(t)$$

$$A_6(t) = q_{61}(t) \copyright A_1(t), \qquad (2\text{-}5)$$

where

$$z_3(t) = e^{-\alpha t}.\bar{G}(t) \tag{6}$$

Taking Laplace transforms of the above relations (1-5) and writing the set of equations, we have

$$A_0^* = z_0^* + q_{01}^*.A_1^* + q_{02}^*.A_2^*$$

$$A_1^* = z_1^* + q_{10}^*.A_0^* + q_{11}^{(5)*}.A_1^*$$

$$A_2^* = q_{23}^*.A_3^*$$

$$A_3^* = z_3^* + q_{31}^*.A_1^* + q_{36}^{(4)*}.A_6^*$$

$$A_6^* = q_{61}^* © A_1^*, \tag{7-11}$$

For brevity the argument 's' has been omitted from and . Solving the above equations (7-11) for , we get

$$A_0^*(s) = \frac{N_2(s)}{D_2(s)}, \tag{12}$$

where

$$N_2(s) = (1 - q_{11}^{(5)*})(z_0^* + q_{02}^* q_{23}^* z_3^*) + [q_{01}^* + q_{02}^* q_{23}^* \left(q_{31}^* + q_{36}^{(4)*} q_{61}^*\right)] z_1^* \tag{13}$$

and

$$D_2(s) = 1 - q_{11}^{(5)*} - q_{10}^*[q_{01}^* + q_{02}^* q_{23}^* \left(q_{31}^* + q_{36}^{(4)*} q_{61}^*\right)] \tag{14}$$

Now to obtain the steady-state probabilities that the system will be operative, we proceed as follows:
It may be observed that

$$\lim_{s \to 0} z_i^*(s) = z_i^*(0) \; ; \; i = o, 1, 3$$

Thus,

$$z_0^*(0) = \mu_0$$

$$z_1^*(0) = \mu_1$$

$$z_3^*(0) = \mu_3$$

Using above and $q_{ij}^*(0) = p_{ij}$, we have

$$D_2(0) = (1 - p_{11}^{(5)} - p_{10}[p_{01} + p_{02} p_{23} \left(p_{31} + p_{36}^{(4)} p_{61}\right)]$$

Using relations (22-25) of section 2.4, we get

$$D_2(0) = p_{10} - p_{10}[p_{01} + p_{02}]$$
$$= 0$$

Therefore, the steady-state probability that the system will be available is given by

$$A_0 = \lim_{t \to \infty} A_0(t)$$
$$= \lim_{s \to 0} s.A_0^*(s)$$
$$= \lim_{s \to 0} s.\frac{N_2(s)}{D_2(s)},$$
$$= \frac{N_2(s)}{D'_2(s)}, \tag{15}$$

by Hospital's rule and as Now we have

$$N_2(0) = (1 - p_{11}^{(5)})(\mu_0 + p_{02} p_{23} \mu_3) + [p_{01} + p_{02} p_{23} (p_{31} + p_{23} p_{23})] \; \mu_1$$

Again using relations (22-25) of section 2.4, we have

$$N_2(0) = p_{10}(\mu_0 + p_{02}\mu_3)[p_{01} + p_{02}] \; \mu_1$$
$$= \mu_0 p_{10} + \mu_1 + p_{02} p_{10} \; \mu_3$$

To obtain , we collect the coefficients of in for various values of i and j

(i) Coefficient of $m_{01} = p_{10}$

(ii) Coefficient of $m_{02} = p_{10} p_{23}(p_{31} + p_{36}^{(4)}.p_{61})$
$= p_{10}$ [using (22-24) of section 2.4]

(iii) Coefficient of $m_{10} = p_{01} + p_{02} p_{23}(p_{31} + p_{36}^{(4)}.p_{61})$
$= 1$

(iv) Coefficient of $m_{11}^{(5)} = 1$

(v) Coefficient of $m_{23} = p_{10} p_{02}(p_{31} + p_{36}^{(4)}.p_{61})$
$= p_{02} p_{10}$

(vi) Coefficient of $m_{31} = p_{10} p_{02} p_{23}$
$= p_{02} p_{10}$

(vii) Coefficient of $m_{36}^{(4)} = p_{10} p_{02} p_{23} p_{61}$
$= p_{02} p_{10}$

(viii) Coefficient of $m_{61} = p_{10} p_{02} p_{23} p_{36}^{(4)}$
$= p_{02} p_{10} p_{36}^{(4)}$

Thus, we have

$$D_2'(0) = (m_{01} + m_{02})p_{10} + \left(m_{10} + m_{11}^{(5)}\right) + m_{23} p_{02} p_{10} + p_{02} p_{10}(m_{31} + m_{36}^{(4)}) + p_{02} p_{10} p_{36}^{(4)}.m_{61}$$

Now using the relations (31-35) of section 2.4, we have

$$D_2'(0) = p_{10}\mu_0 + n_1 + n_3 p_{02}.p_{10} + p_{02} p_{10}.n_2 + p_{02} p_{10} p_{36}^{(4)}.n_1$$
$$= \mu_0 p_{10} + n_1 \left(1 + p_{02} p_{10} p_{36}^{(4)}\right) + (n_2 + n_3) p_{02} p_{10} \tag{16}$$

Busy Period Analysis - It is assumed that the single repair facility repairs the failed units, the transfer switch and it also transfers the standby unit online at the time of need. Therefore, in order to obtain the point wise probabilities of busyness of repair facility separately on all the above three jobs. We define , and respectively as the probability that the repair facility is busy at time in the repair of a unit, transfer switch and for the manual transfer of the offline unit online.

Using the simple probabilistic arguments in respect of , we have the following recursive relations:

$$B_0^1(t) = q_{01}(t) © B_1^1(t)+q_{02}(t) © B_2^1(t)$$

$$B_1^1(t) = \bar{F}(t) + q_{10}(t) © B_0^1(t)+q_{11}^{(5)}(t) © B_1^1(t)$$

$$B_2^1(t) = q_{23}(t) © B_3^1(t)$$

$$B_3^1(t) = q_{31}(t) © B_1^1(t)+q_{36}^{(4)}(t) © B_6^1(t)$$

$$B_6^1(t) = \bar{F}(t) + q_{61}(t) © B_1^1(t)$$

For an illustration is the sum of the following mutually exclusive contingencies -

(i) The repair facility remains busy in state S_1 continuously upto time t in the repair of the unit. The probability of this event is

$$e^{-\alpha t}\bar{F}(t)$$

(ii) The system may transit to state S_5 during (u, u+du), ut and then the repairman remains busy in state S_5 during the remaining time (t-u) without making any transition from state S_5. The probability of this contingency is

$$\int_0^t \alpha e^{-\alpha u} du \bar{F}(u) . \frac{\bar{F}(t)}{\bar{F}(u)} = (1 - e^{-\alpha t})\bar{F}(t)$$

(iii) The system transits from state S_1 to S_0 during time (u, u+du), u£t and then repairman remains busy in repair of the unit at epoch t starting from state S_0. The probability of this event is

$$\int_0^t q_{10}(u) du . B_1^1(t-u) = q_{10}(t) © B_0^1(t)$$

(iv) The system transits from state S_1 to itself during time (u, u+du), u£t and then the repairman busy in the repair of a unit at time instant t starting from state S_1 afresh. The probability of this event is

$$\int_0^t q_{11}^{(5)}(u) du . B_1^1(t-u) = q_{11}^{(5)}(t) © B_1^1(t)$$

As the sum of contingencies (i) and (ii) is so we have the equation for as shown by (2).

Taking Laplace transforms of the relations (1-5), we have

$$B_0^{1*} = q_{01}^* B_1^{1*} + q_{02}^* B_2^{1*}$$
$$B_1^{1*} = \bar{F}^* + q_{10}^* B_0^{1*} + q_{11}^{(5)*} B_1^{1*}$$
$$B_2^{1*} = q_{23}^* B_3^{1*}$$
$$B_3^{1*} = q_{31}^* B_1^{1*} + q_{36}^{(4)*} B_6^{1*}$$
$$B_6^{1*} = \overline{F^*} q_{61}^* B_1^{1*}$$

For brevity the argument 's' has been omitted from and (s). Solving the above equations for , we get

$$B_0^{1*}(s) = \frac{N_3(s)}{D_2(s)} , \qquad (6)$$

where

$$N_3(s) = [q_{01}^* + q_{02}^* q_{23}^* q_{31}^* + q_{02}^* q_{23}^* q_{36}^{(4)*} q_{61}^* + q_{02}^* q_{23}^* q_{36}^{(4)*}(1-q_{11}^{(5)*})] \bar{F}^*(s)$$

and is the same as given by (14) of section 2.6.

Similarly, the recurrence relations in , the probability that time starting from Si, the repairman is busy in the repair of transfer switch, may be developed as follows:

$$B_0^2(t) = q_{01}(t) © B_1^2(t) + q_{02}(t) © B_2^2(t)$$

$$B_1^2(t) = q_{10}(t) © B_0^2(t) + q_{11}^{(5)}(t) © B_1^2(t)$$

$$B_2^2(t) = q_{23}(t) © B_3^2(t)$$

$$B_3^2(t) = \bar{G}(t) + q_{36}^{(4)}(t) © B_6^2(t) + q_{31}(t) © B_1^2(t)$$

$$B_6^2(t) = q_{61}(t) © B_1^2(t) \qquad (7\text{-}11)$$

Taking Laplace transforms of (7-11) and solving the resulting set of algebraic equations for , as earlier, we get

$$B_0^{2*}(s) = \frac{N_4(s)}{D_2(s)} , \qquad (12)$$

where

$$N_4(s) = q_{02}^* \; q_{23}^* . \bar{G}^* . (1-q_{11}^{(5)*})$$

and is given by (14) of section 2.6.

Finally, probability that time starting from state S_i, the repairman is busy in transferring the standby unit online manually at time t, have the following recurrence relations:

$$B_0^3(t) = q_{01}(t) © B_1^3(t)+q_{02}(t) © B_2^3(t)$$

$$B_1^3(t) = q_{10}(t) © B_0^3(t)+q_{11}^{(5)}(t) © B_1^3(t)$$

$$B_2^3(t) = \bar{H}(t) + q_{23}(t) © B_3^3(t)$$

$$B_3^3(t) = q_{31}(t) © B_1^3(t) + q_{36}^{(4)}(t) © B_6^3(t)$$

$$B_6^3(t) = q_{61}(t) © B_1^3(t) \qquad (13\text{-}17)$$

Taking Laplace transforms of the above equations, we have

$$B_0^{3*} = q_{01}^* B_1^{3*} + q_{02}^* B_2^{3*}$$
$$B_1^{3*} = q_{10}^* B_0^{3*} + q_{11}^{(5)*} B_1^{3*}$$
$$B_2^{3*} = \bar{H}^* + q_{23}^* B_3^{3*}$$
$$B_3^{3*} = q_{31}^* B_1^{3*} + q_{36}^{(4)*} B_6^{3*}$$
$$B_6^{3*} = q_{61}^* B_1^{3*}$$

For brevity we have omitted the argument 's' from , and (s), solving the above equations for , we have

$$B_0^{3*}(s) = \frac{N_5(s)}{D_2(s)} , \qquad (18)$$

Where

$$N_5(s) = q_{02}^* (1-q_{11}^{(5)*}) \bar{H}^* \qquad (19)$$

and is given by (14) of section 2.6.

Now to obtain the steady-state probabilities , and that the repairman is busy in the repair of a unit, in the repair of transfer switch and in manually transferring the standby unit online respectively, we use the results

$$q_{ij}^*(0) = \lim_{s\to 0} q_{ij}^*(s) = p_{ij}$$

$$\lim_{s\to 0}\bar{F}^*(s) = \lim_{s\to 0}\frac{1-f^*(s)}{s} = \int_0^\infty t\,dF(t) = n_1$$

Similarly,

$$\lim_{s\to 0}\bar{G}^*(s) = \lim_{s\to 0}\frac{1-g^*(s)}{s} = n_2$$

$$\lim_{s\to 0}\bar{H}^*(s) = \lim_{s\to 0}\frac{1-h^*(s)}{s} = n_3$$

Therefore, we have in steady state

$$B_0^1 = N_3(0)/D_2'(0)$$

$$B_0^2 = N_4(0)/D_2'(0)$$

and,

$$B_0^3 - N_5(0)/D_2'(0)\,, \qquad (20\text{-}22)$$

where

$$N_3(0) = [p_{01} + p_{02}p_{23}p_{31} + p_{02}p_{23}p_{36}^{(4)}p_{61} + p_{02}p_{23}p_{36}^{(4)} (1-p_{11}^{(5)})]n_1$$

$$= [1 + qp_{10}p_{36}^{(4)}]n_1$$

$$N_4(0) = qp_{10}n_2\,,$$

and

$$N_5(0) = qp_{10}n_3\,.$$

Expected Number Of Visits By The Repairman - Let denote the expected number of visits by the repairman in (o,t] given that the time initially starts from regenerative state S_i. To obtain it we consider all possible contingencies e.g. is the sum of the following contingencies.

The system transits from state S_0 to S_1 or S_2 during time interval (u, u+du), u£t and during this time interval, repairman completes one visit, therefore, the system undergoes repair and then starting from S_1 or S_2 we may count the expected number of visits of repairman during (), in (u, t] i.e.

$$V_0(t) = Q_{01}(t)\ (\$)\ [1 + V_1(t)] + Q_{02}(t)\ (\$)\ [1 + V_2(t)] \qquad (1)$$

To obtain , we observe that the system transits to state S_0 or S_1 via S_5 during (u, u+du), ut and during this time interval the repairman leaves the system after repair and we may count the expected number of visits by the repairman during (), in (u, t]. Thus

$$V_1(t) = Q_{10}(t)\ (\$)\ V_0(t) + Q_{11}^{(5)}(t)\ (\$)\ V_1(t) \qquad (2)$$

Similarly

$$V_2(t) = Q_{23}(t)\ (\$)\ V_3(t)$$

$$V_3(t) = Q_{31}(t)\ (\$)\ V_1(t) + Q_{36}^{(6)}(t)\ (\$)\ V_6(t)$$

$$V_6(t) = Q_{61}(t)\ (\$)\ V_1(t) \qquad (3\text{-}5)$$

Taking Laplace-Stieltjes transforms of (1-5) where we have omitted the argument 's' for brevity. Computing the relevant elements of the inverse matrix, Laplace-Stieltjes transform, the solution for can be expressed as

$$\tilde{V}_0(s) = \frac{N_6(s)}{D_3(s)},$$

where

$$N_6(s) = (\tilde{Q}_{01} + \tilde{Q}_{02})(1 - \tilde{Q}_{11}^{(5)})$$

and

$$D_3(s) = [\,1 - \tilde{Q}_{11}^{(5)} - \tilde{Q}_{01}\tilde{Q}_{10} - \tilde{Q}_{02}\tilde{Q}_{23}\left(\tilde{Q}_{31} + \tilde{Q}_{36}^{(4)}\tilde{Q}_{61}\right)\tilde{Q}_{10}\,]$$

In steady-state, the number of visits per unit time is given by

$$V_0(\infty) = \lim_{t\to\infty}[V_0(t)/t\,] = \lim_{s\to 0} s^2 V_0^*(s)$$

$$= \lim_{s\to 0} s\,\tilde{V}_0(s) \qquad = \lim_{s\to 0} s\ N_6(s)/D_3(s)$$

Since $D_3(s)\ |_{s=0} = D_2(0) = 0$ as shown in section 2.6.

Hence by Hospital's rule

$$V_0(\infty) = N_6(0)/D_2'(0)\,,$$

where is given by (14) of section 2.6 and

$$N_6(0) = (p_{01} + p_{02})(1 - p_{11}^{(5)}) = p_{10}\,.$$

Profit Function Analysis - We now obtain the cost function of the system. Considering mean up time of the system during (0,t) and expected busy period of the repairman's during (0,t). The net expected cost/ profit (gain) incurred during (0,t) is given by

P(t) = Expected total revenue in (0,t) –
Expected total expenditure during (0, t)

$$= K_0\mu_{up}(t) - K_1\mu_b^1(t) - K_2\mu_b^2(t) - K_3\mu_b^3(t)\,, \qquad (1)$$

where is the revenue earned per unit up time and are the amount paid to repairman per unit of time when the repairman is busy in repairing a unit, transfer switch and in transferring the standby unit manually online respectively. Also,

$\mu_{up}(t) =$ Expected uptime of the system

$$= A_0^*(s)/\,s \qquad (2)$$

$$\mu_b^1(t) = \int_0^t B_0^1(u)\,du$$

Such that

$$\mu_b^{1*}(s) = B_0^{1*}(s)/s \qquad (3)$$

$$\mu_b^2(t) = \int_0^t B_0^2(u)du$$

Such that

$$\mu_b^{2*}(s) = B_0^{2*}(s)/s \qquad (4)$$

and

$$\mu_b^3(t) = \int_0^t B_0^3(u)du$$

Such that

$$\mu_b^{3*}(s) = B_0^{3*}(s)/s \qquad (5)$$

Now, the expected total profit per-unit time in steady state is given by

$$P = \lim_{t\to\infty}\frac{P(t)}{t} = \lim_{s\to 0} s^2 P^*(s)$$

$$= K_0 \lim_{s\to 0} s^2\mu_{up}^*(s) - K_1 \lim_{s\to 0} s^2\mu_b^{1*}(s) - K_2 \lim_{s\to 0} s^2\mu_b^{2*}(s)$$

$$- K_3 \lim_{s\to 0} s^2\mu_b^{3*}(s)$$

$$= K_0A_0 - K_1B_0^1 - K_2B_0^2 - K_3B_0^3 \qquad (6)$$

Particular Case

In this section we consider a case when repair time distributions and manual transfer time distribution of standby unit online are also exponential i.e.

$$F(t) = 1 - e^{\beta t}\ ,\ G(t) = 1 - e^{-\eta t}\ ,\ H(t) = 1 - e^{-\lambda t}$$

Then in results of section 2.4 , we have the following changes :

$$p_{10} = \frac{\beta}{\alpha+\beta}$$

$$p_{15} = p_{11}^{(5)} = \frac{\alpha}{\alpha+\beta}$$

$$p_{31} = \frac{\eta}{\alpha+\eta}$$

$$p_{34} = p_{36}^{(4)} = \frac{\alpha}{\alpha+\eta}$$

$$\mu_1 = \frac{1}{\alpha+\beta}$$

$$\mu_2 = n_3 = 1/\lambda$$

$$\mu_3 = \frac{1}{\alpha+\eta} \qquad \mu_6 = n_1 = 1/\beta$$

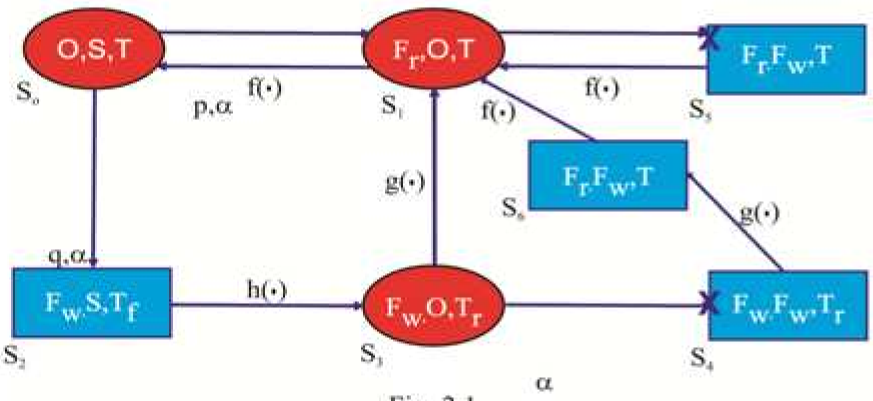

Fig. 2.1

****

Soil Fertility Problems Of New Cropping Patterns In Madhya Pradesh

Dr. S. K. Udaipure *

Introduction - The essence of the new strategy in agriculture is the emphasis on increasing the yield per unit area and unit time. It will calls for replacement of long duration varieties by short duration ones i.e early varieties and of local low yielding varieties by improved varieties which can stand heavy fertilizer application . Thus varties of paddy such as IR-8, Tachung -1, etc. and of wheat like Sonalikam Sanora-64, Sanora - 63,Lerma roho, S-227 and S-308 will be grown . Also, intensive rotations introducing double cropping or even raising three crops from the same field wherever possible would be followed water supply through rainfall or irrigation although it again may call for some special varieties. In the areas where paddy in Kharif and then sowing wheat as usual may be practical suggestion. Similarly, raising wheat, gram or pea after paddy may be quit practicable.

Improved varieties need improved soil fertility -

Macronutrients - The use of improved varieties will be one of the most important factors in the new cropping pattern. The better germ plasm of improved varieties fails to show differences in yields over local varieties when soil fertility is low. This was observed on cultivators fields in M.P that yields of Taichung native-1 and Mexican wheat varieties were as good as local varieties when adequate amounts of N and P_2O_5 were not applied. But when these varieties were grown on the same type of soil using the same source of irrigation but with full recommended doses of fertilisers, there was a tremendous difference in the growth and development of plants, size of earheads and ultimately the yield. Thus improved varieties perform much better on soils of high fertility.

Present fertility status of various agro-climate regions of M.P - Surface soil samples have been analysed by soil testing laboratories at Hoshangabad (M.P.), Indore and Jabalpur and soil test summares prepared Based on these soil test summaries, the fertility status of various agro-climatic regions of the state. the available nitrogen content of majority of soil samples from various crop regions is low and therefore, use of high doses of nitrogen for various crops is a must. Also alluvial soils of Gird region are tje poorest in nitrogen while the rice growing soils of Chattisgarh plains and adjoining area and Bundel Khand region soils are slightly better. As regards phosphorus contene, soils of part of Malwa plateau, Nimar plains and Grid region are not so poor as those of other regions to build up the soil fertility. The potassium status of grid region soils is much higher followed by Bundel Khand and Narmada Valley soils, as compared to Keymore plateau Grid, Moderate a high K status in these soils, specially because K-fixing capacity of deep black and mixed red and black soils is considerably high.

Regarding soil reaction , soils of all regions except Grid, Malwa Plateau and Chhattisgarh plains are normal and present no problems.in Grid region, specially in Gohad, Mehegaon and Morena tahsils, problem of alkali and saline alkali soils exists. Similarly in Malwa plateau, the Khar and Kharcha lands of Dhar and Dewas districts have problem of alkali and saline alkali soils. These areas need reclamation and provision of adequate drainage, before fertilizer addition programme can be taken up for maximising yields of crops in these areas. In Chhattisgarh plains,

Table 1 - Fertility Status of Various Agro-climatic Regions of M.P. (See in the next page)

On the other hand, problem of soil acidity exists in some parts, especially in Bastar, Sirguja and Durg districts. Judicious liming of these soils has, therefore, to be taken up to get maximum return from this region.

Although survey work on magnesium and sulphur status of M.P. Soils has not been completed yet, the deficiency symptoms of sulphur have been noted in rice crop in some localities. Also magnesium deficiency has been detected in bangalore purple variety of grape at J.N.K.V.V farm Jabalpur.Thus these secondary nutrients can no longer b3 neglacted especially if large amounts of N.P and K have to be added to improved varieties of various crops to obtain maximum yields. **Micronutrients -** In case of improved varieties which are early and high yielderas, the growth rate is faster. This may mean high metabolic rate requiring greater enzyme activity during growth and development of the plants of these varieties. As micronutrients are specially important for enzymic reactions, a greater demand for micronutrients by improved varieties may ne involved. Further high yielders will naturally draw larger amounts of micronutrients from the soil. Thus the improved varietes require larger amounts of

*Associate Professor (Chemistry) Govt. Narmada P. G. College, Hoshangabad (M.P.) INDIA

micronutrients for their good performance.

Phenomena of micronutrient discorders are more often due to insufficient than to real deficiency in the soil.In some cases they may also be caused by toxic accumulation, unfavourable pH and oxidation reduction potential and excess of organic matter content e.g. Cu-deficiency in peat and bog soils. For determining available micronutrients in soil, different extractants have been proposed for different elements. If the results of such extractions correlate sufficient well with the uptake by the plants, they may be useful as practical diagnostic tests. Sone useful work on these lines has already been started in M.P and it would be further intensified under the co-ordinated scheme on micronutrients of soils, which has already started functioning in our state. After selecting the best extractant , thershold values of different soils for different crops would be worked out. Also sritical values of micronutrient content of different crops for maximum yields will be worked out.

Micronutrient status of various Agro-climatic Regions - Based on the limited amount of work done in M.P the available micronutrient status of various agro-climatic regions of the state is shown in table 2. As shown in this table there is no relationship between micronutrient content and soil types or agro-climate regions. The patches of Mn deficiency occur in Grid region, Satpura and Vindhyayan plateau, Narmada Valley and malwa plateau.(specially Rajgarh district). Although patches of cropper deficiency seen to exist in almost all agro-climatic regions this deficiency is concentrated in Gird region and Kemore plateau. Zinc deficiency seems to occur in alluvial soils and certain pockets of Chattisgarh plains. Born deficient areas seem to occur widely in Grid region, Vidhyayan, Satpura and Keymore, Plateaus, Narmada valley and Chattisgarh plains. Available Mo-deficient pockets occur in Grid region Vindhyayan and Satpura plateaus, Bundelkhand and Chattisgarh plains, Deficiency of micronutrients in vegetables and horticultural crops have already made their appearance throughout the M.P state. Deficiency symptoms of some micronutrients in cereals, pulses forage grasses, etc. have also been noted specially when given heavy doses of N, P, and K. In certain maximization plots at various Agriculture college farms in M.P application of Spartan has increased the yields. Similarly the need for boron and other micronutrients had been felt with the introduction of grape cultivation at Jabalpur. All this shows that importance of micronutrients in intensive cropping pattern with improved varieties cannot be overemphasised.

Do we have enough fertilisers - Fertiliser statistics show that the total amounts of fertilisers available with us including the imports are 582588 metric tons of N, 134284 metric tons of P_2O_5 and 89631 metric tons of K2Oand their consumption is only 0.77kg N, 0.51 kg P_2O_5 and 0.51 kg K_2O per hectare which is miserable low. Although every effort is being made to augment the supply of fertilisers still the amount would be far less than the requirement. In view of the short supply following measures must be adopted:-

1. Fullest use of organic manure resources must be made. The whole farm waste material including the dung urine of animals should be conserved in the form of F.Y.M. Town sweepings and human excrete should similarly be converted into urban compost. Also local manorial resources e.g nonedible oil cakes, bones, wool and leather wastes and blood meal (in pucca slaughter houses) should be tapped fully.
2. Sewage farming should be developed to the extent possible . The value of sewage as a means of irrigation, after proper treatment of the same, cannot be over emphasized.
3. Use of green manures should be practiced wherever profitable and legumes should be introduced in crop rotations.
4. The uase of bcterization of soil with Azotobacter and phosphobacterin should be tried . Also algalisation of paddy fields has shown some promise and needs be exploited further.

Soil fertility and other factors of increasing corp production - The beneficial effects on crop yields of other factors viz. good seed and seedbed, improved implements, weed control and plant protection measures, etc., can be larger and yield more profits only on soils of high fertility.

Therefore, building up the soil fertility to a high level and maintaining it at that level as discussed above is the most important single factor for obtaining the higher yields per unit area per unit time.

Table 1 Fertility Status of Various Agro-climatic Regions of M.P.

Crop Zone		Agro-climatic region	major soil group	Total No. of samples tested	Fertility status (percent of soil sample in each class)														
					Available N			Available P_2O_5			Available K_2O			Soil reaction			Conductivity		
					L	M	H	L	M	H	L	M	H	N.	AC.	AL.	N.	Cr.	Inj.
I	Wheat Juar	1. Gird region	Alluvia	200	94	3	1	27	28	45	3	25	72	86	1	13	97	3	0
II	Cotton Juar	2. Malwa Platean	Medium	200	67	21	12	30	26	44	31	10	59	81	1	18	94	4	2
		3. Nimar	black																
II	Wheat	4. Vidhyayan Plateau	Medium Black	200	75	18	10	47	24	29	14	34	52	88	5	7	98	1	1
		5. Narmada Valley	deep black	200	84	10	6	40	31	29	8	43	49	97	-	3	99	1	0
IV.	Wheat Rice	6. Satpura plateau	Shallow	200	67	22	11	50	23	27	14	33	53	89	3	8	98	1	1
	and	7. Keymore plateau	Mixed red and black	200	61	24	8	53	25	22	38	37	25	93	2	5	95	3	2
	Wheat Juar	8. Bundelkhand	-	200	55	25	15	48	26	26	7	37	56	93	2	5	98	1	1
V.	Rice	9. Chhattisgarh plains and adjoining area.	Red and yellow	200	58	28	15	46	26	28	14	55	31	82	18	0	99	1	0

L= Low, M=Medium, H=High, N=Normal, A= Acidic, AL- Alkaline, Cr.= Critical for germination; Inj= Injuries for plant growth.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

Herbal Plant Catharanthus Roseus

Dr. Sushama Singh Majhi*

Abstract - Expected to be the basis of many main technological innovations in the 21st century. Research and development in this field is growing rapidly throughout the world. A major output of this activity is the development of new materials in the nanometer scale. A natural product is a chemical compound or substance produced by a living organism - found in nature that usually has a pharmacological or biological activity for use in pharmaceutical drug discovery and drug design. A natural product can be considered as such even if it can be prepared by total synthesis. These small molecules provide the source of inspiration for the majority of FDA-approved agents and continue to be one of the major sources of inspiration for drug discovery. In particular, these compounds are important in the treatment of life-threatening conditions. Natural products may be extracted from tissues of terrestrial plants, marine organisms or microorganism fermentation broths. A crude extract from any one of these sources typically contains novel, structurally diverse chemical compounds, which the natural environment is a rich source of Chemical diversity in nature is based on biological and geographical diversity, so researchers travel around the world obtaining samples to analyze and evaluate in screens or bioassays. This effort to search for natural products is known as bioprospecting.
Key Word- Innovations, substance, pharmaceutical, natural product , majority, structurally, tissues, terrestrial plants

Introduction - Description - A natural product is a chemical compound or substance produced by a living organism - found in nature that usually has a pharmacological or biological activity for use in pharmaceutical drug discovery and drug design. A natural product can be considered as such even if it can be prepared by total synthesis. These small molecules provide the source of inspiration for the majority of FDA-approved agents and continue to be one of the major sources of inspiration for drug discovery. In particular, these compounds are important in the treatment of life-threatening conditions. Natural products may be extracted from tissues of terrestrial plants, marine organisms or microorganism fermentation broths. A crude extract from any one of these sources typically contains novel, structurally diverse chemical compounds, which the natural environment is a rich source of Chemical diversity in nature is based on biological and geographical diversity, so researchers travel around the world obtaining samples to analyze and evaluate in screens or bioassays. This effort to search for natural products is known as bio prospecting.

Screening of natural products-Pharmacognosy provides the tools to identify select and process natural products destined for medicinal use. Usually, the natural product compound has some form of biological activity and that compound is known as the active principle - such a structure can act as a lead compound. Many of today's medicines are obtained directly from a lead compound originally obtained from a natural source.

The plant kingdom-Plants have always been a rich source of lead compounds Alkaloids, morphine, cocaine, digitalis, quinine, tubocurarine, nicotine, and muscarine. Many of these lead compounds are useful drugs in themselves Alkaloids, morphine and quinine, and others have been the basis for synthetic drugs.Clinically useful drugs which have been recently isolated from plants include the anticancer agent paclitaxel from the yew tree and the antimalarial agent artemisinin from Artemisia annua. Plants provide a large bank of rich, complex and highly varied structures which are unlikely to be synthesized in laboratories.

Synthesis-Not all natural products can be fully synthesized and many natural products have very complex structures that are too difficult and expensive to synthesize on an industrial scale. These include drugs such as penicillin, morphine, and paclitaxel. Such compounds can only be harvested from their natural source - a process which can be tedious, time consuming, and expensive, as well as being wasteful on the natural resource. For example, one yew tree would ham to be cut down to extract enough paclitaxel from its bark for a single dose. Furthermore, the number of structural analogues that can be obtained from harvesting is severely limited further problem is that isolates often work differently than the original natural products which have synergies and may combine, say, antimicrobial compounds with compounds that stimulate various pathways of the immune system. Many higher plants contain novel metabolites with antimicrobial and antiviral properties.

* Asst. Professor (Chemistry) Govt. Motilal Vigyan Mahavidyalaya, Bhopal (M.P.) INDIA

However, in the developed world almost all clinically used chemotherapeutics have been produced by in vitro chemical synthesis. Exceptions, like taxol and vincristine, were structurally complex metabolites that were difficult to synthesize in vitro. Many non-naturals, synthetic drugs because severe side effects that were not acceptable except as treatments of last resort for terminal diseases such as cancer. The metabolites discovered in medicinal plants may avoid the side effect of synthetic drugs, because they must accumulate within living cells.

References :-

1. Zhanel GG, Walters M. Noreddin A, et al. The ketolides: a critical review. Drugs. 2002; 62:1771-1804. PubMed DOI: 10.2165/00003495-200262120-00006
2. Pastores GM, Barnett NL, Kolodny EH. An open-label, noncomparative study of miglustat in type I Gaucher disease: efficacy and tolerability over 24 months of treatment. Clin Ther. 2005; 27:1215-1227. PubMed DOI: 10. 10 1 6/j.clinthera.2005.08.004
3. Weinreb NJ, Barranger JA, Charrow J, Grabowski GA, Mankin HJ, Mistry P. Guidance on the use of miglustat for treating patients with type 1 Gaucher disease. Am J Hematol. 2005; 80:223229. PubMed DOI: 10.1002/ajh.20504
4. ITIS (February 2009) http://www.itis.gov/
5. Encyclopedia of Life (March 2009) http://www.eol.org/pages/581125
6. Armitage, A.M. (2001). Manual of Annuals, Biennials, and Half-hardy Perennials. Timber Press, Portland, Oregon.
7. Van Bergen, M. & Snoeijer, W.(1996). Catharanthus G.Don. The Madagascar Periwinkle and Related Species. Wageningen Agricultural University Papers 96-3: 1-120.

****

Extraction And Isolation Of Naringenin Using TLC Technique

Supriya Chouhan* Dhananjay Dwivedi Anil Kumar Gharia*****

Abstract - Flavonoids serve as antioxidant, anti-inflammatory, Carbohydrate metabolism promoter and immune system modulator.The ethanolic extract was fractionated with different solvents petroleum ether,ethyl acetate and butanol. The ethylacetate fraction was chromatographed over si-gel column which resulted in the isolation of Naringenin.
Key Words - Nyctanthes arbortristis**,** chromatography, flavonoid, Phenolic, compound,solvent extracsI.

Introduction - Use of the medicinal plants for curing diseases has been documented in history of all civilizations[1] Nyctanthes Arbor Tristis is one of the most useful traditional medicinal plants in India. It is widely in sub-Himalayan regions and Southwards to Godavari. It is also distributed in Blangladesh,Indo-pak subcontinent and south East-Asia.It grows in an Indo-Malayan region and distributed across Burma as well as cylon[2] Local people of India use the whole tree for cancer, root for fever, sciatica,anorexia,and bark as expectorant. Each part of the plant has some medicine value and is thusommercially exploitable.It has high medicinal value in Ayurveda. Nyctanthes arbor-tristis(Fam.oleaceac) is commonly Known Parijatham,Parijata,Jayaparvati,Sepali, Harshinghar and Night Jasmine. Widely distributed throughout India and also cultivated for its fragrant flowers.[3] It is studied that the 50% ethanolic extract of the seeds, leaves, roots, flowers and stem of the plants has been proved to possess antipoetic and anti-allergic properties[4] Many isidoid glycosides have been isolated from the leaves of the plants.[5] Its leaves, flowers and seeds are used for various diseases such as chronic fever,b, aronchitis ,asthma ,constipation grayness of hair,boldnest and skin diseases. It is also possessed hepatoprotective,anti leishmanial, anti bacterial,anti viral and anti fungal activities and analgesic, antipyretic and ulcerogenic activities[6-7].Every part of the tree has been used as traditional midicine for household remedies against various human ailments from antiquity.[8-9] The flower contains a coloring substance nyctan thin used for coloring silk and useful for printing puposes[10] .A flavonol glucoside Naringenin-4- o-B- glucopyranosyl -a-xylopyranoside has been isolated from the ethanolic extract of the stem.[11] Recentyl we isolated a flavonol glucoside Astragalin from the aqueous methanolic extract of the stem part of the plant[12].

Simple Materials - The stem part was collected locally and identified by Dr.Veena Satya ,Head, Department of Botany S.B.N.P.G.

College Barwani. Laler on this Part was washed and dried in shade at room temperature and thus obtained attend material is mechanically crushed and passed through 0.2 MM since.

Reagents and Chemicals - All Organic solvents ethanol, ethyl acetate, chloroform, petroleum ether and inorganic reagents CH_3COOH,NAOH, $NaHCO_3$were used of AR grade.

Thine layer chromatography was done using TLC plate (8" X 8") and slica gel(60-125 mesh)

Extraction and isolation - Dried crushed and powdered stem of Nyctanthes arbor-tristis (1 Kg) was extracted with ethanol for 24 hours. The solvent ethanol by hot extraction using soxlet apparatus. After evaporation of solvent in vacuum, dark green coloured mass (10 gm) was obtained which further decolourized and redissolued in minimum quantity of ethanol.

1. The filtrate obtained was also concentrated under vacuum and the residue was partitioned successively with peroleum ether, butanol and ethylacetate to afford the corresponding fractions.
2. The ethylacetate fraction gave positive test for phenolic and flavonoid contents. This fraction is further subjected to column chromatography on Si gle column and eluted with solvent system of increasing polarities. All such obtained for fractions. Were added to get a mix fraction which were tested for phenolic and flavonoid content and eluted with ethylacetate-methanol, gave positive test. This fraction was evaporated under reduced pressure and concentrated[13]. Obtained residued was redissolved in little ethanol and filtered. The filtered was kept in refrigerator an obtained com

* Department of Chemistry, SBN Govt. P.G. College, Barwani (M.P.) INDIA
** Department of Chemistry, SBN Govt. P.G. College, Barwani (M.P.) INDIA
*** Department of Chemistry, SBN Govt. P.G. College, Barwani (M.P.) INDIA

pound is checked for its purity applying TLC and melting point determination.

Result and Discussion - Phenolic and flavonoid Compound- The test solution gave dark brown colouration with neutral $FeCl_3$ and red with Mg/HCl showing the presence of Phenolic and flavonoid group in the compound.

The purity of obtained pale yellow substance was confirmed on the basis of its behaviour on TLC plate. A deep purple spot (Rf=0.77) with butanol: accticacid: water (4:2:6 V/V) as developing phase and changing to greenish purple with ammonia vapours[14]. The melting point of the compound was observed to be 254^0C[15]

Conclusion - The ethanolic extract of the stem of Nyctanthes arbos-tristis, a well documented medicinal plant which resulted in the isolation of a bioflavonone, naringenin. Flavonoides are plant phenolic compound which are considered beneficial to human health.

References :-

1. Chopra RN,Nayer SL and Chopra IL, Glossary of Indian Medicinal Plants,(PID,CSIR,New Delhi)),1956.
2. Harlee Kaur Sandhar, Mohanjit Kaur, Bimesh Kumar,Sunil,Prasher,An Update on Nyctanthes Arbor-tristis linn, Int.Pharm.Sci.1,2011
3. Kirtikar KR,Basu BD(1935) Indian Meditional plants.2nded. Dehradun India: Oriental Enteprises; 131-134.2Abhishek Kumar sah and Vinod Kumar Verma;Phytochemical and Pharmacological Potential of Nyctanthes arbortristis:AComprehensive Review,Int. J.of Research in Pharm.and Biomedical Sic,3 (1) Mar 2012.
4. Gupta PP Srimal RC Srivastava M, Singh KL. Tandon AS (1995) Antiallergic activity of arbostristosided from Nyctanthes arbor-tristis Int J fharmacog 33, 70-72
5. Srivastava V Rathod A, AliSM, andTandon JS.(1990) New benzoic esters of loganins and 6-6. ethaydroxy loganin from Nyctanthes arbor-tristis J Nat frod 53, 303-308
7. Badam,L,Deolankar,R.P.,Rojatkar,S.R., Nagsampgi, B.A., Wagh,U.V., J Med Res 1998,87,379-383.
8. Chitravanshi,V.C., Singh, A.P., Ghosal, S., Parsad,B.N.K., Srivastava V.,Tandon,J.S., Int J Pharmacog 1992, 30,71-75.
9. Kirtikar KR &Basu BD,Indian Medicinal Plants,Vol.VII,(LM Basu Publishers, Allahabad,India). 2110-2113.
10. Sasmal D, Das S & Basu SP,Pytoconstituents and thera peutic potential of Nyctanthes arbor-tristis Linn,Pharmacog Rev,1 (2) (2007) 344-349.
11. Tripathi S, Tripathi PK, Vijaya Kumar M, Rao Ch, V, Singh PN (2010b) Anxiolytic activity of leaf extracts of Nyctanthes arbor-tristis in exprementl rats pharmacologyonline 2, 186-193.
12. Chauhan JS and Saraswat M,A new glycoside from the stem of Nyct anthes arbor - tristis, Journal of Indian Chemical Society,55 (10),197 8,1049-1051.
13. Jain R and Mittal M, Isolation of Astragalin,a flavonol glucoside , from the stem of nyctanthes arbor-tristis paper presented at the International conference on Green Technologies for Environmental Rehabilitation; Haridwar,Uttarakhand.India,2012,67.
14. Vogel I, elementary practical organic chemistry vol . II qualitative organic analysis 2nd ed. Vol. II Longmane 1966.
15. Emam SS, Moaty AE and AbdE MS, Primary metabolites and flavonoid constituents of Isotis microcarpa J Gay ex boiss, Journal of natural products 3(3) 2010, 12-26.
16. Buckingham J, Dictionary of Natural product, vol. II, , Chapman and Hall, Londans, 1994,1623.

****

Foliar Sprays With Boron

Dr. S. K. Udaipure*

Introduction - The importance of micro-nutrients in sugarcane culture is an accepted fact. The minor and trace elements, viz. Manganese, Molybdenum, Boron, Copper, Zinc, etc. play an important role and are essential for the normal development of corps. Barnes (1) states that the application of farm yard manure kept the land supplied with adequate amounts of the minor and trace elements, as F.Y.M. contains some of these elements and that after the adoption of mechanized cultivation of cane, the use of farm yard manure became very rare, which might have led to the deficiencies of these elements in the soil.

Samuels, et a1 (4) in Puerto-Rico made detailed investigations on the application of these nutrients and studied their effect on the Sucrose content of sugarcane. they concluded from the results of over 150 field experiments with sugarcane on wide range of varieties and soils in Puerto-Rico that the minor elements Cu, Mg, Zn, B, Mn, etc. had no sinificant reponse on sucrose content of sugarcane. In recent years, foliar sprays of these micro-nutrients are commonly used for the correction of specific deficiency symptoms in plants, and it is claimed that sprays can be used for fertilizing purposes as an alternative to the usual practice of applying solid fertilizers to the soil and that the losses due to non-availability and leaching would be avoided by sprays, than when these are supplied to the land, thus reaching the plant indirectly. Rege, et al (4) concluded from their preliminary studies with the trace elements that Boron enhances the maturity and sugar formatiom, as compaared to other minor elements. Divekar (2) conducted a trial to study the effect of foliar sprays of Boron on the sucrose content of sugarcane and reported from one year's data an increase in sugar content of sugarcane with sprays of 10 and 20 parts of Boron per 100,000 parts of water and that an addition of 4 lbs. B per acre as soil application to the sprays showed even better response.

Experimental details - The spraying trials were carried out on Co. 419 under January planting grown on light as well as medium ("B") type of soil.

Light type of Soil - The treatments of different sprays on Co. 419 grown on this type of soil were as under : -

1. Spray of 10 parts of Boron per 100,000 parts of water.
2. Spray of 20 parts of Boron per 100,000 parts of water
3. Ordinary water spary.
4. No spray as Control.

The treatments were replicated thrice in a randomised fashion. The aprayings were carried out with the help of a bucket spray pump. In all five sprays were given at an interval of a fortnight from Mid-November to Mid-January. The crop was finally sampled by Mid-March.

Medium type of Soil - In another trial on the same variety grown on medium type or "B" type of soil, the method was similar to te above one, the only difference being that the concentrations were increased upto 100 parts of Boron per 100,000 parts of water; the water – spray treatment was droped. the treatments were, thus, as under -

1. Control – No spray.
2. Spray of 10 parts of B per 100,000 parts of water
3. Spray of 20 parts of B per 100,000 parts of water
4. Spray of 40 parts of B per 100,000 parts of water
5. Spray of 100 parts of B per 100,000 parts of water

In this case also five sprays from Mid-November to Mid-january were given at an interval of a fortnight.

Presentation of Data - The data for the two trials is summarised in Table No. 1 and 2 repectively.

Table No. 1 **(See in the next page)**

Table No. 2 **(See in the next page)**

From Table No. 1 it will be seen that on light type of soil, 10 parts of B has shown very slight superiority as regards sucrose per-cent juice over control. The icrease was only 0.06% more than the control. But 20 parts of B has indicated 0.40% increse in sucrose per-cent in juice than the control. As regards the C.C.S. per-cents, 10 parts B is leading the other treatments. On the whole, the quality of cane obtained after the sprays of 10 and 20 parts of Boron per 100,000 parts of water is slightly better than that of control.

In case of medium type of soil, it will be observed from Table No. 2, that with increasing concentaration of Boron sprays, the quality of cane is deteriorated than the control, as regards sucrose in cane and C.C.S. per-cents. The advantage, however slight it may be, obtained on light type of soil from 10 and 20 parts of Boron per 100,000 parts of water was not observed on the medium type of soil.

Conclusions -

1. A very slight benefit is observed from the spray of 10

*Associate Professor (Chemistry) Govt. Narmada P. G. College, Hoshangabad (M.P.) INDIA

parts of B, But 20 parts of B has shown better result, on light type of soil.

2. On medium type of soil, even the sprays of 10 and 20 parts of Boron have not shown beneficial response.
3. with increasing concentrations of Boron sprays, the quality of cane was impaired on medium type of soil.
4. The data, being for one year, required further confirmation and an exhaustive study from physiological, agronomical and economical point of view is necessary.

Table No. 1
Folier Sprays with Boron
Light type of Soil

	Particulars	parts of B per 1000,000 parts of water		water spray	Control i.e. No Spray
		10	20		
1	Brix	21.56	22.66	22.33	21.05
2	Sucrose in Juice	20.58	20.75	21.01	23.33
3	Sucrose in cane	94.63	91.51	95.80	94.21
4	Sucrose in cane	16.85	16.44	18.12	16.01
5	Fibre per-cent	10.76	12.03	11.86	12.88
6	C.C. Sugar per-cent	15.23	14.93	13.87	13.78

Table No. 2
Falior Sprays with Boron
Medium type of soil

	Particulars	Parts of B per 100,000Parts of water				No Spray (Control)
		10	20	40	100	
1	Brix	19.86	19.78	21.03	20.66	19.53
2	Sucrose in juice	17.68	17.69	18.19	17.04	18.29
3	Purity	89.17	89.31	84.37	82.47	94.25
4	Sucrose in cane	15.46	14.86	13.24	14.29	16.15
5	Fibre per-cent	10.38	10.98	11.92	11.63	10.94
6	C.C. Sugar Per-cent	12.85	11.95	15.92	11.53	13.75

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

Sea Water As A Source Of Drinking Water- Desalting

Dr. Sadhna Goyal*

Introduction - It is a well known fact that storage of water for drinking and industrial purpose is becoming alarming day by day. Intensive researches are going on in various countries to solve the people by converting sea water into drinking water. Desalting or desalinization is common's applied to effect a partial or complete demineralization of highly saline water such as sea water (35000 ppm of dissolved salls) or blackish water. Partial demineralization applies to lowering of the saline content to a degree which renders the water suitable for the drinking purpose (500 ppm salines or less) and other general uses. Complete demineralization applies mainly to furnishing a water soluble for use in high pressure boilers and for certain other industrial uses.

Various methods such as freezing method, distillation method, multistage evaporation method, forced circulation vapors compression method, electrodialysis method and reveres osmosis method have actually been tried for the purpose out other the electrodialysis method and reveres osmosis method are very promising techniques.

Electrodialysis method in which positive and negative ions are separated out of a flowing current of saline water when it allowed to pass through ion exchange membranes under the influence of an electric field.

The method is based on the fact that when a direct current of electricity is passed through a saline water in a series of closely spaced, alternately placed, action exchanges and anion exchanges membranes cations pass through the cation exchanges membranes and anion though the anion exchange membranes. A a result of movement of cations and anions, the salinity decreases in one space and increase in the next space and so on throughout the stack. The water containing more salt is run to wastes, while the water containing less salt may either be re-circulated through the stack on this manner, saline water may be converted into drinking water. Completely demineralised water is not obtained by this method.

The process is capable of reducing salt contents of blackish water from 2000 to about 300 ppm, but it is very costly. In recent years ion selective membranes, which are permeable to only one kind of low with specific charge have been used.

Reverse osmosis method is another water is & promising method of desalting in which water is squeezed out of the waste instead of taking the waste out of water. When a solution is separated by a semipermeable membrane from a sample of pure water, there is a tendency for the water to move through the membrane to the solution side by the process known as osmosis. Hence ordinary osmosis cannot be used to desaline water because the movement is in wrong direction. Osmosis can, however, be prevented by applying a pressure on the solution side, that is, just equal to the osmotic pressure of the solution. If the applied pressure exceeds the osmotic pressure, water moves out the solution to the pure water side of the membrane. This process known on reverse osmosis, accomplishes the objective of desalination, the extraction of pure water from salt water. A major problem in reverse osmosis is to find membranes strong enough to withstand the high pressures required and at the same time be impermeable to the ions in salt water. Synthetic Membranes made of nylon or cellulose acetale have now been developed to meet there requirements. Desalination plants using such membranes are now producing millions of gallons of fresh water per day. This process is promising for the future because energy requirements for reverse osmosis is only 30% of that of distillation process. Desalination is a process that extracts mineral components from saline water. Salt water is desalinated to produce water suitable for human consumption or irrigation. Most of the modern interest in desalination is focused on cost effect provision of fresh water for human use. Due to its energy consumption, desalination sea water is generally more costly than fresh water from rivers or ground water. Currently approximately 1% of the world population is dependent on desalinated water to meet daily needs, but the UN expects that 14% of the world population will encounter water scarcity by 2025. According to the international Desalination Association in June 2015 18,426 desalination plants operated world wise producing 86.8 million cubic meters per day, providing water for 300 million people. Kuwait produces a higher proportion of its water than any other country, totaling 100% of its water use.

The ancient Greek philosopher. Aristotle observed in his work metrology that " Salt water when it turns into vapour, be comes and the vapous does not from salt water again

*Professor (Chemistry) Govt. MVM Bhopal (M.P.) INDIA

when it condenses" and also noticed that a fine wax vessel would hold portable water after being submerged long enough in sea water having acted as a membrane to filter the salt many studies focus on ways to optimize desalination. A minimum energy consumption for sea water desalination of around 1 K wh/m^3 has been determined. According to EPA water intake structure cause adverse environmental impact by sucking fish and shellfish or their eggs in to an industrial system. desalination removes iodide from water and could increase the risk of iodine deteciency disorer. Waste Water reclamation provides multiple benefits over desalination.

References :-

1. Laurene Veale August 19,2015. MIT TECHNOLOGY NEWS
2. Warsinga, David M. Energy efficiency of batch and semi batch (CCRO) reveres osmosis desalinater. Water research PP.272-282.
3. Semi at 12. (2008) Energy issues in Desalination Processes, Environment science and Technology. 42 (22) : 8193
4. Environmental Chemistry By B.K. Sharma (2001) PP 256-258

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

Attributes Responsible For Changing Trends In Mojari And Jutti Craft

Simerjeet Kaur * Karanjeet Kaur **

Abstract - The crafts of India are diverse, rich in history and religion. Rajasthani mojari and Punjabi juttis for males and female come up in beautiful bright rainbow colours. Sometimes you can find them in single colour but to add on a little sparkling effect, a combination of multiple colour threads are used to give a glittery look as the special occasion demands. But nowadays craftsmen seeing many changes in mojari and jutti. This paper is confined with the attributes responsible for changing trends in craft of Rajasthan and jutti craft of Punjab.
Key Words - Attributes, Changes, Trends.

Introduction - Indian traditional art and craft are age old practices by different craft-guilds all over India. Though they are the manifestation of cultural heritage of this country, gradual seclusion from the larger population and the craft-guilds will affect the cultural sustainability of the country. The craft of each state in India reflect the influence of different empires. The handicrafts of Rajasthan and Punjab which were once the symbols of glorious tradition have now become full technical and mechanized. The present study focuses on the attributes responsible for changing trends in mojari craft of Rajasthan and jutti craft of Punjab.

Aims And Objective:

1. To study the attributes responsible for changing trends in mojari craft of Rajasthan and jutti craft of Punjab.

Delimitations:

1. This study was limited to 150 craftsmen selected from Rajasthan and 150 craftsmen selected from Punjab.
2. The respondents were selected randomly in Rajasthan from three prominent areas of Jodhpur district i.e. Indra calony, Sivanchi Gate, Pratap Nagar and Udaipur i.e. Binder, Mochiwara, Shastri circle and in Punjab state in district of Ludhiana i.e. Islam ganj, Pram nager, Gilla pind and in Amritsar i.e. Majita, Shatta, Kasri Bagh.

Methodology - Survey, Interview, questionnaire and observation methods were applied for conducting this study. Random sampling method was used to select 150 craftsmen from Rajasthan and 150 from Punjab. The raw data collected was classified on the basis of response respondents; coded (in the form of frequencies) and tabulated (in percentage) these were then presented in the form of graphs, tables and Chi-square test also used in this study.

Results & Discussions - In these study find out in mojari and jutti craft changes observed in current and previous trends, tools, materials, embellishments, selling patterns draft, colour, designs and techniques in the last two decades many changes occurred into the work of mojari and jutti craft. The changes observed last two decades and being divided into categories and discussed as follows:-

A) Support current trend of market

Table- 1: Distribution of respondents according to support current trend of market.

n=300

Option	Rajasthan		Punjab		X^2	Df	Result
	N	%	N	%			
Yes	53	35.33	114	76.00	50.686	1	***
No	96	64.00	35	23.33			
No Response	1	0.67	1	0.67			
Total	**150**	**100**	**150**	**100**			

Mojari/jutti makers of two states-Rajasthan and Punjab-were studied to reveal that do they follow current trend of market for making their Mojari/Jutti.

It was found that (64 .00 percent) of all respondents in Rajasthan follow the market trend whereas (35.33 percent) don't follow the same. In Punjab (76. 00 percent) don't follow the market trend whereas (23.33 percent) follow the same. An analysis of data unfolds that majority of Morari/Jutti makers in Rajasthan follow the market trend but in Punjab majority of such workers don't follow the market trend.

To test the dependence between states to which respondents belongs i. e. Rajasthan and Punjab and craftsmen support current trend of market for mojari and jutti craft. Chi square test of association was applied. Test results are given in the table. Test result shows significant association between craftsmen support current trend of market for mojari and jutti (X^2 =50.69, p<0.001).

In Rajasthan only 35.33%follow current trend where as in Punjab 76% follow current trend in mojari and jutti making.

* Research Scholars (Home Science, Textile) Jai NarainVyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA
** Research Scholars (Home Science, Textile) Jai NarainVyas University, Jodhpur (Raj.) INDIA

Fig: 1 Percentage distributions of respondents according to support current trend of market.

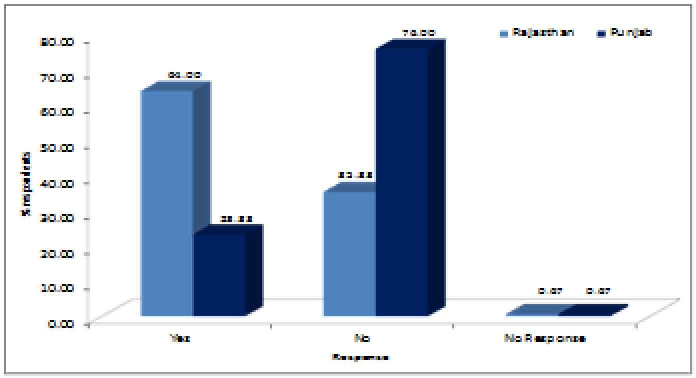

B) Tools use for making mojari and jutti - The major changes were observed in the use of machines for stitching and embellishing various designs on upper parts and in finishing, wooden last were replacing by polymer last. The details information about machines and polymer last used by respondents.

Machineries used in Mojari and Jutti craft - In Punjab respondents used to work on different types of machineries for jutti craft than mojari craft of Rajasthan. machines like throw skiving, rotting glider, finishing machine, computerized embroidery, patch work and sewing machines for embroidery work besides using elementary machines like heavy duty stitching , compressing machines, die cutting.

In mojari and jutti craft polymer lasts use for perfect shape of mojari and jutti. Old time craftsmen use wooden lasts but new generation use polymer lasts.

Wooden lasts most commonly used by artisans, the most commonly used raw materials for making these lasts are babool, sisam or praslas wood. However, sisam is used only when the lasts are required for left and right mojari and jutti. Usually the orders are only for a single last of a specific size as in the traditional mojari and jutti where there is no difference between the left and right mojaris and jutties.

Polymer lasts are recently being used in the production of mojari and jutti are made of hard plastic. They are durable and do not deform with use and provide better finish. Now day's wooden lasts have been replaced by polymer lasts.

Table -2 (see in last page)

A Study was organized to know about the tools that Mojari/Jutti makers of Rajasthan and Punjab use while making their products.

In Rajasthan, (88.67 percent) of all respondents use both traditional and current tools, (10.67 percent) use traditional tools and (0.67 percent) gave no response. In Punjab, (86.00 percent) of all respondents use both traditional and current tools, (11.33 percent) use traditional tools and (2.00 percent) of them use current tools.

Collected data connotes that majority of the studied workers in both the states use both traditional and current tools while making Mojari/Jutti.

To test the dependence between states to which respondents belongs i. e. Rajasthan and Punjab and types of tools use for making mojari and jutti craft. Chi square test of association was applied. Test results are given in the table. Test result shows no significant association between types of tools use for making for mojari and jutti & state (X^2=3.091, $p<0.05$).

Almost same proportion of mojari and jutti makers in Rajasthan and Punjab use traditional tools or both traditional &current tools in making mojari/jutti.

Fig: 2 Percentage distributions of respondents according to tools you use in making of mojari/jutti.

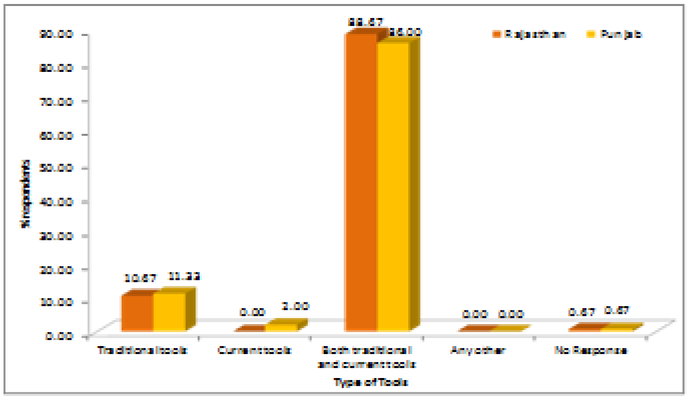

C) Now days observed change in mojari and jutti

1.) Pattern draft - The ordinary mojari and jutti is either pointed in shape or rounded but now different forms are available known as gol-panja (Round Panja), chota- panja (smalltoe) salem sahi (pointd toe), cut out mojari and jutti, sandels and slippers was a few modernized versions of mojari and jutti are available in market.

2.) Designs - Along with traditional used design of mojari and jutti such as Applique work, punch work and embroidery with wool, silk, cotton, golden, silver zari (kalaboot), new design has been introduced in the market these are interweave mojari, shoe type jutti, stone work, sheels and cowery work, brass nails brass bells work and leather patch also use now days.

3.) Colour used - previous time artisans were mainly producing plain colour Mojari and Jutti due to non availability of treated leather and colouring agents. Previous time use brown (Camel shade) mojari and jutti and embroidery of golden and silver colour threads. But now days mojari available many colours and jutti also available all colours. Now days fabric also use for manufacturing in mojari and jutti. In leather, primarily only natural (vegetable colour and minerals) colours were used which remained fast and fresh for a long duration. Through in present time synthetic colour had also gained prominence.

Table- 3 (see in last page)

Rajasthan and Punjab's Mojari/Jutti makers were studied to know that whether they are noticing any change in the day to day material being used in making Mojari/ Jutti.

In Rajasthan, (98.00 percent) respondents noticed such change whereas (1.33 percent) denied for the same. In Punjab, (95.33 percent) of all respondents noticed the

change taking place in the material, (0.67 percent) denied it and (4. 00 percent) gave no response.

Thus the findings of the study connotes that majority of all respondents in both the states agree on the change that is taking place in the day-to-day material used while making Mojari/Jutti.

To test the dependence between states to which respondents belongs i. e. Rajasthan and Punjab and observed that day to day materials used in making of mojari/ jutti is changing in mojari and jutti craft. Chi square test of association was applied. Test results are given in the table. Test result shows non significant association between observed that day to day materials used in making of mojari and jutti is changing & state (X^2 =0.303, p>0.05).

Almost same proportion of mojari and jutti makers in Rajasthan and Punjab observed that day to day materials used in making mojari/jutti is changing.

Fig:3 Percentage distributions of respondents according to observed now day's material change in making of mojari/ jutti.

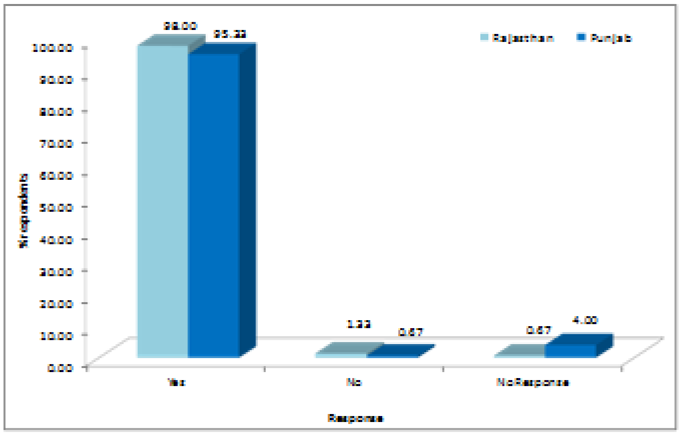

D) Many change observed in mojari and jutti work

Table-4 (see in last page)

A study was organized on Mojari/Jutti makers of Rajasthan and Punjab to examine the type of change taking place in material used for making Mojari/Jutti. (74. 00 percent) of all respondents in Rajasthan found it traditional, (24. 00 percent) modern while (0.67 percent) phelu. In Punjab, (96.67 percent) reported that change is traditional, (01.33 percent) replied it as phelu and(02.00 percent) gave no response.

Thus majority of workers in both the states refer the change to be traditional.

Fig: 4 Percentage distributions of respondents according to change observed in Mojari and Juttí craft.

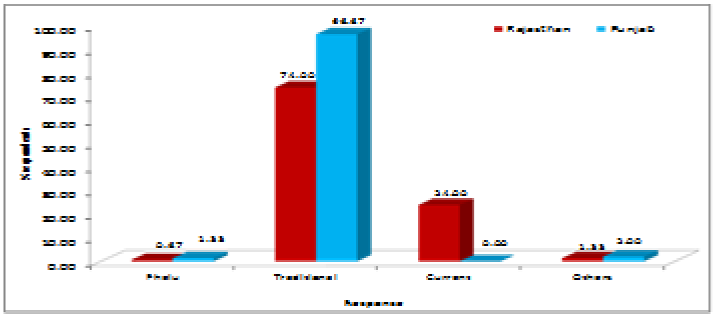

E) Leather use in mojari and jutti craft

Table- 5 (see in last page)

Mojari/Jutti makers of two states-Rajasthan and Punjab-were studied to know that where do they use leather while making Mojari/jutti.

In Rajasthan, (43.33 percent) use leather in pattern, (12.00 percent) in design, (06.00 percent) as a decorative material and (05.33percent) for technical use. In Punjab, (53.33 percent) use the leather in pattern, (34.67 percent) for technical use, (13.33 percent) as a decorative material and (02.67 percent) in design. An analysis of the collected data signifies that majority of workers in both the states use leather in pattern.

Fig: 5 Percentage distributions of respondents according to leather use in Mojari/Jutti craft.

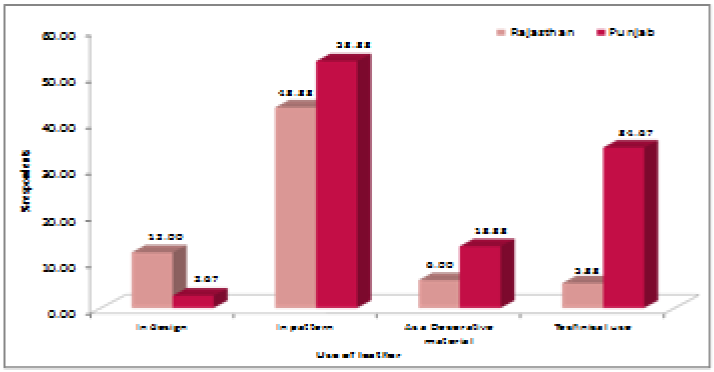

Table 6 (see in last page)

A study was conducted to unravel that how the Mojari/Jutti workers of Rajasthan and Punjab do comes to know about the current trends in Mojari/Jutti.

In Rajasthan, (78.00 percent) of all respondents come to know by participation in festivals/craft fairs, (18.67 percent) by suggestions of customers and (04.00 percent) by participation in awareness camps. In Punjab, (39.33 percent) of them by participation in awareness camps, (36.00 percent) by participation in festivals/craft fairs and (23.33 percent) by suggestions of customers.

An analysis of the data exhibit that majority of the Mojari/Jutti makers of Rajasthan come to know about current trend by participation in festivals/craft fairs whereas majority of such workers of Punjab by participation in awareness camps.

Fig: 6 Percentage distributions of respondents according to current trends related to Mojari/Jutti.

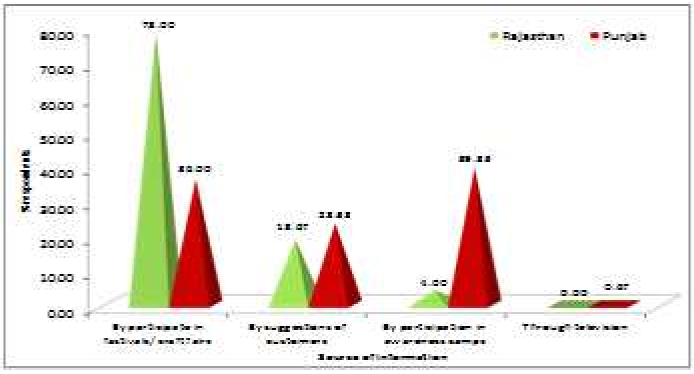

G) Technique use for mojari and jutti - Certain processes in mojari and jutti technique has been mechanized since last two dacades included introduction of elementary machines like heavy duty stitching, compressing machines, die cutting, finishing machines and embroidery machines etc. to reduce drudgery , improved aesthetics and finish but at the same time retained the basic hand stitched nature.

Table – 7 (see in last page)

Mojari/Jutti workers of Rajasthan and Punjab were examined to reveal the technique used by them in making Mojari/jutti.(83.33 percent) of all respondents in Rajasthan use both traditional as well as current technology whereas (10.67 percent) use traditional only. In Punjab, (87.33 percent) respondents reported the use of both technologies but (12.00 percent) said they use traditional technology only. Data on both the states conveys that majority of the studied workers used both the traditional and current technology for making Mojari/Jutti.

Basic manufacturing procedure was found similar in Moajri and Jutti craft. But some steps were changed that as folllows -: Respondents of Rajasthan and Punjab used to prepare both traditional and contemporary mojari and jutti as follows:-

Traditional mojari and Jutti :

a) With embellishment - Applique mojari in Rajasthan and lucky (lakki) jutti in Punjab.

b) without embellishment - Nagra mojari in Rajasthan and Jalsa jutti in Punjab.

c) aari tari embroidery in Rajasthan and patt (untwistes silk threads) embroidery in Punjab.

d) Now days goat skin with hairs mojari disappers.

Modern mojari and jutti - Respondents agreed that manufacuring trend had been changed during last two decades. In mordern times, some embellishment are done.

a) By printing

b) By computerized embroidery machine

c) By sewing machine

d) By machine cut work and punch work

Respondents of in Rajasthan in Jodhpur prepared Mojari using traditional method but appling new design i.e. mate work, interweave, two separate part of the Moajri i.e. toe of the Mojari and ankle of the Mojari, open at back (Dolma Mojari) and stitched by turning upper part outside. Traditionally, the design of Mojari has close back and stitched by turning upper part inside example:- Applique cut out Mojari, Punch and embroidery both chain and stem stittch were used for embroiery work but now chain stitch was more common as reported by respondents.

Respondents of Punjab prepared Jutti using some traditional and some mordern method. But applying new designs i.e. shoe type jutti, brass nails work, fabric attatch with leather. Upper portion of jutti small than traditional jutti.

Change in Assembling technique - It was observed that assemble tecnique was not similar as in past. In Rajasthan and Punjab respondents told that assembling technique has been changed as per the requirement and availability of raw materials.

a) In Rajasthan printed mojari before printing leather upper parts of the Mojari are cut in round shape. The pattern for the upper part is traced with a pointed tool on dyed leather. Tracing is done using a marker or pen followed by cutting draft with a rounded knife called Rapi and scissors. It was found that previously (before 2 decade), no artisans make use of printing technique while making of mojari. Printing was done on the mojari upper parts with Rotating glider machine. Artisans have some blocks design with contemporary and geometrical motifs for this purpose.

In Punjab printing not done on jutti. Its done only mojari in Rajasthan.

b) Both place in Rajasthan and Punjab embroidery done with computer machine. Computer machine embroidery is done on a bulky fabric and 350-500 parts/dayprepared.

c) In Rajasthan machine embroidery not use on mojari but in Punjab many crafts men use machine embroidery on jutti. Mostly female craftsmen use these embroidery on Jutti. Sewing machine embroidery is done on small piece according to demand and 120 to 160 upper parts/day are developed.

It was observed that previously embroidery was not done directly on leather but now embellishment was directly done on leather and rexine and weaves with small leather strips.

d) Both place in Rajasthan and Punjab notice changes in sole and insole . Previously sole was prepared by leather at home but now days plastic and rubber sole were more common. Insole was cut on cardboard and sole was cut on rubber or thick plastic sheet using rotating glider machine.

e) In Rajasthan and punjab changes in joining process were observed in process of mojari and jutti. Previous time mojari and jutti are stich by sooth (thread) but nowdays use chemical adsive for joining different parts of mojari and jutti.

Fig: 7 Percentage distributions of respondents according to technique you use in making mojari/ jutti.

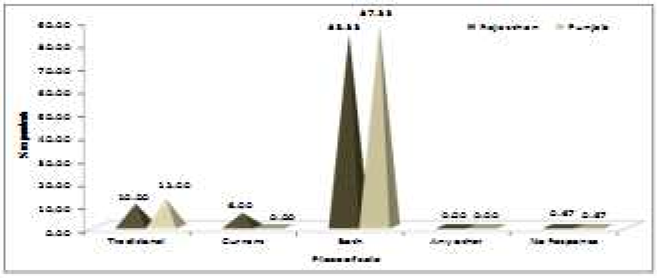

H. selling pattern - In this part researcher describe the detailed information about changes in selling price, place of orders and sources.

Table- : 8 (see in last page)

A study was carried on to examine that where the Rajasthan and Punjab Mojari/Jutti workers sale their Mojari/jutti.

In Rajasthan, (53.33 percent) of all respondents reported to be selling their products to the wholesaler, (28.67 percent) directly to the customers, (10.67 percent) to the

exporters and (6.00 percent) to retailers.

In Punjab, (60.00 percent) of all respondents sale their products to the wholesaler, (38.67 percent) sale directly to the customers, (07.33 percent) to the retailers and (02.00 percent) to the exporters.

Thus the data depicts that majority of Mojari/Jutti makers in both the state sell their products to the wholesaler.

Fig: 8 Percentage distributions of respondents according to sale mojari/ jutti.

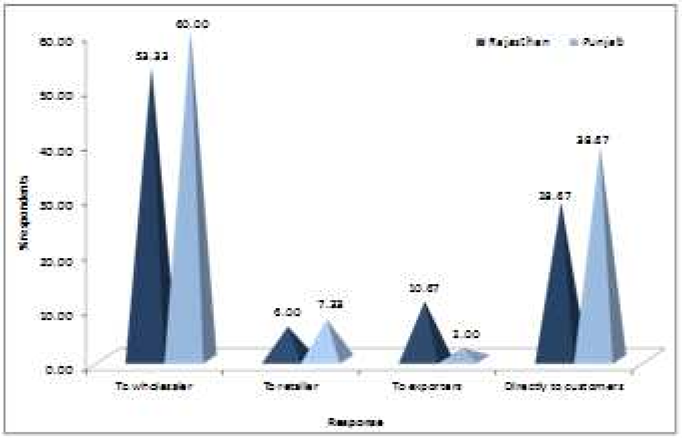

I) selling pattern in different levels

Table – 9 (see in last page)

Rajasthan and Punjab states' Mojari/Jutti makers were studied to know the details of the area at which they sale their products.

Fig: 9 Percentage distributions of respondents according to sale mojari/jutti.

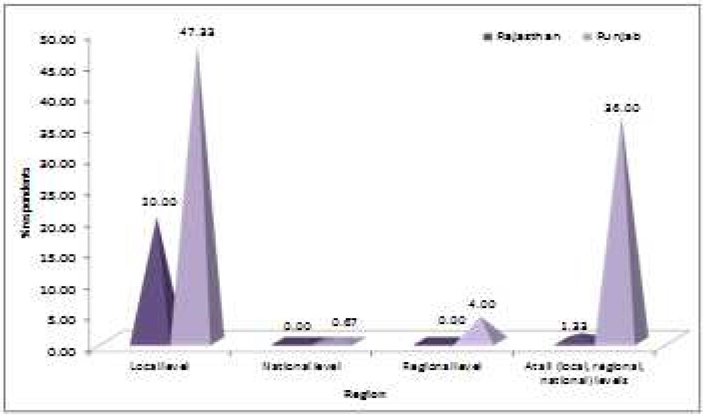

J) Current spurious in mojari and jutti

Table 10 (see in last page)

Mojari/Jutti workers of two states-Punjab and Rajasthan-were asked to know that do they think that the work currently going on in Mojari/Jutti making is spurious. (98.00 percent) of all respondents in Rajasthan found it spurious, (00.67 percent) answered negatively and (01.33 percent) gave no response. In Punjab, (99.33 percent) found the work spurious and (0 0.67 percent) gave no response.

Thus collected data indicates that majority of workers found the work that is currently going on in Mojari/Jutti as spurious.

Fig: 10 Percentage distributions of respondents according to currently spurious work are going on in mojari/ jutti making.

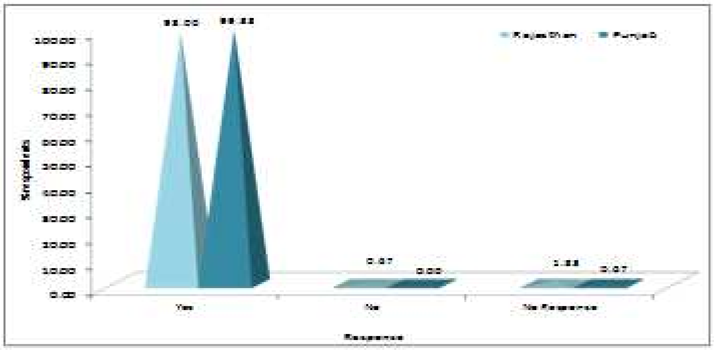

K) Types of spurious in mojari and jutti

Table -11 (see in last page)

Rajasthan and Punjab Mojri/Jutti workers were studied to determine the type of spurious work that is going on in craft of Mojari/Jutti making.

*Multiple answer In Rajasthan, (99.33 percent) of all respondents found using of leather spurious and (74.67 percent) designs as spurious.(87.33 percent) found pattern, decorative material, bad quality of thread and obsolete technique as spurious. In Punjab, (99.33 percent) found leather as spurious and (96.67 percent) design as spurious. (98.67 percent) as pattern, decorative material, quality of thread and using obsolete as spurious.

The analysis of data shows that most of the workers found use of leather as spurious.

Fig: 11 Percentage distributions of respondents according to which type of spurious work is going on in mojari/ jutti making.

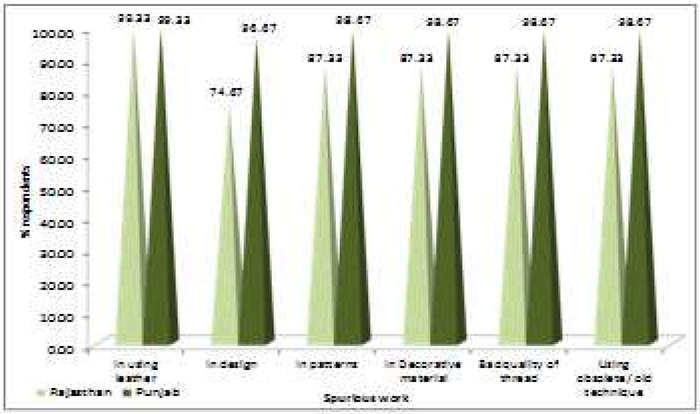

Conclusion - In mojari craft in Rajasthan and jutti craft in Punjab observed many changes in current and previous trends, tools, materials, embellishments, selling patterns draft, colour, designs and techniques in the last two decades. Occurred into the work of mojari and jutti craft. Reason behind of changing trends in mojari and jutti crafts like Lack of demand, Lack of sufficient raw material, High cost of raw material, Lack of time, Lack of interest of family members in this craft, Lack of sufficient raw material, High

cost of materials and tools; Problems related to Export or middle man tax; GST and No Loan facilities, New technique, Skilled training to do the work etc. that by craftsmen attract other craft /work like leather bag craft, leather string and jobs etc.

References :-

1. Goyal,M.(1989)"A study on Desi Juties in Punjab" Punjab Agriculture University,pp.1-5. Dr. L.R. Bhalla, (Dayanand college, Ajmer) publications:
2. Anonymous.2010.Juti, Costume for Rajasthani Men. Cited from http://www.indianetzone.com/42/juti.htm on 25th January, 2014.
3. Kaur, P.and Joship, R, 2010. Dying art of Punjabi jutti in Patiala. Asian Journal Home Science. 5: 170-175.
4. Mantri, M. 2012. Mojari or jooti Craft of Rajasthan. Cited from http:// mamtamantri. Blogspot.in /2012/02/Mojari-or-jooti-craft-of-Rajasthan.html on 24th October, 2013.
5. Shrivastava.M. and Sen.N. (2014)"Changing trends in mojari crafts in Rajasthan"Maharana Pratap University of Agriculture and Technology
6. https://en.wikipedia.org/wiki/Crafts_of_India
7. https://en.wikipedia.org/wiki/Crafts_of_India#Crafts_of_Rajasthan
8. http://www.camelcraft.com/punjab-handicrafts.html
9. https://ac.els-cdn.com/S1877042816307157/1-s2.0-S1877042816307157-main.pdf?_tid

Table -2: Distribution of respondents according to tools you use in making of mojari/jutti

n=300

Option	Rajasthan		Punjab		X^2	Df	Result
	N	%	N	%			
Traditional tools	16	10.67	17	11.33			
Current tools	0	0.00	3	2.00			
Both traditional and current tools	133	88.67	129	86.00	3.091	2	NS
Any other	0	0.00	0	0.00			
No Response	1	0.67	1	0.67			
Total	**150**	**100.00**	**150**	**100.00**			

Table- 3: Distribution of respondents according to observed now day's material change in making of mojari/ jutti.

n=300

Option	Rajasthan		Punjab		X^2	Df	Result
	N	%	N	%			
Yes	147	98.00	143	95.33			
No	2	1.33	1	0.67	0.303	1	NS
No Response	1	0.67	6	4.00			
Total	**150**	**100.00**	**150**	**100.00**			

Table-4- : Distribution of respondents according to many change observed in Mojari and Jutti craft.

n=300

Option	Rajasthan		Punjab	
	N	%	N	%
Aspect	1	0.67	2	1.33
Traditional	111	74.00	145	96.67
Current	36	24.00	0	0.00
Others	2	1.33	3	2.00
Total	**150**	**100.00**	**150**	**100.00**

Table- 5: Distribution of respondents according to leather use in Mojari/Jutti craft.

n=300

Use of leather	Rajasthan		Punjab	
	N	%	N	%
In design	18	12.00	4	2.67
In pattern	65	43.33	80	53.33
As a Decorative material	9	6.00	20	13.33
Technical use	8	5.33	52	34.67

Table 6: Distribution of respondents according current trends related to Mojari/Jutti craft.

n=300

Source	Rajasthan		Punjab	
	N	%	N	%
By participate in festivals/ craft fairs	117	78.00	54	36.00
By suggestions of customers	28	18.67	35	23.33
By participation in awareness camps	6	4.00	59	39.33
Through television	0	0.00	1	0.67

Table – 7: Distribution of respondents according to technique use in making mojari/ jutti craft.

n=300

Type of Technique	Rajasthan		Punjab	
	N	%	N	%
Traditional	15	10.00	18	12.00
Current	9	6.00	0	0.00
Both	125	83.33	131	87.33
Any other	0	0.00	0	0.00
No Response	1	0.67	1	0.67

Table- : 8 Distribution of respondents according to sale mojari/ jutti.

n=300

Sale to…	Rajasthan		Punjab	
	N	%	N	%
To wholesaler	80	53.33	90	60.00
To retailer	9	6.00	11	7.33
To exporters	16	10.67	3	2.00
Directly to customers	43	28.67	58	38.67

Table 9: Distribution of respondents according to sale mojari/jutti

n=300

Area	Rajasthan		Punjab	
	N	%	N	%
Local level	30	20.00	71	47.33
National level	0	0.00	1	0.67
Regional level	0	0.00	6	4.00
At all (local, regional, national) levels	2	1.33	54	36.00

Table 10: Distribution of respondents according to currently spurious work is going on in mojari/ jutti making

n=300

Option	Rajasthan		Punjab	
	N	%	N	%
Yes	147	98.00	149	99.33
No	1	0.67	0	0.00
No Response	2	1.33	1	0.67
Total	**150**	**100.00**	**150**	**100.00**

Table -11: Distribution of respondents according to which type of spurious work is going on in mojari/ jutti making

n=300

Type of spurious work…	Rajasthan		Punjab	
	N	%	N	%
In using leather	149	99.33	149	99.33
In design	112	74.67	145	96.67
In patterns	131	87.33	148	98.67
In Decorative material	131	87.33	148	98.67
Bad quality of thread	131	87.33	148	98.67
Using obsolete/ old technique	131	87.33	148	98.67

विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि पर शिक्षा के माध्यम के प्रभाव का अध्ययन

डॉ. आहुति साहू * डॉ. आभा तिवारी **

शोध सारांश – अध्ययन का उद्देश्य किशोर बालक, बालिका तथा बालक एवं बालिकाओं के सम्मिलित समूह की आध्यात्मिक बुद्धि पर माध्यम के प्रभाव का अध्ययन करना है। अध्ययन हेतु न्यादर्श में हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के 120-120 किशोर बालक-बालिकाओं को लिया गया है। डॉ. संतोष धर एवं डॉ. उपेन्द्र धर (1971) के आध्यात्मिक बुद्धि परीक्षण का उपयोग किया गया है। अध्ययन के परिणामों से ज्ञात होता है कि हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के किशोर बालक, बालिका तथा बालक एवं बालिकाओ के सम्मिलित समूह की आध्यात्मिक बुद्धि में सार्थक अंतर पाया गाया है।

शब्द कुंजी – किशोरावस्था, माध्यम, आध्यात्मिक बुद्धि।

प्रस्तावना – किशोरावस्था को जीवन का सबसे कठिन काल कहा जाता है। किशोरावस्था में किशोर-किशोरियों के व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों (यथा-शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं संवेगात्मक क्षेत्र) में ऐसे क्रांतिकारी परिवर्तन होते हैं, जिसके कारण किशोरावस्था को एक नया जन्म की संज्ञा देते हैं। इस अवस्था में सर्वांगीण विकास में होने वाले परिवर्तनों के साथ स्वयं को समायोजित करने में किशोर असमर्थ होते हैं। जीवन की उत्कृष्टता शाब्दिक अक्षरीय ज्ञान से नहीं वरन् जीवन जीने की अच्छी कला पर निर्भर है। वास्तविक जीवन जीने की कला उन्हीं को आती है, जिनका जीवन आध्यात्मिक हो। जिन माता-पिता का जीवन आत्म कल्याण की ओर अंत:करण की शुद्धता में पुष्पित होता हो, वे माता-पिता अपने किशोरों को वास्तविक जीवन जीने की शिक्षा देने में सफल हो जाते हैं, वे अपने किशोरों को ऐसी चारित्रिक संपत्ति से युक्त करते हैं, जिसके ऊपर संपूर्ण जीवन की स्थिति निर्भर करती है। आध्यात्मिकता विश्वासों का वह समूह है जिसमें प्रेम, सहिष्णुता एवं जीवन जीने के लिए आदर भाव समाहित है। साधारण रूप से यह माना जाता है कि सभी धर्मो के मूल में आध्यात्मिकता होती है, यह व्यक्ति के अनुभवों पर आधारित होती है, यह परम पिता के साथ संचार है। आध्यात्मिकता का संबंध व्यक्ति के ब्रह्मांड के साथ संबंधों के रूप में लिया जा सकता है। आध्यात्मिक विकास में सामान्य रूप से व्यक्ति का अन्य लोगों के साथ अंर्तदृष्टि का विकास होता है। यह व्यक्ति की विभिन्न प्रकार से सहायता करती है कि उसका व्यवहार आक्रमक एवं दूसरी को कष्ट पहुँचाने वाला न हो। इसमें जहाँ एक ओर व्यक्ति की दृढ़ इच्छा शक्ति, बौद्धिकता एवं मन की शुद्धता होती है, वहीं दूसरी ओर इच्छाओं पर नियंत्रण होता है। **जौहर एवं मार्सल (2001)** के अनुसार -'आध्यात्मिक बुद्धि एक प्रकार की सृजनात्मक योग्यता है, जिससे व्यक्ति विभेद करने की योग्यता प्राप्त करता है तथा प्रचलित आध्यात्मिक व धार्मिक नियमों की प्रायोगिकता पर चिंतन करता है तथा उच्च व्यवहार को अपनाने की क्षमता देता है।' **वागहन (2002)** के अनुसार - 'आध्यात्मिक बुद्धि आंतरिक जीवन के बहुआयामी आयाम या मार्ग चुनने की योग्यता है जिसके माध्यम से व्यक्ति बाहरी दुनिया को समझते हैं।' **सिंडे विगलेश्वर** के अनुसार 'आध्यात्मिक बुद्धि सोच तथा तर्क से संबंधित होकर क्रिया करने की क्षमता तो है ही, साथ ही धैर्य और सहनशीलता रखते हुए परिस्थितियों का सामना करने की योग्यता है।' डेनियल गोलमेन ने आध्यात्मिक बुद्धि को समझने के लिए चार कौशलों का वर्णन किया - उच्च स्वजागरूकता, सार्वभौमिक जागरूकता, उच्च स्वदक्षता, आध्यात्मिक उपस्थिति और सामाजिक दक्षता, विचारों पर नियंत्रण, सामुदायिक जीवन में भागीदारी एवं एकाग्रता का उपयोग, आध्यात्मिक बुद्धि के महत्वपूर्ण पहलू माने जाते हैं।

वैश्वीकरण के इस युग में विज्ञान की प्रगति के साथ-साथ जहां एक ओर सभी लोगों को सभी प्रकार की सुख-सुविधाओं में वृद्धि हुई है वहीं दूसरी ओर विज्ञान की प्रगति के विपरीत परिणाम भी सामने आये हैं। इन विपरीत परिणामों में संचार माध्यमों की प्रगति के फलस्वरूप किशोरावस्था के बच्चों में पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा है। हिन्दी साहित्य प्रत्येक विद्यार्थी को सुसंस्कृत एवं उन्नतिशील बनाने में सहायक होती है। प्रत्येक विद्यार्थी अपनी मातृभाषा हिन्दी के द्वारा अपने भावी विचारों की अभिव्यक्ति सरलता से कर सकता है। संभवत: इसका मुख्य कारण अनेक उच्च श्रेणी के व्यवसाय अंग्रेजी भाषा से जुड़े हैं। क्या किशोर विद्यार्थी पर उनके शिक्षा माध्यमों का उनके व्यक्तित्व पर प्रभाव पड़ता है? माध्यम का प्रभाव विद्यार्थी की आध्यात्मिक बुद्धि को प्रभावित करता है या नहीं? और यदि प्रभावित करता है तो हमें प्रयास करना होगा, इन किशोर बालक एवं बालिकाओं के सर्वांगीण विकास पर ही उनके उज्जवल भविष्य एवं एक श्रेष्ठ नागरिक बनने की आशा समाहित है। **साबंकर (1998)** ने किशोर विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि का उनकी जीवन संतुष्टि पर प्रभाव का अध्ययन किया। अध्ययन का उद्देश्य आध्यात्मिक बुद्धि का किशोर विद्यार्थियों पर प्रभाव का अध्ययन करना था। आध्यात्मिक बुद्धि एवं जीवन संतुष्टि मापनी का प्रकाशन विद्यार्थियों पर किया गया। अध्ययन के प्रमुख निष्कर्षो से ज्ञात होता है कि आध्यात्मिक बुद्धि का जीवन की संतुष्टि पर गहन और सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

जॉन्स (1998) ने किशोर विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के बीच संबंध का अध्ययन किया। अध्ययन का उद्देश्य यह पता लगाना था कि क्या किशोरों की आध्यात्मिक बुद्धि का उनके शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य से सार्थक सहसंबंध होता है। अध्ययन

* फीडिंग डेमॉन्स्ट्रेटर (पोषण पुनर्वास केन्द्र) सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, केवलारी, जिला सिवनी (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (मानव विकास) शासकीय मो. ह. गृहविज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

में पाया गया कि किशोर बालक एवं बालिकाओं की आध्यात्मिक बुद्धि का उनके शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के बीच सकारात्मक सार्थक सहसंबंध होता है। **पारस (1998)** ने किशोर बालक-बालिकाओं की आध्यात्मिक बुद्धि का उनके मानसिक स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ता है? अध्ययन हेतु आध्यात्मिक बुद्धि परीक्षण एवं मानसिक स्वास्थ्य मापनी का प्रयोग किया गया। अध्ययन में पाया गया कि आध्यात्मिक बुद्धि का किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य पर सार्थक प्रभाव पड़ता है। साथ ही आध्यात्मिक परिपक्वता एवं सकारात्मक सहचार्यत्मक संबंध भी पाया गया। आध्यात्मिक रूप से परिपक्व विद्यार्थियों में नैतिकता, प्रेम, शक्तिशाली गुण भी थे। प्रस्तुत शोध कार्य में यह देखने का प्रयास किया गया है कि क्या माध्यम का प्रभाव किशोर विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि को प्रभावित करता है? अध्ययन का व्यक्तित्व के संतुलित विकास में सहायक होगा।

चर - स्वतंत्र चर - 1. हिन्दी माध्यम
2. अंग्रेजी माध्यम
परतंत्र चर - आध्यात्मिक बुद्धि
नियंत्रित चर - किशोरावस्था
कक्षा नवमीं के किशोर बालक-बालिका
आयु - 14-16 वर्ष

उद्देश्य -

- किशोर बालक, बालिका तथा बालक एवं बालिकाओं के सम्मिलित समूह की आध्यात्मिक बुद्धि पर माध्यम के प्रभाव का अध्ययन।

परिकल्पना -

- किशोर बालक, बालिका तथा बालक एवं बालिकाओं के सम्मिलित समूह की आध्यात्मिक बुद्धि पर शिक्षा के माध्यम का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

शोध विधि -

1. हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्मय के दो-दो विद्यालयों का यादृच्छिक विधि से चयन किया गया।
2. इन विद्यालयों के 120-120 किशोर बालक एवं बालिकाओं को न्यादर्श में लिया गया।
3. न्यादर्श में चयनित किशोर बालक एवं बालिकाओं पर आध्यात्मिक बुद्धि परीक्षण का प्रशासन किया गया।
4. आध्यात्मिक बुद्धि परीक्षण का फलांकन कर, परिकल्पना के सत्यापन हेतु प्राप्त प्रदत्त की सांख्यिकीय गणना की एवं निष्कर्ष प्राप्त किया गया।

उपकरण - आध्यात्मिक बुद्धि परीक्षण - डॉ. संतोष धर एवं डॉ. सत्येन्द्र धर (1971)

न्यादर्श -

मध्यम	बालक	बालिका	योग
हिन्दी	120	120	240
अंग्रेजी माध्यम	120	120	240
योग	240	240	480

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या -

तालिका क्रमांक - 01 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

परिणामों के आधार पर कहा जा सकता है कि माध्यम का विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि पर सार्थक प्रभाव पड़ता है। हिन्दी माध्यम के विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक है।

ग्राफ क्रमांक 01 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

वर्तमान समय में बौद्धिक एवं व्यवसायिक व्यक्तियों के लिये आध्यात्मिकता एक बहुत ही कठिन विषय वस्तु है, क्योंकि वे सब कुछ विज्ञान पर आधारित मानते हैं। पाश्चात्य संस्कृति में इस तर्कपूर्ण विश्लेषणात्मक एवं प्रासंगिक तरीकों का उपयोग ज्ञानवर्धन हेतु करते हैं और इसलिए यह धर्म से दूर प्रतीत होता है। परन्तु पाश्चात्य वैज्ञानिक भी आध्यात्मिकता के वैज्ञानिक पक्ष संबंधी प्रयोग कर इस निष्कर्ष की ओर आ रहे हैं कि आध्यात्मिकता के माध्यम से परिवर्तन किये जा सकते हैं। इसी प्रकार विज्ञान भी उत्तरोत्तर धर्म की तरफ झुकता जा रहा है और ऐसा विश्वास है कि धर्म ही मनुष्यों का भविष्य है और धर्म जब आध्यात्मिकता से जुड़ जाता है, तब व्यक्ति के समग्र प्रयास एक दिशा की ओर केन्द्रित हो जाते हैं कि आत्मा का उद्धार किस प्रकार से हो सकता है, जो व्यक्ति के जीवन का वास्तविक उद्देश्य है। संतमत की यह मान्यता है कि आत्माओं के उद्धार का कार्य आध्यात्मिकता के माध्यम से शुरू हो सकता है और यह निरंतर जारी है। सुखदेव रॉय (2005) ने आध्यात्मिक बुद्धि के संबंध में कार्य प्रारंभ किया एवं ऐसा विश्वास है यह भविष्य में कार्य के विकास को सुनिश्चितता प्रदान करेगा। आध्यात्मिक बुद्धि एक प्रकार की व्यक्ति की विचारधारा है जिसके कारण वह प्रत्येक व्यक्ति से समानता का व्यवहार तथा उच्च आदर्श व मूल्य बनाये रखता है।

उपरोक्त परिणामों से स्पष्ट होता है कि माध्यम ने आध्यात्मिक बुद्धि को सकारात्मक रूप से प्रभावित किया है। हिन्दी माध्यम के विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक है। इस तरह के परिणामों का आना भी स्वाभाविक प्रतीत होता है, इस संबंध में पूजा, पाठ आदि जो कर्मकांड से संबंधित हैं, उनमें भी हिन्दी भाषा का उपयोग होता है और भक्ति संगीत, संतों के प्रवचन आदि भी हिन्दी में ही होते हैं, उसमें आध्यात्मिकता का जो चरण बिन्दु है वहां पर यदि नीचे के सोपानों को पार करने में भाषा की प्रधानता की बात है तो वह हिन्दी ही ऐसी भाषा है, जिसमें अंग्रेजी भाषा की अपेक्षा विद्यार्थी समझ की भाषा के रूप में उपयोग कर सकता है। सूचना आधारित पाठ्यक्रम भी सामान्य रूप से हिन्दी भाषा में प्रधानता लिये रहते हैं। **इल्यासी एवं जाटिया (2012)** ने किशोरों की आध्यात्मिक बुद्धि एवं मानसिक स्वास्थ्य के मध्य संबंध का अध्ययन किया। अध्ययन का उद्देश्य, किशोर विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि का उनके मानसिक स्वास्थ्य से संबंध का अध्ययन करना था। इन पर आध्यात्मिक बुद्धि एवं मानसिक स्वास्थ्य परीक्षण का उपयोग किया गया। अध्ययन के प्रमुख निष्कर्षों से ज्ञात होता है कि आध्यात्मिक बुद्धि एवं सामाजिक स्वास्थ्य में सकारात्मक संबंध होता है। स्प्रिंगर (2012) ने विद्यार्थियों के जीवन की गुणवत्ता का आध्यात्मिक बुद्धि से संबंध का अध्ययन किया। अध्ययन का उद्देश्य था कि क्या किशोर विद्यार्थियों के आध्यात्मिक बुद्धि एवं उनकी जीवन की गुणवत्ता में सकारात्मक संबंध होता है। आध्यात्मिक बुद्धि एवं जीवन की गुणवत्ता के परीक्षण का उपयोग किया गया। अध्ययन में पाया गया कि जिन विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि अधिक उच्च होती है, उनके जीवन की गुणवत्ता का स्तर कम आध्यात्मिक बुद्धि वाले विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि अधिक उच्च होती है, उनके जीवन की गुणवत्ता का स्तर कम आध्यात्मिक बुद्धि वाले विद्यार्थियों की अपेक्षा अच्छा होता है। अर्ब्दाह एवं फर्स्ट (2012) ने किशोरों के शैक्षणिक विकास के आध्यात्मिक बुद्धि एवं आत्म सम्मान के मध्य संबंध का अध्ययन किया। किशोर विद्यार्थियों पर आध्यात्मिक बुद्धि परीक्षण एवं आत्म-सम्मान प्रश्नावली का उपयोग किया।

अपने अध्ययन में पाया कि आध्यात्मिक बुद्धि एवं आत्म सम्मान के मध्य सीधा एवं सार्थक सहसंबंध था परन्तु आध्यात्मिक बुद्धि एवं शैक्षणिक विकास के मध्य कोई सार्थक संबंध नहीं पाया गया। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षा का माध्यम विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि को प्रभावित करता है।

निष्कर्ष – हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के किशोर बालक, बालिका तथा बालक एवं बालिकाओं के सम्मिलित समूह की आध्यात्मिक बुद्धि में सार्थक अंतर होता है। हिन्दी माध्यम के किशोर बालक, बालिका तथा बालक एवं बालिकाओं के सम्मिलित समूह की आध्यात्मिक बुद्धि, अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गुप्त, रामबाबू (2000), विकासात्मक मनोविज्ञान, अष्टम संस्करण, रतन प्रकाशन मंदिर, प्रोफेसर्स कॉलोनी, दिल्ली गेट, आगरा, पृ.सं. 469-470
2. कपिल, एच.के. (1975), सांख्यिकीय के मूल तत्व, विनोद पुस्तक मंदि, आगर, पृ.सं. 607
3. सिंह, अरूण (2006), आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान, चतुर्थ संस्करण, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, बंगला रोड, दिल्ली, 110007
4. Springes, L. (2012) Study of the spiritual intelligence role in predicting student quality oflife, J. Religion and health
5. Swaleha, S.P. (2012) Student atitude in English and Vernacular Medium in Secondary School, J.J. Arts, Science and Commences : III(1) : 136
6. Vaughan, F. (2002) What is spirital intelligence, Journal of Mumenistic Psychology. Vol. 42(2)
7. Zohar, D., Manshall, I. (2001) Spirital intelligence the ultimate intelligence Bioomsbury London.

तालिका क्रमांक – 01

हिन्दी एवं अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि संबंधी परिणाम

समूह	माध्यम	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	'पी' मान
बालक	हिन्दी	120	230.16	30.29	8.43	<0.01
	अंग्रेजी	120	201.69	21.21		
बालिका	हिन्दी	120	235.80	18.34	11.50	<0.01
	अंग्रेजी	120	205.59	22.10		
बालक एवं बालिका	हिन्दी	240	232.98	25.16	13.67	<0.01
	अंग्रेजी	240	203.64	21.74		

स्वतंत्रता के अंश – 232 — 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 1.97

0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.60

स्वतंत्रता के अंश – 478 — 0.05 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 1.96

0.01 स्तर पर सार्थकता हेतु मान – 2.59

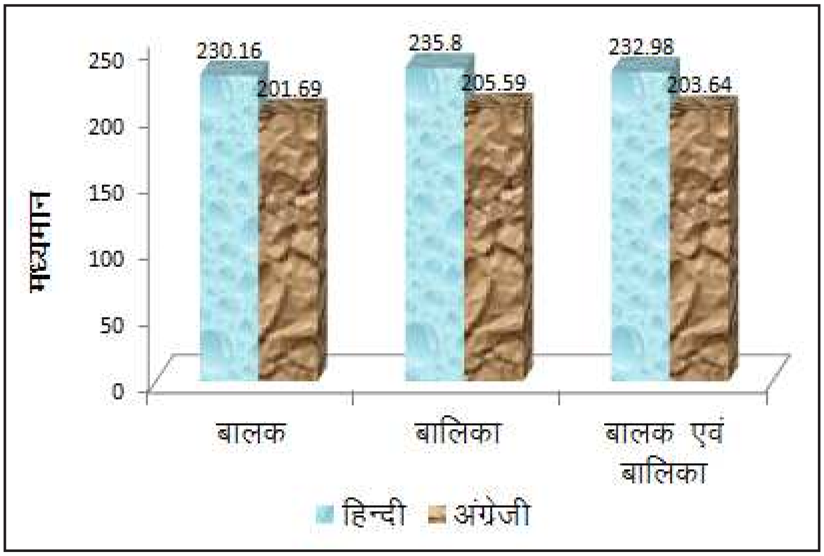

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

प्रभावशाली व्यक्तित्व के गुण एवं तकनीक 'व्यक्तित्व विकास के संदर्भ में'

कृष्णा शर्मा *

प्रस्तावना – आज से लगभग 2000 वर्ष पूर्व व्यक्तित्व के लिए पर्सनालिटी शब्द का उपयोग किया जा सका था। 'परसोनाब लैटिन भाषा का शब्द हैं जिसका अर्थ नकाब अथवा वेष–भूषा हैं। दूसरे शब्दों में 'परसोना' का अर्थ हैं– एज वन एपीयर टू अदर।

'व्यक्तित्व व्यक्ति के मनोदैहिक गुणों का वह गत्यात्मक सगंठन हैं जो व्यक्ति वातावरण के प्रति अपूर्व समायोजन को निर्धारित करता है।'

– जी. डब्लू. आलपोर्ट

'व्यक्तित्व की परिभाषा उस अति विशेषपूर्ण संगठन के रूप में की जा सकती हैं जिसमें व्यक्ति की संरचना,व्यवहार के ढंग रूचियाँ अभिवृतियाँ क्षमताएँ ,योग्यताएँ सम्मिलित है।' – एम. एन. मन

व्यक्तित्व का अर्थ

व्यक्तित्व की परिभाषा विभिन्न व्यक्तित्व मनोवैज्ञानिकों ने विभिन्न प्रकार से की है। व्यक्तित्व के अर्थ के सम्बन्ध में कुछ प्रमुख मनोवैज्ञानिकों के विचार निम्नलिखित हैं।

'व्यक्तित्व व्यक्ति के संरचना व्यवहार के तरीके रूचि अभिवृति क्षमता योग्यता तथा झुकाव का एक विशिष्ट संगठन हैं।' – मन

'व्यक्तित्व वातावरण के साथ लगातार समायोजन का परिणाम होता हैं।'

– बोरिंग

प्रभावशाली व्यक्तित्व के लिए निम्नलिखित गुण एवं तकनीकि अपनाई जा सकती है

जिम्मेदारी – जिम्मेदारी का मनुष्य के जीवन में बहुत महत्व हैं। इसे समझना एवं स्वीकारना चाहिए, जिम्मेदारी से मुहँ मोड़ना छोटेपन की निशानी होती है। अच्छे व्यक्तित्व हेतु अपनी जिम्मेदारी को निष्ठापूर्वक पूर्ण करना चाहिए।

सोच – सोच हमेशा सही व सकारात्मक रखना चाहिए। मनुष्य जो सोचता है, उसका उसके व्यक्तित्व पर गहरा प्रभाव पडता है। सबकी जीत में हमेशा अपनी जीत सुनिश्चित होती है एवम् सेवा भाव से जीत हासिल होती है। ये विचार रखना चाहिए।

सकारात्मक विचार – आलोचना व शिकायत न करे, पर सही आलोचना अवश्य करे। मद्द करने के लिए आलोचना अवष्य करे पर किसी को नीचा नहीं दिखाए। अपनी बात को सकारात्मक रूप से तथा प्रशंसा के साथ खत्म करना चाहिए।

मुस्कुराहट – मुस्कुराना एक कला है एवम् दूसरों को खुश रखना जीवन से जुड़ा एक महत्वपूर्ण तत्व है। इसीलिए सदा मुस्कुराए तथा दयालुता के भाव को ध्यान में रखना चाहिए। मुस्कुराते हुए चेहरे को सभी पंसद करते है। परंतु मुस्कान सदा असली होना चाहिए! दिखावटी नहीं।

व्यवहार – व्यवहार में हमेशा नम्रता का भाव होना चाहिए। दूसरों के व्यवहार का सही अर्थ लगाना चाहिए। अच्छे व्यवहार से अच्छे रिश्ते निर्मित होते है। व्यवहार का व्यक्तित्व पर गहरा प्रभाव पडता है।

अच्छा श्रोता – अच्छे श्रोता बने। दूसरो को बोलने के लिए उत्साहित करें सवाल पूछे यह आपकी दिलचस्पी को दिखाता है। बीच में नहीं बोलना चाहिए एवम् विषय नहीं बदलना चाहिए । सम्मान व समझ का भाव होना चाहिए बात को ध्यान से सुने तथा संदेश पर ध्यान दे न कि बोलने के तरीके पर।

विनम्रता – विनम्रता व्यवहार की दृष्टि से महत्वपूर्ण होती हैं। विनम्रता के बिना आत्मविश्वास अहंकार के समान होता हैं। यह महानता को दर्शाती हैं तथा बडप्पन की पहचान है। सही विनम्रता में आकर्षण होता है। लेकिन गलत में प्रतिकर्षण होता हैं

विश्वसनीयता – सही चरित्र हेतु विश्वसनीयता होनी चाहिए। विश्वास में बहुत ताकत होती है और किसी का विश्वास जीतने में बहुत समय लगता है।

तहजीब – तहजीब अदब या शिष्टाचार अच्छे व्यक्तित्व की निगरानी है। अच्छी तहजीब वाला या शिष्ट व्यवहारी बनना चाहिए। बोलचाल में तहजीब वाले शब्दों का प्रयोग करना चाहिए। दूसरों का मजाक न उड़ाए अच्छे दोस्त बनें। सहानुभूति दिखाए दुसरों के साथ वैसा व्यवहार करें जो कि स्वयं को पसंद हो।

उत्साह – उत्साह व सफलता साथ–साथ चलती है। उत्साह आत्मविश्वास को बढाता है। किसी से बात करने के तरीके से उसके उत्साह को महसूस किया जा सकता। जिन्दगी को उत्साह एवम् जिंदादिली से जीना चाहिए।

ईमानदारी – व्यक्तित्व के निर्माण में ईमानदारी की महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं। किसी कि प्रशंसा ईमानदारी व सच्चाई से करनी चाहिए। व्यवहारिकता में भी ईमानदारी का होना आवश्यक होता है। व्यक्ति का चरित्र उत्तम तभी होता है, जब वह ईमानदार हो।

तर्क – तर्क करने से तार्किक क्षमता विकसित होती है। परंतु तर्क को तकरार नहीं बनने देना चाहिए। तकरार या बहस बुरी होती है। बहस करके हासिल जीत भी हार है। तर्क व बहस में अंतर है, बहस से आग निकलती है व तर्क से आग बूझती है एवं तर्क में ज्ञान की मात्रा होती है।

वचनबद्धता – अपने द्धारा किए हुए वादो को पूर्ण करने की जबावदारी लेना चाहिए। वचनबद्धता एक ऐसा वादा होता है जो हर हाल में पूरा करना चाहिए। जिससे विश्वास एवं रिश्तों में दृढ़ता बढती है।

कृतज्ञता – कृतज्ञता का भाव एक अच्छे व्यक्तित्व की निशानी है। किसी के आकार को मानकर कृतज्ञता प्रकट करना चाहिए।

द्वेष – किसी से बैर ,शत्रुता या द्वेष नहीं रखना चाहिए मित्रवत व्यवहार रखना चाहिए। क्षमा करने की भवना रखना चाहिए। अच्छी बातों को याद रखकर बुरी बातों को भूल जाना चाहिए ।

* सहायक प्राध्यापक (गृहविज्ञान) शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

''तुम मुझे एक बार धोखा देते हो तो तुम पर लानत है
तुम मुझे दोबारा धोखा देते हो तो मुझ पर लानत है।''

समस्या समाधान तकनीक – समस्या समाधान के संबंद्ध में कुछ अधिक कहने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि समस्या का अर्थ क्या है, एण्ड्रीयाज ने समस्यात्मक स्थिति को पांच अवयवों के आधार पर समझाया है।

1. प्राणी के लिए लक्ष्य का होना
2. उद्दीपक संकेतों का प्राप्त होना
3. उद्दीपक संकेतों के प्रति अनुक्रियाओं
4. उद्दीपकों का अनु – क्रियाओं से अलग– अलग संबंधित होना।
5. गलत और सही अनुक्रियाओं की सूचना प्राप्त होना ।

जॉनसन के अनुसार – ' जब प्राणी लक्ष्य पहुँचने के लिए अभिप्रेरित होता है। परंतु लक्ष्य प्राप्ति के प्राथमिक प्रयास में वह असफल हो जाता हैं। तो इस अवस्था में उस प्राणी के लिए समस्या उत्पन्न हो जाती है।'

समस्या समाधान का अर्थ एवं विशेषताएँ – आइजेक और उनके साथियों के अनुसार – समस्या समाधान वह प्रक्रिया है। जिसमें प्राथमिक (ज्ञानात्मक) परिस्थितियों से प्रारंभ कर इच्छित लक्ष्य तक पहुँचना अपेक्षित है।

समस्या – जॉनसन ने समस्या समाधान से संबंधित छः समस्याओं का वर्णन किया है जो नि.लि. है–

1. व्यवहार लक्ष्य निर्देशित होता है। और व्यवहार में निरंतरता पाई जाती है।
2. व्यवहार अथवा क्रियाओं में निरंतरता उस समय समाप्त हो जाती है। जब लक्ष्य प्राप्त हो जाता है
3. समस्या समाधान में प्राणी भिन्न–भिन्न प्रकार से प्रयास अथवा अनुक्रियाएॅ करता है।
4. एक ही जाति के प्राणी एक ही समस्या का समाधान भिन्न–भिन्न प्रकार से करते है अर्थात् समस्या समाधान में वैयक्तिक भिन्नता पाई जाती है।
5. जब प्राणी किसी समस्या का समाधान प्रथम बार करता है तो समय अधिक लगता है। परंतु उसी समस्या का समाधान जब उसे दोबारा करना होता है तो समय कम लगता है।
6. समस्या समाधान चिंतन का एक विशिष्ट रूप है ।

प्रकृति :

1. समस्यात्मक स्थिति में जीव के सामने निश्चित रूप से एक अथवा अधिक लक्ष्य होते है।
2. समस्यात्मक स्थिति में जीव को विभिन्न प्रकार के संकेत या उद्दीपक प्राप्त होते है।
3. समस्यात्मक स्थिति में जीव को विभिन्न प्रकार की अनुक्रियाएॅ समाधन हेतु करता है।
4. समस्यात्मक स्थिति में जीव की विभिन्न प्रकार की अनुक्रियाएॅ विभिन्न प्रकार की उत्तेजनाओं से अनुबंधित होती है, यह अनुबन्धन गत अनुभवों के आधार पर स्थापित होता है।
5. समस्यात्मक स्थिति में जीव सही अनुक्रिया कर रहा है या गलत अनुक्रिया कर रहा है, इसका अनुभव जीव को हो जाता है।

लक्षण :

1. समस्यात्मक स्थिति में प्राणी का समस्त व्यवहार लक्ष्य की ओर उन्मुख होता है तथा उसके इस प्रकार के व्यवहार में निरंतरता होती है।
2. समस्यात्मक स्थिति में प्राणी अनेक प्रकार की अनुक्रियाएॅ करता है।
3. समस्यात्मक स्थिति में विभिन्न व्यक्तियों की अनुक्रियाएॅ भिन्न – भिन्न होती है।
4. समस्या समाधान में यदि प्राणी की सीधी हुई अनुक्रियाओं का उपयोग है तो समस्या समाधान में समय कम लगता है।
5. समस्या समाधान के प्रारंभिक प्रयासों में समय अधिक और बाद के प्रयासों में समय कम लगता है।
6. समस्यात्मक स्थिति के अनुभवों का केन्द्रीय नाड़ी संस्थान में प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व होता है।
7. समस्यात्मक स्थिति से संबंधित लक्ष्य प्राप्त होने पर प्राणी की समस्त अनुक्रियाएॅ समाप्त हो जाती है।

तकनीकी :

1. **अनुक्रिया पदानुक्रम –** समस्या समाधान की इस मेकेनिज्म का अर्थ है कि प्रयोज्य की अनेक अनुक्रियाएॅ एक उद्दीपक स्थिति से अनुबंधित होती है, अध्ययनों में यह देखा गया है कि उद्दीपक से संबंधित वे अनुक्रियाएॅ समस्या समाधन के समय शीघ्र उत्पन्न होती है, जिनका उद्दीपक स्थिति के साथ प्रबल साहचर्य रहा है। प्रयोज्य उद्दीपक के उपस्थित होने पर बहुधा समस्या समाधान के लिए उस अनुक्रिया को दुहराता है जिस अनुक्रिया ओर उद्दीपक के बीच साहचर्य अधिक प्रबल होता है।
2. **अप्रकट प्रयत्न और भूल –** समस्या समाधान संबंधी प्रयोग में देखा गया है कि मानव प्रयोज्य भी अप्रकट प्रयत्न और भूल अनुक्रियाएॅ बहुधा प्रतीकात्मक स्तर पर होती है प्रयोज्य कल्पना और चिन्तन के स्तर पर बहुत से उपाय सोचेगा और प्रत्येक उपाय की उपयोगिता की जॉच करेगा। उसे उपाय त्रुटिपूर्ण लगेगा उसे वह छोड़ देगा फिर चिंतन स्तर पर प्रयत्न करके अगला उपाय सोचेगा।
3. **मध्यस्थताकारी सामान्यीकरण –** व्यवहारवादियों ने समस्या समाधान की व्याख्या के लिए इस मेकेनिज्म का भी उपयोग किया है। यह एक प्रकार का प्रत्यक्षपरक प्रक्रम है यह देखा गया है कि भौतिक उद्दीपक यथापि एक–दूसरे से भिन्न होते है परंतु इनमें कुछ प्रकार की सामान्यता पाई जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, शर्मा एण्ड शर्मा ।
2. व्यक्तित्व का मनोविज्ञान, अरूण कुमार सिंग।

****

Consumers perception On Green Marketing

Dr. Shweta Mathur* Dr. Shiv Kumar Shriastava**

Abstract - The aim of the study is to know consumers' perception on green marketing. Green marketing is concerned with the protection of ecological environment. Green marketing encourages production of pure products by pure technology, preservation of environment and minimum use of natural resources. Green marketing affects positively the health of people as well as environment. The objective of the study is to know preferences of consumers and to know problems in green marketing. It also tries to know the scope of green marketing in India. Primary data is used in the form of questionnaire. The study shows that there is relationship between consumer preferences and green product buying behavior and consumers' knowledge about green products and their liking for it but the hypothesis that there is no relationship between green products and consumers' income is rejected.

The study suggests that the green products should be made easily available and at low cost to the consumers so that more and more people can purchase it, government should also make some policies which can boost such industries.

Key Words - Green marketing, consumer perception.

Introduction - Green marketing refers to the process of selling products or services based on their environmental benefits. Such a product or service may be environmentally friendly or produced or packaged in an environmentally friendly way. It incorporates a broad range of activities, including product modification, changes to the production process, as well as modifying advertising.

Green marketing is also termed as environmental marketing or ecological marketing. According to American Marketing Association, "Marketing of products that are presumed to be environmentally safe is called as Green Marketing."

Basically, Green Marketing concerns with three aspects-

1. Promotion of production and consummation of pure and quality products.
2. Fair and just dealing with customers and society.
3. Protection of ecological environment.

Review Of Literature - There are few studies which attempted to study consumer' perception towards green products -

1. Yogita Sharma, August 2011 in her study Changing Behavior with respect to Green Marketing- A case study of consumer durables and retailing suggests that consumer awareness must be created by corporate by transmitting the message among consumers about the benefits of the environmental friendly products and services.
2. Mayank Bhatia and Amit Jain, January 2013 in their study "Green Marketing: A study of consumer perception and preferences in India" found that consumers are highly aware of green products. The research suggests the need of designing marketing communication campaigns promoting green products. Result of regression analysis reveals that awareness about green marketing has positive significant impact on consumer persuasion to buy an prefer green products over conventional products.
3. Dr. Sachin S. Varnekar and Preeti Wadhwa in their study revealed that the green products have substantial awareness among urban Indian customers and they are willing to pay more on green products. They recommended some marketing strategies to meet changing mind of customers towards the green products.
4. Jacquelyn Ottoman (1998) suggests that from an organizational standpoint, all aspects of marketing including new product development and communications should be integrated with environment considerations. Environmental issues should not be compromised to satisfy primary customer needs.

Objectives Of The Study -

1. To know consumers' perception on Green marketing.
2. To know the preferences of Indian consumers about green products.
3. To know the problems in green marketing.
4. To know the scope of green marketing in India.

*Faculty (Commerce) V.R.G. Girls P. G. College, Morar, Gwalior (M.P.) INDIA
**Professor & H.O.D. (Commerce) V.R.G. Girls P. G. College, Morar, Gwalior (M.P.) INDIA

Hypothesis -

1. There is relationship between consumer preferences and green products buying behavior.
2. There is relationship between consumers' knowledge about green products and their liking of green products.
3. There is no relationship between green products and consumers' income.

Research Methodology - The study focuses on extensive study of primary data collected through Questionnaire survey method to collect information from the consumers. Information collected through consumer survey is utilized for further analysis and verification of hypothesis. Factor analysis is used for analyzing correlations between variables, which reduces their number into fewer factors.

Analysis & Discussion -

Descriptive Analysis

Table 1

	Mean	Std. Deviation	Analysis N
LIKING	1.1200	.32826	50
AVAILABILITY	1.4800	.50467	50
ECONOMICAL	1.6800	.47121	50
QUALITY	1.2400	.43142	50
PACKAGING	1.4400	.50143	50
RECYCLABLE	1.3200	.47121	50
PREFERENCE	1.4000	.49487	50
PRICE	1.2000	.40406	50

Correlation Matrix[a] Table 2 - (See in the next page)

KMO and Bartlett's Test Table 3 (See in the next page)

Communalities

Table 4

	Initial	Extraction
KNOWLEDGE	1.000	.928
LIKING	1.000	.921
AVAILABILITY	1.000	.851
ECONOMICAL	1.000	.708
QUALITY	1.000	.761
PACKAGING	1.000	.727
RECYCLABLE	1.000	.665
PREFERENCE	1.000	.719
PRICE	1.000	.691

Extraction Method - Principal Component Analysis.

Total Variance Explained - Table 5 (See in the next page)

Figure 1 (See in the next page)

Component Matrix[a] - Table 6

	Component 1	2	3	4
KNOWLEDGE	.870	.206	-.162	-.320
LIKING	.818	.052	.092	-.491
AVAILABILITY-	.224	.695	.544	.150
ECONOMICAL	-.212	.040	.762	-.284
QUALITY	.507	-.075	-.159	.688
PACKAGING	.351	-.442	.520	.371
RECYCLABLE	.500	.545	.231	.255
PREFERENCE	.639	-.482	.278	.032
PRICE	.224	.766	-.201	.118

Extraction Method - Principal Component Analysis.

a. 4 components extracted.

Table1 of descriptive analysis shows that the most important variable that influence customer to buy green products is 'economical' means respondents believe that while buying green products they see whether it is economical or not, and the variable that least influence consumers is 'liking'. Variable 'economical' has highest mean value i.e. 1.68 whereas 'liking' has least mean value of 1.12

Table 2 of the study shows correlation matrix. A correlation matrix is a rectangular array of numbers which gives the correlation coefficients between a single variable and every other variable. The correlation coefficients between a variable and itself is always 1, hence the principal diagonal are the same. With respect to correlation matrix if any pair of variables has a value less than 0.5 will not be considered. According to our table, liking and knowledge are highly correlated, having value .846, which is much more than 0.5

The next item from the output is a table of communalities which shows how much of the variance in the variables has been accounted for by the extracted factors. The communality value which should be more than 0.5 to be considered for further analysis, else these variables are to be removed from further steps factor analysis. Here we can see in table 4 that 90% of the variance in 'knowledge of the product' is accounted for, while 66.5% of the variance in 'recyclability of the product' is accounted for.

In table 5, we can see that in extracted sums of squared loadings, the first factor accounts for 28.996% of variance, the second 20.503% of variance, the third for 15.306% of variance and the fourth for 12.636% of variance. All the remaining factors are not significant as they are less than 1.

The scree plot is a graph of the eigenvalues against all the factors. The graph is useful for determining how many factors to retain. The point of interest is where the curve starts to flatten. It can be seen in the figure 1, that the curve begin to flatten from factor 5, also it can be seen that factor 5 onwards have an eigenvalue of less than 1, so, only four factors have been retained.

Table 6 shows the extracted values of each item under four variables out of nine variables. The higher the absolute value of the loadings, the more the factor contributes to the variable. Here, we will neglect the loadings which are less than 0.5

KMO & Bartlett's Test: This test measures the strength of relationship among the variables. KMO measures the sampling adequacy which should be close to 0.5 for a satisfactory factor analysis to proceed. Looking at table 3, it can be seen that KMO measure is .450, which is slightly low but close to 0.5 but this may be due to volatile and unstable nature of variables and therefore can be barely accepted. Bartlett's test is another indication of the strength of the relationship among variables. However the Bartlett's test is highly significant. Thus, the reliability of factors

increased.

Results -

H1: There is relationship between consumer preferences and green products buying behavior.

The study shows that there is positive relationship between consumers' buying behavior of green products and their preferences. As shown in table 4, all the nine variables are included, as all are more than 0.5, so, all factors are extracted.

Hence, hypothesis is proved as it is.

H2: There is relationship between consumer's knowledge about green products and their liking of green products.

As it is clearly shown in table 2 of correlation matrix, that the two variables 'knowledge about green products' and 'liking of green products' are highly correlated with the value of .846, so, it can be said that there is relationship between both the variables.

Hence, the hypothesis is proved as it is.

H3: There is no relationship between green products and consumer income.

The study shows that the mean of variable 'economical' is 1.68, which is maximum among all variables, which shows relationship between green products and consumers' income.

Hence, the hypothesis is rejected.

Suggestions - Green products are the products which are environment friendly. Although there is vast scope of such products. The survey conducted during the study shows that respondents have knowledge about these products and they also like these products, but according to respondents green products are not easily available in the market and also they find them comparatively costlier, although the quality of the products and their packaging is satisfactory. Most of the respondents believe that green products are made up of recycled products.

Some suggestions to make consumers perception towards green marketing more positive are:-

1. Green products are not easily available in the market, so, efforts must be made to make them easily available in the market so that consumers can use them easily which will benefit the environment.
2. Green products are comparatively costlier than non-green products due to which consumers find it difficult to buy them. So, they should be provided at lesser cost which will fit in everyone's pocket.
3. Packaging of the green products should be made more attractive in order to attract more and more buyers.
4. Government should also help those industries economically which are involved in production of green products in order to boost production of these products.

Conclusion - It is observed from the study that consumers' perspective towards green products is positive. Consumers are aware of green products and they are willing to use green products in order to save environment for future. Although green products are not easily available in Indian markets but seeing consumers' positive outlook it is visible that very soon these products will capture Indian markets, the only thing which should be considered is its price. Green products should be provided at reasonable rates which every pocket can afford.

References :-

1. Aseem Prakash (2002); Green Marketing, Public policy and managerial strategies.
   http://www.greeneconomics.net/Greenmarketing.pdf
2. Babita Saini (2010) ;Green Marketing and its impact on consumer buying behavior; International Journal of Engineering Science Invention, Volume-2, Issue 12. PP 61-64.
3. Mohammad Azam, Green Marketing: "Eco- friendly Approach", International Journal of innovative research and development, volume 3, issue 3, February 2014, pp: 78-80.
4. Rashad Yazdanifard (2011); The Impact of Green Marketing on customer satisfaction and environment safety.
   www.researchgate.net>publication
5. Dr. Shruti p. Maheshwari; Awareness of green marketing and its influence on buying behavior of consumers: Special reference to Madhya Pradesh, India.
   https://apps.aima.in
6. Dr. V. Ranganathan & S. Ramya; A study of consumers' perception towards green products with reference to Coimbatore city; Imperial Journal of Interdisciplinary Research, Vol.2, Issue-2, 2016, ISSN: 245-1362.
7. https://globaljournals.org>2-greenmarketing

Correlation Matrix[a] -
Table 2

	KNOWLEDGE	LIKING	AVAILABILITY	ECONOMICAL	QUALITY	PACKAGING	RECYCLABLE	PREFERENCE	PRICE
KNOWLEDGE	1.000	.846	-.201	-.168	.266	.053	.402	.312	.327
LIKING	.846	1.000	-.108	-.011	.081	.169	.274	.452	.123
AVAILABILITY	-.201	-.108	1.000	.316	-.165	-.045	.371	-.294	.320
ECONOMICAL	-.168	-.011	.316	1.000	-.217	.090	-.081	.035	-.086
QUALITY	.266	.081	-.165	-.217	1.000	.257	.217	.306	.187
PACKAGING	.053	.169	-.045	.090	.257	1.000	.083	.428	-.242
RECYCLABLE	.402	.274	.371	-.081	.217	.083	1.000	.140	.300
PREFERENCE	.312	.452	-.294	.035	.306	.428	.140	1.000	-.204
PRICE	.327	.123	.320	-.086	.187	-.242	.300	-.204	1.000

KMO and Bartlett's Test - Table 3

Kaiser-Meyer-Olkin Measure of Sampling Adequacy.		450
Bartlett's Test of Sphericity	Approx. Chi-Square	167.108
	df	36
	Sig.	.000

Total Variance Explained - Table 5

Component	Initial Eigenvalues			Extraction Sums of Squared Loadings		
	Total	% of Variance	Cumulative %	Total	% of Variance	Cumulative %
1	2.610	28.996	28.996	2.610	28.996	28.996
2	1.845	20.503	49.500	1.845	20.503	49.500
3	1.378	15.306	64.806	1.378	15.306	64.806
4	1.137	12.636	77.442	1.137	12.636	77.442
5	.715	7.942	85.385			
6	.534	5.929	91.314			
7	.405	4.499	95.813			
8	.308	3.422	99.234			
9	.069	.766	100.000			

Extraction Method - Principal Component Analysis.

Figure 1

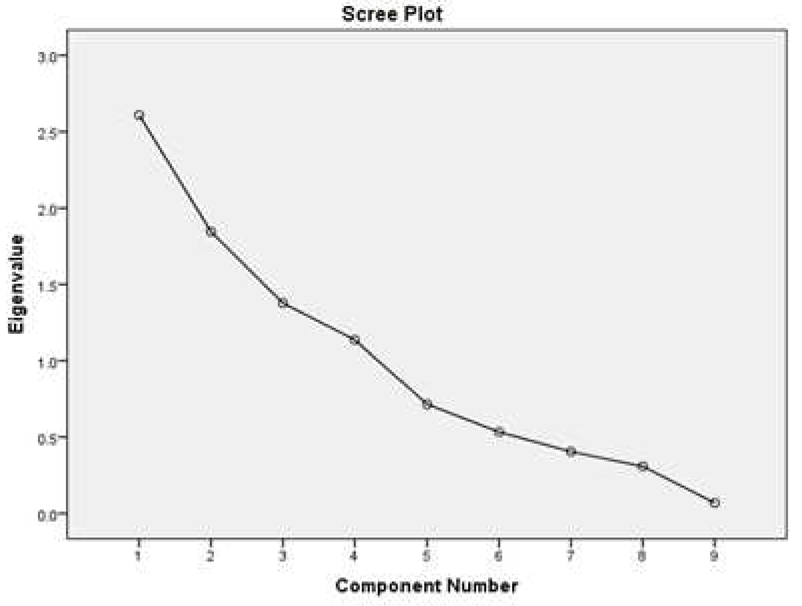

****

Cloud Accounting - A New Concept, Awreness & Challanges

Dr. Rajendra Singh Waghela* Pawan Pushad**

Abstract - The paper widely discusses not only threats and barriers, which are associated with the new model of cloud computing & accounting. It covers the benefits and prospects for the development of enterprises and all kinds of services inherent in using the cloud computing model. As it is a new concept so in order to know about Cloud Accounting & its challenges a survey conducted among Charted Accountant, Organizations and Future Accountants operating in Indore on the knowledge of the concept of cloud computing, It has been noted that the use of cloud computing, also in the area of accounting reduces overall IT management costs, and allows large-scale consolidation and optimization of the use of hardware and software resources. It can level the competitive field, by making large-scale computational resources available to small businesses and other organizations, which would not be able to afford adequate infrastructure otherwise.
Key Words - Cloud accounting, Cloud.

Introduction - "Cloud accounting empowers you to take your business farther than you could ever dream."

Accounting on the cloud is a relatively new phenomenon in India. That said, there are plenty of accountants and Small Business Owners who are reaping the benefits of having taken the first headlong plunge. While we do concede that much needs to be done before cloud accounting fits well into the relatively complex Indian business scenario, we are sure that the future lies here.

In the days to come, accounting on the cloud may well be a robust alternative to traditional accounting systems. It has the potential to put a smile on the face of its sternest critics. Cloud computing is a new model of computation that can bring significant benefits to consumers, businesses and government, creating new threats and challenges. "In the cloud" data processing came to be called a model of the IT systems in which the server installation location does not matter. "Cloud computing" model can be simply defined as the storage, processing and use of data to be accessed over the Internet, on a different location computers. This means that users can request to have almost unlimited computing power that do not require significant capital investment in order to meet their needs and that they can access their data from any location where they are connected to the Internet This is the Internet which was one of the major factors influencing the fact that globalization of economic processes leading to the integration but also interdependence of countries, societies, economies, characterized by, inter alia, the flow of goods, capital and labor on a global scale is an irreversible process. Also, the internationalization of economic processes and internationalization of enterprises are already a fact. Globalization covers all areas of economic life, but the most advanced is in the area of financial markets. Along with widening of globalization and internationalization the range of users of financial information and their information needs. Taking this into account, knowledge of accounting systems existing in different countries, in particular the differences and similarities between these systems and the directions of their development gains significance. Globalization of the economy and the development of civilization undoubtedly contributed to the processes of harmonization and standardization of accounting.

The advantages and tangible benefits from the use of international standards, meant that they enjoy more and more recognition around the world, which is reflected in their direct implementation in national accounting, in such countries as China, Russia, Ukraine and African countries, or the use of selected standards under the modified national regulations, such as in Poland, the Czech Republic or so-called old EU countries. Convergence of national solutions and IFRS took place in South Africa, Japan, Israel, Malaysia, Latin America, especially in Mexico and Brazil. This progressive internationalization of business, integration within the European Union and the creation of international financial organizations forced somehow need to create a uniform system of accounting standards, which would be based on clear and explicit rules that ensured comparability of used solutions and comparability of financial statements prepared in accordance with them at the national and

*Professor (Commerce) Shri Atal Bhihari Vajpayee Govt. Arts And Commerce College, Indore (M.P.) INDIA
**Research Scholar, Devi Ahilya Viushwavidyalay, Indore (M.P.) INDIA

transnational level. Accounting "in the cloud" is a relatively new phenomenon. Accounting is a field rather conservative and one of the last subjected to modern IT and technological. With the introduction of new solutions in recent years, it turned out that the concept of building own data center is not always effective. Moreover, in the era of globalization and performance of transnational availability of current financial information from anywhere in the world and at any time becomes a necessity. Processing of data on costs, revenues, sales, corporate finance in the cloud enables access to such data limited only by access privileges independently of place and time.

What is Cloud based Accounting? - Cloud computing makes you run your company's entire IT operations with an internet connection and a browser. The concept of cloud computing helps you run your company's IT applications on the internet without having to actually invest in them by buying, installing and running these expensive servers. The operating systems, applications and other programs are hosted on the cloud and remain out of sight and the cloud is managed by the cloud vendor for you.

So similarly, the **cloud based accounting software** is the software that is hosted on these remote servers and runs on them, instead of being installed and run from your Desktop. So, to run your day to day accounting programs, you access your web browser and the internet. The main advantage of using cloud based accounting solutions is that your business data stays secure on the servers, and you can be able to access it anytime from anywhere, if you are connected to the internet. So, in a way cloud accounting software frees the user to from having to install and maintain complicated applications and programs on their personal desktop and several other computers in the company. The hard drive of your desktop is not the central hub anymore; rather business financials are accessed from any device by connecting to the internet. Accounting applications on cloud is also called "**Online Accounting or Web Accounting**". Cloud based accounting services are best suited for small business who cannot afford huge infrastructure and expensive IT applications.

Benefits of moving to the cloud - Cloud based accounting services provide huge benefits to the business and end users too -

- There is no initial expenditure on the IT setup or infrastructure, but a monthly fee is paid to the Cloud Vendor who maintains your applications.
- You have access to the data from **anywhere through any device, which provides for enhanced business agility and great convenience.**
- There are no cumbersome upgrades that have to be done to the software being used, as it is always done by the Vendor who is taking care of your hosting and maintenance and you always access the latest and upgraded version of the software.
- The Cloud based accounting services also ensure you unlimited data storage on the cloud as the data is not stored on hard disks or internal networks.
- The security levels that are provided by the Cloud based accounting service providers is any day higher and more up to date compared to the security features provided on the desktop. Data is stored in an encrypted format and most secure on the cloud. It is also ensured that there is no loss of data if there is any hardware or software malfunctioning.

Literature Review -

- **Kepes (2011)** states that in order to truly understand how cloud computing can be of value to an organization, it is first important to understand what it really means, and its different components.
- **Mario (2009)** pointed out that there are at least twenty two (22) different cloud definitions in common use.
- **Plummer, Bittman, Austin, Cearley and Smith, (2008)** define cloud computing as "a style of computing where massively scalable IT-enabled capabilities are delivered as a service to external customers using internet technologies."
- **Forester (n.d)** says cloud computing is a pool of abstracted, highly scalable, and managed computer infrastructure capable of hosting end-customer applications and billed by consumption. **NIST (2011)** defines cloud computing as ‾a model for enabling convenient, on-demand network access to a shared pool of configurable computing resources (e.g., networks, servers, storage, applications, and services) that can be rapidly provisioned and released with minimal management effort or service provider interaction.
- **According to Beyourfuture (2011),** there are five (5) essential characteristics of cloud computing namely, On-Demand self-service, Resource Pooling, Rapid elasticity/Scalability, Measured service and Broad Network Access. It could be concluded from the above definitions that cloud computing is basically the delivery of computing resources as a service rather than a product over the internet. The end-user does not require knowledge of the physical location and configuration of the system that delivers the services. The shared resources can then be accessed through computers and other electronic devices over the internet.
- **Howlett (2013)** states that accounting on the cloud has often been characterized as something that will never happen or at least no time soon, however, if you look at the SME market, it is transforming the crusty world of professional accounting. According to Klynveld Peat Marwick **Goerdeler (KPMG) Research (2012),** many are willing and ready to move finance and accounting systems and applications to the cloud. When asked about the practicality of moving these functions to the cloud, the vast majority of respondents said it was very practical or somewhat practical , the report indicated.
- **CCH Research Report (2013)** asserts that

accountants who do not make the move to the cloud could be putting their SME client relationships, and their own business, at risk. The research indicates around two thirds (2/3) of the SMEs surveyed said they would consider replacing some of the services their accountant currently performs with cloud-based software. Half said they would consider looking for a new accountant if their existing accountant did not embrace a cloud solution.

- **According to Nixon (2013)** "Accountants who do not embrace the benefits of cloud technology for SME's should see the new technology as a threat to their core business. The facts are that cloud based technology can and does reduce the time needed on compliance services. This drives competition and price pressure for compliance services. However, with real time data the Accountant can be more relevant by offering planning, monitoring and other advisory services. It's a win-win if the Accountant uses the data to add value. If they do not then they will lose business".
- **According to Strauss (n.d),** Cloud accounting refers to transactions performed over the Internet. The practice does not require you to install software in your computer or own a server. A cloud computing company that sells accounting services provides remote servers.

Methodology - For the purpose of this study, both quantitative and qualitative research methods were employed. Data was obtained by actively engaging in a field research, and from existing literature and supporting documents from the internet, books and journals from around the world. Two major research instruments were employed for the study -questionnaires and interviews. Descriptive statistics was then employed to do an analysis of the data. Also, direct quotes and written discussion of findings were used particularly for the data collected through interviews. It is important to note that in analyzing and interpreting the responses to the research questions, the researcher also made use of his stock of knowledge, information from the literature review and logical reasoning to draw conclusions.

The research considered Accountants in Indore as the target population. Accountants in this case refer to both practicing accountants and future accountants'. Despite the advantages of the stratified random sampling method over other probability sampling methods, especially for this research, it could not satisfy all the needs of the research objectives. In effect, the simple random sampling method was used to select the sample for the category of future accountants.

The total respondents therefore were Fifty (50) for those categories.

S.No.	Category	Sample Size
1	Chartered Accountant	20
2	Organization / Firms	20
3	Future Accountants	10
	Total	50

Results and Discussion

- To examine the cloud computing in accounting in Indore a survey among Chartered Accountant, Organization / Firms and Future Accountants conducted. The questionnaire was filled through personal visit. 50 responses were received, which were given mainly by Chartered Accountant, Organization / Firms and Future Accountants. Respondents most often pointed to the use of the Internet in business in the form of e-mail and having its own website.**(Graph See in the last page)**
- Most of respondents are aware about Cloud Computing, but they are not used too of it. 99% of Respondents are using internet in their day to day activity, and also in for their business.
- Perhaps because of the difficult economic situation at the macro level and because of the uncertainty, Respondents do not plan to change or purchase a new computer system in the next two years (60%). Only 70% of respondents expressed an interest in the subject. The remaining 30% of respondents were not decisive. In addition, when it comes to planning implementation in the Cloud Computing model 35% of the respondents answered that they do not plan any such actions. Most Respondents interested in Cloud Computing model expects that it could be used in the area of finance and accounting. It is significant that the question of what might constitute a barrier to the implementation of Cloud Computing more than half of the entrepreneurs indicated a lack of knowledge of issues related to this model. In the second place, they pointed concern for the safety of the stored data
- Among the benefits of using Cloud Computing primarily saving time, space and money associated with the construction, organization and maintaining their own server, storage devices, power and air conditioning, as well as the purchase of software licenses were indicated. 31% of respondents pointed at benefits of cloud computing in their availability and tie with the comfort of mobility. Resources that are leased by client are available almost anywhere, there is a possibility to perform the tasks by employees who are outside the company at the time.

Conclusions - Today's buyers expect software solutions that work with the modern workforce and mobile workers. Cloud solutions meet this requirement. CFOs often decide to adopt financial and accounting applications in the cloud. Financial and accounting software in the cloud may in future completely replace the use of software at the headquarters. The benefits of cloud computing are too large to ignore. First, facilitation of geographical expansion, the applicability of mobile solutions and ease of integration are the basic benefits referred to. The possibility to constantly update products, which are available in the cloud.

In terms of policy instruments, the main problems and risks of cloud computing can be divided into three basic categories. First of all, the legal framework that must cover

the solution is the issue. The main problem is the large number of rules, often contradictory and in different ways, dependent on the country, which protect the interests of customers in terms of compliance and accountability; enforcement and pursuing claims. It is also important that other model contracts (terms and conditions) associated with Cloud computing service (Service Level Agreements; End User Agreements; privacy terms and conditions; clarity and transparency) and contracts with end-users ensure transfer of interoperability (vendor lock-in).

Small business does not need expensive software to lead the general ledger and perform basic accounting tasks. Simple accounting applications in the cloud are created to help small business owners to organize and manage their IT operations. Since this is an online accounting service, one can access business data anywhere on a mobile phone or a desktop PC and his data is safe because there are backups. Anxiety and concerns rises in terms of possible access of third parties to data of entrepreneurs (owners of servers and personnel operating them).

One of the uses of Cloud Computing in accounting for small and medium-sized enterprises are emerging recently “in the clouds” accounting offices, which are modern accounting solutions available anywhere. These are accounting offices, which do not need to be personally visited. It does not matter where physically clients and offices operate, and on what basis companies run accounting. Although the appropriate action to promote and encourage the further development of cloud computing.

References :-

1. A Complete History of cloud computing. (2013). Retrieved April 4, 2013, from Salesforce.com: http://www.salesforce.com/uk/socialsuccess/cloud-computing/thecomplete-history-of cloud-computing.jsp
2. Accounting in the cloud: How cloud computing can transform businesses 2013
3. Cloud accounting is quickly expanding in India https://www.quora.com/What-is-the-Future-of-Cloud-Based-accounting-software-in-India
4. Accounting in the Cloud Computing https://www.tojsat.net/journals/tojsat/articles/v05i04/v05i04-01.pdf
5. Cloud computing and Chartered Accountants http://www.caclubindia.com/articles/cloud-computing-and-chartered-accountants -16282.asp

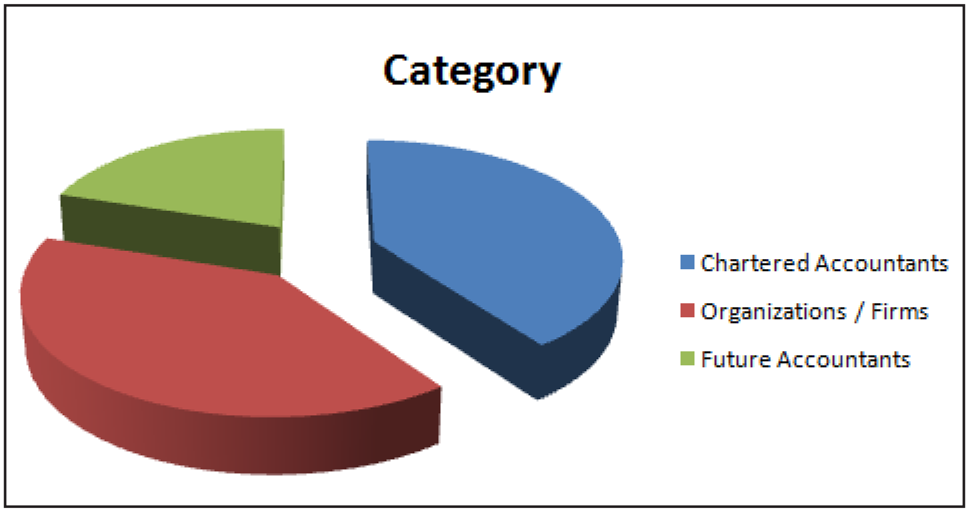

****

Human Resource Management Strategies In Organisational Redesign

Dr. Vinita Tak *

Abstract - The present study has been undertaken to identify the emerging market economics structural adjustment was a necessity to be integrated with the global economy structural adjustment like liberalization throw up opportunities and hence competition during liberalization, emerging competitive and take on both domestic and foreign rivals in the face of uncertainty and turbulence. Uncertainty, turbulence and competition take their toll on profitability and market share. The main objective of the study was to understand the role of HRM strategies to understand how the HRM components interact with redesign. Process in response to changes in strategic initiative. The finding looked into the understanding of specific HRM issues in the Indian context. It contributes to theory development in HRM management as a study to mechanisms and throw light on ways to professionalize HRM functions. The findings bridges the gap between existing theory and practice and incorporates learning from practice into theory.

Keyword - Human Resource Management, Organization theory, Redesign.

Introduction - India was a emerging country which has been operating under protection, regulation and license regime. Within this framework of protection and regulation as organization theorists (Khandwalls, 2001a) would point out that protection and monopoly breed slack in organizations. They get liberal in spending for factors of production, and avoid looking for efficiency building for competitive capabilities. Strategic capabilities were not competitive positioning and competitive strategies (Prahlad and Hamel, 1990). Strategic capabilities start with what framework of mechanisms they practice and efficiency arises due to how they conduct themselves within the framework and practice of such mechanisms.

Result - The study reveals that the post-liberalization period throws up important implications for existing models in organizational theory and strategy literature. Strategic initiative do not ensure as the key determinant to performance. In this study the strategic initiatives had a negligible correlation with performance. Thus gives the basic choice of strategic initiatives was right, alignment of HRM and redesign mechanisms, the pillars of the implementation of the strategic initiatives, were the determinants of performance.

The study may call the strategic capabilities of an organization. Strategic capabilities was the functioning qualities of the organization that has a superior impact on performance. Khandwalla (1976) termed the redesign mechanisms as the "infrastructure" of an organization. When the "infrastructure" was strong and sound and was used effectively, it can produce sustainable competitive advantage which was difficult to replicate. Competitive strategies, by themselves, tend to fail if not grounded in a strong infrastructure. As countries liberalize and organizations become more globalized, integrative mechanisms were necessity to bind together components of the organization which might be torn apart otherwise " in a welter of conflicts and lack of ordination."

Human resource strategies come out to be the next key differentiatortors of performance. "People" focus has been seen to be the source of sustainable competitive advantage. (Ulrich, 1998).

In this study result reveals that the capabilities to build strategic competence and effectiveness seem to be people management. The professionalization of HRM function plays an active part in this process. Strategic capabilities were not business strategies but mechanisms of uncertainly reduction, coupled with human resource systems that were proactive and people focused. When these mechanisms the so-called "infrastructure", was aligned and was in place, organizations were likely to make successful strategic choices.

In this study, It was found little support for the linkage of turbulent environment, strategic initiatives and the linkage between turbulent environment and change in performance, and strategic initiatives and organizational performance.

Thus summarizing, we posit that, for strategic changes to be successful, they had to be aligned with effective redesign mechanisms and HRM initiative for superior performance. To implement and cement these changes. Professional HRM practices had to be emplaced within the infrastructure of redesign mechanisms to ensure collaboration and emphasis on corporate vision and core

*Asst. Professor (Commerce) Shri Mahalaxmi Girls College, Pratap Nagar, Jodhpur (Raj.) INDIA

values, inclusion of challenging job opportunities, retraining for skill and competency building, motivating through open, fair performance appraisal and reward system, redeployment with job rotation and change in the overall mindset towards a flexible organization that was ready to cope with change. Continuous communication across all levels about changes that were going to be introduced, state-to-the-art management information and control mechanism system together with helpful and respected HRM personnel were the key enhancing performance.

Comparison of study with existing organization theory literature - Contingency theory: contingency theory gained popularity with Thompson (1967) and Lawrence and Lorsch (1967). It was grounded in a deterministic orientation of "if-then" relationship by which organizational behavior was seen to be shaped by contextual forces that act as constraints on the organization. Contingency theory links contextual variable with strategic and systemic variables. The context can be two fold – external context, i.e., environment and internal context, consisting of organizational variables that were constraints in the short term, such as strategy, size, technology and organization culture. Child and Kieser ((1981) critiqued contingency theory by stating that there was little evidence to suggest that matching organizational designs to prevailing contingencies contributes to performance.

This hypothesizes, as per contingency theory, that with the changes in environment, there was a likely to be change in the business strategy of the organization the finding was that link of strategy with environment was quite weak. Strategic initiatives in response to the environment require organizations to redesign themselves vis-à-vis uncertainty reduction, differentiation and integration mechanism which, when reinforced by professionalization of HRM functions, have a positive effect on performance. The links between strategic initiatives and redesign as well as HRM variable are also weak. The study establishes that redesign mechanism, especially integration mechanisms, play a key role in enhancing performance, the evidence for the alignment and reinforcement of redesign process via HRM in enhancing performance is also weak. Thus, there was very weak support for contingency theory in the present.

Strategic choice theory - Strategic choice theory was grounded in the assumption that there was choice in strategic managerial decisions given the organization's contextual conditions (Child, 1972). Redesign mechanism in general and particularly integration mechanisms emerge as the "strategic choices" for improved performance. The findings throws up unexpected strategic choices that require a modification of the conventional strategic choice paradigm.

Population Ecology Theory - Population ecology perspective (Hannan and Freeman, 1977) assumes that organization were relatively inertial and tend to die when the operating environment changes. It highlights the process of natural selection whereby environment selects the organization for survival and growth according to how good a fit was there between activities, structures and environmental characteristics (Child and Kieser, 1981), Organizations that fit into niches and succeed were "selected" for survival and those that cannot, get weeded out, Here the role of the manager was a passive or inactive one and the organization is totally at the mercy of environmental forces. The model does not fit this perspective as investigator observe that with liberalization, though there has been intense uncertainty and hyper-completion, organization has resorted to redesign mechanisms and human resource management and had survived, Indeed, those that synergized these mechanisms had performed well.

Institutional Theory - Institutional theory tries to understand the concept behind similarity or homogeneity between organizations in a domain, rather than trying to understand the dissimilarity and heterogeneity as in other theories. Institutional theory is simplistic in its outlook and it propounds that organizations would follow the same redesign process of a successful role model without looking into the mpatabilites of its redesign mechanism with one another the Findings does not fair in this category, as organization differed a eat deal in the strategic redesign, and HRM response they had made liberalization and hyper-competition.

Implications For Research - The findings was of a system of mechanisms, and not bivariate linkages, for example structure- strategy, strategy-performance It was observed in this study that there were high positive correlations of design variables with HRM variables. This gives finding direction of research. It was hypothesized that management practice relating to uncertainly avoidance, differentiation, integration mechanism was very difficult replicate. This could be one of the innovative ways for sustainable competitive advantage in the future. Redesign mechanisms came out to be the key factor for relatively high performance. Interaction of professionalization of HRM variables and redesign mechanisms came out to be another important factor for enhancing performance through a strategic initiative. Professionalization of performance management system emplaced within HRM systems came out to be a key focus for Indian corporate in the post- liberalization era. The study contributes the insight of the role of HRM during redesign process and generally during any change process. It give the limited documentation of HRM practices. The finding provided an insight of what can be the role of professional HRM that an organization should institutionalize and also provided an understanding of specific HRM issues in the Indian context. The finding looked into the understanding of specific HRM issue in the Indian context. It contributes to theory development in HRM management as a study of mechanisms and throw light on ways to professionalize HRM functions. The finding bridges the gap between existing theory and practice and incorporates learning from practice into theory.

Implications For Managers - The findings leads to relevance to all line managers, HRM executives, HRM consultants and top management of organizations trying to mange change in the global workplace. Executives and practitioners of organizations that were undergoing merger and acquisitions, changes in business focus or focusing on new products and new markets can draw implications about the important role of professionalized HRM functions and redesign mechanisms.

The findings provides an understanding of various HRM issues faced by medium and large organizations in today's competitive environment in the regime of an open market economy. The findings has implications for executives and practitioners trying to manage transactions for executives and practitioners trying to manage transaction for organization in a liberalizing and globalizing economy in which organizations need to re-look, redesign and prepare themselves for change.

Conclusion - Overall the finding leads to the conclusion that the study was the "tip of the iceberg". There were issues regarding the professionalization of the role of HRM in today's organizations, the role of HRM in the context of redesign, and how organizations manage "people", which were the key differentiators for competitive advantage. Some important issues were internal and external communications about the professional role of HRM, redesign, objectives of redesign and communications within the issue then becomes the role to stakeholders in the implementation process. Very few studies were there in this area and practically none with empirical evidence. The exploratory finding is one of those few studies that attempts to address the issue of professionalization in the role of HRM and HRM's role in the redesign process. However, investigator feels that the research has thrown light on a few key issues and has provided some result which should be helpful to practioners. The investigator was just "the tip of the iceberg".

We have "miles to go………..".

References :-

1. Arthur Thomson, AJ Strickalard III. Strategic management, Tata McGraw Hill, 2001.
2. Bhattacharya, S.K. Achieving Managerial Excellence. New Delhi: Macmillan 1989.
3. Cameron, K.S.(1994) "Strategies for successful organization downsizing"; Human Resource Management,33,189-212.
4. Duccan Robert B., What is the right organization structure? Organizational Dynamics, Winter 1979.
5. Ghosh,S. and Rastogoi, A.B. Performance appraisal though Computers. Indian Management,1982.
6. Khandwalla, P.(1977). The Design of organizations. Hartcourt Brace Jovanovich, Inc.
7. Miles R.E. and C.C. Snow (1984). "Designing Strategic Human Resource System." Organizational Dynamics, 36-52
8. Newman, D. , Organizational Design: Edward Arnold 1973.

****

Forensic Audit: Need Of The Hour For Fraud Investigations And Litigation Support

Dr. Jyoti Chawla* Prof. Shuchi Gupta**

Abstract - Financial frauds are causing loss of enormous money to General public and these are quite common in corporate sectors. It adversely affects the trust in mechanism of trade, finance, and investment destabilizing the commercial institutions, affecting national progress and putting strain on national resources. Some of the most common financial frauds prevailing in India are Bank Frauds involving NPAs, Import / Export Frauds, Public sector frauds, Tax frauds, Money laundering fraud, Intellectual Property Crime/Theft, Insurance Frauds, Non-Banking Finance Companies, Fake Currency, Fake stamps scam, Computer & internet frauds. Fraudsters use companies as vehicle for committing fraud to cheat banks, financial institutions, and general public.

Due to the growing complexities of business environment and the growing number of business related investigations, investigation of financial and business related issues of fraud cases increasingly ask for the assistance of the Forensic auditing professionals who are the need of the hour today. The purpose of this paper is to identify the meaning and need of forensic auditing. The paper holds importance as there is very little awareness of the topic in Indian Context and this research will lead to awareness regarding the importance of forensic audit.

Key Words - Forensic audit, Fraudulent book keeping, investigation audit, litigation support.

Introduction - The role of a forensic audit was recognized and took more proactive and skeptical approach since 1824. Forensic Audit was coined in 1940 by Maurice Paulobet. However, the real need came in the 20th century in 2001-2002 with huge financial frauds coming to light, like Enron, World com. Companies, when companies disclosed billions of dollars of financial frauds.

Forensic audit is the specially practice area of audit that describes engagements that result from actual or anticipated dispute or litigation and is the application of a specialized knowledge and specific skills to stumble upon evidence of economic transactions. The job demands reporting, where the accountability of the fraud is established and the report is considered as evidence in the court of law or in the administrative proceeding. It provides an audit analysis that is sustainable to the court which will form the basis for discussion, debate and ultimately dispute resolution as **a forensic auditor finds out the mis-statements deliberately instead a traditional external auditor finds out the deliberate mis-statements only**. Engagements of forensic auditors on criminal matters typically arise after the occurrence of fraud. Fraud examination in forensic audit is different from that of 'traditional audit' because the forensic auditor has the intuitive ability to analyze fraud. This has triggered the necessity to provide a new kind of auditing services that would be directed towards fraud prevention and detection which helps detect diversion of funds, willful defaults and window dressing of financial statements.

Objectives of the study -

- To identify the role of forensic audit in fraud investigations and litigation support.
- To understand the significance of Forensic audit through the discussion of various Scams in India.
- To understand various techniques employed in forensic audit for detecting and preventing frauds.

Methodology - The study is based on secondary data and few cases of corporate sector have been discussed.

Anticipation of organizations towards Forensic Audit - India has already faced substantial losses due to rapid increase in "White-collar crimes". Forensic Research Foundation was created to provide support for investigation of fraud and highlighted forensic and economic crimes. Another international organization named KPNG has set up investigation detection center in India. There are few agencies in India, which are dedicated to the mission of combating frauds. Serious Investigation Fraud Offices (SIFO) has been established in India for the same reason i.e. detection and prevention of economic irregularities and crimes. SIFO looks into violations of Income tax, FEMA, RBI Act, etc. CBI (Economic Office wing) deals with big financial frauds, and Central Vigilance Commission deals with corruption. TCS along with Subex Systems has designed software to combat telecom frauds and money

*Asst. Professor (Commerce) Shri Arihant College of Professional Education, Ratlam (M.P.) INDIA
**Asst. Professor (Commerce) Shri Arihant College of Professional Education, Ratlam (M.P.) INDIA

laundering. MAOCARO Order, 1975 was issued containing a 22 point questionnaire by the ministry of Company affairs (MCA) in order to enlarge the scope of work of statutory auditors. This made internal audit compulsory and the statutory auditor was bound to comment on the efficacy and extent of internal controls and review the internal audit. Such internal audit was not mandatory internationally till Securities and Exchange Board of India (SEBI) and the Department of Corporate Affairs (DCA) made it mandatory to have audit committees where independent directors were in a majority and whose chairman had led to be an independent director; they would be obliged to review and implement internal controls, observe accounting standards, review and approve accounts, review financial management, appoint internal auditors and recommend statutory auditors.

Reserve Bank of India through issuing a circular, in 2009 has fixed the responsibility of fighting the frauds on the Chairman and CEO's of the banks emphasizing that banks need to understand the forensic audit techniques. RBI further enforces that fraud investigation requires competence in 'forensic audit' and also technical / transactional expertise instructing the banks to take immediate steps to identify staff with proper aptitude and provide necessary training to them in forensic audit so that only such skilled staff is deployed for investigation of large value frauds.

Institute of Chartered Accountants of India (ICAI) issued 32 accounting standards, 34 auditing standards, 6 internal audit standards and several external quality control standards. It has moved for harmonization of standards with the International Federation of Accountants (IFAC). Legal jurisprudence with reference to auditors has evolved substantially in Europe, the US, Australia and India increasingly recognizes the social responsibility of the auditor.

Role and significance of Forensic Auditor as fraud examiner - Forensic audit as a legal term, in its simplest form involves application of accounting techniques and concepts in issues concerning legal matters. Forensic Auditor reveals manipulation of the financial figures done by the management to window dress the balance sheet and profit and loss account figures to hide real facts from the stake holders and general public, for the funds misused or misappropriate for the purpose of price fixations, stock market manipulations.

Major sub-divisions of Forensic Audit -

1. **Litigation support -** The litigation support is provided to the legal profession by giving support of documentary evidence to support or rebut a claim. It also assists in designing relevant questions to be asked at the time of trial in courts of law.
2. **Investigative and assisting in the disputes -** Frauds investigation is often associated with investigations of fraudulent and criminal matters. A typical frauds investigation assignment would be an investigation of employee theft including securities fraud, insurance fraud, kickbacks and proceeds of crime investigations.
3. **Frauds Detection -** The statutory and internal auditors act only as watch dogs but to detect and unearth frauds in accounting there need bloodhounds, and a forensic auditor acts like a blood hound in bringing the fraudsters to book, with his specialized experience and skills assuming that something has gone wrong and conducts its investigation and supports his conviction with adequate documentary and other proofs.
4. **Computer forensics -** The auditor should understand the business and the technology used in the organizations, the software used, as he is dealing with the management as well the technical and software departments of the company and should have sound technical knowledge to get the source of required information from the storage and other computer equipment's and for following the trial of information needed for investigation.

Present scenario of Forensic audit - There is great future in forensic audit as a separate "niche" consulting because it is relatively a new area of study.

A series of working definitions and sharing of corporate experiences should be undertaken and encouraged to ensure a common understanding. The auditing profession must convince the marketplace that it has the best equipped professionals to perform such services on account of global competition. In the backdrop of increasing levels of frauds, the demand for forensic auditors is bound to substantially increase in the future. So, it is beyond doubt that the role of forensic auditors is an immediate requirement in Indian Scenario to prevent the further loss due to the hidden frauds in corporate world, public accounting and awareness of government in future. Hence, proper attention is required by the regulators, Government and the educational Institutes to support Forensic audit.

Analysis & Interpretations - 'Forensic', is about fact finding and interpretation. The forensic auditor has a mindset that more interested in exposing fraud compared to financial auditors, have the expertise in untangling complicated accounting maneuvers that misrepresent financial statements. In order to perform these services a forensic auditor must have both the quantitative skills in researching numbers to uncover fraud and qualitative skills to determine the weakness of internal control systems. Insurance companies, banks, police forces, government agencies and other organizations may employ a forensic auditor, familiar with legal concepts and procedures, for investigating and analyzing financial evidence, developing computerized applications to assist in the analysis and presentation of financial evidence, communicating their findings in the form of reports, exhibits and collections of documents and assisting in legal proceedings, including testifying in court as an expert witness and preparing visual aids to support trial evidence.

Summary and conclusion - The importance and need for a forensic auditor has become necessary due to failure in

the routine audits, Mergers acquisitions, tax investigations, economic crime investigations, all kinds of civil litigation support, specialized audits and even terrorist investigations require Forensic audit as it lower the risks of frauds.

Forensic audit includes coverage in two areas - Fraud Investigation and Litigation support. It provides assistance of an accounting nature in a matter involving existing or pending litigation. A typical litigation support assignment would be calculating the economic loss resulting from a breach of contract. The area of litigation support requires the accountant to become trained to be an expert witness. The review indicates that the factors motivating financial crimes may be the incentive (or pressure), opportunity and rationalization surrounding the financial criminals. This paper canvasses for the intervention of forensic auditor to solve the vexed problems of financial crimes with a further recommendation that the forensic auditor adopts the inference, relevance and logic solution approach (IRLS) in dealing with financial crimes in corporate organizations

In India serious fraud office and IRDA have special focus on the frauds however there is no specialized education provided by any of the universities in the country for Forensic auditing.

There are three courses on frauds providing formal education about accounting in India. India forensic is however not affiliated to any of the Universities.

Certified Forensic Accounting Program - (CFAP) is the course dedicated to Corporate Frauds in India speaking about the classification of the Corporate Frauds and the ways to investigate the frauds in various different sectors.

Certified Bank Forensic Accounting – (CBFA) is the course dedicated to Bank Frauds in India.

Certified Anti-Money Laundering Expert – (CAME) is dedicated course on Anti-Money Laundering focusing on the various aspects that good software should detect in its AML solution.

To qualify as a forensic auditor, one must possess the appropriate license or qualification as recognized by the jurisdiction in which the lawsuit or dispute is taking place. Forensic auditing is one of the highly paid jobs in India.

References :-

1. Biswas M. Hiremeth G, Shalini R (2013),, Forensic Accounting in Indian Perspective, 5th International Conference on Financial Criminology.
2. Das Santanu Kumar, (2012), “Forensic Accounting: A tool of detecting White-Collar Crimes in corporate world”, Indian Journal of Research, Vol.1 Issue 2, pp.1-3.
3. Ghosh Dr. Indrani and Banerjee Dr. Kamal Kishore, (2011) “Forensic Accounting- Another feather in the Hat of Accounting”, Chartered Accountants, ICAI
4. Crumbley DL, Heitger LE,Smith GS, (2005), Forensic and investigative accounting, CCH Group, Chicago, IL Debroy. Bibek & Bhandary, Laveesh, “Corruption in India”.
5. Ansari, K.M.(2005) “Corruption and Forensic Accounting” Ohio CPA Journal; July-September.

****

A Study Of Sickness Of Small And Cottage Industries And Resurgence Schemes

Dr. Subodh Kumar Nalwaya*

Abstract - India's Cottage and Small sector is growing efficiently. The data indicate that this sector in India accounts for 94% of the country's industrial units with 40% value addition in the manufacturing sector, shares 36% of the country's total export,contributes 10% GDP., employs nearly 9.2 lakhs per annum, registering a sectored growth rate of 9.50%. But even after that strong data indicates that lots of the small and cottage industries suffering from sickness of many reasons like finance, raw material, infrastructure, technology, etc. to overcome this problem government having some resurgence scheme to overcome the problems.
Key Words - Sickness, inadequate, resurgence

Introduction - During the last three decades of development there has been an impressive development of large scale industries, but India still remains predominantly a country of village and small industries. Small and cottage industries are scattered over the whole country and they cover a wide range of traditional and modern small scale industries including handicrafts, sericulture, khadi, powerloom, furniture, spices, coir, handloom. It is no exaggeration to say that small and cottage industries are the back bone of Indian economy.

The available data indicate that small and cottage industry in India accounts for 94% of industrial units with 40% value addition in the manufacturing sector, shares more than 36% of the country's total export, contributes 10% GDP,employs nearly 9.2 lakhs per annum, registering a sectored growth rate of 9.50%. During the 11th plan 5.7 million new jobs were created by the sector, while 7.6 million additional jobs are expected to be creating by the 12th plan.

The cottage and small-scale industries, despite their importance for the economy, are not contributing to their full towards the development of the country. It is because these industries are beset with a number of problems in regard to their operations. These problems are discussed below.

Inadequate Finance - Firstly, adequate funds are not available and secondly, entrepreneurs due to weak economic base have lower credit worthiness. Neither they are having their own resources nor did others prepare to lend them. Entrepreneurs are forced to borrow money from money lenders at exorbitant rate of interest and this upsets all their calculations.

Difficulties Of Marketing - These small scale units are also exposed to marketing problems. They are not in a position to get firsthand information about the market i.e. about the competition, taste, liking, disliking of the consumers and prevalent fashion.With the result they are not in a position to upgrade their products keeping in mind market requirements. They are producing less of inferior quality and that too at higher costs. Therefore, in competition with better equipped large scale units they are placed in a relatively disadvantageous position.

Shortage Of Raw Materials - Then there is the problem of raw materials which continues to plague these industries. Raw materials are available neither in sufficient quantity, nor of requisite quality, nor at reasonable prices. Being small purchasers, the producers are not able to undertake bulk buying as the large industries can do. The result is taking whatever is available, of whatever quality and at high prices. This adversely affects their production, products, quality and costs.

Low-Level Technology - The methods of production which the small and tiny enterprises use are old and inefficient. The result is low productivity, poor quality of products and high costs. The producers for lack of information know very little about modern technologies and training opportunities which concerns them. There is little of research and development in this field in the country.

Competition From Large-Scale Industries - Another serious problem which these industries face is that of competition from large-scale industries. Large-scale industries which uses the latest technologies with access to many facilities in the country can easily out-priced and out-sell the small producers. With the liberalization of the economy in recent years, this problem has become all the more serious.

Idle Capacity - There is under-utilization of installed capacity to the extent of 40 to 50 percent in case of small

***Asst. Professor and H.O.D. (Commerce) Mewar University, Chittorgarh (Raj.) INDIA**

scale industries. Various causes of this under-utilization are shortage of raw material problem associated with funds and even availability of power. Small scale units are not fully equipped to overcome all these problems as is the case with the rivals in the large scale sector.

Infrastructure - Infrastructure aspects adversely affect the functioning of small scale and cottage industries. There is inadequate availability of transportation, communication, power and other facilities in the backward areas. Entrepreneurs are faced with the problem of getting power connections and even when they are lucky enough to get these they are exposed to unscheduled long power cuts.

Inadequate and inappropriate transportation and communication network will make the working of various units all the more difficult. All these factors are going to adversely affect the quantity, quality and production schedule of the enterprises operating in these areas. Thus their operations will become uneconomical and unviable.

Project Planning - Another important problem faced by cottage and small entrepreneurs is poor project planning. These entrepreneurs do not attach much significance to viability studies i.e. both technical and economical and plunge into entrepreneurial activity out of mere enthusiasm and excitement.

They do not bother to study the demand aspect, marketing problems, and sources of raw materials and even availability of proper infrastructure before starting their enterprises. Project feasibility analysis covering all these aspects in addition to technical and financial viability of the projects, is not at all given due weight-age.

Inexperienced and incomplete documents which invariably results in delays in completing promotional formalities. Small entrepreneurs often submit unrealistic feasibility reports and incompetent entrepreneurs do not fully understand project details.

Skilled Manpower - A small scale unit located in a remote backward area may not have problem with respect to unskilled workers, but skilled workers are not available there. The reason is Firstly, skilled workers may be reluctant to work in these areas and secondly, the enterprise may not afford to pay the wages and other facilities demanded by these workers.

Besides non-availability entrepreneurs are confronted with various other problems like absenteeism, high labour turnover indiscipline, strike etc. These labour related problems result in lower productivity, deterioration of quality, increase in wastages, and rise in other overhead costs and finally adverse impact on the profitability of these small scale units.

Managerial - Managerial inadequacies pose another serious problem for small scale units. Modern business demands vision, knowledge, skill, aptitude and whole hearted devotion. Competence of the entrepreneur is vital for the success of any venture. An entrepreneur is a pivot around whom the entire enterprise revolves.

Many small scale units have turned sick due to lack of managerial competence on the part of entrepreneurs. An entrepreneur who is required to undergo training and counseling for developing his managerial skills will add to the problems of entrepreneurs.

Government policy pertaining to production, distribution and price change in the outlay blueprint, subsequent new priorities in the strategy, scarcity of power, transport, raw material and deterioration of industrial relations etc., can result industrial sickness. Indigenous factor such as mismanagement, diversion of funds, wrong dividend policies, excessive overheads, lack of fully responsible for aggravating the situation of industrial sickness in a serve manner. Further, the government policies regarding price distribution, export, import, licensing and taxation are the major factors for industrial sickness

Industrial Sickness Has Brought Disastrous Consequence -

- The closure of industrial units leads to aggravation of the problem of unemployment.
- Wastage of huge resources invested in the industrial units
- The closure also leads to wide spread labor unrest, threatening, disturbance in the industrial environment.
- Industrial sicknesses result in huge financial losses for banks and other terms lending financial institutions.
- The closure of industrial units will have adverse impact on the other related units through backward linkages.
- In incurs heavy loss of revenue to center, state and local government.
- Foreign trade is also affected because of such industrial sickness.

Revival Scheme For Sick Small Scale Industrial Units - The factors responsible for sickness in small scale industries may include obsolete technology, non-availabilityof skilled manpower, poor management, diversion of funds, lack of entrepreneurship/professionalism, marketing problems etc. Industrial sickness is an integral part of the process of development. Hence, it is desirable to take effective steps by the Government and other agencies concerned for timely detection of sickness at its initial stage.

In this context, it is noteworthy that the Government of India has set up a statutory body, namely, the Board for Industrial & Financial Reconstruction (BIFR) under the Sick Industrial Companies (Special Provisions) Act, 1985 to facilitate revival of viable sick industrial units and also for the winding up of non-viable sick units. SSI sector, however, does not come under the purview of the BIFR. It is noticed that some State Governments such as Gujarat, Andhra Pradesh and Karnataka have evolved schemes for revival of SSI and non-BIFR sick viable industries. There is need to formulate a comprehensive package for revival of viable sick SSI and non-BIFR units in Madhya Pradesh. With this in view, amended schemed, called “Madhya Pradesh Small Scale Industries Revival Scheme (MPSSIRS)” is introduced as under -

Keeping in view the importance of cottage and small scale industries the government has taken many steps to overcome their problems. The main steps taken are:-

a) The union government has set up a number of agencies to help the cottage and small industries. These include the small scale industries board the khadi and village industries commission, the all India handicrafts board, the AH India handloom board and central silk board.
b) Credit facilities are made available to these industries through a number of institutions. Small scale sector is included in the priority sector for the supply of institutional credit.
c) Industrial estate and rural industrial projects have been set up and industrial co-operative have been organized.
d) To encourage the small scale sector, the central government has reserved 807 items for exclusive production in the sector.
e) The district industries centers are being established at the district level to provide under one roof, all the service and support required by small and cottage entrepreneurs.

References:-

1. yourarticlelibrary.com
2. world research journal of economics
3. study material (T. romana, college)
4. chopadeb.b. (department of commerce, art, commerce and science college, sonai)
5. mpindustry.gov.in

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

A Study Of Impact Of Factors Affecting Loans Granted By Private Banks In Indore District

Dr. Sandhya Amga *

Abstract - The Study focus on internal factors affecting the credit provided by the banks.It analyses influence of internal factors and internal factors debtor against problem loans by regression analysis.Results drawn by regression shows that internal factors is positive and significant impact on non-performing loans was due to the variable credit analysis

Introduction - Business organizations are given consent by the government to provide services in credit and money supply and bank payment traffic, But the Indian banking industry in its development has always ups and downs. Retroceding and flow of national banking industry due to the extensive range of government deregulation began, pushing the banking industry developed rapidly during the period late nighties. Furthermore, in mid-1997 finally it collapsed due to themonetary and economic crisis in Indian economy. Banks which is the creator of funds in the form of a credit to the company always awaits interest income. In addition, banks also earn income from other services, such as on the payment, collection of bills receivable, profit through dealing in foreign exchange and so on. But revenues generated from Interest are the main income components in comparison to other services. Simultaneously, the business world credit is a very chief source of funds of any business activity. Although granting loan is the foremost source of revenue for the bank, but the bank is also exposed to the risk of loss due to unrecovered loans. Bad loans are not only destructive to the bank, but also damaging to society because the money used in granting loans come directly or indirectly savings and public deposits.

In granting credit, the bank should take special care to the principles of prudence in the management of credit, for successful repayment of loan and interest. For the management of the bank it must estimate the credit worthiness which will be proffer fair and exercise control over the credits granted. If a bank has granted loans in huge numbers, then if the credit block to return, it will be difficult for the bank to collect the credit granted, which will not only result intodiminishing revenuesthrough which bank will suffer losses but also it willdecrease the bank's asset quality. If this condition is continued, then gradually the bank will face bankruptcy. If a bank went bankrupt then all the account holders, creditors, investors and employees will be effected negatively. Problem of Bad loanshas been a serious issue in the banking industry in India, it is seen many banks were liquidated and merged. To avoid a credit jam early in the decision-making aspects of the debtor's credit called by 5C principle, namely; character, capacity, capital, collateral and condition (Benton, Fraser and Kolari: 1989). Bambang RJ (1993) to simplify these principles into the 3R: return, repayment, capacity and risk-bearing ability. The main causes of bad debts found in the study are:

- Internal audit either of the employees of the bank (credit analysis), systems/regulative essentials.
- Internal debtor because of the member of intent or intentionally. Constituent of chance such as; losses resulting debtors were pressurissed for payment of arrears interest and loan principal payments, bankruptcyor death of a debtor. While the constituent of intent may be; the implementation of window dressing, the debtor left the country using fictitious companies to obtain credit, credit not used according to the terms & fake information given by the debtorby providing fake certificates.
- An illiberal monetary policy which makes trade activities difficult to carry on & therefore the companies which cannot sustain in the cut throat competitiongoes bankrupt businesses and ultimately unable to pay its debts.

Banks should explore and analysecreditworthinessby evaluatingthe borrowerfor repayment of credit.Thus the obligation of the credit analysis is not only concerted on the value of collateral (collateral and guarantee company or personal guarantees), but also solid documentation of balance sheet, profit statement and cash flow. Banks should analysethe business plan, assurance of current assets and other aspects covered by the internal factors of the debtor.Some other factors influencing bad loans are:

1. Inability of the staff in maintaining Accounts which leads to wrong or inappropriate prediction of the financial condition of the debtor.
2. Stress from indirect parties related to business like

*Principal, SubhashYadav Memorial Degree College, Borawa (M.P.) INDIA

government officials and the majority shareholder involved.

3. The financial interests of bank officials (self-dealing) who is not officially on the debtor, together with the commissions netted from the debtor and the bank officials to use the majority of credit for the benefit of private bank officials.

Another reason that has become a reason for non-performing loans problem is macro-economic conditions. Economic crisis that hit India had done weaken the nation's financial capability, which resulted tobankruptcy. Theinadequate financial capability and bankruptcies seen by many firms in it affectsblocks loan repayment with interest. All three factors affecting the problem loans will be used as a variable of this study to analyse the non-performing loans in some Privatebanks branch offices Indore.

Methodology - The study was conducted in Indore and bank selected as samples are various Private Banks operating in Indore District.

Results - This study is related to influence between internal factors and internal factors debtor bank to the credit crunch. Regression analysis is applied on the bank's internal factors (Y1) and internal factors of the debtor (Y2) on loans (N) shows that: Bank internal factors have a substantial effect and is strong enough against the emergence of problem loans with borrowers assuming internal factors and other factors are constant. This is demonstrated by the multiple regression coefficient (multiple R) obtained at 0.87 or 83% and F ratio of 89.473 at a significance level of p <0.04 shows the effect of all independent variables internal factors ie bank credit analysis does not refer to the guidelines set (Y• •), the control level after loan disbursement (Y• ,), the interests of the bank staff with the debtor (Y• ƒ), as well as the credit disbursement is not in accordance with the provisions of the bank (Y• „) is significant and quite strong. Furthermore, the coefficient of determination (R ²) were obtained at 0.808 or 80.8% showed levels of accuracy (goodness of fit) regression lines were established from the data on the observation of 80% or dependent variable (Z; NPL) is explained by the bank's internal independent variables ; credit analysis does not refer to the guidelines (Y• •), the control level after loan disbursement (Y• ,), the interests of the debtor bank saff (Y• ƒ), as well as the credit disbursement is not in accordance with the bank (Y• „) amounted to 80.8%, while not described by 8.0 %. Adjustments to the coefficient of determination (adjusted R-square) were obtained for 0.800, or 80%, showed that the influence of the independent variables on the dependent variable that has not been included in the research model as adjusted to 9%. Internal factors for debtors are significant effect to the emergence of problem loans with the assumption that the bank's internal factors and other factors are constant. This is demonstrated by the multiple regression coefficient (multiple R) which amounted by 0.87 or 87% and amounted by 121.9 F ratio at a significance level of p <0.04 shows the influence of all independent variables debtor internal factors namely: misuse of credit by the debtor (Y, •), poor management of the debtor (Y, ,) and the behavior of the debtor that is not good (Y, ƒ) is significant and quite strong. Furthermore, the coefficient of determination (R ²) were obtained for 080, or 80% showed levels of accuracy (goodness of fit) regression lines were established from the data on the observation of 80% or the dependent variable (Z; NPL) is explained by the independent variable internal namely the debtor; misuse of credit by the debtor (Y, •) poor management of the debtor (Y, ,) and the behavior of the debtor that is not good (Y, ƒ) of 80%, while 8.1% are not described. Adjustments to the coefficient of determination (adjusted R square) obtained at 0.80 or 80% indicates that the influence of the independent variables on the dependent variable that has not been input to the research model as adjusted to 8.6%. Based on the results of separate regression analysis above, it can be said that both factors (internal and internal bank debtors) both have a strong influence on the emergence of non-performing loans.

Conclusions - The study analysis influence of internal bank (Y•) which consists of: credit analysis does not refer to the guidelines (Y• •), the control level after loan disbursement (Y• ,), the interests of the bank staff with the debtor (Y• ƒ), as well as the credit disbursement is not in accordance with the provisions of the bank (Y• „), as well as internal factors debtor (variable ²) consisting of: misuse of credit by the debtor (Y, •), poor management of the debtor (Y, ,), and the behavior of borrowers who are not good (Y, ƒ) on the incidence of problem loans at 5 (five) banks operating in Indore District. The conclusion that can be awarded based on the results of this study are that loan procurement is an essential part of the economy. But if the banks who are the credit giver have to pay attention on the credit worthiness of the the debtor (loan taker) and should control after the credit disbursement.

References :-

1. Chandra, Aruna; Rau, Pradeep A. &Ryans, John K. (2002). India Business: Finding Opportunities in this Big Emerging Market, USA: Paramount Books, p. 131.
2. Du Plessis, P.J., & Rousseau, G.G. (2007). Buyer behaviour. Understanding consumer psychology. (4th edn.). Cape Town: Oxford University Press.
3. Elhance, D. N., Elhance, V. &Aggarwal, B. M. (1998). Fundamentals of Statistics. New Delhi: Sultan Chand and Sons.
4. Fishbein, Martin and Icek, Ajzen. 1975.*Belief, Attitude, Intention, and Behavior: An Introduction to Theory and Research*. Reading: Addison-Wesley.
5. Fowler, Floyd J. (2009). Survey Research Methods (Applied Social Research Methods). New Delhi: Sage Publications.

****

Customer Satisfaction In E-Marketing In India

Akbar Ali *

Abstract - E-marketing is an emerging dimension of India. It is a modern way of marketing a product or service to the targeted market around the world. Customers don't need to visit anywhere they have to just click on the Website and the product get delivered at their place. Customers use internet to purchase products through online because they believe it is convenience to them and the term convenient includes elements such as time saving, Reasonable price of product, information availability, opening time, global access and the 24-hour availability of the Internet, and ease of use, websites navigation, less shopping stress, less expensive and shopping fun. But not all customers are satisfied with the E-Marketing. Many complaints like delay in product delivery, substandard product, cheap and incorrect product delivered and non delivery of product etc. So a question arises that the customers are satisfied or not with whatever services provided by the E-Marketing companies. This paper tries to find out the truth behind it. This paper is an attempt to analyze customer satisfaction level in internet marketing and examine the factors influencing customer's satisfaction level towards E-Marketing. Surveys were conducted by distributing questionnaires in the Madhya Pradesh to gather data for this research. From the findings, it was discovered that majority of the customers are satisfied. *Proper Communication and on time delivery of the product insist customer to shop again from online stores and affect the satisfaction of customers.* Finally, some recommendations have been offered for E-Marketing Companies to take initiatives for making E-marketing Services more admired and trustworthy.

Introduction - In this era, doing business through E-marketing has become not just a fashion, but a serious alternative to traditional marketing. With the advantages of global reach, availability of wide variety and cheaper products, 24X7 timing, the ability to interact and provide custom information and ordering, and the multimedia prospects E-Marketing is rapidly becoming a multibillion Ringgit source of revenue for the world's businesses. If online retailers know the factors affecting Indian consumer's satisfaction and buying behavior they can further develop their marketing strategies to convert potential customers into active ones. Customer satisfaction is the key factor for customer retention and acquisition in E-Marketing system.

E-Marketing is the process of buying and selling of the goods and services through online. E-marketing can be defined as utilizing digital technology to undertake brand marketing and better marketing performance. E-Marketing refers to a set of powerful tools and methodologies used for promoting products and services through internet. They may also be referred to as "virtual stores" or "cyber stores" due to their interactive nature of the medium without either party being physically there to conduct trade. E-Marketing explains company endeavors to notify buyers, communicate, promote and sell its offerings through means of the Internet.

Growth of internet users must be credited for the growth of E-Marketing. India stands at fourth place with 81 million internet users in 2010. The increasing use of internet by the young generation in India provides an emerging prospect for online retailers. Through E-Marketing, online retailers have gained a tremendous opportunity to increase their sale and to maintain a direct relationship with the customers.

The expectations of the online customers are often higher and may even be different from those using traditional marketing methods. Consequently, E-Marketing presents new challenges to businesses and marketers world-wide. Building long-term customer relationship through *customer satisfaction* is one of the crucial keys for successful business. An organization exists to satisfy customer's wants and needs while meeting the organizational objectives of increased sales and higher profits. The time for rapid development in E-Marketing has come to meet needs of new technology.

Problem statement - Though online users are increasing frequently, online buyers are not increasing in the same proportion. There might have some reasons. Research on Customer satisfaction towards E-Marketing has been carried out for the last two decades. Since then consumer satisfaction towards in buying through E-Marketing is increasing, but how much is their satisfaction level is needed to be studied. Thus it needs investigation how

* Research Scholar (Management) Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA

communication awareness of E-System, delivery system, Price and product quality affects customer's willingness to purchase through E-Marketing. This study emphasizes on factors which affect online customer's purchase behavior, Whether Indian E-purchaser is satisfied with the services given by the E-marketing companies.

Research Objectives - The present study seeks to achieve the following objectives -

1. To measure the satisfaction level of online customers.
2. To investigate the major factors those have impact on customer Satisfaction of e-marketing.
3. Some recommendation to the e-tailers in order to improve the current E-business.

Literature Review - Kotler (1991) stated that *Customer satisfaction* has been described as a consumer's post evaluation of a purchased product or service, given pre-purchase expectations.

Alam and Yasim (2010) reported that the website design, reliability, product variety and delivery performances are the four key factors influencing consumer's satisfaction in E-Marketing. Vyas and Srinivas (2002), in their paper stated that majority of the internet users were having positive attitude towards online buying of products/services. There exists a need for developing awareness about consumer's rights and cyber laws. They also emphasized on better distribution system for online products.

Crawford, (1997) in his paper said that traditional consumer behavior shopping has its own model, which the buying process starts from the problem recognition, information search, evaluation of alternatives, then purchase, and at last post purchase behavior. Lee and Joshi (2007) found that delivery performance has significant influence on Customer satisfaction.

Furthermore, Canavan et al. (2007) found that consumer satisfaction and purchase decision on online shopping depends on few more issues. These are: e-store image, delivery and customer services, service quality and purchase behavior, personalization, motivations for online purchase, trust, reliability, privacy, transaction and cost, incentive programs, web-site design, online interactivity, merchandise motivation, assurance, convenience (or Hassle Reduction), pragmatic motivation, responsiveness, consumer risk assessment etc.

Following from the above consideration, this research will find out the answers to the following specific question within a sample in Madhya Pradesh(India) state, that are likely to formulate the findings of the research and from where attempts will be made to draw generalizations. Therefore, in the context of consumer satisfaction in E-Marketing, the research question is:

"What are the major factors that have impact on customer Satisfaction towards E-marketing in India."?

Research Methodology -

Research settings - The study was conducted in the Sehore District, a developing town of Madhya Pradesh (India). Data for this study was gathered in April 2017 by primary data collection method through questionnaire administered among undergraduate students of Govt. Ashta College located at Sehore.

Universe of the study - For the purpose of the study, the universe consists of all the undergraduate students of Govt. College of MP.

Sources of data - The primary data were collected with the help of a questionnaire framed keeping in view the objectives of the study. The questionnaire consists of two parts, i.e. part-I and part-II. The part I include background details of the respondents and the part-II, various information related to customer satisfaction regarding E-Marketing.

Statistical tool used - Simple statistical tool were used to analyze the collected data.

Personal profile and general information of respondents - A total of 320 questionnaires were distributed out of which 300 questionnaires were usable. Majority of the respondents were between the age group of 18 to 25. Male respondents were 55% and female respondents were 45%. The percentage ratio of rural respondents and urban respondents were 33:66. Apart from this, mostly respondents i.e. 66% belong
to middle class family.

Data Analysis - The satisfaction level of online customers depends on quality of services rendered by E-Marketing Companies. To measure the service quality of E-Marketing following questions were asked to customers though questionnaire. **(See in the last page)**

Fig-1: Customer Satisfaction for E-marketing Services

Likert Scale

[Exellent-5 Very Good-4 Good-3 Fair-2 Poor-1]

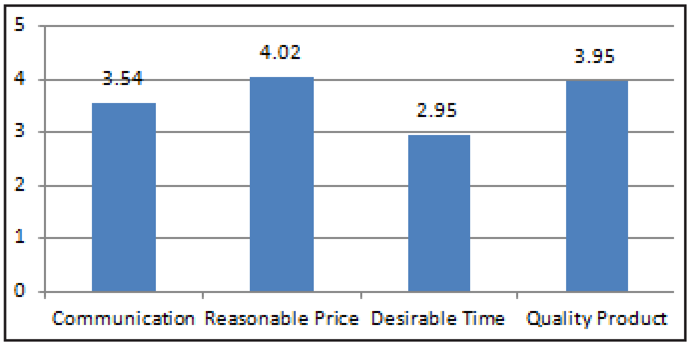

Hypothesis Testing - The hypothesis of this study is: **H1:** Customers are satisfied with services rendered by E-marketing companies in India. So the hypothesis is- **Null Hypothesis (HO):** Customers are not satisfied with services rendered by E-marketing companies in India. Normal curve and one sample test for hypothesis-1 are shown in the Fig-2, Table2. For identify the satisfaction of customer Boolean type question was asked and responses are shown in table2

Table - 2

Satisfaction Towards E-Marketing

Category	Satisfied	Dissatisfied	Total
Male	112	48	160

%	70%	30%	100%
Female	120	20	140
%	85%	15%	100%
Rural	70	30	100
%	70%	30%	100%
Urban	155	45	200
%	77%	23%	100%
Total	234	66	300
%	78%	22%	100%

Fig-2 - Satisfaction towards E-Marketing

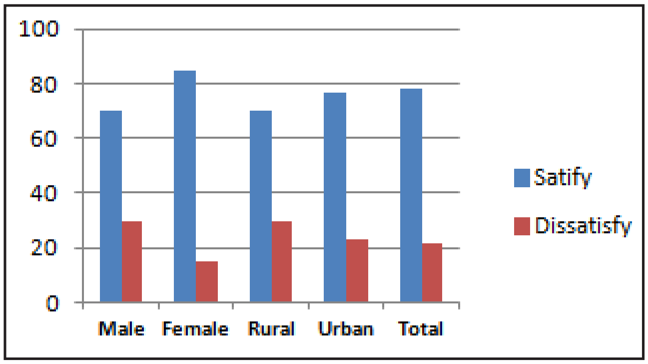

From Table 2, it can be said that 78% of customers are satisfied with the services rendered by E-Marketing companies, thus null hypothesis (**HO**) is rejected and alternative hypothesis (**H1**) is accepted. It can be concluding that customers are mostly satisfied with E-Marketing.

Conclusion - The benefits of E-marketing in bringing increased customer satisfaction. However, this study indicated that there was a positive trend of increasing awareness of the benefits of E-Marketing. Some of them such as Proper communication with customer, delivery in desirable time, reasonable price, and quality product were recognized as ways of enhancing customer satisfaction. Therefore, the E-Marketing brings increased customer satisfaction, increased sales and profitability to a business organization.

Therefore, **"Proper communication with customer, delivery in desirable time, reasonable price, and quality product are the major factors that have the maximum impacts on customer Satisfaction towards E-marketing in India."**

References :-

1. Kotler, P. & Armstrong, G. (2008). Principles of Marketing. 12th Ed., New Jersey: Pearson Education Ltd.
2. Kotler, P. & Keller, L. K. (2009). Marketing Management. 13th Ed., New Jersey: Pearson Education Ltd.
3. Collis, J. & Hussey, R. (2009). Business Research: A practical guide for Undergraduate and Postgraduate students. 3nd Ed., Basingstoke: Palgrave MacMillan.

S.No.	Questions	Results
1	Whether Proper communication response is given by E-marketing Companies?	The means of answers for Question 1 is 3.54 on a 5-point scale. This shows that the respondents agree that Proper communication response is given.
2	Whether Prices are mostly reasonable in E-Marketing?	The means of answers for Question 2 is 4.02 on a 5-point scale. This shows that the respondents strongly agree that Prices are mostly reasonable.
3	Whether Goods reach in desirable time in E-marketing.	Respondents are unsure as to whether Goods reach in desirable time (2.95 on a 5-point scale)
4	Is there difference between order given and delivered Goods	The respondents clearly agree that they get quality product through E-marketing (3.95 on a 5-point scale).

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

राष्ट्रीकृत बैंको का मन्दसौर जिले के ग्रामीण अंचल के आर्थिक विकास में गैर कृषि (कुटीर उद्योग, लघु उद्योग) में योगदान, प्रभाव एवं उनका विश्लेषण

नीरज राठौर *

प्रस्तावना – ग्रामीण गैर कृषि क्षेत्र का संवर्धन हमारे ग्रामीण जनसंख्या के कृषि पर अति निर्भरता को कम करने तथा वैकल्पिक जीविकोपार्जन का विकल्प प्रदान करने में बहुत महत्वपूर्ण हैं, इससे बड़े पैमाने पर लघु और सीमान्त किसानों और कृषि श्रमिकों के कृषि क्षेत्र में बेरोजगारी प्रछन्न रोजगार के कारण शहरी क्षेत्रों में जीविकोपार्जन के अवसरों की तलाश में पलायन को रोकने में सहायता मिलती हैं।

ग्रामीण युवकों एवं महिलाओं के बीच आवश्यक क्षमता का निर्माण नावार्ड की प्राथमिकता क्षेत्र में हैं, ग्रामीण गैर कृषि क्षेत्र के लिए बाजार का विकास दूसरा क्षेत्र हैं। नावार्ड ने गैर कृषि क्षेत्र में नवोन्मेषीकरण को बढ़ावा देने अलग निधि का निर्माण किया हैं जिनका ग्रामीण अंचल के आर्थिक विकास में सहयोग हेतु राष्ट्रीयकृत बैंकों के माध्यम से गैर कृषि क्षेत्र में योगदान दिया जा रहा हैं

लघु एवं कुटीर उद्योगों का महत्व – भारत में जनसंख्या की अधिकता के कारण बेरोजगारी की समस्या व्यापक रूप में पायी जाती हैं। लघु एवं कुटीर उद्योग जो कि श्रम प्रधान होते हैं अत: अन उद्योगों द्वारा कम पूंजी विनियोग से भी रोजगार में वृद्धि की जा सकती हैं। चूंकि लघु एवं कुटीर उद्योगों का स्वामित्व अधिक से अधिक से लोगों के हाथ में होता हैं, जिसमें आर्थिक शक्ति केन्द्रीय ऋण भी नहीं हो पाता, साथ ही इन उद्योगों में श्रमिकों का शोषण नहीं हो पाता जिससे राष्ट्रीय आय का अधिक समान वितरण नहीं होता हैं।

भारत एक कृषि प्रधान राष्ट्र हैं और लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर रहकर अपना जीवनयापन कर रही हैं लेकिन कृषकों को वर्षभर कार्य नहीं मिल पाता, इस दृष्टि से भी लघु एवं कुटीर उद्योग ग्रामीण अर्थव्यवस्था में अत्यन्त उपयोगी हैं क्योंकि कृषि पर जनसंख्या का भार निरन्तर बढ़ता जा रहा हैं। प्रतिवर्ष लगभग 30 लाख लोग खेती पर आश्रित होने के लिए बढ़ जाते हैं। जिससे कृषि भूमि का उप-विभाजन और उप-खण्डन होता हैं। इस समस्या के समाधान की दृष्टि से भी लघु एवं कुटीर उद्योग ग्रामीण अंचल के महत्वपूर्ण होते हैं। भारत में श्रम शक्ति का बाहुल्य और पूंजी अभाव होने से भी कुटीर एवं लघु उद्योग देशों की आर्थिक संरचना के अनुकूल हैं क्योंकि इनमें कम पूंजी और अधिक श्रम की आवश्यकता होती हैं इस सन्दर्भ में यह उल्लेखनीय हैं कि बढ़ी और छोटी सभी फेक्ट्रियों में लगी कुल पूंजी का 7 प्रतिशत का लघु उद्योगों में लगा हैं। जबकि यह क्षेत्र कुल फेक्ट्री क्षेत्र के रोजगार का 36 प्रतिशत और कुल उत्पादन का 27 प्रतिशत भाग प्रधान करता हैं। यह नहीं पूंजी की तरह ग्रामीण अंचलों में तकनीकि ज्ञान का भी अभाव हैं, जबकि लघु उद्योगों में वृहद् उद्योगों की तुलना में कम तकनीकि ज्ञान की आवश्यकता होती हैं। इस दृष्टि से भी लघु उद्योग महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

चूंकि लघु एवं कुटीर उद्योग सामान्यत: स्थानीय साधनों एवं तकनीकों पर निर्भर रहते हैं। जिससे परिणाम स्वरूप अयात और विदेशी मुद्रा की कम आवश्यकता रहती हैं। जिससे भुगतान असन्तुलन की समस्या के समाधान में लघु एवं कुटीर उद्योग निश्चित ही उपयोगी होते हैं।

निष्कर्ष के रूप में उद्योगिक नीति 1956 के अनसाुर लघु एवं कुटीर उद्योग बड़े पैमाने पर तत्काल काम प्रदान करते हैं। राष्ट्रीय आय के अपेक्षाकृत अधिक न्यायपूर्ण वितरण का आश्वासन देते हैं और पूंजी तथा भुगतान के साधनों को प्रभावशाली ढंग से गति देते हैं।

लघु एवं कुटीर उद्योगों का आशय – सामान्यत: औद्योगिक ढॉचें को दो रूपों में ही जाना जाता हैं। बड़े पैमाने के उद्योग और छोटे पैमाने के उद्योगों में लघु एवं कुटीर उद्योगों को शामिल किया जाता हैं। इस विभाजन के विभिन्न आधार हैं जैसे औद्योगिक इकाई में प्रयुक्त पूंजी की मात्रा, कार्यरत श्रमिकों की संख्या, संगठन व प्रबन्ध का स्वरूप आदि।

परन्तु इनमें से कोई भी आधार अपने आप में पूर्ण नहीं कहा जा सकता क्योंकि कुछ समय बाद इनमें परिवर्तन हो जाता हैं। लघु उद्योगों को परिभाषित करने के लिए सर्वप्रथम सरकार ने इकाई में प्रयुक्त पूंजी तथा श्रमिकों की संख्या को आधार बनाया था, परन्तु बाद में श्रमिकों की संख्या की शर्त के द्वारा लिया तथा केवल प्रयुक्त पूंजी की मात्रा को ही आधार बनाया।

वर्तमान में वे सभी औद्योगिक इकाईयां लघु उद्योग के अन्तर्गत आते हैं, जिनके प्लाण्ट एवं मशीनरी में निवेषित पूंजी की सीमा 25 लाख रूपये से 5 करोड़ रूपये हैं। जिन उद्योगों में निवेषित पूंजी की मात्रा 25 लाख रूप्ये तक हैं वह सूक्ष्म उद्यम तथा जिनमें निवेषित पूंजी की मात्रा 5 करोड़ रूपये से 10 करोड़ रूपये तक हैं वह मध्यम उद्यम कहलाते हैं। सेवा क्षेत्र में जिन उद्यमों में निवेषित पूंजी की मात्रा 10 लाख रूपये तक हैं। वह सूक्ष्म उद्यम जिनमें 10 लाख रूपये से 2 करोड़ रूपये तक हैं। वह लघु उद्यम तथा जिनमें 2 करोड़ से 5 करोड़ रूपये तक हैं। वह मध्यम उद्यम कहलाते हैं।

वैसे तो लघु एवं कुटीर उद्योगों को एक ही अर्थ में प्रयोग किया जाता हैं, परन्तु इन दोनों में अन्तर होता हैं। कुटीर उद्योग प्राय: ग्रामीण एवं अर्द्ध शहरी क्षेत्रों में स्थापित होते हैं तथा अंशकालीन निम्न होता हैं तथा स्थानीय कच्चे माल व कुशलता का प्रयोग किया जाता हैं। यह उद्योग अधिकांशत: स्वयं मालिक द्वारा या अपने परिवार के सदस्यों की सहायता से चलाए जाते हैं। इसके विपरीत लघु उद्योग में प्राय: शक्ति परिचालित मशीनों व आधुनिक उत्पादन विधियों का प्रयोग होता हैं तथा ये अपेक्षाकृत व्यापक बाजार की मांग व पूर्ति करते हैं। इसके अतिरिक्त इनमें साधारतणतया स्थायी रूप से पूरे समय के लिए कार्य किया जाता हैं तथा बाहरी मजदूरों को काम पर

* शोधार्थी (वाणिज्य) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

लगाया जाता हैं।

कुटीर उद्योगों में सामान्यत: एक परिवार के सदस्य काम करते हैं एवं आय अर्जित करते हैं। कुटीर उद्योगों में हाथ करघा, खादी, मत्स्य पालन, कृषि आधारित उद्योग, तेल पानी बेकरी उद्योग, बाँस और खेत का सामान, बढ़ई गिरि, रस्सी बनाना, खनिज, वानिकी, झाडू व चटाई बनाना, पशुपालन आधारित उद्योग, साबुन, माचिस, अगरबत्ती, मोमबत्ती बनाना, मिट्टी के खिलौने का निर्माण आदि प्रमुख हैं।

लघु उद्योग में पावर लूम, इंजीनियरिंग के सामान, दवाईयां बनाने वाली इकाईयां, होजयरी का सामान, प्लास्टिक एवं रबड़ की वस्तुऐं बनाने वाले उद्योग शामिल किए जा सकते हैं।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में ग्रामीण उद्योगों का स्थान इसलिए महत्वपूर्ण हैं क्योंकि कृषि क्षेत्र में पहले से ही रोजगार के मामले में दबाव हैं। इसलिए उद्योग क्षेत्र में ही रोजगार सृजन के अधिक अवसर खोजे जाने चाहिए।

ग्रामोद्योग में महिलाओं की भागीदारी बहुत अधिक हैं, विनियोग के मान से उत्पादन एवं रोजगार की दृष्टि से भी वे उद्योग अनुकूल हैं। ग्रामीण परिवेश में ये इसलिए भी महत्वपूर्ण हैं कि ग्राम निवासी अपने समय का सदपयोग करते हुए हॅसते-गाते इन्हें सम्पन्न कर सकते हैं।

ग्रामीण कुटीर एवं लघु उद्योग बहुत कम विनियोग पर अधिक रोजगार की दक्षता रखते हैं, इनकी स्थाना में समय भी बहुत कम लगता हैं। इन उद्योगों में वृहद उद्योगों की अपेक्षा प्रति श्रमिक औसत उत्पादन भी अधिक होता हैं तथा क्षेत्रीय असमानता कम होती हैं।

मन्दसौर जिले में ग्रामीण उद्योगों का महत्व निम्न तथ्यों से भी स्पष्ट होता हैं जो क्रमश: इस प्रकार हैं -

1. **पारिवारिक उद्योगों में जिले की जनंसख्या संलग्नता -** मन्दसौर जिले कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था में ग्रामीण उद्योगों की उपादेयता का चित्रण जिले के पारिवारिक उद्योगों में जनसंख्या संलग्नता एवं ग्रामीण आबादी की संलग्नता से भी स्पष्ट होता हैं।

तालिका (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिक के निरीक्षण से स्पष्ट हैं कि जिले में घरेलू उद्योगों में जनसंख्या संलग्नता में निरन्तर कमी हो रही हैं। मन्दसौर जिले का विभाजन कर नीमच को जिला बनाने के बाद मन्दसौर जिले की कुल जनसंख्या 1183724 थी जो वर्ष-2011 में बढ़कर 1340411 हो गयी। इसमें कुल कार्यशील जनसंख्या बढ़कर 570329 से 679723 हो गयी, परन्तु कार्यशील जनसंख्या की उद्योग संलग्नता में अवश्य ही कमी आयी हैं। वर्ष-2001 में कार्यशील जनसंख्या की उद्योग संलग्नता 7899 थी, वह वर्ष-2011 में 6537 ही रही।

यह इस बात का द्योतक हैं कि पारिवारिक उद्यमों की तुलना में जनसंख्या का रूझान अन्य तरफ हैं। इससे यह भी निष्कर्ष निकलता हैं कि पारिवारिक उद्यमों में लोगों की अभिरूचि बढ़ाने के पर्याप्त अवसर हैं। अत: इस ओर ग्रामीण विकास एजेन्सियों को पर्याप्त ध्यान देना चाहिए। जिले के पारिवारिक उद्योगों में ग्रामीण एवं नगरीय जनसंख्या तथा स्त्री एवं पुरूष अनुपात की तुलनात्मक स्थिति निम्न तालिका से स्पष्ट होती हैं।

तालिका(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट होता हैं कि नगरीय क्षेत्र की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्र में पारिवारिक उद्योगों में कार्यरत व्यक्तियों की संख्या का प्रतिशत अधिक हैं, जिसमें महिलाओं का प्रतिशत 64.59 जबकि पुरूषों का प्रतिशत 58.64 हैं जो नगरीय क्षेत्र के पुरूषों की संलग्नता की अपेक्षा 6.08 प्रतिशत अधिक हैं, जबकि ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं का प्रतिशत नगरीय क्षेत्र की महिलाओं की अपेक्षा 29.18 प्रतिशत अधिक हैं।

2. **ग्रामीण उद्योग एवं पूंजी निर्माण**
3. **निर्धनता उन्मूलन में सहायक**
4. **सरल उत्पादन प्रणाली**

लघु एवं कुटीर ग्रामोद्योग की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण होने के कारण ही वित्त मंत्री डॉ.मनमोहनसिंह ने कहा कि सरकार इन उद्योगों के विकास को बहुत अधिक महत्व देती हैं क्योंकि इस क्षेत्र में औद्योगिक उत्पादन, रोजगार सृजन तथा निर्यात की व्यापक संभावनाऐं हैं, लघु उद्योग विभाग में सचिव श्री एस.एल.कपूर ने 04 जनवरी 1994 को चैम्बर ऑफ कामर्स एण्ड इण्डस्ट्री में जानकारी दी कि सरकार लघु उद्योगों को भी बड़े और मध्यम दर्जे के उद्योगों के समान स्तर पर कच्चा माल बैंक कर्ज और मूलभूत सुविधाऐं मुहैया कराने के मकसद से एक नई नीति की घोषणा करने की आवश्यकता हैं ताकि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को औद्योगिक दृष्टि से विकसित किया जा सके।

मन्दसौर जिले के औद्योगिक परिवेश का संक्षिप्त परिचय - मन्दसौर जिले के औद्योगिक विकास की ओर अग्रसर करने हेतु मध्यप्रदेश शासन द्वारा इस जिले को औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े जिलों की श्रेणी 'ए' में रखा गया हैं इसी के अनुरूप इस जिले को औद्योगिक सुविधाऐं एवं रियातते प्रदान की गयी हैं।

जिले में औद्योगिक विकास हेतु उपलब्ध संसाधन - मन्दसौर जिले में औद्योगिक इकाईयों की स्थापना हेतु जल, विद्युत, भूमि, कृषि उत्पादन आदि के रूप में उपलब्धता संसाधन निम्नानुसार हैं -

1. **जिले में जल की उपलब्धता -** आमतौर पर जिले में जल की आपूर्ति सुगम हैं, कुओं एवं नदियों से ग्रामीण, लघु एवं कुटीर उद्योगों के लिए जल उपलब्ध हैं।
2. **विद्युत की उपलब्धि -** जिले की चम्बल नदी पर गांधीसागर बिजली घर स्थित हैं, इस बिजली घर को जिले के अन्य बिजली उत्पादन केन्द्रों से सीधा जोड़ा गया हैं। जिले के शत-प्रतिशत गॉव विद्युतीकृत हैं इसके कारण उद्योगों को विद्युत प्रदाय सुगमता पूर्वक उपलब्ध किया जाता हैं।
3. **कृषि सम्पदा -**कृषि उपज जिले की मुख्य संपदा एवं आय का साधन हैं। इस सम्पदा को उद्योग में परिवर्तन करने के लिए मुख्यतया लहसुन, दाले, सोयाबीन, मूंगफली, मिर्च, अश्वगंधा, धनिया एवं अफीम की फसलें उपलब्ध हैं। भानपुरा व गरोठ तहसील में नींबू व संतरों के बगीचे लगे हैं एवं और भी लगाए जा रहे हैं। कृषि आधारित ग्रामोद्योग हेतु अच्छा वातावरण हैं।

मन्दसौर जिले में औद्योगिक विकास हेतु कार्यरत संस्थाऐं, योजनाऐं एवं प्रदत्त सुविधाऐं - मन्दसौर जिले में विभिन्न संस्थाऐं औद्योगिकरण के कार्य में प्रत्यक्ष रूप से संलग्न हैं उनकी गतिविधियां एवं प्रदत्त सुविधाओं का संक्षिप्त परिचय निम्नानुसार हैं।

जिला उद्योग केन्द्र - जिले में जिला उद्योग केन्द्र की स्थापना 15 जून 1978 को हुई हैं, जिसका उद्देश्य उद्यमियों को समुचित सहायता एक ही स्थल पर उलब्ध कराना हैं, जिससे जिले का विकास हो सके एवं उद्यमी सामने आ सके।

जिला उद्योग केन्द्र के माध्यम से जिले में उपलब्ध उद्यमिता विका के प्रयास, उद्योग स्थापना योजना एवं अन्य वित्तीय सहायता संबंध मार्गदर्शन

तथा अन्य प्रक्रिया संबंधी जानकारी दी जाती हैं।

जिले में औद्योगिक संरचना एवं वातावरण का निर्माण एवं जिले में औद्योगिक विकास की वृहत्तर जिम्मेदारी इस केन्द्र की हैं।

- सस्ती दरों पर भूमि प्रदाय
- केन्द्रीय लागत पूंजी अनुदान
- राजय लागत पूंजी अनुदान
- विक्रय कर में छूट
- ब्याज अनुदान
- विपणन सुविधा

1. **सस्ती दरों पर भूमि प्रदाय –** जिले में उद्यमियों को उद्योगों की स्थापना हेतु 99 वर्ष की लीज पर भूमि प्रदाय की जाती हैं। लघु उद्योगों के लिए प्रति हेक्टेयर दर 50,000 रूपये से 375 रूपये प्रति हेक्टेयर लीज टेन्ट लिया जाता हैं
2. **केन्द्रीय लागत पूंजी अनुदान –** सम्पूर्ण मन्दसौर जिला केन्द्रीय लागत पूंजी अनुदान के तहत आता हैं। इस योजना के अन्तर्गत उद्यमियों द्वारा स्थापित उद्योगों के स्थाई पूंजी विनियोजन के 15 से 18 प्रतिशत अनुदान दिया जाता हैं।
3. **राज्य लागत पूंजी अनुदान –** इसके अन्तर्गत लघु उद्योगों को स्थाई पूंजी विनियोजन का 7.5 प्रतिशत (अधिकतम 1.5 लाख रूपये) तथा हेक्टेयर में अधिकतम 2 लाख रूपये तक पूंजी अनुदान दिया जाता हैं। अनुसूचित जाति/जनजाति के उद्यमियों को 10 प्रतिशत अतिरिक्त अनुदान की पात्रता हैं।
4. **विक्रय कर में छूट –** वर्ष–1986 से लाूग की गई योजना के अन्तर्गत 10 लाख से कम स्याही पूंजी वाले उद्योगों को सम्पूर्ण जिले में यह सुवधिा उपलब्ध की जाती हैं परन्तु कर मुक्ति की सीमा लागत पूंजी की 1 प्रतिशत तक 5 वर्षो में देना निश्चित की गई हैं। विक्रय कर के स्थान पर अब वाणिज्य कर की व्यवस्था लागू की गई हैं। जिसमें उद्यमियों को इंस्पेक्टर राज से मुक्त कराने का प्रयास किया गया हैं।
5. **ब्याज अनुदान (तीन वर्ष तक) –**

(क) सामान्य श्रेणी – 2 प्रतिशत अधिकतम रूपये 10,000 प्रतिवर्ष।

(ख) अनुसूचित जाति/जनजाति – 4 प्रतिशत अधिकतम कोई सीमा नहीं।

6. **विपणन सुविधा –** शासकीय खरीद प्रोग्राम के अन्तर्गत लघु उद्योगों को लघु उद्योग निगम के माध्यम से विपणन सुविधाऐं उपलब्ध कराई जाती हैं। इसके अलावा मध्यप्रदेश वित्त निगम भी लघु उद्योग क्षेत्र की इकाईयों को वित्तीय सहायता प्रदान करता हैं।

राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम के भी माध्यम से लीज पर मशीने उपलब्ध कराई जाती हैं। इनके द्वारा निर्मित उत्पादन अथवा उद्योग में लगने वाले कच्चे माल का शासन द्वारा मान्य लेबोरेट्री में परीक्षण करने पर परीक्षण कराने के लिए जो भी राशि भुगतान की जाती हैं। इस राशि का 5 प्रतिशत अनुदान के रूप में विभाग की ओर से दिया जाता हैं, जो एक बार में 2000/– रूपये से अधिक नहीं होती हैं।

वित्तीय द्रव्य साधन – जिले में राष्ट्रीकृत बैंकों द्वारा उद्योगों को ऋण कई योजनाओं के अन्तर्गत प्रदान किया जाता हैं एवं क्रियान्वन योजना के क्रियान्वित करने के लिए बैंकों से ग्रामीण क्षेत्र में चयनित ग्रामों को संबद्ध किया गया हैं।

जिले की वर्तमान औद्योगिक स्थिति –

लघु, कुटीर एवं ग्रामीण – मन्दसौर जिले के लघु, कुटीर एवं ग्रामीण उद्योगों के जिला उद्योग केन्द्र द्वारा निम्न 3 श्रेणियों में विभाजित किया गया हैं।

1. **मॉग पर आधारित उद्योग –** जिले में इस श्रेणी के उद्योगों में प्लास्टिक बटन, लाख फाउन्टेन पेन, नेल पालिश, प्लास्टिक, पॉलिथीन बेग क्लीनिंग पाउडर शू–पॉलिश, रबर स्टाम्प, सीमेन्ट उत्पादन कापर आदि की अच्छी मांग हैं।
2. **संसाधनों पर आधारित उद्योग –** इसके अन्तर्गत जिले के संसाधनों कृषि वनोपज खनिज संपदा एवं पशुपालन पर आधारित उद्योग सम्मिलित किए जाते हैं सोयाबीन धनियां, मिर्ची,लहसुन, पावडर, अश्वगंधा से मेडीसन इसबगोल उत्पादन टमाटो सास, पोहा, दाले, आलू, वेफर्स पापड़ पशु आहार बैकरी उत्पादन आइल एवं दाल मिल, ईंट निर्माण, स्टोन कटिंग पालिथिन आदि प्रकार के उद्योगों को वर्गीकृत किया जात सकता हैं।
3. **कुशलता आधारित उद्योग –** जिले में अगरबत्ती निर्माण, झाडू, चटाई, टोकरी निर्माण हस्तशिल्प, हस्तकरधा, इलेक्ट्रिक वाइन्डिग मुख्य हैं। जिले के लधु एवं कुटीर उद्योगों में विभिन्न प्रकार के रसायन उद्योग प्लास्टिक आधारित उद्योग, लोह एवं अलोह आधारित उद्योग, खनिज आधारित उद्योग इलेक्ट्रिकल्स इकाईयां एवं दाल मिल, आईल, रेडीमेड वस्त्र निर्माण अगरबत्ती आप्टिकल्स, फर्नीचर प्रिटिंग कार्य पेपर बोर्ड, लहसुन पावडर शूज, वूलन, चटाई, झाडू मिट्टी के बर्तन बनने की विभिन्न इकाईयां प्रमुख रूप से कार्यरत हैं जिनसे संबंधित उद्योगों की संख्या एवं नियोजन की स्थिति को निम्न तालिका द्वारा दर्शाया गया हैं।

तालिका (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट होता हैं कि जिला उद्योग केन्द्र के माध्यम से वर्ष 2008–09 से 2012–13 तक की अवधि में कुल 2888 लघु एवं कुटीर उद्योग स्थापित किए गए। जिसमें कुल 14443 व्यक्तियों को लाभान्वित करने का लक्ष्य था जबकि खादी ग्रामोद्योग बोर्ड के माध्यम से इस वर्षावधि में 2008–09 से 2012–13 तक कुल 294 उद्योग स्थापित किए गए जिसमें 1470 व्यक्तियों को लाभान्वित करने का लक्ष्य था इस प्रकार कुल 15913 व्यक्तियों को लाभान्वित करने में कुल बैकिंग लक्ष्य थे जिसमें वर्ष 2008–09 वर्ष 2012–13 तक की अवधि में क्रमश: 2450 (कुल का 15.40 प्रतिशत), 3354 (21.10 प्रतिशत), 2863 (18 प्रतिशत) 3489 (21.92 प्रतिशत) 3757 (23.61 प्रतिशत) व्यक्तियों को रोजगार सृजन का लक्ष्य था।

प्राथमिकता एवं सेवा क्षेत्र के अन्तर्गत – ग्रामीण कुटीर उद्योगों, दस्तकारों, लघु उद्योगों तथा कमजोर वर्ग के उद्यमियों को प्राथमिकता क्षेत्र में सम्मिलित करते हुए इन्हें ग्रामीण बैंक योजनाओं में सेवा क्षेत्र दृष्टिकोण के अन्तर्गत रखा गया और इन्हें ऋण में प्राथमिकता दी जाती हैं।

राष्ट्रीयकृत बैंकों को ग्रामीण औद्योगिकरण में योगदान – राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा ग्रामीण औद्योगिकरण को प्राथमिकता क्षेत्र में समाविष्ट किया गया हैं। राष्ट्रीयकृत बैंकों की औद्योगिक नीति, ऋण, रोजगार अवसरों का सृजन जिले में राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा ग्रामीण औद्योगिकरण के क्षेत्र में किए गए/विनियोग एवं अन्य योगदान को बैंकों से प्राप्त आंकड़े एवं व्यक्तिगत सर्वेक्षण से प्राप्त निष्कर्षो को विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत **कर्मवार अध्ययन किया गया हैं।**

जिले में ग्रामीण, कुटीर एवं लघु उद्योग तथा राष्ट्रीयकृत बैंक – मन्दसौर जिले में राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा लघु, कुटीर एवं ग्रामीण उद्योग के योगदान को निम्न तालिका में प्रदर्शित किया गया हैं।

तालिका (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिक के विश्लेषण से स्पष्ट होता हैं कि गत 5 वर्षों में प्राथमिकता क्षेत्र से लघु एवं ग्रामोद्योग को प्राथमिकता कम में अंतिम स्थान था अर्थात् औसत रूप से कृषि को 88.85 लघु एवं ग्रामोद्योग को 1.11 एवं अन्य प्राथमिक क्षेत्र हेतु 10.05 प्रतिशत के प्रावधान रखे गए। 2008-09 एवं 2000-10 में अन्य वर्षो की अपेक्षा अधिक किन्तु तीन वर्षो मे यह प्रतिशत बहुत ही कम रहा।

लघु एवं कुटीर उद्योगों के तहसीलवार प्रावधान - मन्दसौर जिले की राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा 8 तहसीलों के वर्षवार साख प्रावधान तालिका दर्शाया गए हैं। लघु उद्योग क्षेत्र के वित्तीय प्रावधानों को देखने से पता चलता हैं कि वर्ष 2009-10 में प्रावधान सर्वाधिक रहा। इसके पश्चात् इस क्षेत्र के प्रावधानों में मूल्य वृद्धि में बावजूद भी कमी आई है। मन्दसौर एवं सीतामउ के प्रावाान अन्य तहसीलों से सर्वाधिक तथा दलौदा, भानपुरा तहसीलों हेतु सबसे कम प्रावधान रहे, जबकि तुलनात्मक दृष्टि से ये तहसीलों अन्य तहसीलों से अधिक पिछड़ी हुई हैं

उम्र विवरण से स्पष्ट होता हैं कि बैंक योजनाओं में ग्रामीण औद्योगिक विकास हेतु अन्य क्षेत्रों की तुलना में कम प्रावधान रखे जा रहे हैं।

तालिका क्रमांक (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

लघु, ग्रामीण एवं कुटीर उद्योगों में राष्ट्रीयकृत बैंकों के वित्तीय लक्ष्य एवं उपलब्धियां - मन्दसौर जिले के राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा गत 5 वर्षो में लघु एवं ग्रामीण उद्योगों के वित्तीय साख प्रावधान एवं लक्ष्य पूर्ति की तुलनात्मक स्थिति दर्शायी गयी हैं।

तालिका

जिले में लघु उद्योग क्षेत्र के राष्ट्रीयकृत बैंकों की लक्ष्य एवं पूर्ति राशि लाख में

वर्ष	लक्ष्य	प्राप्तियां	प्रतिशत
2008-09	24321	27047	111.21
2009-10	21536	43292	201.0
2010-11	22607	40080	177.29
2011-12	21576	26013	120.56
2012-13	34069	18193	53.40
	144109	154625	107.30

स्त्रोत - वार्षिक साख योजना अग्रणी बैंक मन्दसौर वर्ष 2008-09 से 12-13

तालिका के निरीक्षण से स्पष्ट हैं कि जिले के लघु एवं कुटीर औद्योगिक क्षेत्र में ऋण प्रदान करने में राष्ट्रीयकृत बैंक अधिक भूमिका का निर्वहन कर रहे हैं क्योंकि राष्ट्रीयकृत बैंकों की लक्ष्य प्राप्ती औसतन 107.30 प्रतिशत रही।

पांच वर्षो में लघु एवं ग्रामीण उद्योगों के वित्तीय साख प्रावधान एवं लक्ष्य पूर्ति का प्रावधान वर्ष 2009-10 में सर्वाधिक रहा, जबकि वर्ष 2012-13 में लक्ष्य पूर्ति का प्रावधान कम ही रहा अर्थात् वर्ष 2009-10 में लक्ष्य प्राप्ती का प्रतिशत 201.0 प्रतिशत रहा वहीं 2012-13 में लक्ष्य प्राप्ती का प्रतिशत मात्र 53.40 प्रतिशत ही रहा।

ग्रामीण उद्योगों में रोजगार अवसरों का सृजन - मन्दसौर जिले में राष्ट्रीयकृत बैंकों की वित्तीय सहायता से स्थापित ग्रामीण उद्योगों में कितने व्यक्तियों को रोजगार मिला। इसका सही-सही आंकलन असम्भव नहीं तो मुश्किल अवश्य हैं क्योंकि बैंकों से केवल उन हितग्राहियों की संख्या ज्ञात होती हैं, जिन्हें ऋण दिया गया। यह सुस्पष्ट तथ्य हैं कि उद्योग की प्रवृत्ति के मान से एक ही ग्रामीण औद्योगिक ईकाई में 2 से व्यक्ति ही जाते हैं। बैंकिंग ऋण योजनाओं का अवलोकन करने पर पता चलता हैं वर्ष 2008-09 से 2012-13 ग्रामीण एवं लघु कुटीर उद्योगों में कुल 15193 व्यक्तियों को लाभान्वित करने के कुल बैंकिंग लक्ष्य थे यदि तहसीलदार विवलेषण करें तो भानपुरा में हितग्राहियों की संख्या 966 कुल का 7.86 प्रतिशत गरोठ 1411 8.86 सीतामऊ 1658 10.4 प्रतिशत मन्दसौर 6160 38.71 प्रतिशत मल्हारगढ़ 1188 7.50 प्रतिशत तथा दलौदा 750 4.71 प्रतिशत कुल 15193 । यदि बैंकिंग ऋणों की रोजगार प्रवृत्ति को 2008-09 से 2012-13 की तुलना करें तो मन्दसौर तहसील में सर्वाधिक हितग्राही लाभान्वित जबकि सबसे कम हितग्राही दलौदा तहसील में लाभान्वित हुए।

ग्रामीण एवं लघु उद्योगों पर प्रभाव एवं उसका विश्लेषण -सर्वेक्षित 20 ग्रामीण कारीगर एवं लघु उद्योग इकाईयों का सर्वेक्षण किया गया। बैंक ऋणों का औसतन प्रभाव निम्न तालिक में दशार्या गया हैं।

तालिका (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका के अनुसार ग्रामीण लघु इकाईयों के सर्वेक्षण तथ्य अलग-अलग प्रदर्शित किए गए हैं। इस क्षेत्र में औसतन प्रति परिवार आय वृद्धि 58.4 प्रतिशत रही।

राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा प्रदत्त औद्योगिक साख का बड़ा भाग लघु एवं कुटीर उद्योगों को दिया गया किन्तु यह कुछ ऋणों का बहुत छोटा भाग हैं। जिला उद्योग केन्द्र, मन्दसौर के अनुसार उनके द्वारा भेजे गए प्रकरणों को बैंक वापस कर देता हैं, कई प्रकरणों में स्वीकृति के पश्चात् द्धण वितरण लंबित रहता हैं, अत: लक्ष्य प्राप्त नहीं होते।

लघु एवं ग्रामीण उद्योगों में लक्ष्य प्राप्त न होने के कारण बहुत से हो सकते हैं एवं किसी एक के प्रयत्न से पूर्ण सफलता भी प्राप्त नहीं की जा सकती हैं। अत: उद्योग विभाग, जिला उद्योग केन्द्र, अग्रणी बैंक एवं राष्ट्रीयकृत बैंकों को मिल जुलकर प्रयास करने होंगें तभी ग्रामीण उद्योग समुन्नत हो सकेंगें। यह स्मरण रखना होगा कि विकास की सम्पूर्ण सम्भावनाओं की सफलता, समृद्धता और स्वस्थ्यता वित्त के सजह प्रवाह पर ही निर्भर करेगी।

इस प्रकार कुटीर एवं लघु उद्योगों का ग्रामीण अंचल के आर्थिक जीवन के बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। अत: ऐसे उपाय करना आवश्यक है जिनसे लघु उद्योगों तथा वृहद उद्योगों के मध्य प्रतियोगिता कम हो सके तथा उनके समन्वय स्थापित हो सके। इसके लिए आवश्यक है, लघु उद्यागों को आर्थिक सहायता देकर कच्चामाल एवं सस्ते दर पर चालक शक्ति उपलिब्ध कर, ट्रेनिंग और तकनीकी सुधार कर करो में रियायत देकर अपने पैरो पर खडे होने की स्थिति में लाना चाहिए, जिससे वे वृहद स्तरीय यंत्रीकृत उद्योगों की प्रतिस्पर्धा का सामना कर सके तो देश का उत्पादन भी बढ़ेगा, क्षेत्रीय विकास भी होगा और बेरोजगारी अथवा अर्द्ध बेरोजगारी का उन्मूलन भी हो सकेगा।

निष्कर्ष - ग्रामीण गैर कृषि क्षेत्र का संवर्धन हमारे ग्रामीण जनसंख्या के कृषि पर आत्मनिर्भरता को कम करने तथा वैकल्पिक जीविकोपार्जन का विकल्प प्रदान में बहुत महत्वपूर्ण हैं परन्तु यह तभी संभव हैं, जब राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा ग्रामीण, लघु एवं कुटीर उद्योगो पर्याप्त साख सुविधा समय पर उपलब्ध कराकर योगदान प्रदान करें, परन्तु अध्ययन के विवलेषण से स्पष्ट होता हैं कि राष्ट्रीयकृत बैंकों में द्वारा ग्रामीण औद्योगिकरण को प्राथमिक करों में समाविष्ट किया गया हैं यदि प्राथमिक क्षेत्र के साख प्रावधानों में इस क्षेत्र के तुलनात्मक वित्तीय प्रावधान तालिका में दर्शाए गए हैं। उपर्युक्त

तालिका के विवलेषण से स्पष्ट होता हैं कि यह 5 वर्षों में प्राथमिकता क्षेत्र में कुल 13982809 लाख रूपये की योजनाऐं बनी, जिसमें लघु एवं ग्रामीण उद्योगों (गैर कृषि क्षेत्र) को प्राथमिकता कम में अंतिम स्थान था। अर्थात् औसत रूप से कृषि को 88.85 प्रतिशत, लघु कुटीर एवं ग्रामोद्योग को 1.1. प्रतिशत एवं अन्य प्राथमिक क्षेत्र (सेवा क्षेत्र) हेतु 10.05 प्रतिशत के प्रावधान रखे गए। वर्ष-2008-09 में लघु कुटीर उद्योगों के प्रावधानों का प्रतिशत 2.58 था इसकी अपेक्षा चार वर्षों में यह प्रतिशत औसत से क्रमशः' 2.40 प्रतिशत, 1.64 प्रतिशत, 0.70 प्रतिशत, 0.38 प्रतिशत के रूप में कम हो रहा।

उम्र विवरण से स्पष्ट होता हैं कि बैंक योजनाओं में ग्रामीण औद्योगिक विकास हेतु अन्य क्षेत्रों की तुलना में राष्ट्रीयकृत बैंकों में लघु एवं कुटीर उद्योगों को पर्याप्त कार्यशील पूंजी स्वीकृति का अभाव पाया गया क्योंकि राष्ट्रीयकृत बैंकों का झुकाव परम्परागत उद्योगों को ऋण देने के स्थान पर नवीन उद्योगों को ऋण देने में हैं क्योंकि नवीन उद्योगों में बैंक अपने ऋणों को अधिक सुरक्षित महसूस करती हैं परम्परागत धन्धों में लगे ग्रामीणों की संख्या को देखते हुए राष्ट्रीयकृत बैंकों द्धारा 2012-13 में साख के वित्तीय प्रावधान अत्यल्प हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारत का आर्थिक विश्लेषण - आर.सी.सक्सेना एवं पी.एल.मिश्रा (शिक्षा साहित्य प्रकाशन मेरठ)।
2. कु.अनुभा गुप्ता - 'मन्दसौर जिले के कृषि वित्त पोषण में सहकारी एवं राष्ट्रीयकृत बैंको का योगदान एक तुलनात्मक अध्ययन (मन्दसौर जिले के विशेष सन्दर्भ में)' 2004-05 से 2009-10
3. बैंकिंग विधि एवं व्यवहार - डॉ हरिशचन्द्र शर्मा, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
4. वार्षिक साख योजना, अग्रणी बैंक कार्यालय मन्दसौर 2005-06 से 2010-11
5. जिला सांख्यिकी पुस्तिका, मन्दसौर जिला सांख्यिकी कार्यालय 2012
6. म.प्र. संदेश भोपाल।

तालिका

मन्दसौर जिले के पारिवारिक उद्योगों में जनसंख्या संलग्नता

वर्ष	कुल जनसंख्या	कुल कार्यशील जनसंख्या	कार्यशील जनसंख्या की उद्योग संलग्नता	कार्यशील जनसंख्या से उद्योग संलग्नता का प्रतिशत
1991	1555208	724141	10877	1.50
2001	1183724	570329	7899	2.45
2011	1340411	679723	6537	0.96

स्त्रोत - जिला सांख्यिकरण पुस्तिका मन्दसौर-2012

मन्दसौर जिले के पारिवारिक उद्योगों में सामान्यत: कार्यरत व्यक्तियों की संख्या-2011

क्रं.	मद	ग्रामीण		नगरीय		कुल	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
अ	पुरूष	2827	58.4	2044	41.96	4871	100.00
ब	स्त्री	1076	64.59	590	35.41	1666	100.00
स	कुल	3903	59.71	2634	40.29	6537	100.00

स्त्रोत - जिला सांख्यिकरण पुस्तिका मन्दसौर-2012

तालिका

मन्दसौर जिले में लघु एवं कुटीर उद्योगों की संख्या एवं नियोजित

वर्ष	जिला उद्योग केन्द्र के माध्यम से स्तीपित उद्योग		खादी ग्रामोद्योग बोर्ड के माध्यम से स्तीपित लघु एवं कुटीर उद्योग		कुल स्थापित उद्योग		
	संख्या	नियोजित व्यक्ति	संख्या	नियोजित व्यक्ति	संख्या	नियोजित व्यक्ति	प्रतिशत
2008-09	445	2205	49	245	494	2450	15.4
2009-10	601	3009	69	345	670	3354	21.1
2010-11	516	2598	53	265	569	2863	18
2011-12	633	3164	65	325	698	3489	21.92
2012-13	693	3467	58	290	751	3757	23.61
	2888	14443	294	1470	3182	15913	100

स्त्रोत - जिला सांख्यिकी पुस्तिका वर्ष-2013

तालिका

तुलनात्मक स्थिति राशि लाख रूपये में

वर्ष	कृषि	लघु/कुटीर एवं ग्रामोद्योग	अन्य क्षेत्र	कुल प्राथमिक क्षेत्र
2008-09	1247594 (96.00)	27047 (2.58)	18389 (1.42)	1293030 (100.00)
2009-10	1570123 (86.87)	43292 (2.40)	193902 (10.73)	1807317 (100.00)
2010-11	1984278 (81.02)	40080 (1.64)	424740 (17.34)	2449098 (100.00)
2011-12	3363977 (90.74)	26013 (0.17)	317129 (8.56)	3707119 100.0
2012-13	4257974 (90.00)	18193 (0.38)	450074 (9.62)	4726241 (100.00)
योग	12423946 (88.85	154625 (1.10)	1404234 (10.05)	13982809 (100.00)

स्त्रोत - वार्षिक साख योजनाए जिला अग्रणी बैंक मन्दसौर 2005-09-12-13

(नोट - कोष्ठक में दर्शायी गई राशि योग के प्रतिशत को प्रदर्शित करती हैं।**)**

तालिका क्रमांक

लघु एवं कुटीर उद्योग क्षेत्र हेतु बैंकिंग साख के तहसीलदार प्रावधान

(राशि लाख मे) वर्ष

	2008-09		2009-10		2010-11		2011-12		2012-13	
तहसील	**राशि**	**प्रतिशत**	**राशि**	**प्रतिशत**	**राशि**	**प्रतिशत**	**राशि**	**प्रतिशत**	**राशि**	**प्रतिशत**
भानपुरा	1690		2706		2505		1626		1137	
गरोठ	2536		4059		3758		2439		1706	
मल्हारगढ़	2874		4600		4259		2764		1933	
मन्दसौर	10143		16235		15030		9755		6822	
सीतामउ	3381		5412		3010		3252		2274	
शामगढ़	3043		4870		4509		2926		2047	
सुवासरा	2029		3247		3006		1951		1364	
दलौदा	1352		2165		2004		1301		910	
योग	27047	100.0	43292	100.0	40080	100.0	26013	100.0	18193	100.0

स्त्रोत :- जिला साख योजना एवं प्रगति पत्रक अग्रणी बैंक मन्दसौर वर्ष 2008-09 से 2012-13

सर्वेक्षित ग्रामीण एवं लघु उद्योगों पर बैंक साख का प्रभाव

क्रं.	**सर्वेक्षित**	**ऋण पूर्व**	**ऋण पश्चात्**	**आय वृद्धि**
अ	**मुख्य लघु उद्योग**	**आय रूपये में**	**आय रूपये में**	
1	चर्म उद्योग	7200	9360	30.0
2	लकड़ी का कार्य	10200	14400	41.2
3	बम्बू वर्क्स	7920	11520	45.5
4	रेडीमेड	10000	13800	38.0
5	अगरबत्ती	8000	14400	80.0
6	ईंट निर्माण	-	7000	-
7	लेहे का फर्नीचर एवं इंजिनियरिंग कार्य	12000	18500	54.2
8	बुनकर	-	4000	-
ब	**औसतन प्रति परिवार**	4883	7735	58.4

स्त्रोत - व्यक्ति सर्वेक्षण

नोट - ईंट निर्माण एवं बुनकर का कार्य ऋण पश्चात् आरम्भ हुआ अत: वृद्धि दर गणना नहीं करायी जा सकती।

****

पारिश्रमिक व्यवस्था का अध्ययन मालनपुर औद्योगिक क्षेत्र के संबंध में

डॉ. लॉरेन्स कुमार बौद्ध *

शोध सारांश – मालनपुर के उद्योगों के विषय में यह कहा जा सकता है कि श्रमिकों को कम से कम वेतन के सम्बन्ध में कोई असुविधा नहीं है तथा पारिश्रमिक व्यवस्था औद्योगिक क्षेत्र के अनुकूल है यदि सभी श्रमिकों को समय पर वेतन, बोनस, भत्ते आदि प्राप्त नहीं होते है तो इस विपरीत परिस्थिति का होना उनकी कार्यक्षमता पर प्रभाव डाल सकता है इसलिए नियमित वेतन मिलना चाहिए वेतन में कटौति कम से कम होना चाहिए, वेतन वृद्धि समय पर मिलनी आदि समस्त बातें कर्मचारियों की कार्यकुशलता पर प्रभाव डालती हैं यदि उनके वेतन का समय पर भुगतान होता रहता है तो वह घर की चिन्ताओं से मुक्त रहते हैं और उनकी कार्यकुशलता में वृद्धि होना स्वभाविक है। कुछ औद्योगिक इकाईयों को छोड़कर शेष औद्योगिक इकाईयों में पारिश्रमिक व्यवस्था को अधिकार श्रमिकों ने अच्छा बताया है।

प्रस्तावना – पारिश्रमिक से आशय उस भुगतान से है जो कर्मचारी को कार्य की मजदूरी के रूप में दिया जाता है जो साप्ताहिक, पाक्षिक या मासिक होता है पारिश्रमिक की राशि में अन्तर कार्य के घन्टों में परिवर्तन के अनुरूप होता है पारिश्रमिक प्राप्त करने वाले व्यक्तियों की श्रेणी में सामान्यत: कारखानों में कार्य करने वाले श्रमिक तथा अपर्यविक्षकीय कर्मचारियों को शामिल किया जाता है। इस प्रकार पारिश्रमिक वह आर्थिक क्षतिपूर्ति है जो समय (प्रतिदिन,प्रतिघण्टा आदि) के आधार पर श्रमिकों को उनके कार्य एवं सेवाओं के प्रतिफल में दी जाती है। इसके अन्तर्गत परिवार भत्तो, राहत वेतन, वित्तीय सहायता तथा अन्य सामाजिक लाभ सम्मिलित किये जाते हैं।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. पारिश्रमिक व्यवस्था का संबंध पारिश्रमिक के निर्धारण से भी होता है तथा पारिश्रमिक का निर्धारण इस प्रकार किया जाना चाहिए कि श्रमिक अपनी स्वास्थ संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके तथा साथ ही इसमें प्रबन्धकीय सुधार का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। कि प्रबन्धक अपने लाभ को अधिकतम करने के लिए श्रमिकों का पारिश्रमिक कम निर्धारित कर इनका शोषण करते है तथा समुचित पारिश्रमिक का निर्धारण होने से इस प्रकार की समस्या का श्रमिकों को सामना नहीं करना पड़ता है।
2. श्रमिक एक सामाजिक प्राणी है इनकी सामाजिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए ही पारिश्रमिक का निर्धारण किया जाना चाहिए। समुचित पारिश्रमिक का निर्धारण हो जाने से उधमियों के बीच ही उत्पादन लागत को कम करने के लिए श्रमिकों को कम पारिश्रमिक देने की समस्या का समाधान हो जाता है तथा इस व्यवस्था से श्रमिकों को सभी उद्योगों में समान पारिश्रमिक मिलता है।
3. पारिश्रमिक के निर्धारण से उत्पादन संबंधी समस्या का भी समाधान हो जाता है। क्योंकि उचित पारिश्रमिक के निर्धारण से श्रमिक संतुष्ट रहते हैं। इसका प्रभाव उत्पादन वृद्धि पर पड़ता है जिसका लाभ श्रमिक एवं सेवायोजक दोनों को होता है तथा सभी उद्योगों में एक जैसा पारिश्रमिक निश्चित हो जाने से श्रमिक एक उपक्रम को छोड़कर दूसरे उपक्रम में नहीं जाना चाहेगें।
4. पारिश्रमिक व्यवस्था का संबंध औद्योगिक अशान्ति से भी होता है क्योंकि जब श्रमिकों को उनकी कार्य कुशलता के अनुसार पारिश्रमिक नहीं मिलता है तो वह संगठित होकर औद्योगिक अशान्ति के रूप में हड़ताल एवं तालाबंधी जैसे औद्योगिक विवाद उत्पन्न करते है जिसका प्रभाव उत्पादन पर पड़ता है।

उपकल्पना –

1 पारिश्रमिक व्यवस्था का संबंध मुख्यत: श्रमिकों की विभिन्न प्रकार की समस्याओं का हल करवाना है।

2 पारिश्रमिक की स्थिति बहुत अच्छी रही है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत अध्ययन प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के समंकों पर आधारित है। प्राथमिक समंकों का संकलन प्रत्यक्ष व्यक्तिगत अनुंधान पद्धति का प्रयोग करते हुए व्यक्तिगत साक्षात्कार, अवलोकन एवं अनुसूची के माध्यम् से किया गया है तथा द्वितीयक समंको का संकलन अप्रत्यक्ष व्यक्तिगत अनुसंधान पत्र-पत्रिकाओं तथा प्रश्नावली के माध्यम् से आकड़ों को संग्रहित किया गया है।

पारिश्रमिक व्यवस्था का विश्लेषण – प्रस्तुत अध्ययन में पारिश्रमिक व्यवस्था के संबंध में संतुष्टि प्रदान करने वाले घटकों जैसे- समय पर वेतन, भत्ते, वेतन वृद्धि एवं वेतन में कटौति आदि से संबंधित प्रश्नों को सम्मिलित करते हैं। प्रश्नावली 10 प्रतिशत श्रमिकों को प्रदान की गयी। चयनित श्रमिकों से विस्तार एवं गहनता पूर्वक बिन्दु पैमाने पर प्रश्न पूछे गये इस संबंध में उधोगों के श्रमिकों श्रम कल्याण एवं सामाजिक सुरक्षा योजना, पेन्शन एवं ग्रेज्युटी, अवकाश व बोनस से संबंधित वैधानिक प्रावधान है उन्हें प्रश्नों में शामिल नहीं किया क्योंकि यह सुविधाए सभी श्रमिकों को वैधानिक व्यवस्थाओं के अनुसार प्राप्त होना निश्चित है प्रत्येक प्रश्न के संबंध में इन पहलुओं को ज्ञात करने का प्रयास किया गया है –

- यह कि श्रमिक किस सीमा तक पारिश्रमिक व्यवस्था से संतुष्ट है।
- यह कि पारिश्रमिक व्यवस्था से संबंधित विभिन्न कारण कर्मचारियों को किस सीमा तक संतुष्ट कर रहे हैं इसकी गणना करने के लिए

*सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, चिनौर, जिला – ग्वालियर (म.प्र.) भारत

उत्तरों का अंकन चार बिन्दु पैमाने पर प्रत्येक कम्पनी के 10 प्रतिशत कर्मचारियों का अध्ययन किया गया है।

तालिका क्रमांक 01 **(देखे आगे पृष्ठ पर)**

तालिका क्रमांक 02 **(देखे आगे पृष्ठ पर)**

तालिका क्रमांक 02 में पारिश्रमिक व्यवस्था का मूल्यांकन किया गया है। उससे संबंधित निष्कर्ष इस प्रकार है कि पारिश्रमिक व्यवस्था को 33% श्रमिकों ने समान एवं संतोषजनक बताया है जबकि एटलस साइकिल प्रा.लि. में 30% श्रमिकों ने इस व्यवस्था को बहुत अच्छा एवं अच्छा बताया है इसी प्रकार फ्लैक्स इण्डस्ट्रीज लि. 36% श्रमिकों ने इस व्यवस्था को बहुत अच्छा बताया है एस.एम. मिल्कोज प्रा.लि. 32% श्रमिकों ने इस व्यवस्था को बहुत अच्छा एवं संतोष जनक माना है क्राम्प्टन ग्रीब्ज लि. 44% श्रमिकों ने बहुत अच्छा एवं 11% श्रमिकों ने संतोष जनक बताया है। उपरोक्त तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि कुछ औद्योगिक इकाईयों को छोड़कर शेष सभी औद्योगिक इकाईयों में पारिश्रमिक व्यवस्था को अधिकत्तर श्रमिकों द्वारा बहुत अच्छा बताया गया है एक या दो कम्पनियों में ही 33% श्रमिकों द्वारा ही पारिश्रमिक व्यवस्था को संतोषजनक बताया गया है।

निष्कर्ष– यदि किसी उद्योग में पारिश्रमिक व्यवस्था सामान्य स्तर की है तो उसे अन्य उद्योगों की अपेक्षा अच्छे एवं सुयोग्य कर्मचारी मिलना कठिन हो जाता है इसलिए प्रबन्धकों का यह कर्त्तव्य है कि प्रत्येक कार्य की आमदनी का सम्बन्ध उस कार्य के योग्य होना चाहिए और पदोन्नति नीति इस प्रकार की होनी चाहिए जिससे वेतन स्तर में समय–समय पर प्रगति होती रहें। मजदूरी तथा वेतन का स्वरूप ठोस आधारों पर निर्मित हो जिससे कर्मचारियों के बीच एक ही कार्य के लिए होने वाले आपसी मत–भेद को रोका जा सकें यदि ऐसा सम्भव हुआ तो श्रमिकों पर पारिश्रमिक व्यवस्था का पूरा प्रभाव पड़ेग़ा इसलिए पारिश्रमिक व्यवस्था के संबंध में प्रबंधकों का यह प्रमुख कार्य है कि पारिश्रमिक के लिए उचित नीतियों का निर्माण कर समुचित पारिश्रमिक का निर्धारण किया जाये जिससे स्वास्थ, प्रबन्धकीय सुधार, सामाजिक प्रतिष्ठा, औद्योगिक उत्पादन एवं औद्योगिक विवाद संबंधी समस्त समस्याओं का हल हो सकें। अत: अध्ययन की प्रथम उपकल्पना प्रमाणित होती है। उपरोक्त तालिकाओं के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अधिकत्तर श्रमिकों द्वारा पारिश्रमिक व्यवस्था को बहुत अच्छा माना गया है अत: अध्ययन की द्वितीय उपकल्पना स्वयं सिद्ध होती है।

सुझाव – निष्कर्ष को देखकर लगता है कि पारिश्रमिक व्यवस्था एक से एक अच्छी और उचित ढ़ाँचे पर बनाई जा सकती है परन्तु श्रमिकों एवं प्रबंधकों द्वारा यह समझा जाता है कि पारिश्रमिक व्यवस्था उसी समय दोनों पक्षों द्वारा मान्य होगी जब निम्न बातें व्यवस्था में पायी जायेगी –

- प्रबन्धक पारिश्रमिक व्यवस्था में केवल अपने लाभार्जन का ध्यान न दें।
- पारिश्रमिक प्राप्त करने वाला इस बात का अनुभव करें कि पारिश्रमिक व्यवस्था द्वारा उसकों भौतिक लाभ हो।
- पारिश्रमिक उद्योग स्तर पर कर्मचारियों एवं प्रबंधकों में आपसी सौहार्द को जन्म दे यह उसी समय सम्भव है जब आपस में भागीदारी की भावना का सर्जन हो।
- अन्त में आर्थिक दृष्टि से पारिश्रमिक का अध्ययन कर यह स्पष्ट होता है कि उत्पादन में लागत भी अधिक न हो पर पारिश्रमिक भी इतना कम न हो कि कार्य की तेजी में कमी आ जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. भगोलीबाल टी.एन. (2001) श्रम अर्थशास्त्र एवं औद्योगिक सम्बन्ध साहित्य भवन आगरा पृष्ठ क्र. 437, 438
2. डॉ. मामोरिया, मामोरिया एवं दशोरा (1996) सेविवर्ग प्रबन्ध एवं औद्योगिक सम्बन्ध साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा पृष्ठ क्र. 321
3. डॉ. सक्सेना एस.सी. (1994) सेविवर्गीय प्रबंध साहित्य भवन प्रकाशन आगरा पृष्ठ क्र. 318
4. डॉ. नौलखा आर.एल. (2007) औद्योगिक सन्नियम् रमेश बुक डिपो जयपुर, नई दिल्ली पृष्ठ क्र. 396, 397
5. अग्रवाल जी.के. एवं पाण्डेय एस.एस. (2001) सामाजिक शोध, आगरा बुक स्टोर, आगरा पृष्ठ क्र. 15
6. डॉ. मुन्जाल एस. (1999) रिसर्च मैथडोलाजी राज पब्लिकेशन हाउस, जयपुर पृष्ठ क्र. 02

तालिका क्रमांक 01

पारिश्रमिक व्यवस्था का विश्लेषण

क्र.	औद्योगिक इकाई का नाम	बहुत अच्छी	अच्छी	सामान्य	संतोषजनक	योग
1.	गोदरेज कन्ज्यूमर्स प्रा.लि.	17	17	33	33	100
2.	एटलस साईकिल लि.	75	75	50	50	250
3.	फ्लैक्स इण्डस्ट्रीज लि.	20	15	10	10	55
4.	एस.एम. मिल्कोज प्रा.लि.	07	04	04	07	22
5.	जय मारूति गैस सिलेण्डर्स लि.	05	04	03	03	15
6.	मै. एस.आर.एफ. लि.	10	10	15	15	50
7.	मै. सूर्या रोशनी लि.	25	20	15	10	70
8.	स्टर्लिंग एग्रो इण्डस्ट्रीज लि.	08	05	10	07	30
9.	कैडवरी इण्डस्ट्रीज लि.	05	04	02	01	12
10.	क्राम्प्टन ग्रीब्ज लि.	08	05	03	02	18

तालिका क्रमांक 02

पारिश्रमिक व्यवस्था का मूल्यांकन

क्र.	औद्योगिक इकाई का नाम	बहुत अच्छी	अच्छी	सामान्य	संतोषजनक	योग
1.	गोदरेज कन्ज्यूमर्स प्रा.लि.	17%	17%	33%	33%	100%
2.	एटलस साईकिल लि.	30%	30%	20%	20%	100%
3.	फ्लैक्स इण्डस्ट्रीज लि.	36%	27%	19%	18%	100%
4.	एस.एम. मिल्कोज प्रा.लि.	32%	18%	18%	32%	100%
5.	जय मारूति गैस सिलेण्डर्स लि.	33%	27%	20%	20%	100%
6.	मै. एस.आर.एफ. लि.	20%	20%	30%	30%	100%
7.	मै. सूर्या रोशनी लि.	36%	28%	21%	15%	100%
8.	स्टर्लिंग एग्रो इण्डस्ट्रीज लि.	27%	17%	33%	23%	100%
9.	कैडवरी इण्डस्ट्रीज लि.	42%	33%	17%	08%	100%
10.	क्राम्प्टन ग्रीब्ज लि.	44%	28%	17%	11%	100%

****

पश्चिम निमाड़ नगर पालिकाओं की आय के आर्थिक संसाधनों का अध्ययन

प्रीति शाह *

प्रस्तावना - आधुनिक युग में वित्त धुरी है। जिसके चारों और स्वायत्ता संस्थाओं की समस्त क्रियाओं एवं समस्याएं चक्कर लगाती हैं। दयनीय स्वायत्ता संस्थाओं की कोई भी क्रिया, कोई भी योजना को कैसा भी आयोजन वित्ता के अभाव में अधूरा है। संस्थाओं के कार्यद्धक्षेत्र ज्यो-ज्यो विस्तृत होते जाएंगे, वैसे-वैसे वित्त की आवश्यकता एवं महत्तव भी व्यापक एवं विस्तृत होती जाएगी। वित्त की व्यवस्था करना व नगरवासियों को आधुनिक सुख सुविधाओं के साधन उपलब्ध कराना स्वास्थ्य एवं चिकित्सा के साधनों का प्रबंध करना स्थानीय नगरीय निकायों यानी स्वायत्ता संस्थाओं के कंधों पर है। अत: यह स्वायत्ता संस्थाओं द्धारा धन एकत्रित करने एवं उसकी प्रणाली, क्रिया एवं सिद्धांतों का अध्ययन सबसे महत्वपूर्ण है। साथ ही यह लाभदायक भी है। दूसरी ओर जनता में राजनीतिक जागृति का प्रसार करने में भी यह सहायक होगा।

नगर पालिका द्धारा नगरी जनता के लिए विभिन्न प्रकार की सेवाएं प्रदान की जाती हैं। आर्थिक विकास की योजनाएं बनाकर सामाजिक विकास एवं सामाजिक उत्थान का प्रयत्न करती है। इन सभी सामाजिक एवं जन उपयोगी कार्यो के लिए धन व द्रव्य की आवश्यकता होती है, जो जनता से नगरपालिकाएं कर रूप में एकत्रित करती है।

उद्देश्य- प्रस्तुत शोध पत्र के निम्नलिखित प्रमुख उद्देश्य हैं-

1. नगर पालिका की वर्तमान आय के संसाधनों का आंकलन करना।
2. आय प्राप्त ना होने के कारणों का पता लगाना।
3. नगर पालिकाओं के आय के संसाधनों में वृद्धि करना एवं व्ययों को नियंत्रित करना होता है।
4. नगर पालिकाओं को आ रही वित्त व्यवस्था संबंधी समस्याओं को जानना एवं उनके हल के लिए सुझाव देना।
5. नगर पालिकाओं की वित्ता व्यवस्था का आलोचनात्मक अध्ययन करना।

शोध संकल्पना :

1. निकायों के पास आय प्राप्त करने के संसाधनों का अभाव होता है।
2. निकायों को प्राप्त करों की राशि प्रशासन संबंधी व्यवस्थाओं के लिए अपर्याप्त है।
3. निकायों में करों की वसूली के प्रति नियंत्रण व्यवस्था का अभाव है।
5. नगरपालिकाओं को केंद्र सरकार एवं राज्य सरकार से अनुदान प्राप्त करने में अनेक प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।
6. वर्तमान में नगरपालिकाएं घाटे में चल रही हैं, इसकी वजह से जनकल्याण योजनाएं प्रभावित हो रही हैं।
7. वित्तीय स्थिति कमजोर होने के कारण नगरपालिकाएं आवश्यक संसाधन जुटाने में सद्धम नहीं रही है।

इन तमाम परिस्थितियों का अध्ययन करना।

शोध सारांश- मध्यप्रदेश नगर पालिका अधिनियम के तहत नगर पालिका को विविध साधनों से आय प्राप्त होती है। यात्री द्धक्षतिपूर्ति अनुदान व चूंगी अनुदान, द्धक्षतिपूर्ति, संपत्तिा कर, समेकित कर, मल वाहन कर, विज्ञापन कर, पशु बाजार फीस, बाजार ठेका फीस, कांजी हाउस से प्राप्त आय, भवन किराया, भू-भाटक, राशन कार्ड, विभिन्न लाइसेंस फीस आदि शामिल है।

पश्चिम निमाड़ की निकायों के आय के संसाधनों का अध्ययन करने पर पाया गया कि:- बड़वानी, खरगोन, बड़वाह निकायों के पास मुख्य आय के नाम पर संपत्तिा कर रही है। वहीं सेंधवा और सनावद निकायों के पास आय के दो प्रमुख निर्यात कर एवं संपत्ति कर से प्राप्त आय है।

निकायों को अन्य स्त्रोतों से प्राप्त आय एवं विभिन्न स्त्रोतों से आय के अंतर्गत भवन किराया, दुकान प्रीमियम किराया, कांजी हाउस, नवीन लाइसेंस फीस, वधशाला ठेका, आवेदन फीस, पुराने भंडारों के विक्रय से आय, खुली भूमि किराया नामांतरण शुल्क, फायर सेवा शुल्क आदि है। उपर्युक्त सभी प्रकार के कर से ऐसे हैं, जिनसे प्राप्त आय नियमित एवं स्थाई नहीं है। किसी वर्ष निकायों को आय प्राप्त होती है तो किसी वर्ष नहीं। या फिर किसी वर्ष से अधिक आय प्राप्त होती है तो किसी वर्ष अचानक से कमी हो जाती है।

चुंगी कर एवं यात्री कर की समाप्ति से निकायों को गहरा झटका प्राप्त हुआ है। परिणाम स्वरूप निकायों की वित्तीय स्थिति दिन-ब-दिन जर्जर होती रही। चुंगी कर एवं यात्री कर से निकायों को अपनी कुल आय का एक बड़ा भाग प्राप्त होता था, चूंकि शासन द्धारा अब निकायों को वित्तीय सहायता के रूप में चुंगी कर एवं यात्री कर क्षतिपूर्ति अनुदान दिया जाने लगा और यह भी आश्वासन दिया गया कि यह प्रतिवर्ष क्षतिपूर्ति अनुदान की राशि 10 प्रतिशत बढ़ाकर प्रदान की जाएगी, परंतु शासन यह वादा पूरा करने में असक्षम रहा।

स्थानीय स्वायत्ता शासन संस्थाओं को आदेश है कि प्रत्येक 3 वर्ष में कर निर्धारण सूची में संशोधन कर सकते हैं, लेकिन निमाड़ क्षेत्र के निकायों द्धारा ऐसा नहीं किया जाता है। फलस्वरुप कर निर्धारण सूची पुरानी हो जाती है और करों की दरों में महंगाई की वृद्धि के अनुरूप वृद्धि नहीं हो पाती है।

कर निर्धारण वर्तमान नियमों के अनुसार संपत्तिा के पूरे किराए पर नहीं लगा पाता है। कर निर्धारकों की अयोग्यता एवं स्थानीय राजनीतिज्ञों के दबाव आदि के फलस्वरुप सही करारोपण नहीं हो पाता है। करारोपण

* शोधार्थी (कॉमर्स) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

आदेश के विरुद्ध अपील का प्रावधान होता है। नगरपालिका के प्रधान अथवा उसकी समिति द्वारा अपीलें सुनी जाती है। अपील की राशि घटा देने की प्रवृत्ति सामान्य रूप से देखी जाती है।

आय का अध्ययन करने पर यह भी पाया गया कि सभी माध्यमों से प्राप्त है स्थाई नहीं है। किसी वर्ष अधिक है तो किसी वर्ष कम है। जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ में भी करों में वृद्धि होना चाहिए परंतु व्यवहार में ऐसा नहीं होता है। साथ ही निकायों की वसूली उचित तरीके से व सही समय पर नहीं हो पाती है। अत: करों की वसूली के प्रति नियंत्रण व्यवस्था का अभाव है। परिणामस्वरूप एक बहुत बड़ा भाग कर के रूप में बकाया हो जाता है। अत: निकायों के पास यह समस्या उत्पन्न हो जाती है कि जहां एक ओर आय के संसाधनों की कमी है, वहीं दूसरी ओर सीमित संसाधनों से आय अपर्याप्त हैं।

नगरपालिकाओं को अनुदान प्राप्त करने में भी अनेक प्रकार की औपचारिकताओं एवं कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। केंद्र सरकार द्वारा विशेष योजनाओं के अंतर्गत ही सहायता दी जाती है और उसे स्वीकृत कराने हेतु केंद्र सरकार के नई दिल्ली मुख्यालय के समक्षद्ध प्रस्तुत करना होता है। जहां पर परिषद के अध्यक्ष एवं अधिकारियों का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। साथ ही राजनीतिक पहुंच की आवश्यकता होती है। उपरोक्त योग्यताओं का अभाव निकायों पर अप्रत्यद्ध रूप से प्रभाव डालता है। जनप्रतिनिधियों द्वारा राजनीतिक पहुंच का सहारा लेकर अनुदान प्राप्त भी कर लिया जाता है, लेकिन प्राप्त अनुदान की राशि पूर्ण रूप से जिस उद्देश्य के लिए शासन से मांगी गई होती है, उस हेतु व्यय नहीं की जाती है। सहायता राशि का अधिकांश भाग जनप्रतिनिधि एवं बड़े अधिकारियों द्वारा हड़प ली जाती है। बहुत कम भाग निकाय कार्य हेतु बच पाता है।

स्थानीय निकायों को आर्थिक रुप से मजबूत बना कर उन्हें स्वायत्ता संस्था के रूप में विकसित किया जाए। इस तरह की व्यवस्था करना अपने आप में एक चुनौती है। इसकी वजह यह है कि आज भी नगरीय निकाय यानी नगर पालिकाएं वित्त प्रबंधन के लिए शासन पर ही निर्भर है।

निष्कर्ष– शासन की मंशा रही है कि स्थानीय स्तर पर ही नगर पालिकाएं करारोपण करें। उनकी बेहतर वसूली करके अपने स्थानीय नागरिकों को बेहतर से बेहतर सुविधा मुहैया कराने का प्रयास करें, लेकिन वर्तमान में यह देखने में आया है कि नगरपालिका शासन की मंशा पर खरी नहीं उतरी पा रही है। परिणामस्वरुप आज हालात यह हैं कि हर निर्माण से लेकर जनता की सुख सुविधाओं की खातिर नगरपालिकाएं यानी नगरी निकायों को शासन की ओर देखना होता है। इसमें केंद्र सरकार से लेकर राज्य सरकार की विभिन्न निधियों से ही उसका आर्थिक पोषण हो पाता है। जबकि परिषद ही करों के माध्यम से स्थानीय व्यवस्थाओं को पोषित किया जाना चाहिए। जिससे कि वह आर्थिक रुप से आत्मनिर्भर होकर अपनी विकास संबंधी गतिविधियों से लेकर अपने स्थापना व्यय को खुद संभाल सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. खरगोन बडवानी जिले की नगर पालिकाओं के आय व्यय लेखे व वार्षिक रिपोर्ट
2. नगर पालिकाओं द्वारा प्रकाशित पत्रिकाएं
3. इकोनॉमिक्स टाइम्स

****

किसान क्रेडिट कार्ड योजना में जिला सहकारी केंद्रीय बैंक मर्यादित मंदसौर का योगदान

कीर्ति सक्सेना * डॉ. एन. के. पाटीदार **

प्रस्तावना – म.प्र. में इसका नाम मध्य प्रदेश राज्य सहकारी बैंक मर्यादित (M.P state cooperative bank Limited) रखा गया। भारत में सहकारी बैंक की शुरुआत 1904 में सहकारी साख समिति अधिनियम के अंतर्गत हुआ किन्तु सहकारी बैंक को आजादी के बाद बढ़ावा मिला तभी से सहकारी समितियां कृषकों को साख उपलब्ध करने में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। भारत में साख सहकारिताओं का स्वरुप संघीय कार्य विभाजन के आधार पर संगठित किया गया है। भारत में कुल कृषि ऋण में 21% योगदान सहकारी साख समितियों का है। प्राथमिक कृषि साख समितियां ग्रामीण स्तर पर स्थापित की गई। प्राथमिक समितियों का निर्माण 10 या 10 से अधिक ग्रामीण लोग करते है। इसके लिए रजिस्ट्रेशन करना होता है। यह समितियां उत्पाद कार्यो के लिए सदस्य या गैर सदस्यों को ऋण देती है। ब्याज से प्राप्त लाभ सभी सदस्यों में बांटा जाता है । इसमें एक वर्ष के लिए ऋण दिया जाता है परन्तु इसे तीन वर्ष तक बढा सकते है।

केंद्रीय सहकारी बैंक – यह बैंक जिला स्तर पर कार्य करती है तथा यह बैंक दो प्रकार के होते है।

(i) सहकारी युनियन बैंक – इसकी सदस्यता केवल सहकारी समितियां लेती है।

(ii) मिश्रित सहकारी बैंक – सहकारी समितियां या कोई व्यक्ति सदस्य हो सकता है। भारत में मिश्रित सहकारी बैंक है, जिनकी सदस्यता सहकारी बैंक लेती है। यह राज्य सहकारी बैंको से ऋण लेते है, और प्राथमिक समितियों को ऋण देते है। यह एक से तीन वर्ष के लिए ऋण देते है। अब इसकी अवधि 5 वर्ष कर दी गई है। राज्य सहकारी बैंक अथवा सहकारी शीर्ष बैंक राज्य स्तर पर स्थापित किए गए है। राज्य सहकारी बैंक राज्य में सहकारी आंदोलन का शीर्ष बैंक होता है। राज्य सहकारी बैंक (नाबार्ड) RBI से ऋण लेती है और केंद्रीय सहकारी बैंको को ऋण देती है और इसके द्वारा नियंत्रण, नियमन और निर्देशन किया जाता है। मध्य प्रदेश राज्य सहकारी बैंक लिमिटेड (M-P state cooperative bank limited) का पंजीकरण दिनांक 2-4-1912 धारा (2) के अंतर्गत जबलपुर में (Provisional Co Operative Bank Ltd Central Providence) के नाम से किया गया था तथा इसके पश्चात बैंक का मुख्यालय नागपुर में स्थानांतरित हुआ।

सहकारी बैंक द्वारा अपना व्यवसाय कार्य मात्र 5 लाख की पूंजी से प्रारम्भ किया गया था। जिसका प्रमुख उद्देश्य कृषि ऋण हेतु वित्ता पोषण देना था। प्रारम्भ में बैंक के बोर्ड ऑफ डायरेक्टर के लिए व्यक्तिगत शेयर होल्डरों को नामांकित किया जाता था ताकि बैंक को लोकतान्त्रिक दर्जा दिया जा सके भविष्य में बैंक द्वारा संकलित अधिकतम शेयरों को सहकारी संस्थाओं में एवं जिला सहकारी केंद्रीय बैंकों में स्तान्तरित किया गया ताकि बैंक के बोर्ड में संस्थागत प्रतिनिधि आ सके। वर्ष 1956 में मध्य प्रदेश सहकारी लिमिटेड बैंक नागपुर का विभाजन होने से महा कौशल सहकारी बैंक जबलपुर का निर्माण हुआ। जिसमें 14 जिला सहकारी बैंक सम्बद्ध हुए वर्ष 1956 में ही देश में राज्यों का पुनर्गठन होने से 1 नवंबर 1956 को मध्य प्रदेश राज्य का गठन हुआ। ट्रस्ट के साथ महा कौशल सहकारी बैंक का नाम बदलकर मध्य प्रदेश राज्य सहकारी बैंक मर्यादित (MP State Cooperative Bank Limited) रखा गया।

मध्य प्रदेश राज्य सहकारी बैंक की स्थापना के बाद राज्य सहकारी केंद्रीय बैंक के द्वारा ही राज्य के सभी प्राथमिक सहकारी बैंको को ऋण प्रदान करने की व्यवस्था की जाती है। मध्य प्रदेश राज्य सहकारी केंद्रीय बैंक मर्यादित भोपाल (अपेक्स बैंक) ने प्रत्येक जिले में एक सहकारी केंद्रीय बैंक की स्थापना की है। म.प्र. में जिला सहकारी केंद्रीय बैंको की वास्तविक प्रगति 1920 से पूर्व मानी जाती है। मध्य प्रदेश में राज्य सहकारी बैंक समेत 38 जिला केंद्रीय सहकारी बैंक कार्यरत है। इसमें 4530 प्राथमिक कृषि साख सहकारी समितियां कार्यरत है।

वर्ष 1918 में जिला सहकारी केंद्रीय बैंक मर्यादित, मंदसौर के नाम से बैंकिंग शाखा की स्थापना की गई थी। इसका कार्य-क्षेत्र मंदसौर एवं नीमच जिला है। जिला सहकारी केंद्रीय बैंक मर्यादित मन्दसौर की 35 शाखाएँ एवं 172 प्राथमिक कृषि सहकारी समितियों का गठन मन्दसौर व नीमच जिले के कृषकों की कृषि एवं कृषि से सम्बंधित आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया गया था। म.प्र. में कृषको को 0 ब्याज दर पर अल्पकालीन कृषि ऋण उपलब्ध करवाया जा रहा है और समस्त प्राथमिक कृषि साख सहकारी संस्थाओं के किसान क्रेडिट कार्डधारी कृषकों को कार्ड प्रदान किया जा रहा है जिसमें किसानों को अन्य बैंकिंग सुविधाओं का लाभ प्राप्त हो सके।

साख सीमा निश्चित करने का आधार

किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अन्तर्गत भारतीय रिजर्व बैंक तथा नाबार्ड द्वारा किसानों को ऋण सीमा स्वीकृत करने में मुख्यत तीन आधार सुझाये गए थे।

1. किसानों द्वारा धारित कृषि योग्य भूमि के आधार पर
2. फसल चक्र के अनुसार जिला स्तरीय तकनीकी समिति द्वारा वित्तीय सीमा का निर्धारण किया जाता है।
3. जहाँ पर जिला स्तरीय एवं राज्य स्तरीय तकनीकी समिति द्वारा कोई अनुशंसा नहीं की वह पर जिला सहकारी बैंको को ऋण सीमा निश्चित करने का अधिकार दिया गया है।

* शोधार्थी, पेसिफिक यूनिवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत
** प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय आर. वी. महाविद्यालय, मनासा (म.प्र.) भारत

प्राथमिक कृषि साख समितियों PACS (Primary Agriculture Credit Society)

तकनीकी समूह की बैठक 1 दिसंबर को होती है एवं रिपोर्ट मार्च में जारी होती है। अल्पकालीन कृषि ऋणों के फसलवार (खरीब एवं रबी) मानदंड निर्धारित करने हेतु जिला कलेक्टर की अध्यक्षता में जिला स्तरीय तकनीकी समूह की बैठक आयोजित की जाती है। ऋण सीमा प्रति वर्ष घटती बढ़ती रहती है। फसलवार प्रति हेक्टेयर ऋण उत्पादन एवं कृषि उपज मंडी मन्दसोर एवं नीमच में फसलवार औसत प्रति क्विंटल विक्रय के आधार पर ऋण आदायगी क्षमता का निर्धारण होता है, एवं फसलवार प्रति हेक्टेयर औसत उत्पादन लागत, व्यय पत्रक के आधार पर रबी तथा खरीब के ऋणमान हेतु फसलवार नगद तथा वस्तु प्रति हेक्टेयर ऋणमान निर्धारित किया जाता है। किसान क्रेडिट कार्ड योजना में किसानो को दिए गए ऋण की प्रवृति पात्र किसान सदस्यों को साख सीमा पत्रक उनके द्वारा धारित कृषि भूमि के आधार पर अधिकतम तीन वर्ष की अवधि के लिए तैयार किया जाता है। जिसे बढ़ाकर 5 वर्ष किया गया एवं किसान की ऋण अदायगी के आधार पर रिन्यू हो जाता है। जिसमें खरीफ एवं रबी मौसम के लिए प्रतिवर्ष होने वाली तकनीकी समूह की बैठक में निर्धारित ऋण मान के अनुसार कृषकों द्वारा बोई जाने वाली फसल एवं ऋण सीमा का अलग अलग उल्लेख रहता है। प्रत्येक हितग्राही को ऋण का वितरण खरीब एवं रबी मौसम के लिए निर्धारित पृथक-पृथक ऋण सीमा के अनुसार किया जाता है।

कृषक सदस्यों को अल्पावधि कृषि ऋण उनकी पात्रता के अनुसार नगद अथवा वस्तु ऋण साख सीमा पत्रक के अनुसार किसान क्रेडिट कार्ड के माध्यम से म.प्र. शासन के निर्देशानुसार 0(जीरो) प्रतिशत ब्याज दर पर ऋण उपलब्ध कराया जाता है। जिसमे रासायनिक खाद, जैविक खाद कीटनाशक दवाइयाँ एवं उन्नत उत्पादन बीज वस्तु ऋण कुल ऋण का 20% प्रदान किया जाता है।

किसान क्रेडिट कार्ड द्वारा अल्पावधि ऋण वितरण करने की अवधि

क्रमांक	फसल का नाम	ऋण वितरण की अवधि
1	खरीब फसल हेतु (सोयाबीन)	1 अप्रैल से 30 सेप्टेम्बर
2	रबी फसल (गेहू, चना)	1 ऑक्टूबर से 31 मार्च
3	गन्ना	1 ऑक्टूबर से 31 मार्च
4	आलू	1 ऑक्टूबर से 31 मार्च
5	फलोधान	1 जून से 31 दिसम्बर

किसान क्रेडिट कार्ड योजना में किसानों को दिए गए ऋण की मात्रा किसान क्रेडिट कार्ड योजना (KCC) कृषि क्षेत्र में अल्पकालीन वित्त पोषण की एक अनूठी योजना है। इस योजना के लागू होने के पश्चात से नीमच जिले में किसान क्रेडिट कार्ड धारी (हितग्राहियो) की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है। किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अंतर्गत 0% ब्याज दर पर किसानों के ऋण सुविधा का लाभ प्रदान करने हेतु शत प्रतिशत पात्र कृषको के सदस्यता प्रदान कर उन्हें आर्थिक मदद पहुंचने का सहकारी बैंक का संकल्प है।

मध्य प्रदेश सरकार द्वारा 2015-16 से मुख्य मंत्री कृषक सहकारी सहायता योजना (रबी) लागू की गयी है। इसमें एक किसान के एक वर्ष (खरीब रबी) में लिए गए (खाद्बीज) में अधिकतम 10000 रु की छूट प्रदान की जाती है। जिला सहकारी केंद्रीय बैंक मर्यादित, मंदसौर (मध्य प्रदेश) सहकारी बैंक के किसान क्रेडिट कार्ड धारक किसानो की संख्या 31 मार्च 2017 तक 2.99568 लाख है। मंदसौर एवं नीमच जिले के कुल किसान क्रेडिट कार्ड धारी सदस्यों की संख्या वर्ष 2011-12 से 2015-16 तक का विवरण तालिका में किया गया है।

सहकारी बैंक के किसान क्रेडिट कार्ड धारी सदस्यों की संख्या (मंदसौर एवं नीमच) (वर्ष 2011-12 से 2015-16 तक)**(सारिणी देखे आगे पृष्ठ पर)**

जिला सहकारी केंद्रीय बैंक मर्यादित मंदसौर एवं नीमच के किसान क्रेडिट कार्ड धारी सदस्यों की संख्या मई वर्ष 2011-12 मई 259520 थी तथा यह संख्या 2015-16 तक 281050 तक हो गई इस प्रकार तालिका के अनुसार प्रत्येक वर्ष किसान क्रेडिट कार्ड धारी कृषको की संख्या में निरंतर वृद्धि हुई है। मंदसौर जिले एवं नीमच जिले में अधिक कृषि उत्पादन करने एवं कृषक सदस्यों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाने, सिंचाई की सुविधा बढ़ाने तथा उन्नत खाद बीज, खाद उपलब्ध करने के लिए सहकारी बैंक ने उल्लेखनीय प्रयास किए है। किसानों को अल्पविधि ऋण वस्तु रूप में ऋण का 20प्रतिशत खाद एवं बीज के लिए दिया जाता है एवं ऋण का 80प्रतिशत अल्पावधि ऋण नगद दिया जाता है।

मंदसौर एवं नीमच जिले में पिछले 5 वर्षो में ऋण वितरण की जानकारी का उल्लेख तालिका में किया गया हैं, समितियों को ऋण वितरण की जानकारी निम्न लिखित है

किसान क्रेडिट कार्ड द्वारा ऋण का वितरण (मंदसौर एवं नीमच)**(सारिणी देखे आगे पृष्ठ पर)**

तालिका से स्पष्ट होता है की वर्ष 2012 मार्च तक 46480.11 लाख रु का ऋण वितरित किया गया था एवं 2016 मार्च तक बढ़कर 91093.16 लाख हो गया इस प्रकार वर्ष 2015 तक निरंतर वृद्धि हुई है किन्तु वर्ष 2016 मे ऋण वितरण में थोड़ी कमी आयी है इसका कारण कृषको के जीवन स्तर में वृद्धि है वर्ष 2017 मार्च तक अल्पावधि ऋण (वस्तु रूप मे) 12293.54 एवं अल्पावधि ऋण (नगद) 73519.89 लाख रु दिया गया। इस प्रकार तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि विगत 5 वर्षो में मंदसौर एवं नीमच जिले में के.सी.सी. योजना के अंतर्गत कृषको की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है।

निष्कर्ष -

1. सर्वेक्षण में यह पाया गया कि जो कृषक सहकारी बैंको के माध्यम से के.सी.सी. योजना के द्वारा साख प्राप्त कर रहे है, उनको ब्याज का भुगतान नहीं करना पड़ता है। इस कारण उनकी आय में तेजी से वृद्धि ही रही है और वे साहूकारों व महाजनो के चुंगुल से मुक्त हुए है।
2. सर्वेक्षण में यह पाया गया कि इस योजना का सर्वाधिक लाभ माध्यम तथा बड़े कृषको को मिला है। जिले में 77: कृषक ऐसे है जिनके पास 2 हेक्टेयर से कम भूमि है। लघु कृषक इस योजना का लाभ उठाने में असफल रहे है।
3. किसान क्रेडिट कार्ड योजना के माध्यम से जिले में सहकारी बैंको द्वारा सर्वाधिक ऋण प्रदान किये गए है ।
4. किसान क्रेडिट कार्ड योजना कृषि क्षेत्र में अल्पकालीन वित्ता पोषण की एक अनूठी योजना है, यही कारण है कि 19 वर्ष के अन्तर्गत ही सम्पूर्ण देश में इस योजना को क्रियान्वित किया जा चूका है। मध्य प्रदेश में जिला सहकारी केंद्रीय बैंक मर्यादित की शाखाओं द्वारा 0 प्रतिशत ब्याज दर पर एक वर्ष के लिए ऋण प्रदान किया जा रहा है।
5. प्रधान मंत्री फसल बिमा योजना के माध्यम से सभी हितग्राही कृषकों का फसल बिमा अनिवार्य रूप से किया जा रहा है। जिसका प्रीमियम

लिए गये ऋण पर 2% खरीब की फसल एवं 1.5% रबी की फसल पर प्रीमियम के रूप में सीधे अकाउंट से काट लिया जाता है। यह प्रीमियम की राशि बहुत कम है और जोखिम होने की स्थिति में लाभ अधिक मात्रा में दे रही है। इसके द्वारा भी हितग्राही कृषको की सामाजिक सुरक्षा में वृद्धि और आय में वृद्धि हुई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. किसान क्रेडिट कार्ड एक अध्ययन (2010), आर्थिक विश्लेषण और अनुसंधान विभाग मुंबई।
2. नाबार्ड।
3. कुरुक्षेत्र।
4. योजना।
5. वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण (95, 96, 97)
6. जिला सहकारी केंद्रीय बैंक मर्यादित मंदसौर।

सहकारी बैंक के किसान क्रेडिट कार्ड धारी सदस्यों की संख्या (मंदसौर एवं नीमच) (वर्ष 2011-12 से 2015-16 तक)

विवरण	वर्ष 2011-12	वर्ष 2012-13	वर्ष 2013-14	वर्ष 2014-15	वर्ष 2015-16
शाखाओं की संख्या	35	35	35	35	35
क्रेडिट कार्ड धारी	259520	264645	269737	272780	281050
सदस्यों की संख्या					

स्त्रोत रू- जिला सहकारी केंद्रीय बैंक मर्यादित मंदसौर

किसान क्रेडिट कार्ड द्वारा ऋण का वितरण (मंदसौर एवं नीमच)

विवरण	31.03.2012	31.03.2013	31.03.2014	31.03.2015	31.03.2016
अल्पावधि ऋण (वस्तु रूप मे)	7992.51	11501.80	13687.87	13114.68	13241.97
अल्पावधि ऋण (नगद)	38487.60	55508.33	68784.35	88014.79	77851.19
योग	46480.11	67010.13	82472.22	101129.47	91093.16

(राशि लाखों में)स्त्रोत- जिला सहकारी केंद्रीय बैंक मर्यादित मंदसौर (96 एवं 99 वा वार्षिक प्रतिवेदन एवं लेखा विवरण)

****

सामुदायिक विकास में नाबार्ड का अभिदान

डॉ. संध्या आमगा *

प्रस्तावना - नाबार्ड की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि - आयोजन प्रक्रिया के आरंभिक चरण से ही भारत सरकार की यह स्पष्ट धारणा रही है कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को गति देने में संस्थागत ऋण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, इसलिए महत्वपूर्ण पहलुओ के गहन उद्देश्य से भारत सरकार के निर्देशानुसार भारतीय रिजर्व बैंक में कृषि और ग्रामीण विकास के लिए संस्थागत ऋण की व्यवस्था की समस्या के लिए समिति (क्रैफिकार्ड) गठित की। श्री बी.शिवरामन, पूर्व सदस्य, योजना आयोग, भारत सरकार की अध्यक्षता में 30 मार्च 1979 को समिति का गठन किया गया।

28 नवम्बर 1979 को समिति ने अपनी अन्तरिम रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिसमें ग्रामीण विकास से जुड़े ऋण से संबंधित मुद्दों पर एकनिष्ठ ध्यान केन्द्रित करने और उन्हेंसशक्त दिशा देने के लिए एक संगठनात्मक साधन की आवश्यकता रेखांकित की गई। समिति ने एक ऐसे अलग तरह की विकास वित्तीय संस्था के गठन की अनुशंसा की जो इन आकांक्षाओं की पूर्ति करें। संसद ने 1981 के अधिनियम 61 के माध्यम से राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) के गठन का अनुमोदन किया।

भारतीय रिजर्व बैंक के कृषि ऋण कार्यो और तत्कालीन कृषि पुनर्वित्त और विकास निगम (एआरडीसी) के पुनर्वित्त कार्यो के अन्तरण द्वारा नाबार्ड 12 जुलाई 1982 को अस्तित्व में आया। स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी ने 5 नवम्बर 1982 को यह सेवा राष्ट्र को समर्पित की। नाबार्ड की आरंभिक पूंजी रु. 100 करोड़ थी, जो 31 मार्च 2015 की स्थिति के अनुसार रु. 5 हजार करोड़ है। इसका मुख्यालय मुम्बई में है।

नाबार्ड की भूमिका और कायन - ग्रामीण समृद्धि के फेसिलिटेटर के रूप में अपनी भूमिका का विर्वाह करने के लिए नाबार्ड को निम्नलिखित जिम्मेदारियाँ सौपी गई है-

1. ग्रामीण क्षेत्रों में ऋणदाता संस्थाओं को पुनर्वित्त उपलब्ध कराना।
2. संस्थागत विकास करना या उसे बढ़ावा देना।
3. क्लाइन्ट बैंकों का मूल्यांकन, निगरानी और निरीक्षण करना।
4. ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न विकासात्मक गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए जो संस्थान निवेश और उत्पादन ऋण उपलब्ध कराते हैं, उनके वित्त पोषण की एक शीर्ष एजेंसी के रूप में यह कार्य करता है।
5. ऋण वितरण प्रणाली की अवशोषण क्षमता के लिए सस्थान के निर्माण की दिशा में उपाय करता हैं, जिसमें निगरानी, पुनर्वास योजनाओं के क्रियान्वयन, ऋण संस्थाओं के पुनर्गठन, कर्मियों के प्रशिक्षण में सुधार इत्यादि शामिल है।
6. सभी संस्थाएँ जो मूलत: जमीनी स्तर पर विकास में लगे काम से जुड़ी है, उनकी ग्रामीण वित्त पोषण की गतिविधियों के साथ समन्वय रखता है तथा भारत सरकार, राज्य सरकारों, रिजर्व बैंक (आरबीआय) एवं नीति निर्धारण के मामलों से जुड़ी अन्य राष्ट्रीय स्तर की संस्थाओं के साथ तालमेल बनाये रखता है।
7. यह अपनी पुनर्वित्त परियोजनाओं की निगरानी एवं मूल्यांकन का उत्तरदायित्व ग्रहण करती हैं।

नाबार्ड का पुनर्वित्त राज्य सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंकों, राज्य सहकारी बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों, वाणिज्यिक बैंकों और आरबीआय अनुमोदित अन्य वित्तीय संस्थानों के लिए उपलब्ध है, जबकि निवेश ऋण का अंतिम लाभार्थियों में व्यक्तियों, साझेदारी से सम्बन्धित संस्थानों, कम्पनियों, राज्य के स्वामित्त वाले निगमों या सहकारी समितियों को शामिल किया जा सकता है, जबकि आमतौर पर उत्पादन ऋण व्यक्तियों को दिया जाता है।

नाबार्ड को इसके एसएचजी बैंक लिंकेज कार्यक्रम के लिए भी जाना जाता हैं, जो भारत, बैंकों की स्वावलंबी समूहों (एसएचजी) उधार देने के लिए प्रोत्साहन करता हैं, क्योंकि एसएचजी का गठन विशेष कर गरीब महिलाओं को लेकर किया गया है, इससे यह माइक्रोंफाइनानन्स के लिए महत्वपूर्ण भारतीय उपकरण के रूप में विकसित हो गया है। इस समूह के माध्यम से मार्च 2006 तक 33 मिलियन सदस्यों का प्रतिनिधित्व करने वाले 2200000 लाख स्वसहायता समूह ऋण से जुड़ चुके थे।

नाबार्ड के पास प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन कार्यक्रम का भी एक विभाग हैं, जिसमें एक समर्पित उद्देश्य के लिए स्थापित कोष के माध्यम से जलसंभर विकास, आदिवासी विकास और नवोन्मेषी फार्म जैसे विभिन्न क्षेत्रों को शामिल किया गया है।

नाबार्ड एवं ग्रामीण नवोन्मेष - भारत में ग्रामीण विकास के क्षेत्र में नाबार्ड की भूमिका अभूतपूर्व है। कृषि, कुटीर उद्योग और ग्रामीण उद्देश्यों के विकास के लिए ऋण प्रवाह को सुविधाजनक बनाने और विकास को बढ़ावा देन के अधिदेश के साथ भारत सरकार ने राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) की स्थापना एक शीर्षस्थ विकास बैंक के रूप में की। नाबार्ड द्वारा कृषिगत गतिविधियों के लिए स्वीकृत ऋण प्रवाह 2005-2006 में 1574800 मिलियन रु. तक पहुँच गया। कुल सकल घरेलू उत्पाद में 8.4 फीसदी की दर से बढ़ने का अनुमान है। सामान्य रूप से भारत के समग्र विकास में तथा विशिष्ट रूप से ग्रामीण एवं कृषि विकास में नाबार्ड की भूमिका अहम रूप से निर्णायक रही है।

विकास और सहयोग के लिए स्वीस एजेंसी की सहायता के माध्यम से नाबार्ड ने ग्रामीण अवसंरचना विकास निधि की स्थापना की। आयआरडीएफ योजना के तहत 244651 परियोजनाओं के लिए रु. 512830000000

* प्राचार्य, सुभाष यादव मेमोरियल डिग्री महाविद्यालय, बोरावाँ (म.प्र.) भारत

मंजूर की गई हैं, जिसके अन्तर्गत सिंचाई, ग्रामीण सड़कों, और पुलों के निर्माण, स्वास्थ्य और शिक्षा, मिट्टी का संरक्षण, जल की परियोजनाएं इत्यादि शामिल है। ग्रामीण नवोन्मेष कोष एक ऐसा कोष हैं, जिसे इस प्रकार डिजाइन किया गया हैं, जिसमें नवोन्मेष का समर्थन, जोखिम के प्रति मित्रवत व्यवहार, इनःक्षेत्रों में अपरम्परागत प्रयोग करेगा, जिसमें ग्रामीण क्षेत्रों में आजीविका के अवसर और रोजगार को बढ़ावा देने की दक्षता होगी। व्यक्तियों, गैर सरकारी संगठनों, सहकारिता, स्वावलंबी समूहों और पंचायती राज संस्थाओं को सहायता के हाथ बढ़ा दिये गए हैं, जिनमें ग्रामीण क्षेत्रों में जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाने की दक्षता और नवोन्मेषी विचारों को प्रोत्साहित किया जा रहा है।

वर्ष 2007-08 में हाल ही में, नाबार्ड में प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन के लिए छतरी सुरक्षा कार्यक्रम (यूपीएनआरएम) के तहत एक नया प्रत्यक्ष ऋण सुविधा शुरुआत कर दी है। इस सुविधा के अंतर्गत प्राकृतिक संसाधन प्रबंध गतिविधियों के तहत ब्याज की उचित दर पर ऋण के रूप में वित्तीय समर्थ पर प्रदान किया जा सकता है। पहले से ही 35 परियोजनाओं को मंजूरी दे दी गयी हैं, जिसमें ऋण की राशि लगभग 1000 रुपये तक पहुँच गयी है। स्वीकृत परियोजनाओं के अंतर्गत महाराष्ट्र में आदिवासियों द्वारा शहद-संग्रह कर्नाटक में पर्यावरण-पर्यटन, एक महिला निर्माता कंपनी मसुता द्वारा तस्सर मूल्य शृंखला आदि शामिल है।

नाबार्ड की उपलब्धियाँ - वर्ष 2015-16 के दौरान नाबार्ड का पुनर्वित्त परिचालन बढ़कर रु. 1,19,280.72 करोड़ हो गया है। मध्यावधि और दीर्घावधि ऋण के समक्ष रु. 48,063.72 करोड़ का दीर्घावधि पुनर्वित्त प्रदान किया गया, जो पिछले वर्ष से 50 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि दर्शाता है। यह कृषि क्षेत्र में पूँजी निर्माण का संकेत है। नाबार्ड ने वर्ष 1915-16 में ग्रामीण आधारभूत सुविधा विकास निधि के अंतर्गत 23,510.10 करोड़ का संवितरण किया है। भंडारागार सुविधा निधि (डब्ल्यूआईएफ) के तहत संचयी रूप से रु. 10,692 करोड़ की राशि मंजूर की गई है। इसके अंतर्गत 15.21 मिलियन मीट्रिक टन के शुष्क भंडारण और 0.10 मिलियन मीट्रिक टन के आर्द्र भंडारण क्षमता के निर्माण हेतु कुल 9,215 परियोजना मंजूर की गई है। भंडारागार सुविधा निधि (डब्ल्यूआईएफ) के अंतर्गत संचयी रूप में रु. 2,361.91 करोड़ की राशि संवितरित की गई है। इसमें से 1,361.47 करोड़ की राशि वर्ष 2015-16 के दौरान संवितरित की गई है। यह उपलब्धि रु. 10,000 करोड़ के आबंटित समय के समझ है, नाबार्ड आधारभूत सुविधा विकास सहायता (नीडा) के अंतर्गत 12 परियोजनाओं के लिए रु. 5919 करोड़ की राशि मंजूर की गई है और इस प्रकार इसके तहत 41 परियोजनाओं के लिए संचयी रूप से रु. 10,567 करोड़ की राशि मंजूर की जा चुकी है। नाबार्ड ने उत्पादक संगठनों के सहायतार्थ एक बड़ी पहल करते हुए 52 उत्पादक संगठनों के लिए रु. 92.11 करोड़ मंजूर किए हैं।

जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्र संघ फ्रेमवर्क कन्वेन्शन (यूनएफसीसीसी) के अंतर्गत गठित अनुकूलन निधि के लिए नाबार्ड को भारत का राष्ट्रीय क्रियान्वयनकर्ता एजेंसी बनाया गया है। राष्ट्रीय कार्यान्वयकर्ता एजेंसी के रूप में नाबार्ड ने जलवायु परिवर्तन अनुकूलन से संबंधित कई संभाव्य योजनाओं के प्रस्ताव तैयार किये है। इनमें से अनुकूलन विधि डालर 7.3 मिलियन अमेरिकी डॉलर 5 परियोजनाएँ मंजूर की जा चुकी है।

नाबार्ड को क्लीन क्लाइमेट फंड के लिए राष्ट्रीय कार्यान्वयनकर्ता एजेंसी के रूप में मान्यता दी गई है और इसका उद्देश्य जीसीएफ के संसाधनों का उपयोग भारत में जलवायु अनुकूल विकास गतिविधियों के लिए करना है।

वर्ष 2014-15 के केन्द्रीय बजट में घोषणा के बाद एक जलवायु परिवर्तन अनुकूलन पर राष्ट्रीय निधि की स्थापना की गई हैं, जिसमें नाबार्ड राष्ट्रीय क्रियान्वयनकर्ता ऐजसी है और इसका कार्य कृषि, जल और वानिकी जैसे क्षेत्रों में जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से निपटने के लिए समुचित कार्ययोजना के लिए सहयोग देना है। इसके तहत परियोजनाओं की मंजूरी भारत सरकार के पर्यावरण और वन मंत्रालय तथा जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के सचिव की अध्यक्षता में गठित जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय समिति (एनएससीसी) द्वारा की जाती है। एनएएफसीसी के अंतर्गत एनएससीसी के द्वारा 12 परियोजनाओं के लिए रु. 235.19 करोड़ का ऋण मंजूर किया गया है।

भारत सरकार ने वर्ष 2014-15 में राष्ट्रीय पशुधन मिशन की शुरूआत की है और इसके लिए रु. 2,800 करोड़ निर्धारित किये गए है। पोलट्री उद्यम पूँजी निधि, जुगाली करने वाले छोटे पशुओं और खरगोशों के समन्वित विकास, शूकर विकास और भैंसों के नर बछड़ों के संरक्षण और पालन संबंधी उद्यमिता विकास और रोजगार सृजन योजनाओं के लिए सबसीड़ी का संचालन नाबार्ड के माध्यम से किया जाता है। वर्ष 2015-16 के दौरान पोल्ट्री उद्यम पूँजी निधि के अंतर्गत 2961 इकाइयों के लिए 42.47 करोड़ और जुगाली करने वाले छोटे पशुओं और खरगोशों के समन्वित विकास योजना के अंतर्गत 9092 इकाइयों के लिए 31.91 करोड़ सबसीडी जारी की गयी है। इसके अतिरिक्त, नाबार्ड द्वारा डेयरी उद्यमिता विकास योजना के तहत 18177 इकाइयों के लिए रु. 89.76 करोड़ मंजूर किये गए है।

वर्ष 2014-15 में नाबार्ड की ओर से बैंकिंग उद्योग में एक ऐतिहासिक प्रयास किया गया हैं, जिसके तहत सहकारी बैंकों में कोर बैंकिंग प्रणाली लागू करने की प्रक्रिया तेज की गयी है। 31 मार्च 1015 कही स्थिति में कुल 380 लाइसेंसस्वीकृत बैंकों को जीपीएस प्लेट फार्म पर लाया गया है। नाबार्ड की ओर से कोर बैंकिंग प्रणाली को सुचारू ढंग से क्रियान्वित करने में हुए व्यय के लिए बैंकों को प्रतिशाखा रु. 2.00 लाख की सीमा तक एक बार के लिये प्रतिपूर्ति सहायता दी गई है। इस योजना के तहत अब तक रु. 88.32 करोड़ की राशि मंजूर की गयी है।

सूक्ष्म वित्त के क्षेत्र में वर्ष 2014-15 के दौरान पूरे देश में स्वयं सहायता समूहों को रु. 27,582 करोड़ की राशि संवितरित की गयी, जो वर्ष 2013-14 से 14.84 प्रतिशत की सकारात्मक वृद्धि दर्शाता है।

वर्ष 2015-16 के दौरान नाबार्ड वॉटरशेड कार्यक्रम के अंतर्गत 49 नई परियोजनाएँ मंजूर की गयी है और इस प्रकार, संचयी रूप से इन परियोजनाओं की संख्या 547 हो गयी है। इन परियोजना के माध्यम से 8 राज्यों में 5.24 लाख हेक्टेयर क्षेत्र शामिल है और इसके लिए प्रतिबंध राशि रु. 398.90 करोड़ है।

वर्ष 2015-16 के दौरान नाबार्ड के आदिवासी विकास कार्यक्रम के अंतर्गत 23 परियोजनाएँ मंजूर की गयी है। इसके तहत संचयी रूप से 633 परियोजनाओं के लिए रु. 1952.95 करोड़ की राशि मंजूर की गयी है और इसके अंतर्गत 4.85 लाख परिवार शामिल है। वर्ष 2015-16 में लगभग 50,016 नए किसान क्लब बनाये गए है।

अतः स्पष्ट है कि ग्रामीण विकास के क्षेत्र में नाबार्ड ने महत्वपूर्ण योगदान किया है। नाबार्ड में ग्रामीण विकास के विभिन्न आयोजनों जैसे कृषि, पशुपालन, आजीविका, जलग्रहण प्रबंधन तथा पर्यावरण संरक्षण की दिशा में उल्लेखनीय भूमिका का निर्वहन किया गया है। संक्षेप में ग्रामीण

सामुदायिक विकास में नाबार्ड का अभिदान उल्लेखनीय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. HHttps://hi.winkipedia.org/wiki/National_bank_ for_ Agriculture_and_Rural_Development
2. "25 YEARS OF DEDICATION TO RURAL PROSPERITY". nabard.org. Ao^J_Z oVoW % 2010-09-01
3. "Apex Development Bank with a mandate for facilitating credit flow". Nabard.org. Ao^J_Z oVoW : 2010-09-01
4. "Nabard Rural Innovation Fund I Agriculture and industry Survey". Agricultureinformation.com Ao^J_Z oVoW : 2010-09-01
5. Nabard Annual Report, 2016-17

****

बचत एवं विनियोग संबंधी अवधारणा

डॉ. एन. एल. गुप्ता * ऊँकार सिंह रावत **

प्रस्तावना – व्यक्ति अपनी तथा अपने परिवार की भावी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु तथा आकस्मिकताओं से सुरक्षा के लिए अपनी आय का जो कुछ भाग बचाकर रखता है, उस बचाई गई धनराशि को बचत कहते है। किन्तु बचत का यह अर्थ साधारण भाषा में लिया जाता है। अर्थशास्त्र में बचत का अर्थ उस धन से है, जिसे हम किसी ऐसी योजना में विनियोजित करते है जहॉ वह धन उत्पाक कार्यो में लगता है और एक निश्चित समय के बाद जब वह धन पुन: प्राप्त होता है, तो विनियोजित धनराशि लाभांस सहित अतिरिक्त धन के रूप में प्राप्त होती है। प्राय: यह धनराशि हम अपनी आवश्यकताओं के खर्चो से कटौती करके विनियोजित करते है। जिससे हमारी भविष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु यह धन अतिरिक्त धन के रूप में प्राप्त हो सके।

बचत एवं निवेश का अर्थव्यवस्था में राष्ट्रीय आय के संदर्भ में विशिष्ट महत्व है। व्यक्तिगत एवं सामाजिक बचत यदि विनियोग में परिवर्तित होती है, तो रोजगार के अवसरो के साथ– साथ राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है। बचत की मात्रा भी विनियोग और उसके परिणामस्वरूप होने वाली आय पर निर्भर है। यदि व्यक्ति की आय बढ़ती है तो स्वाभाविक ही उसकी बचत में भी वृद्धि होगी। यदि घरेलु बचतों में होने वाला पूँजी निर्माण पर्याप्त हो तो विदेशी पूँजी की निरन्तरता को कम किया जा सकता है। वास्तव में आय, उपयोग, बचत, विनियोग तथा रोजगार एक–दुसरे से इस प्रकार अन्तसम्बंधित है, इनमें असंतुलन समुची अर्थव्यवस्था को प्रभावित कर देता है। सामान्य अर्थो में बचत आय का अपभोग पर आधिक्य है। व्यक्ति अपनी आय का जो भाग उपभोग पर व्यय नहीं करता है। यह बचत में परिवर्तित हो जाता है। यही बात सामाजिक एवं राष्ट्रीय बचत के संदर्भ में भी लागू होती है।

'बचत' एवं यविनियोग' दोनों शब्द एक ही सिक्के के दो पहलु है। जब बचत की राशि उत्पादक कार्यो हेतु विनियोग कर दी जाती है, तो यह प्रक्रिया पूँजी निर्माण कहलाती है। बचत से आशय किसी देश के व्यक्तियों द्वारा अपनी सम्पूर्ण आय वर्तमान उपभोग पर व्यय करने की बजाय भविष्य के लिए बचा कर रखने से है। जब ऐसी बचाई गई राशि बैंको, वित्तीय संस्थाओं या उद्योगों को उत्पादक कार्यो हेतु उधार दी जाती है या विनियोजित की जाती है तो ऐसा कार्य विनियोग कहलाता है।

अर्थशास्त्र के अनुसार यदि हम घर पर संदूक में अथवा जमीन में गाड़कर कोई धन एकत्रित करते है, तो यह हमारी बचत नहीं कहलाएगी क्योकि धन उत्पादक कार्यो में विनियोजित नहीं हो पाता है और इस पर कोई आय प्राप्त नहीं होती है।

अत: बचत वह धन है, जो उत्पादन कार्यो में विनियोजित किया जाए और निश्चित समयोपरांत बढ़ी हुई धन राशि के रूप में प्राप्त हो।

प्रत्येक व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं को नियंत्रित करके बचत कर भविष्य के लिए संग्रहित करता है। व्यक्तियों में मितव्ययिता की दृष्टि और बचत की प्रवृत्ति ही राष्ट्र की आर्थिक रीढ़ बनाती है।

बचत करने की प्रवृत्ति न केवल बुद्धिमतापूर्ण है, बल्कि कर्तव्य करने के लिए परिस्थितिजन्य अनिवार्यता भी है।

आर्थिक विकास के लिए एक महत्वपूर्ण साधन है। आर्थिक सम्बन्ध में व्यक्तियों को दो वर्गो में बॉंट सकते है ,इनमें से एक तो वह है जो बचत करके अपनी बचत संचित निधि से जीवन में आने वाले खर्चो को पूरा करते है। तात्पर्य यह है कि जीवन मे खर्च आते है और पूरे भी होते है, परन्तु पूॅंजी में अन्तर होता है, एक तो स्वयं संचित कोष में आती है अथवा किसी दूसरे के कोषों से कर्ज के रूप में प्राप्त की जा सकती है। यदि मनुष्य प्रारम्भ से ही बचत करता, तो उसे संकट के समय सेठ साहूकार या पड़ोसी के पास जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती है परन्तु यदि वह बचत द्वारा संग्रह न करे तो अपने मित्रों, रिश्तेदारों, साहूकारों के द्वार खटकाने पड़ेगें। यह एक अपमानजनक स्थिती है।

अत: समाज के लोगों के सामने अपनी गरिमा पर कोई आंच न आए और भविष्य सुरक्षित रहे, इसलिए बुद्धिमान मनुष्य प्रारम्भ से ही अपनी आय से कम व्यय करता है और अपनी बची हुई आय को भविष्य के लिए संजोकर रखता है।

वर्तमान समय में बढ़ती हुई महँगाई से हर व्यक्ति परेशान हैं। चीजों के दाम दिन–प्रतिदन बढ़ते जा रहे है, लेकिन आमदनी उतनी तेजी से बढ़ नहीं रही है। ऐसी स्थिती में परिवार का गुजारा करना बड़ी कठिन समस्या हैं। यह समस्या कठिन जरूर है, पर इसे हल भी किया जा सकता है। हमारे बुजुर्गो ने ठीक ही कहा है

'तेते पांव पसारिये, जेती लंबी सौर – अर्थात् उतने ही पैर फैलाने चाहिए जितनी लम्बी चादर हो। यही बात आमदनी पर भी लागू होती है। हमें अपनी आमदनी के अनुसार ही खर्च किया जाना चाहिए, न कि उससे अधिक। आमदनी को बहुत सोच–समझकर खर्च किया जाना चाहिए, नहीं तो 'आमदनी अठ्ठनी और खर्चा रूपया' वाली स्थिति आ सकती है। व्यक्ति को अपनी कुल आमदनी खर्च न करते हुए उसका कुछ हिस्सा बचत के रूप में भी रखना चाहिए।

यदि बचत को उत्पादक कार्यो में लगाया जाए तो यह क्रिया निवेश या विनियोजन कहलाती है। यदि इनका निवेश नहीं किया जाता है तो वह केवल संचित धन ही होगा। वित्तीय प्रबन्ध के विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी, जिला - बड़वानी (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

विनियोग की परिभाषाओं को विनियोग का वित्तीय अर्थ कहा जाता है। इसके अनुसार बचाए हुए या उपयोगी आवश्यकताओ को पूर्ण करने के उपरांत अलग रखे हुए धन को ऐसे स्थान पर लगाना है जिसमें कुल अतिरिक्त आय हो अथवा उस धन के वास्तविक मूल्य में वृद्धि हो। अतिरिक्त आय या मूल्य में वृद्धि के लिए कुछ समय प्रतीक्षा भी करनी पड़ती है तथा धन को किसी ऐसे स्थान पर लगाना होता है जिसमें वित्तीय दावो का विनिमय किया जा सके। जिन सम्पत्तियों पर धन लगाकर वित्तीय दावों का विनमय किया जाता है। उसमें सुरक्षा तथा जोखिम दोनों का ही तत्व होता है।

विनियोग अर्थतंत्र का महत्वपूर्ण सूचक है। बचत का जो भाग पूँजी कोष को बढ़ाता है, उसे विनियोग कहते है। आय का जो भाग नये कारखानो की स्थापना , क्षमता वृद्धि , भवन, परिवहन और अन्य संरचनात्मक विकास में लगाया जाता है और इससे पूँजीगत वस्तुओं में वृद्धि होती है, उसे विनियोग कहा जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'निवेश प्रबंध' , वी.के. भल्ला, सुल्तानचन्द , 2008
2. 'भारतीय अर्थव्यवस्था', श्री सिंह राजीव कृष्ण, राधा पब्लिकेशन , नई दिल्ली, 2000
3. 'भारत में अधिकोषण', प्रो. अग्रवाल वी.जी., साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा - 03,2010

****

भारतीय जनसंख्या, आवास एवं आवास ऋण

डॉ. एकता कक्कड़ *

शोध सारांश – भारत एक विकासशील देश है, अन्य विकासशील देशो की भांति ही यह भी अनेक समस्याओं से जूझ रहा है। एक ओर जनसंख्या में वृद्धि हो रही है वहीं दूसरी ओर आवास समस्या जोर पकड रही है। प्रस्तुत शोध-पत्र में जनसंख्या के विकराल रूप को दर्शाते हुए मकानों की कमी की ओर ध्यान आकृर्षित किया गया है। सरकार द्धारा किये गये प्रयासों को भी संक्षिप्त रूप में दर्शाया गया है। विभिन्न आवश्यकताओं के आधार पर देश के नागरिको को भिन्न भिन्न प्रकार के गृह ऋण उपलब्ध कराये जाते है उनके प्रकारो पर भी प्रकाश डाला गया है। निष्कर्ष के रूप में दर्शाया गया है कि सरकार द्धारा किये गये प्रयास जनसंख्या व आवास की कमी के संदर्भ में उपयुक्त रहे है या नहीं ? अंत में सुझावों के रूप में विभिन्न घटको के शामिल किया गया है जिन पर उचित कार्यवाही के पश्चात् वे भारत में आवासन समस्या के निवारण में सहायक सिद्ध हो सकेगें। पत्र को सार गर्भित रूप प्रदान करने के लिये मैं अपने गुरू परम् श्रद्धेय श्री डॉ सुशील जगदीश ललवानी जी का आभार प्रकट करती हूँ।

प्रस्तावना – आर्थिक उदारीकरण के वर्तमान दौर मे देश के सामाजिक आर्थिक परिदृश्य में मध्यम वर्ग परिमाणात्मक रूप से बढा है एंव उसकी आकांक्षाओं में वृद्धि हुई है। प्रत्येक परिवार अपना स्वंय का मकान चाहता है। 'मकान स्वयं व परिवार के लिए एक रहने योग्य वातावरण, पड़ोस, प्राकृतिक ढांचे सहित सभी आवश्यक सेवाएं, सुविधाएं, उपकरण तथा स्वास्थ्य व समाज उपलब्ध कराता है।'-1 रोटी, कपड़ा और मकान मनुष्य की तीन मूलभूत आवश्यकताएं है। भारत में मकान निर्माण की लागत विकसित देशों की तुलना में अधिक है फलस्वरूप आम आदमी के लिए मकान बनाना एक स्वप्न है। मकान मनुष्य के जीवन की बहुत ही विशिष्ट आवश्यकता है इसकी मांग पूर्ति आदि में कई ऐसी विशेषताएं होती है जो अन्य वस्तुओं की माँग पूर्ति में नहीं पाई जाती। इनमें से कुछ विशेषताएं तो मकान के विशिष्ट स्वरूप के कारण है तथा अन्य विशेषताओं का कारण मकानों के प्रति लोगों की विशिष्ट (दृष्टिकोण) अभिरूचि है। भोजन तथा वस्त्र की भांति आवास भी मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताओं मे से एक है लेकिन भोजन तथा वस्त्र की अपेक्षा मकान टिकाऊ होते हैं। कभी-कभी भोजन को प्रशीतन के आधुनिक तरीकों द्धारा काफी लम्बे समय तक रखा जा सकता है, कुछ वस्त्र पीढ़ी दर पीढ़ी उपयोग में लाये जा सकते है, कभी-कभी अस्थायी तौर पर बने हुए मकानों में भी आवास व्यवस्था की जा सकती है किन्तु सामान्यत: भोजन तथा वस्त्र कुछेक बार उपयोग की जाने वाली वस्तु माने जाते हैं तथा मकान को स्थायी उपयोग मे लाया जाता रहा है ये इतने स्थायी होते है कि मकानों की पूर्ति का सम्बन्ध उपभोज्य वस्तुओं के उद्योगों की पूर्ति से जोडने की अपेक्षा विभिन्न प्रकार के पूंजीगत उपकरणों की पूर्ति से जोडा जाता है। सामाजिक पूंजी की सही कल्पना में इस बात को माना गया है, यद्यपि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की समस्त भौतिक परिसम्पति को सामान्यत: सामाजिक पूंजी कहा जाता है, फिर भी इस शब्द का बहुधा सीमित अर्थ में प्रयोग किया जाता है। किसी नगर या जिले की स्थानीय जनसंख्या के लिए आवश्यक मकानों व लोकोपयोगी उपकारकों को ही सामाजिक पूंजी कहा जाता है।

यदि हम सम्पूर्ण भारत वर्ष को ग्रामीण एवं शहरी दो भागों में बांट कर अध्ययन करे तो हमे पता चलेगा गत दशकों में दोनों क्षेत्रों में लोगों की गृह निर्माण को लेकर रूचि बढी है। जिसका बडा कारण परिवार में सदस्यो की बढती संख्या है, एक ओर शहरी जनसंख्या में वृद्धि के कई कारक है जिनमें मुख्य है गांवो से नगरों की ओर जनसंख्या का पलायन, एक अन्य कारण नगरीय जनसंख्या की अप्राकृतिक वृद्धि भी है। वहीं दूसरी ओर गांवो मे भी जीवन स्तर सुधारने, चिकित्सा सुविधा उपलब्ध होने तथा मृत्यु दरों में कमी आदि कारणों से जनसंख्या बढी है। जनसंख्या वृद्धि तथा अन्य सामाजिक व आर्थिक कारणों जैसे परिवार विघटन, स्वंय के मकान बनाने से सुरक्षा, मकान के अन्य उपयोगो की ओर खिचांव, आर्थिक स्थिति सुधारने, ऋण मिलने में सरलता, आवास निर्माण उद्योगो का विकास आदि से गृह निर्माण अभिरूचि में वृद्धि हुई है। गृह निर्माण में लोगों की अभिरूचि और आवासन उद्योग दोनो एक दूसरे के पूरक के रूप मे उभरे है। जहां आवासन उद्योग क्षेत्र के विकास के कारण लोगो को सस्ते व सरल रूप में ऋण मिल जाता है, जो अभिरूचि बढाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है वहीं जनता को यही अभिरूचि निवेशकों व सरकार को भी इस क्षेत्र की ओर आकृर्षित कर रही है।

शोध पत्र के उद्धेश्य – भारतीय जनसंख्या के संर्दभ में मकानो की स्थिति व सरकार द्धारा किये गये प्रयासो का आंकलन करना।

शोध विधा – शोध हेतु मूल्यांकन, तुलनात्मक व प्रतिशत विधियों का प्रयोग किया गया है। अध्ययन हेतु सहायक/द्वितीयक आंकड़ो का संकलन किया गया है। ये आंकडे विभिन्न संस्थाओं के वार्षिक विवरणो, आर्थिक सर्वेक्षण दस्तावेजो व प्रकाशित संकलनों से एकत्रित किये गये है।

भारत में जनसंख्या – बढती जनसंख्या और टूटते परिवारो की बढती संख्या ने घर-घर में नये मकान की आवश्यकताओं को बढावा दिया है। वह समय लद गया जब दादा मकान बनाते थे और उनके पुत्र, पौत्र व उनके भी पुत्र सपरिवार उसी मकान मे ऐसे तैसे गुजर बसर करते रहते थे, किन्तु अब समय बदल चुका है। जिनके पास रहने को घर नही है वे बस एक छोटी सी छत चाहते है, जिनके पास रहने को छोटा मकान है वे शयन कक्ष व बच्चो के लिए अलग कमरो की इच्छा रखते है, जिनके पास ये है, वो महमानों का कमरा, डाइनिंग रूम, एक थोडा खुला क्षेत्र आदि की कल्पना करते हैं।

कुछ किराये पाने की इच्छा से तो कुछ अपनी वर्तमान व भावी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु मकान पर निवेश करने मे सदा ही इच्छुक रहते है। बढती जनसंख्या ने तो इस ओर झुकने और आकृषित हाने के लिए सभी आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक कारकों को विवश कर दिया हैं।

* सहायक आचार्या, श्री महालक्ष्मी गर्ल्स महाविद्यालय, प्रताप नगर, जोधपुर (राज.) भारत

भारत सम्पूर्ण विश्व मे क्षेत्रफल की दृष्टि से सातवां स्थान रखता है, जो लगभग 3287263 वर्ग कि.मी हैं। यह चाइना के बाद जनसंख्या की दृष्टि से दूसरे स्थान पर आता है। 2011 के जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या 121 मिलियन थी, जो 2017 में बढ़कर 134 करोड़ तक पँहुच गई। सम्पूर्ण विश्व की कुल जनसंख्या का लगभग 16 वां भाग भारत में निवास करता है, जो जमीन और आदमी का एक अनुचित अनुपात है। 1901 में भारत की कुल जनसंख्या का 89.2% भाग गांवों मे निवास करता था, जो 2001 में घटकर 72.2% हो गई, इसके विपरीत शहरी जनसंख्या 1991 में 10.80% से बढकर 2001 मे 27.8%, 2016 में 33.14% तक पहुंच गई। भारत की जनसंख्या प्रत्येक दो दशक मे दुगनी हो जाती है। 2025 तक शहरी जनसंख्या 618 मिलियन तक पहुंचने का अनुमान हैं। वर्ल्ड बैंक के अनुमान के अनुसार अफ्रीका की शहरी जनसंख्या कुल जनसंख्या का 34% हैं, एशिया में यह प्रतिशत 40 है लेकिन अमेरिका, यूरोप, दक्षिणी अमेरिका में 70% से अधिक जनसंख्या शहरी है। चाइना मे जहाँ यह प्रतिशत 40.9% है, वहीं भारत की 33.14% जनसंख्या शहरी है।

भारत में मकानों की कमी – 'सम्पूर्ण संसार में 900 मिलियन (31.6%) से अधिक ग्रामीण गंदे व बदत्तर मकानों मे रह रहे है। जिनमें से 43% विकासशील और 28.2% व्यक्ति विकसित राष्ट्रों से सम्बन्धित है। गन्दी बस्तियों में रहने वालो में एशिया के 554 मिलियन, अफ्रीका के 187 मिलियन और लेटीन अमेरिका के 128 मिलियन व्यक्ति शामिल है। एक अनुमान के अनुसार अगले 3 वर्षो में इन लोगों की संख्या दुगनी हो जायेगी। प्रतिदिन विकाशील देशो की ग्रामीण जनसंख्या 1,70,000 की गति से बढती है जिसे लगभग 30,000 मकानों की प्रतिदिन आवश्यकता होती है।'

भारत में गत दशकों में मकानो की कमी से सम्बन्धित आंकडे निम्न तालिका में दर्शाये गये है, जिसके द्वारा हमे ज्ञात होता है कि 1951 में मकानों की कुल कमी 9 मिलियन थी, जिनमे 6.5 मिलियन (72.22%) ग्रामीण इलाकों तथा 2.51 मिलियन (27.77%) शहरी इलाकों से सम्बन्धित थी। 2001 में यह कमी 9 मिलियन से बढकर 22.4 मिलियन हो गई जिनमे से 13.5 मिलियन ग्रामीण क्षेत्रो तथा 8.9 मिलियन शहरी क्षेत्रो से सम्बन्धित थे।

तालिका – भारत में मकानों की कमी

(मिलियन में)

वर्ष	ग्रामीण	शहरी	कुल
1951	6.5	2.5	9.0
1961	11.6	3.6	15.2
1971	11.6	3.0	14.6
1981	16.3	7.0	23.3
1991	14.6	8.2	22.8
2001	13.5	8.9	22.4

स्त्रोत–

1. 1951–1991, हाउसिंग स्टेटिस्टिक, एन ऑवरव्यू– 1999, नेशनल बिल्डिंग ऑरगेनाइजेशन, मिनिस्टी ऑफ अर्बन अफेयर एंड एम्पलॉयमेंट, गवर्न्मेंट ऑफ इंडिया।
2. 2001, सेंसस ऑफ इंडिया–2001, दसवी पंचवर्षीय योजना(2002–07) प्लैनिंग कमीशन,गवॅन्मेंट ऑफ इंडिया।

2012 में भारत में मकानों की कमी को निम्न लेखाचित्र द्वारा दर्शाया जा सकता है **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

प्रमुख राज्यों में मकानों की कमी को निम्न लेखाचित्र द्वारा दर्शाया जा सकता है। **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

भारत में आवासन क्षेत्र के प्रमुख सोपान/सरकारी प्रयास निम्न प्रकार से है–

- भारत मे आवास आपूर्ति हेतु सरकार द्वारा आवासन एवं निवास योजना 1998 के अर्न्तगत प्रति वर्ष 20 लाख मकानो के निर्माण की घोषणा की गई।
- अप्रेल 1999 मे राष्ट्रीय स्तर पर झुग्गी झोपडी योजना की घोषणा की गई।
- मार्च 2000 मे उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 के अन्तर्गत राष्ट्रीय झुग्गी झुपड़ी योजना को स्वीकृत कर नगरपालिका सेवा के पास भेजा गया।
- जनवरी 2001 मे शहरीकरण के विकास हेतु 100% तक विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग को स्वीकृति प्रदान की गई। यह सरकार द्वारा उठाया गया एक साहसिक कदम था।
- अक्टूबर 2001 मे सम्पूर्ण देश के गरीब वर्ग के लोगो के लिए आवास व शौचालय की योजना के लिए यूनियन केबिनेट द्वारा 2 करोड रूपये का बजट स्वीकृत किया गया।
- 6 जनवरी 2005 को रिर्जव बैंक ने जोखिम की मात्रा में वृद्धि कर प्राथमिक सहकारी बैंकों को आवासीय ऋण प्रदान करने का विकल्प देकर उदार नीति अपनाने का प्रयास किया।
- मार्च 2005 मे विदेशी निर्माण कम्पनियो को निर्माण क्षेत्र में विनियोग की छूट प्रदान की गई। कम्पनियॉ न्यूनतम 25 एकड क्षेत्र मे मकान निर्मित कर सकती है।
- 2006 मे 'भारत निर्माण योजना' की घोषणा की गई, जिसके अन्तर्गत अगले चार वर्षो के भीतर बी.पी.एल. परिवारों के लिए 60 लाख मकानो का निर्माण किया गया।
- 2009 में राजीव आवास योजना झुग्गी झोंपड़ी से मुक्त भारत के सपने को साकार करने हेतु लागू की गई।
- 2015 में प्रधानमंत्री ग्रामीण आवास योजना केन्द्रीय सरकार द्वारा लागू की गई, जो निर्धन ग्रामीणों को आवास प्रदान करने हेतु बनाई गई, जिसमें 9 राज्यों के 305 गाँवों को चयनित कर लाभान्वित करने का प्रयास किया गया।
- 2017 में सरकारी आवास योजना की घोषणा केन्द्रीय सरकार द्वारा की गई। इसके अन्तर्गत मध्यम आय वर्ग से जुड़े व्यक्तियों को बड़े आवास की सुविधा प्रदान करने हेतु प्रयास किया जा रहा है।

गृह ऋण की आवश्यकता – 'विकासशील देशो में लोगो को अपनी आवास आवश्यकता की पूर्ति हेतु वित्त प्रबन्ध करने मे कई मुश्किलों का सामना करना पडता है। घरेलू आवश्यकताओं तथा अन्य जरूरतों को पूराकर पाने के पश्चात् प्राय: कुल वित्तीय लेन देन का 10% से भी कम आवास वित्त के रूप में खर्च किया जाता है।

प्रत्येक व्यक्ति का सपना होता है कि उसका एक सुन्दर, सुरक्षित व सभी आवश्यक सुविधाओ से परिपूर्ण मकान हो, किन्तु स्वप्न को वास्तविकता में ढालने हेतु मात्र रूचि की ही आवश्यकता नहीं होती, इसके लिए वित्त भी चाहिए। यदि हम एक सामान्य मनुष्य के मन मस्तिष्क में झांके तो पायेगे कि वह व्यक्ति वर्तमान में मकान की आवश्यकता, बढती गृह

निर्माण व क्रय दरे, भावी शारीरिक –पारिवारिक व सामाजिक आवश्यकताओ व उत्तरदायित्वों को देखते हुए गृह निर्माण का विचार भविष्य पर नही टाल सकता, तो वह क्या करे ? क्या वह स्वंय का मकान बनवाले? यदि हां, तो वित्त का प्रबन्ध कैसे होगा ? क्या उसे ऋण लेना होगा ? आदि कई प्रश्न हमारे मस्तिष्क मे आते है। जीवन व्यतीत करने के लिए मकान एक आवश्यक आवश्यकता है। स्वंय का मकान जीवन को स्थायित्व प्रदान करता है। एक मकान पूर्वनिर्मित खरीदा जा सकता हे या फिर स्वंय की जमीन पर बनाया जा सकता है। जहाँ आवास कम्पनीयों, निजी स्वतंत्र विक्रेता, सरकारी संस्थानों आदि से पूर्व निर्मित भवन क्रय किया जा सकता है ,वहीं जमीन क्रय करना, आवास योजना तैयार करना, भवन निर्माण की सामग्री क्रय करना, मजदूरो का खर्चा आदि के लिए भी बडी रकम खर्च करके अपने मनचाहे ढांचे के अनुसार मकान निर्मित करवा सकते है ।

स्वंय के मकान के कई लाभ होते है ,जो पीढी दर पीढी मिलते रहते है किन्तु नये मकान पर व्यय एक व्यक्ति के लिए उसके जीवन मे उठाया गया एक बडा कदम माना जाता है क्योंकि वह अपनी जीवन भर की पूंजी उस मकान में लगा देता है। पहले मकानों की कीमत कम हुआ करती थी, आय के साधन भी कम हुआ करते थे । अब आय अधिक हो गई है, तो मकान कीमत आसमान छू रही है। अत: मकान क्रय करना शरू से ही आदमी के लिए एक स्वप्न रहा है, जिसे साकार करना उसका लक्ष्य होता है किन्तु सीमित आय के साधन उसके हाथ बांध देते है इन बेडियों को खोलने का काम करती है 'ऋण सुविधा'।

मकान एक हाथी के समान होता है । जितना बडा व जवान हाथी उतना ही मंहगा और साथ ही दिन प्रतिदिन के खर्चे भी अधिक होते है किन्तु आज बैकिंग सुविधाएँ सुद्दढ हो चुकी है । आदमी को जब मकानो के लिए वित्त की आवश्यकता होती है तब बैंक ऋण उपब्लध करावाते हैं। विभिन्न आवश्यकताओं के आधार पर गृह ऋण के कई प्रकार हो सकते है जैसे –

गृह क्रय ऋण – यदि व्यक्ति पूर्व निर्मित भवन क्रय करता है और उसे बैंक द्वारा ऋण दिया जाता है तो यह ऋण इस श्रेणी में आता है, इसमे ऋण की राशि का विक्रेता को भुगतान किया जाता है तथा क्रेता को निर्धारित शर्तो के अनुसार बैंक को भुगतान करना पडता है।

गृह निर्माण ऋण – यदि व्यक्ति जमीन खरीद कर उस पर भवन का निर्माण करवाता है और उसे इस हेतु बैंक से ऋण प्राप्त हो जाता है तो यह ऋण इस श्रेणी के अन्तर्गत आता है, इसमे बैंक द्वारा किश्तो में भुगतान किया जाता है जैसे जैसे भवन निर्माण में वित्त की आवश्यकता होती जाती है वैसे वैसे बैंक द्वारा भुगतान किया जाता है ।

गृह विकास ऋण– क्रय किये हुए भवन के सुधार, मरम्मत और बदलाव हेतु लिए गये ऋण को इस श्रेणी में रख जाता है।

गृह विस्तार ऋण – पूर्व निर्मित भवन में विस्तार– जैसे अतिरिक्त कमरो का निर्माण आदि के लिए लिये गये ऋण इस श्रेणी में आते हैं।

गृह हस्तान्तरण ऋण – यदि पहले ही गृह ऋण लिया जा चुका है और उसका भुगतान अभी बाकी हो, तभी एक अन्य मकान क्रय करने की स्थिति में यदि अतिरिक्त ऋण को पूर्व ऋण में हस्तान्तरित कर दिया जाता है तो वह गृह हस्तान्तरण ऋण कहलाता हैं।

गृह सेतु ऋण – यदि एक मकान बेचकर दूसरा क्रय करने के लिए वित्त की आवश्यकता हो तो दोनो मकानो के बीच की राशि ऋण के रूप मे बैक द्वारा उपलब्ध करा दी जाती है इसे सेतु ऋण कहा जाता है।

भूमि क्रय ऋण – आवास हेतु भूमि क्रय की जाये और इस हेतु बैक से ऋण लिया जाए तो यह ऋण भूमि क्रय ऋण कहलायेगा।

निष्कर्ष – जनसंख्या के निरन्तर बढते विकराल रूप व देश में मकानों की कमी को देखते हुए सरकार द्वारा आवासन क्षेत्र में किये गये प्रयास गौण प्रतीत हो रही है। टूटते परिवार, शहरीकरण, जनसंख्या वृद्धि, गृह निर्माण लागत में वृद्धि, वित्तीय संस्थाओं की कमी आदि के कारण सरकार द्वारा इस क्षेत्र में किये गये प्रयास संतोषजनक नहीं है।

सुझाव – भारतीय केन्द्रीय व राज्य सरकारो द्वारा आवासन समस्या पर गंभीरतापूर्ण विचार किया जाना चाहिये तथा निम्न घटको पर उचित कार्यवाही की जानी चाहिये–

- जनसंख्या वृद्धि पर रोक
- झुग्गी झोंपड़ी मुक्त भारत हेतु उचित योजना की घोषणा, क्रियान्वन, निरक्षण व नियन्त्रण
- निम्न दरो पर आवास ऋणो की उपलब्धता
- निम्न आय वर्ग को सस्ती दरो पर भूमि वितरण
- शहरीकरण के दुष्प्रभावों पर रोक
- वित्तीय संस्थाओं का विकास
- गृह निर्माण लागत में कमी के प्रयास आदि किये जाने चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वर्ल्ड हेल्थ आर्गेनाईजेशन कमिटी (पब्लिक हेल्थ आस्पेक्टस ऑफ़ हाउसिंग) टेक्निकल रिपोर्ट सीरीज, ऩ–225, वाशिंगटन ।
2. फॉरसाइथ टिम इनसाइक्लोपीडिया ऑफ इंटरनेशनल डेवलपमेंट, रूटलेज टेलर एंड फ्रांसिस ग्रुप पब्लिकेशन, लंदन एंड न्यू यॉर्क, 2005
3. गारेथ ए जोंस एंड कविता दत्त – फ्रॉम सैल्फ हैल्प टू सैल्फ फाइनेंस, सागा पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली, 1999

2012 में भारत में मकानों की कमी को निम्न लेखाचित्र द्धारा दर्शाया जा सकता है

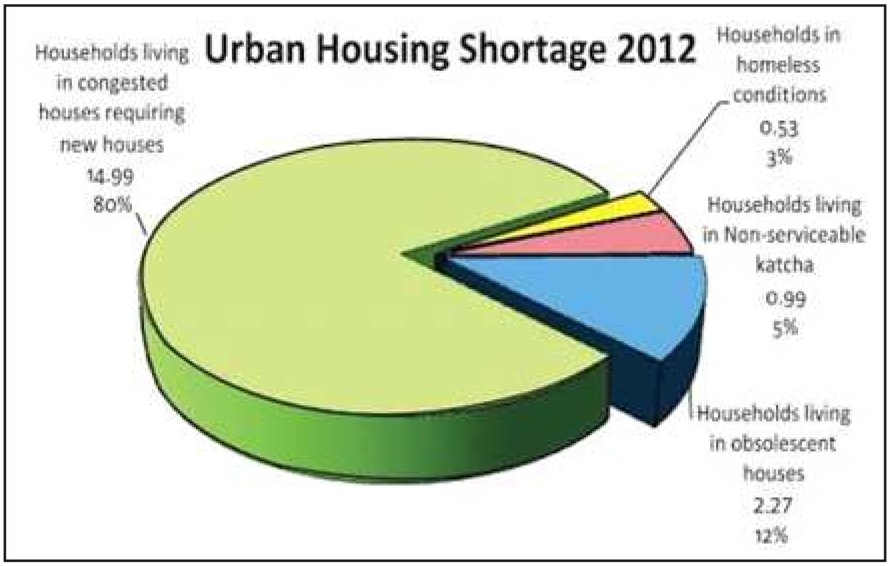

प्रमुख राज्यों में मकानों की कमी को निम्न लेखाचित्र द्धारा दर्शाया जा सकता है।

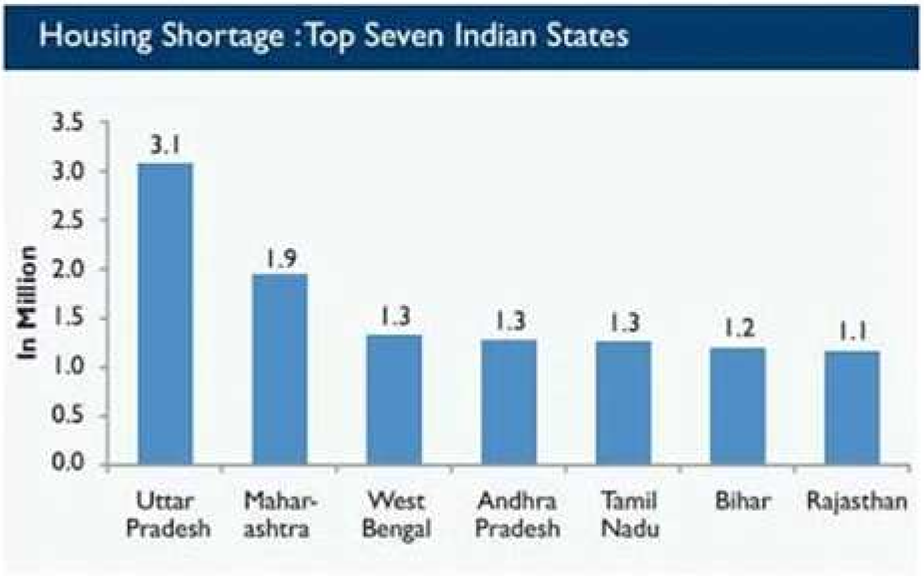

Source: Ministry of Housing and Urban Poverty Alleviation (MHUPA), 2012

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

Role Of Green Economy In India - Challenges And Opportunities

Dr. Snighdha Bhatt *

Abstract - Green economy is the complex of studies about national or global economy and resource management and organization of the process of production.Green economy is a branch of economics which studies the connection of the human economic activity and the natural environment. It examines the roles and challenges of small holding agriculture in India. The concept of green economy is being discussed in recent decade for achieving sustainability in inclusive growth and development of respective area of countries of the World.The green economy approach is an effort to focus sustainable development and poverty reduction effort on transforming economic activities and economies. India can make green growth a reality by putting in place strategies to reduce environmental degradation at the minimal cost of 0.02% to 0.04% of average annual GDP growth rate. In the recent years, discussion around sustainability has become a key element of the global agendAgriculture growth has always been an important component for inclusiveness in India, and recent experience suggests that high GDP growth without such agriculture growth is likely to lead to accelerating inflation in the country, which would jeopardize the larger growth processand plan. The paper also shows that market oriented reforms are not sufficient and government intervention and other support are needed for small holdings to achieve the above goals.
Key Words - Green economy, economic development, employment,agriculture growth, government policies.

Introduction - Agriculture plays a pivotal role in the Indian economy.Agriculture has always been the backbone of the Indian economy and despite concerted industrialization in the last six decades; agriculture still occupies a place of pride. Green economy is the complex of studies about national or global economy and resource management and organization of the process of production.Greeneconomy is the discipline which originated in the latest two decades and it is characterized." with the principle that economics is the integral component of the environment it exists in.Green economy is connected with the environmental issues and the necessity of the protection of nature and wise use of the limited natural resources.

Green Economy advocates good governance as an essential prerequisite for achieving sustainable development. In order to encourage local and foreign investment, it is essential to have a stable and predictable macroeconomic environment. Such an environment will also need to be transparent and accountable.On January 15, 2012, Sheikh Muhammad bin Rashid Al Maktoum, the Vice-President and Prime Minister of the UAE and Ruler of Dubai, announced the launch of a long-term national initiative to build green economy in the UAE under the slogan "A green economy for sustainable development.

Agriculture contributes up to 60 percent of GDP. Agriculture generates forward linkages with agricultural outputs being supplied as inputs into manufacturing. Fast growth in agriculture contributes to a rapid rise in agro-processing, which in turn provides new engines of growth as well as an opportunity to substitute imports. Agro-industrial sectors comprise a number of manufacturing activities that have direct production linkages between agriculture and manufacturing. The growth of some commercial crops has significant potential for promoting exports of agricultural commodities and bringing about faster development of agro-based industries. Thus agriculture not only contributes to overall growth of the economy but also reduces poverty by providing employment and food security to the majority of the population in the country and thus it is the most inclusive growth sectors of the Indian economy.

The 12th Five Year Plan Approach Paper also indicates that agricultural development is an important component of faster, more inclusive sustainable growth approach. The Indian economy has undergone structural changes over time with the anticipated decline in the share of agriculture in the GDP. The pressure on agriculture to produce more and raise farmers' income is high. Second, the dependence of the rural workforce on agriculture for employment has not declined in proportion to the sectoral contribution to GDP.

Sustained agricultural growth, which is facilitated through constant policy and institutional support has the potential to augment growth in the rural economy and

*Shri Jain Diwakar Mahavidyalaya, Indore (M.P.) INDIA

associated secondary activities like food processing and retail trading. However, agriculture-led rural industrialization has not received due attention from policy makers in the country notwithstanding the fact that maintaining the growth of agricultural.Today we are second largest producer of wheat, rice, fruits, vegetables, and fresh water aquaculture; and largest exporter of spices and cashew. The late sixties and seventies were the years of Green Revolution.

Concept Of Green Economy - The Green Economy is one in which the vital linkages among the economy, society, and environment are taken into account and in which the transformation of production processes, and consumption patterns, while contributing to a reduced waste, pollution, and the efficient use of resources, materials, and energy, will revitalize and diversify economies, create decent employment opportunities, promote sustainable trade, reduce poverty, and improve equity and income distribution." According to a New World Bank Report, 2013, this will allow India to maintain a high pace of economic growth without jeopardizing future environmental sustainability. The annual cost of environmental degradation in India, amounts to about Rs. 3.75. The United Nations Environment Programme (UNEP) defines the Green Economy as "one that results in improved human well-being and social equity, while significantly reducing environmental risks and ecological scarcities" (2010).

Objective Of The Study -

1. To examine government policies for green economy.
2. To study the role of green economy in economic development.
3. To study the role of employment opportunities in green economy.

Government Interventions For Green Economy In Twelfth Five Year Plan - The 12th Five year Plan is adopted by the National Development Council (NDC) on 28 December and declared the Five Year Plan for the country from 2012 to 2017. The stated vision of the Plan Document is "of India moving forward in a way that would ensure a broad-based improvement in living standards of all sections of the people through a growth process which is faster than in the past, more inclusive and also more environmentally sustainable". Faster, sustainable and more inclusive growth in agriculture in India proposes a growth target of 8 percent and raising agriculture output to 4 percent.

Growth Performance In Agriculture In 12th Five Year Plans - As far as the sectoral growth rates are concerned, specified mention needs to be made of five sectors that are critical for generating the desired growth in employment and agriculture, construction, other transport and other services and financial services.

The development in 12 Five Year Plan are as follows -

- Economic Growth
- Real GDP growth rate of 8.0%
- Agriculture growth rate of 4.0%
- Manufacturing growth rate of 10.0%

Table - Growth In Green Economy

Five Year Plan	Growth
First Plan (1951-56)	3.6%
Second Plan(1956-61)	4.21%
Third Plan(1961-66)	2.72%
Fourth Plan(1969-74)	2.05%
Fifth Plan (1974-79)	4.83%
Sixth Plan(1980-85)	5.54%
Seventh Plan(1985-90)	6.02%
Eighth Plan(1992-97)	6.68%
Ninth Plan(1997-2002)	5.35%
Tenth Plan(2002-07)	7.7%
Eleventh Plan(2007-12)	8.0%
Twelfth Plan(2012-17)	8.2%

Thus,environment will increase green cover by 1 million hectare every year during the 12th five year plan, add 3000 MW of renewable energy capacity in the 12th five year plan. Reduce emission intensity of GDP in line with the target of 20 percent to 25 percent reduction over 2005 levels by 2020.

Employment Opportunities With The Help Of Green Economy - These approaches to measuring green jobs combine an output approach. In the output approach, jobs are green to the extent that they are in businesses that produce green goods or services -

1. Energy-efficiency equipment, appliances, buildings and vehicles, and goods and services that improve the energy efficiency of buildings and the efficiency of energy storage and distribution.
2. Pollution reduction and removal, greenhouse gas reduction, and recycling and reuse.
3. Organic agriculture; sustainable forestry; and soil, water, and wildlife conservation.
4. Government and regulatory administration; and education, training, and advocacy related to green technologies and practices.
5. Manufacturing plays a strong role in the green economy.
6. Green jobs go beyond the renewable energy industry.

Thus, green economy generates 50 million new work opportunities in the non-farm sector and provide skill certification to equivalent numbers during the 12th five year plan.

Growth Targets For The Twelfth Plan In Green Economy - The planning commission has explored two alternative targets for economic growth in the twelfth plan. The first is a restatement of the eleventh plan target of 9.0 percent growth, which has yet to be achieved. The second is an even higher target of 9.5 percent average growth for the twelfth Five Year Plan. Several macro-economic model have been used to examine the feasibility of these targets in terms of internal consistencies and inter sectoral balances.

However, even if such agricultural growth is achieved, it is unlikely that the agricultural sector will absorb additional workers

Trade policy if well formulated can be an effective tool

in supporting the transition to a Green Economy. A well-designed trade policy can encourage investment in environmental goods and services, and technologies to satisfy the local market and for export. It can also encourage access to foreign environmental technologies. This can be achieved through regulations, and an incentive and tariff system that facilities access to environmental technologies. It should be emphasized that there is no one size fits all approach to sustainable development. The manner in which countries are prepared to use the Green Economy tool or vehicle for achieving sustainable development is up to countries to frame and design. This will have to be based on the pace at which countries are prepared to make the transition, their priorities, socioeconomic circumstances, and capacities.

Suggestion

- Specific objectives of all five year plan.
- Emphasis on local needs.
- Physical planning.
- Balanced growth of capital goods and consumers goods industries.
- Rapid development of agriculture sector

Conclusions - The investments in the green economy could accomplish multiple goals beyond simply creating a more sustainable economy. Role of green economy is very important for economic development in developing country like India.It play an important role in a broader short- and long-term job creation strategy. The greeneconomy is having the great importance in India it contributes large in the generating national income, employment, capital formation, foreign earning through the export of the agriculture commodities. However, in recent days the service sector has been becomes important sector for the Indian economy because this sector now contributes 59.9% of GDP and good amount of employment opportunities in India.

After analyzing the data it is found that there is decline trend of Indian agriculture sector. Hence, the government should make the provision of more credit facilities to this sector. There is also need of more extensive and large scale agriculture that contributes more in the national income as well as employment generation in India. The agriculture system in the proper plan for the utilization of agricultural resources.And finally, the investment opportunities for going green are vast throughout nearly all industries.

The green economy ofIndia reveals that some indicators show positive trend useful for green economy. This adequately proves that India had adopted the strategy of green economy; hence it is endeavoring in that direction. But there is urgent need to improve the India agriculture sector and its positive results.

References :-

1. T. R. Jain, MukeshTerhan, RanjuTrehan, Edition 2014-15 V K Global Publication Pvt. Ltd. Pearson- Business Environment
2. Roji Joshi, S. Kapoor-Business Environment, Kalyani Publishers, Ludhinia, New Delhi.
3. Annual Report 2012-13 of the Planning Commission
4. www.planningcommission.gov.com
5. www.simplydecoded.co
6. Balakrishnan, Pulapre (2000). Agriculture and Economic Reforms: Growth and Welfare. Economic and Political Weekly, 35 (12): 999-1004.
7. Bhalla, G S and Gurmail Singh (2001). Indian Agriculture: Four Decades of Development. New Delhi: Sage Publications. (2009).
8. Economic Liberalisation and Indian Agriculture: A Statewise Analysis. Economic and Political Weekly, 44 (52): 34-44.
9. Chand, Ramesh and S. S. Raju (2009). Instability in Indian Agriculture During Different Phases of Technology and Policy. Indian Journal of Agricultural Economics, 64 (2): 283-88

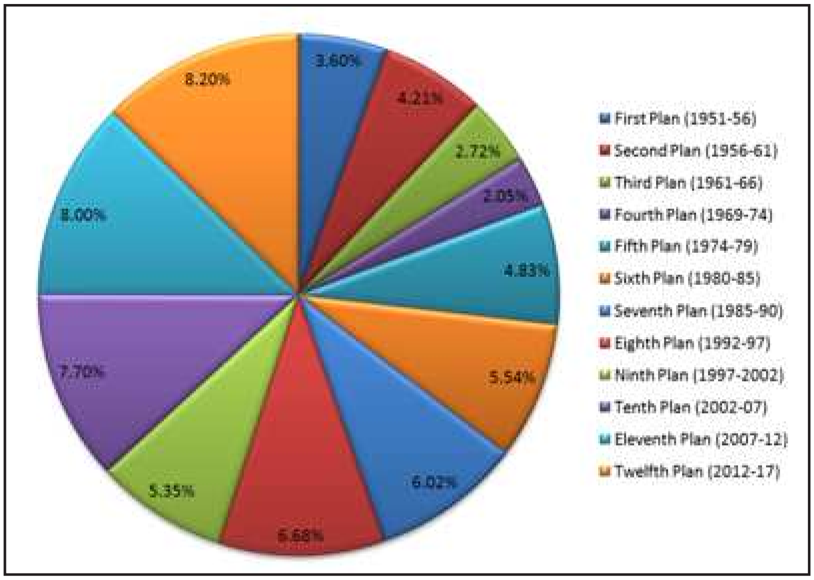

Gender Equality Is Smart Economics

Sujata Naik *

Abstract - Time passes slowly when change is overdue. The World Economic Forum in its Global Gender Gap Report 2015 estimates it will take 118 more years to achieve global gender parity in the workplace; 118 more years until companies and governments are equally led by men and women; and 118 more years of talent pipelines and professional promise not fully realized. It's been more than 200 years since the Industrial Revolution sent Western women into the workforce in large numbers. It's been more than 150 years since women gained access to higher education in Western countries. It's been more than 90 years in parts of Asia and 80 years in parts of South America since women gained the right to vote. And there are still many places around the world where women do not have the right to vote or hold a job, attend college, create a business or rise to leadership positions in companies or countries. It will be 118 more years before women achieve gender parity in the workforce, closing the 60% gender gap for economic participation and opportunity worldwide. It's already been too long. Must we wait so much longer?
What can be done?

The Principles -

1. Establish high-level corporate leadership for gender equality.
2. Treat all women and men fairly at work - respect and support human rights and nondiscrimination.
3. Ensure the health, safety and well-being of all women and men workers.
4. Promote education, training and professional development for women.
5. Implement enterprise development, supply chain and marketing practices that empower women.
6. Promote equality through community initiatives and advocacy.
7. Measure and publicly report on progress to achieve gender equality.

Introduction - It is found that gross domestic product per capita and gender equality are positively correlated. As for productivity, output per worker would rise by up to 25 per cent in many countries if barriers were removed that prevent women from working in certain occupations or sectors. Countries that create better opportunities for women and girls tend to raise productivity, improve outcomes for children and advance development prospects for everyone, a sweeping World Bank study published in 2011 has concluded. “Gender equality is smart economics,” the 452-page report says.

Boosting women's status and giving them the same access to education and economic opportunities increases productivity and the economic efficiency of a country. The good news is that girls and women today are more literate than ever, and one-third of developing countries have more girls in school than boys. Women now make up more than 40 per cent of the global labour force.

The pace of change over the past 25 years has been “astonishing,” and many developing countries have transformed at a much faster rate than advanced economies.The World Bank sponsored a high-level consultative meeting in February 2006 to explore theimplementation challenges facing MDG3 and to identify concrete ways to accelerate progresstowards gender equality.

Main features highlighted in this report are as follows.

1. With the world falling behind in its commitment to meet MDG3, there is a need torecapture the Beijing momentum and reenergize the gender agenda.
2. Gender mainstreaming is a sound and viable strategy, but it has to be made moreoperationally relevant and more focused on results.
3. Successful MDG3 implementation will require significant additional resources to thosealready allocated. It also requires better donor harmonization and coordination, as well asmore accountability in the use of resources.
4. More and better gender statistics and indicators are needed to improve analytical work amain driver of World Bank operations. Rigorous evaluation of World Bank and otherprojects is also essential in order to identify good practices in promoting women'seconomic empowerment.
5. For the World Bank, prioritizing work in the economic sectors “will give gender issuesmore traction.

*Asst. Prof. (Economics) Amar Shahid Raja Bhau Mahakal Govt. College, Sonkach, Distt.-Dewas (M.P.) INDIA

Cash Study - During the last 20 years, demands on job seekers have increased. To get a job today it is for all practical purposes necessary to have an upper secondary school education and to speak good Swedish. This creates barriers for many groups. Low educated, foreign-born women, for instance, have a much higher rate of unemployment than other groups in Botkyrka. In some areas, less than 50 per cent of the women are gainfully employed. 16 per cent of the women live entirely separate from society, having no contact with authorities, schools or the labour market. The municipality is now making investments to improve its services and help more women find jobs.

Typical cases and estimates - Botkyrka's model describes three typical unemployed women, with varying educational background, livelihood, age, and ethnicity.All three follow a course of education that concludes with an uppersecondaryschool health-and social care programme. The costs and revenues of this are compared with the costs and revenues associated with not doing anything at all. **(Graph See in the next page)**

The estimates are based on the assumption that the schooling leads to a permanent job in the health-care sector until retirement. To enable costs and revenues from different points in time to be compared, they have been "translated" into their 2012 present values, based on a four per cent discount rate of interest. Social investments to help people overcome chronic unemployment and gain incomes of their own lead to two types of revenues: an actual socioeconomic value called a production increase, and a reduction of public expenditures (in this case livelihood support for two of the three women). The production increase comprises the women's wages after taxes (which then are subject to VAT), payments to the social security system, municipal tax and county tax.

The case of Aisha - Aisha is a foreign-born25-year-old woman with five years of primary school in her home country. Before the educational investment she was supported by her relatives. She studies Swedish as a Second Language (SSL) and upper-secondary adult education for four years, and then finds a job within health or social care, a sector with large future labour needs. According to Botkyrka's estimate, in socio-economic terms the investment almost broke even after Aisha's first year in the workforce. By retirement, her production increase amounts to SEK 7.5 million. This means that the investment returns 25 times the cost of her education. In other words, one could say that only one person out of 25 in the educational investment needs to succeed for it to break even overall. The investment is also profitable for Aisha personally, though not for Botkyrka municipality because – due to the local government equalization system – Botkydue to the local government equalization system – Botkyrka cannot keep more than 5.5 per cent ofAisha's municipal taxes.

Learnings from Case Study - The investment in people, who do not – from the outset – appear to cost society anything, yields great socio-economic profits. The return is even higher for those persons who go from livelihood support to a job of their own.

The women themselves gain a significantly higher economic standard. Their gainful employment leads to large tax revenues and contributes to the collective welfare. Education and employment also have a positive effect on women's health, and there is a strong correlation between women's level of education and how well their children succeed in school. Botkyrka also identifies a number of challenges. One is that the extensive educational investments that are needed may be profitable in socioeconomic terms yet involve an economic loss for the particular municipality. Hence it can be difficult for municipalities to allocate the necessary resources, and therefore national investments need to be made.

Overcoming chronic unemployment requires public investments at an early stage, and only later – assuming the investment succeeds – do they begin to pay their way in terms of revenues and savings. For investments to lead to permanent improvements, different actors must collaborate around the problem to be solved. In this, the municipality and public employment service can play an especially important role. It is just as important to have a dialogue with the women involved. Short term economic considerations often steer people's choices. If a woman takes a student loan, for example, the entire household's livelihood support can be negatively affected, which may lead her to forgo further education.The estimates show that it would be socio-economically profitable to concentrate on outreach activities and other efforts to reach women who have few or no contacts with the labour market.

Women Empowerment Principles (WEPS) - The WEPs are a joint initiative of UN Women and the UN Global Compact. Launched in 2010, after a yearlong international consultation with multiple stakeholders. Expanding the role of women in the economy is a key priority for policymakers globally. Governments around the world increasingly recognize that gender equality is essential to propel economic growth and advance sustainable development. The UN's sustainable development goals (SDGs), which were adopted in September 2015, further emphasize that women's empowerment is central to sustainable development, through the inclusion of a stand-alone goal on gender equality as well as gender-relevant targets across the 17 SDGs. As governments seek to scale up existing efforts to advance women's empowerment and identify national action plans to implement the SDGs, it is essential to determine how to mobilize and work with business — an important engine for job creation, investment and innovation. Increasing and deepening the inclusion of women is smart economics, offering support for sustainable economic growth. However, this cannot happen as a solitary effort from governments. Businesses are a crucial partner for success. The women's empowerment principles

(WEPs), a joint initiative of UN Women and the UN Global Compact, provide governments with a ready-made platform to engage business as a partner in achieving national women's empowerment and gender equality goals. The WEPs clearly set out how companies can drive inclusion, and they are a way for governments to connect more deeply with business overall.

The WEPs elaborate the gender dimension of corporate sustainability, including the corporate responsibility to respect and commit to supporting women's rights. The WEPs are built on existing standards, initiatives and best practices related to business and women, and they seek to fill gaps to present a coherent vision for business to maximize positive impacts and minimize negative impacts on women. In doing so, the WEPs help to elaborate on both expectations of and opportunities for business in relation to women, with a view toward bringing about more equitable and inclusive workplaces, marketplaces and communities.

Conclusion - One of the most compelling conversations in today's marketplace is related to gender parity. Business leaders across the globe are responding to the urgent economic imperative of gender parity. By every measure, women's engagement at the leadership level is one of the core drivers of business performance and companies worldwide are falling short.

Research shows that teams where both men and women are engaged in leadership and execution in a balanced manner deliver higher quality and stronger financial results. Studies by the London Business School, the Corporate Leadership Council and Catalyst found that gender-balanced teams tend to be more innovative and collaborative, and that companies with a higher proportion of women on their leadership teams show better financial performance. A report from Credit Suisse found the average return on equity for companies with at least one woman on the board over the period from 2005 through 2011 was 16%, four percentage points higher than that of companies with no women on their boards (12%).10 At EY, our own internal studies have demonstrated the positive impact of gender-balanced teams on performance

References :-

1. Web:http://www.ey.com/Publication/vwLUAssets/EY-smart-principles smarteconomics/$FILE/EY-smart-principles-smart-economics.pdf
2. Web: http://webbutik.skl.se/bilder/artiklar/pdf/7164-987-4.pdf?issuusl=ignore
3. Web: http://www.genderaction.org/images/04.22.08_EZ-GAPlan%20Critique.pdf
4. E- book: http://www.oecd-ilibrary.org/fr/commonwealth/social-issues-migration-health/small-change-or-real-change/gender-equality-as-smart-economics-a-world-bank-group-gender-action-plan_9781848590274-10-en

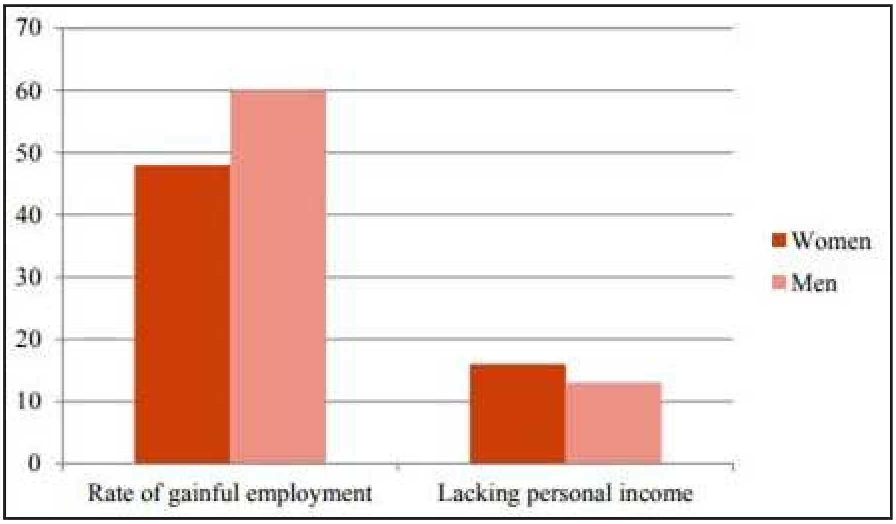

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

"मेक-इन इंडिया" के द्वारा वैश्विक विनिर्माण की पहल (एक -भावी रूप रेखा के रूप में)

डॉ. लता जैन *

प्रस्तावना – ऐतिहासिक रूप से देखा गया है कि विकास के रास्ते पर चलने वाली किसी भी अर्थव्यवस्था के विकास के चरण की तीन व्यापक श्रेणियां होती है। पहला चरण पारंपरिक समाज है, जहाँ कार्यबल का बड़ा हिस्सा कृषि गतिविधियां में लगा होता है इसके बाद औद्योगीकरण का चरण आता है जिसमें विनिर्माण क्षेत्र की बड़ी अहम भूमिका होती है जो विकास को परिभाषित करता हैं एवं आखिरी चरण एक विकसित अर्थव्यवस्था वाला होता है, जिसमें सेवा क्षेत्र की बडी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यह विकास प्रणाली विकसित देशों में है। इन देशों यूएसए, ब्रिटेन तथा जर्मनी आते है। दक्षिण कोरिया, चीन, ताईवान तथा वियतनाम जैसे उभरती एशियाई तथा दक्षिण एशियाई बाजार अर्थव्यवस्था भी इसी तरह की विकास कथा की रूप रेखा तैयार कर रही हैं।

भारत में विनिर्माण की जरूरत क्यों ? – भारत ने पारंपरिक विकास सिद्धातं से भिन्न विकास के अलग तरीके अपनाए हैं। अर्थव्यस्था में कृषि का योगदान लगातर घट रहा है तथा सेवा क्षेत्र का योगदान तेजी से बढ़ रहा है, इस साल यह बढ़कर लगभग 60 प्रतिशत तपंहुच गया है। किसी भी अन्य विकसित देशों के उलट कृषि क्षेत्र से छलांग लगाकर जीडीपी में अहम किरदार के रूप में सेवा क्षेत्र के विस्तार से भारत ने इस विशिष्ट विकास को अंकित किया है। कुल जीडीपी में 1951-2014 कअवधि के दौरान, औद्योगिक क्षेत्र की हिस्सेदारी थोडे बहुत अंतर के साथ लगभग समान रही है, यह हिस्सेदारी 16-26 प्रतिशत के बीच रही है। औद्योगिक क्षेत्र के लिए यह प्रवृति चिंता का वि8य रही है, क्योकि देश की श्रम शक्ति को रोजगार देने तथा वस्तुओं के उत्पादन दोनों के ख्याल से उद्योग तथा विनिर्माण, अर्थव्यवस्था की वास्तविक दर का आधार बनाते है। विकास के प्रभाव तथा जीडीपी मे क्षेत्रवार योगदान मे बदलाव को समझने के लिए हमें रोजगार-बेरोजगारी की तरफ देखना होगा, जो इस बात की जांच के एक महत्वपूर्ण उपाय की तरह है कि समाज के सभी वर्गों तक आर्थिक विकास की साकारात्मकता की पहुंच है भी या नहीं।

बेरोजगारी परिदृश्य – भारत में बेरोजगारी परिदृश्य गभीर बना हुआ है। इसके अलावा, कृषि का जीडीपी में योगदान लगभग 14 प्रतिशत है, लेकिन इसमें 50 प्रतिशत श्रमबल को रोजगार मिला हुआ है, यह इस बात का द्योतक है कि कृषि में छुपा हुआ श्रम बहुत ज्यादा है तथा श्रम उत्पादकता भी निम्न है। सेवा क्षेत्र जीडीपी में 60 प्रतिशत का योगदान देता है, लेकिन लगभग 25 प्रतिशत कार्यबल को रोजगार मिलता है।

तालिका – बेरोजगारी परिदृश्य

वर्ष	वर्तमान दैनिक स्थिति (सीडीएस) बेरोजगारी दर
1999-00	7.3 प्रतिशत
2004-05	8.2 प्रतिशत
2009-10	6.6 प्रतिशत
2011-12	5.6 प्रतिशत

स्त्रोत – आर्थिक सर्वेक्षण 2014-15

सेवा नीत विकास – भारत सचमुच में सेवा के लिहाज से एक स्वाभाविक तुलनात्मक लाभ वाली स्थिति में है, अर्थव्यवस्थाओं की परिपक्वता के साथ उद्योग विशेषज्ञों के पास कंपनियां कानूनी और सुरक्षा सेवाओं अनुसंधान और विकास जैसी विभिन्न गतिविधियों को आउटसोर्स करने की कोशिश करती है इससे जीडीपी में सेवाओं की हिस्सेदारी बढ़ती है।

तालिका – क्षेत्रवार रोजगार के स्वरूप में बदलाव

वर्ष	कृषि तथा संबद्ध क्षेत्र	उद्योग	सेवाएं
1951	72.1	10.6	17.3
1991	66.9	12.7	20.4
2009-10	53.2	21.5	25.3

स्त्रोत – आर्थिक सर्वेक्षण 2014-15

तालिका में यह देखा जा सकता है कि भारतीय अर्थव्यवस्था की रोजगार संरचना विभिन्न क्षेत्रों के योगदान के साथ मिलकर भी नहीं बदली है। जीडीपी में क्षेत्रवार योगदानो की यह व्याख्या तथा समय के साथ क्षेत्रवार रोजगार के स्वरूप इस बिंदु की ओर हमारा ध्यान खींचते हैं कि भारत में विकास के सेवा क्षेत्र नीत तरीके ने विकास दर में बढोतरी की है, वास्तव में यह एक रोजगार विहीन विकास है तथा अब भी भारत में एक समानता पर आधारित विकास के सृजन से कोसों दूर है।

निर्माण क्षेत्र पर ध्यान देने की जरूरत – भारत अपनी जनसाख्यिकी

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

और मांग स्वरूप में विशिष्ट है। हमारे माननीय प्रधानमंत्री ने हाल ही में इस बात पर प्रकाश डाला है कि भारत 3 डी यानी डेमोक्रेसी (लोकतंत्र) डिमांड (मांग) तथा डेमोग्राफी (जनसांख्यिकी) वाला एक अद्‌भुत देश है। यहां एक बडा घरेलू उपभोक्ता आधार है और घरेलू मांग की पर्याप्तता प्रति व्यक्ति आय में अच्छी वृद्धि द्धारा और मजबूत हो रही है। आपूर्ति के लिहाज से 1991-2013 तक भारत में आर्थिक रूप से सक्रिय जनसंख्या का अनुपात 57.7 प्रतिशत से बढकर 63.3 प्रतिशत हो गया है (आर्थिक सर्वेक्षण 2014-15) जो भारत को दुनिया के विनिर्माण कंपनियों में से एक के रूप में उभरने के लिए एक इष्टतम मांग- आपूर्ति का संयोजन प्रस्तुत करता है। यह उपलब्धि कई गुनी तब और बढ़ेगी, जब इस विनिर्माण गतिविधि का एक हिस्सा निर्यात क्षेत्र के लिए भी छलकेगा।

नये आधार के साथ विनिर्माण विकास की गणना – नई तथा पुरानी कार्यप्रणाली में दिखाए गए विनिर्माण क्षेत्र के विकास में बड़े पैमाने पर विसंगतियां रही हैं (2012-13 तथा 2013-14 में 5 प्रतिशत से ज्यादा)। यह अंतर वास्तविकता से ज्यादा सांख्यिकीय है तथा आंशिक रूप से एमसीए 21 के अंतर्गत कार्पोरेट मामलों के मंत्रालय के तहत ई- गवर्नेंस पहल से लिए गए आंकड़ो को और अधिक व्यापक और विस्तृत आंकड़ो को हासिल करने के लिए मंत्रालय जिम्मेदार है। विनिर्माण क्षेत्र में ही विनिर्माण कंपनियों द्धारा लागू व्यापार को भी शामिल किया गया है, इसे पहले सेवा क्षेत्र के अंतर्गत गिना जाता था। विनिर्माण में वास्तविक विकास सही मायने में 2012-13 तथा 2013-14 के दौरान वस्त्र, कपड़ा तथा चमड़ा उत्पाद में देखा गया क्योंकि औसत विकास इन क्षेत्रों में 177 प्रतिशत था।

तालिका 3 – (तालिका देखे आगे पृष्ठ पर)

इसमें उच्च उत्पादकता के साथ निबंधित विनिर्माण क्षेत्रों में उच्च दर सृजन के लिए रूपांतरण क्षेत्र होने की भरपूर संभावना है। अनिबंधित विनिर्माण क्षेत्र के मुकाबले निबंधित क्षेत्र की उत्पादकता 7.2 गुनी है।

विनिर्माण क्षेत्र की बाधाएं – विनिर्माण क्षेत्र अभी भी भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास की समस्याओ, कई कानूनों और नियमों से बंधा हुआ है। उद्यमियों के समाने उसे लेकर कोई स्पष्टता नहीं है, कारखाना लगाने के लिए मंजूरी की कई पेचीदगियां है, विपणन रणनीतियों तथा निर्यात नीतियों का अभाव है तथा यह क्षेत्र बुनियादी ढांजो, ऊर्जा तथा जलापूर्ति की कमियों से भी जूझ रहा है। आर्थिक सर्वेक्षण 2014-15 बताता है कि विनिर्माण क्षेत्र में पिछली कुछ तिमाहियों में बड़ी संख्या में लगाए जाने वाले प्रोजोक्ट्स ठप्प पडे है। इन प्रोजेक्ट्स में इस्पात, सीमेंट तथा खाद्य प्रस्सकरण है। 212 विनिर्माण प्रोजेक्ट्स कोषों की कमी मांग और प्रतिकूल बाजार की स्थितियों के कारण ठप्प है।

विनिर्माण क्षेत्र को बढ़ावा देने वाली नीतियां – विनिर्माण क्षेत्र प्रमुख प्रतिभागियों उद्यमियों और श्रमिकों वाले दो समूह के आसपास घूमता है। दोनों को पर्याप्त सुविधांए उपलब्ध कराने तथा दोनों समूहों के बीच अंत: क्रिया को सुविधाजनक बनाने एंव उन्हें सतुलित करने के लिए सरकार इन दोनों के बीच आती है ताकि प्रणाली सुचारू रूप से जारी रहे। इस परस्पर क्रिया में सरकार द्धारा बनाए जा रहे या लागू किए जा रहे कार्यक्रम तथा नीतियां आते हैं और समग्रता में ये विनिर्माण क्षेत्र के लिए एक उत्प्रेरक की तरह कार्य करते हैं।

'मेक इन इंडिया' क्यों ? – 'मेक इन इंडिया' भारत को एक वैश्विक विनिर्माण केंद्र में बदलने वाली एक समयबद्ध पहल है। नये निवेशकों को आकर्षित करने तथा विनिर्माण को बढ़ावा देने के लिए यह कार्यक्रम हस्तक्षेप के जारिये विनिर्माण क्षेत्र में समस्याओं की पहचान करता है तथा उसका हल निकालता है।

प्रक्रियात्मक विलंब को कम करने के लिए उठाए जा रहे कदम – औद्योगिक लाइसेंस प्रक्रिया को अबाध बनाने के लिए चौबीसों घंटे काम करने वाले E-Biz पोर्टल कुछ बडे हस्तक्षेपों में से एक है। पर्यावरण मंजूरी हासिल करने की प्रक्रिया को आनलाइन कर दिया गया है। इस नीति ने राष्ट्रीय निवेश और विनिर्माण जोन को मजूरी दी है,जिसमें एकल खिड़की मंजूरी के लिए प्रावधान उपलब्ध कराया जाएगा।

नये बाजार तथा कुशल श्रम का सृजन – नये स्मार्ट शहारों, औद्योगिक गलियारों और औद्योगिक समूहों के विकास के विचारों में कई स्तरों पर मानक विनिर्माण तकनीकों को बढा़वा देने तथा आगे- पीछे के लिकेज को जोड़ने की क्षमताए हैं। कबोडिया, म्यांमार, लओस और वियतनाम जैसे सीएमएलवी देशों में विनिर्माण केंद्रो की स्थापना को सहज बनाने के लिए प्रोजेक्ट विकास कंपनी के जरिए विश्व में भारतीय उत्पादों के लिए बाजार बेस तेयार करने की बेजोड़ संभावना हैं। इसके अलावा, इस पहल में नवयुवकों पर केंद्रित कार्यक्रम तथा कौशल विकास के लिए संस्थाएं शामिल हैं। एक सकारात्मक बदलाव कौशल विकास और उद्यमशीलता के लिए एक अलग मंत्रालय की स्थापना के रूप में सामने आया है, जहा युवाओं के लिए कौशल विकास के नये तकनीक प्राप्त करने के लिए राष्ट्रीय कौशल विकास निगम (एनएसडीसी) तथा राष्ट्रीय कौशल विकास अभिकरण है और इनके माध्यम से मंत्रालय विश्व के साथ जुड़ा है। **स्किल इंडिया** को उन भारतीय युवाआं के कौशल विकास पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए जो समूह व्यापक रूप से चमडा, कपड़ा,खाद्य प्रसंस्करण, जूट, रेशम उद्योग, हस्तशिल्प आदि जैसे उद्योगों में लगा हुआ है। कौशल विकास में प्रमुख प्रोत्साहन भारतीय चमडा विकास कार्यक्रम को दिया गया है, ताकि प्रति वर्ष 1,44,000 युवाओं को प्रशिक्षित किया जा सके। 2011 में प्रस्तुत की गई राष्ट्रीय विनिर्माण नीति (एनएमपी) का लक्ष्य विनिर्माण पर बल देते हुए 2022 तक 10 करोड़ अतिरिक्त नौकरियों का सृजन करना है, इससे वि8व स्तर पर प्रतिस्पर्धी विनिर्माण के उभार को सुनिएित किया जाएगा।

उच्च मूल्य औद्योगिक क्षेत्रों को बढ़ावा – व्यापक वैश्विक भागीदारी को प्रोत्साहन देने के लिए निवेश कैप्स तथा उच्च मूल्य औद्योगिक क्षेत्र को आसान बनाया गया है रक्षा क्षेत्र में एफडीआई की सीमा को बढाकर 26 प्रतिशत से 49 प्रतिशत किया है तथा रक्षा क्षेत्र में पोर्टफोलियो निवेश को स्वचालित मार्ग के तहत 24 प्रतिशत तक कर दिया गया है। मामले – दर – मामले पर, रक्षा में आधुनिक तथा कला प्रौद्योगिकी की स्थिति में 100 प्रतिशत तक एफडीआई की अनुमति दे दी गई है। रेलवे में, स्वचालित मार्ग

के तहत निर्दिष्ट रेल बुनियादी ढांचा परियोजनाओं के निर्माण, सचालन और रखरखाव के क्षेत्र में 100 प्रतिशत एफडीआई की अनुमति दी गई है। ये क्षेत्र भारत को उच्च मूल्य के विनिर्माण क्षेत्र में विशेषज्ञता हासिल में मदद कर सकते है।

श्रमिकश्रम क्षेत्र से संबंधित सुधार – सभी गैर–जोखिम और गैर खतरनाक व्यवसाय की व्यवस्था के लिए स्व–प्रमाणन द्वारा अपने व्यापार को स्थापित करने के लिए छोटे उद्यमियों को प्रोतसाहित किया जाएगा। औपचारिक कौशल प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले हमारे संभावित कार्य बल से 5 प्रतिशत से भी कम के साथ ग्रामीण युवाओं के लिए सरकार द्वारा शुरू की जाने वाली दीन दयाल उपाध्याय कौशल योजना से बदलाव आएगा। इसके अलावा, अपने बजट भाषण में माननीय वित्तमंत्री ने बताया कि सभी मंत्रालयों में फैले राष्ट्रीय कौशल मिशन को कई कौशल विकास कार्यक्रमों के जरिए और मजबूत करने की जरूरत है।

मेक इन इंडिया में एमएसएमई की भूमिका – एमएसएमई रोजगार सृजन के मुद्दों, जीडीपी में विनिर्माण की हिस्सेदारी में बढ़ोतरी तथा निर्यात प्रोत्साहन पर ध्यान देते हुए 'मेक इन इंडिया' को सशक्त करने में अपनी महत्तवपूर्ण भूमिका निभा सकता है। इस क्षेत्र की पहले से ही कुल विनिर्माण उत्पादन का लगभग 45 प्रतिशत की भागीदारी है और देश के निर्यात में इसका लगभग 40 प्रतिशत का योगदान है।

राष्ट्रीय विनिर्माण प्रतिस्पर्धा कार्यक्रम, ऋण गांरटी योजना, क्लस्टर विकास, और 20,000 करोड़ रूपये के कोष के साथ शुरू किए गए माइक्रो इकाइयों के लिए विकास पुनर्वित एजेंसी (मुद्रा) बैंक की घोषणा के माध्यम से सरकार द्वारा चलाई जा रही प्रमुख योजनाएं, 'मेक इन इंडिया' में योगदान के लिए एक स्वागत योग्य कदम हैं। अपरेंटिस प्रोत्साहन योजना से विनिर्माण क्षेत्र एमएसएमई को बढ़ावा मिलेगा। राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम (एम एस आई सी) द्वारा समर्थित एक अभिनव पहल कम लागत और उच्च गुणवत्ता एमएसएमई उत्पादों का www.msmeshopping.com के माध्यम से ऑन लाइन वितरण प्रणली का शुभारंभ हो गया है।

तालिका 4 **(देखे आगे)**

'मेक इन इंडिया' में व्यापार के प्रति सहजता: विश्व बैंक को व्यापार सहजता सूची 2015 में 189 देशों में भारत 142 वां था।

यह चिंता का विषय है कि व्यापार को आसान बनाने में प्रतिद्धद्धिता के बावजूद भारत अब भी बहुत पीछे है। 'मेक इन इंडिया' ने व्यापार को सुलभ गनाने का विशेष खयाल रखा है। पहली बार बने निवेशको की सहायता के लिए मार्गदर्शन करने वाले समर्पित समूह बनाने का प्रावधान किया जाएगा तथा सिंगल विंडो क्लियरेंस सिस्टम खोलने के लिए के लिए विनिर्माण क्षेत्र में निवेश करने पर जोर दिया जाएगा। दुनिया भर में चल रहे गो–ग्रीन की परिघटना पर अपने आपको भुनाने को लेकर भारतीय निर्माताओं के लिए यह परिपक्व समय है, जिसका इस्तेमाल स्वदेशी वस्त्र, जूट उत्पादों को बढ़ावा देने में किया जा सकता है तथा सौर एवं वायु ऊर्जा के सृजन के उपयोग में आने वाले अक्षय ऊर्जा उपकरण के निर्माण के प्रोत्साहन किया जा सकता है।

निष्कर्ष – भारत तथा भारत के बाहर की दुनिया के बीच के जुड़ाव को सशक्त करने में यह महत्वपूर्ण है कि –

1. सड़क का विस्तार, रेल तथा जलमार्ग की कनेक्टिविटी तथा भारत में विशाल समुद्रतटीय इलाकों को बेहतर बनाकर विनिर्माण क्षेत्र के लिए एक मजबूत बुनियाद डाली जा सकती है
2. समर्पित लदान तथा औद्योगिक कॉरिडोर से संबंधित कार्यो में और तेजी लाने की जरूरत है, क्योंकि ऐसा होने से विनिर्माण क्षेत्र में आपूर्ति तथा मांग दोनों ही क्षेत्रों में बहुस्तरीय ताकत मिलेगी।
3. कला और शिल्प की विविधता पर आधारभूत जानकारियों की समयबद्ध सुरक्षा, प्रोतसाहन तथा उन्हें बढ़ावा देने एवं बेहतर विपणन रणनीतियों के साथ उन्हें सुलभ कराने की आवश्यकता है।
4. क8मीर के ऊनी उत्पादों, पंजाब की फुल्कारी, राजस्थान का बंधोज, आंध्र प्रदेश की पोचमपल्ली, बंगाल का टांट और जमदानी, यूपी की बनारसी साड़ी आदि ऐसे कुछ स्वेदेशी वस्त्र उत्पाद है, जिन्हें विश्व स्तर पर निरंतर आयोजित होते प्रर्दशनी, मेले तथा कला प्रर्दशनी के जरिए लोकप्रिय बनाया जा सकता है।
5. मौजूदा पीढ़ी ऑनलाइन मार्केटिंग की दीवानी है, लिहाजा ऐसे उत्पादों की ऑनलाइन मार्केटिंग के लिए विभिन्न ऑनलाइन मार्केटिंग कंपनियों के साथ संबद्ध होने की आव8यकता है।
6. गुणवत्ता पर नियंत्रण रखकर और उत्पादों को बेचने की सुविधाजनक व्यवस्था देकर सरकार ग्रामीण क्षेत्रों में घरों के आसपास आय के स्रोत पैदा कर सकती है। इससे सुनिएित होगा कि विश्वस्त जनसांख्यिकीय लांभाश के फायदे की फसल को बेहतर तरीके से लिया जा सकता है।

नवम्बर 2015 के प्रथम सप्ताह में हमारे प्रधानमंत्री श्री मोदी ने ब्रिटेन यात्रा के दोरान वहां से भी इस उदेश्य से कई समझोते किये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. विनिर्माण आधारित आर्थिक वृद्धि– लेख,योजना पत्रिका अप्रैल 2015 अनुपम मिश्रा ।
2. मेक इन इड़ियां के लिये स्किल इड़ियां – लेख,योजना पत्रिका अप्रैल 2015 उत्सव कुमार सिंह ।
3. भारतीय विनिर्माण में संपोषणीय व नवचार की आवश्यकता – लेख तथ्य भारती, बालकृष्ण राव ।
4. नईदुनिया, दैनिक भास्कर, पत्रिका आदि समचार पत्रो के लेख पर अधारित ।
5. आर्थिक सर्वेक्षण पुस्तक 2014–2015

तालिका 3 – औद्योगिक विकास में बदलाव (स्थिर मूल्य) प्रतिशत

	2012-13		2013-14		2014-15 (AE)	
श्रेणी	**2004-05**	**2011-12**	**2004-05**	**2011-12**	**2004-05**	**2011-12**
विनिर्माण	1.1	6.2	-0.7	5.3	अनुपलब्ध	6.8
उद्योग	1.0	2.4	0.4	4.5	अनुपलब्ध	5.9

स्रोत– आर्थिक सर्वेक्षण 2014-15

तालिका 4 – एमएसएमई का विकास

वर्ष	कुल विनिर्माण उत्पादन में एमएसएमई की प्रतिशत हिस्सेदारी	एमएसएमई में रोजगार (लाख में)	कुल जीडीपी में एमएसएमई की प्रतिशत हिस्सेदारी
2006-07	42.02	805.23	7.73
2007-08	41.98	842.00	7.81
2008-09	40.79	880.84	7.52
2009-10	39.63	921.79	7.49
2010-11	38.48	965.15	7.42
2011-12	37.52	1011.80	7.28

स्रोत – एमएसएमई की वार्षिक रिपोर्ट 2013-14, एमएसएमई मंत्रालय।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

म. प्र. के धार जिले के बाग ब्लॉक मे सेंव उद्योग का आर्थिक अध्ययन

सुमन भंवर *

प्रस्तावना – भारत में लघु व कुटीर उद्योगो की परम्परा हजारों वर्ष पूर्व रही है और आज भी लघु एवं कुटीर उद्योगो का महत्व सबसे ज्यादा बढ़ता जा रहा है क्योंकि ऐसे उद्योगो की स्थापना की जाए जो इस पूंजी से स्थापित हो तथा अधिक लोगो को रोजगार प्रदान करें। इन्ही कारणो से प्राचीनकाल से ही लघु उद्योगों को महत्व मिलता आया है क्योंकि ये उद्योग सभी बेरोजगार व्यक्तियों को सहायता प्रदान करने में योगदान देता है।लघु उद्योगों से आशय ऐसे श्रम प्रधान उद्योगो से है जिसमें उत्पादन का पैमाना छोटा होता है जिनका स्वामित्व एवं नियंत्रण सामान्यत: एक ही व्यक्ति के पास होता है जिनमें पूंजी का विनियोग कम होता है। ऐसे उद्योगों का कार्यक्षेत्र सीमित होता है और ऐसे उद्योगों में यंत्रो एवं मशीनों का प्रयोग न्यूनतम रहता है और श्रमिकों की संख्या कम होती है।

इस प्रकार मध्य-प्रदेश में लघु उद्योग अत्यंत अनुकूल पूंजी, उत्पाद, अनुपात तथा उच्च-रोजगार लघु उद्योगों की विशिष्ट विशेषताएं है।इनमें अपेक्षाकृत कम पूंजी का विनियोग करके अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है और साथ ही अधिक संख्या में बेरोजगार व्यक्तियों को जीविका प्रदान की जा सकती है।इसके साथ ही लघु एवं कुटीर उद्योग आज हमारे लिए अंत्यन्त ही महत्वपूर्ण है ये उद्योग बचत एवं विनियोग को प्रोत्साहित करते है। वहॉ पर अधिक मात्रा में रोजगार के अवसर भी प्रदान करते है ऐंसे ही लघु उद्योगों की श्रेणी में सेंव उद्योग भी आती है।

धार जिले का सामान्य परिचय – धार जिले के इतिहास का प्रारंभ पाषण काल से आंरभ होता है इस युग के मानव पशुओ की भांति जगंलों, पर्वतों तथा नदियों के किनारे गुफाओं में रहते थे। पत्थरो के औजारो से शिकार कर अपने उदर की पूर्ति करते थे। इस प्रकार यहां के ऐतिहासिक प्रमाणों से ज्ञात होता है कि यह नगरी अति प्राचीन राजा-महाराजा एक वीर शासकों को शासित क्षेत्र रहा है। 1947 के बाद स्वतंत्र भारत के गणराज्य में इस नगर को शामिल किया गया। 18 मई 1947 को जिले के रूप में शामिल हुआ परन्तु 1 नवम्बर 1956 में राज्य पुनगर्ठन आयोग के समय मध्य-प्रदेश बनाया गया और धार जिले को मध्य-प्रदेश को 45 जिलों शामिल किया गया।वर्तमान में धार जिला सात तहसील में विभाजित है और इन तहसीलों के अन्तर्गत 13 विकास खण्ड शामिल है, जो 1570 गाँवों में विभाजित है इसमें 676 ग्राम पंचायत एवं 13 जनपद पंचायत और एक जिला पंचायत को मिलाकर एक सुव्यवस्थित जिला बनाया गया है। मध्य प्रदेश में धार जिले के बांग ब्लांक (क्षेत्र) एक छोटा शहर है तथा वहां पर सेंव उद्योग भी है जो स्थानीय रूप से कार्य करती है, सेंव उद्योग के प्रमुख 2 केन्द्र है जो स्थायी है। मध्य प्रदेश के मालवा क्षेत्र सबसे अधिक सेंव का उपयोग करते है क्योंकि मालवा क्षेत्र के सभी लोग सेंव को सब्जी, दाल, पोही आदि के साथ हमेशा खाते है। ये लघु उद्योग आस-पास के सभी क्षेत्र को भी अग्रसित करते है और वहां के लोगो को माल देकर उनको रोजगार प्राप्त करवाता है, ताकि वह अपना जीवनयापन कर सकें। आर्थिक विकास मे ये उद्योग मालवा क्षेत्र में सबसे ज्यादा भूमिका अदा करने का कार्य करती है।

अध्ययन की आवश्यकता –प्रस्तुत अध्ययन धार जिले के बाग ब्लाक संदर्भ में किया गया। यह क्षेत्र एक पिछड़ा हुआ और पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण वहां के अधिकतर लोग गरीब अर्थात् उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर होती है क्योंकि उनको रोजगार नहीं मिल पाता है, गांवों में उद्योग का अभाव रहता है इसलिए जो बाग ब्लाक में लघु उद्योग स्थापित किए गए हैं ये उद्योग वहां आस-पास के सभी गांवों को रोजगार प्राप्त करवाता है जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार होता है, इस उद्योग के प्रभाव के कारण सभी व्यक्तियों की रुचि जागृत हुई क्योंकि ये स्थानीय लघु उद्योग होने के कारण उनके आर्थिक विकास के महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।जिन व्यक्ति की आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण लघु उद्योग की आवश्यकता होना जरूरी होती है उसी प्रकार अध्ययन के लिए कुछ महत्वपूर्ण उद्देश्य भी होना चाहिए। बाग ब्लाक के आस-पास गांव जैसे जामनियापुरा, रिसावला, देवधा अखडा, मेहशरा, पीपरिया पानी आदि गांव ऐसे है जो पिछड़े बाग ब्लाक में एक प्रसिद्ध स्थान इतिहास के नाम से जाना जाता है जो नेनगांव के करीब लगा हुआ है। जिसे बाग गुफा के नाम से प्रसिद्ध माना जाता है। सेंव उद्योग एक ऐसा उद्योग है जो आस-पास के सभी गांवों में रोजगार के स्तर को बढ़ावा देता है जिससे उन लोगों की आर्थिक स्थिति में सुधार किया जा रहा है। अध्ययन की प्रकृति प्रस्तुति सर्वेक्षण पद्धति के आधार पर किया गया सर्वेक्षण पद्धति साक्षात्कार अनुसूची से आंकड़ों को एकत्रित किया।

अध्ययन का उद्देश्य – यह अध्ययन करना कि बाग ब्लाक में सेंव उद्योग की प्रकृति क्या है। यह अध्ययन करना कि सेंव मिलों में निहित पूंजी, आय, उत्पादन तथा रोजगार की क्या स्थिति है एवं मजदूरी असमानता का अध्ययन करना। सेंव उद्योग द्वारा क्षेत्रीय आर्थिक विकास में योगदान का अध्ययन करना।प्रस्तुत अध्ययन का सर्वेक्षण करने पर यह पाया गया, कि धार जिले के बाग ब्लाक में केवल 2 सेंव मिल हैं जो कि उनको 'अ' और 'ब' नाम द्वारा प्रदर्शित किया गया। 'अ' मिल की स्थापना वर्ष 1990 और 'ब' मिल की स्थापना वर्ष 1992 में हुई और मिल मालिक की शैक्षणिक योग्यता देखी जाय तो बहुत ही कम हैं जो कि 'अ' मिल मालिक की शैक्षणिक योग्यता स्नातक हुई, ये दोनों ही सामान्य वर्गो के अन्तर्गत आते हैं और इन दोनों मिलो की पूंजी, आय, उत्पादन तथा रोजगार से सम्बधित जानकारी का पता लगाया गया और दोनो मिलों में कच्चे माल की प्राप्ति प्रदेश और प्रदेश से बाहर प्राप्त किया जाता हैं

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र अध्ययनशाला) देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

तालिका क्रमांक –1

सेंव मिल में लगने वाला कच्चा माल, उत्पादन, पूंजी, श्रम की मात्रा

क्र.		'अ' मिल	'ब' मिल
1	कच्चे माल की मात्र	1 लाख	2 लाख
2	कच्चे माल की लागत	50 हजार	1 लाख
3	उत्पादन की मात्रा	20 लाख	30 लाख
4	पूंजी की मात्रा	1.50 लाख	2 लाख
5	श्रम की मात्रा	9,85,500 (साल की)	6,57,000 (साल की)

तालिका न. 1 स्पष्ट है कि 'अ' मिल में कच्चे माल की 1 लाख रूपये है और 'ब' मिल में कच्चे माल की मात्रा 2 लाख है तथा इसकी लागत की मात्रा देखी जाए, तो 'अ' मिल की लागत मात्रा 50 हजार और 'ब' मिल की लागत मात्रा 1 लाख है जो कि 'अ' मिल की तुलना में 'ब' मिल की लागत मात्रा 50 हजार अधिक हैं, उत्पादन की मात्रा 'अ' मिल में और 'ब' मिल में उत्पादन की मात्रा 30 लाख यहॉं पर भी उत्पादन की मात्रा 'अ' मिल की तुलना में 'ब' मिल में 10 लाख अधिक हैं पूंजी की मात्रा 'अ' मिल में 1.50 लाख और 'ब' मिल में 2 लाख, जो कि 'अ' मिल की पूंजी 'ब' मिल से 50 हजार अधिक हैं। 'अ' मिल में श्रम की मात्रा 9,85,500 (एक साल की) होती है और 'ब' मिल में श्रम की मात्रा 6,57,000 (एक साल की) होती हैं जो कि 'अ' मिल में 'ब' मिल की तुलना में श्रम की मात्रा अधिक लगती है।

तलिका क्रमांक 2 (देखे आगे पृष्ठ पर)

तालिका न. 2 से स्पष्ट होता है कि सेंव मिल में 'अ' और 'ब' में उत्पादन के लिए कितनी पूंजी की आवश्यकता होती है यहां पर स्पष्ट किया गया है कि 'अ' मिल में स्वयं की पूंजी 1 लाख और बैकों से प्राप्त राशि 50 हजार ली, कुल मिलाकर 1,50 लाख है और 'ब' मिल में स्वयं की पूजी 1,50 लाख और बैकों से प्राप्त राशि 50 हजार अधिक है इसका मतलब यह हुआ कि 'ब' मिल में अधिक पूजी लगायी जाती हैं यदि प्रतिशत के रूप में देखा जाय तो 'अ' मिल में स्वयं की पूंजी 6.6 प्रतिशत और बैकों से राशि 33.3 प्रतिशत ली जाती है और 'ब' मिल में स्वयं की पूंजी 75 प्रतिशत और बैकों से प्राप्त राशि 25 प्रतिशत ली जाती हैं जो कि 'अ' मिल की तुलना में 'ब' मिल की स्वयं पूंजी अधिक और बैको से कम राशि ली जाती हैं।

तालिका क्रमांक 3 (देखे आगे पृष्ठ पर)

तलिका न. 3 से स्पष्ट होता है कि सेंव मिल में लगने वाले श्रमिक 'अ' मिल में 30 श्रमिक और 'ब' मिल में 20 श्रमिक प्रतिदिन लगते है 'अ' मिल में पुरूषों की संख्या 20 और महिला की सख्या 10 अर्थात 66 प्रतिशत पुरूष और 33 प्रतिशत महिला श्रम करती हैं और 'ब' मिल में श्रमिक कि संख्या 20 हैं पुरूष की सख्या 15 और महिला कि संख्या 5 अर्थात पुरूष 75 प्रतिशत और महिला 25 प्रतिशत कार्य करते हैं जो कि 'अ' मिल में कार्यरत श्रमिको की अधिक परन्तु यदि प्रतिशत में देखा जाए, तो 'अ' मिल की तुलना में 'ब' मिल में कार्यरत श्रमिको का प्रतिशत अधिक है किन्तु यदि देखे तो 'अ' मिल में कार्यरत श्रमिक का प्रतिशत अधिक होना चाहिए, इसका मतलब यह हुआ कि जितना बडा उद्योग होता है उतना ही अधिक श्रमिक की आवश्यता होती है। और कार्यरत श्रमिको का भुगतान प्रतिदिन पुरूष व महिला दोनो को 90 रू दिये जाते है और 'ब' मिल में की पुरूष व महिला दोनो को 90 रू दिये जाते है और प्रतिमाह 2700 सौ दिये जाते है इस तरह दोनो मिल में कार्यरत श्रमिको को समान मजदूरी दी जाती है।

निष्कर्ष –

1. सेंव मिल में लगने वाली पुजी 'अ' मिल में 1.50 लाख और 'ब' मिल में 2 लाख है जबकि 'अ' मिल से 'ब' मिल छोटी इकाई है फिर भी 'ब' मिल में अधिक पुंजी की आवश्यकता होती है।
2. सेंव मिल में लगने वाले श्रमिक 'अ' मिल में 30 श्रमिक और 'ब' मिल में 20 श्रमिक है जबकि 'ब' मिल बडी इकाई होने से श्रमिकों की संख्या अधिक होना चाहिए परन्तु 'ब' मिल की तुलना में 'अ' मिल में अधिक श्रमिको की संख्या है।
3. सेंव मिल में लगने वाले कच्चे माल की मात्रा व लागत की मात्रा 'अ' मिल की तुलना में 'ब' मिल मे अधिक लग रहा है इसलिए की 'अ' मिल से ज्यादा आवश्यकता 'ब' मिल को होती है।
4. सेंव मिल में उत्पादन की मात्रा के लिए पूंजी की मात्रा, श्रम की मात्रा के लागत की मात्रा 'अ' मिल की तुलना में 'ब' मिल को अधिक पूंजी की मात्रा प्राप्त करने के लिए 6.59 श्रम की मात्रा 'अ' मिल की तुलना में 'ब' मिल में 3.28 श्रम की मात्रा लगी है जो कि बहुत कम है। इसका मतलब यह हुआ कि 'अ' मिल 'ब' मिल से अधिक पूंजी प्राप्त की है।
5. सेंव मिल मे श्रम की मात्रा, पूंजी की मात्रा व लागत की मात्रा के लिए उत्पादन की मात्रा 'अ' मिल की तुलना में 'ब' मिल को कम लगी है जबकि 'अ' मिल में श्रम की मात्रा के लिए 0.15 पूंजी की मात्रा और 'ब' मिल में 0.30 पूंजी की मात्रा लगी जो कि 'अ' मिल की तुलना में 'ब' मिल को पूंजी की मात्रा अधिक लगी। इसका मतलब यह हुआ श्रम की मात्रा प्राप्त करने के लिए पूंजी कि अधिक आवश्यकता होती है।
6. अत: सर्वेक्षण करने पर पाया गया कि इन दो उद्योग में उद्योग 'अ' में 30 मजदूर और उद्योग 'ब' में 20 मजदूर दिन के कार्य करते है और उनको दिन की मजदूरी महिला और पुरूष दोनो को 90 रू प्रतिदिन दिये जाते है 'अ' उद्योग एक छोटा उद्योग है परन्तु फिर भी कुक्षी, बड़वानी, धार, झाबुआ, गुजरात आदि जगह माल पहुचाया जाता है और लोकल बांग क्षेत्र के आस–पास सभी गॉव जैसे देवधा, भमोरी, उंड़ली, जाामनियापुरा नेनगांव आदि गांवो में माल देते है जिससे अधिक लोगों को ये उद्योग रोजगार प्राप्त करवाता है। क्योंकि वर्तमान समय में लघु उद्योगों का होना आवश्यक हो गया, जिससे अधिक से अधिक लोगों को रोजगार मिल सके।
7. उपर्युत निष्कर्षो से स्पष्ट होता है कि ये सेंव उद्योग क्षेत्रीय अर्थव्यवास्था में किस प्रकार योगदान दे सकती है इसके लिए अनेक सुक्षाव सुझाव की आवश्यकता है। सेंव उद्योग क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था में अनेक छोटे छोटे लघु उद्योगो का विकास किया जाना चाहिए, जिससे आस पास के लोगों की रोजगार का स्तर प्राप्त हो सकेजिससे उनकी आर्थिक स्थितियों में सुधार हो सके।सेंव उद्योग बाग ब्लाक में आस पास सभी गांवो में रोजगार प्राप्त कर वाती है जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार होता जा रहा हैं। इस प्रकार के उद्योग आर्थिक विकास के लिए होना आवश्यक है ताकि बेरोजगारी लोगो को रोजगार प्राप्त हो सके ।सेंव उद्योग एक महत्वपूर्ण योगदान के रूप में कार्य करती है क्योकि ये सभी आस पास के गांव में रोजगार प्राप्त करने में मुख्य स्थान रखती हैं। अत: उपरोक्त बातो से स्पष्ट होता है कि सेंव उद्योग क्षेत्रीय अर्थिक व्यवस्था में अपना प्रमुख स्थान रखती है एवं यह उद्योग बांग क्षेत्र में अधिकतर व्यक्तियों को लघु उद्योग के तहत रोजगार प्राप्त करने में सहायता प्रदान करते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्री मोरारजी देसाई, भारतीय अर्थव्यवस्था (2010-2014) विघा सरल अध्ययन माला, पृष्ठ संख्या, 155।
2. भारतीय योजना आयोग, भारतीय अर्थव्यवास्था (2013-2014) खजूरी बाजार इन्दौर पृष्ठ संख्या, 127।
3. कु सपना वर्मा, (2003-2004) लघु उद्योगो में तकनीकी परिवर्तन 'शर्ट' उत्पादन में अध्ययन, इन्दौर के संदर्भ में, पृष्ठ संख्या, 15।
4. प्रतियोगिता दपर्ण, हिन्दी वार्षिक 2006, पृष्ठ संख्या, 84।
5. डॉ. श्याम प्रसाद मुखर्जी, कृषि अर्थशास्त्र (1999), नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या, 199।
6. वित्त आयोग, ग्रामीण विकास (1999), साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा।

तलिका क्रमांक 2

सेंव मिल में लगने वाली पूंजी

	'अ' मिल	K/V	%	'ब' मिल	K/V	%
स्वयं की पूंजी	1 लाख	0.75	6.6%	1,50 लाख	0.66	75%
बैंको से प्राप्त राशि	50 हजार		33.3%	50 हजार		25%

तालिका क्रमांक 3

सेंव मिल में लगने वाले श्रमिक व उनकी मात्रा

	'अ' मिल	%	'ब' मिल	%
कार्यरत श्रमिक	30	20		
पुरूष	20	66%	15	75%
महिला	10	33%	5	25%
भुगतान (पुरूष)	90 (प्रतिदिन)	90 (प्रतिदिन)		
भुगतान (महिला)	90	90		

****

मध्य प्रदेश में मानव ससांधन से शिक्षा व रोजगार विकास

डॉ. आमोद करस्तवार *

प्रस्तावना – मानव ससांधन विभिन्न कार्य रूपो में कहीं न कहीं प्रत्येक क्षेत्र में अपनी सहभागिता प्रदर्शित करता है जिसका उद्देश्य कार्य शीलता निर्वन उच्च क्षमता निर्माण, मनोबल व सुदृढ़ता प्रदान करना है। मानव ससांधन रूप से मानव विकास की गतिविधियों को आगें बढ़ाता है हमारे देश में भी मानव संसाधन विकास मंत्रालय के माध्यम से मानव विकास की कई पहले क्रियान्वयित की गई है जिनका उद्देश्य सम्पूर्ण रूप से मानव विकास व देश के उज्जवल भविष्य को ध्यान में रखकर तैयार की है। मानव संसाधन ही बस वह है जिससे तकनीकि विकास व आर्थिक विकास पर जोर दिया जा सकता है। वैश्विक आर्थिक और वित्तीय संकेत ने जो गत वर्षो से बना हुआ है। ने केवल विश्व के लगभग सभी देशों की बाहरी झटकों के प्रति संवेदनशीलता को उजागर किया है वरन् विकासात्मक नियोजन के लिये सबक भी दिये है। भारत जनसांख्यिकीय क्रान्ति का कगार पर है इसकी 15 से 59 वर्ष के बीच की कार्यबल आबादी के वर्ष 2001 में 58 प्रतिशत से बढ़कर 2021 में 64 प्रतिशत से अधिक होने का संभावना है जिससे कामकाजी आयु समूह में 2011 और 2016 के बीच लगभग 63.5 मिलियन नये लोग और जुड़ जायेगें, जिनमें से अधिकांश 20–35 वर्ष के अपेक्षाकृत तरूण आयु वर्ग में होगें। ऐसा होने पर यह विश्व के सर्वाधिक युवा राष्ट्रों में से एक है, यह मानव संसाधन के लिये बहुत अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि जनसांख्यिकीय लांभाश की फल प्राप्ति केवल तथा हो सकती है जब यह युवा आबादी स्वस्थ, शिक्षित और कुशल हो।

शोध का उद्देश्य – आज के परिवेश में शिक्षा सबसे महत्वपूर्ण शक्ति है जिससे समाज के विभिन्न क्षेत्रों को आगे बढ़ाने में मदद मिलेगी जिसका परिणाम भावी रूप से देश हित व प्रगति के लिये महत्वपूर्ण होगा। सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक परिवर्तन के लिये शिक्षा सर्वाधिक महत्वपूर्ण शक्ति है 21 वीं सदी में आर्थिक और सामाजिक विकास के लिये सुरक्षित, सम्बन्धित ज्ञान से परिपूर्ण, दृष्टिकोण और कौशल वाले लोगों की आवष्यकता है। सामाजिक आर्थिक रूप से प्रेरित करना और न्याय संगत तथा न्यायपूर्ण समाज के निर्माण के लिये शिक्षा सर्वाधिक प्रभावशाली यंत्र और मुख्य साधन है। शिक्षा आर्थिक कल्याण के लिये कौशल व योग्यता उपलब्ध कराती है। शिक्षा नागरिकों को शासन प्रक्रियाओं में पूर्ण रूपेण सहभागिता के लिये आवष्वयक साधन जोड़कर प्रजातन्त्र को मजबूती प्रदान करती है सामाजिक जुड़ाव व राष्ट्रीय पहचान को प्रोत्साहित करने वाले मूल्य बताकर शिक्षा समाज में समाकलनात्मक के रूप में भी कार्य करती है। राष्ट्रीय विकास में शिक्षा के महत्व को पहचानकर दी जा रही है। शिक्षा की गुणवत्ता में महत्वपूर्ण रूप से सुधार द्वारा और यह सुनिश्चित करते हुए कि समाज के सभी वर्गो को शिक्षा के समान अवसर मिलें। सकल घरेलू उत्पादन के प्रतिशत के रूप में शिक्षा पर होने वाले छय के 2004–05 में 3.3 प्रतिशत से बढ़ाकर वर्ष 2011–12 मे 4 प्रतिशत से अधिक किया गया वर्ष 2004–05 में शिक्षा पर 888 रू प्रति व्यक्ति सार्वजनिक व्यय को बढ़ाकर वर्ष 2011–12 में 2.985 रू किया गया है। शिक्षा पर हुआ सार्वजनिक व्यय लगभग 43 प्रतिशत प्राथमिक शिक्षा लिय 25 प्रतिशत माध्यमिक शिक्षा के लिये और शेष 32 प्रतिशत शिक्षा के लिये था। केन्द्र सरकार का लगभग अहम व्यय उच्च शिक्षा ओर शेष प्राथमिक शिक्षा (39 प्रति.)और माध्यमिक शिक्षा (12 प्रतिशत) पर हुआ था। राज्य क्षेत्र में 44 प्रतिशत प्राथमिक शिक्षा और 30 प्रतिशत माध्यमिक शिक्षा के लिये है।

शिक्षा – प्राथमिक (कक्षा एक से पांच) और उच्च प्राथमिक (6 से 8) वाली प्रारम्भिक शिक्षा को शिक्षा पिरामिड की नीवं माना जाता है। बच्चों को अनिवार्य और नि:शुल्क शिक्षा का अधिकार (आरटीई) अधिनियम 2009 दिनांक 01 अप्रैल 2010 से लागू हो गया है

मध्यप्रदेश मे शिक्षा – पिछले एक दशक में राज्य में साक्षरता दर में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। वर्ष 2011 की जनगणनानुसार प्रदेश की साक्षरता दर 70.6 प्रतिशत है जो राष्ट्रीय औसत 74.04 से कम है। उपरोक्त साक्षरता दर के उपरान्त भी लगभग 40 प्रतिशत महिलायें निरक्षर है। राज्य में साक्षरता दर में वृद्धि हेतु सघन प्रयास किये जा रहे है।

प्रारम्भिक शिक्षा – नि:शुल्क एवं अनिवार्य बाल अधिकार अधिनियम 2009 प्रदेश में अप्रैल 2010 से यह योजना प्रभावशाली है। इस योजना के क्रियान्वयन हेतु प्रदेश में मार्च 2011 को नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा अधिकार अधिनियम 2011 जारी किये गये है। अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों के अनुरूप समस्त अपेक्षित कार्यवाहियां राज्य शासन ने पूर्ण की है। प्रारम्भिक शिक्षा के मौलिक अधिकार अधिनियम 2009 के प्रावधानों का क्रियान्वयन सर्व शिक्षा अभियान कार्यक्रम के माध्यम से करने का निर्णय लिया गया है। सर्व शिक्षा अभियान वर्ष 2013–14 के लिये स्वीकृत 3695.35 करोड रूपये के 1928.92 करोड़ की राशि व्यय की गई। राज्य शिक्षा केन्द्र से सम्बन्धित योजनाओं की वर्ष 2013–14 माह अक्टूबर 2013 का विवरण सारणी क्रं. 1 में दर्शाया गया है।

सारणी क्रमांक – 1

राज्य शिक्षा केन्द्र की योजनाएं

घटक	स्वीकृत राशि (करोड रू में)	व्यय राशि (करोड रू में)
सर्व शिक्षा अभियान	3590.44	1913.58
कास्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय	104.91	15.34
योग	3695.35	1928.92

* पूर्व शोधार्थी (अर्थशास्त्र) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

शैक्षणिक संस्थाएं – प्रदेश के 89 आदिवासी विकास खण्डों में आदिवासी विकास विभाग द्वारा प्राथमिक स्तर से उच्चतर माध्यमिक स्तर तक की शालाएं एवं आवासीय संस्थाएं संचालित किये जा रहें है। वर्तमान मे विभाग द्वारा संचालित शैक्षणिक संस्थाओं का वर्ष 2013-14 का विवरण सारणी क्रं. 2 में दर्शाया गया है।

सारणी क्रमांक – 2 – शैक्षणिक संस्थान

संस्था का प्रकार	संख्या
प्राथमिक शाला	12643
माध्यमिक शालाएं	4369
हाई स्कूल	881
उच्चतर माध्यमिक विद्यालय	664
आदर्श उच्चतर माध्यमिक विद्यालय	8
कन्या शिक्षा परिसर	42
एकलव्य आदर्श आवासीय विद्यालय	20
न्यून साक्षरता वाले कन्या शिक्षा परिसर	13
विशेष पिछडी जनजाति आवासी विद्यालय	3
क्रीडा परिसर	17
प्री-मैट्रिक छात्रावास	1316
पोस्ट-मैट्रिक छात्रावास	110
आश्रम शालाएं	1025

रोजगार कार्यालय व प्रभाग – उद्योग संचालनालय मध्यप्रदेश के रोजगार प्रभाग द्वारा पारम्पिरिक रूप से तीन गतिविधियां संचालित की जाती है।

- रोजगार सहायता
- व्यावसायिक मार्गदर्शन
- रोजगार बाजार

मध्यप्रदेश इन गतिविधियों का उद्देश्य, बेरोजगार आवेदकों को नियोजन सेवा उपलब्ध कराना रोजगार/स्वरोजगार के चयन, परिवर्तन एवं समायोजन के लिये व्यावसायिक परामर्श देना, नियोजकों को उपयुक्त कर्मचारी उपलब्ध कराना तथा स्थानीय रोजगार बाजार का अध्ययन कर महत्वपूर्ण आंकडे एकत्र करना है। अपरोक्ष रूप से रोजगार सहायता/व्यावसायिक मार्गदर्शन के माध्यम से बेरोजगारी/अर्ध बेरोजगारी कम करने एवं उत्पादकता को बढ़ाने में रोजगार सेवा की सक्रिय सहभागिता होती है साथ ही रोजगार बाजार सूचना संग्रह कार्यक्रम के अर्न्तगत संग्रहित रोजगार बाजार की प्रवृत्तियां, उभरतें रोजगार अवसरों/बेरोजगारों/अर्ध बेरोजगारों आदि के वर्गीकृत आंकडे राष्ट्रीय स्तर पर रोजगार सम्बन्धी योजनाओं के लिये आधारभूत आंकडे उपलब्ध कराते है

सारणी क्रमांक – 3

उद्यमिता विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम का विगत पांच वर्षो मे प्रगति विवरण

क्र.	वर्ष	आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रमों की कुल संख्या	कुल लाभान्वित प्रशिक्षणार्थी
1	2008-09	54	1500
2	2009-10	65	1595
3	2010-11	70	1912
4	2011-12	79	2464
5	2012-13	104	23199
6	2013-14	347	10491

रोजगार सहायता – रोजगार कार्यालय शिक्षित, अशिक्षित, तकनीकि तथा गैर तकनीकि योग्यताधारी आवेदकों का पंजीयन कर अधिसूचित रिक्त स्थानों के लिये वरिष्ठता एवं योग्यता के अनुसार आवेदकें के नाम नियोजकों को भेजते है। वर्ष 2013-14 (01 अप्रैल 2013 से 31 मार्च 2013 तक) मे मध्यप्रदेश के रोजगार कार्यालयो की उपलब्धियां निम्नानुसार है-

सारणी क्रमांक – 4

मध्यप्रदेश के रोजगार कार्यालयो की उपलब्धियां

क्र.	विवरण	31.03.2014 तक की स्थिति
1	पंजीयन	417591
2	नौकरी मे लगे आवेदको की संख्या	382
3	आवेदकों की संख्या जिनके नाम रोजगार के लिये नियोजकों को भेजे गये	6799
4	अधिसूचित रिक्त स्थान	1144
5	जीवित पंजी (दिनांक 31.03.2014 की स्थिति मे)	2045854

व्यावसायिक मार्गदर्शन – प्रदेश के रोजगार कार्यालयो द्वारा व्यावसायिक मार्गदर्शन कार्यक्रम अन्तर्गत व्यक्तिगत एवं सामूहिक रूप से शिक्षित बेरोजगारों को व्यवसायिक मार्गदर्शन प्रदान किया जाता है। दिनांक 31मार्च 2014 तक रोजगार कार्यालयों द्वारा व्यावसायिक मार्गदर्शन के क्षेत्र मे किये गये कार्यो का विवरण निम्नानुसार है-

सारणी क्रमांक – 5

रोजगार कार्यालयों द्वारा व्यावसायिक मार्गदर्शन के क्षेत्र मे किये गये कार्य

क्र.	विवरण	वर्ष 2013-14 की उपलब्धियां
1	पंजीयन मार्गदर्शन प्राप्त आवेदको की संख्या	234606
2	व्यवक्तिगत सूचना प्राप्त आवेदकों की संख्या	25981
3	पुराने प्रकरणों की समीक्षा	596
4	आयोजित व्यावसायिक बार्तायें	887
5	आयोजित शिविर	275

कैरियर काउन्सिलिंग – वित्तीय वर्ष 2012-13 में कुल 75546 तथा वित्तीय वर्ष 2013-14 के कुल 77079 शिक्षित आवेदकों को काउन्सिलिंग के माध्यम से व्यावसयिक मार्गदर्शन प्रदान किया गया।

रोजगार कार्यालयों को सूचना प्रौद्योगिकी सम्बन्धी कार्य – वित्तीय वर्ष 2012-13 में 372068 तथा वित्तीय वर्ष 2013-14 (31.12.2013 की स्थिति) मे कुल 344237 बेरोजगार आवेदकों का ओन लाइन पंजीयन किया गया।

1. **पंजीयन –** राज्य में स्थित रोजगार कार्यालयों में वर्ष 2012 में 5.40 लाख व्यक्तियों का पंजीयन किया गया था। वर्ष 2013 में (दिसम्बर 2013 तक) की अवधि में लगभग 4.24 लाख व्यक्तियों का पंजीयन किया गया। रोजगार कार्यालयों की जीवित पंजी पर दर्ज कुल बेरोजगारों की संख्या वर्ष 2012 के अन्त में 20.69 लाख थी, जो घटाकर वर्ष 2013(दिसम्बर 2013) के अन्त में 20.66 लाख हो गई जो गत वर्ष से 0.14 प्रतिशत कम है।

2. **शिक्षित बेरोजगार –** राज्य के रोजगार कार्यालयों की जीवित पंजी पर दर्ज कुल शिक्षित बेरोजगारों की संख्या वर्ष 2012 के अन्त में 16.77

लाख थी जो वर्ष 2013 में (दिसम्बर 2013 तक) के अन्त में बढकर 17.51 लाख हो गई जो गत वर्ष से 4.41 प्रतिशत की वृद्धि दर्षाती है। वर्ष 2012 के अन्त में जीवित पंजी पर दर्ज कुल बेरोजगारों मे शिक्षित बेरोजगारों का प्रतिशत 81.05 था जो वर्ष 2013 में (दिसम्बर 2013 तक) के अन्त में बढकर 84.75 प्रतिशत को गया। वर्ष 2013 में (दिसम्बर 2013 तक) जीवित पंजी पर दर्ज कुल शिक्षित बेरोजगारो की संख्या 17.51 लाख रही।

3. सार्वजनिक क्षेत्र में रोजगार – वर्ष 2011–12 में राज्य के सार्वजनिक क्षेत्र में लगभग 8.40 लाख व्यक्ति कार्यरत थे, जिनमें 1.20 लाख महिलायें थी, जबकि वर्ष 2012–13 की अवधि में इनकी संख्या बढ़कर 8.46 लाख हो गई, किन्तु महिलाओं की संख्या 1.20 लाख ही रही। इस प्रकार आलोच्य वर्ष में गत वर्ष सार्वजनिक क्षेत्र के रोजगार में लगे व्यक्तियों की संख्या में 0.71 प्रतिशत की वृद्धि रही।

4. रोजगार की स्थिति एवं रोजगार के प्रयास – प्रदेश में स्थित 48 रोजगार कार्यालयों के माध्यम से वर्ष 2013 में (दिसम्बर 2013 तक) 5.00 हजार व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध कराया गया। वर्ष 2012 में रोजगार कार्यालय के माध्यम से रोजगार उपलब्ध कराये गये कुल 12.00 हजार व्यक्तियों में से 643 महिलायें, 1056 अनुसूचित जाति एंव 1178 अनुसूचित जनजाति के व्यक्ति थे। वर्ष 2013 में (दिसम्बर 2013 तक) रोजगार कार्यालय के माध्यम से रोजगार उपलब्ध कराये गये कुल 5.00 हजार व्यक्तियों में से 154 महिलायें, 242 अनुसूचित जाति एवं 276 अनुसूचित जनजाति के व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध कराया गया।

5. प्रशासनिक क्षेत्र में नियोजन – प्रशासनिक क्षेत्र में नियोजन की गणनानुसार 31 मार्च 2013 के अन्त तक राज्य में कुल 7.35 लाख कर्मचारी कार्यरत रहे। कुल शासकीय कर्मचारियों में वर्ष 2012 की अपेक्षा वर्ष 2013 में 1.01 प्रतिशत की वृद्धि हुई। कर्मचारियों में शासकीय विभागों में नियमित कर्मचारी 4.40 लाख राज्यीय सार्वजनिक उपक्रम एवं अर्द्ध–शासकीय संस्थाओं में 0.54 लाख, नगरीय स्थानीय निकायों में 0.74 लाख ग्रामीण स्थानीय निकायों में 1.57 लाख, विकास प्राधिकरण एवं विशेष क्षेत्र विकास प्राधिकरण में 0.02 लाख एवं विश्वविद्यालय में 0.07 लाख कर्मचारी कर्यिरत रहें।

6. कारखानों की संख्या एवं नियोजन – प्रदेश में वर्ष 2011 में माह दिसम्बर 2011 तक कारखानों की संख्या बढ़कर 10.00 हजार हो गई तथा औसत दैनिक रोजगार 3.95 प्रतिशत बढ़कर 474 हजार हो गया। वर्ष 2011 माह दिसम्बर 2011 तक कुल 288 नवीन कारखानें पंजीकृत किये गये जिनकी नियोजन क्षमता 17.67 हजार रही। वर्ष 2012 में माह दिसम्बर 2012 तक 105 वर्ष कारखानें पंजीकृत हुए तथा राज्य में कारखानों की संख्या 14.57 हजार तथा उनकी नियोजन क्षमता 7.93 लाख हो गयी वर्ष 2013 में माह 2013 तक 165 नये कारखानें पंजीकृत हुए है तथा राज्य में कारखानों की संख्या 14.73 हजार तथा नियोजन क्षमता 8.22 लाख हो गई। वर्ष 2014 में मार्च 2014 तक 159 नयें कारखानें खोलें नये तथा राज्य में कारखानों की संख्या 14.76 हजार तथा नियोजन क्षमता 8.45 लाख हो गयी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. एन. आर. स्वरूप सक्सेना व शिखा चतुर्वेदी उदीयमना भारतीय समाज में शिक्षक संस्करण 2007, आर.एल. बुक डिपो मेरठ उ0प्र
2. बारहवीं पंचवर्षीय योजना 2012–12 सामाजिक क्षेत्रक, योजना आयोग, भारत सरकार
3. मध्यप्रदेश का आर्थिक सर्वेक्षण –2013–14. आर्थिक एवं साख्यिकीय संचालनालय भोपाल www.mp.gov.in.

****

भारत में लोहा इस्पात उद्योग - समस्याएँ एवं सुझाव

डॉ. सुनीता वाथरे * आस्था रजक **

प्रस्तावना - लोहा-इस्पात उद्योग आधारभूत (इरीळल) उद्योगों में से एक महत्वपूर्ण उद्योग है। इसे आर्थिक संरचना की रीढ़ मानते है। किसी देश के विकास के लिए लोहा एवं इस्पात उद्योग का तेजी से विकास करना अत्यन्त आवश्यक होता है। इसी उद्योग पर कृषि, उद्योग, परिवहन, रक्षा व दैनिक उपयोग की सैकड़ों वस्तुओं का निर्माण निर्भर करता है। इस उद्योग के बारे में स्वर्गीय पं. जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि - 'लोहा एवं इस्पात उद्योग के आधुनिक सभ्यता का आधार है।' एक अन्य विद्वान कार्लाइल के अनुसार 'वे देश जो लोहे पर नियंत्रण प्राप्त कर लेते हैं, शीघ्र ही सोने पर नियंत्रण प्राप्त करते हैं।' आज के युग में लोहे का महत्व सोने से बढ़कर है।

देश में पहला लोहा-इस्पात कारखाना 1874 ई. में बराकर नदी के किनारे कुल्टी (आसनसोल, पं. बंगाल) नामक स्थान पर बंगाल आयरन वर्क्स (BTW) के रूप में स्थापित किया गया था। बाद में यह कंपनी फण्ड के अभाव में बंद हो गयी तो इसे बंगाल सरकार ने अधिग्रहण कर लिया और इसका नाम बराकर आयरन वर्क्स रखा। दिल्ली में कुतुबमीनार के पास स्थापित लोहे की 'अशोक लाट' इस बात का जीता जागता प्रमाण है कि जिसकी स्थापना ईसा से पूर्व प्रथम शताब्दी में की गयी थी। विश्व के विशेषज्ञ इस बात पर चकित है कि इतने समय पूर्व इतनी उच्च कोटि का इस्पात किस प्रकार भारतवासियों द्वारा तैयार किया होगा। कोणार्क के सूर्य मंदिर व पुरी के ज्ञान मंदिर में जो लोहे की छड़ें आज से 800 वर्ष पूर्व लगायी गयी थी वे सभी भारतीय इस्पात उद्योग के प्राचीन गौरव को साक्षी रूप में प्रस्तुत करते हैं। देश में सबसे पहला बड़े पैमाने का कारखाना 1907 ई. वे तत्कालीन बिहार राज्य में स्वणरिखा नदी की घाटी में साकची नामक स्थान पर जमशेदजी टाटा द्वारा स्थापित किया गया था।

स्वतंत्रता के पूर्व स्थापित लौह इस्पात कारखाना -

- **भारतीय लौह इस्पात कंपनी-** इसकी स्थापना 1918 ई. में पं. बंगाल की दामोदर नदी घाटी में हीरापुर नामक स्थान पर की गयी थी। यहाँ 1922 ई. से उत्पादन शुरू हुआ। आगे चलकर कुल्टी, बर्नपुर तथा हीरापुर स्थित संयंत्र को इसमें मिला दिया गया।
- मैसूर आयरन एण्ड स्टील वर्क्स-1923 ई. में मैसूर राज्य भद्रावती नामक स्थान पर स्थापित की गयी थी। इसका वर्तमान नाम विश्वेश्वरैया आयरन एण्ड स्टील कंपनी लिमिटेड (VISCL) है।
- स्टील कॉर्पोरेशन ऑफ बंगाल-इसकी स्थापना 1937 ई. बर्नपुर (पं.बंगाल) में की गयी। बाद में 1953 ई. में इसे भारतीय लोह-इस्पात कंपनी में मिला दिया गया।

स्वतंत्रता के पश्चात् स्थापित लौह-इस्पात कारखाना -

- भिलाई इस्पात संयंत्र की स्थापना 1955 ई. में तत्कालीन म.प्र. के भिलाई (दुर्ग जिला, अब छत्तीसगढ़ राज्य) में पूर्व सोवियत संघ की सहायता से की गयी थी।
- हिन्दुस्तान स्टील लिमिटेड राउरकेला की स्थापना ओडिषा के राउरकेला नामक स्थान पर प. जर्मनी की सहायता से की गयी थी।
- हिन्दुस्तान स्टील लिमिटेड दुर्गापुर की स्थापना 1956 ई. में पं. बंगाल के दुर्गापुर नामक स्थान पर ब्रिटेन की सहायता से की गयी थी।
- बोकारो स्टील प्लान्ट की स्थापना 1968 ई. में तत्कालीन बिहार राज्य (अब झारखण्ड) के बोकारो नामक स्थान पर पूर्व सोवियत संघ की सहायता से की गई थी। विभिन्न योजना अवधियों में इस्पात उद्योग के विकास को भारत सरकार ने गति प्रदान की। इन सभी प्रयत्नों के फलस्वरूप लोहा एवं इस्पात उद्योग का काफी विकास हुआ है जिसका विवरण निम्न तालिका में स्पष्ट है-

वर्ष	ढला लोहा	इस्पात की सिल्लियाँ	तैयार इस्पात (लाख टन)
1950-51	17	15	10
1970-71	70	61	46
1990-91	122	137	135
2000-01	433	545	572
2010-11	509	696	660

रूस के सहयोग से भिलाई व बोकारो के बाद एक तीसरा प्लाण्ट विषाखापत्तानम (आंध्रप्रदेश) में 2,500 करोड़ रूपये की लागत से स्थापित किया गया है। केन्द्रीय सरकार एक और कारखाना पाराद्वीप बंदरगाह के निकट स्थापित करने जा रही है। इसके अतिरिक्त सलेम (तमिलनाडु) में एक कारखाना स्थापित हो चुका है इसने अपना उत्पादन प्रारंभ कर दिया है जबकि विजयनगर (कर्नाटक) व देतरी (उड़ीसा) में भी एक-एक कारखाना स्थापित किया जाना है।

सन् 2011 में भारत दुनिया का चौथा सबसे बड़ा कच्चा इस्पात उत्पादक था। एक अनुमान के अनुसार 2017 तक भारत दुनिया का सबसे बड़ा इस्पात उत्पादक देश बन जायेगा। स्पंज आयरन के उत्पादन में भारत का विश्व में प्रथम स्थान है। कुल मिलाकर वर्तमान में इस्पात उद्योग की क्षमता को इस प्रकार रखा जा सकता है- **(तालिका देखे आगे पृष्ठ पर)**

हमारे सार्वजनिक क्षेत्र के इस्पात कारखानों का औद्योगिक प्रबंध के क्षेत्र में अनुभव न होने के कारण वे सफलता के आशातीत स्तर तक न पहुँच सके। अत: स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया (SAIL) 24 जनवरी 1973 ई.

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) पं. एस.एन.एस. विश्वविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
** एम.बी.ए. (मेनेजमेन्ट) एस.जी.एस.आई. टी.एस. इंदौर (म.प्र.) भारत

को 2000 करोड़ की पूँजी के साथ भारत इस्पात प्राधिकरण (Steel Authority of India) को भिलाई, दुर्गापुर, बोकारो, राउरकेला, बर्नपुर, सलेम एवं विश्वेश्वरैया लोह इस्पात कारखाना को एक साथ मिलाकर संचालन करने की जिम्मेदारी दी गई।

समस्याएँ-

- सबसे महत्वपूर्ण समस्या उत्तम कोयले का अभाव है। लोहे को गलाने के लिये अच्छी किस्म का कोयला चाहिये जो गर्मी (Heat) अधिक दे सके तथा राख की मात्रा कम हो।
- इस उद्योग के कच्चे माल व तैयार माल सभी भारी माल की श्रेणी में आते है जिन पर ढुलाई पर व्यय अधिक आता है।
- उत्पादन क्षमता का पूर्ण उपयोग नहीं होने के कारण उत्पादन लागत अधिक आ रही।
- श्रमिकों की समस्या जैसे- वेतन वृद्धि मांग, हड़ताल से उत्पादन प्रभावित होता।
- पूँजी लागत में वृद्धि।
- भारत में लोहे एवं इस्पात के मूल्य उनकी लागत की तुलना में लाभकारी नहीं है। इससे पूँजी-निर्माण उचित दर से नहीं होता है।
- बोकारो व विशाखापट्नम के कारखानों को छोड़कर शेष सभी कारखाने पिछड़ेपन की तकनीक की समस्या से ग्रस्त हैं।
- अकुशल प्रबंध व्यवस्था व राजनीतिक हस्तक्षेप।

सुझाव-

- अच्छे किस्म का कोयला उपलब्ध कराया जाये जिसमें गर्मी अधिक हो व राख की मात्रा कम हो।
- रेलों को इस उद्योग में काम आने वाले कच्चे माल व उद्योग द्वारा निर्मित माल के भाड़े में कमी कर उद्योग को राहत देनी चाहिए।
- इस्पात उद्योग की पूर्ण उत्पादन क्षमता का उपयोग हेतु आवश्यक कदम उठाये जाने चाहिए।
- श्रम की समस्याओं का नियंत्रण आवश्यक।
- मूल्य- स्थायित्व हेतु प्रयास आवश्यक।
- कारखानों को नवीन तकनीक अपनानी चाहिए।
- इस्पात उद्योग को अपनी प्रबंध व्यवस्था में सुधार करना चाहिए।

राष्ट्रीय इस्पात नीति को केन्द्र सरकार ने 3 नवम्बर, 2005 को स्वीकृति दे दी। इसके अन्तर्गत वर्ष 2019-20 तक वार्षिक घरेलू इस्पात उत्पादन क्षमता को वर्तमान 4 करोड़ 21 लाख टन से बढ़ाकर 11 करोड़ टन करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। इसके लिए स्टील उद्योग में प्रति वर्ष 7.3 प्रतिशत की विकास दर प्राप्त करना आवश्यक होगा। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सार्वजनिक और निजी क्षेत्र की और से लगभग 2.5 लाख करोड़ रूपए का निवेश किए जाने की संभावना है। भारत में प्रति व्यक्ति स्टील का उपयोग 47 किलोग्राम है जो बहुत कम है, जबकि उन्नत देशों में यह कहीं अधिक है। वैसे संसार में प्रति व्यक्ति स्टील उपयोग 150 किलोग्राम है तथा विकसित देशों में यह औसत 400 कि.ग्रा. है। इस प्रकार लोहे एवं इस्पात उद्योग का भविष्य उज्जवल है। भारत व विश्व में लोहा एवं इस्पात की मांग में बराबर वृद्धि हो रही है और भविष्य में ऐसा ही कुछ दशकों तक होने का अनुदान है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय अर्थव्यवस्था - रूद्रदन्त सुन्दरम्।
2. दैनिक भास्कर (समाचार पत्र)।
3. पत्रिका (समाचार पत्र)।
4. इन्टरनेट।
5. लूसेन्ट सामान्य ज्ञान।

क्र.	संयंत्र	वर्तमान क्षमता (वर्ष 2010)	दिसम्बर 2012 में अनुमानित क्षमता (मी. टन वार्षिक)
1	सेल	12.84	21.4
2	आर.आई.एन.लि.(विशाखापट्नम)	2.9	6.3
3	टाटा स्टील	6.8	13.0
4	एस्सार स्टील	4.6	14.5
5	जिन्दल स्टील एण्ड पॉवर	2.4	10.45
6	जे.एस. डब्लू स्टील	6.6	11.0
7	इस्पात इण्डस्ट्रीज	3.6	4.2
8	भूषण पॉवर एण्ड स्टील	1.2	2.8
9	भूषण स्टील	0.8	3.0
10	अन्य एवं द्वितीयक	31.0	34.2
	योग	**72.74**	**120.85**

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

शहरीकरण की समस्या (चुनौतियां) एवं समाधान हेतु प्रयास

डॉ. शाहीन परवीन *

शोध सारांश - शहरीकरण जिसका प्रमुख कारण औद्योगिक क्रांति, उद्योगो की स्थापना एवं जनसंख्या का संकेन्द्रण। जिसके प्रभाव के चलते गरीबी, भीड़-भाड़, गंदी बस्तियां जैसी समस्याएं उत्पन्न होने लगती हैं। 1901 में भारत में शहरी जनसंख्या 2.59 करोड़ थी जो 1951 में 6.24 करोड़ हो गई। 2001 से 2011 का दशक इस बात को साबित करता है कि शहर की जनसंख्या में तेजी से बढ़ोतरी हुई है। साथ ही शहरों की संख्या 2001 में 5161 थी। वही 2011 में 7935 हो गई। इसका प्रमुख कारण गांव से शहर की ओर जाना अच्छी शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन के साधन, रोजगार की तलाश, सुरक्षा की संभावनाएं, इन सबके कारण शहरीकरण की प्रकृति बढ़ी है। मुम्बई, दिल्ली, कोलकाता एवं चेन्नई जैसे महानगरों में भीड़ भाड़, प्रदूषण, घनी बस्तियां, कूड़ा-कर्कट का अम्बार हमारे पर्यावरण को प्रदूषित कर रहा है। जनाधिक्य के कारण शहरों का हाल बेहाल है तथा धूल, धुआं, चीख-चिल्लाहट का माहौल देखकर अजीब सा लगता है। आज जरूरत है कि गांव से शहर की ओर पलायन करने की। गांवो में भी वही माहौल पैदा करना ताकि लोग शहर से आकर गांवो में रहना पसंद करें।

प्रस्तावना - शहरीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जो विकसित और विकासशील देशों में दिखाई देती है। इसका प्रमुख कारण औद्योगिक क्रांति, उद्योगो की स्थापना एवं जनसंख्या का संकेन्द्रण, जिसके कारण लोग शहर में जाकर बस जातेहै। जैसे-इग्लैण्ड में मेनचेस्टर, अमेरिका में पिट्सबर्ग, भारत में मुम्बई और कोलकाता मुख्य रूप से इसके उदाहरण है। इसका प्रभाव यह देखने को मिल रहा है कि शहरों में गन्दी बस्तियां, भीड़-भाड़, गरीबी जैसी समस्याएं उत्पन्न होने लगी है।

1901 में भारत में शहरी जनसंख्या 2.59 करोड़ थी जो कुल जनसंख्या का 23.84 करोड़ का 10.9 प्रतिशत था। 1931 में शहरी जनसंख्या बढ़कर 3.35 करोड़ हो गई जो कुल जनसंख्या का 27.90 करोड़ का 12.00 प्रतिशत तथा। 1951 में भारत की शहरी जनसंख्या 6.24 करोड़ हो गई थी जो कुल जनसंख्या 36.11 करोड़ का 17.3 प्रतिशत तथा। इस प्रकार हम कह सकते है कि 1951 में प्रत्येक छ: व्यक्तियों मे से एक व्यक्ति शहरों में निवास करता था। 1911 से 1951 के बीच शहरीकरण की गति तेज होने से यह अंतराल 32.4 तक पहुॅच गया। जयति घोष के अनुसार 2001 से 2011 के दशक में अंतिम कारण अत्याधिक महत्तवपूर्ण रहा है। जो इस बात को साबित करता है कि 2011 की जनगणना में शहरों की जनसंख्या में तेजी से वृद्धि हुई। 2001 में शहरों की संख्या 5161 थी जो कि 2011 में 7935 हो गई। (पृ0 131)

भारत में शहरीकरण - 2011 की जनगणना के अनुसार देश की कुलजनसंख्या में से 31.2 प्रतिशत शहरी क्षेत्रों में तथा 68.8 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंख्या निवास करती है। कुछ वर्षो में जनसंख्या एवं वृद्धि की स्थिति निम्न प्रकार रही।

तालिका 01 : विगत दशकों में ग्रामीण एवं शहरी जनसंख्या का प्रतिशत

वर्ष	ग्रामीण जनसंख्या	शहरी जनसंख्या
1901	89.2	10.8
1941	86.1	13.9
1951	82.7	17.3
1961	82.0	18.0
1971	80.1	19.9
1981	76.7	23.3
2001	74.3	25.7
2011	68.8	31.2

स्त्रोत : सामन्य अध्ययन भारतीय अर्थव्यवस्था प्रतियोगिता दर्पण अतिरिकांक 2013-14, विशेषज्ञों का अनुमान है कि 2025 तक देश की आधी जनसंख्या शहरी होगी। (पृ0 102)

तालिका 02 : भारत में शहरों की जनसंख्या एवं उनकी वृद्धि

वर्ष	शहरों की संख्या	वृद्धि दर (1951) की तुलना में
1951	2843	-
1961	2365	16.8
1971	2590	8.9
1981	3378	18.8
1991	3768	32.5
2001	5161	81.5
2011	7935	97.5

स्त्रोत : CensusOf India 2011

1971 की जनसंख्या के अनुसार 09 महानगर ऐसे थे जिनकी जनसंख्या 10 लाख से अधिक थी। जैसे-कोलकाता, मुम्बई, दिल्ली, चेन्नई, बैंगलोर, हैदराबाद, अहमदाबाद, कानपुर तथा पूना। 1981 में बढ़कर 12, 1991 में 23 तथा 2001 में इन महानगरों की संख्या बढ़कर 35 हो गई। इस प्रकार नगरों एवं महानगरों की जनसंख्या में असीम वृद्धि हो रही है। (पृ0 134)

इसके प्रमुख कारण हो सकते है। शहरीकरण वृद्धिकरण :

(1) तेजी से औद्योगिक विकास,

(2) द्वितीय विश्व युद्ध के बाद शहरों की ओर पलायन,

* अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र) पंडित शम्भूनाथ शुक्ल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

(3) जमींदारी प्रथा से परेशान होकर शहरों की ओर जाना,
(4) देश का विभाजन,
(5) गांव से शहर की ओर रोजगार की तलाश,
(6) शिक्षा एवं स्वास्थ्य जैसी सुविधाओं को प्राप्त करना,
(7) मनोरंजन की सुविधाएं,
(8) जात-पात, लड़ाई-झगड़ा,
(9) सुरक्षा की संभावना,
(10) सम्पत्ति की सुरक्षा एवं शहरों में बैंको की सुविधा का लाभ प्राप्त करना।

भारत में शहरीकरण की बढ़ती प्रकृति के कारण लोग बेहतर शिक्षा और जीवन के लिए शहर आते है, और वहीं बस जाते हैं। जिसके कारण विभिन्न चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

शहरों में विकास के कारण कुछ चुनौतियां है :-

1. भीड़-भाड़ एवं आवास समस्या,
2. बढ़ती जनसंख्या,
3. व्यक्तिगत एवं सामाजिक विघटन,
4. स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं,
5. प्रदूषण की समस्या,
6. अपराध प्रवृत्ति।

रिसर्च जनरल, शोध चेतना- पृ0 125 (अक्टूबर-दिसम्बर 2015)

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण दस्तावेज में भी शहरों की बढ़ती संख्या से देश के सामने शहरों में आने वाली चुनौतियों की चर्चा की गई है। क्योंकि इन शहरों में न तो नागरिक प्रशासन व्यवस्था है और न ही सड़कों की सफाई। जैसे-जैसे जनसंख्या बढ़ेगी वैसे-वैसे बहुत सी समस्याएं मुँह उठाकर खड़ी हो जायेंगी। सड़के, बिजली, पानी, साफ-सफाई रहने की, आवास समस्या।

समस्याओं का समाधान - इन समस्याओं के समाधान के लिए 2005 में जवाहलाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन (JNNURM)जो बारहवीं योजना में स्वीकार किया गया।

(1) गरीबी का निदान,
(2) शहरी क्षेत्रों में बेहतर सुविधाएं,
(3) शहरी स्थानीय निकायों को और शक्तियां प्रदान करना,
(4) नगरीय प्रशासन व्यवस्था में साझेदारी को प्रोत्साहित करना,
(5) प्रभावी प्रबंधन,
(6) तीव्र विकास। (पृ0 135)

सुझाव :

1. ग्रामीण जनसंख्या को शहरों की ओर पलायन से रोकने के लिए ठोस कदम उठाएं जायें।
2. ग्रामीण स्तर पर रोजगार के अवसरों की वृद्धि की जाए।
3. मनोरंजन के साधन जो शहरों की ओर पलायन को आकर्षित करते है, उन्हें गांवों में उपलब्ध कराया जाये।
4. गांवो में अच्छी शिक्षा व्यवस्था उपलब्ध कराई जाए।
5. छोटे शहरों एवं कस्बों के विकास पर जोर दिया जाए।
6. पर्यावरणी समस्याएं जो शहरीकरण के कारण उत्पन्न होती है, उन पर ध्यान दिया जाये।
7. प्रत्येक व्यक्ति पर्यावरण के प्रति समर्पित रहे, तथा संरक्षण पर विशेष ध्यान दें। यदि इन बातों पर ध्यान दिया जाता है, तो शहरीकरण की बढ़ती समस्या से निपटा जा सकता है। (पृ0 103)

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय अर्थव्यवस्था -मिश्रा एवं पुरी -हिमालया पाण्लिशिंग, पृ.क्र.131, 134, 135
2. नवीन शोध संसार (रिसर्च जनरल) (अप्रैल से जून 2016) पृ. 102, 103
3. यूनीफाइड अर्थशास्त्र (सत्र 2011-12) बी.ए. द्वितीय सेमेस्टर - डॉ. अनुपम गोयल, पृ0 71
4. रिसर्च जनरल - शोध चेतना (अक्टूबर-दिसम्बर 2015) पृ0 125

****

प्लास्टिक के खतरे एवं निदान

डॉ. विभा वासुदेव *

प्रस्तावना - प्रकृति एवं मानव सृष्टि की अनमोल एवं अनुपम रचना है। प्राकृतिक वातावरण अनादि काल से मनुष्य के विकास में सहायक रहा है लेकिन मानव ने अपनी अनन्त आवश्यकताओं एवं इच्छाओं की पूर्ति के लिए प्रकृति से सदैव खिलवाड किया और वर्तमान में प्लास्टिक का आविष्कार और उसका प्रयोग सबसे हानिकारक साबित हो रहा है। प्लास्टिक से बनी वस्तुओं का जमीन या जल में इकट्ठा होना प्लास्टिक प्रदूषण कहलाता है जिससे वन्य जन्तुओं या मानवों के जीवन पर बुरा प्रभाव पड़ता है। आज हम प्लास्टिक का अंधाधुंध प्रयोग कर सम्पूर्ण प्राकृतिक वातावरण को आहत करते हुए इसके विषैले जहर से अनभिज्ञ निरन्तर हम इसका प्रयोग बढ़ाते जा रहे हैं। वर्तमान युग को पॉलीथिन या प्लास्टिक युग के नाम से जाना जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। विगत कुछ वर्षों में देश में प्लास्टिक (पॉलीथीन) की थैलियों का प्रचलन बढ़ने से चारों ओर पॉलीथीन का प्रकोप स्पष्ट दिखायी देता है, जो नगरों की सफाई व्यवस्था के लिए एक गंभीर चुनौती बनता जा रहा है। जहां एक ओर इनका मानव स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है, वहीं दूसरी और ये थैलियां पशुओं की मौत का कारण भी बनती जा रही है, साथ ही भूमि की उर्वरा शक्ति को कम करते हुए जल व वायु को प्रदूषित करने में अपनी अहम भूमिका निभा रही है।

भारत में लगभग दस से पन्द्रह हजार इकाइयां पॉलीथीन का निर्माण कर रही हैं, सन् 1990 के आंकड़ों के अनुसार देश में इसकी खपत 20 हजार टन थी, जो अब बढ़कर 5 लाख टन तक पहुंचने की संभावना व्यक्त कर रही है। वहीं पैकेजिंग प्लास्टिक, मटेरियल भी आज एक बहुत बड़ी समस्या बनता जा रहा है। यह कचरा भी निरन्तर बढ़ता ही जा रहा है। आस्ट्रेलिया में 1997 के एक आंकड़े के अनुसार 74 टन तथा अमेरिका में 1200 टन प्लास्टिक कचरे के रूप में पाया गया।

प्रस्तुत शोध-पत्र में प्लास्टिक के खतरों का विश्लेषण कर निष्कर्ष एवं सुझाव किए गए हैं।

खतरे - आजकल हर शहर में, हर गांव में सड़क के किनारें, खेतों में, बाग-बगीचों में कहीं भी, जगह-जगह पर कचरों के ढेरों में नदियों, पानी निकास के गटरों, छोटे-बडे नदी-नालों आदि स्थानों पर पॉलीथीन की थैलियां दिखायी देती हैं। छोटे-छोटे पाउच एवं पॉलीथीन थैलियां जो स्वयं नष्ट नहीं होती हैं, इनको बेतहाशा उपयोग करने और जहां-तहां लापरवाहीपूर्वक फेंक देने के भयानक परिणाम हमें भुगतने पड़ेगें।

- प्लास्टिक पूर्ण रूप से जैव अविघटनीय होता है तथा स्वास्थ्य पर आर्गेनिक प्रभाव डालता है। भूमिगत जल के रिचार्ज होने में बाधक होता, इन्हें जलाने पर सल्फर डाय ऑक्साइड कार्बन मोनो ऑक्साइड, नाइट्रोजन आक्साइड जैसी जहरीली गैसें वातावरण को प्रदूषित करते हैं।
- पॉलीथीन वनस्पति जगत को नष्ट करने वाला माध्यम होता जा रहा है क्योंकि यह जहां-तहां पड़ी होकर भूमि में दब जाती है, जिससे वहां पर घास-पात उग नहीं पाती। साथ ही धीरे-धीरे वहां की जमीन बंजर होती जाती है।
- प्राय: लोग बचे हुए भोज्य पदार्थ को पॉलीथीन में भरकर बाहर फेंक देते हैं, जिससे पशु भोज पदार्थ के साथ पॉलीथीन को भी निगल जाते हैं, जो कि उनकी मृत्यु का कारण बन सकती है। यह न सिर्फ जानवरों, बल्कि हमारे संसाधनों को नष्ट कर रहा है।
- विभिन्न कचरें के साथ यदि पॉलीथीन को जलाया जाता है, तो विषैली गैस उत्पन्न होगी, जो वायुमण्डल को प्रदूषित करती है।
- प्राय: लोगों के द्वारा इन पॉलीथीनों को जहां-तहा फेंक देने या वर्षा के माध्यम से बहकर ये नालियों एवं गटरों में पहुंच जाती हैं। मिट्टी भर जाने के कारण ये प्राय: रूक जाती हैं, जिससे जल निकासी में रूकावट होती है। महानगरों की बाढ़ इसी का कारण है। प्लास्टिक का अंधाधुंध इस्तेमाल हमारी नदियों, तालाबों को बर्बाद कर रहा है। यह अगली पीढ़ी के लिए परमाणु बम से भी ज्यादा खतरनाक है।
- सबसे सस्ता और सबसे सुविधाजनक माने जाने वाला प्लास्टिक दुनिया के लिए सबसे बड़ा खतरा बनकर उभर चुका है। प्लास्टिक कितना बड़ा खतरा है, यह इसी से समझा जा सकता है कि दुनिया में आज तक जितना भी प्लास्टिक बना है, वो किसी न किसी रूप में मौजूद है। प्लास्टिक खत्म होने में हजार सालों का समय लेता है। यह स्थिति इसलिए भी डराती है क्योंकि दुनिया में हर साल 300 मिलियन टन प्लास्टिक का उत्पादन किया जा रहा है। सिर्फ समुद्र में पड़े प्लास्टिक कचरे को ही साफ करने की बात करें तो जिस रफ्तार से यह काम अभी चल रहा है, उससे इसे पूरा होने में करीब 80 हजार साल लगेंगे।
- प्लास्टिक हमें बीमार भी बना रहा है। अकेला अमेरिका प्लास्टिक से होने वाली बीमारियों पर हर साल 340 अरब डालर खर्च कर रहा है। पॉलीथीन के अन्दर पड़ा भोज्य पदार्थ, पानी या कचरा पड़े-पड़े सड़ता रहता है जो कि मक्खी, मच्छरों को बढ़ाने में सहायक होता है और फिर ये हमारे स्वास्थ्य के लिए खतरनाक हो जाते हैं।
- प्लास्टिक कटलरी से ज्यादा नुकसान। कटलरी पर तो दिल्ली के अलावा कहीं रोक नहीं। प्लास्टिक नष्ट नहीं होता। 50 माइक्रोन से पतला प्लास्टिक सुखकर टूट जाता है। धरती में मिल जाता है। जिससे भूगर्भ

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

जल विषैला हो जाता है। प्लास्टिक की वजह से 1200 से ज्यादा समुद्री जीवों की प्रजातियां खतरे में हैं। मुंबई, अंडमान-निकोबार और केरल में सबसे प्रदूषित तट हैं। प्लास्टिक कचरे के लिए देश में समुचित व्यवस्था नहीं है। इसे लैंडफिल साइट्स में दबा दिया जाता है। जलाया भी जाता है। ऐसे में हवा जहरीली हो जाती है।

- प्लास्टिक ने सिर्फ धरती को ही नहीं, समुद्र को भी बना दिया डंपिंग यार्ड। 1 खरब प्लास्टिक बैग्स दुनिया में हर साल तैयार किए जाते हैं। 1000 साल लगते हैं एक प्लास्टिक बैग को पूरी तरह से नष्ट होने में। 35 लाख टन प्लास्टिक की थैलियां हम हर साल फेंक देते हैं।
- 1 लाख समुद्रीय जीव प्लास्टिक बैग के प्रदूषण के कारण हर साल मारे जाते हैं। 43 बिलियन गैलन क्रूड ऑयल हर साल प्लास्टिक बैग बनाने में इस्तेमाल हो जाता है। 46 हजार प्लास्टिक बैग समुद्र में हर एक वर्ग मील के दायरे में पाए जाते हैं।

निष्कर्ष एवं सुझाव- वैज्ञानिक दृष्टि से यह भी सिद्ध हो चुका है पॉलीथीन, प्लास्टिक और पी.वी.सी.(प्लास्टिक का कच्चा माल) किसी भी अम्लीय, क्षारीय स्थिति में यह अनजानी अनेक अभिक्रियाएं करने के बाद इसको अनेक यांत्रिक जैसे पालीअरोमेटिक, हाइड्रोजन आदि जो कि कारसीनोजेनिक तथा न्यूट्रोनिक प्रकृति के होते हैं, रिसकर पर्यावरण में आते हैं। ये यौगिक न केवल वर्तमान वरन् आने वाली पीढ़ियों के लिए काफी हानिकारक होते है।

मानव और उसके सम्पूर्ण पारिस्थितिकीय परिवेश को शनैः-शनैः घातक सिद्ध होते जा रहे इस पॉलीथीन एवं प्लास्टिक रूपी दानव के शिकंजे से मुक्त होने के प्रयास अब युद्ध स्तर पर किये जाने चाहिए।

प्लास्टिक प्लेनेट में परिवर्तित हो रही पृथ्वी को बचाना हम सभी का नैतिक कर्त्तव्य हो गया है। अतः समझदारी से इसका उपयोग करें तो इसके खतरों को सीमित कर सकते हैं।

- प्लास्टिक प्रबंधन पर्यावरण सुरक्षा के लिए अत्यंत आवश्यक है हम इसके खतरों से परिचित हैं किन्तु जैव अविघटनीय होने के कारण इसका उपाय केवल वैधानिक हो सकता है, इसके लिए जागरूकता अभियान कानूनी प्रावधान के साथ ही पुनः पुराने कागज व कपडे के बैगों, थैलों के प्रचलन को बढ़ावा देना व दोना, पत्तल, कुल्हड़, टोकनी आदि सामग्री को बढ़ावा व प्लास्टिक के डिस्पोजल पर पूरी तरह से प्रतिबन्ध लगाना अति आवश्यक है।
- प्लास्टिक को फेंके नहीं, रीसाइकल करें, रीयूज करें, रीड्यूज करें। पीईटीपीईटीई को दोबारा इस्तेमाल किया जा सकता है। पानी, तेल की बोतलें इसी प्लास्टिक से बनती हैं। एचडीपीई दूध, पानी के जग, जूस, बैग, शैम्पू की बोतलें, खिलौने इसी से बनते हैं। एलडीपीई को रीसाइकल किया जा सकता है। ग्रॉसरी बैग्स, गार्बेज बैग्स में इसी का इस्तेमाल होता है। पीपी पॉली को रीसाइकल कर इस्तेमाल कर सकते हैं। फूड कन्टेनर्स, सिरप की बोतलें बनती हैं। पीवीसी के दोबारा इस्तेमाल से बचना चाहिए। गद्दे का कवर, कन्टेनर्स में इस्तेमाल किया जाता है। पीएस को दोबारा इस्तेमाल नहीं किया जा सकता है। कटलरी, मीट ट्रे और कप इसी से बनते हैं।
- एक टन प्लास्टिक रीसाइकल करने पर 685 गैलन ऑयल बचेगा। 5774 किलो वॉट बिजली बचेगी। 30 क्यूबिक यार्ड जगह कचरागाह बनने से बच जाएगी। चिड़िया, मछलियां और डॉलफिन सुरक्षित रहेंगी।
- प्लास्टिक बैग के इस्तेमाल पर अगर कोई शुल्क निर्धारित कर दिया जाए तो संभवतः इनका इस्तेमाल कम हो सकता है। 935 प्रतिशत तक प्लास्टिक का इस्तेमाल आयरलैंड में इसी तरह कम हुआ।

अतः स्पष्ट है कि सबसे सस्ता और सबसे सुविधाजनक माने जाने वाला प्लास्टिक दुनिया के लिए सबसे बड़ा खतरा बनकर उभर चुका है। समाज में इस दिशा में युद्ध स्तर पर एक जन अभियान छेड़ने की आज महती आवश्यकता है। प्लास्टिक की थैलियों के प्रयोग पर शासकीय प्रतिबंध तत्काल लगाने की आवश्यकता है, अन्यथा निकट भविष्य में ही नगरीय उपान्त क्षेत्र किसी उपयोग के न रह पाएंगे। यह एक अंतर्राष्ट्रीय समस्या बन चुका है। अतः इसका समाधान करना किसी एक देश के लिए संभव नहीं है। इस कार्य के लिए सभी राष्ट्रों की भागीदारी की आवश्यकता है व एक ऐसे साझा कानून व विश्व व्यापी जागरूकता की, जिससे आने वाली पीढ़ी को पर्यावरण मित्र प्रौद्योगिकी का हस्तांतरण करें और प्लास्टिक मुक्त पृथ्वी बनाने की ओर एक कदम आगे बढ़ाएं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ.एनएम.अवस्थी - पर्यावरणीय अध्ययन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल आगरा 2008 पृष्ठ क्र.-267, 268
2. पुरोहित डॉ.श्याम सुन्दर - पर्यावरण एवं प्रदूषण, एग्रो वायस प्रकाशन जोधपुर 2001, पृष्ठ क्र.-74
3. डॉ.वीरेन्द्र कुमार, नवम्बर 2013, कुरूक्षेत्र पृष्ठ क्र.-23, 24
4. दैनिक भास्कर - 5 जून 2017 पृष्ठ क्र.14
5. पत्रिका सागर - 5 सितम्बर 2017 पृष्ठ क्र. 07

****

भारतीय बैंकिंग के विकास के चरण

डॉ. विजय प्रकाश मिश्रा *

प्रस्तावना – प्राचीन काल से ही भारतीय अर्थ व्यवस्था में बैंको का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। वैदिक काल के लेखों से स्पष्ट है कि भारत में उस युग में भी उधार लेने देने का प्रचलन था। मनु स्मृति में लिखा है कि समाज का एक वर्ग जमा गिरवी तथा लेन देन का कार्य करता था। देश के आर्थिक विकास में बैंक की प्रमुख भूमिका होती है। चाणक्य के अर्थशास्त्र से भी स्पष्ट है के 300 ई पूर्व में भी व्यापारियों का एक ऐसा वर्ग विद्यमान था जो रूपया जमा करने ऋण देने व इसी प्रकार के अन्य कार्य करता था पहले राजा लोग साहूकारों महाजनों को अपने यहाॅ बसाते थे और जरूरत पड़ने पर ऋण लेते थें। ये लोग बदले में जनता को भी ऋण देते थें भारत में बैंकिंग विकास के निम्न चरण है। –

प्रथम चरण – भारत में वास्तविक रूप में बैंकों का आरम्भ ब्रिटिश षासन काल में प्रारम्भ हुआ। 17वीं शताब्दी में अंग्रेज व्यापारियो तथा ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधिकारियों की बैकिंग सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूति के लिये 'एजेन्सी गृहों की स्थापना हुई। ये एक प्रकार की व्यवसायिक कार्यो में संलग्न कुछ फर्मे थी जो व्यापार के साथ साथ बैंकिंग का कार्य भी करती। सन् 1770 में एलेक्जेण्डर एण्ड के.एजेन्सी गृह ने भारत में सबसे पहला 'दी बैंक आफ हिन्दुस्तान' स्थापित किया। परन्तु यह बैंक ज्यादा समय तक कार्य नही कर सका।

द्वितीय चरण – भारत में प्रसीडेंसी बैंक की स्थापना से बैंकिंग विकास का दूसरा युग प्रारम्भ हुआ। 1806 में 'बैंक आफ कलकत्ता' जिसे 1809 में नाम बदल कर 'बैंक आफ बंगाल' की संज्ञा दी। 1840 में 'बैंक ऑफ बाम्बेय तथा 'बैंक आफ मद्रास' की 1843 में स्थापना हुई। ईस्ट इण्डिया कंपनी ने तीनों बैंको के शेयर खरीदकर उन्हें पूॅजी उपलब्ध करायी। इन बैंको को नोट निगर्मन का अधिकार भी था भारतीय बैंकिंग में इन बैंको का विशेष महत्व है।

तृतीय चरण – 1860 में संयुक्त पूॅजी बैंक अधिनियम पारित होने से बैंको की स्थापना बहुत आसान हो गयी। इससे सीमित दायित्व के आधार पर बैंको के स्थापना की अनुमति प्रदान की गई। जिससे देश में 1874 तक 14 बैंको की स्थापना हो गई। 1881 में अवध कार्मिशियल बैंक की स्थापना हुई। यह पहला भारतीय बैंक था, 1894 में पंजाब नेशनल बैंक , 1901 में पीपुल्स बैंक आफ इण्डिया की स्थापना हुई, 1906 में बैंक आफ इण्डिया , 1908 में बैंक आफ बडोदा, 1911 में सेन्ट्रल बैंक आफ इण्डिया, 1913 में बैंक आफ मैसूर की स्थापना हुई। 1913 तक 5 लाख तक पूॅजी वाले बैंको की संख्या 9 से बढकर 18 हो गयी और लगभग 500 बैंक की स्थापना हुई।

चतुर्थ चरण – इस काल को बैंको के फेल हो जाने के कारण ज्यादा जाना जाता है प्रथम विश्व युद्ध में 1913 से 1917 के बीच लगभग 87 बैक फेल हुये और लगभग इन बैंकों के 175 लाख रूपये डूब गये। जनता में बैंकिंग भावना का अभाव था और जरा सी अफवाह फैलने पर जमाकर्ता बैंक से अपना धन वापस मॉगने लगते थें।

पंचम चरण – सन 1918 से बैक की दशा में कुछ सुधार हुआ। 1921 में तीन प्रसीडेंसी बैंकों को मिलाकर 'इम्पीरियल बैंक' की स्थापना हुई जो कि बैकिंग विकास के लिए महत्वपूर्ण कदम था। 1921 में मुद्रा संकुचन के कारण उत्पन्न व्यापारिक मन्दी से बैंकों पर फिर संकट आ गया और पूॅजी घटकर 84 करोड से 55 करोड रह गयी। 1930 में विश्वव्यापी मन्दी और द्वितीय महायुद्ध तक बैंक के फेल होने का क्रम फिर से चलने लगा। 1930 से 1940 तक कुल 372 बडे बैंक फेल हो गये। 1936 में ट्रावनकोर के 30 बैंक फेल हुये थें। 1929 में केन्द्रीय बैंकिंग जॉच समिति को नियुक्त किया जिसने 1931 में प्रस्तुत अपनी रिर्पोट में भारतीय बैकिंग व्यवस्था पर नियंत्रण करने के लिये दो महत्वपूर्ण सुझाव दिये।

1 केन्द्रीय बैंक की स्थापना हो।
2 व्यापारिक बैकिग कम्पनी एक्ट बनाया जायें।

परिणाम स्वरूप 1935 में 1913 के इण्डियन क0 एक्ट को बैकिंग कम्पनियों से सम्बन्धित नियमों में संशोधन किया गया। 1 अप्रैल 1935 में केन्द्रीय बैंक के रूप में रिजर्व बैंक आफ इण्डिया की स्थापना की।

छठा चरण – 1939 में द्वितीय विश्व युद्ध प्रारम्भ होने पर भारतीय बैकिंग को नया जीवन मिला। 1939 में इम्पीरियल बैंक की स्थापना हुई इस काल स्थापित होने वाले बैंकों में यूनाइटिड कामर्शियल बैक, हिन्दुस्तान कामिर्शियल बैंक हिन्दुस्तान मर्केन्टाइल बैक , बैंक आफ राजस्थान आदि कई बैंक थे इस काल में अनुसूचित बैंको की शाखाओं की संख्या 1328 से बढकर 3106 हो गयी। 1939 से 1946 सात वर्षो में लगभग 482 बैंक फेल हुये।

सातवॉ चरण – स्वतत्रंता के बाद भारतीय बैकिंग में बहुत क्रान्तिकारी परिवर्तन हुये जिसमें जनवरी 1949 में रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण किया गया। 16 मार्च 1949 में देश में बैक क0 एक्ट लागू किया गया और 1955 मे स्टेट बैंक का राष्ट्रीयकरण किया गया। 1959 में स्टेट बैंक आफ इण्डिया सहायक बैंक अधिनियम पारित किया गया। जिसमें राज्यों के 7 बैंकों को स्टेट बैंक सहायक बैक बना दिया साथ ही अर्थ व्यवस्था के तीव्र आर्थिक विकास के लिये वित्तीय संसोधन उपलब्ध कराने के उद्देश्य से सन 1969 में 14 अनुसूचित बैंक का राष्ट्रीयकरण किया गया जिनकी पूॅजी 50 करोड से अधिक थी इसी क्रम में 1980 में 6 अन्य बैंकों का भी राष्ट्रीय किया गया।

आधुनिक युग – विश्व की त्रीव गति से बढती अर्थ व्यवस्था के अनुरूप भारतीय बैकिंग में परिवर्तन नही हो पा रहा था अत: 1991 के बाद जब देश

* सहायक आचार्य (व्यवहारिक अर्थशास्त्र) जे. एन पी. जी. कालेज, लखनऊ (उ.प्र.) भारत

में नई आर्थिक नीति आई और देश में निजी और विदेशी बैको को खोलने की अनुमति प्रदान की गई तो यह विश्व की अर्थ व्यवस्था के अनुरूप भारतीय बैकिंग को ढालने का प्रथम कदम था। दिसम्बर 1990 तक 23 विदेशी बैंको की कुल 137 शाखायें थी लेकिन मार्च 2012 के अन्त तक 46 विदेशी बैंको की कुल 1323 शाखाये थी।

बैंको का वित्तीय लेखांकन – वर्तमान समय में भारत में बैंको की प्रमुख चुनौती विशाल जनसंख्या के लिये वित्त उपलब्ध कराने की है क्योंकि किसी भी देश का औद्योगिक विकास पूॅंजी की पर्याप्तता पर निर्भर करता है और पूॅंजी की उपलब्धता बैंको द्धारा ही पूरी की जा सकती है जिसके लिये पूरे देश में बैंक की शाखाओं का पूरा नेटवर्क होना आवश्यक है। साथ ही निजी क्षेत्र के बैंक की सहभागिता आवश्यक है सरकार द्धारा नये बैंक एवं शाखाओं को खोलने से रोजगार में वृद्धि होगी। सरकार की कल्याणकारी योजनाओं का भुगतान बैको के माध्यम से ही होता है जैसे बृद्धावस्था पेंशन योजना पी0 एम0 आर0 वाई0 योजना, मनरेगा वेतन का भुगतान सभी बैको खाते के माध्यम से किया जाता है सरकार द्धारा हाल में अटल पेंषन जन धन योजना, बालिका धन योजना का संचालन भी बैंकों के माध्यम से किया जा रहा है। 30 जून 1969 को देश में कुल वाणिज्यिक बैको की शाखाये 8262 है जो मार्च 2012 में बढकर 101261 हो गई है। मार्च 2012 तक बैंको का वाणिज्यिक संमक निम्न है

बैंक समूह	1969	2010	2011	2012
स्टेट बैंक एवं उसके सहयोगी	2462	17356	19027	19984
राष्ट्रीयकृत बैंक	4553	41964	46389	50527
आर0 आर0 बी0	–	15486	16185	16698
2 + 3 का योग	7015	74806	81601	87012
अन्य भारतीय बैंक	900	10475	12045	13868
विदेशी बैंक	130	310	319	324
4+ 5+6 का योग	8045	85591	93965	101204
गैर अनुसूचित वाणिज्यिक बैंक	217	45	54	57
7 + 8 का योग	8262	85636	94019	101261

31 मार्च 2012 को देश बैंक प्रमुख राज्यों में बैको की सबसे ज्यादा षाखा उत्तर प्रदेश में 12121 सबसे कम उत्तराखण्ड में 1459 शाखा है विदेशी में भारतीय वाणिज्यिक बैकों की कुल 150 शाखायें 30 देश में कार्यरत है।

बैकिंग कानून संशोधन अधिनियम 2012 के मुख्य प्रावधान –

1. कार्पोरेट क्षेत्र की निजी एव सार्वजनिक कम्पनियों को कुछ शर्तो के अधीन निजी क्षेत्र में वाणिज्यिक बैक स्थापित करने क लिये लाईसेंस दिये जायेगें
2. राष्ट्रीयकृत बैको की पूर्वाधिकारी अशों अधिकारी अशों और बोनस अषों के माध्यम से पूॅंजी की अनुमति होगी।
3. वाणिज्यिक बैंको बन्द पडे खातों से जमाकर्ता शिक्षा एवं जागरूकता कोष की स्थापना की जायेगी।
4. किसी बैंक में किसी एक व्यक्ति द्धारा 5 प्रतिशत या इससे अधिक अंषधारिता /भत्ताधिकार पारित के अनुमोदन के लिये रिजर्व बैक को छूट होगीं
5. बैंकिंग कम्पनियों के सहयोगी उपक्रमों से सूचना प्राप्त करने और उनकी जॉच पडताल का आर0 बी0 आई0 को अधिकार होगा।
6. आर0 बी0 आई0 को बैको के निदेशक मण्डल को अधिगमित करने तथा वैकल्पिक व्यवस्था तक प्रषासक नियुक्त करने का अधिकार होगा।

भारतीय बैको के अन्तर्राष्ट्रीय मानको पर खरा उतरने की कसौटी

बेसल – 3 का नया वित्तीय अनुशासन है जो लागत पूॅंजी तक पहॅुच और प्रतिस्पर्धा बनाये रखने हेतु बैंकिग और वित्तीय प्रणाली को प्रोत्साहन देता है।

बेसल – 3 में निम्न नियमों को शामिल किया गया है –

1. बैकों जनवरी 2015 तक अपनी सम्पत्ति का 4.5 प्रतिशत रिजर्व के रूप में रखना होगा और आगे चलकर 2.5 प्रतिशत और पूॅंजी रिजर्व करनी होगी कुल 7 प्रतिशत पूंजी रिजर्व रखनी होगी।
2. पूॅंजी आधार की गुणवत्ता नियमितता और पारदर्षिता को बढाया जायेगा।
3. दूसरी श्रेणी की पूॅंजी से जुडे प्रपत्रो में समन्यवय स्थापित किया जायेगा।
4. तीसरी श्रेणी की पूॅंजी को खत्म किया जायेगा।
5. बेसल–2 आधारित फेम वर्क के लिये अतिरिक्त उपाय के लिये लाभ अनुपात की शुरूआत होगी।
6. पूॅंजी गत ढ़ाचे के जोखिम को मजबूत किया जायेगा।
7. बैंको के डेरीवेटिव रेपो और साखों के लेन देन के कारण काउण्टर पार्टी क्रेडिट को होने वाले जोखिम को कम करने वाले पूॅंजी पर्याप्तता का मजबूत किया जायेगा।
8. लघु कालीन और मध्यम कालील मात्रातात्मक नगदी अनुपात को देखा जायेगा।

निष्कर्ष – भारतीय बैंकिग विश्व में सबसे त्रीव गति से बढने वाली बैंकित है जहॉ 1969 में देश में केवल 8262 शाखायें थी और 63800 व्यक्तियो पर एक शाखा थी जबकि 2012 के आकडों के अनुसार बैको की कुल सख्या 101261 शाखायें थी और 12275 व्यक्ति पर एक शाखा थी। इससे बैकिंग शाखाओं के विस्तार का अन्दाजा लगाया जा सकता है और लगभग 1680478 ए0 टी0 एम0 काम कर रहे है वर्तमान समय में रिजर्व बैक ने निर्देष जारी किये है कि सभी बैकों की कुछ शाखायें ग्रामीण क्षेत्रों में अनिवार्य रूप से खोलनी होगी। वर्तमान समय में भी अभी तक लगभग 35 प्रतिशत गॉवों में बैंकिग सुविधाओ का अभाव है इसके लिये आवश्यक है कि लोगों में बैकिंग की आदत डालने के लिए शाखाओं का विस्तार किया जाये एवं उनका प्रचार किया जाये।

साथ ही हमें बैको को भी कूटीर व लघु उद्योगों के विस्तार तथा प्रोत्साहन के लियें पूॅंजी उपलब्ध कराने की प्राथमिकता देनी होगीं साथ ही कम से कम लागत में लाभदायकता पर जोर देना होगा। बैंको को देश के सतत् विकास के लिये ग्राहकों तथा निवेशको का भी हित ध्यान रखना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मुद्रा एवं बैंकिग – वी0 के0 सिन्हा।
2. मुद्रा एवं बैंकिग – टी0 टी0 सेठी।
3. भारतीय अर्थ व्यवस्था – 2015 साहित्य भवन।
4. भारतीय अर्थ व्यवस्था – गौरव दत्त अष्वनी महाजन।

****

वैश्वीकरण और भारत में बेरोजगारी, गरीबी एवं लिंगानुपात

स्नेहलता सिंह *

प्रस्तावना – वैश्वीकरण के समर्थक विशेषकर विकसित देशों से वैश्वीकरण की परिभाषा को पहले तीन अंगो तक सीमित कर देते हैं अर्थात् निर्बाध व्यापार प्रवाह, निर्बाध पूंजी प्रवाह और निर्बाध टेक्नालॉजी प्रवाह, वे विकासशील देशों पर वैश्वीकरण की इस परिभाषा को स्वीकार करने के लिए दबाव डालते हैं और उनके द्वारा तय की गई परिधि में वैश्वीकरण के बारे में विचार-विमर्श करने पर बल देते हैं। परन्तु विकासशील देशों के बहुत से अर्थशास्त्री यह मत रखते है कि यह परिभाषा अपूर्ण है और यदि वैश्वीकरण के समर्थकों का अंतिम लक्ष्य समस्त संसार को एक (सार्वभौम ग्राम) के रूप में निर्बाध प्रवाह की उपेक्षा नहीं की जा सकती।' वैश्वीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा विश्व की विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं का समन्वय किया जाता है ताकि वस्तुओं एवं सेवाओं, टेक्नालॉजी, पूंजी और मानवीय पूँजी का भी निर्बाध प्रवाह हो सके। अर्थशास्त्रियों के अनुसार वैश्वीकरण के चार अंग है-

1. व्यापार अवरोधकों को कम करना ताकि वस्तुओं एवं सेवाओं का बेरोक टोक आदान प्रदान हो सके।
2. ऐसी परिस्थिति कायम करना जिसमें विभिन्न राज्यों में पूंजी का स्वतंत्र रूप से प्रवाह हो सके।
3. ऐसा वातावरण कायम करना कि टेक्नालॉजी का निर्बाध प्रवाह हो सके।

जनवरी 2016 की वर्ल्ड इकोनॉमिक आउटलुक रिपोर्ट में भारतीय अर्थव्यवस्था को विश्व की बड़ी अर्थव्यवस्थाओं में सर्वोच्च वृद्धि वाली अर्थव्यवस्था स्वीकार किया गया है। 2015 में भारतीय अर्थव्यवस्था में वृद्धि 7.3 प्रतिशत रही है, जबकि 2016 व 2017 में 7.4-7.4 प्रतिशत की वृद्धियाँ संभावित है। चीन में 2015 में वृद्धि 6.9 प्रतिशत रही है, जबकि 2016 में यह 6.3 प्रतिशत तथा 2017 में यह 6.0 प्रतिशत ही रहने की संभावना है। विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में मेक्सिकों में वृद्धि दर 2015 में 2.5 प्रतिशत रही है, जबकि 2016 व 2017 में यह क्रमश: 2.6 प्रतिशत व 2.9 प्रतिशत लाभांवित है, ब्राजील में 2015 में वृद्धि 3.8 प्रतिशत रहने के पश्चात 2016 व 2017 में क्रमश: 3.5 प्रतिशत व शून्य संभावित है।

वर्तमान में भारतीय अर्थव्यवस्था तीव्रतर विकास की पर्याय सी बन गई है। उसकी वार्षिक विकास दर 7.2% विदेशी मुद्रा भंडार दो सौ अरब डालर, बचत दर तीस प्रतिशत एवं मुंबई शेयर बाजार सूचकांक चौदह हजार के स्तर तक पहुँच चुका है। अरबपतियों की संख्या की दृष्टि से हम जापान को पीछे ही नहीं छोड़ चुके हैं बल्कि प्रति वर्ष सर्वाधिक अरबपति हमारे यहाँ ही बन रहे हैं। अमेरिका जैसे देश भारत को आर्थिक शक्ति मानकर आंतकित से हो रहे हैं। भारतीय कंपनियाँ अपने से कई गुना बड़ी विदेशी कंपनियों को तेजी से अधिगृहीत करने में लगी हैं, विदेशी शेयर बाजारों में ऐसी कंपनियों पर भारी होती जा रही हैं, भारतीय प्रबंधकों को हर तरफ माँगा जा रहा है और विदेशी, भारत में पूँजी लगाने के लिए पंक्तिबद्ध हो रहे हैं।

दूसरी ओर भारत में गरीबी, निरक्षरता, बेरोजगारी, असमानता, शोषण, अनुत्पादकता बिजली व पानी की कमी, लिंग भेद निम्नतर जीवन स्तर आदि समस्याओं के हल के संकेत तक नहीं मिल रहे हैं। इन सबसे हमारा, सामाजिक तानाबाना भी बिखरने लगा है। क्योंकि भारतीय 'इंडिया' और 'भारत' में बंट कर रह गये हैं, ऐसे में स्वाभाविक प्रश्न यह ही उठते है कि वैश्वीकरण में भारतीय अर्थव्यवस्था कितनी, कैसे व क्यों प्रभावित हो रही है? तथा इससे भारतीयों का भविष्य कितना बन या बिगड़ सकता है।'

'वैश्वीकरण के उद्देश्यों' की रूपरेखा देते हुए, अंतर्राष्ट्रीय श्रम संघ की रिपोर्ट में उल्लेख किया गया है। हमारी मुख्य चिंता यह है कि वैश्वीकरण से सभी देशों को लाभ प्राप्त होना चाहिए और सारी दुनिया में सभी लोगों के कल्याण में वृद्धि होनी चाहिए। इसका अभिप्राय यह हुआ कि इसमें गरीब देशों की आर्थिक वृद्धि की दर में उन्नति होनी चाहिए और विश्व निर्धनता कम होनी चाहिए।

वैश्वीकरण ने विश्व के गरीब वर्गों के हितों के लिए कार्य नहीं किया। इसके परिणामस्वरूप विभिन्न देशों में पारस्परिक असमानताएँ बढ़ी है और देशों के भीतर भी इसमें वृद्धि हुई है, न यह पर्यावरण के पोषण के लिए कार्य कर रहा है। साम्यवाद से बाजार अर्थव्यवस्था या अत्यधिक विनियमित राज्य से बाजार अर्थव्यवस्था की ओर संक्रान्ति इतने बुरे ढंग से व्यवस्थित की गयी कि चीन, वियतनाम और पूर्वीय यूरोप के कुछ राज्यों को छोड़ कर इनमें गरीबी में वृद्धि हुई है। दोष वैश्वीकरण में नहीं है परन्तु उस ढंग में है जिससे इसकी व्यवस्था की गयी। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने इस परिस्थिति का निचोड़ इन शब्दों में व्यक्त किया गया है- 'अर्थव्यवस्था अधिकाधिक वैश्वीकृत बन रही है, जबकि सामाजिक और राजनैतिक संस्थान मोटे तौर पर स्थानीय, राष्ट्रीय या क्षेत्रीय ही रहे हैं।'

'वैश्वीकरण के अधीन समष्टि आर्थिक नीति विकास की दरों को त्वरित करने पर बल देती रही है और यह मान्यता की गयी कि रोजगार-जनन अपने आप विकास के फलस्वरूप बढ़ जाएगा लेकिन ऐसी नहीं हुआ। जब 1993-94 से 1999-2000 के दौरान सकल देशीय उत्पाद की वृद्धि-दर 6 प्रतिशत हो गयी, तब रोजगार जनन एकदम गिरकर 1.0% के स्तर पर आ गया। 1983 से 1993-94 की दस वर्षीय अवधि के दौरान सापेक्षत: कम जी.डी.पी. वृद्धि के साथ रोजगार वृद्धि दर 20 प्रतिशत प्रति वर्ष रही। उदारीकरण और वैश्वीकरण के बाद के काल में सार्वजनिक क्षेत्र में स्वैच्छिक निवृत्ति और आकार-संकुचन के कारण रोजगार का विस्तार सीमित हो गया,

*शोधार्थी (अर्थशास्त्र) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

परन्तु निजी क्षेत्र का निवेश इस रिक्ति को भर नहीं पाया। परिणामत: कुल रोजगार की वृद्धि दर पर दुष्प्रभाव पड़ा।'

'भारत में खुली बेरोजगारी बहुत कम है। भारतीय अर्थव्यवस्था की मुख्य समस्या अल्परोजगार है। 7.32% की कुल बेरोजगारी में खुली बेरोजगारी केवल 2.8% थी, जबकि अल्प रोजगार की मात्रा 4.51% थी। यह बहुत जरूरी है कि बेरोजगारों तथा श्रम शक्ति में नव प्रवेशकों को रोजगार उपलब्ध कराया जाए और इसके लिए रोजार रणनीति को विकास रणनीति के साथ जोड़ने की आवश्यकता है। अल्प रोजगारों का अधिकतर भाग, विशेषकर वे जो अत्यधिक रूप में अल्प रोजगार प्राप्त है, गरीबी रेखा के नीचे जीवन व्यतीत कर रहे है। रोजगार जनन कार्यक्रम जैसे जवाहर रोजगार योजना और प्रधानमंत्री ग्राम रोजगार योजना से अल्परोजगार को कम करने में सहायता मिलती है। इस दृष्टि से ये प्रोग्राम गरीबी को कम करने में कार्यभाग अदा करते है और इन प्रोग्रामों को बेहतर रूप में लक्षित किया जाए ताकि गरीब लोगों की सही रूप में सहायता हो सके।'

वैश्वीकरण से मानव के सोच में परिवर्तन आया है तथा बालक-बालिका के बीच मतभेद में कमी आई है। आज का भारतीय समाज बालिकाओं को काफी महत्व देने लगा है और जो बालिकायें पहले बोझ मानी जाती थी, आज उनके जन्म पर जन्मोत्सव मनाया जाता है। वैश्वीकरण ने काफी हद तक समानता स्थापित की है। 'दुनिया बहुत तेजी से बदल रही है और यह बदलाव कई दिशाओं में हो रहा है। पढ़ लिखकर विकास की दौड़ में आ खड़ी हुई महिलाएं अब घर की चार दीवारियों से निकल के कामकाजी की दुनिया में शामिल हो रही है। बदली हुई सामाजिक व आर्थिक परिस्थितियों में महिलाओं को शिक्षा और रोजगार के अवसर आसानी से मिलने लगे है जिस कारण उन्हें अभिव्यक्ति की आजादी मिली है, समाज में स्वयं अर्जित प्रतिष्ठा पाने के साधन मिले और मिली है जीवन को अपने तरीके से जीने की आजादी।'

निष्कर्ष – उचित वैश्वीकरण के नीति संबंधी ढांचे का स्वरूप बताया गया है। जिसके द्वारा विकास रोजगार और समानता के लक्ष्यों को समन्वित किया जाना चाहिए। अच्छे काम का लक्ष्य वैश्वीकरण के युग में केवल तभी प्राप्त किया जा सकता है। यदि वैश्वीकरण के श्रम पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव कम किए जा सके और क्षेत्रीय असमानतओं को कम करने के लिए पिछड़े क्षेत्रों में सामाजिक एवं आर्थिक आधारसंरचना के निर्माण के सार्वजनिक कार्यक्रमों को मजबूत बनाया जाए। इन प्रोग्रामों को विशेष रूप में कृषि वृद्धि दरों को उन्नत करने के लिए लक्षित करना होगा। क्योंकि विकसित देशों के किसानों को प्राप्त उच्च स्तर के सब्सिडियों के कारण देश के किसान दुष्प्रभावित हुए है। वैश्वीकरण का अल्पविकसित और सबसे कम विकसित देशों पर प्रतिकूल प्रभाव हुआ है। इसने समृद्ध और शक्तिशाली देशों को लाभ पहुंचाया है। जरूरत इस बात की है इसके मार्ग में परिवर्तन किया जाए ताकि यह अधिक समावेशी बना जाए और समाज के हाशिये पर धकेले गए वर्गों को अपनी छत्रछाया में ला सके। वास्तव में उचित वैश्वीकरण विकास और रोजगार प्रोन्नत करने में सहायक हो सकता है।

सुझाव –

1. अच्छा राजनैतिक प्रशासन जो लोकतांत्रिक राजनीतिक प्रणाली पर आधारित हो।
2. एक प्रभावी राज्य स्थापित होना चाहिए। जो उच्च आर्थिक विकास सुनिश्चित कर सके, सामाजिक वस्तुएं और सामाजिक संरक्षण उपलब्ध करा सके।
3. लाभपूर्ण सामाजिक बातचीत के लिए श्रमिकों एवं नियोजकों के सशक्त प्रतिनिधित्व वाली संस्थाएँ होनी भी अनिवार्य है।
4. सबसे अधिक प्राथमिकता ऐसी नीतियों को देनी होगी जो पुरूषों एवं स्त्रियों के लिए (समुचित रोजगार) की केन्द्रीय आकांक्षा को पूरा कर सके, इन अनौपचारिक अर्थव्यवस्था की उत्पादिता को ऊपर उठा सके और उपक्रमों एवं अर्थव्यवस्थाओं की प्रतियोगिता शक्ति को बढ़ा सके। अभी तक वैश्वीकरण ने अधिकाधिक वैश्विक अर्थव्यवस्था कायम करने में सहायता दी है।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वैश्वीकरण और भारतीय अर्थव्यवस्था मान चन्द्र खंडेला प्रकाशक- प्रेमचन्द्र बाकलीवाल अधिकार पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स 2014
2. दत्र एवं सुन्दरम - भारतीय अर्थव्यवस्था एस.चन्द एण्ड कंपनी प्रा. लि. रामनगर नई दिल्ली 2008
3. कृषि अर्थशास्त्र - डॉ. एस.लसी. जैन, डॉ. पी.डी. माहेश्वरी, प्रकाशक- कैलाश पुस्तक भवन हमीदिया मार्ग भोपाल
4. www.google.com
5. www. yahoo.com
6. प्रतियोगिता दर्पण (सामान्य अध्ययन) - भारतीय अर्थशास्त्र 2016-17
7. कुरूक्षेत्र ग्रामीण विकास को समर्पित नवम्बर 2016

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

Legislative Control over Administration through Motion of Thanks on Governor's Address in Uttar Pradesh : A Case Study

Dr. Anvita Massand *

Abstract - The Motion of Thanks on the Governor's Address is analogous to that of a No-Confidence Motion. Under the Constitution, the Governor is required to address the first session of each year. Amendments to the motion of thanks, if adopted, amount to defeat of the Government in the House and entail resignation of the Government or the dissolution of the House. In England the Governments have resigned following the passing of amendments to the Address in reply to the Queen's Speech. It is thus an effective device to discuss the Government's policies and actions.

Introduction - The Motion of Thanks on the Governor's Address is analogous to that of a No-Confidence Motion. Under the Constitution, the Governor is required to address the first session of every newly constituted Assembly and the first session of each year.[1] The Address forms part of the proceedings of the House when the Speaker reads it out in the House at the first sitting of the Assembly.[2]

The Address, which is drafted by the Government, outlines the policies and programmes of the Government for the forthcoming year and brief review of the activities and achievements during the concluding year. For example, in the Address of 1980, there was a mention of the constitution of a Wage Board,[3] priority to rural electrification[4] etc. Likewise, the Address of 1986 said that Paddy Nurseries for improved seeds[5] and four gas based fertilizer plants[6] would.be set up. The Address also referred to the scheme to introduce Group Insurance for the weavers[7] and creation of 94 Civil Judge Courts and 50 Additional District and Session Courts for speedy disposal of pending cases.[8] In the Address of 1987, there was a mention of the modernisation of the Police Radio Communication,[9] weightage to primary education[10] and so on. The Address also informed that the minimum wages of workmen in forty-six trades were revised[11] and that 4,500 km road was constructed during the previous year.[12] Similarly, the Address of 1991 referred to the scheme to generate employment avenues for fifty lakh people under the Eighth Plan.[13]

The discussion on the Address[14] begins in the form of a Motion, thanking the Governor for his Address and is known as the Motion of Thanks[15]. It is moved by a Member and seconded by another Member[16] both generally belonging to the ruling party. The Speaker allots, days for discussion, which are ordinarily four days.[17]

Amendments may be moved to the 'Motion of Thanks'.[18] No notice is required for moving the Motion or amendments thereto.[19] A member may move any number of amendments. For example, in 1984, as many as sixty amendments were moved by a member.[20] Amendments can be moved only by way of addition of words at the end of the original Motion.[21] Usually these amendments are expressed in the form of regret for the omission of the matters from the Address.

Each year several amendments are moved to the Motion of Thanks. The number of amendments varied from 135 in 1978[22] to 736 in 1984[23]. In 1978, the amendments related to the omission of steps to revitalise the sick Sugar and Textile Mills,[24] lack of assurance for constituting a State Wage Board and decontrolling cement.[25] In 1980, the absence of reference to erratic power supply,[26] abolition of Sales Tax[27], formulation and enforcement of Service Rules of the employees of UPSRTC,[28] in 1984, lack of assurance to abolish Octroi Tax,[29] frame the Anti-Dowry Act,[30] and regularise the services of adhoc teachers working in Universities and affiliated Colleges,[31] in 1986, omission of steps to remodel the education system and make it employment oriented[32] and in 1991, absence of reference to the removal of ban on recruitment in Government jobs, amendment in labour laws and abolition of Labour Contract System in industries[33] were made the grounds of amendments among others.

Quite a few amendments such as the omission of reference to the deteriorating law and order,[3434] the Government's failure to check inflation,[35] non-payment of unemployment allowance to the- unemployed,[3636] failure of Public Distribution System[37], granting the status of Industry to Agriculture,[38] holding election to local bodies,[39] enforcement of Crop Insurance Scheme,[4040]

*Assistant Professor (Political Science) Ramadheen Singh Girls Degree College, Lucknow (U.P.) INDIA

corruption in Government Departments and Public Corporations[41] were moved almost every year, irrespective of the Party heading the Government.

During the debate, the members are at liberty to discuss matters referred to in the Address.[42] Matters, which are not specially mentioned in the Address and are within the responsibility of the State Government, are brought into discussion through amendments to the Motion of Thanks. The scope of the discussion is thus very wide and the entire administration comes under review of the Legislature.

During the discussion, for instance in 1984, the Government was criticised for shielding the corrupt officials,[43] for indulging in wasteful expenditure whereas irrigation and power project works had been held up for non-receipt of budgetary funds[44]. In 1987, the members criticised the Government for its inability in preparing the Budget in time and presenting the Vote-on-Account,[45] and the Police for not recording the FIRs.[46] The Government was also criticised for violating the Rules of Procedure by not providing sufficient legislative business for the House to sit for ninety days in a year.[47]

An analysis of the amendments to and the debates on the Motion of Thanks to the Governor's Address shows that they covered a wide range of governmental activity right from the worsening situation of law and order to inadequate facility for drinking water and other ordinary issues. The purpose of the members in all the cases was obviously to criticise the Government.

The Government's replies to the discussions were hardly ever specific to the issues or problems raised. However, the replies sometimes contained Government assurances, general as well as specific. For instance, in reply to the debate in 1986, the Chief Minister appreciating the members for putting forth a number of good suggestions assured the House to incorporate them while preparing the related programmes.[48] Some specific assurances that came about were for setting up sixteen big and several medium and small scale industries,[49] early finalisation of a scheme for the development of waste land,[50] issuing orders for making payment to the cane growers within fifteen days,[51] for giving loan of Rs. 35 lakh to the Mill owner of Khalidabad Sugar Mill for restarting the Mill[52] and 50% subsidy to small farmers for the purchase of pesticides and pumping sets.[53]

At the end of the discussion the amendments are put to the vote of the House. If the amendments are voted out, the Motion of Thanks is adopted and is communicated to the Governor.[54] But if an amendment to the Motion of Thanks is carried, it implies the defeat of the Motion of Thanks on the Governor's Address and such a "defeat would cause the resignation of the Government or the dissolution of the House for, the Motion for a Vote of Thanks is a Motion of Confidence in the Government and if the Motion is defeated or amended, the vote is a Vote of No-Confidence."[55]

As regards the defeat of the Government on the Motion of Thanks, only two instances are found in U.P. when the State Government had to resign following a defeat on the Motion of Thanks on the Governor's Address. One instance is that of the C. B. Gupta Ministry which in 1967 had to resign on account of amendment passed to the Motion of Thanks by 215 to 198 votes.[56] Likewise, on March 30, 1971, when amendments to the Motion of Thanks, were passed by 229 votes to 184 votes, T. N. Singh Ministry had to bow out of office.[57] In England also the Governments have resigned following the passing of amendments to the Address in reply to the Queen's Speech.[5858]

The device thus provided an opportunity to discuss and criticise the Government's policies and actions. The members by raising constituency issues highlighted the problems being faced by the people in their constituencies. The whole administration came under the scrutiny of the Legislature. Although the discussion was as good as that on the Motion of No-Confidence, the debate in the latter was more critical and sharper than in the former.

References : -

1. Article 176.
2. Rule 19(2), UPLA Rules.
3. UPLAP, vol. 343,January 23,1980, p.25.
4. Ibid., p. 20.
5. UPLAP, vol. 364,February 6, 1986, p.26.
6. Ibid., p. 27.
7. Ibid.
8. Ibid., p. 32.
9. UPLAP, vol. 379, March 2,,1987, p.23.
10. Ibid., p. 32.
11. Ibid., p. 30,
12. Ibid.
13. UPLAP, vol. 400, January 21,1991, p.2.
14. Article 176(2).
15. Rule 19(4), UPLA Rules.
16. Ibid.
17. Rule 19(3), ibid.
18. Rule 19(5), ibid.
19. Ibid.
20. UPLAP, vol. 364, February 22, 1984, pp. 1028-1033
21. Rule 19(6), UPLA Rules.
22. UPLAP, vol. 325, July 18, 1977, p. 196-208.
23. UPLAP, vol. 364, February 22, 1984, pp. 997-1067.
24. UPLAP, vol. 330, March 22, 1978, p. 450.
25. UPLAP, vol. 330, March 18, 1978, p. 141-143.
26. UPLAP, vol. 343, January 25, 1980, p. 163.
27. Ibid., p. 166.
28. Ibid., p. 187.
29. UPLAP, vol. 364, February 22, 1984, p. 1003.
30. Ibid.
31. Ibid p. 1034.
32. UPLAP, vol. 374, February 11, 1986, p. 153.
33. UPLAP, vol. 400, January 24, 1991, p. 215, 216.
34. UPLAP, vol. 325, July 18, 1977, p. 196;
i. vol. 343, January 25, 1980, p. 162;
ii. vol. 359, February 8, 1983, p. 411;
iii. vol. 364, February 22, 1984, p. 1000;

iv. vol. 394, January 12, 1990, p. 131;
v. vol. 400, January 24, 1991, p. 209.
35. UPLAP, vol. 325, July 18, 1977, p. 205;
i. vol. 330, March 22, 1978, p. 449;
ii. vol. 369, March 18, 1985, p. 100;
iii. vol. 374, February 11, 1986, p. 164;
iv. vol. 400, January 24, 1991, p. 209.
36. UPLAP, vol. 343, January 25, 1980, p. 162.
i. vol. 348, January 28, 1981, p. 233;
ii. vol. 364, February 22, 1984, p.1010;
iii. vol. 374, February 11, 1986, p. 171;
iv. vol. 394, January 12, 1990, p. 129.
37. UPLAP, vol. 359, February 8, 1983, p. 395;
i. vol. 374, February 11, 1986, p. 155;
ii. vol. 379, March 4, 1987, p. 112;
iii. vol. 400, January 24, 1991, p. 233.
38. UPLAP, vol. 359, February 8, 1983, p. 399;
i. vol. 374, February 11, 1986, p. 153;
ii. vol. 394, January 12, 1990, p. 130;
iii. vol. 400, January 24, 1991, p. 221.
39. UPLAP, vol. 343, January 25, 1980, p.163;
i. vol. 348, January 28, 1981, p. 242;
ii. vol. 364, January 22, 1984, p. 1009;
iii. vol. 374, February 11, 1986, p. 176.
40. UPLAP, vol. 325, July 18, 1977, p. 198;
i. vol. 330, March 18, 1978, p. 144;
ii. vol. 343, January 25, 1980, p. 170;
iii. vol. 369, March 18, 1985, p. 117;
iv. vol. 394, January 12, 1990, p. 106;
v. vol. 400, January 24, 1991, p. 213.
41. UPLAP, vol. 325, July 18, 1977, p. 206.
i. vol. 348, January 28, 1981, p. 237.
ii. vol. 359, February 8, 1983, p. 413.
iii. vol. 374, February 11, 1986, p. 161.
iv. vol. 394, January 12, 1990, p.115.
v. vol. 400, January 24, 1991, p. 217.
42. Rule 19(4), UPLA Rules.
43. UPLAP, vol. 364, February 21, 1984, p. 786.
44. Ibid., p. 783.
45. UPLAP, vol. 379, March 4, 1987, p. 114.
46. Ibid., p. 118.
47. Ibid., p. 114.
48. UPLAP, vol. 374, February 13, 1986, p. 129.
49. Ibid, p. 134.
50. Ibid.
51. Ibid., p. 133.
52. UPLAP, vol. 374, February 13, 1986, p. 141.
53. Ibid., p. 133.
54. Rule 19(7), UPLA Rules.
55. Jennings, Sir Ivor, cited in 'The Constitution of India', Shukla, Dr. V. N., Eastern Book Company, Lucknow, 5th edition, 1970, p. 228.
56. Siwach,J.R.,'Tne Office of the Governors', Sterling Publishers Pvt. Ltd., New Delhi, 1977, pp. 70-71.
57. Ibid., p. 71.
58. Lowell, A. Lawrence, 'The Government of England' The Macmillan Company, New York, vol. I, 1924, p. 329.

****

शहडोल जिले की बैगा जनजाति का शैक्षणिक स्वरूप- एक अध्ययन

डॉ. लता सिंह *

प्रस्तावना - भारत विविधताओं का देश है। इस देश में पायी जाने वाली विविधताओं में देश के कुछ ऐसे क्षेत्र हैं, जिन्हें विकसित क्षेत्र कहा जा सकता है। किन्तु कुछ ऐसे भी रहते हैं जो पूर्णतया अविकसित क्षेत्र होते हैं। इन क्षेत्रों में निवास करने वालों की भाषा, बोली, रीति-रिवाज, मान्यताएँ, परम्परायें एवं आचार विचारों में भिन्नता पायी जाती है।

जनगणना विभाग के अनुसार यहाँ तीन जातियाँ सामान्य, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के संवर्गों में विभक्त किया गया है, यहाँ जनजाति समूह के लोग शिक्षा सहित अन्य सभी क्षेत्रों में सबसे अधिक पिछड़े हैं। एक अध्ययन क्षेत्र शहडोल जिला, एक जनजातीय बाहुल भू-भाग है। इस जिले या क्षेत्र के अन्तर्गत कुल 16 प्रकार की जनजातियाँ निवास करती हैं। जिले में प्रमुख रूप से गोंड़, बैगा, कोल, कोरकू, भवासी, रवैरवार, बिन्झवार एवं अगरिया प्रमुख हैं। आदिवासियों में साक्षतरता का प्रतिशत मात्र 40.93 प्रतिशत, जिनमें पुरूष 54.14 एवं महिला 27.87 प्रतिशत है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से जनजातियों के विकास के लिए सरकार द्वारा विभिन्न योजनायें, विभिन्न कार्यक्रमों का अनवरत प्रयास किया जाता रहा है किन्तु बैगा जनजाति को शिक्षा विकास के क्षेत्र में वांछित सफलता न मिलने के कई कारण हैं। बैगा जनजातियों के विकास क्षेत्रों की भौतिक कठिनाइयाँ उनके समाजिक, आर्थिक परिदृष्य राजनीतिक विरासत प्रमुख हैं। जिला शहडोल म.प्र. के पूर्वी भाग में स्थित एक जनजातिय बाहुल जिला है। इस जिले में निवास करने वाली जनसंख्या का प्रतिशत 19.63 बैगा जनसंख्या पाई जाती है। जिले में सम्मलित सभी 820 ग्रामों में से 184 ग्रामों मे बैगा जनसंख्या निवास करती है। इनका साक्षरता का प्रतिशत 19.63 है।

आयु वर्ग के अनुसार बैगा जनजाति में साक्षरता का स्वरूप - किसी देश में निवास करने वाली जनसंख्या आयु वर्ग की दृष्टि से विभिन्न समूहों में वर्गीकृत होती है। जनसंख्या का कुछ भाग युवा, कुछ प्रौढ़ एवं कुछ वृद्ध होते हैं। जनसंख्या की दृष्टि से विभिन्न समूहों के वर्गीकृत होते है।

सामान्य रूप से 0-5 वर्ष की आयु तक के शिशु की श्रेणी में आते हैं। 5-18 वर्ष आयु बालक 18से 40 वर्ष तक के युवा तथा 40 वर्ष से 60 वर्ष के (वर्ग के) प्रौढ़ और उससे अधिक वृद्ध की श्रेणी में आ जाते हैं। आयु वर्ग के अनुसार साक्षरता सम्बन्धी आकड़े विष्वसनीय ढंग से उपलब्ध ने होने के कारण विश्लेषण में कुल साक्षर जनसंख्या एवं अधिकतम आयु एवं प्रतिदर्षी ग्रामों में साक्षरता का स्वरूप और उसका विश्लेषण मान्य करते हुए किया गया है। सामान्यता 12 वीं तक की संख्या को 20 वर्ष तक की आयु वर्ग में शामिल करते हुए समग्र जिले में अध्ययनरत् संबंधित करते हुए आयु वर्ग के अनुसार जनजातियों में साक्षरता के स्वरूप का विश्लेषण किया गया है।

शहडोल जिले में 2001 की जनगणना के अनुसार कुल 13935 व्यक्ति साक्षर है।

तालिका 1 - आयु वर्ग के अनुसार बैगा जनजाति में साक्षरता का स्वरूप 2001 (प्रावधिक) प्रतिशत में

क्र.	विवरण	05 से 18 वर्ष (कुल से प्रतिशत)	18से 25 वर्ष (कुल से प्रतिशत)	25वर्ष से (कुल से प्रतिशत)
1.	सोहागपुर	50.57	33.63	15.8
2.	बुढ़ार	58.38	27.62	14.00
3.	जयसिंहनगर	55.51	30.59	14.10
4.	गोहपारू	51.51	32.35	14.78
5.	ब्यौहारी	52.13	32.87	15.00
6.	शहडोल	54.09	31.17	14.7

शिक्षण संस्थाओं में पंजीकृत छात्र संख्या एवं कुल साक्षर संख्या के विश्लेषण पर आधारित (प्राविधिक) 2001 उपर्युक्त सारणी क्रमांक 4.7 के अनुसार शहडोल जिले में निवास करने वाली बैगा जनजाति में सर्वाधिक साक्षरता का 05 वर्ष से 18 वर्ष की आयु समूह में 54.09 प्रतिशत पाया जाता है। द्वितीय क्रम से 18 वर्ष से 25 वर्ष की आयु समूह में 31.17 प्रतिशत है। जबकि तृतीय क्रम पर 25 वर्ष से अधिक की आयु समूह का है। इस संवर्ग में साक्षर बैगा जनजाति 14.4 है। साक्षरता के उक्त स्वरूप से स्पष्ट होता है कि आयु बढ़ाने के साथ साक्षरता का प्रतिशत घटता जाता है।

निष्कर्षत: उच्च आयु वर्ग की ओज जाते हैं, बैगा जनजाति में साक्षरता का प्रतिशत घटता जाता है। उपर्युक्त ह्रास के प्रमुख 1981 के बाद बैगा जनजातियों में शिक्षा के प्रति अभिरूचियों का जागृत होना एवं केन्द्र व राज्य सरकार की जनजातियों के प्रचार-प्रसार की नीतियाँ प्रमुख रूप से उत्तारदायी रही हैं। यदि समग्र जिलों में निवास करने वाली बैगा जनजाति के आयु वर्ग की साक्षरता पर ध्यान दिया जाय तो स्पष्टत: आंशिक दृष्टिगोचर होती है। यद्यपि 18 वर्ष के आयु संवर्ग में साक्षरता का प्रतिशत सभी विकासखण्डों में बहुत अधिक है, किन्तु विकासखण्डों में सोहागपुर में इस आयु वर्ग में साक्षरता का 50.57 प्रतिशत सबसे अधिक तथा बुढ़ार विकासखण्ड में 58.38 प्रतिशत है जबकि 25 वर्ष से 40 वर्ष आयु संवर्ग में सबसे अधिक सोहागपुर में 15.8 प्रतिशत फिर ब्यौहारी तहसील प्रतिशत तथा न्यूनतम जैतपुर तहसील में 14.00 प्रतिशत है। उपरोक्त विषमता का कारण पर

संस्कृति प्रभाव, धरातलीय एवं शिक्षा विकास का आधारभूत

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) पं. शम्भूनाथ शुक्ल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

संरचनाओं पर आवागमन, नगरीकरण, औद्योगिकरण जैसे तत्वों के स्तर में विषमता का प्रमुख कारण है।

के अनुसार साक्षरता – साक्षरता का सामान्य भाव ऐसी शिक्षा से है, जिसके द्वारा व्यक्ति लिखना, पढ़ना एवं समझने की क्षमता प्राप्त कर सके। साक्षरता की दृष्टि से साक्षरता को विभिन्न वर्गो (कक्षा) में वर्गीकृत किया गया है यथा पहली कक्षा से 12 वीं कक्षा एवं इससे भारतीय संविधान में सर्वशिक्षा के अन्तर्गत स्कूली शिक्षा एवं उच्च शिक्षा के 02 पदानुक्रम हैं। म.प्र. शासन ने भी साक्षरता पर पदानुक्रम की अवधारणा को स्वीकृत करते हुये साक्षरता के पदानुक्रम को विभिन्न वर्गों में स्वीकृत किया है, जो (तालिका 1) है–

तालिका 2 –

क्रमांक	शिक्षा का स्वरूप	विवरण
1	प्राथमिक	स्कूल शिक्षा
2	पूर्व माध्यमिक	स्कूल शिक्षा
3	माध्यमिक	स्कूल शिक्षा
4	उ.मा.शिक्षा	स्कूल शिक्षा
5	स्नातक	महाविद्यालयीन
6	स्नातकोत्तर	महाविद्यालयीन
7	एम.फिल., पी.एच.डी.	विश्वविद्यालयीन
8	अन्य	तकनीकी शिक्षा प्रशिक्षण

स्रोत–शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन स्कूल एवं उच्च शिक्षा 2001 (प्राविधिक)

उपर्युक्त पदानक्रमीय स्वरूप में पाँचवीं स्तर तक साक्षर व्यक्ति की शैक्षणिक योग्यता सबसे कम है किन्तु उसकी गणना साक्षर व्यक्तियों में होती है, जबकि किसी भी विधा में स्नातकोत्तरउपाधिधारी उच्च पदानुक्रम के अन्तर्गत समाहित है। एम.फिल.एवं पी–एच.डी. स्नातकोत्तरसे अधिक पदानुक्रम के संवर्ग की उपाधि होती है।

अध्ययन के लिये चयनित शहडोल जिला जिसका वर्तमान स्वरूप 1991 की तुलना में काफी संकुचित हो गया है, में 2001 की जनगणना के अनुसार कुल बैगा साक्षर जनसंख्या के अन्तर्गत 13935 व्यक्ति हैं। 2001 की जनगणना के अनुसार पदानुक्रम अनुसार विभिन्न शैक्षणिक संवर्गो में छात्रों की संख्या अग्रांकित (तालिका 3) हैं।

तालिका 3 –शहडोल जिले में पदानुक्रमवार बैगा जनजाति साक्षरता– 2001

क्र.	पदानुक्रम वर्ग	छात्र संख्या	अनुसूचित जनजाति साक्षरता से प्रतिशत
1	प्राथमिक	9213	66.12
2	माध्यमिक	3462	24.85
3	हाईस्कूल	919	6.60
4	उ. मा.	222	1.69
5	स्नातक एवं अधिक	80	0.58
6	अन्य	39	0.14
	योग	13935	100.0

स्रोत–जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2008

हाईस्कूल स्तर तक साक्षरता का स्वरूप – साक्षरता पदानुक्रम की दृष्टि से यह प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर से उच्च पद प्राप्त है। अध्ययन क्षेत्र में कुल साक्षर व्यक्तियों के 6.60 प्रतिशत भाग हैं। किन्तु क्षेत्रीय विषमतायें इस सवंर्ग में भी दृष्टिगोचर होती हैं। गोहपारू विकासखण्ड की कुल जनजातीय साक्षरता का 9.03 प्रतिशत भाग हाई स्कूल संवर्ग में है, जो अन्य विकासखण्डों की तुलना में सबसे अधिक है। इस संवर्ग का न्यूनतम प्रतिशत ब्यौहारी विकासखण्ड में 5.27 प्रतिशत है। अन्य विकासखण्डों में अपने क्षेत्र के साक्षर जनसंख्या का 8.3 प्रतिशत जैतपुर, 6.14 प्रतिशत, जयसिंहनगर में एवं 7.6 प्रतिशत गोहपारू विकासखण्ड में पाया जाता है।

उच्चतर माध्यमिक स्तर तक शिक्षा का स्वरूप – उ.मा. स्तर तक साक्षर व्यक्तियों की कुल संख्या 222 है जो कुल जनजातीय साक्षर व्यक्तियों का 1.69 प्रतिशत भाग है। सोहागपुर विकासखण्ड में सर्वाधिक 2.8 प्रतिशत जनजातिय साक्षर व्यक्ति हैं, जो अन्य सभी विकासखण्डों की तुलना में सबसे अधिक है। उच्चतर माध्यमिक स्तर तक बैगा जनजाति की साक्षरता का न्यूनतम भाग,0.88 प्रतिशत ब्यौहारी विकासखण्ड में पाया जाता है।

स्नातक एवं स्नातकोत्तरतक शिक्षा का स्वरूप – पदानुक्रम की दृष्टि से सर्वोच्च पद प्राप्त स्नातक एवं स्नातकोत्तर साक्षर बैगा जनजाति के व्यक्तियों की कुल संख्या 80 है, जो समग्र बैगा साक्षर व्यक्तियों के 0.58 प्रतिशत भाग है। सोहागपुर में 749 बैगा जनजाति व्यक्ति इस पदानुक्रमीय संवर्ग में हैं। यह भाग अध्ययन क्षेत्र में समग्र विकासखण्डों में सबसे अधिक है। न्यूनतम बुढ़ार विकासखण्ड में 0.03 प्रतिशत भाग स्नातक एवं स्नातकोत्तर साक्षर व्यक्तियों का मिलता है।

अन्य – उपर्युक्त के अतिरिक्त औद्योगिक प्रशिक्षण, पॉलीटेक्निक, इंजीनियरिंग आदि तकनीकी उपाधिकारी साक्षर व्यक्तियों की कुल संख्या 39 है, जो समग्र बैगा जनजाति साक्षरता का 0.14 प्रतिशत है। इस संवर्ग की अधिकतम संख्या 749 व्यक्ति(4.19प्रतिशत) सोहागपुर एवं न्यूनतम ब्यौहारी विकासखण्ड में 1.15 प्रतिशत पाई जाती है।

निष्कर्ष रूप में अध्ययन क्षेत्र में उच्च पदानुक्रम की और जाने पर साक्षर व्यक्तियों में ह्रास एंव क्षेत्रीय भिन्नतायें दृष्टिगोचर होती हैं। भिन्नता को प्रभावित करने वाले प्रमुख तत्वों में आर्थिक, सामाजिक एवं भौतिक कारकों के अतिरिक्त सामाजिक, राजनैतिक, प्रशासनिक पर संस्कृति प्रभाव एवं साक्षर व्यक्तियों में प्रवास की प्रवृत्ति मुख्य रूप से उत्तारदायी तत्व है।

उपर्युक्त सारणी क्रमांक 4.10 के अनुसार शहडोल जिले में निवास करने वाली बैगा जनजाति के साक्षर व्यक्तियों की संख्या 13935 है। उक्त साक्षर व्यक्तियों में पदानुक्रम के अनुसार साक्षर व्यक्तियों का प्रतिशत प्राथमिक स्तर पर 66.12 प्रतिशत है, जो अन्य कक्षा के अनुसार साक्षर व्यक्तियों का प्रतिशत प्राथमिक स्तर पर 66.12 प्रतिशत है, जो अन्य कक्षा एवं वर्गों की तुलना में सबसे अधिक है। द्वितीय चक्र पर 24.85 प्रतिशत माध्यमिक स्तर तक साक्षर व्यक्तियों का होना मिलता है। तृतीय क्रम में 6.60 प्रतिशत हाई स्कूल तक शिक्षा प्राप्त करने वाले साक्षर व्यक्ति हैं, जबकि 1.69 प्रतिशत भाग उ.मा. परीक्षा उत्तीर्ण किये हुये हैं। स्नातक एवं स्नातकोत्तर शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों की संख्या 571 है, जो कुल साक्षर बैगा जनसंख्या का 0.58 प्रतिशत भाग है। आई.टी.आई. पॉलिटेक्निक एवं व्यावसायिक पाठ्यक्रम की साक्षरता वाले व्यक्तियों की जिले में उपलब्ध संख्या 39 है, जो कुल बैगा जनजाति साक्षरता संख्या का मात्र 0.14 प्रतिशत भाग है। इस प्रकार निम्न पदानुक्रम से उच्च पदानुक्रम की और जाने पर बैगा जनसंख्या के साक्षरता का पिरामिड सँकरा होता जाता है।

अध्ययन क्षेत्र में स्थित सभी पाँचों विकासखण्डों में संवर्गवार बैगा जनजाति की साक्षरता में अन्तर दृष्टिगोचर होता है, जैसा कि निम्नांकित तालिका 4 से स्पष्ट होता है–

तालिका 4 – (देखे)

क्रमांक 4 से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में संवर्गानुसार साक्षरता का क्षेत्रीय वितरण एक दृष्टिगोचर नहीं होता है। सम्पर्ण जिले में प्राथमिक स्तर तक साक्षर व्यक्तियों का प्रतिशत 66.12 प्रतिशत है, जबकि विकासखण्ड में कुल साक्षर व्यक्तियों के 71.86 प्रतिशत भाग प्राथमिक स्तर तक की साक्षरता का पाया जाना है। यह अध्ययन क्षेत्र में स्थित सभी पाँचों विकासखण्डों से अधिक है। पाँचवीं स्तर तक की साक्षरता का अपने विकासखण्ड की कुल व्यक्तियों से 56.26 प्रतिशत भाग ब्यौहारी विकासखण्ड में पाया जाता है।

तालिका 5 – (देखे अगले पृष्ठ पर)

1. **माध्यमिक स्तर तक साक्षरता का स्वरूप –** माध्यमिक स्तर(कक्षा 8 उत्तीर्ण) तक साक्षरता अध्ययन क्षेत्र के द्वितीय वरीयता क्रम पर है। शहडोल जिले में इस स्तर पर साक्षर व्यक्ति हैं जो कुल जनजातीय साक्षर व्यक्तियों का 24.85 प्रतिशत भाग है। प्राथमिक स्तर के साक्षर व्यक्तियों की स्तर के साक्षर व्यक्तियों के क्षेत्रीय वितरण में भिन्नता दृष्टिगोचर होती है। सारणी क्रमांक 4.11 के अनुसार शहडोल पाँचों विकासखण्डों में से ब्यौहारी विकासखण्ड में कुल साक्षर व्यक्तियों का 34.54 प्रतिशत भाग प्राथमिक स्तर तक तो अन्य सभी विकासखण्डों की तुलना में सबसे अधिक है द्वितीय वरीयता सोहागपुर विकासखण्ड में माध्यमिक स्तर पर व्यक्तियों का कुल साक्षर व्यक्तियों से 26.93 प्रतिशत भाग है। माध्यमिक सतर तक 20.57 प्रतिशत भाग गोहपारू में पाया जाता है। अन्य विकासखण्डों में अपने क्षेत्र के कुल जनजातीय साक्षर व्यक्तियों से 21.10 प्रतिशत बुढ़ार 21.86 जयसिंहनगर विकासखण्डों में मिलता है।

उ.मा.वि. तक बैगा साक्षरता के स्वरूप की प्रवृत्ति – 07-08 के आँकड़ों के अनुसार उक्त दोनों संवर्गों में बैगा जनजातियों के छात्रों की संख्या क्रमष: 919 एवं 222 छात्र अपने संवर्ग में क्रमश: 6.60 प्रतिशत एवं 1.69 प्रतिशत भाग है। विकासखण्डवार वितरण की दृष्टि से हाई स्कूल में सोहागपुर विकासखण्ड में सबसे अधिक (सारणी क्रमांक 4.11) एवं गोहपारू में 5.61 प्रतिशत सबसे कम छात्र संख्या मा.वि. में कुल बैगा जनजातीय छात्र संख्या का सबसे अधिक 1.78 प्रतिशत भाग जयसिंहनगर विकासखण्ड में प्रतिशत भाग सोहागपुर विकासखण्ड में पाया जाता है।

महाविद्यालयीन एवं तकनीकी शिक्षा के छात्रों का क्षेत्रीय वितरण स्वरूप– महाविद्याल एवं तकनीकी संवर्ग में बैगा जनजातियों के छात्रों की कुल संख्या 80 एवं 39 है जो अपने संवर्ग के कुल 0.58 एवं0.14 प्रतिशत भाग है। महाविद्यालयीन बैगा जनजातियों का सर्वोच्च 0.73 प्रतिशत सोहागपुर विकासखण्ड में 38 प्रतिशत भाग ब्यौहारी विकासखण्ड में पाया जाता है, निष्कर्षत: महाविद्यालयीन एवं तकनीकी विद्यालयों में बैगा वेषी छात्रों की दृष्टि से सोहागपुर विकासखण्ड अग्रणी है, जिसके प्रमुख कारण निम्नानुसार हैं–

सोहागपुर विकासखण्ड जिला मख्यालय होने के कारण सभी प्रकार के शिक्षा संस्थानों का केन्द्र है। विशिष्ट शिक्षा संस्थान सिर्फ इसी विकासखण्ड में हैं, अध्ययन की अन्यत्र सुविधा न होने के कारण अनुसूचित जनजाति के सभी छात्रों को वेष लेना पड़ता है।

संस्थानों के अतिरिक्त जिला स्तर के सभी कार्यालय इस विकासखण्ड में स्थित हैं, फलत: लोग अपनी सुविधा की दृष्टि से सोहागपुर विकासखण्ड में स्थित विद्यालयों में प्रवेश लेते हैं। भवन क दृष्टि से इस विकासखण्ड का अन्य विकासखण्डों की तुलना में अधिक विकास हुआ है। सुविधायें यथा पुस्तकालय, खेल का मैदान, मनोरंजन की सुविधायें, कोचिंग सेन्टर इस केन्द्र में अवस्थित हैं जो अन्य में अनुपलब्ध हैं। शिक्षा का प्रभाव जनजातीय छात्रों के आकर्षण का केन्द्र है।

उपर्युक्त प्रभावी कारणों के कारण सोहागपुर विकासखण्ड में बैगा जनजातियों के छात्रों का अन्य विकासखण्डों की तुलना में सबसे ज्यादा प्रतिशत पाया जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. खुद का शोध प्रबन्ध 'शहडोल जिले के बैगा जनजाति के शिक्षा विकास पर शासकीय योजनाओं के प्रभाव का भौगोलिक अध्ययन' लता सिंह

तालिका 4 – बैगा जनजाति में कक्षावार साक्षरता (पदानुक्रम व्यवस्था) का क्षेत्रीय वितरण प्रतिरूप-2001

क्र.	विकासखण्ड का नाम	प्राथमिक		माध्यमिक		हाईस्कूल		उच्चतर माध्यमिक		स्नातक एवं स्नातकोत्तर		अन्य		योग
		सं.	प्रति	सं.	प्रति	सं.	प्रति	सं.	प्रति	सं.	प्रति	सं.	प्रति	सं.
1	सोहागपुर	2121	62.29	917	26.93	280	8.22	50	1.47	25	0.73	12	0.35	3405
2	बुढ़ार	2050	70.67	612	21.10	168	5.79	45	1.55	18	0.62	8	0.28	2901
3	गोहपारू	1810	71.46	512	20.57	142	5.61	40	1.58	12	0.47	8	0.32	2533
4	जयसिंहनगर	1911	69.52	601	21.86	165	6.00	49	1.78	16	0.58	7	0.25	2749
5	ब्यौहारी	1321	56.26	811	34.54	164	6.98	38	1.62	19	0.38	5	0.21	2348

स्रोत–आदिम जाति कल्याण विभाग, जिला शहडोल (मध्यप्रदेश)

तालिका 5 – साक्षरता का क्षेत्रीय विवरण प्रतिरूप – 2001

क्र.	विकासखण्ड	हाईस्कूल		प्राथमिक		माध्यमिक		उच्चतर माध्यमिक		स्नातक एवं स्नातकोत्तर		अन्य		योग
		सं.	प्रति	सं.	प्रति	सं.	प्रति	सं.	प्रति	सं.	प्रति	सं.	प्रति	सं.
1	सोहागपुर	515	7.6	3963	58.42	1681	24.79	189	2.8	01	2.17	287	4.15	6782
2	बुढ़ार	61	8.3	465	63.02	188	25.49	14	1.78	01	0.03	9	1.33	738
3	गोहपारू	363	9.03	2095	62.11	1381	34.37	98	2.45	–	–	85	2.13	4022
4	जयसिंहनगर	77	6.14	751	59.25	399	31.49	17	1.37	01	0.30	18	1.44	1268
5	ब्यौहारी	59	5.27	775	68.95	262	23.34	10	0.88	10	0.39	13	1.15	1125

स्रोत–जिला सांख्यिकी पुस्तिका जिला– शहडोल 2001

****

भारत में प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग - एक दृष्टिकोण

शानो खान *

प्रस्तावना - परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है। जिस सभ्यता,संस्कृति या व्यवस्था ने स्वयं को परिवर्तित परिस्थितियों के अनुकुल नही ढाला है, वे इस सृष्टि से लुप्त हो गई है।

आधुनिक काल में सभी राष्ट्र आर्थिक एवं सामाजिक परिवर्तन के परिवेश से गुजर रहें है। इस प्रक्रिया में इन राष्ट्रों के सामाजिक एवं आर्थिक लक्ष्य नवीन आवश्यकताओं के अनुसार तीव्र गति से परिवर्तित होते है। इन प्रगतिशील लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रशासन की संरचना,प्रक्रिया एवं दर्शन आदि में अपेक्षित सुधार किया जाना आवश्यक है। प्रशासनिक सुधार की यह व्यवस्था आज विकसित एवं विकासशील दोनों ही प्रकार क राष्ट्रों में विद्यमान है और भारत जैंसे परम्परावादी समाज तथा प्रशासनाश्रित व्यवस्था के लिए यह अत्यंत महत्वपूर्ण है। अत: समय-समय पर भारतीय प्रशासन के कार्यकरण में सुधार हेतु अनेक प्रयास किए गए है। जिनमें सबसे प्रमुख प्रयास प्रशासनिक सुधार आयोग का गठन रहा है।

प्रशासनिक सुधार से अभिप्राय - प्रशासनिक सुधार का अर्थ उस प्रक्रिया से है, जिसमें प्रशासनिक व्यवस्था की कार्यकुशलता एवं गुणवत्ता में वृद्धि करने हेतु सुनियोजित ढंग से परिवर्तन किए जाते है।

सामान्यत: प्रशासनिक सुधारों का तात्पर्य सरकारी विभागों के ढाँचे में फेरबदल से सम्बन्धित माना जाता है, किन्तु प्रशासनिक सुधार की प्रकृति अत्यंत गंभीर तथा व्यापक है। प्रशासनिक सुधार प्रशासनिक विकास की एक ऐसी प्रक्रिया है, जो सुनियोजित एवं संगठित होने के साथ-साथ निरंतरता एवं सृजनशीलता की अपेक्षा करती है।

गेराल्ड केडन के अनुसार - 'प्रशासनिक सुधार का अर्थ उस प्रक्रिया से है, जिसमें प्रशासनिक व्यवस्था की कार्यकुशलता एवं गुणवत्ता में वृद्धि करने के लिए कृत्रिम, सुनियोजित ढंग से परिवर्तन किए जाते है।'

प्रशासनिक सुधार के उद्देश्य - प्रशासन की परिस्थितिकी को निर्धारित करने वाले तत्व ही उसें सुधारों की ओर अग्रसर करते है। इन सुधारों के उद्देश्य निम्नानुसार है -

1. प्रशासनिक सुधारों को जड़ होने से बचाने का प्रयास करना।
2. प्रशासनिक कार्यो तथा प्रक्रियाओं में समयानुकुल व्यवहारिक परिवर्तन करना।
3. परिवर्तित सामाजिक, आर्थिक, भौगोलिक, तकनीकी एवं राजनीतिक परिस्थितियों के अनुरूप प्रशासन तंत्र को ढालना।
4. जनसाधारण की समस्याओं,जनाकांक्षाओं तथा भावनओं से कार्मिकों को अवगत कराना।
5. प्रशासनिक कुशलता एवं कार्य निष्पादन के उच्च स्तर को प्राप्त करना।
6. अंतर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय तथा स्थानीय संदर्भो में प्रशासन की व्यवहारिकता बनाए रखना।
7. शासन की नीतियों, योजनाओं, व्यूह रचनाओं तथा नव कार्यक्रमों के अनुरूप प्रशासन को संचालित करना।
8. प्रशासन में शिथिलता, अकर्मण्यता एवं भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाना।
9. नियंत्रण, पर्यवेक्षण तथा जवाबदेयता को सुनिश्चित करना।
10. सार्वजनिक वित्त के सदुपयोग को सुनिश्चित करना।
11. जन परिवेदनाओं तथा कर्मचारी शिकायतों में कमी लाने के प्रयास करना।

प्रशासनिक सुधारों के उद्देश्य बहुआयामी होते है,क्योंकि प्रशासनिक तंत्र में व्याप्त व्याधियाँ न केवल आम व्यक्ति के हितों पर कुठाराघात करती है, बल्कि स्वयं लोकसेवक भी उनसें पीड़ित रहते है।

प्रशासनिक सुधार की बॉधाएँ - प्रशासनिक सुधार अत्यंत महत्वपूर्ण होते है,किन्तु इनके क्रियान्वयन में कुछ समस्याएॅ अथवा बाधाएँ उत्पन्न होती है, जो निम्नानुसार है-

1. नौकरशाही का विरोध एवं उसकी निश्क्रियता प्रशासनिक सुधार के प्रतिपादन एवं क्रियान्वयन में बाधक है।
2. सरकारी तंत्र के अव्यवस्थित रूप से फैले होने के कारण प्रभावकारी पर्यवेक्षण एवं नियंत्रण संभव नही हो पाता।
3. राजनीतिक नेतृत्व की अरूचि।
4. शैक्षिक जगत की अरूचि।
5. साधनों की कमी।
6. स्वयंसेवी संगठन, दबाव समूह एवं नागरिकों की प्रशासनिक सुधारों के प्रति अरूचि ।
7. नवीन कार्यविधियों जैसें इलेक्ट्रानिक ऑकड़े संसाधन कम्प्यूटरीकरण आदि की शुरूआत का विरोध।
8. विभिन्न आयोगों तथा समितियों द्वारा दी गई अधिकतम अनुशंसाएॅ आर्दशात्मक प्रद्धति की होती है। अत: इनमें यथार्थ और सैद्धांतिक स्वरूपों में अंतर पाया जाता है, जो विरोध का कारण बनती है।
9. भारतीय प्रशासन में व्याप्त लालफीताशाही भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद तथा संवेदनहीनता भी प्रशासनिक सुधार में बाधा उत्पन्न करते है।
10. भारतीय प्रशासन केन्द्रीय कार्यप्रणाली से ग्रस्त है। केन्द्र सरकार राज्य सरकारों को तथा राज्य सरकारें अधीनस्थ संगठनों को अधिक शक्तियाँ तथा संसाधन प्रदान नही करना चाहती, जिसके चलते प्रशासनिक सुधार सम्पन्न नही हो पाते।
11. नैतिक मूल्यों में गिरावट तथा राष्ट्र प्रेम का अभाव होने के कारण

*शोधार्थी (राजनीति विज्ञान व लोक प्रशासन) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

भारत में राष्ट्रीय विकास का अभाव पाया जाता है। राजनेता, लोकसेवक,उद्योगपति, बुद्धिजीवी तथा सामान्य नागरिक सभी वर्गो के लिए निजी स्वार्थ अधिक महत्वपूर्ण है।

12. भारत का विशाल आकार तथा जटिलताएँ भी सुधारों में बाधक है।

भारत में प्रशासनिक सुधार – भारत में प्रशासनिक सुधार हेतु समय-समय पर कई प्रयास किए गए है। स्वतंत्रता से पूर्व भी शासन व्यवस्थाएँ निरंतर परिवर्तन एवं सवंवर्धन के दौर से गुजरती रही है तथा स्वतंत्रता के पश्चात् संघीय शासन व्यवस्था एवं विभाजन के फलस्वरूप प्रशासनिक सुधारों की तीव्र आवश्यकता अनुभव की गई। जनता की आकांक्षाओं एवं इच्छाओं को पूरा करने के लिए अनेक सुधार अपेक्षित थे। इन पर विचार करने के लिए अनेक समितियॉ गठित की गई। जिनमें सचिवालय पुर्नगठन समिति या वाजपेयी समिति प्रतिवेदन (1949), मितव्ययिता समिति (1948), आयंगर समिति प्रतिवेदन (1949), गोरवाला रिपोर्ट (1951), गोपाल स्वामी प्रतिवेदन (1952), पॉल एच. एपिलनी प्रतिवेदन(1952), सन्थानम समिति प्रतिवेदन (1962) प्रमुख है। इन सुधारों की कड़ी में सबसे बड़ा तथा महत्वपूर्ण प्रयास प्रशासनिक सुधार आयोग का गठन रहा है।

प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग गठन एवं प्रस्तुत प्रतिवेदन – भारत में प्रशासन की गुणवत्ता बढ़ाने हेतु समय-समय पर किए गए प्रयासों में सबसे ठोस प्रयास प्रशासनिक सुधार आयोग का गठन है। अभी तक किए गए सुधार संकीर्ण व सीमित क्षेत्रों के लिए थे। अत: ये प्रशासनिक सुधारों की समग्रता को छू नही सके। के.हनुमंतैया ने इसी तथ्य को दृष्टि में रखते हुए कहा कि 'पिछले बीस वर्षो में भारतीय प्रशासन में न्यूनाधिक परिवर्तन अवष्य हुए है,सुधार नही।' इसी पृष्ठभूमि में एक शक्तिशाली एवं व्यापक कार्यक्षेत्र वाले प्रशासनिक सुधार आयोग की माँग उठी जिसका परिणाम प्रशासनिक सुधार आयोग का गठन था। इस आयोग की स्थापना का सुझाव अशोक चंदा, मोरारजी देसाई, संथानम समिति सहित अनेक प्रबुद्ध व्यक्तियों द्वारा बार-बार दिया जा रहा था। इसी क्रम में दिनांक 5 जनवरी 1966 को मोरारजी देसाई की अध्यक्षता तथा के. हनुमंतैया, हरीशचंद्र माथुर, जी.एस.पाठक एवं एच.वी.कामथ की सदस्यता में प्रशासनिक सुधार आयोग का गठन किया गया। वी.शंकर आयोग के सदस्य सचिव बनाए गए। वी.शंकर के अतिरिक्त सभी सदस्य सांसद थे। मार्च 1967 में मोरारजी देसाई द्वारा उपप्रधानमंत्री पद धारण करने के पश्चात् के. हनुमंतैया को आयोग का नया अध्यक्ष बनाया गया। प्रशानिक सुधार आयोग की स्थापना से पूर्व अनेक राज्यों में प्रशासनिक सुधार समितियॉ रिपोर्ट दे चुकी थी। आयोग ने उनका अध्ययन किया तथा राज्यों एवं केन्द्र के मंत्रालयों, मंत्रियों, प्रशासकों, अर्थषास्त्रीयों तथा बुद्धिजीवियों से सम्पर्क किया गया। आयोग ने 33 अध्ययन दल, जिनमें 20 अध्ययन दल तथा 13 कार्यकारी समूह दल गठित किए, जो विशय विषेशज्ञता एवं कार्यक्षेत्र के अनुरूप विभक्त थे। आयोग में 210 प्रतिभाषाली व्यक्तियों ने कार्य किया, जिन्हें जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से लिया गया था, जिनमें संघीय मंत्री, मुख्यमंत्री, महान्यायवादी, रिर्जव बैंक के गर्वनर, प्रोफेसर, उपकुलपति इत्यादि शामिल थे।

आयोग के अध्ययन के मुख्य विषय –

1. भारत सरकार का प्रशासनिक संगठन कार्य पद्धति एवं प्रत्येक स्तर पर योजना संगठन।
2. केन्द्र राज्य संबंध, वित्तीय कार्मिक व आर्थिक प्रशासन।
3. राज्य एवं जिला स्तरीय प्रशासन एवं कृषि।
4. नागरिकों की परिवेदना का निराकरण। इत्यादि।

प्रशासनिक सुधार आयोग ने लगभग 580 अनशंसाएँ भारत सरकार को प्रस्तुत की। आयोग की अनुषंसाओं में 51 सिफारिशे पूर्णत: तथा अंशत: राज्य सरकारों से संबंधित थी। भारत सरकार ने 500 से अधिक सिफारिशों पर निर्णय लिया, लेकिन सभी सिफारिशें स्वीकार नही की जा सकी। सन् 1970 में प्रशासनिक सुधार आयोग को बीच में ही समाप्त कर दिया गया था,अन्यथा आयोग द्वारा अन्य विशयों पर भी महत्वपूर्ण सिफारिशे प्रदान की जाती। आयोग द्वारा प्रस्तुत 20 प्रतिवेदनों का विवरण निम्नानुसार है-

प्रतिवेदन	प्रस्तुत करने का वर्ष
1. जन अभियोग निराकरण की समस्याऍ	1966
2 नियोजन तंत्र का अंतरिम प्रतिवेदन	1967
3. लोक उपक्रम	1967
4. वित्त,लेखा एवं अंकेक्षण	1968
5. आर्थिक प्रशासन	1968
6. भारत सरकार का प्रशासन तंत्र एवं कार्यप्रणाली	1968
7. जीवन बीमा निगम	1968
8. नियोजन तंत्र का अंतिम प्रतिवेदन	1968
9. केन्द्रीय प्रत्यक्ष कर प्रशासन	1968
10. केन्द्र शासित प्रशासन तथा नेफा प्रशासन	1969
11. कार्मिक प्रशासन	1969
12. वित्तीय एवं प्रशासनिक शक्तियों का प्रत्यायोजन	1969
13. केन्द्र राज्य संबंध	1969
14. राज्य प्रशासन	1969
15. लघु स्तरीय उद्यम सेक्टर	1969
16. रेल्वे	1969
17. राजकोश	1970
18. भारतीय रिजर्व बैंक	1970
19. डाक एवं तार	1970
20. वैज्ञानिक विभाग	1970

निष्कर्ष – निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग ने जो अनुशंसाऍ प्रस्तुत की वह प्रशासनिक कृत्यों को ओर अधिक कुशल एवं व्यवहारिक बनाने वाली है। प्रशासनिक सुधार आयोग की अनुशंसा के आधार पर ही योजना आयोग में अधिक विशेषज्ञों की नियुक्ति, केन्द्रीय मंत्रालयों में वित्तीय सलाहकार, राज्यों में योजना मण्डलों की स्थापना, लोक उपक्रमों के लिए अंकेक्षण मंडल का गठन, लोकायुक्त की स्थापना, निष्पादन बजट की शुरूआत, निष्पादन मूल्यांकन का नवीन रूप तथा प्रथक से प्रशासनिक सुधार का गठन किया गया है। साथ ही आर्थिक प्रशासन के संबंध में प्रशासनिक सुधार आयोग ने कीमत लागत तथा शुल्क आयोग की स्थापना का सुझाव दिया था, जो औधोगिक उत्पादन की कीमतों, लागत एवं शुल्क के क्रम में सरकार को परार्मश प्रदान करे। इस सिफारिश को स्वीकार करते हुए भारत में 14 जनवरी 1970 को औधोगिक लागत एवं मूल्य ब्यूरों स्थापित किया जा चुका है।

चूंकि भारतीय प्रशासन अनेक प्रकार की समस्याओं तथा न्यूनताओं से ग्रस्त है। इन समस्याओं में भ्रष्टाचार अकर्मण्यता, लालफीताशाही तथा कार्मिक असंतोष प्रमुख है। अत: इन समस्याओं के निवारणार्थ तथा देश के तीव्र विकास के लिए प्रशासनिक तंत्र का कुशल एवं प्रतिबद्ध होना आवश्यक है। इन्हीं उद्देश्यों को लेकर प्रशासनिक सुधार आयोग द्वारा प्रस्तुत की गई

अनुशंसाएँ उपयुक्त एवं कारगर है। अंततः कहा जा सकता है कि प्रशासनिक सुधारों की कड़ी में प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग द्वारा प्रस्तुत अनुशंसाएँ नींव का पत्थर सिद्ध हुई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सुरेन्द्र कटारिया, भारतीय लोकप्रशासन, नेशनल पब्लिशिंग हाउस,नई दिल्ली 2008
2. अवस्थी एवं माहेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा 2008
3. सुभाष कश्यप, ब्लूप्रिंट ऑफ पोलिटिकल रिफार्म, शिप्रा पब्लिकेशन, दिल्ली 2008
4. arc.gov.in

****

संसदीय लोकतंत्र में सत्तापक्ष एवं विपक्ष में अंतर सम्बन्ध

डॉ. सीमा भार्गव *

प्रस्तावना – संसद और विधानसभाओं की कार्यवाही में लगातार बाधा उत्पन्न होने से जनसमस्या पर बिना सम्यक चर्चा के सत्र समाप्त हो रहे है। यह प्रवृत्ति प्रतिवर्ष बढ़ती जा रही है। दशक से ज्याद बढ़ी है। राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता के चरम पर पहुँचने की जिद से व्यवस्था पंगु हो गई है। बड़े और गंभीर मुद्दों पर बहस कम शोरगुल ज्यादा होने लगे। सत्तारुढ़ दल सुविधाजनक समझकर बड़े नियम कानून, संशोधन आदि पारित कराने लगा। विपक्ष के विरोध में मतदान से भी सरकार को फर्क नही पड़ता, इसलिये उसने विरोधी तेवर जारी रखा। आपातकाल तक तो एकदलीय शासन था। कॉंग्रेस का प्रचण्ड बहुमत था, किंतु संख्या के आधार पर कम सदस्यों वाला विपक्ष हर तरह से मुखर था। आज केंद्र और कई राज्यो में गठबंधन सरकारें है। संख्या के मामल में सत्तारुढ़ और विपक्ष में अंतर कम है।

मँहगाई, आंतकवाद, बेरोजगारी जैसी चुनौतियां भी विकास को अवरुद्ध कर रही है। इस विषयम परिस्थिति में सुपर पॉवर, दुनिया का सिरमौर बनने के लिये जनप्रतिनिधियों को दलगत पूर्वाग्रह से मुक्त होकर चर्चा में बढ़–चढ़कर हिस्सा लेना चाहिए। क्रेडिट लेने के चक्कर में उल्टे छवि बिगाड़ रही है।

विपक्षी दल का कार्य है यदि सरकार का कार्य शासन करना है तो विपक्षी दल का कार्य सरकार की आलोचना करना है। आलोचना विपक्षी दल का अधिकार ही नहीं कर्त्तव्य भी है। आलोचना जहाँ एक और सरकार को सजग बनाती है वहीं दूसरी और विपक्ष इसके माध्यम से सरकार की कमजोरियों को जनता के सामने उजागर करता है जिससे कि अगले आम चुनाव में वह मतदाताओं का समर्थन पा सकें। इसलिए यह आवश्यक कि विपक्ष निर्भिक होकर समाज एवं राष्ट्र के हित के सभी प्रश्नों पर विचार करें और सरकार उसके मार्ग में बाधा न डालें। सरकार का यह कर्त्तव्य है कि आलोचना का उत्तर दें और अगर उससे कोई भूल हुई है तो उसे सुधारें सरकार को आलोचना का तर्कपूर्ण उत्तर देना चाहिए। न कि विपक्ष का दमन कर उसकी आवाज बंद करनी चाहिए। विपक्ष द्वारा आलोचना करने का अधिकार जो सरकार नहीं समझती है, वह संसदात्मक शासन प्रणाली की नहीं तानाशाही की जड़े मजबूत करती है।

'सरकार को सत्तारुढ़ दल के बहुमत का समर्थन प्राप्त होता है। विपक्षी दल का उद्देश्य आगामी आम चुनाव में सरकार के विरुद्ध बहुमत प्राप्त करने के लिये प्रयत्न करना होता है जिससे कि वह सरकार बदल सके। इसका अभिप्राय यही नहीं है सरकार हाउस ऑफ कामन्य में परास्त नहीं की जा सकती।'

इसका यह भी तात्पर्य नहीं है कि संसदीय आलोचना सरकार को अपने प्रस्तावों को बदलने या वापस लेने के लिये प्रेरित नहीं कर सकती है। हालांकि इन बातों का काफी महत्व होता है फिर भी इससे इस सिद्धांत की सत्यता नष्ट नहीं होती कि सरकार शासन करती है और विपक्षी दल केवल आलोचना।'

'दसवीं लोकसभा में एक बार सात दिन में चार दिन लोकसभा की बैठक पूरे–पूरे दिन के लिये सदस्यों या पूर्व सदस्यों के देहावसान के नाम पर स्थगित कर दी गई। यद्यपि यह परम्परा और दृष्टांतों के विरुद्ध था। एक बार तो पूरा का पूरा सत्र बिना कोई कार्यवाही के समाप्त हो गया। रिकार्ड के लिये कहा गया कि रोज रोज सदनों में हंगामें करता रहा तथा पीठासीन अधिकारी को विवश करता रहा। स्थगन के लिये किंतु ऐसा दोनों संभव नहीं लगता कि यदि सत्तापक्ष सचमुच कार्यवाही चलाना चाहता तो सफल न होता। बाद में जो तथ्य सामने आये, हवाला कांड में मंत्रियों और पक्ष–विपक्ष के नेताओं के लिप्त होने के जो आरोप उजागर हुए उनसे तो लगा कि इतने कुशलतापूर्वक संगठित स्थगनों के पीछे कुछ और भी निहित स्वार्थ हो सकते है। यदि सदनों की बैठक होती तो शायद यह सब मामले तभी सामने आ जाते। इस सारे तमाशें में यदि किसी के साथ विश्वासघात होता है तो वह देश की जनता। क्योंकि संसद और सांसदों पर करोड़ों रुपये रोज का खर्चा आता है और यदि सदन बिना कुछ काम किये रोज–रोज स्थगित होता रहें तो ये करोड़ों रुपये व्यर्थ जाते है।'

शायद भारतीय संसद में सत्तापक्ष और विपक्ष की भूमिका जनता और देश के सामने अपने पूरे सत्य और यथार्थ रुप में नहीं आती। संसद–सदस्य चाहे किसी भी दल के हों, उनकी अपनी एक बिरादरी है, अपना भाईचारा है, अपनी समान समस्याएँ है, हित हैं, स्वार्थ है जो सत्ता पक्ष और विपक्ष से कहीं ऊपर आते है। सांसदों की ट्रेड यूनियन देश की सबसे शक्तिशाली यूनियन है। जब सांसदों के वेतन, भत्तें, विभिन्न सुविधाएं आदि बढ़ाने के मामले, प्रत्येक सदस्य को करोड़ रुपया प्रतिवर्ष अपने निवार्चन क्षेत्र में उसके आदेश पर खर्च करने के लिये सदस्य रहने के बाद सारी उम्र भर पेंशन पाने के विभत्स विधेयक संसद के सामने आते है तो वे प्राय: मिनटों में सर्वसम्मति से पारित हो जाते है। उस समय सत्ता पक्ष और विपक्ष के सब भेद मिट जाते है। न्यायपालिका के पर कतरने की बात आती है अथवा संसद–सदस्यों को भ्रष्टाचार के मामलों में भ्रष्टाचार निरोधक कानून की गिरफ्त से बरी रचाने की बात आती है तब भी मानों संसद में कोई विपक्ष रहता ही नहीं। सब एकमत हो जाते है।

जून 1973 में आंतरिक आपातकाल की उद्घोषणा की गयी जिसकी संसद में विपक्ष द्वारा कड़ी आलोचना की गई, किंतु साम्यवादी नेता श्री इंद्रजीत गुप्त ने इसका पूरा समर्थन किया। चौदह घंटे की लंबी बहस के बाद उद्घोषणा संबंधी संकल्प स्वीकृत हो गया। सबसे अधिक आलोचना हुई दो

*अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, भीमपुर, जिला – बैतूल (म.प्र.) भारत

बाद, एक-एक वर्ष के लिए, लोकसभा का कार्यकाल बढ़ाने की और संविधान में 24वें संशोधन की। जयप्रकाश के आंदोलन तथा आपातकाल में हुई ज्यादतियों के विरोध में अंसतोष से काँग्रेस सरकार की स्थिति कमजोर हुई। पाँवचीं लोकसभा में विपक्ष के कई प्रमुख नेताओं को कारावास भोगना पड़ा।

यदि संसदीय लोकतंत्र से आपका मतलब केवल संवैधानिक प्रक्रिया हैं तो इससे देश में लोकतंत्र नही आयेगा। केवल लोकतंत्र का ढाँचा नहीं, आत्मा भी चाहिए और यह आत्मा हैं विपक्ष का आदर करने की भावना, न केवल विपक्ष को बर्दाश्त करना बल्कि विपक्ष के विचारों को सकारात्मक मान्यता देना।

यहाँ जीवन बीमा निगम के मामले की चर्चा की जा सकती है जो मूदंड़ा कांड के नाम से भी प्रसिद्ध हुआ था और जिसके कारण वित्तमंत्री को त्याग पत्र देना पड़ा।

हम यह मानकर चलते है कि जो सरकार सत्तारुढ़ है वह ऐसे कानून बना रही है जो उसके विचार से देश हित में है। वह संपूर्ण राज्य का शासन प्रबंध यथाशक्ति कुशलतापूर्वक कर रही है। फिर भी हम कामन सभा के बहुत से सदस्यों को इस बात के लिये वेतन देते है कि वे सार्वजनिक कार्य में अधिक से अधिक बाधा ड़ाल सकें, सरकार की गलतियों का अधिक से अधिक लाभ उठा सके; यह कह सकें कि वह देश को बर्बाद रही हैं।

अब तो संसद के सदनों की कार्यवाही कभी कभी कुछ बिना सम्पादन के भी दूरदर्शन पर देखी जा सकती है, किंतु पहले ऐसा संभव नहीं था और बहुत सी चुनिंदा शब्दावली जिसका हमारे सम्मानीय सदस्य प्रयोग करते है, असंसदीय होने के कारण कार्यवाही के प्रकाशित वृतांत से अध्यक्ष की आज्ञा से निकाल दी जाती थी। अगर आप उसे देखें तो उसमें बहुत कुछ ऐसा है जिसे पढ़-सनकर सिर शर्म से झुक जायेगा और संवेदनशील मन देश और संसद की अस्मत के बारे में सोचकर रो देगें। कुछ वर्ष पहले यह सोचा गया कि ऐसे सब असंसदीय अंशों को, जिन्हें कार्यवाही से निकाल दिया गया था, अलग से एक ग्रंथ रुप में प्रकाशित किया जायें ताकि लोग अपने प्रतिनिधियों के बारें में जाने-सोचे और सासंदों को भी पता चलें कि क्या असंसदीय हैं।

ऐसे बहुत से अवसर आते रहे है जबकि संसद तथा राज्य विधान मण्डलों के सदस्यों ने राष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय समस्याओं, भ्रष्टाचार, मंत्रियों की निष्कर्मव्यता, विदेशी और घरेलु नीतियों पर लंबी जनता का ध्यान उस ओर आकर्षित किया है। इन परिचर्चाओं, स्थगन प्रस्तावों तथा प्रश्नों के संसद में प्रभावशाली विपक्षी दल की भी को काफी हद तक पूरा किया है। भले ही 1967 के बाद विपक्षी दल कई मुद्दों पर जीत नहीं पाये है पर संसद ने अनके मुद्दों पर राष्ट्रीय जनमत को प्रभावशाली ढंग से प्रतिबिंबित किया है।

यह कहना गलत नहीं है कि विपक्ष संसद का सर्वाधिक महत्वपूर्ण्ज्ञ हिस्सा है। सरकार शासन चलाती है और विपक्ष आलोचना करता है। इस सामान्य से सिद्धांत को न समझ पाने के कारण ही कितनी संसदों का जन्म निष्फल हुआ और संसदीय सरकार को तानाशाली ने कुचल डाला।

किसी भी लोकतंत्र की सफलता के लिए आवश्यक है कि वहां एक सशक्त विरोधी दल हो जो आवश्यकता पड़ने पर सत्ताधारी दल का स्थान ग्रहण कर सकें। लोकतंत्र में विपक्षी का अर्थ विरोधी या शत्रु नहीं है। विपक्ष सत्तारुढ़ दल को निरकुंश, उच्छृंखल और तानाशाह होने से तो रोकता ही है, रचनात्मक सुझाव सलाह भी दे सकता है। जो लोग सैद्धांतिक आधार पर विपक्ष के साथ जुड़े नहीं होते, वे भी चुनाव के अवसर पर विपक्षी प्रत्याशी को मत दे सकते है। सत्तारुढ़ दल को अनुशासित करने के लिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वर्मा डॉ. रामबहादुर - 'संसदीय लोकतंत्र में सत्तापक्ष एवं विपक्ष के अंतर संबंध', विधायिनी-2008 अंक-1, वर्ष 26, 2008
2. पूर्ववत्
3. जैनिंग्स सर आईवर - 'कैबिनेट गर्वनमेंट', कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1859
4. कश्यप डॉ. सुभाष - 'भारतीय राजनीति और सासंद', राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृ.क्रं. 61
5. कश्यप डॉ. सुभाष - 'संसद प्रक्रिया', राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2006

****

गाँधी अम्बेडकर समझौता - (पूना पैक्ट1932)

डॉ. मुकेश शारदे * डॉ. कमला गौतम **

प्रस्तावना - डॉ अम्बेडकर अछूतों के हितों पर कुठाराघात को किसी भी मूल्य पर सहन करने को तैयार नहीं थे। डॉ. अम्बेडकर जानते थे कि तथाकथित हिन्दुओं के शासन में दलितों को सामाजिक न्याय नहीं मिल सकता। इसलिए उन्होंने अछूतों के लिये अलग प्रतिनिधित्व की मांग रख दी थी। तत्कालीन ब्रिटीश प्रधानमंत्री रैम्जे मैकडनाल्ड ने दलितों को अलग प्रतिनिधित्व देने की मांग स्वीकार कर ली थी। यह डॉ. अम्बेडकर की ऐतिहासिक विजय थी। सवर्णो ने इसे अपना अपमान समझा यद्यपि गाँधीजी अछूतोद्धार की बातें करते थे। किन्तु दलितों को अलग प्रतिनिधित्व की बात से वे बिल्कुल असहमत थे। इधर तथाकथित हिन्दूओं ने हिन्दू धर्म संकट में है' का नारा देकर सभी हिन्दूओं से एकजुट होकर इस प्रस्ताव का विरोध करने का आह्वान किया। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद और मदनमोहन मालवीय जैसे नेताओं ने गाँधीजी पर दबाव डाला और उनसे यरवदा जेल में ही आमरण अनशन करवाया। गाँधीजी के इस आमरण अनशन से सारे भारत में डॉ.अम्बेडकर के प्रति विरोध का वातावरण बना दिया गया। उन्हें जान से मार डालने की धमकियाँ मिलने लगी। गाँधीजी के प्राण बचाने के प्रयास शुरू हुए। दलितों के हितों से एक व्यक्ति के प्राण अधिक मूल्यवान प्रतीत होने लगे। हिन्दू नेताओं के साथ-साथ एम.सी.राजा और पी.बालू जैसे दलित नेताओं ने डॉ. अम्बेडकर से गाँधीजी के प्राण बचाने की बात कही। डॉ.अम्बेडकर ने कहा- गाँधीजी के प्राण बचने चाहिए लेकिन एक बात निश्चित है कि मैं एक भी ऐसे प्रस्ताव का समर्थन नहीं करूंगा जो दलितों के अहित में है। सभी तरह से डॉ.अम्बेडकर पर दबाव डाला जाने लगा। डॉ.अम्बेडकर ने धैर्य का परिचय दिया। उन्होंने कहा कि गाँधीजी को कुछ समय के लिये जो यह आमरण अनशन स्थगित कर देना चाहिए और समस्या का समाधान ढूंढना चाहिए। लेकिन हिन्दू लोग डॉ.अम्बेडकर को ही गाँधीजी के प्राण बचाने के लिये कहने लगे और उनसे पृथक निर्वाचन प्रणाली के विचार को त्यागने का आग्रह करने लगे। इस पर डॉ. अम्बेडकर ने कड़े शब्दों का प्रयोग करते हुए कहा- आप जैसे विचारशील पंडित और देशभक्त यदि हमें अपना नहीं मान सकते तो संयुक्त निर्वाचन प्रणाली को हम पर थोपने का और हमें अपने अधीन रखने का आपको कोई अधिकार नहीं है। इसके बाद वातावरण गर्मा गया। बैठकों का सिलसिला चलता रहा। बैठकों में हिन्दूओं के वरिष्ठ नेतागण भाग लेने लगे लेकिन कोई ठोस परिणाम नहीं निकला। डॉ. अम्बेडकर को कुछ नेता गाँधीजी के पास ले गये। यद्यपि गाँधीजी डॉ. अम्बेडकर के विचारों से सहमत थे किन्तु पृथक निर्वाचन प्रणाली के प्रस्ताव को त्यागने के लिये डॉ. अम्बेडकर से अनुरोध किया। डॉ. अम्बेडकर ने प्रान्तीय सभा में कुछ स्थानों की मांग रखी। उन्होंने सुरक्षित स्थानों व प्रमुख चुनाव व्यवस्था की अवधि दस वर्ष तथा दलितों के लिये पन्द्रह वर्ष तक आरक्षण जैसी मांग रखी, जिसका गाँधीजी ने विरोध किया। वार्ता में गतिरोध उत्पन्न हो गया। डॉ. अम्बेडकर ने कड़ा रूख अपना लिया। गाँधीजी की तबियत बिगड़ने लगी। डॉ. अम्बेडकर को चारों ओर से दबाव में लिया गया। धमकियाँ भी मिल रही थी। लेकिन ऐसी धमकियों से डॉ. अम्बेडकर डरने वाले नहीं थे। पूरा हिन्दू समाज तीव्र आक्रोश में था। गाँधीजी के कभी भी कुछ भी हो सकता था। ऐसे में हिन्दू नेता एक बार पुन: डॉ. अम्बेडकर को मनाने लगे। गाँधीजी आरक्षण व्यवस्था को पाँच साल की अवधि देना चाहते थे।

डॉ. अम्बेडकर की मदन मोहन मालवीय तथा राजगोपालाचार्य जैसे नेताओं ने मनाने की चेष्टा की।

गाँधी ने एक प्रार्थनायुक्त पत्र लिखकर डॉ. अम्बेडकर को भेजा। पत्र में गाँधीजी ने लिखा- प्रिय डॉ. अम्बेडकर देश को खण्ड-खण्ड मत होने दो हिन्दू जाति को बचा लो। मैं तुम्हारे साथ हूँ। मेरी सहानुभूति भी तुम्हारे साथ है। मेरा जीवन तुम्हारे हाथ में है। अब जैसा उचित समझो वैसा करो।

कस्तूरबा गाँधी अपने पुत्र देवदास गाँधी को लेकर डॉ. अम्बेडकर के पास आई और डॉ. अम्बेडकर से अनुरोध किया कि गाँधीजी के प्राण बचाने के लिये उनसे समझौता कर लें। देवदास तो रोने ही लगे।

डॉ. अम्बेडकर गाँधीजी से एक बार मिले। गाँधीजी ने डॉ. अम्बेडकर से कहा कि उन्हें गाँधीजी से कुछ शिकायत है, वे जानते हैं किन्तु वे अछूतों के उद्धार के लिये कार्य कर रहे हैं। उन्होंने डॉ. अम्बेडकर से कहा- मैं छुआछूत की समस्या पर बाल्यकाल से विचार कर रहा हूँ, जब तुम पैदा ही नहीं हुए थे। मैंने और कांग्रेस ने अछूतों के उत्थान के लिये 20 लाख रूपये खर्च किये हैं। डॉ. अम्बेडकर ने इसका सही उत्तर देते हुए बताया कि 20 लाख रूपये व्यर्थ में व्यय किये हैं। इनसे दलितों का तनिक भी भला नहीं हुआ। इससे तो यह रूपया दलितों में बांट दिया होता तो ज्यादा अच्छा रहता। कांग्रेस ने दलितों के उत्थान के लिये कुछ भी नहीं किया। छुआछूत मिटाने का ढोल पीटा लेकिन वास्तविक रूप से कुछ भी नहीं किया। यदि कांग्रेस वास्तव में छुआछूत मिटाना चाहती है तो जैसे खादी पहनना, टोपी धारण करना या कांग्रेस का सदस्य बनना अनिवार्य है वैसे ही छुआछूत न करना भी अनिवार्य कर सकती थी। लेकिन कांग्रेस ने ऐसा नहीं किया और कांग्रेसियों के घरों में भी छुआछूत बरती जाती है। कांग्रेस में अध्यक्ष जैसे पदाधिकारी भी अछूतों के मंदिर प्रवेश का विरोध करते देखे गये गये हैं। यदि कांग्रेस अछूतों का उद्धार करना चाहती है तो मुझे देशद्रोही की उपाधि क्यों देती है। हमारा को अछूतोद्धार नहीं है। जिस देश में हमें कुत्ते और बिल्लियों से भी बदत्तर स्थिति में रखा जाता है उस देश को हम अपना देश कैसे कह सकते हैं। जिस धर्म में हमें समानता नहीं, हमें मन्दिर में प्रवेश की अनुमति नहीं उस धर्म को हम अपना धर्म कैसे कह सकते हैं।

'कम्युनल अवार्ड के अनुसार दलितों को दो वोटों का अधिकार मिला था। राजनैतिक आरक्षण को आधार बनाकर विधायिका में इन लोगों के

* अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

लिये 78 सीटें आरक्षित की गई थी। इन्हें विशेष चुना क्षेत्र कहा गया था। दलितों को अधिकार दिया गया था कि इन 78 चुनाव क्षेत्रों में दलित अपने प्रतिनिधि स्वयं चुनेंगे। सामान्य वर्ग के लोग उसमें वोट नहीं डालेंगे। इनके सिवा अन्य सभी सामान्य सीटों के लिये दलित अपना वोट देंगे। इस प्रकार दलितों की मिली हुई दो वोटों का अर्थ था।

1. अपना प्रतिनिधि स्वयं चुनेंगें।
2. सामान्य प्रतिनिधि चुनने में भी अपना पूरा असर रखेंगे।

इस प्रकार कम्यूनल अवार्ड के कारण वे पूरी भारतीय राजनीति की कौली बन गए थे। पूना पैक्ट में संख्या की दृष्टि से दलितों के लिये दुगुनी सीटें आरक्षित की गई थी और राजनैतिक धारा की दृष्टि से इसका फल बिल्कुल दूसरा हुआ था। पूना पैक्ट में आरक्षित सीटें 78 की बजाय 151 कर दी थी लेकिन उसमें यह भी तय हुआ कि दलितों के प्रतिनिधियों को दलित और सामान्य वर्ग के लोग मिल कर चुनेंगे। यह समझौता 24 दिसम्बर 1932 को यरवदा जेल पूना में हुआ था। इसमें दलितों की ओर से डॉ. अम्बेडकर ने और हिन्दूओं की तरफ से पंडित मदनमोहल मालवीय ने हस्ताक्षर किये थे। इसमें हस्ताक्षर करने वालों में अन्य प्रमुख नाम राज गोपालाचार्य डॉ. राजेन्द्र प्रसाद और ठाकुर बापा के थे।[1]

पूना में अछूतों के साथ हिन्दूओं का जो पैक्ट हुआ, उसकी प्रमुख धाराएँ इस प्रकार हैं-

1. विभिन्न प्रांतों में संयुक्त निर्वाचन में दलितों के लिये कौंसिलों में नीचे लिखे अनुसार सीटें सुरक्षित रहेगी- मद्रास-30, पंजाब-8, बम्बई सिन्ध-15, बिहार-उड़ीसा-18, मध्य प्रान्त-20, आसाम-7, बंगाल-20, संयुक्त प्रांत-20। प्रधानमंत्री ने अपने निर्णय में प्रान्त कौंसिलों में दलितों को जितना प्रतिनिधित्व दिया है, उसी संख्या के आधार पर यह संख्या रखी गई है।
2. इन सीटों का निर्वाचन संयुक्त प्रणाली से होगा। लेकिन निम्नलिखित कार्यवाही की शर्तें उसमें रहेगी। चुनाव में रजिस्टर में अंकित दलित वर्ग के सभी सदस्य निर्वाचन की एक गोष्ठी बनायेंगे, जो प्रत्येक सीट के लिये दलितों को चुनेगी और प्रारम्भिक चुनाव में इस प्रकार सबसे अधिक वोट पाने वाले चार व्यक्ति चुनाव के उम्मीदवार होंगे।
3. इसी प्रकार केन्द्रीय परिषदों के लिये भी संयुक्त निर्वाचन के आधार पर दलितों को सीटें मिलेगी।
4. ब्रिटिश भारत की 18 सीटें उनके लिये केन्द्रीय संघ के लिये सुरक्षित रहेगी।
5. यह प्रारम्भिक चुनाव की प्रणाली शर्त 6 के अनुसार आपसी समझौते से 10 वर्ष तक चलेगी।
6. इस समझौते से (1) से (4) दफाओं में की गई शर्तों के मुताबिक सुरक्षित सीटों की प्रणाली जारी रहेगी।
7. लेथियन रिपोर्ट के अनुसार दलितों को मताधिकार होगा।
8. लोकल बोर्डो के चुनाव और नौकरियों के संबंध में दलितों को कोई रूकावट नहीं होगी। उन्हें यथोचित प्रतिनिधि दिलाने के लिये भरसक चेष्टा की जायेगी।
9. हर प्रान्त में शिक्षा के लिये खास रकम दलितों के लिये पृथक निकाली जायेगी।[2]

पूना पैक्ट परिणाम – 24 सितम्बर 1932 को दलित वर्गों की तरफ से डॉ. अम्बेडकर तथा गाँधीजी की ओर से उपरोक्त उच्च जातीय हिन्दू नेताओ के बीच पूना में हुए समझौते की शर्तों के आधार पर गाँधीजी ने अपना आमरण अनशन समाप्त किया और पूना पैक्ट की शर्तों की सूचना ब्रिटिश प्रधानमंत्री रेमजे मेकडानल्ड को दी गई और उसी के अनुसार गर्वनमेंट ऑफ इण्डिया एक्ट1935 में केन्द्री व विधान सभाओं में डिप्रेस्ड क्लासेज के प्रतिनिधि हेतु स्थान सुरक्षित किए गए और उसी के अनुसार 1937 में चुनाव हुए। उस चुनाव में जो परिणाम देखने में आए वह दलितों के बजाय उच्च जातियों के लिये ज्यादा सुखद और उत्साह वर्द्धक थे।

प्रान्तों के नाम	आरक्षित कुल सीटें	कांग्रेस द्वारा जीती गई सीटें
उत्तर प्रदेश	20	16
मध्यप्रान्त	20	07
मद्रास	30	26
बंगाल	30	06
बम्बई	15	11
बिहार	15	04
पंजाब	08	00
असम	07	04
उड़ीसा	06	04
योग	151	78

इस प्रकार पूना पैक्ट के अनुसार उच्च जातिय हिन्दूओं के साथ मिलकर वोट करने से दलित जातियों में से उन्हीं लोगों के जीत कर केन्द्रीय व प्रांतीय विधानसभाओं में पहुँचने की अधिक संभावना हुई है जो उच्च जातियों द्वारा उनके वोट व धन का पूर्ण समर्थन पावे और ऐसे ही चुनाव नतीजे भविष्य में भी होने की संभावना हुई। इस पुना पैक्ट का परिणाम स्वयं बाबा साहब अम्बेडकर को भुगतना पड़ा। भारत के आम चुनावों में हिन्दूओं ने डॉ. अम्बेडकर को हराने का फैसला किया और उन्होंने अपना वोट दसवीं तक पढ़े कांग्रेस के दलित उम्मीदवार मि. कजरोलकर को देकर उसे जिता दिया और डॉ. अम्बेडकर हार गए।

इस पुना पैक्ट के कारण ही यह दशा सारे भारत में है कि राजनैतिक पार्टियों के उच्च जातियों के नेता अपनी पार्टी में उन्हीं दलित उम्मीदवारों को अपना पार्टी टिकिट और फिर चुनाव में समर्थन देते हैं जो उनके पिछलग्गु, झोला उठाउ हो और संसद व विधानसभाओं में भी जीत जाने पर उन उच्च जातिय नेताओं की गलत से गलत और अनुचित बातों में भी बिना समझे उनकी हाँ में हाँ मिलाए और जरूरत पड़े तो अपने दलित वर्ग के हितों के खिलाफ अपने पार्टी मुखिया की गलत बातों का समर्थन करे। ऐसा राजनीति में आज रोज देखने को मिलता है।[3]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. धर्मवीर, डॉ. अम्बेडकर और दलित चेतना , शेष साहित्य प्रकाशन दिल्ली, 1990 पृष्ठ संख्या 21
2. शास्त्री संकरानंद, 'पूना पैक्ट बनाम गाँधी', सम्यक प्रकाशन दिल्ली, 2011 पृष्ठ संख्या 51-5
3. डॉ. छेदीलाल, 'अतीत से आज तक के भारतीय इतिहास में दलित पिछड़ी जातियों की स्थिति',सम्यक प्रकाशन दिल्ली, 2004 पृष्ठ संख्या 119
4. गुप्ता- विश्व प्रकाशन, गुप्ता- मोहिनी, 'भीमराव अम्बेडकर व्यक्ति और विचार', राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, 1996

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

पर्यावरण संरक्षण में भारतीय संविधान की भूमिका

डॉ. रजनी दुबे *

प्रस्तावना – पर्यावरण का मानव जीवन में विशेष महत्व है एवं उसका अपना प्रभाव है। मानव संस्कृति और मानव जीवन के विकास,उन्नयन में सबसे महत्तपूर्ण योगदान पर्यावरण का ही रहता है। पर्यावरण की महत्ता, संवेदनशीलना और उपयोगिता को समझने के लिए कहा जाता है कि जैसे जलचर बिना जल के जीवित नहीं रह सकते, उसी प्रकार प्रत्येक जीव, प्राणी वनस्पति उपयुक्त पर्यावरण के बिना नहीं रह सकते है।

किसी भी राष्ट्र का संविधान उसकी आत्मा कहा जाता है एवं उस राष्ट्र के नागरिकों में अपने देश के संविधान के प्रति अटूट विश्वास एवं आस्था होती है। यही कारण है कि पर्यावरण संरक्षण के लिये भारतीय संविधान मे राज्यों एवं नागरिकों को कुछ अधिकार प्रदान किये गयें है। सन् 1976 में संविधान के 42 वें संविधान संशोधन के द्वारा स्पष्ट किया गया कि 'राज्य पर्यावरण के संरक्षण एवं संवर्द्धन का प्रयास करेगा और साथ ही वनों एवं वन्य जीव-जंतुओं की सुरक्षा की व्यवस्था करेगा। संविधान के अनुसार भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य होगा कि वह प्राकृतिक पर्यावरण समस्त वनों, झीलों, नदियों एवं वन्य जीवों के जीवन की सुरक्षा भी निहित है,साथ ही प्रत्येक नागरिक का यह भी कर्त्तव्य होगा कि वह सभी जीवित प्राणियों के प्रति दया का भाव रखें'। भारत के संविधान में पर्यावरण की सुरक्षा एवं संरक्षण के संबंध में वर्ष 1976 में संविधान के 42 वें अनुच्छेद में राज्य एवं नागरिकों कों राज्य के नीति निदेशक तत्वों के अर्न्तगत अधिकार प्रदान किये गये है। यह अधिकार संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों में निम्न प्रकार वर्णित है –

अनुच्छेद 47 – भारतीय संविधान के अनुच्छेन्द 47 के अन्तर्गत स्पष्ट किया गया है 'राज्य पौष्टिता एवं नागरिकों के जीवन स्तर को ऊंचा उठाने तथ स्वास्थ्य में सुधार को अपने प्राथमिक कर्त्तव्यों में मानेगा।'

अनुच्छेन्द 48 (क)– 'राज्य पर्यावरण की रक्षा करने उसमे सुधार लाने का प्रयास करेगा औश्र देश के वनों एवं वन्य जीव जन्तुओं के जीवन की रक्षा करने का प्रयास करेगा।' इसमें राज्यों पर पर्यावरण को परिष्कृत एवं समृद्ध करने का दायित्व सौंपा गया है।

अनुच्छेन्द 48 'क' (छ) – हमारे भरतीय संविधान में राज्यों को नीति के निदेशक सिद्धांतों के अन्तर्गत रखा गया है जिसके प्रावधान के अनुसार राज्य के उद्देश्य एवं प्रयोजन निर्धारित होने है यद्यपि इन प्रावधानों को समस्त विद्यायी औश्र प्रशासनिक क्रियाकलापों के कार्यान्वयन को ही इसका आधार माना जायें।

अनुच्छेन्द 51 'क'– भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य होगा कि वनों,झीलों, नदियों और वन्य जीवन सहित प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा करें तथा जीवों के प्रति प्रेम भाव रखें।

अनुच्छेन्द 51 'क'(छ)– इसके अर्न्तगत मौलिक कर्त्तव्यों को शीर्ष में रखा गया है, जो संविधान में सर्वप्रथम सन् 1977 में जोड़ा गया। इसके माध्यम से देश के प्रत्येक नागरिक को यह मूलभूत दायित्व सौंपा गया है कि वह समस्त जैव विविधता के प्रति दया भाव रखते हुए प्राकृतिक पर्यावरण की सुरक्षा एवं संवर्द्धन के लिये प्रत्यनशील रहे। सरकार ने पर्यावरण में बढ़ते हुये प्रदूषण रूपी खतरे को देखते हुए कई नियम एवं कानूनों का निर्माण किया है जिससे पर्यावरण संरक्षण की दिशा में आधारभूत सफलता प्राप्त हुयी है। सरकार द्वारा अधिनियमों का निर्माण एवं उन्हें लागू करने के लिए देश में लगभग 200 से अधिक केन्द्रीय एवं राज्य स्तरीय कानून है जो किसी न किसी रूप में पर्यावरण की सुरक्षा एवं संरक्षण से जुड़े है। भारत सरकार द्वारा निर्मित पर्यावरण संरक्षण के लिये नीति अधिनियम जिनमें से प्रमुख है।

1. वन्य जीवन सुरक्षा अधिनियम – 1972
2. जल (प्रदूषण निवारण तथा नियंत्रण) अधिनियम 1974, संशोधिम जल प्रदूषण निवारण और नियंत्रण अधिनियम 1988
3. वायु (प्रदूषण निवारण तथा नियंत्रण) अधिनियम 1981,संशोधित प्रदूषण निवारण तथा नियंत्रण अधिनियम 1988
4. वन संरक्षण अधिनियम 1980,राष्ट्रीय वनस्पति अधिनियम 1988
5. पर्यावरण सुरक्षा अधिनियम 1986, भारतीय वन नीति 1952 भारतीय संशोधित वन नीति 1980
6. राष्ट्रीय पर्यावरण प्राधिकरण अधिनियम 1995

इसके अतिरिक्त पर्यावरण संरक्षण हेतु – राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय नीतियों का निर्धारण करना पर्यावरण की सुरक्षा एवं सुधार हेतु योजनाओं का क्रियान्वयन, जल, वायु, ध्वनि प्रदूषण का अनुध्रवण करना, प्राकृतिक संसाधनों का उचित दोहन एवं उनका संरक्षण पर्यावरण के दृष्टिकोण से संवेदनशील एवं प्रदूषित क्षेत्रों को सुधारने के लिये योजनाओं का क्रियान्वयन खतरनाक रयासन बनाने वाले कारखानों में सुरक्षा एवं दुर्घटनाओं से बचाव के उचित साधनों का प्रयोग, राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर पर्यावरणीय स्थिति का आकलन कर रिपोर्ट तैयार करना,औद्यौगिक इकाइओं से निकले अपशिष्ट पदार्थो का पुन: इस्तेमाल कर प्रदूषण को कम करना एवं विकास के लिए राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय योजनाओं का मूल्यांकन पर्यावरणीय दृष्टिकोण को ध्यान मे रखकर करने से हमे पर्यावरण के संरक्षण में महत्तवपूर्ण सफलता प्राप्त हो सकती है। इसके अतिरिक्त पर्यावरण संरक्षण के लिए जन सामान्य में पर्यरिवण के प्रति रूचि प्रदूषण के हानिकारक प्रभावों की जानकारी एवं जनसामान्य की प्रदूषण नियंत्रण मे भूमिका एवं जन जागरूकता पर विशेष बल देना चाहिए क्योकि बिना जनमानस की भागीदारी

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

से पर्यावरण संरक्षण कानूनों को वृहद् स्तर पर क्रियान्वित नहीं किया जा सकता।

भारत के कई सरकारी अर्द्धसरकारी गैर सरकारी संस्थान एवं स्वयं सेवी संस्थान भी पर्यावरण की राष्ट्रीय समस्याओं से संबंध है और उनके निराकरण के लिए कार्य कर रहे है। सन् 1981 में केन्द्रीय गंगा प्राधिकरण की स्थापना की गई जो गंगा नदी में मानवीय गतिविधियों के प्रभावों का अध्ययन तथ संरक्षण कार्यक्रमों के प्रति उत्तरदायी है।

सन् 1986 में पर्यावरण संरक्षण अधिनियम बनाया गया इसके अर्न्तगत प्रदूषण उत्पन्न करने वाले क्रियाकलापों पर कठोर दण्ड का प्रावधान है।

इस प्रकार भारत सरकार ने समय समय पर विभिन्न अध्यादेश व कानून का निर्माण कर पर्यावरण संतुलन की दिया में प्रभावी कदम उठाये है। जिसने अपने संविधान में पर्यावरण सुरक्ष का प्रावधान रखा है। 5 जून 1972 के स्टॉकहोम में हुये संयुक्त राष्ट्र संघ के मानव पर्यावरण सम्मेलन में पर्यावरण की चर्चा अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर की गई और तभी से 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस के रूप में मनाया जाता है।

आज पर्यावरण के सभी पहलुओं को जानने और समझने की आवश्यकता है क्योकि पर्यावरण सभी की सांझी पूंजी है,समाज के प्रत्येक नागरिक को पर्यावरण का ज्ञान होना आवश्यक है। सभी को पर्यावरण के प्रति जागरूक करने के लिए हम विभिन्न साधनों का प्रयोग कर सकते है।

1. विद्यार्थियों में पर्यावरण के प्रति जागरूकता लाने के लिए प्रारम्भिक स्तर से ही बल दिया जाना चाहिए। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा स्कूल व कॉलेज स्तर पर पर्यावरणीय शिक्षा के लिये दिये गये आदेश इस दिशा में एक सराहनीय कदम है।
2. लोगो मे जन जागृति लाने के लिए संचार के साधनों का प्रयोग किया जाना चाहिए। लेख, नाटक, कहानीव सच्चाई पर आधारित तस्वीरों व फिल्मों के माध्यम से लोगों को पर्यावरण का ज्ञान दिया जा सकता है।
3. **नीति –** निर्धारक विशेष वर्कशॉप, सेमिनार, गोष्ठियॉ आदि करके पर्यावरण का ज्ञान दिया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पर्यावरण अध्ययन:अमित कुमार।
2. पर्यावरण अध्ययन: डॉ. बी.एल.तेली,प्रकाश नारायण।
3. पर्यावरण अध्ययन: एस.बी.एस.राणा।
4. पर्यावरण शिक्षा: डॉ. पंकज श्रीवास्तव।
5. पर्यावरण अध्ययन: डॉ.लोकेश श्रीवास्तव,डॉ.अर्चना पांडये।
6. पर्यावरण अध्ययन: डॉ.नरेन्द्रमल सुराणा।
7. अन्य पन्त एवं पत्रिकायें।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

देश के विकास की योजना, नदी - जोड़ों परियोजना

डॉ. ज्ञानसिंह वास्कले *

प्रस्तावना - शरत नदियों का देश हैं, शरत शमि देव भूमि है और यहाँ की प्रकृति में नदियाँ ही नदियाँ है जो शरत के विभिन्न पहाड़ी एवं धरातलीय व अन्य क्षेत्रों में बहती हैं, यह प्रकृति की ही देन है कि हमारे देश में इतनी सारी नदियाँ हैं। वेदों, पुराणों एवं अन्य धार्मिक ग्रंथो में हमारे देश की कई नदियों का अलग-अलग धार्मिक महत्व है तथा उनकी अलग-अलग कहानी कथाएँ है, जिन्हें हमारे देश के संस्कारी मनुष्य धार्मिक व अन्य महत्व के साथ ही माता का महत्व देते हुए देवी का रूप मानते हैं। प्राचीन समय से ही हमारें देश में छोटी-बड़ी नदियों का अलग-अलग महत्व रहा है तथा इन जीवनदायिनी नदियों के किनारे बड़े-बड़े राजाओं के महल एवं रहवास तथा गाँव, शहर बसे हुऐ हैं, जिससे मानव जीवन सहजतापूर्वक व्यतीत किया जा सके।

पर्यावरण परिवर्तन, वनों की कमी, जलवायु परिवर्तन, जनसंख्या वृद्धि, वर्षा जल की कमी, जल का विभिन्न क्षेत्रों में बहुतायत रूप से उपयोग आदि कई कारणों से वर्तमान समय में कई क्षेत्रों में जल की कमी महसूस होने लगी हैं। इसलिए शरत सरकार ने बारिश के पानी को रोककर एक नदी से दूसरी नदी में ले जाने, तथा बाँध बनाकर जल को सहजनें व उसका समय पर वितरण करके जलापूर्ति करने के लिए एवं शासन के कई जनहित के मकसदों को पूरा करने के उद्देश्य से इस महत्ती विकास की योजना नदी जोड़ों योजना को लागू किया है।

मानव जीवन में जल की पवित्रता का कितना महत्व है यह प्रत्येक नागरिक समझता है, प्रकृति प्रदत्त जल कणों का हमारें मानव जीवन में अत्यधिक महत्व है। यहाँ तक की जल के छींटे मारने से ही मनुष्य एवं अन्य को पवित्र कर लिया जाता हैं। जल ही जीवन है, जल ही पवित्रता है, जल ही माता है, जल ही सब कुछ हैं। जल के बिना जीवन जीना असंभव हैं।

शरत की आजादी के 70 वर्ष बाद हमारें देश की सरकार ने इस दिशा में कदम बढ़ाये हैं, और नदी-जोड़ों अभियान एवं परियोजना को मोदी सरकार ने अंजाम दे रही हैं, जो कि देश के विकास की योजनाओं में सर्वप्रमुख योजना सिद्ध हो रही हैं। ऐसी योजनाओं के लिए नव युवाओं और देशवासियों को जागरुक करने की आवश्यकता हैं, क्योंकि जहाँ-जहाँ जल होगा, वहाँ-वहाँ हरियाली होगी। खेती, पर्वत, सुखी जमीन, लोगों का सूखा कंठ-गीला एवं तर होगा तथा उस क्षेत्र एवं राज्य-राष्ट्र का विकास होगा। जिस तरह कहा जाता है कि सड़कें विकास की पहली आवष्यकता है उसी तरह नदियाँ जोड़ने से विकास ही विकास, हरियाली ही हरियाली होगीं, उन्नत खेती से समृद्ध किसान बनेगा और देश विकास करेगा। बूँद-बूँद टपक विधि से ही किसानों ने सुखी जमीन को हरा कर दिया है। अगर नदियों से नदियाँ जुड़ जायेगीं तो जल की कमी नहीं रहेगी और सभी उद्योग-धंधे, बिजली आदि भरपूर पैदा होंगे तथा देश के लोगों का एवं देश का विकास होगा। नदियों के रास्ते मोड़कर खुशहाली लाने की योजना से हरियाली और खुशहाली देश में आएगी।

नदी के अभियानों को समर्थन देकर देश-एक ओर केन्द्र सरकार ने देश की नदियों को जोड़ने के अभियान पर फिर से उम्मीद जगाई हैं तथा सदगुरु जग्दी वासुदेव ने ईषा फांउडेषन के साथ देश के लाखों लोगों को लेकर **'नदी अभियान-भारत कल्याण'** नाम से अद्‌भूत आंदोलन शुरू किया है अगर वैसे प्रयास अपनी कल्पना का आधा काम भी जमीन पर कर पाए तो देश की नदियों की स्थिति पूरी तरह बदल जाएगीं। केन्द्र नदियों को जोड़ने का कार्य करेगा तो बाढ़ से विकराल होने वाली नदियां नियंत्रित होंगी, वहीं सूखी पड़ी रहने वाली नदियों में भी पानी लहलहा उठेगा। सदगुरू ने शी हर नदी के दोनों किनारों पर एक-एक किलोमीटर तक औषधीय व अन्य पेड़ लगाने का अभियान प्रारंभ किया है, इससे नदियों की जलग्रहण क्षमता बढ़ेगी। अत: दोनों अभियानों एवं ऐसे अभियानों से राज्यों एवं देश का सहयोग मिलेगा।

श्री गणपति जोशी, खरगोन का लेख सराहनीय एवं प्रशंसनीय है इस दिशा में एक संपादकीय नदी-मिलन की राह पर-नदी जोड़ों परियोजना में देश की स्थायी खुशहाली की संभावना छिपी हैं। यह अच्छी बात है कि केन्द्र सरकार ने इस परियोजना पर निरंतर बढ़ाया गया है। जब नदियों में पानी बढ़ता है तो उसका भंडारण किया जाए और फिर उसे उस इलाके में पहुँचाया जाय, जहाँ लोग जलसंकट झेल रहे होते हैं तथा इस क्रम में नहरों का जाल बिछेगा जिससे उन इलाकों में भी सिंचाई हो सकेगी। जहाँ मानसून ठीक न रहने के कारण खेती आदि प्रभावित होती हैं। इस योजना से हजारों लोगों को रोजगार शी मिलेगा तो कुल मिलाकर यह प्रकृति और मानव प्रयास के मेल से देश को समृद्ध बनाने की योजना सिद्ध हो सकती हैं। नदी जोड़ों परियोजना पर लगभग 87 अरब डॉलर व्यय होगा एवं इसके तहत 60 नदियों को जोड़ा जाएगा। प्रारंभ केन एवं बेतवा नदियों को जोड़ने से होगा, ये नदियाँ उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश के बड़े क्षेत्र से गुजरती हैं, इन्हें जोड़ने के लिए 22 किलोमीटर लम्बी नहर बनेगीं।

गंगा, गोदावरी, महानदी, नर्मदा जैसी ज्यादा पानी वाली नदियों को शी कई दूसरी नदियों को जोड़ने की योजना है तथा इन नदियों पर बांध बनाए जाएगें, उनमें इकट्ठे पानी को नहरों के जरिये दूसरी नदियों तक पहुँचाया जाएगा। इससे बाढ़ व सुखा दोनों पर ही नियंत्रण होगा तथा सूखी नदियों का व उस क्षेत्र में रहने वाले लोगों को नया जीवन मिलेगा। जिससे देश को स्थायी खुशहाली मिलने की संभावना हैं।

नदियों को जोड़ने का प्रस्ताव पिछले सौ साल में कई बार आया। अगर उन पर अमल हुआ होता तो आज देश की तस्वीर कुछ और ही होती। समाचार

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा (म. प्र.) भारत

पत्रों के अनुसार 60 नदियों का संगम होने इस योजना में किया जायेगा जिसमें लगभग 5500 अरब रुपये व्यय की संभावना है। अत: निश्चित ही यह कहा जा सकता है कि इस योजना से देश की तस्वीर में परिवर्तन आयेगा तथा हरियाली और खुशहाली से अच्छे दिन आने ही वाले हैं। जय हिन्द, जय भारत।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मामोरिया , डॉ. चतुर्भज – भारत का भूगोल, साहित्य भवन प्रकाशन, आगरा
2. हुसैन, डॉ. माजिद – मानव भूगोल
3. समाचार–पत्र नई दुनिया, इन्दौर संस्करण, दिनांक 02.09.17
4. इंटरनेट पर उपलब्ध अध्ययन सामग्री।
5. स्वचिंतन पर आधारित।

****

जिला सतना की प्रमुख धर्मशालाओं का ऐतिहासिक महत्व - एक अध्ययन

डॉ. मो. स्वालकीन खान *

प्रस्तावना – सतना जिला की स्थापना 1948 में हुई थी। ये मध्यप्रदेश का अंग है। इसका क्षेत्रफल 7502 वर्ग कि.मी. है। सतना बघेलखण्ड का महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसके उत्तर दिशा में उत्तरप्रदेश एवं पूर्व में रीवा जिला, दक्षिणी भाग में शहडोल, उमरिया एवं कटनी जिला एवं पश्चिम में पन्ना जिला स्थित है। ये रीवा संभाग का अंग है। सतना जिले के प्रमुख तहसील अमरपाटन, मैहर, नागौद एवं रघुराज नगर है। सतना जिला स्वत: रघुराज नगर तहसील के अतंर्गत बसा हुआ है। सतना जिले में कई राज्य थें, जैसे, मैहर, पहरा, तराओं, भैसुन्धा एवं कामता-रजूला आदि। सतना जिला 23^0 58 से 25^0 12 उत्तरी अक्षांश एवं 80^0 21 से 81^0 23 पूर्वी देशांतर पर स्थित है। यहाँ एक सीमेंट फैक्ट्री हैण्डलूम कारखाना, आइल मिल्स, एवं कृषि उत्पादन योग्य भूमि की अधिकता है। यह एक आद्यौगिक क्षेत्र है। यहाँ प्रमुख पर्यटन स्थल मैहर, एवं बिरसिंहपुर अपनी सुदंरता से सहज ही लोगों को अपनी ओर आकर्षित करती है। सतना जिला पुरातात्विक दृष्टि से अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है । यहॉ प्राचीन ईमारतें, किलें, मंदिर, बावलियॉ, धर्मशालाऍ आदि ऐतिहासिक दृष्टि से देखने योग्य है । यहॉ हम सतना जिले की कुछ धर्मषालाओं का अध्ययन कर रहे है -

अग्रवाल धर्मशाला – सतना जिला मुख्यालय के अंतर्गत एक पुराना धर्मशाला हनुमान चौक के पूर्वी भाग में लगभग 100 मी. की दूरी पर सन् 1940 में निर्मित हुआ था। इसकी स्थापना सेठ रामचन्द्र-रामप्रताप अग्रवाल जी ने अपने पुत्र के पुण्य स्मृति में करवाया था। इसका आकार लगभग 50 वर्गफिट का सामना एवं 70 फिट गहराई चौकोर स्वरूप में स्थित है। जिसकें अंतर्गत लगभग 20 कमरे निर्मित किये गये थे, जो पानी, बिजली स्नानगृह एवं शौचालय की सुविधा से युक्त हैं।

धर्मशाला पूरी तरह पत्थरों से निर्मित किया था छत पर लकड़ी की मोटी-मोटी सिल्लियों का उपयोग किया गया है। इस धर्मशाला में दीन-हीन गरीब व्यक्तियों को नि:शुल्क विश्राम की सुविधा दी जाती थी। यदि स्वेच्छा से कोई व्यक्ति सुविधा शुल्क देना चाहता था तब उससे सुविधा शुल्क के नाम पर राशि ली जाती थी, और उसका उपयोग धर्मशाला व्यय में किया जाता था।

लगभग 10 वर्षो से धर्मशाला बंद पड़ा हुआ है। धर्मशाला के सामने भाग में मुख्य मार्ग पर धर्मशाला के खर्च के उद्देश्य से दुकानें निर्मित की गई थी। जिससे प्राप्त आय से धर्मशाला का संचालन ठीक ढंग से हो पाता था। साक्षात्कार के दौरान इस धर्मशाला की जानकारी प्राप्त हुई।

सिंधी धर्मशाला – सिंधी समाज का एक प्रमुख धर्मशाला सतना जिला मुख्यालय में बस स्टैण्ड से करीब 200 मी. सेमरिया चौराहे से पश्चिम दिशा में रेल्वे स्टेशन सतना से लगभग डेढ़ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। इस धर्मशाला की स्थापना श्री विशनदास केशवानी जी ने अपने समाज के दीन-हीन एवं बाहर से आने वाले व्यापारियों के विश्राम के उद्देश्य से करवाया था। यद्यपि इस धर्मशाला में दूसरे समाज के दीन-हीन अन्य ठहरने वाले लोगों को भी सुविधा दी जाती है।

इस धर्मशाला का निर्माण कार्य 60,100 वर्गफिट में किया गया है। चौकोर धर्मशाला का स्वरूप है मध्यभाग में आंगन है। धर्मशाला में लगभग 10 कमरे एवं 2 बड़े हाल एवं चौकोर बराण्डा का निर्माण कराया गया था। वर्तमान में इस धर्मशाला की देखरेख एवं संचालन की जिम्मेदारी सिंधी नवयुवक संगठन के हाथों में हैं। सर्व सुविधा युक्त इस धर्मशाला में 30 से 50 रू. तक प्रतिदिन के हिसाब से लिया जाता है।

वर्तमान समय में धर्मशाला संचालित है। इसकी देख-रेख होने से ये धर्मशाला सुरक्षित स्थिति में देखने को मिली।

जैन धर्मशाला सतना –सतना जिला मुख्यालय में एक तीसरा धर्मशाला हनुमान चौक सतना से 100 मी. बांई ओर एवं लाल चौक में स्वामी दयानन्द भवन के नाम से निर्मित है। लगभग 1942 में इस धर्मशाला की स्थापना की गई थी। ये दो मंजिला इमारत है। 100x250 वर्गफिट के क्षेत्र में इसका निर्माण किया गया है। इसमें 3 बड़े हाल 40x20 वर्गफिट के एवं लगभग 20 कमरे 10x10 वर्गफिट के निर्मित हे। एक बड़ा पार्क एवं मध्य भाग में आँगन भी है, 150x10 वर्गफिट का बराण्डा भी बना हुआ है।

जैन समाज के द्वारा निर्मित ये धर्मशाला दीन-हीन गरीब जनता के विश्राम एवं व्यापारियों के ठहरने के उद्देश्य से निर्मित किया गया था। इस धर्मशाला में बिजली, पानी, शयनकक्ष एवं शौचालय की पूरी व्यवस्था है। अपने जैन समाज के साथ-साथ दूसरे समाज के दीन-हीनों को भी यहाँ विश्राम की सुविधा दी जाती है। साक्षात्कार के समय जनाब मो. सलीम सा. से इस की जानकारी प्राप्त हुई।

नागौद स्थित अग्रवाल धर्मशाला – नागौद, सतना-पन्ना मुख्य मार्ग पर 25 कि.मी. की दूरी पर पश्चिम दिशा में स्थित है। नागौद वर्तमान सतना जिला का तहसील मुख्यालय है। यह एक ऐतिहासिक स्थान है, यहाँ कई वंशों के राजाओं का उत्थान एवं पतन हुआ। तेलीवंश चंदेलवंश, बघेल वंश एवं परिहार वंश के राजाओं के राजत्व को सुशोभित करने वाला नागौद कभी स्वतंत्र राज्य भी था। ये बघेलखण्ड का अंग है। इस क्षेत्र में सरायें, धर्मशाला एवं बावलियों के अवशेष पर्याप्त मात्रा में आज भी विद्यमान है। नागौद में मुख्य रूप से अग्रवाल धर्मशाला, जैन धर्मशाला एवं राजकीय धर्मशाला आज भी स्थित है।

मुख्य रूप से नागौद स्थित धर्मशालाओं का विवरण निम्नानुसार है -

नागौद मुख्य भाग में बाजार के अंदर गोकुल प्रसाद भोलादीन अग्रवाल

* (इतिहास) पं.शम्भूनाथ शुक्ला विश्वविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

जी द्धारा सन् 1940 में अग्रवाल धर्मशाला की स्थापना की गई थी। श्री गोकुल प्रसाद भोलादीन अग्रवाल जी नगर सेठ थे, उनके पास अपार सम्पत्ति थी एवं वे दानी एवं परोपकारी प्रवृत्ति के वीर पुरूष थे। अपने पिता श्री की पुण्य स्मृति में उन्होंने दीन-हीन, गरीब, जनता एवं अतिथियों व साधू-संतों के हित को ध्यान में रखते हुए एक धर्मशाला एवं धर्मशाला में अंदर एक भगवान राम-जानकी एवं लक्ष्मण जी की मूर्ति स्थापित कर मंदिर का निर्माण करवाया था।

दो मंजिला इमारत में 12 कमरे एवं 03 बड़े हाल निर्मित हैं। कमरों का आकार 10x10 वर्गफिट का एवं हाल 30x15 वर्गफिट के क्षेत्र में बने हुए है, एक बड़ा हाल 50x15 वर्गफिट का आज भी क्रियान्वित है। इस धर्मशाला में अंदर की ओर कमरों के बाहरी भाग पर 20 मेहराबनुमा दरवाजे बने हुए है। जिसमें एक विशाल बराण्डा चारों ओर निर्मित हैं। मध्य भाग में 40x30 वर्गफिट का आंगन है। 4 ओसारी निर्मित है। भवन के चारों ओर एक-एक मीनार निर्मित है जो धर्मशाला की शोभा को बढ़ाते हैं। इस धर्मशाला में पेयजल एवं निस्तार के लिए एक कुंआ भी स्थित है। धर्मशाला में रसोई, शौचालय एवं स्नानगृह की भी व्यवस्था है। धर्मशाला में प्रवेश हेतु दो मार्ग है पूर्वमुखी राम जानकी एवं लक्ष्मण मंदिर के सामने एवं दूसरा दक्षिण दिशा से हनुमान जी के बराण्डे में खुलता है। इस धर्मशाला का निर्माण कु. महेन्द्र सिंह के नेतृत्व एवं संरक्षण में हुआ था। इस धर्मशाला में विश्राम करने वाले लोगों से धर्मशाला की व्यवस्था को बनाए रखने हेतु 50 रू. प्रति व्यक्ति प्रतिदिन के हिसाब से सुविधा शुल्क के नाम पर लिया जाता है। इस धर्मशाला के बाहरी भाग में लगभग साठ 60 दुकानें बनी हुई हैं, जिनसे प्राप्त आय धर्मशाला की व्यवस्था में खर्च होता है। गरीब एवं दीन-हीनों को नि:शुल्क सुविधा प्रदान की जाती है। सर्वेक्षण एवं साक्षात्कार के दौरान श्री प्रकाश गौतम जी ने सम्पूर्ण जानकारी प्रदान की एवं धर्मशाला में दीवाल पर शिलालेख से जानकारी प्राप्त हुई। ये धर्मशाला सुव्यवस्थित एवं सुदृढ़ स्थित में आज भी स्थित है।

नागौद स्थित जैन धर्मशाला – नागौद स्थित प्राचीन समय का मुख्य धर्मशाला जैन समाज का धर्मशाला है, जो बाजार चौराहा से पश्चिम दिशा में दांयी ओर स्थित है। इस धर्मशाला का निर्माण सन् 1915 ई. में नगर सेठ श्री जग्गूलाल गजाधर प्रसाद जैन ने करवाया था। श्री जग्गू सेठ एक धनाढ्य एवम् दानवीर व्यक्ति थे, इन्होंने 1939 ई. में नागौद के जैन समाज को धर्मशाला सौंपकर सतना में निवास करने लगे, लगभग 100 वर्ष पुराना यह धर्मशाला 10ु60 वर्गफिट में निर्मित है। दो मंजिला इमारत में लगभग 20 कमरे एवं दो बड़े हाल बने हुए हैं। इस धर्मशाला का संचालन जैन समाज के संरक्षण में ट्रस्ट के अध्यक्ष श्री शील कुमार जैन की देखरेख में है।

धर्मशाला के मध्य भाग में 30x40 वर्गफिट का आंगन है। श्री गजाधर सेठ ने अपने पिता की पुण्य स्मृति में सेठ मानिक लाल मूल चन्द जैन धर्मशाला का नामकरण किया। यद्यपि यह धर्मशाला अपनी दयनीय स्थिति में जीर्ण-शीर्ण अवस्था में क्रियान्वित है। सेवा शुल्क के नाम पर 20 रू. से 50 रू. तक प्रतिदिन के दर से विश्राम करने वाले लोगों से लिया जाता है।

बिजली, पानी, शौचालय की सुविधा इस धर्मशाला में उपलब्ध है। दीन-हीन गरीब व भिक्षावृत्ति से जुड़े हुए लोगों को नि:शुल्क विश्राम की सुविधा प्रदान की जाती है। इस धर्मशाला का अधिकांश भाग जर्जर अवस्था में है, भवन कमजोर एवं खण्डित अवस्था में देखने को मिला, सर्वेक्षण कार्य के समय इस धर्मशाला से संबंधित जानकारी श्री अरूण जैन द्धारा दी गई जो छोटी जैन मंदिर के पास नागौद नगर कोतवाली रोड में निवासरत है।

नागौद स्थित तीसरा राजकीय धर्मशाला – नागौद अस्पताल चौराहा से पश्चिम दिशा में जाने वाली मार्ग से लगभग 1 कि.मी. दूर मार्ग के उत्तर दिशा में स्थित है। इसका निर्माण ब्रिटिश राज्य के समय ब्रिटिश अधिकारियों एवं विशेष अतिथियों को ठहरने के उद्देश्य से नागौद के परिहार राजाओं के समय में लगभग 1940 के आस-पास किया गया था। जनश्रुति के अनुसार राजा महेन्द्र सिंह (1926 से 1947 ई.) के समय में इस राजकीय धर्मशाला का निर्माण हुआ था। इस धर्मशाला की वस्तु स्थित सुदृढ़ एवं चालू हालत में है इसकी देख-रेख एवं पुर्ननिर्माण की प्रक्रिया होती रहती है।

वर्तमान समय में इसमें पी. डब्ल्यू. डी. का रेस्ट हाऊस संचालित है। इसमें एक बड़ा बराण्डा समकोण आकार में लगभग 80x10 वर्गफिट का बना हुआ है। 20x15 वर्गफिट के 4 कमरे हैं। कमरों के मध्य भाग में एक बड़ा बैठका एवं रसोई घर 15x10 वर्गफिट का आज भी स्थित है। सभी कमरों में स्नानगृह एवं शौचालय की सुविधा उपलब्ध है। पानी एवं बिजली की पूर्ण व्यवस्था साफ-सफाई एवं रंग-रोगन सदैव होता रहता है। वर्तमान में रात्रि में सुरक्षा एवं देख-रेख हेतु चौकीदार बना रहता है। पूरे रेस्ट हाऊस में ईंट की दीवाल के ऊपर छत में मिट्टी से छपाई प्लास्टर का काम हुआ है छत में बड़ी-बड़ी लकड़ी की कड़ी का उपयोग किया गया है। चौकीदार से साक्षात्कार में जानकारी मिली की यहाँ राजा साहब आते थे तब उनसे मिलने वाले लोगों के साथ यहाँ बातचीत होती थी शायद इसका उपयोग मीटिंग के रूप में भी होता था। इस भवन के पूर्वी भाग में निर्मित एक भवन है, जिसमें कचहरी भी लगती थी। वर्तमान समय में यहाँ स्कूल संचालित है।

मीराबाई धर्मशाला मैहर – मैहर, सतना जिले की एक तहसील मुख्यालय है। सतना से कटनी मार्ग पर 40 कि.मी. दूरी पर उत्तर दिशा में स्थित है। मैहर में एक विशाल धर्मशाला मीराबाई धर्मशाला के नाम से स्थित है। इस धर्मशाला का निर्माण लगभग 100 वर्ष पूर्व बंगाल के एक सेठ ने करवाया था तत्पश्चात् इस भूमि के स्वामी बलदेव प्रसाद अग्रवाल जी हुए उनकी मृत्यु के पश्चात उनके पुत्र पूरन लाल अग्रवाल, राजकुमार अग्रवाल, अनिल कुमार अग्रवाल, एवम् संदीप अग्रवाल श्री बलदेव प्रसाद अग्रवाल जी उत्तराधिकारी हुए।

सन् 1980 में इस मीराबाई धर्मशाला का पुनर्निर्माण का कार्य हुआ। इस धर्मशाला का निर्माण 30x60 वर्गफिट के क्षेत्रफल में तीन मंजिल में बना हुआ है। इसमें लगभग 40 कमरे बने हुए हैं। गरीब, असहाय, दीन-हीन, व्यक्तियों को मैहर में रात्रि विश्राम करने का अवसर प्राप्त हो सके इस उद्देश्य से इस धर्मशाला को संचालित किया गया है। धर्मशाला के मध्य भाग में आंगन है एवम् धार्मिक पूजा-अर्चना हेतु मंदिर की भी व्यवस्था की गई है। इस धर्मशाला में रुकने वालों से सेवा शुल्क के नाम पर 20 रु. से 50 रु. तक प्रत्येक बिस्तर के हिसाब से लिया जाता है। कुछ गरीब, दीन-हीन व्यक्तियों को नि:शुल्क विश्राम की व्यवस्था की जाती है। धर्मशाला में भोजन पकाने के लिए रसोई की भी व्यवस्था है। शौचालय, पानी एवम् बिजली की व्यवस्था के साथ साफ-सफाई करने हेतु कर्मचारियों की नियुक्ति को ध्यान में रखकर सेवा शुल्क की व्यवस्था कम से कम रखी गई है। मैहर एक धार्मिक स्थान होने के कारण सदैव यहाँ माँ शारदा मंदिर में दर्शनार्थियों की भीड़ बनी रहती है, उन्हें ठहरने एवम् विश्राम करने की सुविधा सस्ते कीमत पर मिल सके यही धर्मशाला निर्माण का उद्देश्य है।

उचेहरा स्थित राजकीय धर्मशाला – उचेहरा मैहर सतना राष्ट्रीय राजमार्ग के मध्य भाग में स्थित है। उचेहरा स्थित चौराहे में बावली के सामने मार्ग के

पश्चिमी भाग पर वर्तमान में जो रेस्ट हाऊस पी.डब्ल्यू.डी. के अधिकार क्षेत्र में है। वह परिहार राजाओं के काल में निर्मित धर्मशाला था। इस धर्मशाला के पुर्ननिर्माण की प्रक्रिया म.प्र. राज्य की स्थापना के बाद की गई एवम् उसे वर्तमान रेस्ट हाऊस का रूप दिया गया। एक भवन नये रेस्ट हाऊस का इसी धर्मशाला के बगल में निर्मित है। इस धर्मशाला का निर्माण राजा महेन्द्र सिंह के राजत्व काल (1926 ई. से 1947 ई.) के बीच किया गया था। इसका आकार लगभग 60ु60 वर्गफिट का है। सामने एक बराण्डा बना हुआ है। अंदर 4 बड़े कमरे एवं 2 हाल निर्मित है। प्रत्येक कक्ष में शौचालय निर्मित है। पीछे के तरफ एक बड़ा बराण्डा निर्मित है। एक रसोई कक्ष भी देखने को मिला। भवन के मध्य भाग में एक बैठक कक्ष बना हुआ है। इस धर्मशाला का निर्माण ईंट एवम् पत्थरों से हुआ है। छत पर चीप एवं लकड़ी का मजबूत कड़ियों का उपयोग किया गया है। दीवाल अत्यधिक मजबूत एवम् मिट्टी के प्लास्टर से युक्त है।

साक्षात्कार के समय जानकारी प्राप्त हुई कि इस धर्मशाला का उपयोग तत्कालीन समय में खास मेहमानों व अंग्रेज अधिकारियों के विश्राम के उद्देश्य के लिए किया जाता था। इस पुराने धर्मशाला में मेहराबनुमा बराण्डा इसकी सुंदरता को और भी बढ़ाता है। वर्तमान समय में यहाँ बिजली, पानी, शौंचालय कक्ष, रसोई कक्ष, स्टोर कक्ष, शयन कक्ष, बैठक कक्ष, व बराण्डे सभी अच्छी एवं उपयोगी स्थिति में है। समय-समय पर शासन स्तर पर इसकी देख-रेख व मरम्मतीकरण का कार्य होता रहता है यही कारण है कि इस सरकारी धर्मशाला का अस्तित्व आज भी बरकरार है।

इस धर्मशाला में नियुक्त टाइमकीपर जलील अहमद खान एवं लल्लू प्रसाद लोधी भृत्य चौकीदार ने साक्षात्कार के समय उपरोक्त जानकारी दी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. साक्षात्कार - मो. सलीम (उम्र 55 वर्ष) सतना, दिनांक 20.12.2011
2. साक्षात्कार - हाजी तुफैल अहमद (85 वर्ष) सतना, दिनांक 21.12.2011
3. साक्षात्कार - जलील अहमद खान (55 वर्ष) उचेहरा, लल्लू प्रसाद लोधी चौकीदार (50 वर्ष) दिनांक 18.12.11

****

जिला सीधी की प्रमुख सरायें एवं धर्मशालाओं का ऐतिहासिक महत्व

डॉ. मो. स्वालकीन खान *

प्रस्तावना – बघेलखण्ड का एक प्रमुख जिला सीधी है जिसे चौहान खण्ड के रूप में जाना जाता है। वर्तमान सीधी–मड़वासहित उसके आसपास का क्षेत्र चौहान खण्ड के नाम से आज भी जाना जाता हैं। ऐसी जनमान्यता है कि सीधी के चौहानो की रिश्तेदारी चुरहट के बघेलों के यहाँ हुई थी। अत: नरसिंह नामक एक चौहान राजपूत मैनपुरी से चुरहट चला आया, चुरहट के राव ने उसे अपने यहाँ का इलाका देवगढ़ दे दिया।इसी प्रकार बर्दी के राजा ने तखतमल नामक चौहान को उसकी सेवा से प्रसन्न होकर सीधी मड़वा का इलाका पुरस्कार में दे दिया। जिसके अतंर्गत 29 गांव थे। 1817 में बर्दी रीवा राज्य की अधीनता में आया 1931 में चौहानों ने रीवा दरबार के विरूद्ध विद्रोह कर दिया, राजा गुलाब सिंह के राजत्वकाल में युद्ध की स्थिति निर्मित हुई परंतु चौहानों ने आत्मसमर्पण कर दिया और सीधी पवई बघेल राजाओं के अधिकार में आया है तभी पूरा चौहान खण्ड सीधी मड़वा भी बघेल खण्ड का अंग बन गया सिंगरौली के खैरवार भी बघेलों की अधीनता में आ गए।

सीधी जिला में भी सरायें धर्मशालाएँ एवं बावलियों का निर्माण कार्य बघेल राजाओं के समय हुआ था किन्तु उनकी मात्रा बहुत कम थी, जो भी थी वह यदा–कदा विखण्डित हो चुकी है और भठ चुकी है, जो कुछ स्थापत्य सर्वेक्षण के समय देखने में आई वो भी जीर्ण–शीर्ण अवस्था में कुछ की स्थिति ठीक नजर आई जिनमें पुनर्निर्माण की आवश्यकता है। सीधी जिले की प्रमुख सरायें निम्नलिखित है –

मझौली ताला मार्ग पर स्थित सराय – शहडोल से सीधी बस मार्ग पर ब्यौहारी से 32 कि.मी. की दूरी पर मझौली एवं मझौली से लगभग 12 कि.मी. की दूरी पर ताला ग्राम स्थित है। मझौली एवं ताला के मध्य भाग में सराय के अवशेष देखने को मिले, इस सराय के संबंध में कोई निश्चित एवंप्रमाणितजानकारी उपलब्ध नहीं होसकी। यद्यपि सराय के अवशेष दृष्टिगोचर हो रहे हैं इसे देखने से लगता है कि इसका आकार लगभग 50030 वर्गफिट के भू–भाग पर निर्मित रहा होगा। छत एवं दीवालें खण्डित हो चुकी हैं। जनश्रुति के अनुसार लगभग 19वीं सदी में राहगीरों की यात्रा के समय उनके जलपान करने एवं विश्राम करने के उद्देश्य से इस सराय का निर्माण महीप सिंह के सौजन्य से हुआ था। महीप सिंह ने 1912–13 ई. में रीवा राज्य की अधीनता स्वीकार कर ली थी। वर्तमान समय में सराय अवशेष मात्र दिख रही है। यह पूरी तरह से नष्ट हो चुकी हैं। इस सराय के संबंध में जानकारी मझौली निवासी भैया सिंह द्वारा साक्षात्कार के समय प्राप्त हुई। यद्यपि इस सराय को किसने बनवाया था यह पूरी तरह से स्पष्ट नहीं हो सका।

मड़वास स्थित सराय – मड़वास सीधी जिले का हिस्सा है। वहाँ पहुँचने के लिए एक रास्ता खामघाटी से पूर्व दिशा में मड़वास की ओर जाता है, जो मझौली से लगभग 15 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यहाँ वालंद वंश के लोग शासक थे। जनश्रुति के अनुसार वहां फतह सिंह के समय में एक बड़ी सराय का निर्माण कार्य नगर के बाहरी हिस्से में कराया गया था। जिसका आकार लगभग 40x40 वर्गफिट का था इसमें लगभग 5 कमरे एवं एक बड़े बराण्डा का अवशेष देखने को मिला जो बलुहे पत्थरों से बना हुआ था, वर्तमान समयमें यह सराय पूरी तरह खण्डित होकर अपना अस्तित्व खो चुकी है। इसकी जानकारी भी भैया सिंह मझौली निवासी उम्र 75 वर्ष ने साक्षात्कार के समय मुझे दी।

कढ़ौती स्थित सराय – कढ़ौती, सीधी से मड़वास मार्ग पर लगभग 15 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यहां बावली एवं सरायें दोनों के अवशेष प्राप्त हुए हैं। इस सराय का निर्माण रीवा के बघेल राजाओं के समय महाराजा गुलाब सिंह के कार्यकाल में हुआ था। जब मड़वास बघेल राजाओं की अधीनता में था। इस सराय का आकार लगभग 60x30 वर्गफिट के क्षेत्रफल में बना था। वर्तमान समय में इसकी छत पूरी तरह खण्डित हो चुकी है, दीवाल आज भी खड़ी है किन्तु जीर्ण–शीर्ष अवस्था में है। इस सराय की जानकारी साक्षात्कार के समय 70 वर्षीय बुजुर्ग श्री रामसजीवन शर्मा जी ने साक्षात्कार के समय दी जो सीधी के निवासी हैं।

कजरी गाँव स्थित सराय – सीधी जिले में मझौली तहसील से लगभग 30 किलोमीटर की दूरी पर सीधी की ओर पहुँच मार्ग में खामघाट के पश्चिमी भाग में लगभग 5 किलोमीटर की दूरी पर कजरी गाँव स्थित है। यहाँ भी एक प्राचीन सराय के अवशेष प्राप्त हुए। इस सराय का क्षेत्रफल लगभग 60x20 वर्गफिट था।वर्तमान समय में इस स्थान पर सराय ढह जाने के बाद स्कूल भवन निर्मित किया जा चुका है। इसकी जानकारी श्री रामसजीवन शर्मा द्वारा प्रदान की गई। इस सराय का निर्माण किसके द्वारा हुआ, इसकी जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी।

बर्दी की सराय – बर्दी चंदेल राजपूतों की रियासत थी, वर्तमान में यह सीधी जिले में सोन नदी के किनारे चंदेलान के नाम से जाना जाता है। इस गाँव में चंदेल राजाओं द्वारा निर्मित एक बड़ी सराय का उल्लेख भी मिला। जनश्रुति के अनुसार बर्दी के राजा अजीत सिंह ने इस सराय का निर्माण करवाया था। राहगीरों को विश्राम एवं जलपान की सुविधा का ध्यान रखते हुए इसे निर्मित किया गया था। वर्तमान समय में इस सराय के अवशेष ही दिखाई दे रहे हैं, तथा सराय पूरी तरह से जीर्ण–शीर्ण होकर खण्डित हो चुकी है।

सिंगरौली स्थित सराय – सिंगरौली घनघोर जंगली क्षेत्र था। यहाँ खैरवार जाति के जागीरदारों की सत्ता थी। बाद में बेनीवंशीय सत्ता की स्थापना हुई। यहाँ दूर–दूर से लोग खैर की लकड़ी से कत्था बनाने का कार्य करने हेतु

*(इतिहास) पं. शम्भूनाथ शुक्ला विश्वविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत

ठेकेदारों के साथ जाया करते थे। उनके विश्राम एवं जलपान के लिए कई स्थानों पर सरायें बनवाई गई थीं किन्तु वर्तमान समय में सब ढ़ह चुकी हैं। सिंगरौली एककोयलांचल क्षेत्र है जहाँ वर्तमान में रेल्वे लाइन का निर्माण भी हो चुका है।यह सीधी जिला मुख्यालय से लगभग 160 कि.मी. बैढ़न के आगे स्थित है। यहाँ के राजा उद्यत सिंह ने रीवा राज्य की अधीनता स्वीकार कर ली थी। 1912 में यहाँ बेनीवंशीय सत्ता समाप्त हुई, एवं बघेलों के अधिकार क्षेत्र में यह क्षेत्र आ गया था। यहाँ व्यापारी वर्ग के लोग भी अपने समाज एवं अपने कर्मचारियों की सुविधा के लिए आराम करने हेतु सराय निर्माण का कार्य करवाया था, किन्तु वर्तमान में ये सरायें ढ़ह चुकी हैं, दीवालें बची हैं।

खटाई स्थित सराय – खटाई वर्तमान समय में सिंगरौली जिले की एक तहसील है। चितरंगी से लगभग 40 किलोमीटर की दूरी पर स्थित इस तहसील में गढ़ी प्रांगण पर एक सराय के अवशेष देखने को मिले। ऐसा माना जाता है कि गढ़ी के निर्माण कार्य के समय ही वहां के राजाओं द्धारा राजा साहब से मिलने आने वाली जनता एवं राहगीरों के विश्राम के लिए एक सराय का निर्माण करवाया गया था किन्तु वर्तमान समय में यह पूरी तरह जीर्ण–शीर्ण हो चुकी है। अब यहाँ सिर्फ अवशेष के रूप में ईंट एवं पत्थरों का ढेर देखने को मिलते हैं।

बहरी स्थिति सराय – बहरी, सीधी–सिंगरौली मार्ग पर सीधी से उत्तर दिशा में देवसर–सिंगरौली मार्ग पर 32 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। बहरीतिराहा से एक मार्ग पश्चिम दिशा में हनुमना–मिर्जापुर पर सड़क के किनारे एक बड़ी सराय का निर्माण कराया गया था। इस सराय का निर्माण कार्य राहगीरों एवं यात्रियों की सुविधाओं को ध्यान में रखते हुए लगभग 100 वर्ष पहले व्यापारियों के द्धारा करवाया गया था। इस सराय के अवशेष आज भी देखने को मिलते हैं। यद्यपि ये सराय पूरी तरह खण्डित हो चुकी है। साक्षात्कार में इस बात की जानकारी अलाउद्दीन तेली द्धारा प्रदान की गई। किन्तु इसका निर्माण किसने कराया था इसकी जानकारी स्पष्ट रूप से नहीं मिल सकी ।

प्रमुख धर्मशालाएं – सीधी जिला चौहान खण्ड के नाम से जाना जाता है यद्यपि यह रीवा राज्य के अधीन था। इस जिले में भी कई वंशों के राजाओं का उत्थान एवम् पतन हुआ है, लेकिन वे सभी राजा बघेल राजाओं की अधीनता स्वीकार कर चुके थे। सीधी जिला शहडोल से उत्तर दिशा में 165 कि.मी. की दूरी पर एवं रीवा जिला मुख्यालय से 100 कि.मी. की दूरी पर पूर्व दिशा में स्थित है।

सीधी जिला के अर्न्तगत यद्यपि कई सरायें, धर्मशालाएं एवं बावलियों के निर्माण की जानकारी मिलती है परन्तु वर्तमान समय में अधिकांशत: पूरी तरह नष्ट हो चुकी हैं और उनका अवशेष भी नजर नहीं आता है, फिर भी मैंने अपने सर्वेक्षण कार्य में निष्ठा ईमानदारी से इस जिले की कुछ पुरातत्व सामग्रियों को ढूंढ़ निकालने का प्रयास किया जिनमें कुछ मुख्य धर्मशालाएं जो वर्तमान में अस्तित्व में हैं, उनका उल्लेख किया जाना आवयश्क है। जो धर्मशाला सर्वेक्षण के दौरान मुझे मिली उनका विवरण निम्नानुसार है–

व्यापारी संघ सार्वजनिक धर्मशाला सीधी – सीधी जिले की यह एक प्रमुख धर्मशाला है, जिसका निर्माण 1962 में व्यापारी संघ सार्वजनिक धर्मशाला के नाम से किया गया था। इसके संस्थापक नत्थूमल एवम् नवलदास आहूजा जी थे। इस धर्मशाला का निर्माण बस स्टेण्ड के पास, आजादनगर मार्ग पर बाईं ओर अशोक लॉज के सामने किया गया था। जो वर्तमान समय में भी स्थित है। इसका क्षेत्रफल 125x175वर्गफिट है, जिसमें 14 बड़े कमरे 10x10 आकार के एवं 2 बड़े हाल आज भी बने हुए हैं। जनश्रुति एवं साक्षात्कार के समय यह जानकारी प्राप्त हुई कि गल्ला मंडी में आढ़त का काम करने वाले लोग 10 पैसे से 20 पैसे तक रोजाना व्यापारी कोष में जमा किया करते थे। जिससे भविष्य में बाहर से आने वाले व्यापारियों एवं फेरी करने वाले लोगों के ठहरने, रुकने आदि की व्यवस्था हो सके। जब कोष में पर्याप्त पैसा जमा हो गया तब व्यापारी संघ के अध्यक्ष के रूप में श्री नत्थूमल एवं नवलदास आहूजा के नेतृत्व में इसका निर्माण कार्य किया गया। जो लोग ठहरते थे वे अपनी इच्छा से कुछ राशि व्यापारी कोष में दिया करते थे।

पूरी धर्मशाला पत्थरों से बनी हुई है, छत पर चीप एवं लकड़ी की सिल्लियों का उपयोग किया गया है। धर्मशाला सुरक्षित हैं, इसमें साफ–सफाई एवं रंग–रोगन का काम व्यापारी संघ द्धारा होता रहता है। वर्तमान समय में इस धर्मशाला में फेरी लगाने वाले, कपड़े, चादर, कालीन आदि के व्यापारी बाहर से आकर ठहरते हैं, इस धर्मशाला में प्राथमिक सुविधाएं उपलब्ध हैं। वर्तमान समय में यहां ठहरने एवं विश्राम करने वालों से कुछ शुल्क व्यापारी फण्ड एवं इसके रख–रखाव के लिए लिया जाता है। यह धर्मशाला उपयोगी स्थिति में है। गरीब एवं दीन–हीन लोग भी कभी–कभी यहां आश्रय पाते हैं। इस धर्मशाला के सम्बन्ध में साक्षात्कार के दौरान मो. अकरम भाई से जानकारी प्राप्त हुई जो वहां के स्थानीय निवासी हैं।

मड़ी फूट धर्मशाला सीधी – सीधी जिला मुख्यालय में बस स्टैण्ड से दक्षिण करौंदिया की ओर जाने वाले मुख्य मार्ग पर सूखा नाला के पश्चिमी छोर में दायीं ओर एक विशाल मंदिर प्रांगण है, जिसे महाराज गोपालदास मंदिर के नाम से जाना जाता है। इस मंदिर प्रांगण के अन्दर कई भवन निर्मित हैं, जिसमें दो प्रमुख भवन धर्मशाला के नाम से भी संचालित हैं। श्री गोपालदास जी द्धारा मंदिर निर्माण के समय ही दो बड़े कक्ष लगभग 60 वर्ष पूर्व 1950 ई. में धर्मशाला के उद्देश्य से निर्मित करवाया गया था। यह वर्तमान समय में महाराज विश्वेश्वर दास के नेतृत्व में गोपालदास जी ट्रस्ट द्धारा संचालित है।

इस धर्मशाला कक्ष का आकार लगभग 25x15 वर्ग का एक कक्ष एवं 30x15 वर्ग फिट का दूसरा कक्ष निर्मित है। ईंट से बने हुए इस धर्मशाला में पेयजल एवं बाकी निस्तार के उद्देश्य से एक कुएँ का निर्माण भी उन्होंने किया था, साथ ही वर्तमान समय में बिजली, पानी, शौचालय, स्नानगृह एवं रसोई कक्ष आदि की पूरी व्यवस्था है।

साधू–संत, महात्माओं के विश्राम के लिए कुछ कमरे अलग से बने हुए हैं। यहां विश्राम करने वालों से किसी प्रकार का निर्धारित शुल्क नहीं लिया जाता है। सुविधा शुल्क ठहरने वालों की श्रद्धा भावना पर निहित हैं। महात्मा गोपालदास द्धारा साधू–संत एवं दीन–हीन लोगों को आश्रय देने के उद्देश्य से मंदिर प्रांगण में निर्मित यह आश्रम एवं धर्मशाला कक्ष का निर्माण कार्य वर्तमान समय में बड़ा सार्थक सिद्ध हो रहा है। साक्षात्कार के दौरान इस संबंध में मंदिर के पुजारी एवं संचालक महाराज विश्वेश्वर दास जी एवंस्थानीय जनता से प्राप्त जानकारी के अनुरूप उपरोक्त विवरण प्रस्तुत किया गया है।

मोरवा स्थित अग्रसेन धर्मशाला – सिंगरौली रेल्वे स्टेशन से मोरवा मुख्य बाजार में थाना के पीछे शिशु मंदिर स्कूल के पीछे की ओर (मारवाड़ी) अग्रवाल समाज द्धारा लगभग 35 वर्ष पूर्व अग्रसेन धर्मशाला का निर्माण कार्य कराया गया था। इस धर्मशाला का निर्माण अपने समाज के लोगों को विश्राम की सुविधा एवं समाज के सार्वजनिक कार्यक्रमों के उद्देश्य से अग्रवाल समाज द्धारा कराया गया था।

इस धर्मशाला का पूरा प्रांगण 51 डिसमिल के भू–भाग में निर्मित है। धर्मशाला के मध्य भाग में आँगन है। इसमें कुल 17 कमरे बने हुए हैं एवं एक

बड़ा हाल, रसोई, स्टोर कख, शौचालय आदि की पूरी व्यवस्था है। लगभग 10080 वर्गफिट में धर्मशाला का निर्माण कार्य हुआ है। मुख्य रूप से समाज के दीन–हीन गरीबों को यहाँ विश्राम की सुविधा दी जाती है। विशेष कार्यक्रम शादी अथवा उत्सव के मौके पर इसे शुल्क पर भी दिया जाता है, जिससे अग्रसेन ट्रस्ट में आय का स्रोत बना रहे। इस धर्मशाला में सभी प्राथमिक सुविधाएं उपलब्ध होने के कारण शादी–ब्याह, जन्मदिन पार्टी आदि के कार्यक्रम यहां संचालित होते रहते हैं। इस धर्मशाला के एक सदस्य श्री धीरेन्द्र गोयल जी से साक्षात्कार करने पर ये जानकारी प्राप्त हुई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मड़वा–सीधी जिले का छोआ गांव है–कागजात मोतीमहल कमिश्नरी रीवा पृ. 347 राजीव लोचन, अग्निहोत्री रीवा राज्य।
2. कागजात मोती महल कमिश्नरी रीवा – पृष्ठ 347 अग्निहोत्री रीव राज्य।
3. कागजात मोती महल कमिश्नरी रीवा – पृष्ठ 347 राजीव लोचन अग्निहोत्री रीवा राज्य।
4. रीवा के बघेल राज्य का पर राज्य संबंध – डॉ. विक्रम सिंह बघेल – पृष्ठ 150
5. साक्षात्कार – भैया सिंह– सीधी (उम्र 40 वर्ष) दिनांक 16.12.2012
6. साक्षात्कार – श्री रामसजीवन शर्मा (उम्र 70 वर्ष) दिनांक 21.12.2012
7. साक्षात्कार – श्री अलाउद्दीन तेली (उम्र 44 वर्ष) दिनांक 21.12.2012
8. साक्षात्कार – अकरम भाई – सीधी (उम्र 50 वर्ष) दिनांक 23.12.2012
9. साक्षात्कार – महाराज विशेश्वर दास जी, गोपालदास मंदिर दक्षिण करौंदिया, जिला–सीधी, दिनांक 24.12.2012

****

प्राचीन काल से स्वतन्त्रता प्राप्ति तक काशी नगरी की शिक्षा व्यवस्था का अध्ययन

कृष्ण कुमार पाण्डेय * डॉ. रामरतन साहू **

शोध सारांश – काशी ज्ञान, गरिमा, कला और संस्कृति के दृष्टि से अद्वितीय है। यह नगरी ज्ञानपुरी है और गंगा ब्रम्हद्रवी है– ये काशी के अध्यात्म सूत्र है। प्राचीन होने के साथ–साथ यह पूर्व से अध्ययन–अध्यापन अहम प्रचार–प्रसार के क्षेत्र में एक केन्द्रीय संस्था के रुप में स्थापित है। प्राचीन और मध्यकाल के दौरान उत्तर प्रदेश में उदार परम्परा का संचालन था। वाराणसी हिन्दू शिक्षा केन्द्र के रुप संस्कृत शिक्षा में विश्वव्यापक हुआ। पुरातन काल से ही यहाँ दर्शन, संस्कृत, खगोलशास्त्र, सामाजिक एवं धार्मिक शिक्षा आदि के ज्ञान के लिए जनमानस से लोग आते रहे हैं। भारतीय परम्परा में प्राय: वाराणसी को सर्वविद्या की राजधानी कहा गया है । इस नगरी ने वेदों के अध्ययनाध्यापन में सबसे अधिक उन्नति की। इससे सम्बन्धित जो मुहरें मिली है ,वे भारतीय शिक्षा के इतिहास में अतुलनीय है। इस नगरी में एक जामिया सलाफिया भी है, जो इस्लामी शिक्षा केन्द्र है। इस प्रकार काशी (वाराणसी) समग्र भारत का प्रतिबिम्ब है। यह नगरी अपनी अनेक विशिष्टताओं, धर्म–कर्म तथा शिक्षा के क्षेत्र में विशेष महत्वपूर्ण है।
शब्द कुंजी – ज्योर्तिलिंग, प्रागैतिहासिक, द्विगुणित, प्रकाण्ड, पुराधिपति आदि।

प्रस्तावना – काशी पतित पावनी गंगा जी के किनारे पर स्थित धर्म, शिक्षा एवं संस्कृत–संस्कृति की प्राचीनतम नगरी के रूप में विख्यात है। इसकी भौतिक आध्यात्मिक रचना अत्यन्त विलक्षण है। काशी भी अपनी माता के समान तीनों लोकों में न्यारी है। वाराणसी केवल तीर्थ स्थान मात्र न होकर अपितु संस्कृत अध्ययन–अध्यापन और समग्र शिक्षा का एक प्रधान केन्द्र बिन्दु रही है। जातकों में यहाँ की शिक्षा प्रणाली का उल्लेख है। गुप्त युग में यह नगरी वैदिक शिक्षा का केन्द्र बन गयी तथा गहड़वाल युग में यहाँ के विद्वान विद्यार्थियों को अपने घर में रखकर अपने विषयों में शिक्षा देते थे। ऐसा लगता है कि आरम्भिक मुस्लिम युग में इस शिक्षा क्रम को धक्का लगा। पर अकबर के युग से आज तक बनारस में संस्कृत की शिक्षा अबाध गति से चल रही है। यहाँ के विद्वानों ने अधिकतर प्राचीन ग्रन्थों पर टीकाएँ लिखी। इसमें संदेह नहीं किया जा सकता है कि– संस्कृत भाषा की रक्षा और प्रचार में वाराणसी के विद्वानों का बड़ा हाथ रहा है। यह उन्हीं का प्रभाव है कि देश के कोने कोने से विद्यार्थी काशी आकर ज्ञानार्जन करने में अपना गौरव समझते है। इस नगरी की महत्ता केवल तीर्थ और विद्या पर ही अवलम्बित नहीं थी अगर यहाँ में व्यापार न होता तो नगरी केवल एक आश्रय ही बनकर रह जाती और उसमें उस नागरिक संस्कृति का अभाव होता जिसके लिए बनारस आज भी विश्व विख्यात है। बनारस की इस व्यापारिक महत्ता के अनेक साहित्यिक और पुरातात्विक प्रमाण मिले हैं। बौद्ध साहित्य में वाराणसी के व्यापारियों की प्रशंसा की गयी है और उनके व्यापार के प्रधान अंग काशी के बने कपडों और चन्दन के अनेक उल्लेख आए हैं। जहाँ तक रेशमी वस्त्रों के उत्पादन का सम्बन्ध है बनारस अपनी पुरानी परम्परा को आज भी अक्षुण्ण बनाए हुए है। यहाँ के व्यापारियों ने हमेशा देश समाज और शिक्षा की उन्नति में सहयोग दिया है। [1]

ई0बी0 हावेल के अनुसार– लगभग 2500 साल पहले यहाँ कासिम नामक जाति रहती थी, जिसके आधार पर इसका नाम काशी पड़ा।[2]

प्राचीन काल में शिक्षा – प्रागैतिहासिक काल से ही इतनी सजीव संपुष्ट संस्कृति धर्म, शिक्षा और वैभव से पूर्ण नगरी का वर्णन प्राचीन ग्रन्थों में प्राप्त होता है। काशी नगरी में शिक्षा पुरातन है, यहाँ शिक्षा की जड़े विदेशी नही हैं। प्रारम्भ में शिक्षा सबके लिए थी लेकिन स्मृतिकाल तक आते–आते छोटे बड़े की भावना उत्पन्न होने के कारण वर्ग वर्ण में परिवर्तित हो गये जिसमें षूद्र वर्ण को शिक्षा का अधिकार प्राप्त नहीं था। प्राचीनकाल में यहाँ शिक्षा की गुरुकुल आश्रम पद्धति का प्रचलन था जिसमें शिक्षा मौखिक व्याख्यान विधि द्वारा प्रदान की जाती थी। इसी क्रम में ज्ञान एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में प्रसारित होता रहा है। पहले यहॉ आश्रम शहर से दूर थे किन्तु गुप्तकाल और उसके बाद से नालन्दा, नासिक, वाराणसी इत्यादि नगरों तक भी शिक्षा केन्द्र स्थापित होने लगे। इस काल में शिक्षा का दृष्टिकोण धार्मिक रहा, जिससे लोग संस्कृत, आध्यात्म, व्याकरण तथा वैदिक साहित्य के अध्ययन के लिए काशी नगरी में आकर वास् किया करते थे। वेद, उपनिषद, पुराण, महाकाव्य, अन्य संस्कृत ग्रन्थ तथा कौटिल्य का अर्थशास्त्र आदि प्राचीन शिक्षा की धरोहर हैं। कई विद्वानों ने विद्याधन से लोगों को अभिसिंचित किया है। श्रीकृष्ण के गुरु काष्य संदीपन भी काशी नगरी से ही धन्य हुए, दक्षिण भारत के गुरु ऋषि अगस्त्य यहीं के थे। काशी में विद्वानों के सामने अपना सिद्धांत प्रस्तुत किए बिना कोई भी सम्प्रदाय अथवा दर्षन मान्य नहीं होता था। भारद्धाज और धन्वंतरि वैदिक कालीन काशी (कहलगॉव–वटेवर) में आयुर्वेद के ज्ञाता थे। जिनसे लोग आयुर्वेद की शिक्षा प्राप्त करने काशी जाते थे। विश्वामित्र के पुत्र सुश्रुत ने काशीराज दिवोदास से आयुर्वेद तथा शल्य चिकित्सा की शिक्षा जिस काशी नगरी में पायी थी, वह वैदिक कालीन काशी–वाराणसी विश्वामित्र का कौशिकी क्षेत्र वर्तमान पूर्णिया जिले का कोसी क्षेत्र रहा था। जहाँ उनकी तपस्थली व जन्मस्थली थी। [3] महान शल्य चिकित्सक सुश्रुत, जो बॉस की खपच्चियों का प्रयोग करके हड्डियों को जोड़ देते थे। जिन्होंने शल्य क्रिया का संस्कृत ग्रन्थ 'सुश्रुत संहिता' लिखा था। वे

* शोधार्थी (इतिहास) डॉ.सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** विभागाध्यक्ष (इतिहास) डॉ. सी.वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

काशी (वाराणसी) में ही निवास करते थे।

गौतम बुद्ध के जन्म से पूर्व तथा उनके समय में काशी को बहुत प्रसिद्धि प्राप्त हो चुकी थी। वाराणसी मुख्य रूप से हिन्दू धर्म और बौद्ध धर्म के साथ जुड़ा हुआ है, लेकिन वाराणसी में पूजा और धार्मिक संस्थाओं के कई धार्मिक विश्वासों की झलक पा सकते हैं। धर्म निरपेक्ष संस्थानों में जैन और बौद्ध संस्थान आते है, जिनमें व्याकरण, चिकित्सा, तर्कशास्त्र, भौतिकी, कला तथा शिल्प इत्यादि सिखाए जाते है।

स्त्री शिक्षा पूर्व काल में जब बड़ी संख्या में स्त्रियॉ उच्च शिक्षा ग्रहण कर रही थी। अपना अमूल्य योगदान देकर साहित्य के गौरव को बढ़ा रही थी। संस्कृत साहित्य में उपाध्याया एवं उपाध्यायानी शब्दों का प्रयोग पाया जाता है। उपाध्याय की पत्नी को आदरपूर्वक उपाध्यायानी कहा गया है किन्तु उपाध्याया उन विदुषी स्त्रियों के लिए प्रयुक्त हुआ है जो अध्यापन कार्य करती थी। महिला शिक्षिकाओं का बोध कराने वाले एक अन्य शब्द की रचना तभी करनी पड़ी जब इनकी पर्याप्त संख्या रही। भारतीय समाज में नारी की स्थिति अत्यन्त उन्नत एवं सम्मानजनक थी। प्राय: जीवन के हर क्षेत्र में नारी को पुरुषों के समान अधिकार प्राप्त थे। तत्कालीन भारतीय समाज में महिलाओं की तेजस्विता के अनेक दृष्टान्त प्राचीन भारतीय इतिहास का हिस्सा बन कर आज भी जीवन्त है।

मध्यकाल में शिक्षा – काशी का प्राचीन क्षितिज जो जन–समक्ष रहा वह शनै:–शनै: परिवर्तित होता हुआ, अनेक विधाओं का परिपोषक बन गया बनारस उस सभ्यता का सर्वदा परिपोशक रहा है जिसे हम भारतीय सभ्यता कहते हैं। जिसके विकास में अनेक सभ्यताएं एवं संस्कृतियों का योगदान रहा है। पुरातत्व, पौराणिक कथाओं, भूगोल, कला और इतिहास का एक संयोजन, वाराणसी को भारतीय संस्कृति को एक महान केन्द्र बनाता है। धार्मिक संघर्ष और युद्ध के बाद 11वीं शताब्दी से वाराणसी की शिक्षा तथा उन्नति में गिरावट देखने को मिलती है।

तुलसी और कबीर ने इसी नगर में परम तत्व की प्राप्ति की। महावीर ने और शंकर ने चिन्तन मनन किया और दिव्य ज्ञान के प्रसार द्वारा समाज का उत्थान किया।[4]

देवनगरी काशी शिक्षा एंव साहित्य से परिपूर्ण है। इस नगरी में महान भारतीय लेखक एवं विचारक हुए है, कबीर, रविदास, गोस्वामी तुलसीदास जिन्होंने यहाँ रामचरितमानस लिखी। कुल्लुका भट्ट जिन्होंने 15वीं शताब्दी में मनुस्मृति पर सर्वश्रेष्ठ ज्ञात टीका लिखी।

रामनगर किले में स्थित सरस्वती भवन में दुर्लभ पाण्डुलिपियॉ, विशेष कर धार्मिक ग्रन्थों का दुर्लभ संग्रह सुरक्षित है। यहॉ गोस्वामी तुलसीदास जी की पाण्डुलिपि की मूल प्रति भी रखी है। यहॉ मुगल मिनियेचर शैली में बहुत सी पुस्तकें रखी है, जिसके सुन्दर आवरण पृष्ठ है।

टेबर्नियर ने शिक्षा के क्षेत्र में बनारस की बहुत प्रशंसा की है। टेबर्नियर के अनुसार–

वाराणसी गायन एवं वाद्य दोनों ही विद्याओं का केन्द्र रहा है। वाराणसी, भारतीय कला और संस्कृति का पूरा एक संग्रहालय प्रस्तुत करता है।[5]

यह देवनगरी संस्कृत भाषा एवं साहित्य का प्रमुख गन्तव्य होने के साथ–साथ संगीत शिक्षा में अग्रणी रहा है क्योंकि संगीत सम्राट तानसेन के दैहित्र वंश के विशिष्ट कलावन्त भूपत खाँ के पुत्र जीवत खाँ मुगल दरबार से काशी आकर संगीत सीखा और उनके कंठ माधुर्य से राजदरबार की षोभा द्विगुणित हो उठी थी। मध्यकाल में यहाँ उदार परम्परा का संचालन था।

आधुनिक काल में स्वतन्त्रता प्राप्ति तक काशी नगरी में शिक्षा – भारत की पराधीनता के समय भी काशी में संस्कृत ज्ञान एवं अन्य विधाओं को विद्वानों ने अक्षुण्य बनाए रखा। काशी नरेश बलवन्त सिंह (1739 –1770 ई.) के पुस्तकालय से प्राप्त उर्दू ग्रन्थ बलवन्तनामा से राजा बलवन्त के शासनकाल की घटनाओं एवं काशी नगरी की शिक्षा व्यवस्था की जानकारी आज भी प्राप्त होती है। राजा बलवन्त के दरबार में फलित ज्योतिष के प्रकाण्ड विद्वान पं. परमानन्द पाठक ने रामनगर दुर्ग महूर्त शोधन का कार्य एवं उत्कृष्ट ज्योतिष ग्रन्थ **प्रश्न माणिक्य** की रचना कार्य सम्पन्न किया। 21 मार्च सन् 1791 ई. में काशीराज महीपनारायण सिंह 1781 –1796 ई. ने संस्कृत पाठशाला की स्थापना कर अपनी उदारता, विद्याप्रेम का परिचय दिया। इस महाविद्यालय की उचित देखभाल एवं संचालन के लिए मिर्जापुर जिले का सतासी परगना दान में दे दिया जहाँ सम्पूर्णानन्द विश्वविद्यालय के विभिन्न विभागों की कक्षाऍ निर्विघ्न संचालित होती है। कुछ इतिहासकार मानते है कि – गवर्नर जनरल लार्ड कार्नवालिस ने इस संस्कृत महाविद्यालय की स्थापना 1791में की थी। यह वाराणसी का प्रथम महाविद्यालय था। इसका भवन गाथिक शैली की अद्‌भुत संरचना के लिए प्रसिद्ध है। महाराज महीपनारायण सिंह की प्रशस्ति में ब्रहमदत्त कवि ने अपने अलंकार ग्रन्थ दीप प्रकाश में तत्कालीन शिक्षा व्यवस्था का वर्णन किया है।

ऐतिहासिक क्रम में 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जब पंडित मदनमोहन मालवीय जी राजा दिनेशसिंह की अति भव्य विरासत कालाकांकर प्रतापगढ़ उ.प्र. में एक कुटिया में रहते हुए श्री प्रताप नारायण मिश्र के सहयोग से हिन्दोस्तान नामक पत्र का सम्पादन करते थे 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ में एक दिन पं. मालवीय जी का मन खिन्न हुआ और वह गंगा नदी पार करके वाराणसी पहुँचे। जहाँ सन् 1904 ई. में उन्होंने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना कर शुभारम्भ किया। इसी समय महाराजा प्रभु नारायण सिंह की अध्यक्षता में संस्थापकों की प्रथम बैठक बुलाई गई। सन् 1905 में विश्वविद्यालय का प्रथम पाठ्यक्रम प्रकाशित हुआ। अत: मालवीय जी ने डॉ. एनी बेसेन्ट और दरभंगा के राजा रामेश्वर सिंह से परामर्श कर योजना में सहयोग प्राप्त कर 5 दिसम्बर 1911 ई. में बनारस हिन्दू सोसाइटी की स्थापना हुई। 4 जनवरी 1916 ई. काशी नरेश प्रभुनारायण सिंह द्वारा प्रदत्त भूमि में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का शिलान्यास बसन्त पंचमी के दिन हुआ। इसी अवसर पर महात्मा गाँधी ने भावी पराक्रम का संकेत अपने ऐतिहासिक भाषण में दिया। जिसमें विशेष आमन्त्रण पर पधारे भारत के राजे रजवाड़े , सामन्तों, वायसराय और सरकारी उपाधियों में लदें देशी रियासतों के शासकों को ललकारते हुए भारत की गरीबी का जो वर्णन हुआ उससे गाँधी जी जनता के बीच वन्दनीय हो गए।[6]

डॉ. एनी बेसेन्ट द्वारा समर्पित सेन्ट्रल हिन्दू कॉलेज में बी.एच.यू. का विधिवत शिक्षण कार्य 01 अक्टूबर 1917 में आरम्भ हुआ। सबसे पहले इंजीनियरिंग कालेज का निर्माण फिर आर्ट, साइंस कॉलेज का निर्माण हुआ। 1921 में नये भवन में शिक्षण कार्य प्रारम्भ हुआ। जिसका उद्घाटन 13 दिसम्बर 1921 में प्रिंस ऑफ वेल्स ने किया था। इसी प्रकार भूदान आन्दोलन के प्रवर्तक आचार्य विनोबा भावे जी का जीवन परिवर्तन इसी पवित्र नगरी से हुआ।

इसी क्रम में शिव प्रसाद गुप्त ने अपनी प्रभुत्व सम्पत्ति तथा जमीन दानकर काशी विद्यापीठ की स्थापना की। जो बाद में राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के नाम पर महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ विश्वविद्यालय के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और आधुनिक काल के जयशंकर प्रसाद, आचार्य

रामचन्द्र शुक्ल, मुंशी प्रेमचन्द्र, जगन्नाथ प्रसाद रत्नाकर देवकीनन्दन खत्री, डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, तेग अली, क्षेत्रेश चन्द्र चट्टोपाध्याय, वागीश शास्त्री, बलदेव उपाध्याय, सुमन पाण्डेय (धूमिल) एवं विद्यानिवास मिश्र और अन्य बहुत सारे विद्धत गण मान्य है। यही जगन्नाथ प्रसाद और मुंशी प्रेमचन्द की कर्मभूमि रही है।

शिवनगरी काशी से प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित ग्रन्थ और रचनाकार साहित्य की अनमोल धरोहर हैं। जिसकी भारतीय शिक्षा की उन्नति में मार्गदर्शन और समाज के नवनिर्माण में अविस्मरणीय भूमिका है।

वाराणसी में ऐसे प्रतिष्ठित शिक्षण संस्थान है, जिनकी स्थापना बाहर से आये लोगों ने केवल शिक्षा के विकास को ध्यान में रख कर की है। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय इसका श्रेष्ठतम् उदाहरण है। महामना मालवीय जी ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय स्थापना कर वैदिक काल से चली आ रही इसी शिक्षा परम्परा को विस्तार दिया। वर्तमान में देश विदेश से छात्र यहाँ आकर ज्ञानोपार्जन कर रहे हैं। यहाँ कई शिक्षण संस्थाएँ है। जिनमें विभिन्न प्रमुख शिक्षा भारत का संस्कृत पाठशाला, महाविद्यालय, विद्यालय, मदरसें सम्मिलित है। यहाँ महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, ई.आई.टी. तथा जामिया सल्फिया मदरसा, केन्द्रीय तिब्बती विश्वविद्यालय है।[7]

निष्कर्ष – प्राचीन काल से स्वतंत्रता प्राप्ति तक काशी में शिक्षा संचालन में अनेक उतार चढ़ाव आए अनेक संघर्षो तथा सहयोगों के पश्चात् यहाँ शिक्षा और ज्ञान की अविरल धारा प्रवाहित होती रही है। भारतीय परम्परा में प्राय: वाराणसी को सर्वविद्या की राजधानी कहा गया है। पुरातत्व, साहित्य तथा प्राचीन अभिलेखों के आधार पर काशी को बहुरंगी नगरी और भारत सांस्कृतिक राजधानी भी कहा जाता है। नि:सन्देह काशी एक ऐसी नगरी है, जहां अनेक, धर्म, संस्कृतियाँ, भाषाएँ, शिक्षाएँ तथा परिधान स्थल-स्थल पर प्रतिबिम्बित होते हैं। इस प्रकार यह धर्मो एवं संस्कृतियों का पवित्र संगम है। यह नगरी वर्तमान में शैव और बौद्ध धर्म की संगम स्थली होने के साथ शैक्षिक एवं सांस्कृतिक रूप से अत्यन्त समृद्ध है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. मोती चन्द्र, 2003,काशी का इतिहास- विश्वविद्यालय प्रकाशन चौखम्बा वाराणसी।
2. विश्वकर्मा, ईश्वरी शरण, 1989, काशी की जीवन शैली, अखिल भारतीय इतिहास संकलन समिति, काशी प्रान्त।
3. सिंह, राजेश कुमार, 2003, काशी में शिक्षा व्यवस्था, अखिल भारतीय इतिहास संकलन समिति, काशी प्रान्त।
4. वर्मा, हरिशचन्द्र, मध्यकालीन भारत, हिन्दी निदेशालय नई दिल्ली
5. डॉ. अंकिता, वाराणसी शहर के मुख्य अल्पसंख्यक भाषा-भाषी समुदायों का समाज भाशिक अनुशीलन
6. पाठक, शोभनाथ 2011, आधुनिक सन्दर्भ में काशी
7. अभिगमन तिथि 18अगस्त 2006,एजूकेशनल इंस्टीट्यट इन वाराणसी, वाराणसी सिटी।

****

भीम बैठका का ऐतिहासिक महत्व

डॉ.कुन्ती वराठे *

प्रस्तावना – भारत का हदय स्थल कहा जाने वाला मध्यप्रदेश के रायसेन जिले में स्थित एक पुरापाषाणिक पुरास्थल है, भीम बैठका। इसकी खोज डॉ. विष्णुश्रीधर वाकणकर ने 1958 में की। भीम बैठका की गुफाओं के दीवारों पर बने शैल चित्र विश्व प्रसिद्ध है। यहॉ तकरीबन आज तक 750 से ज्यादा शैलाश्रय खोजे जा चुके है, जिनमें 243 भीम बैठका के समूह है।

भीम बैठका के गुफाऍं मध्यभारत के पठार के दक्षिणी किनारे पर स्थित विंध्याचल की पहाड़ियों के निचलें छोर पर भोपाल से 46 कि. मी. की दूरी पर स्थित है। यहॉ का प्राकृतिक दृश्य अत्यधिक सुंदर एवं शुद्ध वातावरण है। भीम बैठका के नामकरण पर कहा जाता है कि यहाँ महाभारत के चरित्र भीम का स्थान से माना जाता है। यहाँ की गुफाओं में पाण्डवों ने निवास किया था भीम के बैठने की जगह से इसका नाम भीम बैठका पड़ा। भीम बैठका में बनी चित्रकारियाँ पाषाणकालीन मनुष्यों के जीवन को दर्शाती हैं तथा प्रागैतिहासिक चित्रकारी एवं आदिमानव द्वारा बनाए गए शैलाश्रयों के लिए भी प्रसिद्ध है। गुफाओं की प्राचीन चित्रकारी 30000 वर्षो पुराना माना जाता है, जो आज भी मौजूद है। यहाँ लगभग 600 गुफाएँ है। भीम बैठका लगभग 1850 हेक्टर क्षेत्र में फैला हुआ है। यहाँ के शैल चित्र बहुमूल्य धरोहर है तथा पुरातत्व विभाग के संरक्षण में हैं। भारतीय सर्वेक्षण, भोपाल मंडल के द्वारा सन 1990 में राष्ट्रीय महत्व का स्थल घोषित किया है। इसके पश्चात् यूनेस्को ने 2003 में विश्व धरोहर स्मारक घोषित किया है। सर्वेक्षण से यह पता चलता है कि प्रागैतिहासिक काल से ही मानव शैलाश्रयों में निवास कर रहा था और यहीं से उसने अपनी कला की अभिव्यक्ति शैल चित्रों के माध्यम से व्यक्त की। भीम बैठका के शैल चित्रों को ढूंढने के पश्चात् ही शैलचित्रों की खोज को एक नई दिशा मिली और वर्तमान में मध्यप्रदेश के अन्य जिलों से भी शैलचित्र ढूंढ निकाला गया किंतु रायसेन ही एक ऐसा जिला है। जिसे विश्व के सर्वाधिक शैलचित्रों की उद्‌गम स्थल भी इसी क्षेत्र को कहा जाता है।

भीम बैठका में बने चित्रों में प्रयोग किए गए रंगों में लाल, सफेद, पीला एवं हरा रंग है। यहाँ के बने चित्र मानव के दैनिक जीवन के घटनाओं से संबंधित है। जो हजारों साल पहले के जीवन को दर्शाती है। इन चित्रों को पुरापाषाण काल से मध्यपाषाण काल के समय का माना जाता है। यहाँ पाषाण निर्मित भवन, शुंग एवं गुप्तकालीन अभिलेख तथा परमार कालीन मंदिर के अवशेष भी प्राप्त हुए है। यहाँ पर स्थित चित्रों की शैली से पता चलता हैं कि ये चित्र काफी लंबी अवधि से बनाए गए है। भीम बैठका की गुफाएँ कई युगों से जुड़ी हैं तथा ये भारत की सांस्कृतिक विरासत की एक राष्ट्रीय संपदा हैं यहाँ के शैलचित्रों में आखेट दृश्य, युद्ध दृश्य रेखाकिंत मानवाकृति समूह नृत्य एवं पशु-पक्षी के चित्र बहुतायत देखने को मिलती है मुख्यत: इन शैलचित्रों में नृत्य, आखेट ,घोडों और हाथियों की सवारी शरीर पर आभूषण को सजाने तथा शहद जमा करना आदि का चित्रण किया गया है। इनके अलावा बाध, सिंह, सूअर, हाथी, घडियाल, कुत्ते जैसे जानवरों के चित्र है। यहाँ के चित्रों में शिकारी को गाय,भैंस मोर, गैंडा, जंगली सूअर आदि जानवरों का षिकार करते दिखाया गया है। जिसमें शिकारी धनुषबाण से निशाना बना रहा है। शैलाश्रय में अष्वमेध युद्ध का चित्र हैं, जिसमें अश्व के पीछे राजा की सेना सामना करने हेतु तैयार है। दीवारों पर बने चित्र धार्मिक संकेतों को प्रकट करते है। इन चित्रों में गणेश के चित्र चार भुजाओं वाले शिव के चित्र बने है। भीम बैठका के शैलश्रयों में अनेक प्रकार के आलेखन देखने को मिलते है। जिसमें प्रमुख रूप से ज्यामिती शैली में आलेखन है। भीम बैठका के शैलचित्र कला को शैली के आधार पर विभिन्न समूहों में विभाजित किया गया है।

भीम बैठका के शैलाश्रयों में मानव आकृतियॉ भी है। मानव को अपनी आकृति चित्रित करने का आभाष अपना प्रतिबिम्ब देखकर ही मिला होगा। कुछ मानव आकृतियाँ चौंड़ी रेखाओं से खींची है और कुछ आकार डमरू जैसा त्रिकोणमिति तथा आयताकार है। इन शैलाश्रयों में मानव आकृतियाँ शिरोप्ररेत्र धारण नहीं किए है। चित्रों में मानव के सामूहिक नृत्य का दृश्य अत्यधिक मनोहारी हैं, जिसमें एक-दूसरे के हाथ पकड़े हुए है। यहाँ नृत्य के कई चित्र उकेरे गए है। मानव आकृतियों में मनुष्य अधिकांशत: शिकारी के रूप में तथा वीर योद्धा के रूप में चित्रित्र किया गया है। इस प्रकार से यह स्थल मानव विकास का आरंभिक स्थान भी माना जाता है। यहाँ की सबसे प्राचीन चित्रकारी को 12,000 वर्ष पुराना माना जाता है। भीम बैठका में 750 गुफाएँ है, जिनमें 500 गुफाओं में शैलचित्र पाए गए है। पूर्व पाषाण काल में मध्य पाषाण काल तक यह स्थान मानव गतिविधियों का केन्द्र रहा है। हजारों वर्ष पूर्व बने शैलचित्र आज भी स्पष्ट दिखाई देते है।

भीम बैठका के शैल चित्र मानव विकास के इतिहास के साक्षी है। भीम बैठका में विभिन्न कालों की चित्रकारी देखने को मिलती है। 500 गुफा चित्रों में 5 गुफा का चित्र पुरापाषाण काल के तथा शेष चित्र मध्यपाषाण काल के है। मध्यपाषाण के काल प्राप्त हुए है, जिनमें एक बच्चे के गले में तावीज है जो कि जादू टोने में विश्वास का प्रतीक है। यहाँ से सामुदायिक जीवन के प्रमाण मिले है। मानवीय क्रियाकलापों से संबंधित प्रमाण प्राप्त हुए है।

मानव सभ्यता का इतिहास वास्तव में सुदूर अतीत में फैला हुआ है। जो कि मूलत: पुरातात्विक साक्ष्यों पर आधारित है। भीम बैठका की गुफाऍं प्रागैतिहासिक काल की चित्रकारियों के लिए लोकप्रिय हैं और ये गुफाएँ मानव द्वारा बनाए गए शैल चित्रों एवं शैलाश्रयों के लिए भी प्रसिद्ध है। यहाँ चट्टानों पर हजारों वर्ष पूर्व बनायी गयी चित्रकारी आज भी मौजूद है। इस प्रकार के प्रागैतिहासिक शैलचित्र रायसेन जिले के सिंघनपुर के निकट **कषडा**

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय महाविद्यालय, बम्हनी बंजर, जिला मण्डला (म.प्र.) भारत

पहाड़ की गुफाओं में होशंगाबाद के पास आदमगढ़ में रायसेन जिले के बरेली के पाटनी गांव में मृगेंद्रनाथ की गुफा में शैल चित्र मौजूद है। भोपाल रायसेन मार्ग पर निकटतम पहाडियों पर शैलचित्र पाए गए हैं होशंगाबाद के निकट बुधनी की पत्थर खदान में भी शैल चित्र पाए पाए है। भीम बैठका से 5 किलो मी. की दूरी पर पैगावन में 35 शैलाश्रय पाए गए है, जो अति दुर्लभ माने गए है। इन शैलचित्रों की प्रचानता 10,000 से 35,000 वर्ष की आंकी गई है।

भीम बैठका की शैल कला को शैली एवं विषय के आधार पर विभिन्न समूहों में विभाजित किया गया है। यहाँ के शैलचित्रों को देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि विभिन्न कालों में विभिन्न लोगों के द्वारा चित्र बनाए गए है।

1. पूर्वपाषाण काल के शैल चित्रों में मानवाकृतियां छड़ी के आकार की है। चित्र गहरे लाल रंग से बने रेखीय चित्र है। इस काल के पेबत टूल्स,फूलैक्स, चापिंग, हस्तमुठार तथा क्लिवर्ष उत्खन्न से प्राप्त हुए है।
2. मध्यपाषाण के चित्र ताम्रकालीन चित्रों के नीचे देखे गए हैं, चित्र आकार में अपेक्षाकृत छोटे है। मानव आकृतियां और आखेट के दृष्य अंकित किए गए है मनुष्य को आखेटक के रूप में दिखाया गया है। शिकार करने हेतु मानव हथियारों का प्रयोग करता था। हथियारों में प्रमुख रूप से भाले, नुकीले छडिया ,तीर धनुष शामिल है। समूह नृत्य पशु-पक्षियों के चित्र, गर्भवती महिलाओं तथा मदिरापान का चित्रण इन शैलाक्षयों में देखेने को मिलता है।
3. ताम्रयुग- में विभिन्न ताम्रयुग स्थलों पर उत्खनन कार्य से प्राप्त मृद्भाण्डों पर बने चित्रों की तुलना शैल चित्रों से की गई है।
4. ऐतिहासिक काल भीम बैठका में मौर्य,शुंग, सातवाहन कुषाण एवं गुप्तकालीन अवशेष भी प्राप्त हुए है। शैलाक्षय की दीवार पर शुंगकालीन ब्रम्ही लिपि में 'सिंह कस लेणे' एवं संस्कृत में 'सिंहकस्थलेणे' उत्कीर्ण है जिसका अर्थ है सिंह की गुफा। इस काल के चित्र लाल,सफेद, कुछ हरे रंग से बने हुए है। चित्रों से धार्मिक जीवन की जानकारी मिलती हैं यहाँ गणेश के चित्र एवं चार भुजाओं वाले शिव के चित्र प्राप्त हुए है, भीम बैठका के चित्रों में कुशाण कालीन हथियार जानवरों की आकृतियॉ देखने को मिलती है। अश्वमेध शैली के चित्रों से गुप्तकाल को निश्चित किया गया है।
5. मध्यकालीन युग के चित्र ज्यामितीय रेखीय एवं योजनाबद्ध तरीके से बने है। अधिकांशत: ज्यामितीय शैली का प्रयोग किया गया हैं इन चित्रों के अध्ययन से प्रागैतिहासिक काल के मनुष्य के कार्यो एवं जीवन शैली के बारे में जानकारी मिलती है।

भीम बैठका के शैलाश्रय हमारे देश में ही नहीं वरन विदेश के भी ख्याति प्राप्त कर गौरवशाली इतिहास को संजोए हुए हैं। प्रदेश के साथ साथ संपूर्ण भारत में प्रागैतिहासिक शैलाश्रयों के उत्खनन में भीम बैठका ही केवल ऐसा स्थल है। जहॉ पर विभिन्न युगों से संबंधित मिट्टी की परतें प्राप्त होती हैं। भीम बैठका ऐतिहासिक तथा पुरातात्विक दृष्टि से एक महत्वपूर्ण स्थल है। जहॉ से हमें प्राचीन सभ्यता का भी ज्ञान होता हैं। यहॉ के शैलाश्रयों से मानव विकास की जानकारी प्राप्त होती है। ऐसा माना जाता है कि भीम बैठका के अलावा अन्य किसी स्थल से इतनी बड़ी संख्या में शैलचित्र नहीं पाए गए हैं। इसीलिए भीम बैठका का स्थान विश्व में सर्वोपरि है। इसी महत्व के कारण इसे राष्ट्रीय महत्व का स्थल घोषित कर संरक्षित किया गया है। हमारे लिए गर्व की बात है कि मध्यप्रदेश के भीम बैठका को यूनेस्को द्वारा विश्व धरोहर की सूची में स्थान दिया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. शिवकुमार तिवारी मध्यप्रदेश की जनजातीय संस्कृति हि. ग्र अ. भोपाल 2005
2. आनंद कुमार पाण्डे अर्चना पाण्डे सामान्य अध्ययन म.प्र. हि.ग्र.अ. भोपाल 2014
3. मध्यप्रदेश सामान्य ज्ञान
4. रचना-संयुक्तांक 34-35 जनवरी-अप्रैल 2002

****

जनपद रूद्रप्रयाग के ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक - आर्थिक कारकों का स्वास्थ्य दशाओं पर प्रभाव

सुनीता रावत * मनोज टम्टा** प्रो.के.सी. पुरोहित ***

शोध सारांश - मानव विकास में शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है। किन्तु अच्छी शिक्षा का आत्मसातीकरण तभी संभव है जब व्यक्ति शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ हो। अनेक देशों में स्वास्थ्य पर सामाजिक-आर्थिक कारकों के प्रभाव के अध्ययन व सर्वेक्षण से अधिकांशत: यह निष्कर्ष रहा है कि माता -पिता की शिक्षा, घरेलू आय, जल की उपलब्धता, स्वच्छता आदि का स्वास्थ्य पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। भारत के सन्दर्भ में विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक-आर्थिक असमानताएँ स्वास्थ्य को प्रभावित करती हैं। इनमें शिक्षा, जातिगत स्तर, आय, अवस्थापनात्मक सुविधाएँ, स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधओं का स्थानिक वितरण तथा उन तक पहुँच इत्यादि सम्मिलित किये जा सकते हैं।

उत्तराखण्ड राज्य दुर्गम हिमालयी राज्य है जहा उपर्यक्त कारकों का लोगों के स्वास्थ्य पर स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है। प्रस्तुत शोध-पत्र में रूद्रप्रयाग जनपद में लोगों की सामाजिक -आर्थिक असमानताओं के कारण स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण किया गया है। प्रतीकात्मक अध्ययन हेतु रूद्रप्रयाग जनपद के 27 न्यायपंचायतों में प्रत्येक के एक-एक गाँव का चयन किया गया है।

प्रस्तावना - नवीन विचार एक स्वस्थ शरीर में ही और उससे बढ़कर एक स्वस्थ मस्तिष्क में ही पनप सकते हैं। स्वास्थ्य का अर्थ मस्तिष्क व शरीर की संतुलित अवस्थिति से है। मात्र बीमारियों से मुक्त रहना ही अच्छा स्वास्थ्य नहीं अपितु अच्छे स्वास्थ्य का अर्थ है शरीरिक व मानसिक स्वस्थता की स्थिति। किसी भी क्षेत्र विशेष की स्वास्थ्य दशाओं में वहाँ के लोगों को प्रभावित करने वाली सुविधाओं, स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता, स्थानिक वितरण तथा उन तक गम्यता आदि को सम्मिलित किया जाता है। इन स्वास्थ्य दशाओं को प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से वहाँ की सामाजिक-आर्थिक स्थिति प्रभावित करती हैं। लोगों की आर्थिक स्थिति, शिक्षा का स्तर, जातिगत संरचना तथा स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता का स्तर, इत्यादि उनके रोगों के निदान हेतु अपनाये गए साधनों को निर्धारित करते हैं जिनमें सरकारी अस्पताल, प्राइवेट अस्पताल, स्थानीय पूजा, झाड़फूक इत्यादि साधन सम्मिलित किये जा सकते हैं जो कि प्रत्यक्षत: उनकी स्वास्थ्य स्थिति को प्रमाणित करते हैं।

अध्ययन के उद्देश्य- प्रस्तुत शोध-पत्र के निम्नलिखित उद्देश्य हैं-

1. जनपद रूद्रप्रयाग की सामाजिक -आर्थिक स्थिति एवं क्षेत्रीय विभिन्नताओं का विश्लेषण करना।
2. जनपद में स्वास्थ्य सेवाओं की स्थिति का विश्लेषण करना।
3. जनपद की सामाजिक-आर्थिक स्थिति का स्वास्थ्य दशाओं पर प्रभाव का विश्लेषण करना।
4. जनपद के लिए व्यावहारिक एवं प्रभावी स्वास्थ्य नीति का सुझाव देना।

विधि तंत्र - प्रस्तुत शोध-पत्र प्राथमिक आँकड़ो को आंशिक रूप से शामिल किया गया है। प्राथमिक आँकडे स्वयं अध्ययन क्षेत्र में जाकर जनपद के 27 न्यायपंचायतों से प्रत्येक के एक गाँव से प्रश्नावली के माध्यम से एकत्रित किये गए हैं जबकि द्वितीयक आँकड़ो के लिए जनपद के सरकारी कार्यालयों, पुस्तकों, एवं इन्टरनेट का प्रयोग किया गया है।

भौगोलिक परिचय- जनपद रूद्रप्रयाग गढ़वाल क्षेत्र के लगभग मध्य में स्थित है। जनपद का मुख्यालय रूद्रप्रयाग अलकनंदा व मंदाकिनी के संगम पर स्थित है। इसका अक्षांशीय विस्तार 30 17' 58' उत्तरी अक्षाँश से 30 48' 27' उत्तरी अक्षाँश तक तथा देशान्तरीय विस्तार 78 02' 58' पूर्वी देशान्तर से 79 22'0' पूर्वी देशान्तर तक है। जनपद का सम्पूर्ण क्षेत्रफल 1984 वर्ग किलोमीटर है तथा कुल जनसंख्या 242285 (2011) है।

(मानचित्र देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

जनपद में धरातलीय उच्चावच को दो भागों में बाँटा जा सकता है। पहला महान हिमालय से ढका उत्तरी भाग जो अधिकाँशत: हिमाच्छादित रहता है। तथा जल-विभाजकों एवं गहरी नदी घाटियों से निर्मित क्षेत्र। दूसरा लघु हिमालय के अन्तर्गत आने वाला जनपद का दक्षिणी भाग। जनपद में दो अपवाह तंत्र महत्वपूर्ण हैं पहला मंदाकिनी नदी तंत्र व दूसरा अलकनंदा नदी तंत्र। इनमें से मंदाकिनी अपवाह तंत्र जनपद में अधिक भाग में विस्तृत है। यहाँ की जलवायु में पर्याप्त भिन्नता पायी जाती है। जनपद के घाटी क्षेत्र जैसे रूद्रप्रयाग, अगस्त्यमुनि, आदि ग्रीष्मकाल में अधिक गर्म रहते हैं तथा मौसम प्राय: उमसभरा रहता है जबकि जनपद के उत्तरी भाग में ऊँचाई वाले भागों में तापमान कम रहता है। जनपद रूद्रप्रयाग में पाये जाने वाले प्रमुख वनों में सेमल, चीड़, देवदार, स्प्रूस, बांज, बुराँश आदि हैं तथा यहाँ मखमली घास के मैदान (बुग्याल) भी पाये जाते हैं।

सामाजिक-आर्थिक दशाएँ-

विश्व में विकसित एवं विकासशील राष्टों के विभाजन में अहम मानक सामाजिक-आर्थिक सेवाएँ समझी जाती हैं। जनपद में कई ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक-आर्थिक दशाएँ जैसे- शिक्षा, स्वास्थ्य, यातायात, संचार, बैंकिंग, चिकित्सालय, प्रशासन, सामाजिक सुरक्षा आदि का समुचित विकास नहीं हो पाया है।साक्षरता मानव प्रगति और विकास का मूल मंत्र है। इसके

*शोधार्थी (भूगोल) परिसर पौड़ी, हे0न0ब0, गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल, भारत
**शोधार्थी (भूगोल) परिसर अल्मोड़ा, कुमायूँ विश्वविद्यालय, नैनीताल (उत्तराखण्ड) भारत
*** विभागाध्यक्ष (भूगोल) परिसर पौड़ी, हे.नं.ब. (ग.वि.) श्रीनगर गढ़ताल (उत्तराखण्ड) भारत

साथ ही यदि जीवन की गुणवत्ता बेहतर हो तो इससे बीमारी और मृत्यु भी कम होगी।

सारणी-1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

सारणी में विभिन्न सामाजिक-आर्थिक संकेतकों का विवरण प्रस्तुत किया गया है। सारणी के अनुसार जनपद के न्यायपंचायत बजीरा, चन्द्रापुरी, भीरी, उच्छाढुंगी, अगस्त्यमुनि, कोटबांगर, कण्डाली, डांगीभरदार, ऊखीमठ, बष्टाबडमा, तथा गुप्तकाशी अधिक जनसंख्या घनत्व वाले क्षेत्र हैं यहाँ जनसंख्या घनत्व 120 व्यक्ति प्रति वर्गकिलोमीटर से भी अधिक है जो कि जनपद के ग्रामीण क्षेत्र के औसत जनसंख्या घनत्व 118 से अधिक है। इन न्यायपंचायतों में जनसंख्या के अधिक बसाव के प्रमुख कारण इनका यात्रा मार्ग में स्थित होने के साथ-साथ कृषि सम्पन्न क्षेत्र होना आदि हैं। न्यायपंचायत सतेराखाल, चोपड़ा, पीपली, पोडीखाल, मरोड़ा, स्यूरबांगर, आदि में जनसंख्या घनत्व 100 से भी कम है यह जनपद के न्यूनतम जनसंख्या घनत्व वाले क्षेत्र हैं। यहाँ से जनसंख्या का पलायन मैदानी भागों में सर्वाधिक हुआ है

इसी प्रकार जनपद में सर्वाधिक लिंगानुपात वाले न्यायपंचायतों में पीपली, सुमेरपुर, डांगीभरदार, बष्टाबडमा, सौराखाल, मनसूना, जवाडी, पांजणा, चौपता, मयकोटी, सतेराखाल, चोपड़ा, बजीरा, मरोड़ा आदि सम्मिलित किये जा सकते हैं जिनमें लिंगानुपात 1100 से भी अधिक है। इन न्यायपंचायतों में लिंगानुपात के अधिक होने का प्रमुख कारण रोजगार के लिए पुरूष वर्ग का अत्यधिक पलायन होना है। जनपद में न्यूनतम लिंगानुपात वाले न्यायपंचायत फाटा, गुप्तकाशी, भीरी, चन्द्रापुरी, अगस्त्यमुनि, आदि हैं। साक्षरता दर की दृष्टि से जनपद के गुप्तकाशी, फाटा, उच्छाढुंगी, भीरी, चन्द्रापुरी, अगस्त्यमुनि, चोपता, मयकोटी, सतेराखाल, पोडीखाल, सारी, मरोड़ा, ऊखीमठ, आदि न्यायपंचायतें उच्च साक्षरता दर वाले क्षेत्र हैं जहाँ यह दर 80 से भी अधिक है। जबकि न्यायपंचायत पीपली, बजीरा, कोटबांगर, डांगीभरदार, जवाडी, पांजणा, जनपद के न्यूनतम साक्षरता दर वाले क्षेत्र हैं।

सारणी के अनुसार जनपद के आर्थिक गतिविधियों को दर्शाने वाले संकेतकों में कृषि में संलग्न जनसंख्या का प्रतिशत न्यायपंचायत कोटबांगर, मनसूना, फाटा, बष्टाबडमा, पांजणा, स्यूरबांगर, उच्छाढुंगी, आदि हैं। जबकि न्यूनतम संलग्नता भीरी, मयकोटी, पीपली, गुप्तकाशी, मरोड़ा आदि न्यायपंचायतों में है यहाँ कृषि में जनसंख्या की संलग्नता का कम होने का प्रमुख कारण कुछ क्षेत्रों का यात्रा मार्ग पर स्थित होने के कारण व्यापार में अधिक संलग्न होना है जबकि कुछ क्षेत्रों में कृषि के लिए उपयुक्त भौगोलिक दशाओं का न होना है।

जनपद में पारिवारिक उद्योगों में संलग्नता न्यायपंचायत पीपली, ल्वार, बष्टाबडमा, पांजणा, कण्डाली, चन्द्रापुरी, अगस्त्यमुनि, उच्छाढुंगी, भीरी, आदि में अधिक है। जबकि न्यायपंचायत फाटा, ऊखीमठ, जवाड़ी, डांगीभरदार, सतेराखाल, आदि में न्यूनतम हैं। इसके अतिरिक्त अन्य आर्थिक गतिविधियों में संलग्न जनसंख्या का आधिक्य न्यायपंचायत मयकोटी, पोडीखाल, मरोड़ा, सुमेरपुर, गुप्तकाशी, ऊखीमठ, जवाड़ी, आदि में अधिक है। तथा न्यूनतम उच्छाढुंगी , कोटबांगर, पांजणा, सौराखाल, बष्टाबडमा, मनसूना, फाटा आदि न्यायपंचायतों में है।

स्वास्थ्य सेवाओं की स्थिति - इस प्रकार जनपद में जनसंख्या का विश्लेषण करने से स्पष्ट है कि यहाँ सामाजिक-आर्थिक स्तर सामान्य है। उपर्युक्त कारकों के अतिरिक्त जनपद में स्वास्थ्य सेवाओं की स्थिति भी एक प्रमुख मद है जो स्वास्थ्य दशाओं को प्रत्यक्षत: प्रभावित करती है। जनपद रूद्रप्रयाग में मार्च 2015-16 तक 15 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, 2 सामदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, 27 ऐलोपैथिक चिकित्सालय, एवं 71 मातृत्व शिशु कल्याण उपकेन्द्र कार्यरत थे। वर्ष 2014-15 की जिला योजना में 141.68 लाख रु0 परि' के सापेक्ष 141.68 लाख रु0 अवमुक्त हुआ और समस्त धनराशि खर्च की गई।

सामाजिक-आर्थिक कारकों का स्वास्थ्य पर प्रभाव - किसी भी समाज में सामाजिक-आर्थिक कारकों का स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। क्योंकि वहाँ की जनसंख्या की साक्षरता दर, लिंगानुपात, आर्थिक क्रियाकलाप, आदि उनके स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता को प्रभावित करती है।

सारणी-2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

सारणी के अनुसार सतेराखाल, सुमेरपुर, पीपली, पोडीखाल, बजीरा, कोटबांगर, पांजणा, सौराखाल, आदि में 40 प्रतिशत लोगों को स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएं हैं जबकि अन्य में यह प्रतिशत 20 से 30 है। जनपद में सामान्यत: डायरिया, टायफायड, पीलिया, ज्वर, आदि समस्याए अधिक पायी गई। महिलाओं में मुख्यत: एनीमिया, ल्यूकोरिया, सिरदर्द, जैसी बीमारियां अधिक पायी गई।

सर्वेक्षण के दौरान गाँव की महिलाओं से साक्षात्कार के आधार पर यह निष्कर्ष निकला कि ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकतर प्रसव घर पर ही होते हैं।घर में प्रसव के प्रतिशत के आधार पर अधिकांश न्यायपंचायतों में यह प्रतिशत 60 से अधिक है जबकि कुछ न्यायपंचायतों में यह प्रतिशत 40 और 50 है। ग्रामीण क्षेत्रों अधिकतर प्रसव घर पर होने का प्रमुख कारण लोगों का निम्न शैक्षिक स्तर ,गाँवों की दुर्गम भौगोलिक स्थिति के कारण आवागमन की समस्या एवं संस्थागत प्रसव के लाभों की अज्ञानता है।

आर्थिक कारकों का स्वास्थ्य पर प्रभाव इससे ही स्पष्ट होता है कि सर्वेक्षण के दौरान अधिकांश लोगों ने स्वीकार किया कि वे नियमित रूप से स्वास्थ्य जाँच नहीं करवाते क्योंकि न तो वे इसके प्रति जागरूक हैं और न ही वे जाँच हेतु खर्च करने में सक्षम हैं। साक्षात्कार के दौरान अधिकांश ने बताया कि उनका स्वास्थ्य पर प्रतिमाह खर्च 1000 रु0 से भी कम है। अधिकांश न्यायपंचायतों में यह प्रतिशत 70 से अधिक है जबकि कुछ में 60 प्रतिशत लोगों का खर्च प्रतिमाह 1000 रु से कम है। अत: स्पष्ट है कि पर्वतीय क्षेत्रों में स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता में कमी है जिसके प्रमुख कारण साक्षरता का निम्न स्तर, भौगोलिक दुर्गमता, के साथ-साथ आर्थिक स्थिति का निम्न होना भी है। क्योंकि यहाँ अधिकांश लोग कृषि कार्यो में संलग्न हैं जो कि जीवान निर्वाह तक ही सीमित है अत: इन कृषकों की आय न्यून है।

सामाजिक-आर्थिक कारकों जैसे- साक्षरता, रूढ़िवादिता, आय का स्तर आदि का प्रभाव लोगों द्वारा रोग निदान हेतु अपनाये जाने वाले साधनों को भी निर्धारित करते हैं। अध्ययन के दौरान कम साक्षरता वाले न्यायपंचायतों में रोग निदान हेतु स्थानीय देवताओं के पूजन या झाड़फूक को वरीयता दी जाती है। वहीं निम्न आर्थिक स्थिति वाले न्यायपंचायतों में निजी अस्पतालों को कम महत्व दिया जाता है। जिन न्यायपंचायतों में सामाजिक एवं आर्थिक स्तर ठीक है वहाँ स्थानीय पूजन की परम्परा घटी है तथा सरकारी चिकित्सा संस्थानों या संस्थागत रोग निदान की प्रवृत्ति में वृद्धि हुई है।

स्वास्थ्य नीति हेतु सुझाव - जनपद में एक व्यावहारिक एवं कार्यपरक स्वास्थ्य नीति हेतु कुछ सुझाव निम्नवत् है-

- ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकाधिक चिकित्सा संस्थान खोले जाय तथा सक्षम मानव संसाधन उपलब्ध कराये जाय।
- स्थानीय जनता को सरकारी चिकित्सालयों के लाभों एवं योजनाओं के प्रति अधिक जागरूक किया जाय व उन्हें उचित चिकित्सीय सुविधाएँ प्रदान करना सुनिश्चित किया जाय।
- दुर्गम ग्रामीण क्षेत्रों में आपातकालीन स्थिति में घर पर ही चिकित्सा पहुँचाने का प्रबन्ध किया जाय जिसमें डॉक्टर या सहायक घर पर आकर अपनी सेवाएँ दें।
- जनता को कम उम्र में विवाह व बच्चे पैदा करने से होने वाले हानियों के प्रति सजग करके उन्हें सही मार्गदर्शन प्रदान किया जाय।
- सामान्य व गम्भीर रोगों की दवाईयाँ सभी ग्रामीण क्षेत्रों के चिकित्सालयों में उपलब्ध करायी जाय जो कम से कम कीमत पर स्थानीय जनता को उपलब्ध हों।
- ग्रामीण क्षेत्रों के सभी लोगों का अनिवार्य स्वास्थ्य बीमा करवाया जाय ताकि उन्हें नि:शुल्क या कम खर्च पर सभी प्रकार की चिकित्सा सुविधाएँ मिल सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सूचना एवं लोक सम्पर्क विभाग, उत्तराखण्ड।
2. सांख्यिकीय डायरी, 2015–16, रूद्रप्रयाग।
3. भट्ट कृष्ण, मध्य हिमालय की महिलाओं का सामाजिक–आर्थिक जीवन, ईस्टर्न बुक लिंक्स, जवाहर नगर, दिल्ली।
4. कुमार प्रमोद, 2005, ग्रामीण गढ़वाल में सामाजिक–आर्थिक कारकों का स्वास्थ्य दशाओं पर प्रभाव, हे0 न0 ब0 (ग0वि0) श्रीनगर गढ़वाल।

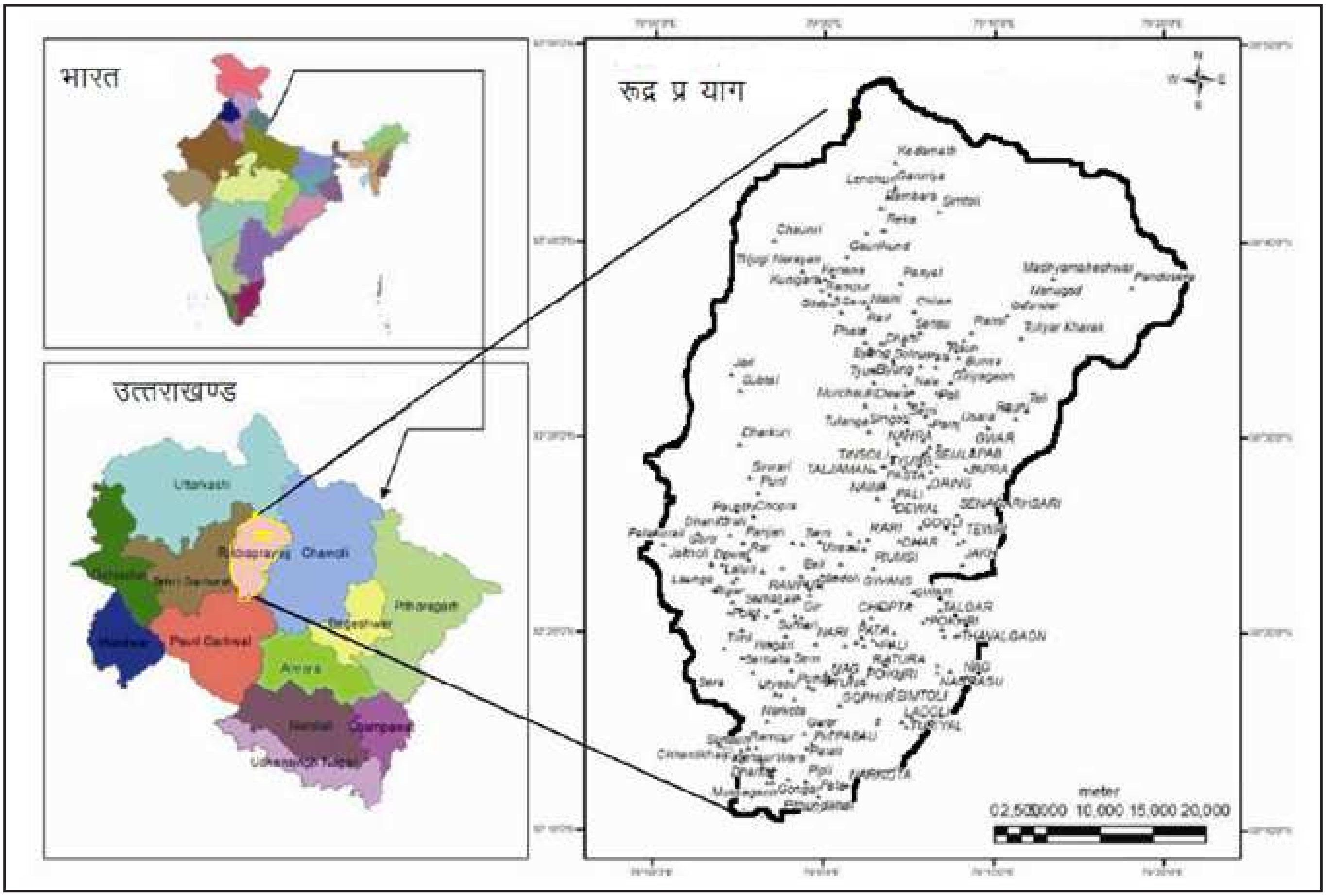

श्रोत– www.ucost,in

सारणी-1

जनपद रूद्रप्रयाग में न्यायपंचायतवार प्रमुख सामाजिक-आर्थिक मदों के संकेतक

क्र.सं.	न्यायपंचायत	जनसंख्या घनत्व	लिंगानुपात	साक्षरता दर	कृषि में लगी जनसंख्या का प्रतिशत	पारिवारिक उद्योगका प्रतिशत	अन्य उद्योग का प्रतिशत
1	उच्छाढुंगी	127	1125	81.6	82.6	2.7	9.6
2	भीरी	142	1074	81.5	69.2	6.1	19.5
3	चन्द्रापुरी	151	1074	81.4	78.8	1.0	19.0
4	अगस्त्यमुनि	149	1097	81.8	72.4	1.3	20.1
5	चौपता	115	1187	81.1	80.5	1.2	15.4
6	मयकोटी	113	1124	83.6	62.1	3.8	26.4
7	सतेराखाल	74	1199	82.6	80.6	.85	17.1
8	सुमेरपुर	115	1214	80.1	74.7	1.1	22.9
9	चोपड़ा	88	1194	80.5	80.1	2.2	16.7
10	पीपली	73	1248	73.0	67.5	9.7	13.5
11	पोडीखाल	73	1225	81.1	70.6	.87	26.8
12	सारी	109	1190	83.3	79.6	.99	18.3
13	मरोड़ा	96	1177	83.9	62.6	2.9	28.9
14	बजीरा	205	1199	76.3	81.4	.98	16.5
15	कोटबांगर	124	1147	75.9	93.3	.30	5.9
16	कण्डाली	125	1128	76.3	81.8	1.1	16.7
17	डांगीभरदार	141	1264	77.7	82.2	.36	17.1
18	स्यूरबांगर	88	1070	80.7	83.1	.56	13.3
19	जवाडी	97	1127	76.7	70.1	.40	27.8
20	पांजणा	112	1148	75.4	84.3	2.0	12.7
21	सौराखाल	103	1162	75.5	73.2	.96	11.8
22	बष्टाबडमा	122	1191	80.9	83.1	1.08	12.2
23	ऊखीमठ	162	1070	83.5	74.4	.75	23.9
24	मनसूना	114	1101	80.8	86.0	.98	12.4
25	ल्वारा	90	1039	80.8	71.4	3.2	18.1
26	फाटा	111	947	85.5	83.7	.58	14.5
27	गुप्तकाशी	163	967	86.2	69.9	1.0	29.8

स्रोत-जनगणना ,2011

सारणी-2

जनपद में न्यायपंचायतवार प्रतिचयनित गाँवों में स्वास्थ्य स्थिति का प्रतीकात्मक अध्ययन

क्र.सं.	न्यायपंचायत	गाँव	स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं का प्रतिशत	घर में प्रसव का प्रति-शत	स्वास्थ्य परव्यय (1000 रु0 प्रतिमाह सेकम) प्रतिशत	रोग निदान के हेतु साधन			
						सरकारी अस्पताल	निजी अस्पताल	स्थानीय पूजन	अन्य
1	उच्छाढ़ुंगी	कण्डारा	30	60	80	50	20	20	10
2	भीरी	भीरी	20	40	60	50	30	20	-
3	चन्द्रापुरी	डालसिंगी	30	50	70	50	30	20	-
4	अगस्त्यमुनि	बुटोलगाँव	20	40	70	50	30	20	-
5	चौपता	क्यूड़ी	40	40	70	40	30	30	-
6	मयकोटी	डांगी	30	40	60	40	30	30	-
7	सतेराखाल	सान्दर	40	50	80	40	40	20	-
8	सुमेरपुर	रतुड़ा	40	50	70	40	20	30	10
9	चोपड़ा	पाली- जयखण्डा	30	40	80	40	30	20	10
10	पीपली	पीपली	50	60	70	40	10	30	20
11	पोडीखाल	रामपुर	40	50	70	40	20	30	10
12	सारी	सारी	30	40	80	40	20	30	10
13	मरोड़ा	नगरासू	20	40	70	40	30	20	10
14	ब्जीरा	कपणिया	40	60	80	40	10	30	20
15	कोटबांगर	खलियाण	50	60	80	40	10	40	10
16	कण्डाली	तैला	40	60	80	40	20	20	20
17	डांगीभरढार	सुमाड़ी	40	60	80	40	20	30	10
18	स्यूरबांगर	स्यूर	30	50	80	40	20	30	10
19	जवाडी	जवाड़ी	40	60	70	50	20	20	10
20	पांजणा	धारकोट	40	50	80	40	20	30	10
21	सौराखाल	सौराखाल	40	60	70	50	20	20	10
22	बष्टाबडमा	जखोली बडमा	30	50	80	40	20	30	10
23	ऊखीमठ	मक्कू	20	40	70	50	30	20	-
24	मनसूना	मनसूना	30	40	80	50	20	20	10
25	ल्वारा	ल्वारा	30	40	70	50	20	20	10
26	फाटा	मैखण्डा	20	40	80	40	20	30	10
27	गुप्तकाशी	खुमेरा	10	40	70	50	30	20	10

स्त्रोत- स्वयं सर्वेक्षण

****

सागर जिले में सिंचाई का कृषि उत्पादकता पर प्रभाव

भावना पटेल *

प्रस्तावना – आधुनिक कृषि विकास में सिंचाई की आवश्यकता अनेक कारणों द्वारा निर्धारित होती है। जल के अभाव में अच्छी पैदावार होने की कल्पना नहीं की जा सकती। वर्षा की अनिश्चितता, वर्षा का असमान वितरण, सीमित वर्षा, धरातल की बनावट, मिट्टी की प्रकृति आदि सिंचाई की महत्ता को बढ़ाते हैं। सिंचाई का कृषि उत्पादन पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। वर्तमान में कृषि विकास हेतु आधुनिक कृषिगत नवाचारों को अपनाया जा रहा है, इन आधुनिक तकनीकों (उन्नत बीज, रासायनिक खाद, उर्वरक, कीटनाशक आदि) का अधिकतम लाभ सिंचाई सुविधाओं के साथ ही लिया जा सकता है।

कृषि विकास का सीधा आकलन कृषि उत्पादकता से लिया जाता है। सागर जिले में सिंचाई सुविधाओं के विस्तार का कृषि उत्पादकता पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन इस शोध पत्र के माध्यम से किया जा रहा है। इस शोध पत्र में सागर जिले 1990-91 से 2013-14 की अवधि में सिंचाई सुविधाओं तथा कृषि उत्पादन में आए परिवर्तन को दिखाया गया है।

अध्ययन क्षेत्र – सागर जिला मध्यप्रदेश के उत्तर-मध्य भाग में स्थित है। यह 23°10' और 24°27' उत्तर अक्षांश और 78°14' और 79°21' पूर्व रेखांश के बीच स्थित है। इस प्रकार वास्तव में यह देश के मध्य भाग में स्थित है। इस जिले के दक्षिणी भाग से कर्क रेखा गुजरती है।

इस जिले का कुल क्षेत्रफल 10239 वर्ग किलोमीटर है और इसका आकार स्थल रूप में एक त्रिभुज की तरह है जिसका शीर्ष बिन्दु दक्षिण में है और आधार उत्तर में। जिले का अधिकतम विस्तार दक्षिण-पूर्व से उत्तर-पश्चिम दिशा की ओर है और वह लगभग 105 मील (168.79 किलोमीटर) है, जबकि त्रिभुज के आधार की लंबाई 75 मील (120.70 किलोमीटर) है।

इस जिले की उत्तरी सीमा से लगा हुआ उत्तर प्रदेश का ललितपुर जिला, दक्षिणी सीमा पर नरसिंहपुर और रायसेन जिले, पश्चिमी सीमा पर विदिशा जिला और पूर्वी सीमा पर दमोह जिला है। उत्तर-पूर्व और उत्तर-पश्चिम की ओर यह जिला क्रमश: छतरपुर और अशोकनगर जिले से लगा हुआ है।

अध्ययन का उद्देश्य – सागर जिले में सिंचाई का कृषि उत्पादकता पर प्रभाव के लिए अध्ययन एवं विकास पर सिंचाई के प्रभावों का अध्ययन-

1. वर्ष 1990-91 से 2013-14 की अवधि में जिले में सिंचाई सुविधाओं में विस्तार को जानना।
2. इसी अवधि में सिंचित क्षेत्र में परिवर्तन को जानना।
3. सिंचाई का विभिन्न फसलों के उत्पादन एवं उत्पादकता पर प्रभाव को जानना।
4. जिले में सिंचाई का शस्य प्रतिरूप पर प्रभाव देखना।
5. सिंचाई का कृषि विकास पर पड़ने वाले प्रभावों को जानना।

विधि तन्त्र – प्रस्तुत शोध पत्र हेतु द्वितीयक आँकड़ों का प्रयोग किया गया है। वर्ष 1990-91 से वर्ष 2013-14 के आँकड़ों का संकलन जिला सांख्यिकीय पुस्तिका के माध्यम से किया गया है। आँकड़ों को प्रदर्शित करने के लिए विभिन्न मानचित्रण तकनीक का उपयोग किया गया है, ताकि तुलनात्मक अध्ययन को सरलता से समझा जा सके तथा आँकड़ों को प्रभावपूर्ण तरीके से प्रस्तुत किया जा सके।

सागर जिले में विभिन्न सिंचाई साधनों का उपयोग – कृषि विकास के लिए जल एक प्रमुख निर्धारक तत्व है। वर्तमान में आधुनिक कृषि उत्पादों के प्रयोग से सिंचित भूमि लगातार बढ़ रही है। सिंचाई सुविधाओं के विकास के साथ-साथ कृषि में नई-नई तकनीकों का अनुप्रयोग संभव हुआ है। सागर जिले में विभिन्न साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्र को तालिका क्र.1 द्वारा प्रदर्शित किया जा रहा है।

तालिका क्र. 1 व ग्राफ (देखे आगे पृष्ठ पर)

वर्तमान में सागर जिले में 334129 हेक्टेयर क्षेत्र सिंचित है। जिले में सर्वाधिक सिंचित क्षेत्र कुओं के अन्तर्गत 152360 हेक्टेयर है, जो कुल सिंचित क्षेत्र का 45.60 प्रतिशत है। इसके बाद नलकूप द्वारा 85823 हेक्टेयर (25.69 प्रतिशत), नहरों से 11375 हेक्टेयर (3.40 प्रतिशत) तथा तालाब द्वारा 5382 हेक्टेयर (1.61 प्रतिशत) क्षेत्र सिंचित है। अन्य स्त्रोत जैसे नदी, नाले आदि द्वारा 79189 हेक्टेयर क्षेत्र सिंचित है, जो कुल सिंचित क्षेत्र का 23.70 प्रतिशत है।

विगत कुछ वर्षो से सागर जिले में कृषि नवाचारों का उपयोग बढ़ा है, कृषि नवाचारों के साथ-साथ सिंचाई सुविधाओं में भी निरन्तर वृद्धि हुई है तथा जिले में सिंचित क्षेत्र में भी वृद्धि हुई है। वर्ष 1990-91 में सागर जिले में कुल 74943 हेक्टेयर क्षेत्र सिंचित था, जो 2000-01 में बढ़कर 161051 हेक्टेयर, 2010-11 में 241056 हेक्टेयर तथा 2013-14 में बढ़कर 334129 हेक्टेयर हो गया है, इस तरह कुल सिंचित क्षेत्र में 345.85 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई। सागर जिले में कुल सिंचित क्षेत्र में तो परिवर्तन आया ही है, साथ ही विभिन्न साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्र में भी परिवर्तन देखा गया है।

सागर जिले में 1990-91 से 2013-14 के मध्य कुल सिंचित क्षेत्र में 345.85 प्रतिशत वृद्धि हुई। जिले में विभिन्न साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्र में परिवर्तन हुआ। जिले में 1990-91 में नहरों द्वारा सिंचित क्षेत्र 7699 हेक्टेयर था, जो 2013-14 में बढ़कर 11375 हेक्टेयर हो गया। इस प्रकार 1990-91 से 2013-14 के बीच नहरों द्वारा सिंचित क्षेत्र में 47.75 प्रतिशत वृद्धि हुई। तालाबों द्वारा 1990-91 में 1086 हेक्टेयर क्षेत्र सिंचित था, जो 2013-14 में 5382 हेक्टेयर हो गया। इस प्रकार तालाब द्वारा सिंचित क्षेत्र में 395.58 प्रतिशत वृद्धि देखी गई।

* शोधार्थी (भूगोल) रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

जिले में विभिन्न साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्र में सर्वाधिक वृद्धि, कुएँ, नलकूप एवं अन्य साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्र में हुई है। 1990-91 से 2013-14 की अवधि में कुँओं द्वारा सिंचित क्षेत्र में 372.24 प्रतिशत, नलकूपों द्वारा सिंचित क्षेत्र में 6338.33 प्रतिशत तथा अन्य साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्र में 143.19 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस प्रकार सागर जिले में सिंचाई के विभिन्न साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्र में निरन्तर विस्तार होता गया है, जो कृषि नवाचार की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

सिंचाई का कृषि उत्पादकता पर प्रभाव - सिंचाई प्रत्यक्ष रूप से फसलों के उत्पादन को प्रभावित करती है। हमारे देश में जहाँ आज भी कृषि मानसून पर निर्भर है, ऐसे में सिंचाई की आवश्यकता एवं महत्ता और भी बढ़ जाती है। जिले में सिंचाई सुविधाओं में वृद्धि के कारण कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता में परिवर्तन को तालिका क्र. 2 द्वारा समझा जा सकता है।

तालिका क्र.2 (देखे आगे पृष्ठ पर)

तालिकानुसार सिंचाई सुविधाओं के कारण कुछ फसलों के उत्पादन एवं उपजदर में वृद्धि हुई है। रबी समूह की प्रमुख फसल गेहूँ के उत्पादन में वर्ष 1990-91 से 2013-14 की अवधि में 116.89 प्रतिशत की वृद्धि तथा उपज दर में 4.97 प्रतिशत की वृद्धि देखी गयी है। वहीं रबी समूह की दूसरी फसल चना के उत्पादन एवं उपजदर में भी हुई है, यह वृद्धि क्रमश: 114.22 प्रतिशत तथा 60.60 प्रतिशत रही है। इसके अलावा जिले में इसी अवधि में अलसी के उत्पादन में 225.13 प्रतिशत तथा उपजदर में 94.26 प्रतिशत की वृद्धि एवं सोयाबीन के उत्पादन में 142.03 प्रतिशत तथा उपजदर में 62.48 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

जिले में इसी अवधि में चावल, ज्वार, मूँगफली तथा तिल जैसी कुछ फसलों के उत्पादन में तो कमी आई है, किन्तु इनकी उपजदर में वृद्धि हुई है। इनके उत्पादन में कमी का प्रमुख कारण इनके फसल क्षेत्र में कमी का होना है। चावल की उपजदर में 20.64 प्रतिशत, ज्वार की उपज दर में 47.59 प्रतिशत, मूँगफली की उपजदर में 65.44 प्रतिशत तथा तिल की उपजदर में 206.56 प्रतिशत की वृद्धि हुइ है।

इस अवधि में जिले में कुछ फसलें ऐसी भी है, जिनके उत्पादन में कमी देखी गयी है, जैसे- मक्का के उत्पादन में 44.08 प्रतिशत तथा तुअर के उत्पादन में 84.66 प्रतिशत की कमी आई है। इसमें कमी का कारण कृषकों में सोयाबीन के प्रति रूझान का बढ़ना है तथा दूसरी फसलों के प्रति उदासीनता होना है।

निष्कर्ष रूप में यह स्पष्ट होता है कि 1990-91 से 2013-14 की अवधि में जिले में सिंचाई सुविधाओं में काफी विकास हुआ है। इन सिंचाई सुविधाओं का प्रत्यक्ष प्रभाव जिले की कृषि पर देखा गया। जिले में कई फसलों के उत्पादन एवं उपजदर में वृद्धि हुई है। साथ ही शस्य प्रतिरूप में भी परिवर्तन आया है। जिले में खाद्यान्न फसलों के उत्पादन के साथ-साथ व्यापारिक फसलों का क्षेत्र एवं उत्पादन बढ़ा है। सिंचाई के कारण कृषक के सामाजिक-आर्थिक जीवन स्तर में गुणात्मक रूप से वृद्धि हुई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गजेटियर (1970) - भारतीय गजेटियर, सागर (म.प्र.)
2. पटेल, भावना (2009) - कृषि पर हरित क्रांति का प्रभाव - सागर जिले (म.प्र.) का अध्ययन, अप्रकाशित लघु शोध प्रबंध, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)
3. गर्ग, दीपाली (2009) - सामाजिक आर्थिक नियामक एवं कृषि विकास - सागर जिले (म.प्र.) का अध्ययन, अप्रकाशित लघु शोध प्रबंध, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)
4. गर्ग, वैशाली (2007) - सागर जिले में सिंचाई सुविधाओं का विकास एवं कृषि पर प्रभाव, अप्रकाशित लघु शोध प्रबंध, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर।
5. Bhargava, Archana (1985) - Resources planing for Economic Development of Sagar Division, Unpublished Ph.D. Thesis of Dr. H.S. Gour University, Sagar (M.P.)
6. Vishwakarma, D.D. (2003) - Adoption of Agricultural Development Measures, Northern Book Center, New Delhi.
7. Jain, C.K. (1992) - Adoption Modern form Technology in Madhya Pradesh in Mohammed N. (ed.) New Dimensions in Agricultural Geography, Concept Publishing Company New Delhi, Vol.6, pp.163-184.

तालिका क्र. 1

सागर जिला – विभिन्न साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्र में परिवर्तन 1990–91 से 2013–2014

(क्षेत्र हेक्टेयर में)

सिंचाई साधन	1990–91		2000–01		2010–11		2013–14		वृद्धि	
	क्षेत्र	प्रति.	क्षेत्र	प्रति.	क्षेत्र	प्रति.	क्षेत्र	प्रति.	क्षेत्र	प्रति.
नहरें	7699	10.27	8657	5.38	8166	3.39	11375	3.40	3676	47.75
तालाब	1086	1.45	1118	0.69	2645	1.09	5382	1.61	4296	395.58
कुएँ	32263	43.05	75633	46.79	116988	48.53	152360	45.60	120097	372.24
नलकूप	1333	1.78	19633	12.20	36962	15.34	85823	25.69	84490	6338.33
अन्य स्त्रोत	32562	43.45	56286	34.94	76295	31.65	79189	23.70	46627	143.19
कुल	**74943**	**100.00**	**161051**	**100.00**	**241056**	**100.00**	**334129**	**100.00**	**259186**	**345.85**

स्रोत – जिला सांख्यिकीय पुस्तिका, सागर।

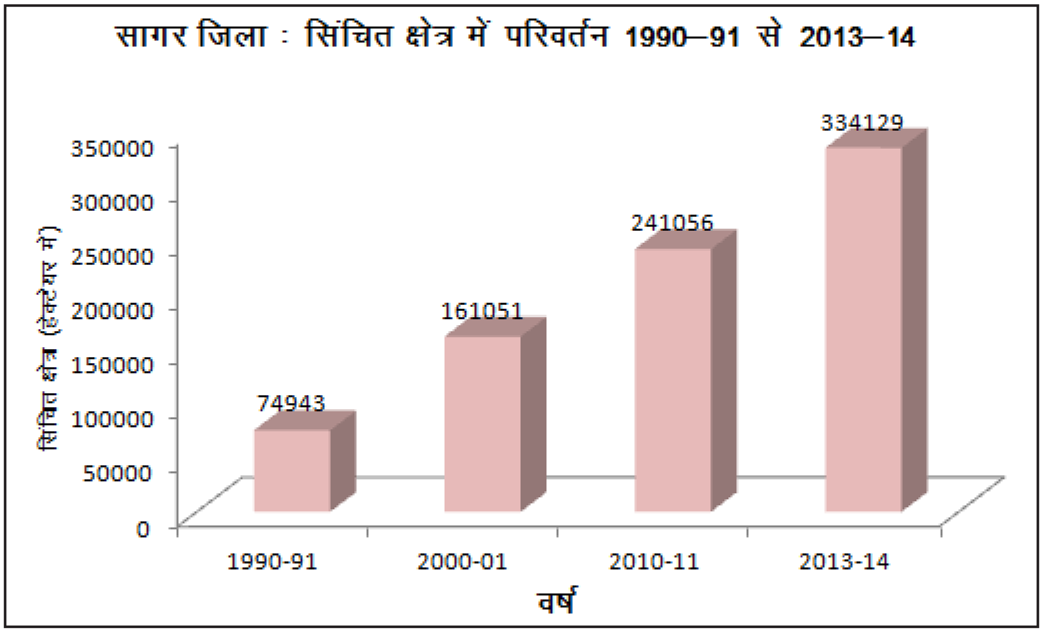

तालिका क्र.2

सागर जिला : प्रमुख फसलों का उत्पादन 1990–91 से 2013–14

(हजार मी. टन में)

क्र.	फसलें	उत्पादन (हजार मी.टन. में)			उपज दर(कि.ग्रा./हेक्ट.)		
		1990–91	2013–14	वृद्धि (प्रति.)	1990–91	2013–14	वृद्धि (प्रति.)
1	गेहूँ	239.4	519.25	116.89	1848	1940	4.97
2	चावल	9.6	6.01	-37.39	1061	1280	20.64
3	ज्वार	14.7	0.69	-95.30	996	1470	47.59
4	मक्का	4.9	2.74	-44.08	1100	1490	35.45
5	चना	60.3	129.18	114.22	660	1060	60.60
6	तुअर	2.4	3.68	-84.66	738	1220	65.31
7	मूँगफली	4.1	0.75	-98.17	683	1130	65.44
8	अलसी	7.4	24.06	225.13	314	610	94.26
9	तिल	0.3	0.16	-46.66	137	420	206.56
10	सोयाबीन	60.9	147.40	142.03	917	1490	62.48

स्त्रोत – जिला सांख्यिकीय पुस्तिका, सागर

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

मन्दसौर जिले में कृषि व्यवस्था में बदलते प्रतिरूप

डॉ. श्यामसुन्दर कुमावत *

शोध सारांश– कृषि का विकास कम से कम 10,000 वर्ष पूर्व हो चुका था। तब से अब तक बहुत से महत्वपूर्ण परिवर्तन हो चुके हैं। जोतों का आकार भारत में कृषि की एक गम्भीर समस्या है। कृषि भूमि अत्यन्त छोटे–छोटे टुकड़ों में बंट गई है, कि उनमें कृषि यंत्र ठीक तरह से कार्य भी नहीं कर पाते हैं, जिससे उनको जोतने और बीज बोने में बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। इतना ही नहीं अनेक स्थानों पर एक ही किसान के पास भूमि के कई छोटे–छोटे टुकडे ़हैं, जो एक–दूसरे से बहुत दूर–दूर हैं। इन भूखण्डों पर खेती एवं इनकी देखभाल बहुत मंहगी हो जाती है। फलतः भारतीय खेती अव्यवहारिक, अव्यवस्थित तथा अलाभदायक हो गई है।

प्रस्तावना – कृषि का विकास कम से कम 10,000 वर्ष पूर्व हो चुका था। तब से लेकर अब तक बहुत से महत्वपूर्ण परिवर्तन हो चुके हैं। कृषि भूमि को खोदकर अथवा जोतकर और बीज बोकर व्यवस्थित रूप से अनाज उत्पन्न करने की प्रक्रिया को कृषि अथवा खेती कहते हैं। मनुष्य ने पहले–पहल कब कहाँ और कैसे खेती करना प्रारंभ किया इसका उत्तर उपलब्ध नहीं है। सभी देशों के इतिहास में खेती के विषय में कुछ न कुछ कहा गया है। कुछ भूमि अब भी ऐसी है, जहाँ खेती नहीं होती है।

जोत का आकार – कृषि के आकार में परिवर्तन होने से उत्पादन पर प्रभाव पड़ा है। जिस प्रकार फर्म में खेती करते है वेसी खेती छोटे–छोटे टुकड़ों में नहीं हो पाती है, क्योंकि कृषि जोत के आकार में दिनों–दिन कमी आती जा रही है, जिसमें उत्पादन में कुछ हद तक वृद्धि हुई है, परन्तु आधुनिक कृषि में रासायनिक कीटनाशक, जहरीली दवाईयों ने धरती को बंजर बनाने एवं कृषि जमीन को नुकसान पहुँचाना आरंभ कर दिया है, जहाँ कृषि के मित्र कीट भी कीटनाशकों का शिकार होने लगे हैं, यही कारण है कि जोत के आकार में परिवर्तन होने से आज कृषि व्यवसाय में नकारात्मक पर्यावरणीय प्रभाव उत्पन्न हो गए हैं। कृषि व्यवसाय में प्राचीन युग से आज तक अनेक प्रकार के परिवर्तन हुए हैं। पहले कृषि में जोत हाथों से खोद कर जमीन को जोता जाता था, फिर बैलों के द्वारा हल चलाये जाने जगे। आज की आधुनिक कृषि में कृषि के यंत्रीकरण में बड़ा परिवर्तन हुआ है, परन्तु जनसंख्या वृद्धि ने भूमि के आकार को कम कर दिया है, जिससे कृषि में जोत के आकार मे कमी आई है। इधर कृषि यंत्रीकरण का विस्तार हुआ, तो भूमि का आकार कम होता जा रहा है, क्योंकि जनसख्ंया वृद्धि इसका मुख्य कारण है। भारत में कृषि की गम्भीर समस्या यह है, कि कृषि भूमि अत्यन्त छोटे–छोटे टुकड़ों में बँटी है कि कृषियंत्र कृषि भूमि पर ठीक तरह से कार्य भी नहीं सकते हैं, उनको जोतने और बीज डालने में बड़ी कठिनाई का सामना करना पडता है। इतना ही नहीं एक ही किसान के पास भूमि के कई छोटे–छोटे टुकड़े हैं, जो एक–दूसरे से बहुत दूर–दूर हैं। इन टुकड़ों में कृषि एवं अन्य व्यवस्थाएँ करना बहुत खर्चीला हो जाता है, फलतः भारतीय खेती अव्यवहारिक, अव्यवस्थित तथा अलाभदायक हो गयी है।

उप विभाजन एवं अपखण्डन –

उप विभाजन – कृषि भूमि के उप विभाजन से तात्पर्य यह है, कि भूमि का एक टुकड़ा जिस पर एक व्यक्ति का स्वामित्व है, किसी कारण से दो या अधिक व्यक्तियों में बांट दिया गया है। उदाहरण– एक परिवार के मुखिया के पास भूमि का एक चार एकड़ का टुकडा है। उसकी मृत्यु हो जाने के बाद वह भूखण्ड मुखिया के चार बच्चों में एक–एक एकड़ बंट जाती है और इस प्रकार एक खण्ड चार एकड से कम हो कर एक एकड़ का टुकड़ा रह जाता है।

अपखण्डन – कई बार ऐसा होता है कि एक परिवार के पास भूमि के चार टुकड़े हैं, जो उपज अथवा स्थिति की दृष्टि से बहुत भिन्न हैं। जब यह भूमि चार संतानों में बंटती है, तो प्रत्येक संतान चारों टुकड़ों में अलग–अलग हिस्सा लेना चाहती है। फलतः वह भूमि 16 भागों मे अपखण्डित हो जाती है और प्रत्येक के हिस्सें में चार बहुत छोटे–छोटे भूखण्ड आते हैं, जो एक–दूसरे से बहुत दूर स्थित होते हैं।

अधिकारिक आकड़ों से संकेत मिलता है, कि देश में परिचालित कृषि जोत का औसत आकार साल 1985–86 में 1.69 हेक्टेयर से घटकर साल 2000–01 में मात्र 1.33 हेक्टेयर रह गया है। इसके साथ ही सीमांत जोत एक हेक्टेयर से कम का अनुपात वर्ष 1985–86 से 57.8 फीसदी से बढ़कर वर्ष 2001–01 में 62.3 प्रतिशत हो गया है। इसके अतिरिक्त लगभग 19 प्रतिशत अन्य जोत छोटे कृषि क्षेत्र की श्रेणी में आते हैं और यह एक से दो हेक्टेयर के बीच है। इस तरह से छोटे व सीमांत जोतों को मिलाकर कुल जोत 81.3 प्रतिशत है। छोटी व सीमांत जोतों में अधिकतर जमीन के छोटे टुकडे ़हो गए हैं, इनमे से कुछ टुकड़ों पर कृषि यंत्र भी ठीक प्रकार से नहीं चलाए जा सकते हैं।

इसलिए भूमि सुधार आज की अनिवार्य आवश्यकता है। जोतों के एकीकरण के सम्बंध में यह ध्यान रखा जाना आवश्यक है कि पजांब में 1950 व 1960 के दशक में जोतों का एकीकरण हुआ था और हरियाणा में भी ऐसा हुआ। **(तालिका व आरेख देखे आगे पृष्ठ पर)**

सीमान्त कृषक – तालिका एवं आरेख के अनुसार मन्दसौर जिले में वर्ष 1995–96 में सीमान्त कृषकों का प्रतिशत 32.44 था तथा क्षेत्रफल 6.58 प्रतिशत था। वर्ष 2000–01 में 37.60 प्रतिशत संख्या तथा 8.94 प्रतिशत क्षेत्रफल था तथा वर्ष 2005–06 में संख्या 43.76 प्रतिशत व 11.95

* अथिति विद्वान (भूगोल) स्वामी विवेकानन्द शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

प्रतिशत क्षेत्रफल था। 2010-11 में कृषक संख्या का 47.58 प्रतिशत तथा क्षेत्रफल 14.72 प्रतिशत है। इस प्रकार से सीमान्त कृषकों की संख्या में 1995-96 से 2010-11 में 15.14 प्रतिशत की वृद्धि हुई, वहीं क्षेत्रफल में 5.37 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। जिले में सीमान्त कृषकों की संख्या में वृद्धि हो रही है तथा क्षेत्रफल में कमी आ रही है।

लघु कृषक एक हेक्टयर से अधिक तथा दो से कम – वर्ष 1995-96 में कृषक संख्या 25.26 प्रतिशत व क्षेत्रफल 13.97 था, वर्ष 2000-01 में संख्या 26.40 व क्षेत्रफल 17.43 प्रतिशत था, वहीं 2005-06 में कृषक संख्या 25.83 प्रतिशत व क्षेत्रफल 19.83 प्रतिशत रहा है। है। 2010-11 में कृषक संख्या 26.74 प्रतिशत तथा क्षेत्रफल 24.06 प्रतिशत है। 1995-96 से 2010-11 में लघु कृषक संख्या में 1.48 प्रतिशत का अन्तर आया है, वहीं क्षेत्रफल 10.09 प्रतिशत का अन्तर रहा है।

अर्द्ध मध्यम दो हेक्टयर से अधिक 4 हेक्टयर से कम – वर्ष 1995-96 में कृषक संख्या 22.59 प्रतिशत, वहीं क्षेत्रफल 24.61 प्रतिशत था, वहीं 2000-01 में कृषक संख्या 20.78 प्रतिशत एवं क्षेत्रफल 26.23 प्रतिशत था। 2005-06 में संख्या 18.98 प्रतिशत व क्षेत्रफल 28.24 प्रतिशत था। 2010-11 में कृषक संख्या 17.21 प्रतिशत तथा क्षेत्रफल 29.05 प्रतिशत है, जिसमें वर्ष 1995-96 से 2010-11 में कृषक संख्या में 5.38 प्रतिशत का अन्तर आया है। अर्द्ध मध्यम कृषकों की कमी हुई है। क्षेत्रफल में 4.44 प्रतिशत का अन्तर रहा है।

मध्यम कृषक 4 हेक्टेयर से अधिक एवं 10 हेक्टेयर से कम – 1995-96 में कृषकों की संख्या 17.03 प्रतिशत व क्षेत्रफल 39.81 प्रतिशत था, वहीं 2000-01 में संख्या 13.46 प्रतिशत व क्षेत्रफल 36.79 प्रतिशत था। वर्ष 2005-06 में कृषक संख्या 10.38 प्रतिशत व क्षेत्रफल 31.21 प्रतिशत था। वर्ष 2010-11 में कृषक संख्या 7.91 प्रतिशत तथा क्षेत्रफल 27.57 प्रतिशत है। मध्यम कृषक वर्ग में कृषक संख्या में 9.12 प्रतिशत की कमी हुई है, वहीं क्षेत्रफल में भी 12.24 प्रतिशत कम हुआ है।

वृहद् कृषक 10 हेक्टयर से अधिक – 1995-96 में कृषक संख्या का प्रतिशत 2.66 रहा है वही क्षेत्रफल 15 प्रतिशत है 2000-01 में संख्या 0.78 व क्षेत्रफल 10.59 प्रतिशत रहा है। वर्ष 2005-06 में कृषक संख्या 0.54 प्रतिशत तथा क्षेत्रफल 8.74 प्रतिशत था। वर्ष 2010-11 में कृषक संख्या 0.54 प्रतिशत तथा क्षेत्रफल 4.57 प्रतिशत है, वहीं वृहद् कृषकों की संख्या में 2.12 प्रतिशत की कमी आई तथा क्षेत्रफल में 10.43 प्रतिशत की कमी हुई है। मन्दसौर जिले में जोतों के आकार में निरन्तर कमी देखी जा सकती है।

सीमांत कृषक – मन्दसौर जिले में कृषि जोतों का आकार के अन्तर्गत सीमान्त कृषकों का प्रतिशत वर्ष 1995-96 में 32.44 रहा तथा क्षेत्रफल 6.58 प्रतिशत रहा। वर्ष 2000-01 में सीमान्त कृषकों का प्रतिशत 37.60 तथा क्षेत्रफल 8.94 प्रतिशत रहा। वर्ष 2005-06 में सीमांत कृषकों का प्रतिशत 43.76 तथा 11.95 क्षेत्रफल प्रतिशत रहा है। वर्ष 2010-11 में सीमांत कृषकों का प्रतिशत 47.58 तथा क्षेत्रफल में 14.72 प्रतिशत रहा। इस प्रकार से सीमान्त कृषकों की संख्या में वर्ष 1995-96 से 2010-11 में 15.14 प्रतिशत की वृद्धि हुई है, वहीं क्षेत्रफल 5.37 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। जिले में सीमान्त कृषकों की संख्या में वृद्धि हो रही है तथा जोत के आकार में कमी आ रही है।

लघु कृषक – वर्ष 1995-96 में लघु कृषक संख्या 25.26 प्रतिशत व क्षेत्रफल 13.97 प्रतिशत रहा। वर्ष 2000-01 में संख्या 26.40 प्रतिशत व क्षेत्रफल 17.43 प्रतिशत रहा। वर्ष 2005-06 में कृषक संख्या 25.83 प्रतिशत व क्षेत्रफल 19.83 प्रतिशत रहा। वर्ष 2010-11 में कृषक संख्या का 26.74 प्रतिशत तथा क्षेत्रफल में 24.06 प्रतिशत है। वर्ष 1995-96 से 2010-11 में लघु कृषक संख्या में 1.48 प्रतिशत का अन्तर परिलक्षित होता है, वहीं क्षेत्रफल में 10.09 प्रतिशत का अन्तर आया है।

अर्द्ध मध्यम कृषक – वर्ष 1995-96 में अर्द्धमध्यम कृषक संख्या 22.59 प्रतिशत व क्षेत्रफल 24.61 प्रतिशत रहा, वहीं 2000-01 में कृषक संख्या 20.78 प्रतिशत तथा क्षेत्रफल 26.23 प्रतिशत रहा। वर्ष 2005-06 में संख्या 18.98 प्रतिशत व क्षेत्रफल 28.24 प्रतिशत रहा। वर्ष 2010-11 में कृषक संख्या 17.21 प्रतिशत तथा क्षेत्रफल 29.05 प्रतिशत है। वर्ष 1995-96 से 2010-11 के मध्य में अर्द्ध मध्यम कृषक संख्या में 5.38 प्रतिशत का अन्तर आया है तथा क्षेत्रफल में 4.44 प्रतिशत का अन्तर रहा है।

मध्यम कृषक – वर्ष 1995-96 में मध्यम कृषकों की संख्या का 17.03 प्रतिशत व क्षेत्रफल 39.81 प्रतिशत रहा। वर्ष 2000-01 में संख्या 13.46 प्रतिशत व क्षेत्रफल 36.79 प्रतिशत रहा। वर्ष 2005-06 में संख्या 10.38 प्रतिशत व क्षेत्रफल 31.21 प्रतिशत रहा। वर्ष 2010-11 में कृषक संख्या 7.91 प्रतिशत तथा क्षेत्रफल 27.57 प्रतिशत है। मध्यम कृषक वर्ग में कृषक संख्या के प्रतिशत में 9.12 की कमी हुई है, वहीं क्षेत्रफल में 12.24 प्रतिशत कमी आई है।

वृहद कृषक – वर्ष 1995-96 में कृषक संख्या का प्रतिशत 2.66 रहा है, वहीं क्षेत्रफल 15 प्रतिशत है। वर्ष 2000-01 में कृषक संख्या 0.78 व क्षेत्रफल 10.59 प्रतिशत रहा है।

वर्ष 2005-06 में कृषक संख्या 0.54 प्रतिशत तथा क्षेत्रफल 8.74 प्रतिशत है। वर्ष 2010-11 में कृषक संख्या 0.54 प्रतिशत तथा क्षेत्रफल 4.57 प्रतिशत है। वृहद् कृषकों की संख्या में 2.12 प्रतिशत की कमी आई तथा क्षेत्रफल में 10.43 प्रतिशत की कमी हुई है। मन्दसौर जिले में जोतों के आकार में निरन्तर कमी देखी जा सकती है। वर्ष 1995-96 से 2010-11 तक 15 वर्षों की तुलना की जाए तो इससे यह स्पष्ट होता है, कि सीमान्त कृषकों में 15.14 प्रतिशत की वृद्धि हुई, वहीं क्षेत्रफल मे 8.14 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इसी प्रकार से वृहद कृषक संख्या में निरन्तर कमी आती जा रही है। वर्ष 1995-96 से 2010-11 के अन्तराल में वृहद् कृषक संख्या में 2.12 प्रतिशत की कमी आई है, वहीं क्षेत्रफल में 10.43 प्रतिशत की कमी हुई है। धीरे-धीरे ये वृहद् किसान भी सीमान्त कृषक की श्रेणी में सम्मिलित हो जाएंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा विवेक (2009) - 'कृषि प्रबन्ध', प्रकाशक अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, 4831/24 प्रहलाद गली अंसारी रोड़, दरियागंज, नई दिल्ली, पेज. न. 46, 5
2. जिला सांख्यिकी विभाग मन्दसौर साख्यिंकी पुस्तिका 2011.
3. Gazetteer of India - Mandsaur page- 01.
4. त्रिवेदी चन्द्रभूषण (1979) - 'दशपुर', मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, पृष्ठ 32.

मन्दसौर जिला : कृषि जोत का आकार प्रतिशत में (1995-2011)

वर्ष	सीमान्त कृषक 1 हेक्ट. से कम		लघु कृषक 1 हेक्ट. से अधिक 2 से कम		अर्द्ध मध्यम 2 हेक्ट.से अधिक 4 से कम		मध्यम कृषक 4 से अधिक 10 हेक्ट. से कम		वृहद् कृषक 10 हेक्ट. से अधिक		कुल	
	संख्या	क्षेत्र.	संख्या	क्षेत्र	संख्या	क्षेत्र.	संख्या	क्षेत्र.	संख्या	क्षेत्र.	संख्या	क्षेत्र.
1995-1996	32.44	6.58	25.26	13.97	22.59	24.61	17.03	39.81	2.66	15.00	100%	100%
2000-2001	37.60	8.94	26.40	17.43	20.78	26.23	13.46	36.79	0.78	10.59	100%	100%
2005-2006	43.76	11.95	25.83	19.83	18.98	28.24	10.38	31.21	0.54	8.74	100%	100%
2010-2011	47.58	14.72	26.74	24.06	17.21	29.05	7.91	27.57	0.54	4.57	100%	100%
1995-1996 2010-2011 परिवर्तन	+15.14	+8.14	+1.48	+10.09	-5.38	-4.44	-9.12	-12.24	-2.12	-10.43		

स्रोत - जिला साख्यिंकी विभाग, मन्दसौर (म.प्र.)।

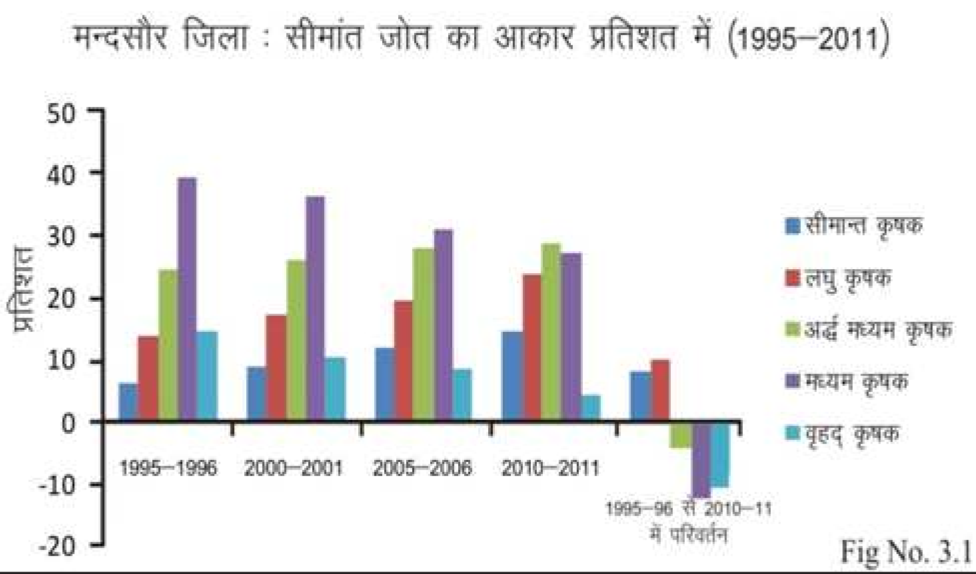

Fig No. 3.1

****

भील जनजाति में सामाजिक -आर्थिक समस्याएँ

त्रिभुवन सिंह झाला *

प्रस्तावना - जनजाति या आदिम जाति जैसे नामों से जाने वाली जनसमुदाय स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात दिये गये तमाम संवैधानिक प्रावधानों के बाद भी आज समाज में अपनी मजबूत स्थिति बनाये रख पाने में सफल नहीं रहीं है। यह बात अलग है कि भारत के दुर्गम क्षेत्रों में आज भी ऐसे मानव समूह है जो हजारो वर्षो से शेष विश्व की सभ्यता से दूर अपनी विशिष्ट सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना की पहचान बनाये हुए है। ये मानव समूह बीहड़ जंगलों, मरूस्थलियों, ऊचे पर्वत शिखरों और अनुर्वर पठारो के उन अंचलों में निवास करते है जिन्हें आधुनिक समाज की अर्थदृष्टि अनुउत्पादक मानती है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में जनजातियों का महत्वपूर्ण स्थान है। जनजातीय समूह देश के सबसे पिछडे हुए वर्ग में रखे जा सकते है।

भारत में जनजाति जनसंख्या - वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार देश की कुल आबादी में आदिवासियों की संख्या 8.61: है जो लगभग 104.28 मिलियन् है और देश के क्षेत्रफल का लगभग 15: भाग पर स्थापित है। तथ्य यह है कि आदिवासी लोगों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है जिससे उनकी सामाजिक, आर्थिक एवं कमजोर सहभागिता के संकेतकों से समझा जा सके कि क्या बिजली और पीने वाला पानी अथवा कृषि योग्य भूमि का उपयोग, मात्र एवं शिशु मृत्यु दर में आदिवासी समुदाय व सामान्य जनसंख्या मे काफी अंतराल है। आदिवासी जनसंख्या की 52 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे है और कारण क्या है कि 45 प्रतिशत आदिवासियों के पास यातायात एवं दूर संचार के रूप में आर्थिक संपत्तियाँ उपयोग के लिए नहीं हैं।

भील जनजाति - भील जनजाति राजस्थान की प्रमुख प्राचीन जनजाति है। जिस प्रकार उत्तरी राजस्थान में राजपूतों के उदय से पहले मीणों के राज्य रहे, उसी प्रकार दक्षिणी राजस्थान और हाड़ौती प्रदेश में भीलों के अनेक छोटे-छोटे राज्य रहे है। प्राचीन संस्कृत साहित्य में भील शब्द लगभग सभी बनवासी जातियों जैसे निशाद, शबर आदि के लिए समानार्थी रूप से प्रयुक्त हुआ है। इस प्रकार भील संज्ञा प्राचीन संस्कृति साहित्य में उस वर्ग विशेष के लिए प्रयुक्त की जाती थी जो धनुष-बाण से शिकार करके अपना पेट-पालन करते थे यह देखा गया है कि इस स्थिति को परवर्ती साहित्य में भी लगभग ज्यों का त्यों बरकरार रखा गया। मेवाड़ बागड़ और गोवाड़ प्रदेश में चार विभिन्न जनजातियां मीणा, भील, डामोर और गरासिया निवास करती है पर पत्रकार और लेखक इन चारों के लिए केवल भील संज्ञा ही प्रयुक्त करते हैं। आज भी सामान्यत: लोगों की यही धारणा है कि उपरोक्त समूचे प्रदेश में केवल भील जनजाति ही निवासी करती है।

विद्वानों के अनुसार भील शब्द की उत्पत्ति द्रविड़ शब्द 'बील' से हुई है जिसका अर्थ है धनुष। धनुष-बाण भीलों का मुख्य शस्त्र था, अतएव ये लोग भील कहलाने लगे। एक दूसरे मत के अनुसार भील भारत की प्राचीनतम जनजाति है। इसकी गणना पुरातन काल में राजवंशों में की जाती थी। जो विहिल नाम से जाना जाता था। इस वंश का शासन पहाड़ी इलाकों में था। आज भी ये लोग मुख्यत: पहाड़ी इलाकों में रहते हैं। इस संदर्भ में एक कहावत भी प्रचलित है कि संसार में केवल साढ़े तीन राजा ही प्रसिद्ध है इन्द्र राजा, राजा और भील राजा तथा आधे में बींद (दूल्हा राजा)। मेवाड़ की स्थापना के बाद से ही मेवाड़ के महाराणाओं को भील जनजातियों को निरंतर सहयोग मिलता रहा। महाराणा प्रताप इन्हीं लोगों के सहयोग से वर्षो तक मुगल फौजों से लोहा लेते रहे थे। यही कारण है कि उनकी सेवाओं के सम्मान-स्वरूप मेवाड़ के राज्य चिन्ह में एक ओर राजपूत और दूसरी ओर भील दर्शाया जाता था। आमेर के कछावा राजाओं की भांति मेवाड़ के महाराणा भी भीलों के हाथ के अंगूठे के रक्त से अपना राजतिलक करवाते रहे थे।

अध्ययन विधि - प्रस्तुत अध्ययन राजस्थान राज्य के उदयपुर संभाग के राजसमन्द जिले की कुम्भलगढ़ तहसील का किया गया है। इस हेतु निम्नलिखित अध्ययन विधि लागू की गई है।

शोध रिक्तता - भारत की प्रमुख जनजातियों का विभिन्न् परिप्रेक्ष्य में अध्ययन किया गया है। समाज वैज्ञानिकों, मानवशास्त्रीयों और समाजशास्त्रीयों ने अपने-अपने अध्ययन में जनजातियों तक सरकार की योजनाएँ एवं सुविधाओं के उपागम के स्तर को बताया है। सभी अध्ययन जनजातीय क्षैत्रों (टीएसपी) से सम्बन्धित है। वे जनजाति के लोग जो जनजातीय क्षैत्रों (टीएसपी) से अलग निवास कर रहें हों उन पर नवोन्मेशी अध्ययन न होने की रिक्तता स्पष्ट होती है। कुम्भलगढ़ पंचायत समिति के चार राजस्व ग्रामों में वे भील जनजाति के लोग निवास करतें है जिन पर समाजशास्त्र से सम्बन्धित लिखित शोध अध्ययन नहीं उपलब्ध है। अत: प्रस्तुत अध्ययन इस रिक्तता को पूर्ण करने में समर्थ है।

अध्ययन के उद्देश्य - प्रस्तुत शोध के लिए निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए गए।

- जनजातियों का अध्ययन करना जनजाति में भी भील जनजाति का अध्ययन करना।
- भील जनजाति की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति को जानना।

प्राकल्पनाएँ

प्रस्तुत अध्ययन में निम्न प्राकल्पनाओं का निर्माण किया गया है -

- बेरोजगारी के कारण जनजाति व्यक्ति पलायन को मजबूर है।
- विकास योजनाओं का समुचित लाभ नहीं मिल पा रहा है।

उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि से अनुसंधान कार्य हेतु राजसमन्द जिले की कुम्भलगढ़ पंचायत समिति के चार राजस्व ग्रामों की भील जनजाति के

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

लोगों का अध्ययन किया गया है जिसमें 224 उत्तरदाताओं का चयन किया गया है। प्रत्येक राजस्व ग्राम से 25 पुरूष एवं 25 भील जनजाति की महिलाओं का अध्ययन किया गया है और कुल चार ग्रामों से 200 उत्तरदाताओं में से 100 पुरूष एवं 100 भील जनजाति महिलाओं का चयन किया गया है। वैयक्तित अध्ययन हेतु प्रत्येक ग्राम से 3 भील जनजाति के पुरूष एवं 3 महिलाओं का चयन करते हुए कुल 4 राजस्व ग्रामों से 24 वैयक्तिक अध्ययन किए गए है।

तथ्य संकलन प्रविधि – अनुसंधान संबंधित तथ्य प्राथमिक व द्वितीयक तथ्यों से संकलित किये गए हैं।

प्राथमिक स्त्रोत – प्राथमिक स्त्रोत संकलन के लिए साक्षात्कार अनुसूची प्रविधि का प्रयोग किया गया है। जानकारी प्राप्त करने के लिए अनुसूची का निर्माण कर साक्षात्कार प्रविधि से जानकारी प्राप्त की गयी है।

द्वितीयक स्त्रोत – अनुसंधान विषय से संबंधित द्वितीयक स्त्रोत एवं सामग्री का संग्रहण विभिन्न पुस्तकालयों, दैनिक पत्र–पत्रिकाओं, सामाजिक पंचायतों एवं इंटरनेट पर उपलब्ध सामग्री से किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र – प्रस्तुत अध्ययन राजसमन्द जिले की कुम्भलगढ़ पंचायत समिति के चार राजस्व ग्रामों की भील जनजाति के लोगों का अध्ययन किया गया है।

बेरोजगारी के कारण जनजाति व्यक्ति का पलायन –(चित्र देखे आगे पृष्ठ पर) चित्र के अनुसार कुम्भलगढ़ अध्ययन क्षेत्र से कुल 200 उत्तरदाताओं में से 86 (43 प्रतिशत) उत्तरदाताओं के अनुसार भील जनजाति के लोगों में बेरोजगारी के कारण पलायन बहुत अधिक होता है और 41 (20.5 प्रतिशत) उत्तरदाताओं के अनुसार भील जनजाति के लोगों में बेरोजगारी के कारण पलायन अधिक होता है एवं 44 (22 प्रतिशत) उत्तरदाताओं के अनुसार भील जनजाति के लोगों में बेरोजगारी के कारण पलायन पहले से कम हुआ है तथा 29 (14.5 प्रतिशत) उत्तरदाताओं के अनुसार भील जनजाति के लोगों में बेरोजगारी के कारण पलायन पहले से बहुत कम हुआ है।

भील जनजाति को विकास योजनाओं का लाभ – (चित्र देखे आगे पृष्ठ पर) कुम्भलगढ़ अध्ययन क्षेत्र से कुल 200 उत्तरदाताओं में से 108 (54 प्रतिशत) उत्तरदाताओं के अनुसार भील जनजाति के लोगों तक भील जनजाति को में विकास योजनाओं की पहुँच पहले से बहुत अधिक है और 46 (23 प्रतिशत) उत्तरदाताओं के अनुसार भील जनजाति के लोगों तक भील जनजाति को में विकास योजनाओं की पहुँच कम है एवं 27 (13.5 प्रतिशत) उत्तरदाताओं के अनुसार भील जनजाति के लोगों तक भील जनजाति को में विकास योजनाओं की पहुँच कम है तथा 19 (9.5 प्रतिशत) उत्तरदाताओं के अनुसार भील जनजाति के लोगों तक भील जनजाति को में विकास योजनाओं की पहुँच बहुत कम है।

निष्कर्ष –

- 43 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार भील जनजाति के लोगों में बेरोजगारी के कारण पलायन बहुत अधिक होता है।
- 54 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार भील जनजाति के लोगों तक भील जनजाति में विकास योजनाओं की पहुँच पहले से बहुत अधिक है।

सुझाव –

- कुंभलगढ़ तहसील को भी जनजाति क्षेत्र (टी.एस.पी.) का दर्जा दिया जाना चाहिए जिससे योजनाओं का उपागम बढ़ सके।
- भील जनजातियों के क्षेत्र में विद्यालय का दूर होना, यातायात की अनुपलब्धता, घरेलू काम, छोटे भाई–बहनों की देखरेख, आर्थिक व विभिन्न सामाजिक समस्याएँ आदि कुछ ऐसे कारण हैं, जो कि शिक्षा की राह में बाधा हैं। अतः इस हेतु सुलभ शिक्षा केन्द्रों की व्यवस्था की जा सकती है।
- अनुसूचित जनजातियों के विकास से संबंधित नीति, आयोजना और कार्यक्रमों में और योजनाओं की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए उनके पिछड़ेपन को दूर करने के लिए सरकारों तथा स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा माँग आधारित योजनाएँ प्रारम्भ करनी चाहिए।
- बेरोजगारी को कम करने हेतु नरेगा की जगह कौशल विकस के कार्यक्रम लागू करने चाहिए।
- पलायन रोकने हेतु स्थानीय वन उपज एवं औषधीयों की कृषि बढ़ावा दिया जा सकता है।
- विकास के दो नजरिये मौजूद हैं एक वह जो तथाकथित सभ्य समाज और सरकारें आदिवासी पर लागू करना चाहते हैं और दूसरा खुद आदिवासी का नजरिया। यह दो पृथक आयाम हैं हमने अपना विकास का नजरिया आदिवासियों पर लागू करने की कोशिश की है अतः जनजातियों की सामाजिक–आर्थिक विकासात्मक माँगों को सामने लाना जरूरी है।
- जनजातीय कल्याण सेवाओं की गुणवत्ता निम्न श्रेणी की है एवं उनका प्रबंधन भी कुशलतापूर्वक नहीं किया जा रहा है। जनजातीय विकास से सम्बद्ध प्रशासकीय व्यय का अधिकांश हिस्सा सरकारी दफ्तर के भवन, सरकारी कर्मियों के आवासए नौकरशाहों के वाहन, वेतन एवं अन्य भत्तो के रुप में हुआए जनजातियों को सीधे लाभान्वित करने हेतु योजनाओं एवं धनों का प्राय: अभाव ही रहता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Cenus of India, 20011. P-13.
2. Kashyap, Subhash; Constitution of India, National Book Trust of India, New Delhi, 2001. P- 47.
3. Cenus of India, 2001. P-14
4. Guha,B.S.,The Racial EleMent of India,BoMbay; Popuar Publication, 1938,pp.76-82

बेरोजगारी के कारण जनजाति व्यक्ति का पलायन

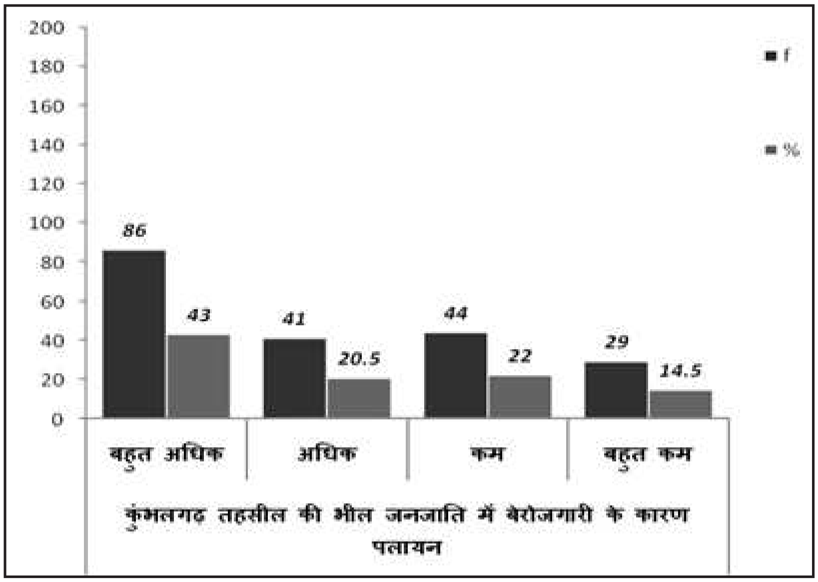

भील जनजाति को विकास योजनाओं का लाभ

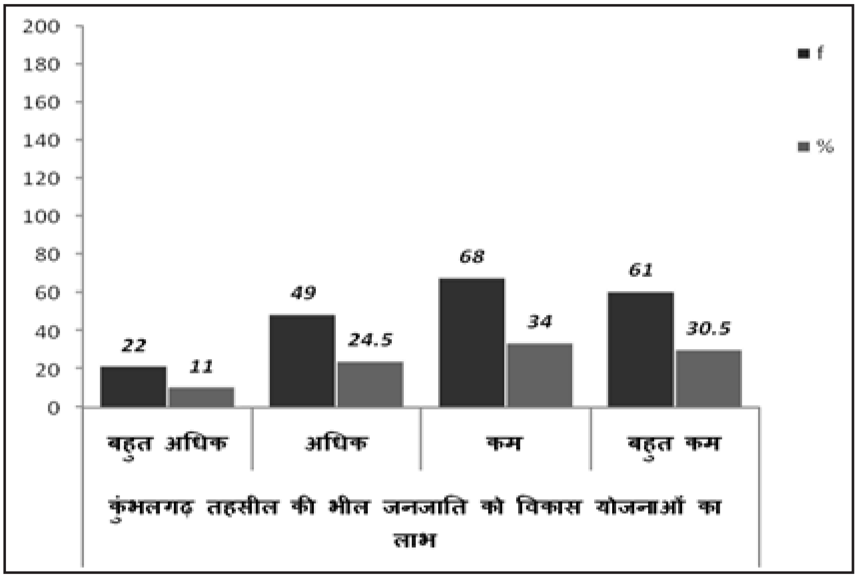

****

भारतीय संविधान में आदिवासी

प्रो. अनामिका प्रजापति *

प्रस्तावना – 'आदिवासी' शब्द दो शब्दों '**आदि**' और '**वासी**' से मिलकर बना है। इसका अर्थ है– **मूल निवासी**। भारतीय जनसंख्या का 8.6 प्रतिशत भाग आदिवासी जनसंख्या का है।[1] भारतीय संविधान की पांचवी अनुसूची में आदिवासियों को अनुसूचित जनजाति के रूप में मान्यता दी गई है। इतिहासकार भारत के अदिवासियों को विश्व की प्राचीनतम् और सुआयोजित नगर की रचना करने वाले एवं हड़प्पा और मोहनजोदड़ों जैसे नगरों को विकसित करने वाली सिन्धु सभ्यता के जनक बताते है।[2] भारत के प्रमुख आदिवासी समुदायों में संथाल, गोंड, मुंडा, हो, खड़िया, खासी, सहरिया, मीणा, उरांव, गरासिया, भील, बिरहोर आदि है। आदिवासी मुख्य रूप से भारतीय राज्यों उड़ीसा, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश, बिहार, झारखण्ड, पश्चिम बंगाल में अल्पसंख्यक है जबकी भारतीय पूर्वोत्तर राज्यों में यह बहुसंख्यक है जैसे-मिजोरम।

अंग्रेजी शासन के 200 वर्षो के दौरान शासकों ने आदिम समाज एवं सांस्कृतिक व्यवस्था पर घातक हमले किए हैं। ये दोनों ही सदैव एक दूसरे के घोर विरोधी रहे हैं, और यही कारण रहा है कि पराधीनता के उस दौर में कई आंदोलन का संचालन आदिवासियों द्वारा किया गया। संविधान निर्माण के दौरान वंचित समूह के आदिवासियों को मुख्य धारा में सम्मिलित करने के लिए कई प्रावधान किए हैं। जिसके अंतर्गत अनुसूचित क्षेत्र की पृथक प्रशासनिक व्यवस्था, विशिष्ट कमीशन एवं प्रशासनिक सेवा में आरक्षण प्रमुख हैं।

संविधान में अनुसूचित जनजातियों से संबंधित संवैधानिक प्रावधान को मुख्यत: दो भागों में बांटा गया है– (1) सुरक्षा (2) विकास।

1. **अनुसूचित जनजाति के सुरक्षा संबंधी प्रावधान –**

- **अनुच्छेद 15 (4) –** धर्म, वंश, जाति, लिंग अथवा जन्म स्थान के आधार पर किसी भी प्रकार के विभेद का निषेध करता हैं, परंतु अनुसूचित जनजाति तथा अनुसूचित जाति की सुरक्षा हेतु इस अनुच्छेद का खण्ड 4 एक अपवाद प्रदान करता है। यह राज्य को सामाजिक तथा शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग के नागरिकों अथवा अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के विकास के लिए कोई विशेष प्रावधान बनाने का अधिकार प्रदान करता है। यह प्रावधान अनुच्छेद 46 में उल्लिखित नीति के अनुसार हैं। जिसके तहत् राज्य सरकार को विशेष ध्यान देकर पिछड़े वर्ग के लोगों की शैक्षणिक व आर्थिक हितों का विकास करना चाहिए तथा सामाजिक अन्याय से इनकी रक्षा करनी चाहिए।[3]
- **अनुच्छेद 16 (4) –** अनुच्छेद 16 का खण्ड़ 4 केवल उन पिछड़े वर्गो के आरक्षण की अनुमति देता है, जिनका सरकार के विचार से सरकार की सेवाओं में पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व नहीं हैं। यह खण्ड सरकार को अपने अधीन सेवाओं में किसी भी पिछड़े वर्ग के नागरिकों के पक्ष में नियुक्तियों अथवा पदों के आरक्षण हेतु अधिकार प्रदान करते हैं।
- **अनुच्छेद 19 (5) –** भारत की संपूर्ण सीमा के भीतर स्वतंत्र रूप से विचरण एवं आवास तथा संपत्ति के अर्जन व निपटारा करने के अधिकार की गारंटी प्रत्येक नागरिकों को हैं, परन्तु अनुच्छेद 19 (5) के तहत अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के हितों की सुरक्षा हेतु सरकार विशेष प्रतिबंध लागू कर सकती हैं। इन अनुच्छेद में 'आम नागरिकों के हितों' के साथ अनुसूचित जनजातियों का विशेष उल्लेख दर्शाता है कि अनुसूचित जनजातियों की सुरक्षा के लिए बनाए गए प्रतिबंधों को खण्ड 5 के तहत बरकरार रखा जाएगा, चाहे इस प्रकार का प्रतिबंध आम नागरिक के हित में न हो।
- **अनुच्छेद 23 –** इसमें मानव शरीर की सौदेबाजी, बेगार, बंधक मजदूर तथा अन्य प्रकार के जबरन श्रम का निषेध करता है। जहां तक अनुसूचित जनजातियों का प्रश्न है, यह प्रावधान बहुत ही महत्वपूर्ण है, क्योंकि इनमें से अधिकांश लोग बंधक मजदूर के रूप में नियोजित हैं।[4]
- **अनुच्छेद 29 –** इस अनुच्छेद में सरकार को शासकीय शैक्षणिक संस्थानों में पिछड़े वर्गों के नागरिकों को सीटों के आरक्षण के लिए संवैधानिक अधिकार दिया। इसके अनुसार सांस्कृतिक अथवा भाषायी अल्पसंख्यकों को अपनी भाषा अथवा संस्कृति को सुरक्षित बनाएं रखने का अधिकार है। ये अनुच्छेद अनुसूचित जनजातीय समुदायों को अपनी भाषाओं, बोलियों तथा संस्कृतियों को बनाए रखने के लिए सुरक्षा प्रदान करता है।
- **अनुच्छेद 46 –** यह अनुच्छेद अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों तथा अन्य कमजोर वर्गो के शैक्षणिक एवं आर्थिक हितों कि विशेष सावधानी से उन्नति करने तथा सब प्रकार के शोषण से उनका संरक्षण करने का निर्देश देता है।[5] अनुच्छेद 46 एक निदेशात्मक सिद्धांत है। यह किसी प्रकार का कोई न्यायोंचित अधिकार प्रदान नहीं करता। पिछड़े वर्ग के सदस्य को यदि शिक्षा संबंधी मामले में किसी शिक्षण संस्था द्वारा मना करने पर उसे किसी न्यायालय से सहायता नहीं मिल सकती है।
- **अनुच्छेद 164–** यह अनुच्छेद बिहार, उड़ीसा तथा म.प्र. राज्यों में आदिवासी कल्याण के लिए एक प्रभारीमंत्री की नियुक्ति का अधिकार प्रदान करता है। इन राज्यों में आदिवासियों की काफी जनसंख्या हैं तथा आदिवासियों के कल्याण संबंधित मामलों के लिए मंत्री का विशेष

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) सुभद्रा शर्मा शासकीय कन्या महाविद्यालय, गंजबासौदा, जिला-विदिशा (म.प्र.) भारत

प्रावधान होना इस बात का द्योतक है कि अनुसूचित जनजातियों के हितों की सुरक्षा के लिए संविधान निर्माता कृत संकल्प थे।

- **अनुच्छेद 320 (4)-** इस अनुच्छेद में यह उल्लेख है की अनुच्छेद के खंण्ड़ 4 में संदर्भित किसी प्रावधान के संबंध में अथवा अनुच्छेद 335 के प्रावधानों को प्रभावी रूप दिए जाने के संबंध में लोक सेवा आयोग से सलाह मशविरा करने की आवश्यकता नहीं है।
- **अनुच्छेद 330, 332 तथा 334 -** अनुसूचित जातियों और जनजातियों को संविधान के अनुच्छेद 330 और 332 के अन्तर्गत लोकसभा तथा राज्य विधानसभाओं में आरक्षण प्रदान किया गया है। अनुच्छेद 334 के अनुसार, संविधान के आरंभ होने के 40 वर्षों की अवधि में अर्थात् 1990 में इस प्रकार का आरक्षण समाप्त हो जाएगा। आरंभ में यह संविधान के लागू होने से 10 वर्ष की अवधि के लिए था, परंतु अनुच्छेद 334 में किए गए संशोधन के अनुसार इसे अगले 30 वर्ष के लिए, अर्थात् वर्ष 1990 के अंत तक बढ़ा दिया गया था। इसके बाद से हर 10 साल बाद और आगे के लिये बढ़ा दिया जाता है।
प्रारंभ में यह व्यवस्था 10 वर्ष की अवधि यानी 1960 तक के लिए की गई थी परन्तु संविधान संशोधन द्वारा इसकी समय-सीमा को बढ़ाया जाता रहा है और संविधान के 95 वें संशोधन (2009) द्वारा इसे 26 जनवरी, 2020 तक बढ़ा दिया गया।[6]
- **अनुच्छेद 335-** इस अनुच्छेद के अनुसार वैसे कोई सीमा नहीं है, लेकिन प्रशासन की क्षमता से सामंजस्य रखते हुए ही केन्द्र व राज्य सरकारों के तहत सेवाओं व पदों मे नियुक्तियों के मामले पर अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के दावों पर विचार किया जाना चाहिए। आरंभ होने के 10 वर्षों की अवधि की समाप्ति पर राज्यों में अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन तथा अनुसूचित जनजातियों के कल्याण पर रिपोर्ट लेने हेतु एक आयोग की नियुक्ति का आदेश दे।
- **अनुच्छेद 338 -** इस अनुच्छेद के अनुसार अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के लिये संवैधानिक आयोग के गठन की व्यवस्था की गई है।
- **अनुच्छेद 339 (1) -** अनुच्छेद 339 (1) के अनुसार राष्ट्रपति किसी भी समय तथा संविधान के आरंभ होने के 10 वर्षों की अवधि की समाप्ति पर राज्यों में अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन तथा अनुसूचित जनजातियों के कल्याण पर रिर्पोट लेने हेतु एक आयोग की नियुक्ति का आदेश दे सकते हैं। इस प्रकार का एकमात्र आयोग अनुसूचित क्षेत्र एवं अनुसूचित जनजाति आयोग 28 अप्रैल, 1960 को नियुक्त किया गया था तथा इसने अपनी रिपोर्ट अक्टूबर, 1961 में पेश की थी। इसके बाद अभी तक इस तरह का प्रयोग नियुक्त नहीं किया गया है।
- **अनुच्छेद 350 -** अनुच्छेद 350 के अन्तर्गत अनुसूचित जनजातियों को उनकी मातृभाषा में शिक्षा देने का प्रावधान है।[7]

2. अनुसूचित जनजाति के विकास संबंधी प्रावधान - अनुसूचित जनजातियों के आर्थिक विकास संबंधी प्रावधान मुख्यत: अनुच्छेद 275 (1) तथा 339 (2) में निहित हैं। इस अनुच्छेद के अनुपालन में अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या वाले राज्यों को विशेष केंद्रीय सहायता दिए जाने का प्रावधान किया गया है।[8]

- **अनुसूचित क्षेत्रों और जनजातीय क्षेत्रों का प्रशासन -** भारतीय संविधान में पांचवी अनुसूची के अनुच्छेंद 244 (1) अनुसूचित क्षेत्रों और अनुसूचित जनजातियों के प्रशासन और नियंत्रण के अधिकार का कानून है।[9] जनजातीय क्षेत्र छठी अनुसूची के प्रावधानों के द्वारा नियंत्रित हैं। अनुसूचित क्षेत्रों की संरचना निम्नलिखित दो स्पष्ट उद्देश्यों के लिए की गयी है **-प्रथम** संक्षिप्त प्रक्रिया के माध्यम से दूसरों के द्वारा बिना किसी बाधा के उन्हें उपलब्ध अधिकारों के प्रयोग हेतु अनुसूचित जनजातियों को सहायता करना तथा **द्वितीय** अनुसूचित क्षेत्रों का विकास करना तथा अनुसूचित जनजातियों के हितों की सुरक्षा करना एवं बढ़ावा देना।
- **अनुच्छेंद 275 (12) -** इस अनुच्छेद के अनुसार केंद्र सरकार द्वारा राज्यों को जनजातीय कल्याण को बढ़ावा देने एवं इनके लिए प्रशासन की समुचित व्यवस्था करने हेतु विशेष धनराशि प्रदान करने की व्यवस्था की गयी है।
- **जनजाति सलाहकार परिषद -** संविधान की पांचवीं अनुसूची के खण्ड-4 में अनुसूचित क्षेत्रों वाले प्रत्येक राज्य में जनजाति सलाहकार परिषद के गठन का प्रावधान है। जनजाति सलाहकार परिषद में 20 से अधिक सदस्य नहीं होने चाहिए। इनमें से तीन चौथाई को राज्य के विधान मण्डल में अनुसूचित जनजातियों के प्रतिनिधि होना चाहिए। परिषद मे उन व्यक्तियों को लिया जाना चाहिए, जिन्हें आदिवासी समस्याओं का भलीभांति ज्ञान हो तथा सभी पहुलओं पर भली प्रकार विचार व्यक्त कर सकें। जब तक राज्यपाल जनजाति सलाहकार परिषद से विचार-विमर्श न कर ले, राज्यपाल द्वारा किसी भी प्रकार का विनियम नहीं बनाया जाएगा।
- **जिला परिषदों और क्षेत्रीय परिषदों का गठन -** स्वायत्त जिले में अपने प्रशासन के लिए एक जिला परिषद होती हैं। जिला परिषद में सदस्यों की संख्या 30 से अधिक नहीं होती। इनमें से अधिक से अधिक चार सदस्यों को राज्यपाल द्वारा नामित किया जाता है। शेष सदस्यों का चयन वयस्क मताधिकार का प्रयोग किया जाता है। वे सभी चुनाव क्षेत्रों को आदिवासियों के लिये आरक्षित कर सकते हैं तथा गैर आदिवासियों का इन क्षत्रों से चुनाव लड़ने से वर्जित कर सकते हैं।
- **प्राथमिक शालाओं आदि की स्थापना हेतु जिला परिषदों की शक्तियां -** जिला परिषद जिले में प्राथमिक शालाओं, औषधालयों, बाजारों, कांजी हाउसों, नौका-घाटों, मत्स्य क्षेत्रों ,सड़कों, सड़क परिवहन तथा जल परिवहन की स्थापना, निर्माण और प्रबंध करती हैं। स्वायत्त जिलों में राज्यपाल को महत्वपूर्ण अधिकार प्राप्त है। वैसे देखा जाए, तो उनके पद की तुलना राज्यों के संबंध में राष्ट्रपति के बराबर की जा सकती है। उन्हें आदिवासी क्षेत्रों में प्रशासन संबंधी किसी भी प्रकार की रिपोर्ट राष्ट्रपति को भेजने की आवश्यकता नहीं होती।

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में जनतांत्रिक संविधान का निर्माण किया गया जिसमें जनजातियों की समस्याओं और असमानताओं को दूर करने की दृष्टि से कई प्रावधान किए गए। उपर्युक्त विवेचन के अनुसार भारतीय संविधान में कई ऐसी धाराएं हैं, जो अनुसूचित जनजातियों पर ही लागू होती है। भारत सरकार ने 14 नवम्बर, 1950 को एक विशेष अधिकारी नियुक्त किया, और उसे अनुसूचित जाति व जनजातियों के लिए आयुक्त के रूप में मनोनीत किया। आयुक्त को सुरक्षा संबंधी सभी मामलों की जांच करने का दायित्व सौंपा गया। अनुसूचित जाति व जनजातियों की सुरक्षा संबंधी कार्यों तथा उनके कल्याण की योजनाओं के क्रियान्वयन में प्रगति के बारे में केंद्र सरकार व संसद को सूचित करते रहने का दायित्व है। इसके अतिरिक्त जनजातीय लोगों और राज्य सरकारों से संपर्क बनाये रखना, उनकें कार्यक्रमों

की जांच करना तथा उनकी योजनाओं को बनाने व निष्पादन करने में उनका मार्गदर्शन करना आदि कार्य भी आयुक्त के हैं।

निष्कर्षत: संविधान में रखे गए विभिन्न प्रावधानों का उद्देश्य जनजातियों की कठिनाइयों और असमानताओं को दूर करते हुए उन्हें देश के अन्य नागरिकों के समकक्ष लाना है। उन्हें देश की मुख्य जीवनधारा के साथ जोड़ना तथा एकीकरण करना है। जिससे कि वे देश की आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्था के भागीदार बन सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. hhttps://hi.wikipedia.org/wiki.
2. haqrakshakdal.blogspot.com/2014/08/collection.html
3. प्रो. मधुसूदन त्रिपाठी, 'भारत के आदिवासी' ओमेगा पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2011, पृ. 132-133.
4. स्वप्निल सारस्वत और, डॉ. निशांत सिंह, 'समाज राजनीति और महिलाएं (दशा और दिशा), राधा पब्लिकेशंस, नई दिल्ली, 2004, पृ. 79
5. डॉ. जय नारायण पाण्डेय, भारत का संविधान, सेन्ट्रल लॉ ऐजेन्सी, इलाहबाद, वर्ष-2008, पृ.सं. 626.
6. प्रतियोगिता दर्पण/अगस्त/2017/101
7. प्रतियोगिता दर्पण/सितम्बर/2008/290
8. प्रो. मधुसूदन त्रिपाठी, 'भारत के आदिवासी' ओमेगा पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2011, पृ.137-139.
9. hhttp://aadivasisamaj.com/aadivasi-articles.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

शासन की पर्यावरण नीति का आदिवासी क्षेत्रों में क्रियान्वयन एवं उनके जनजीवन पर प्रभाव (मध्यप्रदेश राज्य के विशेष सन्दर्भ में)

डॉ. हुक्का कटारा *

प्रस्तावना – भारत में ब्रिटिश शासन काल के समय में ही वनों के संरक्षण के प्रति तटस्थ नीति रही। राजकीय नौकायान नियति व्यापार हेतु टीक और चन्दन की कटाई और कृषि कार्य हेतु वनों की कटाई होती रही। 19वीं शताब्दी के उत्तारार्द्ध में सुनियोजित ढंग से कार्यवाही प्रारम्भ की गई। सन् 1865 में वन अधिनियम पारित किया गया जिसके द्धारा वनों पर राज्य के अधिकार स्थापित किये गये। सन् 1894 में वन नीति के अर्न्तगत सारे वनों को सरकार ने अपने कब्जे में ले लिया।

स्वतन्त्र भारत में केन्द्र एवं राज्य सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं तथा अन्य माध्यमों से पर्यावरण नीति अपनाई गई है। मुख्यरूप से इन नीतियों को इस प्रकार विभक्त किया गया प्रथम दो दशक तक की पर्यावरण नीति इसमें प्रथम पंचवर्षीय योजना में असुरक्षित वन क्षेत्रों के पुनर्वास पर ध्यान दिया गया। सन् 1952 में राष्ट्रीय वन नीति अपनाई गई जिसमें निम्न मूल सिद्धांत अपनाये गए– वन भू–क्षरण रोकने, नमी संरक्षण जैसे भौतिक क्षेत्रों एवं कृषि, उद्योग और संसूचना जैसे आर्थिक क्षेत्रों दोनों हेतु मूल्यवान हैं। दूसरे मूल कार्यो के आधार पर वनों का वर्गीकरण। तीसरें वनों पर बुरा प्रभाव रोकने हेतु अनियन्त्रित और अत्यधिक चराई का विनियमितीकरण। चौथे भूमि के सर्वाधिक अत्पाद एवं कम ह्रास हेतु संतुलित एवं सम्पूरक व्यवस्था का मूल्यांकन। पाँचवे वनों से जोत योग्य भूमि के विस्तार को हतोत्साहित करना।

1970 के दशक एवं 1988 तक की पर्यावरण नीति में चौथी, पाँचवीं, छठीं एवं सातवीं पंचवर्षीय योजना के माध्यम से पर्यावरण से उत्पन्न हुए विश्वव्यापी गम्भीर संकट ने अन्य देशों के साथ भारत में भी पर्यावरण प्रबन्धन एवं विकास हेतु भारत सरकार को परामर्श देने के लिए पर्यावरण प्रबन्धन एवं संयोजन की राष्ट्रीय समिति की स्थापना सन् 1972 में की तथा चेतना का सूत्रपात हुआ। भारत के संविधान की धारा–48 (।ग और धारा 51(।) संविधान के 42वें संविधान संशोधन अधिनियम 1976 द्धारा जोड़े गये। सन्1980 में नारायण दत्ता समिति का गठन वन (सुरक्षा) अधिनियम, 1980 पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 मोटरयान संशोधन अधिनियम 1988 बने। नवीन पर्यावरण नीति में आठवीं पंचवर्षीय योजना में नयी पर्यावरण नीति अपनाई गई। सन् 1988 में राष्ट्रीय वन नीति को स्वीकार किया गया।

वन संरक्षण अधिनियम, 1980 वन क्षेत्रों के गैर वानिकी कार्यो के लिए उपयोग को प्रतिबंधित करता है। इस अधिनियम की धारा–2 के अनुसार वन क्षेत्रों के गैर वानिकी उपयोग के लिए या किसी आरक्षित वन को अनारक्षित घोषित करने या वन भूमि को गैर–वन प्रयोजन के लिए उपयोग में लाने के लिए केन्द्रीय सरकार की पूर्व अनुमति आवश्यक होगी। वन भूमि को गैर–वन भूमि के कार्य हेतु आबंटन के साथ ही यह प्रतिबंध भी है कि उतनी ही अथवा उसके समतुल्य क्षेत्र में वन (पेड़) लगाने होगे। अर्थात् इस अधिनियम के अर्न्तगत वनों के ह्रास को कम करने का प्रयास किया गया है एवं वनोपयोग के साथ ही वनों का संरक्षण अधिक महत्तवपूर्ण है।

इस अधिनियम में यह प्रावधान रखा गया है कि राष्ट्र के विकास के लिए यदि कोई सरकारी विभाग या राज्य सरकार आरक्षित वन क्षेत्र में कोई गैर–वानिकी कार्य (जैसे सड़क निर्माण, खनन कार्य, बाँध व जलाशय निर्माण आदि) करना चाहता है तो उसे उसके लिए कुछ शर्तो के साथ केन्द्र सरकार से अनुमति लेनी होगी। इसके अलावा इस अधिनियम की धारा–2 में यह भी प्रावधान है कि प्राकृतिक रूप से लगे वृक्षों की किसी प्रयोजन के लिए सफाई नहीं की जा सकती परन्तु वन तथा वन्य जीव विकास या अन्य सामान प्रयोजनों के लिए आवश्यकतानुसार वनों की सफाई का प्रावधान है। इसके अलावा इस अधिनियम के अर्न्तगत राज्य सरकार को किसी भी वन भूमि का पट्टा किसी भी सरकारी, गैर–सरकारी व्यक्ति को देने का प्रावधान नहीं है।

इस अधिनियम की धारा–3 के अनुसार कोई व्यक्ति धारा–2 के उपबन्धों में से किसी का उल्लंघन करता है या इसके लिए दुष्प्रेरित करता है तो उसे 15 दिन के साधारण कारावास का दण्ड दिया जा सकेगा। इसके अर्न्तगत उन सरकारी कर्मचारियों को भी सम्मिलित किया गया है जो अपराध घटित होते समय प्रत्यक्षत: प्रभारी के रूप में कार्यरत होगे।

वन संरक्षण अधिनियम 1980 को सन् 1988 में संशोधित किया गया जिसमें यह उल्लेखित किया गया है कि देश की समस्त वन भूमि पर वन विभाग का अधिकार होगा साथ ही अपराध करने वाले के अतिरिक्त अपराध होता देखने वाला भी दोषी कहलायेगा।

सन् 1990 के दशक की पर्यावणीय नीति में आठवीं पंचवर्षीय योजना में पर्यावरण संरक्षण को प्रभावकारी बनाने हेतु कई सुझाव भी दिये गये; जैसे प्रदूषण के स्त्रोतों की पहचान कर विस्तृत रिपोर्ट तैयार करना पर्यावरण प्रदूषण निवारण में लोक भागीदार तथा गैर–सरकारी संगठन का सहयोग आमन्त्रित करना इत्यादि। इसके साथ ही अनेक नीति सम्बन्धित प्रस्ताव पारित किये गये। प्रदूषण न्यूनीकरण हेतु नीति संकल्प 1992 तथा राष्ट्रीय सुरक्षा व्यूह रचना और पर्यावरण एवं विकास पर नीति संकल्प 1992, राष्ट्रीय पर्यावरण 2006, राष्ट्रीय वन नीति 2006, राष्ट्रीय टूरिज्म नीति 2010, राष्ट्रीय वन नीति 2014।

प्रकृति में हवा, पानी, मिट्टी, पौधे तथा प्राणी सभी सम्मिलित रूप में पर्यावरण की रचना करते है। सामान्यत: किसी स्थान विशेष में मानव के आस–पास भौतिक वस्तुओं (स्थल, जल, वायु, मृदा, आदि) का वह आवरण

* 58, एलआईजी, ऋषिनगर, विस्तार-01, उज्जैन (म.प्र.) भारत

जिससे वह घिरा है पर्यावरण कहलाता है।

भारतीय वन सर्वेक्षण 2005 के अनुसार 2005 में देश में वन क्षेत्र लगभग 6,77088 वर्ग किमी. था। जबकि दो वर्ष पूर्व 2003 में यह 6,78,333 वर्ग किमी था जो देश के कुल भौगोलिक वन क्षेत्र का 20.64 प्रतिशत था। मध्यप्रदेश भारत का सर्वाधिक वन क्षेत्र वाला राज्य है। वन सर्वेक्षण रिर्पोट 2015 के अनुसार मध्यप्रदेश में वन क्षेत्र 25.13 प्रतिशत तथा मध्यप्रदेश में कुल वन क्षेत्र 77462 वर्ग किमी है। पुर्नगठित मध्यप्रदेश में 16 वन वृत्त है।

मध्यप्रदेश शासन ने 1952 की प्रथम वन नीति के 53 वर्ष बाद अपनी दूसरी वन नीति 4 अप्रेल 2005 में घोषित की इसका मुख्य बल है - पारिस्थितिकीय और उसकी सामाजिक, आर्थिक, तकनीकी आदि सभी पहलुओं को ध्यान में रखकर वनों का प्रबन्धन करना। इसमें वनों पर निर्भर समुदायों और वन उत्पादों आदि को भी पर्यावरण संरक्षण के अनुकूल ढ़ाला जायेगा। वन नीति 2005 के प्रमुख बिन्दु - लोक वानिकी तथा विस्तार वानिकी के तहत वृक्षारोपण को बढ़ावा, वन आधारित उद्योगों को बढ़ावा, अनियन्त्रित चराई पर नियन्त्रण, वनोत्पादनों का संवहनीय विदोहन, वन सुरक्षा में स्थानीय समुदाय का अधिकाधिक सहयोग और वन अपराधों के शीघ्र निराकरण के लिए जिला विशिष्ट अदालतों की स्थापना, वनाश्रित समुदायों और भूमिहिनों के विकास तथा महिलाओं के सशक्तिकरण, जैव विविधता संरक्षण, वन्यप्राणी संरक्षण, इको-टूरिज्म आदि को बढ़ावा देना संवेधनषील क्षेत्रों में वन चौकी व्यवस्था विकसित कर समूह गष्ती का प्रयास और वन कर्मियों का शस्त्र स्थानीय लोगो को वन आधारित आवष्यकतों की पूर्ति के लिए प्रचतिल निस्तार व्यवस्था वनों के अतिक्रमित क्षेत्रों को शीघ्रता से सीमांकित करना तथा अतिक्रमण की प्रभावी रूप से रोकथाम एवं वन ग्रामों के राजस्व ग्रामों के रूप में मान्यता।

जनजातीय समुदाय मूलत: अपनी आजीविका वन क्षेत्रों से ही प्राप्त करते है। जिस पर आदिवासी समुदायों का अस्तित्तव व भरण-पोषण निर्भर करता है। वन क्षेत्रों में कई जनजाती समुदाय आज भी अपनी प्राचीन सभ्यता व संस्कृति को संरक्षित रखते हुए न्यूनतम सुविधाओं के बाबजूद भी अपना जीवन यापन कर रहे है। जिसके प्रमुख कारण निम्नलिखित है -

1. आदिवासी जनसंख्या वन क्षेत्रों में लकडी संग्रह करते है।
2. जनजातीय समुदाय अपनी घरेलू ऊर्जा के रूप में वृक्षों की लकड़ी का उपयोग करते है।
3. वनों के कुछ भाग को नष्ट करके कृषि हेतु भूमि तैयार करना।
4. जानवरों का शिकार करना एवं जानवरों को मारकर उनकी खाल बेचना।
5. वनों में वृक्षों के साथ प्राय: घास भी बहुलता में मिलती है, जिसका उपयोग आदिवासी समुदाय चारे के रूप में पशुओं के लिए करता है।
6. वनों से अनेक उद्योगों के लिए कच्चे माल (जैसे:- लकड़ी, खैर, तेन्दु पत्ता, कन्द-मूल आदि) की प्राप्ति होती हैं।
7. प्रत्यक्ष रूप से वन मजदूरों को व्यवसाय प्रदान करते हैं। लकड़ी काटने, चीरने तथा ढ़ोने का कार्य मजदूर करते हैं।
8. अनेक प्रकार की जड़ी-बुटियों जो औषधि निर्माण में प्रयोग की जाती है, वनों से ही प्राप्त होती हैं।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् जनगणना वर्ष 1951 में आदिवासियों की जनसंख्या 1.91 करोड़ थी जो निरन्तर बढ़ते हुए वर्ष 2011 में 104,281,034 करोड़ हो गई जो कि देश की कुल जनसंख्या का 8.6 प्रतिशत हैं। मध्यप्रदेश देश का सर्वाधिक जनजातीय बहुल क्षेत्र है। राज्य में देश की कुल जनजातीय जनसंख्या का 14.7 प्रतिशत है तथा राज्य की कुल जनसंख्या का 21.1 प्रतिशत जनजातीय समुदाय का है। मध्यप्रदेश की मुख्य छ: जनजातियों भील, गोंड, भारिया, सहरिया, कोल, एवं कोरकू कुल जनजातीय जनसंख्या का 92.2 प्रतिशत हैं। देश में करीब 425 अनुसूचित जनजातियाँ सूचीबद्ध है। जिसमें से 43 जनजातियाँ मध्यप्रदेश में निवास करती हैं। प्रदेश की इन 43 जनजातियों में तीन बेगा, भारिया एवं सहरिया को विशेष पिछड़ी जनजाति घोषित किया गया है, जो आदिम जनजाति मानी जाती है।

मध्यप्रदेश के कुल क्षैत्रफल का 40.63 प्रतिशत भाग जनजातीय उपयोजना क्षेत्र के अर्न्तगत एवं 33.6 प्रतिशत भू-भाग अनुसूचित क्षेत्र घोषित है। राज्य के छ: जिले झाबुआ व अलीराजपुर (86.85), बड़वानी (67.82), डिण्डोरी (64.43), मण्डला (57.23) तथा धार (54.50) पूर्णत: अनुसूचित जिले है, जिसमें राज्य की कुल जनजातीय जनसंख्या का 30.80 प्रतिशत भाग निवास करता है।

उद्देश्य -

1. मध्यप्रदेश में लागू की गई पर्यावरण नीति का अध्ययन।
2. मध्यप्रदेश राज्य के आदिवासी बाहुल्य पाँच जिलों झाबुआ, अलीराजपुर, धार, बड़वानी एवं खण्डवा में पर्यावरण की नीतियों के क्रियान्वयन की स्थिति का आंकलन करना।
3. पर्यावरण नीति का आदिवासी समुदाय के जीविकोपार्जन पर पड़ रहे प्रभाव का अध्ययन करना।
4. उपरोक्त सन्दर्भ में जनजातीय समुदाय की वर्तमान सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन

उपरोक्त परिस्थिति में अध्ययन करने का प्रयास है कि नई पर्यावरण नीति किस प्रकार वनों में रहने वाले आदिवासियों के जन-जीवन को प्रभावित कर रही है।

समस्याएँ - आदिवासी समुदाय का अधिकांश भाग आज भी समाज से दूर पहाड़ों, जंगलों एवं दूरस्थ क्षेत्रों में बसा हुआ हैं। वन संरक्षण अधिनियम 1980 को सन् 1988 से संशोधित किया गया जिसमें यह उल्लेखित किया गया है कि देश की समस्त भूमि पर वन विभाग का अधिकार होगा तथा सरकार द्धारा वनों की कटाई पर रोक लगा दी गई है। जिससे आदिवासी समाज को जीवन स्तर में आंशिक रूप से जो आर्थिक परिवर्तन हुए है तथा जो पक्ष आर्थिक रूप से पिछड़ेपन का षिकार हुए है। आदिवासी समुदाय वन क्षेत्रों के मध्य में अपने आवास बनाकर निवास करते है।आदिवासी अपनी आजीविका वन क्षेत्रों से ही प्राप्त करते है। सरकार द्धारा नीति लागू होने का सीधा प्रभाव वनक्षेत्रों में निवास करने वाले आदिवासियों की आजीविका पर पड़ता है। जिस पर आदिवासी समुदायों का अस्तित्व व भरण-पोषण निर्भर करता है। आदिवासी जनजातियों को अपने मूल आवास को छोड़ने पर मजबूर होना पड़ा है। जिससे विश्व की अनेक महत्तवपूर्ण जनजातियों का पूर्णतया समापन हो गया है या विलुप्त होने की कगार पर है यही नहीं, जब से आदिवासी जनजातियाँ किसी स्थान पर जाकर रहने लगती है तो उन्हें सामाजिक परिवर्तन के दौर से गुजरना पड़ता है तथा पर्याप्त परेशानी का सामना करना पड़ता है।

आदिवासी क्षेत्रों में आज भी अन्य क्षेत्रों की तुलना में निम्न मानव विकास सूचकांक, अत्यधिक गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी, ऋणग्रस्तता, काश्तकारी असुरक्षा, आधारभूत संरचना की कमी, प्राकृतिक संसाधनों पर घटता नियन्त्रण, पलायन आदि समस्याएँ मौजूद है जो जनजातियों के

विकास के मार्ग को अवरूद्ध करती है। वर्तमान परिदृश्य में विकास का एक महत्तवपूर्ण प्रतिमान शिक्षित समाज का होना है। शिक्षित समाज ही सभ्य समाज की स्थापना कर सकता है। जबकि जनजातीय समुदायों में शिक्षा की स्थिति अत्यन्त दयनीय है जिसके कारण ये आज भी आधारभूत सुविधाओं से वंचित है।

निष्कर्ष – पर्यावरण संरक्षण आवश्यक है किन्तु इस हेतु बनी नीतियों ने उन व्यक्तियों विशेषकर आदिवासियों के जनजीवन को प्रभावित किया है जो प्रकृति के सानिध्य में अपना जीवन व्यतीत करते हैं। विशेषकर वन संबंधी नीतियों ने उनके जीवनयापन को कठिन बना दिया है। आदिवासी वनों में ही विचरण कर अपना जीवनयापन करता हुआ अपना भरण-पोषण करता था। वर्तमान परिवेश में भी इन लोगों के लिए वनों की उपयोगिता उतनी ही है जितनी की प्राचीन समय में थी। जनजातीय समुदाय प्राचीन समय से ही आर्थिक रूप से वनों पर निर्भर रहता था। क्योंकि जनजातीय समुदाय अधिकांशत: अशिक्षित होने तथा गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने के कारण उनके लिए पर्यावरण संरक्षण का कोई महत्तव नहीं होता वरन् उनका एकमात्र उद्देश्य अपने और अपने परिवार के लिए भोजन का प्रबन्ध करना होता है।

सुझाव –

1. वनों पर निर्भर आदिवासियों को यदि वनों से बे-दखल कर दिया गया है तो उनकी आजीविका के नये संसाधन सरकार द्वारा उपलब्ध कराये जाना चाहिए।
2. आदिवासी क्षेत्रों में रोजगार के अवसर निरन्तरता के साथ उपलब्ध कराये जाये, जिससे लोगों को आर्थिक सुरक्षा तो मिलेगी साथ ही वे अपनी सभ्यता एवं संस्कृति को संरक्षित रखेगे।
3. आदिवासी क्षेत्रों में परम्परागत कृषि स्थान पर पूँजी आधारित व अधिक आय प्रदान करने वाली खेती को प्रोत्साहन दिया जाये।
4. सिंचाई सुविधा, जल प्रावधान इत्यादि के माध्यम से कृषि भूमि क्षेत्र का विस्तार किया जाये जिससे न केवल उत्पादन में वृद्धि होगी बल्कि उनकी आय में भी वृद्धि होगी।
5. आदिवासी क्षेत्रों में बेरोजगार युवकों के लिए स्वरोजगार हेतु वित्तीय सहायता एवं प्रशिक्षण की सुविधा तथा प्रशिक्षण केन्द्र गाँवों में खोलें जाये। रोजगार क वैकल्पिक साधन यथा बुनाई, हथकरघा, कुटीर उद्योग साथ ही खाद्य प्रसंस्करण केन्द्र की स्थापना की जाये, स्वयं सहायता समूह, सामूहिक रोजगार प्रशिक्षण, मजदूरों को शीघ्र मजदूरी तथा उनके बच्चों को बेहतर स्वास्थ्य, शिक्षा अन्य मनोरंजन की सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाये।
6. आदिवासी क्षेत्रों में सार्वजनिक वितरण प्रणाली को सुसंगठित एवं पारदर्शी बनाया जाये जिससे लोगो को उचित दामों पर खाद्य सुरक्षा व अनाज उपलब्ध हो सके और ग्रामीण पलायन रोका जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अवधेश कुमार सिंह, डायनेमिक्स ऑफ ट्राइबल इकोनॉमी, सिरियल्स पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली 2003
2. ए.आई.आर. 1980, एस.सी.सी.
3. ए.आई.आर. 1987, एस.सी.
4. ए.आई.आर. 1988, ए.पी.
5. ए.आई.आर. 1988, एच.पी.
6. ए.आई. 1998,
7. ए.आई.आर. 1993,
8. ए.आई.आर. 1986,
9. ओझा डी.डी. 'पर्यावरण अवबोध' साईंटिफिक पब्लिशर्स, जोधपुर, 1999,
10. बावेल बसंतीलाल 'पर्यावरण संरक्षण कानून', सुविधा लॉ हॉउस, भोपाल, 1977
11. Dhar T.N., Resource Management and Environment (Values and Institutions), Indian Institute of Public Administration up regional Branch, Lucknow, 2001
12. कलवार एस.सी. यपर्यावरण संरक्षण, पॉईन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2001
13. मित्ताल संतोष एवं अग्रवाल मीनु, '21वीं सदी में पर्यावरण एवं पर्यावरण शिक्षा', नवचेतना पब्लिकेशंस, जयपुर, 2004
14. मेहता एम.सी. बनाम भारत संघ (दिल्ली पर्यावरण मामला), ए.आई.आर. 1992,
15. मध्यप्रदेश की अनुसूचित जनजातियाँ मध्यप्रदेश आदिम जाति कल्याण विभाग भोपाल, 2011
16. Pranitha B.S. "People's Participation and Environment Protection", Journal of Business Management and Social Sciences Research, Vol. 2 No.2 Feb. 2013
17. प्रसाद शुकदेव, पर्यावरण और प्रभात, प्रकाशन, दिल्ली, 1995
18. Prasad P.M. "Environmental Protection: The Role of Regulatory System in India" in DV Nandinath, Handbook of Environmental Decission making in india: An E/A Model, Oxford University Press, New Delhi, 2005
19. Rathore M.S. ed Enviornment and Development, Rawat Publication, Jaipur, 1997
20. भारतीय जनगणना 2011, जनगणना निदेशालय, नई दिल्ली, 2003
21. सरकार आर.एम. लेण्ड एण्ड फॉरेस्ट राईट्स ऑफ द ट्राईबल्स टूडे, सिरियल्स पब्लिकेशंस नई दिल्ली, 2006
22. Sinha Rajiv K ed Enviornmental Crisis and Human at risk Ina Shree Publishers, Jaipur 1997
23. Teri Enviornmental Survey 2014, The Energy and Resources Institute, New Delhi, 2014
24. वर्मा धनंजय, संपादक पर्यावरण चेतना, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल, 2004

****

भील जनजाति की लोक कथाओं मेंसंवेदना

डॉ. बारु पटेल *

प्रस्तावना - लोक कथाएँ लोकभाषा व्यवहारकर्त्ता समूह की निजी अभिव्यक्तियाँ है। इनमें अतीत की स्मृतियां अनुभूतियाँ और भावी जीवन की शिक्षा सहजरूप में गुँथी रहती हैं। कथा की कहन' का वाचिक परंपरा मेंमहत्वपूर्ण स्थान है। अत: कहने की रोचकता के लिए भाषा का रूप संवरता है।

लोक' शब्द की व्युत्पत्ति और व्याख्या : भारतीय संस्कृति के संदर्भ में य'मनुष्य अपनी वैयक्तिक भूमिका का विसर्जन कर, जब समाज रचना मेंप्रवृत्त हुआ, तो निश्चत ही उसने अपनी स्वर प्रवृन्तियों को नियश्रित कर अपने दिनानुदिन के आचरण में कतिपय सीमायेंभी स्वीकार की। प्रश्न उठता है कि ऐसा उसने, क्यों किया? हमारा विचार है कि व्यक्ति के विसर्जन एवं समाज के सर्जन के मूल मेंमनुष्य की समष्टिगत कल्याण कामना ही उसका मुख्य कारण थी तथा आज जब हमारा यह समसामायिक समाज अपने विकास की चरम अवधि को छूना चाहत है, तो यह मान लेने मेंकोई विकल्प बाधक कि सामूहिक चेतना तथा लोक मंगल में मनुष्य की निष्ठा अधिकाधिक उत्कट हो गई है।''

'लोक भावना के उद्गम पर यदि हम विचार करे तो, हमवेदों में विशेषत: ऋग्वेद में इस शब्द और भाव की उपलब्धि हो जायेगी। ऋग्वेद मेंलोक शब्द का प्रयोग स्थान और भुवन के अर्थ मेंप्राप्त होता है।''

य'ऐतरेयोपनिषद में परमेश्वर द्वारा समस्त लोकों के सृजन का उल्लेख है। यहाँ भी लोक शब्द का प्रयोग भुवन के अर्थ मेंहुआ है। परमेश्वर ने अम्भ, मरीचि, मर और जल इन लोकों की रचना की। अम्भ के अन्तर्गत स्वर्ग लोक से उपर मह: जन: तप: सत्य और उनका आधार धुलोक है। मरीचि के अन्तर्गत सूर्य, चन्द्र, तारागण आदि लोक आते है। मर से मृत्यु लोक या पृथ्वी लोक का बोध होता है तथा पृथ्वी के नीचे के पातालादि लोक आप कहे गये है।''

जार्ज ग्रियर्सन के अनुसार भीली बोलने वालों की कुल संख्या 2,689,109, जिनमेंसे 1,163,872 परिनिष्ठत भीली तथा 1,526,237 कनिष्ठ भीली बोलियों का उपयोग करते हैं।

लोक की परिभाषा करते हुए डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त लिखते है- 'लोक से तात्पर्य उस लोक मानस या लोक प्रवृत्ति से है, जो सहज और प्राकृतिक मानसिक वृत्तियों की पूंजीभूत इकाई का रूप होता है। सहज और प्रकृत का अर्थ आदिम न होकर आज तक विद्यमान उस सार्वकालिक रूप से है, जो भिन्न-भिन्न युगों की चेतना को आत्मसात करता हुआ भी उनके कृत्रिम प्रभावों से अछूता रहता है।''

प्राय: लोक' के अर्थ के रूप मेंग्रामीण समाज को ही अभिगृहीत किया जाता है, जिनमें आज भी पुरानी परम्पराएँ प्रचलित हैं। जहाँ लोक शिक्षित नहीं है। धर्म के प्रति अपने पूर्वजों की धारणाओं के प्रति प्रतिबद्ध हैं, जिनमकृमिकता का समावेश नहीं हुआ हैं, जो सरल, सहज और भोले भाले हैं, जो वह सहज रूप से महसूस करता है उसे उसी रूप मेंअभिव्यक्त करता है।

लोगों ने अपने जीवानुभव से जो प्राप्त किया, उसे ही भिन्न-भिन्न विधाओं मेंअभिव्यक्त किया। इनकी यह अभिव्यक्ति लोकगीतों, लोककथाओं और लोकनाट्यों के रूप मेंप्रस्फुटित हुई। इस लोक साहित्य मेंनैतिकता है। जीवन की प्रचलित परम्पराओं के प्रति आस्था है। उनकी परम्परा निजी मान्यताएँ है। इन सब की अभिव्यक्ति अपनी परम्परा से प्राप्त भाषा मेंकी गई है।

डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय के अनुसार- 'सभ्यता के प्रभाव से दूर रहने वाली सहजावस्था मेंवर्तमान जो निरक्षर जनता हैं, उसकी आशा-निराशा, हर्ष-विषाद, जीवन-मरण, लाभ-हानि, सुख-दु:ख आदि की अभिव्यक्ति जिस साहित्य मेंप्राप्त होती हैं, उसे लोक साहित्य कहते हैं। इस प्रकार लोक-साहित्य जनता का वह साहित्य हैं, जो जनता द्वारा, जनता के लिए लिखा गया है।''

लोक साहित्य के मर्मज्ञ डॉ. सत्येन्द्र लोक साहित्य के तत्व (लक्षण) पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं- 'लोक साहित्य के अन्तर्गत वह समस्त बोली या भाषागत अभिव्यक्ति आती है,

1. आदिम मानव के अवशेष हो।
2. परम्परागत मौखिक रूप से उपलब्ध बोली या भाषागत अभिव्यक्ति हो जिस किसी की कृति न कहा जा सके, जिसे श्रुति ही माना जाता हो।
3. कृतित्व हो, किन्तु वह लोक मानस के सामान्य तत्वों से युक्त हो कि उसके किसी व्यक्तित्व की कृति स्वीकार करे।

लोककथा का स्वरूप - वास्तविक या काल्पनिक घटना अथवा दोनों का सम्मिश्रण जिसे कहने वाला कहने को आतुर है और श्रोता सुनने को अत्यधिक उत्सुक है, ऐसी गद्य शैली में वर्णित कथा को लोक कथा माना जा सकता है, जो परम्परा से प्राप्त है।

इस परिभाषा से स्पष्ट है कि घटना का वाचिक स्वरूप, जिसके लिए वक्ता और श्रोता दोनों की उपस्थिति आवश्यक है।

इन लोककथाओं के पात्र कोई ईश्वरीय अवतार, पौराणिक व्यक्तित्व, ऐतिहासिक पात्र, सामान्यजन जो हमारी ही परिवेश का हो अथवा पशु-पक्षी या कभी कभी भूत-प्रेत भी हो सकते हैं।

ऐसी लोककथाओं मेंमनोरंजन का तत्व अवश्यमेव विद्यमान रहता है। इसके अलावा कोई न कोई उपदेश, लोक परम्परा के प्रति आस्था अभितत्व विद्यमान रहते हैं। अक्सर बचपन मेंहर बच्चा अपनी दादी या नानी से कहानियाँ सुनता है। दादी या नानी बच्चे का मनोरंजन अथवा कोई अच्छे आचरण की

* शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

शिक्षा देने के उद्देश्य से कहानी कहती हैं। लोककथा का यही सर्वविदित रूप है।

वैदिककाल से कथाओं के सूत्र उपलब्ध होते हैं। सोमसूर्या विवाह, पुरुरवा-उर्वशी विवाह जैसी कथा आख्यान के रूप में वैदिककाल में प्रचलित रहे हैं।

प्राकृतिक शक्तियों को देवी-देवताओं के स्वरूप मेंऔर उनके घात-प्रतिघातों के रूप मेंघटना का वर्णन वैदिककाल की परम्परा रही हैं।

जैसे- इन्द्र द्वारा वृत्रासुर का वध कर पानी को मुक्त करना, इन्द्र द्वारा पर्वतों के पंख काटकर उन्हेंएक स्थान पर स्थिर कर देना, चंद्र द्वारा वृहस्पति की पत्नी तारा का अपहरण करना, देवी और दानवों द्वारा मेरु पर्वत को मथानी बनाकर वासुकि नाग की रस्सी बनाकर समुद्र मंथन करना, जिससे चौदह रत्नों मेंलोककथाओं के रूप में प्रचलित हुए होंगे। ईश्वर द्वारा विभिन्न अवतार ग्रहण कर दैत्यों का विनाश करना जैसी पौराणिक गाथाएँ लोकमान में लोक कथाओं के रूप से प्रस्फुटित हुई।

हम इन लोककथाओं की कथावस्तु में तीन प्रकार के तत्व देखते हैं-

1. लोक विश्वास व अन्ध परम्पराएँ- इसमें पृथ्वी, आकाश, वनस्पति, पशु, पक्षी, मानव, मानव निर्मित वस्तुएँ, आत्मा, परलोक, परामानवी व्यक्ति, शकुन, अपशकुन, भविष्यवाणी, जादू-टोना आदि।
2. रीति-रिवाज और प्रथाएँ- सामाजिक व राजनैतिक संस्थाएँ, व्यक्तिगत जीवन के अधिकार, व्यवस्था उद्योग धर्म, व्रत त्योहार व सम्बद्ध रीति-रिवाज।
3. लोक साहित्य- लोकगीत, लोककथा, मुहावरें, कहावत सूक्तियाँ, बच्चों के गीत आदि के स्वरूप मेंउपलब्ध लोक साहित्य।

लोक कथा के तत्व - निमाड़ी लोककथाओं की विशेषताओं पर प्रकाश डाला है। इनमें से कुछ विशेषताएँ प्राय: सभी लोककथाओं मेंपाई जाती है। कुछ विशेषताएँ, जो किसी भी लोक भाषा की कथाओं मेंपाई जाती हैं, उसका संक्षिप्त विवरण देना समीचीन होगा-

मानव-प्रवृत्ति का स्वाभाविक चित्रण - मनुष्य मेंकुछ आदिम प्रवृत्तियाँ सदैव विद्यमान रहती है। जैसे- क्रोध, लोभ, मोह, प्रभुत्व की कामना, कामभाव, इर्ष्या, द्वेष, शत्रुत्व का भाव जैसी प्रवृत्तियों के परस्पर संघात विषयवस्तु के रूप में कथाओं में प्रतिध्वनित होते हैं।

जाति-गत स्वाभाविक चित्रण - पिछले ढाई हजार वर्षों से भारतीय समाज वर्णों और बाद में जातियों में विभाजित हुआ। उसके बाद भी जातियाँ अनेक उपजातियों मेंविभाजित होती रही।इनके अपने परम्परागत व्यवस्था के कारण जनमानस मेंइनके जातिगत स्वभाव की विशिष्ट धारणा कायम हो चुकी हैं। लोककथाओं मेंउसके जातिगत स्वभाव के अनुसार विषयवस्तु और घटनाक्रमों का वर्णन किया जाता है।

सत्य की विजय तथा असत्य की पराजय - कहानियों में अक्सर यह देखने को मिलता है, कि सत्य की विजय होती है और असत्य पराजित होता है। जनमानस मेंसत्य के आचरण की सीख देने का ही उद्देश्य इन कथाओं में निहित होता है।

कर्मानुसार फल प्राप्ति - जो जैसा कर्म करेगा वैसा ही फल पायेगा- इस शाश्वत सत्य को प्रदर्शित करना भी कहानी का उद्देश्य होता है।
'बोया पेड़ बबूल का, आम कहाँ से होय।' अगर बबूल का पेड़ बोया है, तो काँटे मिलगे और आम का पेड़ बोया है, तो मीठे आम ही मिलेंगे। अर्थात् बुरा कर्म करने के बूरे परिणाम निकलते हैं। अच्छे कर्म के अच्छे परिणाम होते हैं। लोगों को सत्कर्मों की ओर प्रवृत्त करना और बुरे कर्म से दूर रहने का उपदेश दिया जाता है। समाज मेंइसी से एक स्वस्थ वातावरण निर्मित होता है।

परोपकार की शिक्षा - अधिकांश कहानियों मेंपरोपकार करने का उपदेश दिया जाता है। भारतीय संस्कृति में परोपकार को एक महत्वपूर्ण सामाजिक मूल्य माना है। धर्मशास्त्रों मेंअनेक जगहों पर परोपकार करने पर बल दिया है। महाभारत मेंव्यासजी ने पुण्य और पाप की परिभाषा ही परोकार पर आधारित है। 'परोपकार पुण्याय पापाय पर पीड़नम्।' परोपकार ही पुण्य है और दूसरों को पीड़ा देना ही पाप है। तुलसीदासजी ने रामचरित मानस मेंइसी का अनुवाद करते हुए लिखा हैं कि- 'परहित सरिस धरम नहि भाई। पर पीड़ा सम नहि अधमाई।' प्राय: अनेक कहानियों में परोपकार करने वाला इच्छित सुख पाता है और दूसरों को कष्ट देने वाला खुद कष्ट भोगता है- बताया गया है।

भाग्यवाद का समर्थन - भारतीय संस्कृति में भाग्यवाद की पर्याप्त चर्चा की गई है। पूर्व जन्म क कर्मों के आधार पर सद्य जन्म प्राप्त होता है, जो भाग्य मेंलिखा है उसे भोगना ही पड़ता है। विधि लेख अटल है। जैसी चर्चा की गई है।

अलौकिता की प्रधानता - अलौकिक, चमत्कारपूर्ण घटनाओं का समावेश लोककथा में मिलता है। ईश्वर का प्रकट होना और ईश्वर की कृपा म दु:खों और संकटों को चमत्कापूर्ण ढंग से मुक्त होने जैसी घटनाएँ पढ़ने को मिलती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. श्याम परमार-लोक साहित्य की भूमिका आदिवासी लोक कला परिषद, म.प्र. भोपाल, 1978.
2. नाभ्या आसीदतंरिचा शीष्णोथो समवर्तत्। पद्भ्यां भूमिदिदशा श्रोत्रा तथा लोका अकल्पय्। ऋग्वेद 10/90,14.
3. जार्ज ग्रियर्सन : लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया : खण्ड 9, भाग 9, पृ.1.
4. डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त- चौमासा नवम्बर 1994, पृ. 5.
5. डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय-लोक साहित्य की भूमिका, पृ. 24.
6. जार्ज ग्रियर्सन : लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया : खण्ड 9, भाग 9, पृ.1.
7. डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त- चौमासा नवम्बर 1994, पृ. 5.
8. डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय-लोक साहित्य की भूमिका, पृ. 24.
9. डॉ. सत्येन्द्र- लोक साहित्य विज्ञान, पृ. 4-5.

****

वैश्वीकरण का भारतीय परिवारों पर प्रभाव- एक विवेचन

डॉ. ज्योति सिंह *

प्रस्तावना – विश्व के प्रत्येक देश का अन्य देशों के साथ वस्तु, सेवा, पूंजी एवं बौद्धिक सम्पदा का अप्रबंधित आदान प्रदान ही वैश्वीकरण कहलाता है, वैश्वीकरण तभी संभव है जब ऐसे आदान-प्रदान के मार्ग में किसी देश द्वारा अवरोध उत्पन्न नहीं किया जाय और इन्हें कोई अंतर्राष्ट्रीय संस्था संचालित करें जिसमें सभी देशों का विकास हो और जो सर्वानुपति से नीति निर्धारकों सिद्धांतों का निरूपण करें, समान नियम के अनुशासन में रहकर जब सभी देश अपने व्यापार और निवेश का संचालन करते हैं, तो स्वाभाविक रूप से वह एक ही धारा में प्रवाहित होते हैं और यही वैश्वीकरण है।

वैश्वीकरण का शाब्दिक अर्थ स्थानीय, क्षेत्रीय वस्तुओं तथा घटनाओं का भारतीय समाज के संदर्भ में 'वैश्वीकरण का अर्थ है- विदेशी कंपनियों को भारत की विभिन्न आर्थिक गतिविधियों में निवेश करने की अनुमति देकर अर्थ-व्यवस्था को विदेशी निवेश के लिए खोलना, विदेशी विनिमय नियंत्रण अधिनियम जैसे कानूनों को धीरे-धीरे समाप्त करके बहुराष्ट्रीय निगमों को देश में आने की एवं निवेश करने की सुविधाऐं प्रदान करना, भारतीय कंपनियों को विदेशी कंपनियों के साथ सहयोग करने की अनुमति देना तथा दूसरे देशों में संयुक्त परियोजनाएँ चालू करने के लिए प्रोत्साहित करना, मात्रात्मक प्रतिबंधों के स्थान पर धीरे-धीरे प्रशुल्कों को प्रोत्साहित करना एवं फिर उनको भी क्रमशः कम कर आयात उदारीकरण कार्यक्रमों को व्यापक आधार पर लागू करना। वस्तुतः 'वैश्वीकरण की अवधारणा' अर्वाचीन भारतीय समाज की 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की अवधारणा का पर्यायी स्वरूप है जिसमें पारिवारिक सामाजिक संबंधों की प्रगाढ़ता परिलक्षित होती है।

भारत ने '1 अप्रैल 1951' से समाजवादी समाज व्यवस्था एवं मिश्रित अर्थव्यवस्था की पगडंडी पर अपनी आर्थिक विकास की यात्रा प्रारंभ की तथापि अपेक्षित स्तर तक विकास को मंजिल तक पहुँचने में हम पीछे रह गये। देश के आर्थिक कलेवर से क्रांतिकारी परिवर्तन नहीं आ सका। अतएव विकास की तकनीक में परिवर्तन पर वर्ष 1991 में विचार किया गया। नियंत्रित व्यवस्था के स्थान पर उदारता की नीति अपनाने, विदेशी विनियोग को प्रोत्साहन देने, उत्पादन की उन्नत, तकनीकी लागू करने, कृषि के आधुनिकीकरण को प्रोत्साहन देने, यातायात व संचार साधनों में सुधार करने, सार्वजनिक क्षेत्र को संकुचित कर निजी क्षेत्र को बढ़ावा देने आदि पर विशेष बल देना आवश्यक हो गया था। वस्तुतः देश की ऐसी अस्थिर आर्थिक स्थिति को देखते हुए भारत सरकार ने अगस्त 1991 से सुधारात्मक उपायों की एक श्रृंखला आरंभ की और देश का अर्थतंत्र संपूर्ण विश्व की बहुराष्ट्रीय कंपनियों के सुधारात्मक लिए खुला गया और आरंभ हुआ एक नवीन युग का सूत्रपात जिसमें आर्थिक पक्ष के तीव्रतम उतार-चढाव, सामाजिक पारिवारिक संबंधों का बिखरना, अतिवैयक्तिकता का सर्वोपरि होना और आधुनिकता के नाम पर 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' को तिलांजली देकर निज-स्वार्थ, प्रगति के तत्व को प्रधानता देना।

उद्देश्य-

1. वैश्वीकरण से प्रभावित भारतीय परिवारों की वर्तमान यर्थाथ स्थिति को बताना।
2. वैश्वीकरण से प्रभावित भारतीय परिवारों की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक परिदृश्य पर प्रकाश डालना।

भारतीय परिवारों पर प्रभाव – भारतीय समाज जिसके नियामक पारंपरिक परिवारों की संरचनात्मक प्रकार्यात्मकता रही है, यही पक्ष वैश्वीकरण से सर्वाधिक प्रभावित हुआ। उन्नीस सौ साठ दशक के भारत में गतिशील औद्योगिकरण की अनथक प्रक्रियास 21वीं शताब्दी के प्रथम दशक तक अपने पूरे उफान पर रही, और भारतीय संयुक्त परिवार अब नाभिकीय परिवार में बदले। पारंपरिक विवाह के प्रति भी दृष्टिकोण और प्रतिमान कदाचित परिवर्तित हुए, और अब महानगरों में पश्चिम की तरह बिना विवाह के पति-पत्नि की तरह दो विषम लिंगीयों का साथ-साथ रहना समय की माँग माना जाने लगा।

भारतीय समाज में परिवार का स्वरूप मूल रूप से संयुक्त रहा है। ग्रामीण समाज संयुक्त परिवार के मौलिक पारम्परिक विशेषताओं से अपने सामाजिक प्रतिमान एवं आदर्श नियमों के परिपालन की निर्बाध-श्रृंखला को जीवंत बनाये हुए दृष्टिगोचर होता रहा है, किन्तु आधुनिकीकरण एवं औद्यौगिकरण की प्रक्रिया ने स्वतंत्रता प्राप्ति के लगभग एक दशक बाद अर्थात साठ के दशक में जिस तीव्रता को प्रतिपादित किया वह क्रमशः निरन्तर बढ़ती ही गई। ग्रामीण एवं नगरीय दोनों ही समाज एवं परिवेश इसे प्रभावित हुए और इस प्रभाव ने समाज की सार्वभौमिक संस्था परिवार की संरचनात्मक-प्रकार्यात्मकता को गहरे तक प्रभावित किया, अब परिवार के एकाकी स्वरूप को महत्ता मिलने लगी। शासकीय परिवार, नियोजन योजना के प्रभावी क्रियान्वयन ने परिवार की वृहत सदस्य संख्या को नियंत्रित करने का प्रयास किया। अब सीमित नियोजित परिवार शिक्षित वर्ग के लिए अधिक प्रासंगिक प्रतीत हुए तथा अशिक्षित वर्ग को भी विभिन्न आकर्षक परिवार नियोजन योजनाओं से प्रभावित करने का प्रयास किया जाने लगा। इस प्रकार संयुक्त परिवार की वृहत सदस्य सीमित होने लगी।

वैश्वीकरण ने भारतीय पारिवारिक सम्बन्धों को गहरे तक प्रभावित किया है। परिवार का समर्पण भाव सह-अस्तित्व, आश्रितता, निश्चल-स्नेह, परम्पराओं के प्रति अगध-आस्था एवं श्रृद्धा, वृद्धाजनों एवं बड़ों के प्रति स्नेहपूर्ण आदर-भाव से सभी तत्व क्रमशः अपनी महत्ता एवं उपयोगिता

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, नैनपुर, जिला-मण्डला (म.प्र.) भारत

खोने लगे। अब निज-स्वार्थ, निज-प्रगति ने साम-दाम-दण्ड-भेद की नीति को प्रमुखता दी। पारिवारिक सौहादर्ता अब कहल में बदल गई। अब सम्पत्ति एवं अर्थ-लाभ सर्व-प्रमुख हुए। परिवार के प्रति समर्पण एवं निष्ठा गौण हो गई। अब पारिवारिक संबंध निभाने के नहीं, अपितु दिखाने एवं दर्शाने के तथ्य हो गये।

नगरीकरण और औद्योगिकरण का नवीन आकर्षक परिवेश ग्रामीण समाज को विशेष रूप से आकर्षित करने लगा। विशाल उद्योगों में जीविकोपार्जन के स्त्रोत ढूँढे जाने लगे और फिर नगर जनाधिक्य, गंदी-बस्ती, बढ़ते अपराध इत्यादि समस्याओं को पल्लवित करने लगे। ग्रामों में पलायन बढ़ने लगा, कृषि कार्य के प्रति विभिन्न कारणों की विमुखता ने इसे अधिक प्रोत्साहित किया।

इन समस्त गतिशील सामाजिक प्रक्रियाओं ने परिवार की संरचना, सम्बंध और प्रकार्यात्मकता को गहरे तक प्रभावित किया। अब भारतीय पारम्परिक परिवार अपने सदस्यों की संतुलित अनुशासनबद्ध प्रस्थिति और भूमिका की सामंजस्यता खोने लगा, परिवार में व्यैक्ति बढ़ने लगी। सम्पूर्ण परिवार के प्रति नि:स्वार्थ समपर्ण सिमट कर अपने पति-पत्नि और बच्चों तक सिमट गया। पारिवारिक सम्बन्धों की अभेद श्लाका अब दकरने लगी, आधुनिक और नवीन पाश्चात्यमय सामाजिक प्रतिमानों के प्रति आस्था बढ़ने लगी। अब परिवार और पारिवारिक संबंधो की परीधि में मैं, मेरी बीबी और मेरे बच्चे ही आने लगे। राम, लक्ष्मण, भरत, श्रवण कुमार जैसे पौराणिक पारिवारिक समपर्ण के प्रतीक विस्मृत किये जाने लगे। अब भारत में वृद्धाश्रम, झूलाघर, नारी आश्रम इत्यादि तेजी से स्थापित होने लगे जिन्हें अपनी आधुनिक व्यवसायिक व्यस्तता और निज स्वार्थपरकता के बीच पारिवारिक सम्बन्धों की औपचारिक निर्वाहता का निमित्त बनाया जाने लगा।

भारतीय समाज अपने पारम्परिक स्वर्णिम पारिवारिक सम्बन्धों की त्यागपूर्ण समर्पण एवं स्नेह तथा सह-आश्रितता की आस्था श्रृद्धा से दूर होने लगा। जीविकोपार्जन हेतु अपने परिवार से विलग होने की बाध्यता को प्रमुखता दी जाने लगी, इस तर्कपरक कारक के पीछे जो निज-स्वार्थ और पारिवारिक सम्बन्धों के निर्वहन की विमुखता छिपी थी, वो साल में एक बार छुट्टी बिताने या किसी तीज-त्यौहार या शादी-ब्याह में आने के रूप में प्रकट होने लगी। मूल परिवार को आर्थिक सहायता भी क्रमश: बंद की जाने लगी इस तर्क पर कि 'अब तो अपना खुद का परिवार चलाना मुश्किल हो रहा है तो बाकी को कैसे सहयोग करें।' मनी-आर्डर की बाट जोहते वृद्ध नयन अब डाकिये को आवाज नहीं देते बल्कि वृद्धावस्था की निराश्रित पेंशन की लाईन में लगते हुए सरकारी सहायता प्राप्त होने की अपनी बारी का इंतजार करते हैं, जो शासकीय नौकरी पेशा से सेवा निवृत्त हुए हैं, अब वे अपनी पेंशन में अपना गुजारा करने लगे, कांपते हाथों से लड़खड़ाते कदमों से बिजली का बिल पटाते जब कभी अपने लाडले बेटे और बहू के विदेश में फलने-फूलने और नाती-नातिन को स्मृति-पटल पर अठखेलियाँ करते मध्यम वृद्ध नयन कल्पना करते तो झुरियों से सिकुड़े चेहरे पर एक उदास मुस्कान खिल उठती, दूसरों को गर्व से अपने होनहार पुत्र का बखान करते झुके शरीर से जब कोई सवाल करता कि इतने सब के बाद आपका यह हाल क्यों? तो एक टीस भरी सिहरन उस वृद्ध शरीर को निरूत्तर कर देती, बंगले झांकता, बात बदलता वो वृद्ध अपने जीजिविषा के चक्रव्यूह को भेदने के अनथक प्रयास में जुट जाता।

निष्कर्ष – यह किसी फिल्म का कथानक नहीं आज की जीवंत वास्तविकता है, वैश्वीकरण ने 'विश्व को तो कुटुम्ब बना दिया' किन्तु 'कुटुम्ब' अपना अस्तित्व और मौलिकता क्रमश: खोता चला गया, पारिवारिक सम्बन्धों के ताने-बाने में क्षुब्द स्वार्थो की शूल-मयी लतिकाएं विष-पुष्पों का पल्लवन करने लगी, जिनमें परिवार की अस्मिता तार-तार होने लगी, अब एक ही छत के नीचे जवान बहू-बेटे और बूढे माँ-बाप के चूल्हे अलग-अलग जलने लगे, सम्पत्ति के विवाद ने बूढ़ों के जीवन को दूभर कर दिया। जीवन को नित दॉव पर लगाते वृद्ध अब कष्टप्रद जीवन बिताने लगे। सम्पत्ति का महत्व बढ़ा फलस्वरूप सम्पत्ति विवाद और इस विषयक अपराध भी बढ़ने लगें।

पारिवारिक सम्बन्धों की धुरी नातेदारी अब स्वार्थो की बलि चढ़ने लगी, सात-फेरों के पवित्र बंधन में भी मोल-भाव, छल कपट होने लगा, दहेज की बेदी पर नव-वधुओं का अग्नि-स्नान सामान्य सी बात हो गई। अब अश्लीलता की सारी सीमाऐं टूटने लगी, पति ही अपनी पत्नि की 'ब्लू-फिल्म' बनाने लगा, अब नैतिकता दुबक कर तिल-तिल मरने लगी, और एक तथा-कथित सभ्य-आधुनिक समाज अपनी बेलगाम गति से निरन्तर गतिशील रहा है।

पारिवारिक सम्बन्धों को प्रगाढ़ता देने वाले तीज-त्यौहार अब बोझपूर्ण औपचारिकता बन गये। जिनके निर्वाहन की आवश्यकता का निरन्तर उल्लघंन होने लगा। 'अर्थ' मृग-मरीचिका में पारिवारिक संबंधों का प्यासा मृग कांक्रीट के जंगलों में सद्‌भावना की छॉव ढूंढता रहा, किन्तु नातेदारी के सूखे ठूंठ उसे स्वार्थ की तपती धूप के सिवा दे भी क्या सकती हैं।

व्यापार-वाणिज्य जो किसी समाज की प्रगति के नियामक होते हैं, अपनी नकारात्मक असीमित सघनता के ये वट-वृद्धा पारिवारिक संबंधों के सुकोमल, ममतामयी, स्नेहपूर्ण कोंपलों को कभी पनपने नहीं देंगे।

वैश्वीकरण ने भारतीय परिवार एवं पारिवारिक संबंधों पर जो नकारत्मक प्रभाव डाला है, उससे अब हमारे पारम्परिक परिवारों का स्वरूप पश्चिम के ऋणात्मक परिवारों के सदृश्य दृष्टिगत हो रहा है। जो कि चिंता विषय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. रामरतन शर्मा – अंतर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र एवं वित, तृतीय (आवृति) 2013
2. प्रतियोगिता निर्देशिका – 'वैश्वीकरण और बदलता सामाजिक परिवेश'– नंव, 2007 अंक
3. समाचार पत्र दैनिक जागरण – 12.12.07 रिपोर्ट 'वैश्वीकरण का परिवार पर प्रभाव'।
4. सिंह एम.एम. – नगरीय परिवेश और हिंदू परिवार – बदलते प्रतिमान– विवेक प्रकाशन दिल्ली।
5. कापड़िया के.एम. –भारत में परिवार एवं विवाह– आक्सफोर्ड वि.वि. प्रेस बम्बई।

****

भारत में सरोगेसी और कानून

डॉ. ज्योति मेहता *

प्रस्तावना – भारत हमेशा से मजबूत पारिवारिक तंत्र के लिए जाना जाता है। हमारे यहाँ यह माना जाता है । की स्वास्थ्य पारिवारिक तंत्र के अंदर ही बच्चे का पूर्ण विकास संभव है यह भी सर्वविदित है कि सामान्य जैविक प्रक्रिया के तहत विवाहित दंपति से जन्म लेने वाले बच्चों का मानसिक और पारिवारिक विकास अच्छा होता है।

सरोगेसी भी एक ऐसी तकनीकी खोज है जिसमें एक ओर नि:संतान दंपति होते है जिन्हे संतान के इच्छा होती है तो दूसरी ओर एक स्त्री होती है उनकी इच्छा की पूर्ति सरोगेट मदर के रूप में करती है। कोई भी तकनीकी खोज जब समाज में प्रचलन में आती है तब समाज पर उसके सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनो प्रकार के प्रभाव पड़ते है। उस स्थिति में विधायिका की यह भूमिका होती है कि वह निश्चित एंव सुव्यवस्थित विधि बनाए जिससे की उस तकनीकी खोज का समाज में सकारात्मक के प्रयोग हो एंव उसके नकारात्मक प्रभाव को नियंत्रित एंव निबंधित किया जा सके । साथ ही यह विधि संहिताबद्ध होनी चाहिए ।

कानून का उद्देश्य केवल नि:संतान दंपति को संतान प्राप्ति का विकल्प प्रदान करना है, जो शाररिक एंव चिकित्सकीय आधार पर संतानोत्पती में असमर्थ है तथा दूसरी तरफ उस महिला के हित को भी संरक्षित करना है जो उनकी इच्छा की पूर्ति सरोगेट मदर के रूप में करती है।

'इंडियन काउंसिल फारमेडिकल रिसर्च' के अधीनक्षण में राष्ट्रीय दिशा निर्देश का प्रारूप तैयार किया गया है। यह प्रारूप विभिन्न क्षेत्रों के प्रोफेसर, वैज्ञानिक एंव शिक्षाविद् द्वारा तैयार किया गया । सरोगेसी व्यवस्था एक संविदा पर आधारित है और किसी भी संविदा की वैधता के लिए कुछ औपचारिकताए पुरी करनी होती है।

1. भारतीय संविदा अधिनियम 1872 की धारा 10 के अन्तर्गत रहते हुए ऐसी संविदा में दो सक्षम पक्षकार होना चाहिए ।

2. करार लिखित एंव पंजीकृत होना चाहिए – इस करार में

1. सरोगेट मदर का नाम उम्र , पता।
2. इच्छक माता-पिता का नाम पता।
3. स्पर्म के दाता हा नाम, उम्र तथा पता सरोगेट मदर चिकित्सकीय खर्चो के इच्छुक माता पिता से प्राप्त कर सकेगी ।

3. विधिक माँ कौन होगी – इस स्थिति में उत्पन्न संतान की विधिक माँ वह होगी जिसके अंडाणु से उस संतान का जन्म हुआ है।

4. सरोगेट मदर की योग्यता –

1. वह विवाहित हो और पहले से उसका अपना एक बच्चा होना चाहिए।
2. आयु 21 से 35 के बीच होना चाहिए।
3. शाररिक व मानसिक रूप से स्वस्थ्य हो ।
4. दो बार से अधिक सरोगेट मदर बनने की अनुमति नही दी जानी चाहिए।

5. सरोगेट मदर के हितो के सरंक्षित करने वाले प्रावधान –

1. **गर्भावस्था को समाप्त करने का अधिकार –** जहाँ गंभीर अवस्था की अवधि बारह सप्ताह से अधिक है परन्तु 20 सप्ताह कम है यदि मेडिकल प्रेक्टिशनर की राय में गर्भावस्था से गर्भवति महिला के जीवन को खतरा है या यदि बच्चा जन्म लेता है तो ऐसी शाररिक, मानसिक अपंगता से ग्रस्त हो गया जो की गंभीर विकलांग की कोटी में आता है तो उम्र परिस्थिति में वह अपने गर्भ को समाप्त कर सकेगी।

6. सरोगेसी संविदा से बाहर निकलने का अधिकार – उस अधिकार के अन्तर्गत सरोगेट मदर भ्रूण के अत: प्रत्यारोपण के पूर्व किसी भी समय सरोगेसी संविदा से बाहर आ सकेगी यदि इच्छुक माता –पिता आवष्यक खर्च एंव सुविधाए जो सविंदा के समयतय हुई नही देते हों।

7. सरोगेसी व्यवस्था द्वारा उत्पन्न संतान का अधिकार–

1. सरोगेसी करार से जन्म लेने वाले बच्चे को वे सभी अधिकार प्राप्त होगें जो इच्छूक माता-पिता के बच्चो को जन्म से प्राप्त हो सकता है।
2. 18 वर्ष की आयु के बाद उन्हे जैनेटिक माता-पिता या सरोगेट मदर के बारे में जानने का अधिकार होगा।
3. बच्चे के जन्म होने के उपरांत जन्म प्रमाण पत्र पर सरोगेट मदर , दातात तथा इच्छुक माता पिता का नाम होगा। यह भारतीय साक्ष्य के अधिनियम के लोक दस्तावेज से है।

भारत में सरोगेस अवैध नही है और इसके परिणामस्वरूप जो सरोगेट मदर होती है। उन्हे पता ही नही होता वह सरोगेसी के लिए किन नियमो के तहत बाध्य है। गरीब भारतीय महिलाओ का विदेशियों और धनाढ्य वर्ग के लालच में आकर कोंक किराए पर देना धंधे का रूप ले चुकी है। महाराष्ट्र इस क्षेत्र मे अग्रिणी है इसके बाद गुजरात, आंध्रपदेश और दिल्ली का नम्बर आता है।

भारत में सरोगेसी का खर्चा अन्य देशो से कई गुना कम है भारत में 3000 से ज्यादा क्लिनीक यह सुविधा देते है। इनमें 350 ही नियमित रूप से सरोगेसी सेवा देता है। युरोप अमेरिका और कनाडा भातरीय सरोगेट मदर के बढ़े ग्राहक है। एक बार माँ बनने के बदले 25 हजारे से 6 लाख तक रूपए मिल जाते है। यह मूल रूप से मानव भ्रूण का कारोबार है, इसमें सरोगेट मदर दूसरी दंपति के भ्रुण को अपने गर्भ में पूर्ण परिपक्व होने तक पालती है। इस प्रक्रिया में महिला की जान चली जाती है या अपंगयता किसी तरह क्षतिग्रस्त बच्चे का जन्म होता है तो इसकी जिम्मेदारी कौन लेगा यह तय नही है। साथ ही कम उम्र की महिलाओ द्वारा सरोगेट मदर बनने की चिंता का विषय है।

`पूर्व में भारत सरकार ने 2013 में एक अधिसूचना दायर कर विदेशी

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नाकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

जोडों के लिए कृत्रित प्रजनन के जरिए मानव भ्रूणो के आयात को मंजूरी दे दी है।

कैबिनेट से पास –

7. प्रस्तावित सरोगेसी रेग्युलेशन बिल 2016 में प्रावधान :–
1. कमर्शियल सरोगेसी प्रतिबंधित
2. सरोगेसी क्लिीनिक्स का पंजीकरण अनिवार्य
3. केन्द्र व राज्य सरकार के नियंत्रण में रहेगा, सरोगेसी बोर्ड।
4. 25 वर्ष तक सरोगेसी बेबी का रिकोर्ड रखना अनिवार्य।
5. 2002 में आई.सी.एम. आर के गाइड़ लाईन पर संचालित है सरोगेसी क्लिीनिक्स।1
6. 2010 में असिस्टेंड रिप्रोडिक्ट टेक्नोलोजी बिल भारत में बना जो कभी पास नही हुआ।
7. 2005 में इंडियन काउंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च ने उस पेशे की पेचीदगियों को देखते हुए दिशा –निर्देश दिए है। जिनका काफी पालन नही हुआ।
8. उपरोक्त बिल के मुताबिक अविवाहित पुरूष या महिला सिंगल, लिव इन में रह रहा जोडा और समलैगिंक जोडे अब सरोगेसी के लिए आवेदन नही कर सकते है। इग्लैण्ड में सिंगल पैरेन्टस के लिए सरोगेी अवैधानिक है इसके साथ ही विदेशी अप्रवासी भारतीय भी इसका फायदा नही ले सकेगें।

निष्कर्ष – भारतीय समाज की वैवाहिक, पारिवारिक और सामाजिक व्यवस्था में नैतिक मूल्यों की जडे क़ाफी गहरी है ऐसे में नि:संतान दंपतियों का संतान सुख देने के लिए वरदान के रूप में उंचाई तकनीक पता नही कब रास्ते से भटक गई कभी सिंगल पैरेन्टस बनने एंव बुजुर्ग दंपतियों को संतान सुख देने की वजह से सरोगेसी जैसी चिकित्सकीय व्यवस्था विवादों में रही।

ऐसे में यहाँ के बहुत बड़ जन समूदाय के लिए यह समझ पाना मुश्किल है कि ऐसे बच्चे का भविष्य क्या होगा ? क्या वे इस बात को स्वीकार कर पाऐंगे की उनके जन्म की प्रक्रिया में माँ का कोई अस्तिव ही नही था। वे एक ऐसी किराए की कोंक में थे जिसे उनको जन्म देने के लिए नोटो का बंडाल थमा दिया गया था। संतान के जीवन में माँ पिता दोनो का होना जरूरी है लेकिन, सिंगल पिता बनने की चाहत में माँ के अस्तिव को चुनौति देना अर्थात् माँ की ममता का पिता के पालनहार स्वरूप से तुलना नही। समाज के अस्तिव के लिए खतरनाक होगा। यह एक ऐसी समाज का निर्माण करेगा जहाँ बच्चे–बच्चियाँ ममताविहिन होगें तो फिर प्यार भरे रिश्तों में कैसे बंधेंगे। इससे समाज का अस्तिव ही खतरे में पड़ जाएगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. विधि भारती 2012 जुलाई से सिंतबर।
2. दैनिक भास्कर अगस्त 2016
3. दैनिक पत्रिका अगस्त 2015

****

Doctorine Of Welfare State In The Novel Of Amish Tripathi's Sita - Warrior Of Mithila

Rakesh Prasad Pandey * Lok Narayan Mishra**

Abstract - This paper intends to present the Hindu philosophy of Rajadharma or the welfare state in old Indian epic and introduced it in a new way and with multiple dimensions. This is Amish Tripathi's latest and the second book of Ram Chandra series *Sita Warrior of Mithila*. He is a new Indian writer who has shown an unsurpassed brilliance in rewriting Indian mythology. Amish Tripathi recreates the Indian epic in modern way and the philosophy introduced and knitted in the plot in conversational manner that it incurve the feeling of humanism and touches the heart of reader by its style, he leads the foundation brick of the epic in new manner that reader never feel boring or lengthy. In this book the Author introduced Sita as an Iron lady or a lady of strong will and passion. As name mentioned Sita is protagonist of the novel and Ram, Lakshman and other characters are mere characters.

Unlike Ramayana of Valmiki or Kambat Ramayana here Sita states the concept of welfare state and how a king can rule for welfare of his countrymen. The king can make decisions only in the welfare of state according to law, She shows the place of king in the state and advised all these to Ram, Lakshmana and Bharat. As a result, this paper not only fills the gap in the literature of virtuous leadership development of women and concept of welfare state but also provides some significance and insights on virtues and ethical developments from the ancient philosophical prospective. This research provides an insight approach to leadership where Sita sets the traits of virtuous leadership, philosophical, political and social welfares the path for achieving the same for state.

Key Words - Ram Chandra series, Ramayana, Kambhat Ramayana, Indian philosophy, leadership, welfare state, protagonist.

Introduction - The Indian literary market is dominated by novels dealing with the mythical past and novels are often recreation of the Indian myths creativity to address the modern contemporary trends and social hurdles and concerns with eternal human issues. The trend of successful novels having mythological content started in 2003 with Ashok Banker best telling eight volumes Ramayana series. Amish Tripathi is the Next one who is dealing with the same but different is selection pattern, view, trail of thoughts and philosophy. Sita: Warrior of Mithila, the second book in Amish Tripathi's Ramchandra series, is out and doubtless. Amish tries a new storytelling technique here, which he calls "Hyperlink" and others refer to as "Multilinear narrative". So, while the first book of the Ramchandra series, Scion of Ikshvakau, had Ram as its protagonist, the second book follows Sita, from infancy through her education to her marriage to Ram. Both books ends with the abduction of Sita by Raavan. Amish Tripathi is a recognized contemporary Indian fiction writer best known for writing The Shiva Trilogy and Ram Chandra series. There are many books that attempt to tell Ramayana through Sita's point of view. But this one by Amish tripathi is different in style and manner, this novel acquire philosophical and humanistic approach. Sita, here is not mere a lady but a warrior, a philosopher, statesmen.

Concept of welfare State - A **welfare state** is a concept of government where the state plays a key role in the protection and promotion of the economic and social well-being of its citizens. It is based on the principles of equality of opportunity, equitable distribution of wealth, and public responsibility for those unable to avail themselves of the minimal provisions for a good life. The general term may cover a variety of forms of economic and social organization. There are two main interpretations of the idea of a welfare state:

A model in which the state assumes primary responsibility for the welfare of its citizens. This responsibility in theory ought to be comprehensive, because all aspects of welfare are considered and universally applied to citizens as a "right".

Welfare state can also mean the creation of a "social safety net" of minimum standards of varying forms of welfare.

In the strictest sense, a welfare state is a government that provides for the welfare, or the well-being, of its citizens completely. Such a government is involved in citizens lives

*Research Scholar (English) APS University, Rewa (M.P.) INDIA
**Research Scholar (Law) B. U. Bhopal (M.P.) INDIA

at every level. It provides for physical, material, and social needs rather than the people providing for their own. The purpose of the welfare stateis to create economic equality or to assure equitable standards of living for all.

The welfare state provides education, housing, sustenance, healthcare, pensions, unemployment insurance, sick leave or time off due to injury, supplemental income in some cases, and equal wages through price and wage controls. It also provides for public transportation, childcare, social amenities such as public parks and libraries, as well as many other goods and services. Some of these items are paid for via government insurance programs while others are paid for by taxes.

The Concept of welfare state or Rajadharma in Sita: Warrior of Mithila - In Sita: warrior of Mithila the philosophy of welfare state is stated through out the book there are many events and incidents where such descriptions are found. First of all, the adaptation of an infant child by king Janak and queen of Mithila is the first step of welfare. It means no one is alone and sidelined from the state everyone have right for living and survival.

"Unfortunately, fifteen years ago, an earthquake subsequent flood had changed the course of the Gandaki. It also changed the fortune of Mithila."

In this it is pretty clear that the source of water must be stored and canals must be made for the states welfare. In this such projects were planned and pursued for the development the state and happiness of the country which was ultimate goal of a welfare state.

Next to that the goal of state is to collect the tax and enrich their state to help the poor or by making policies for the poor. When Raavan defeated the Ayodhyan king Dasharatha the Mithila was unaffected because sunaina has initiated some reforms that had worked well. For instance, local tax collection and administration had been developed to the village level. She use to increase revenue from agriculture to retain the excess bureaucracy and expanded the police force. These were not major changes and were implemented relatively smoothly, without disturbing the daily life of the Mithilans. However there were mass disturbances in the other kingdom by the war and breach of trade between Ayodhaya and Lanka. It shows the great management and good policy making for the state which is symbol of the rich and developing state and essential for the public or civilians of a state.

"Kushadhwaj, we have been discussing the road connecting Sankashya to Mithila for many years now,' said Sunaina. 'it was washed away in the great flood. But it has been more than two decades since. The absence of that road has caused immense hardship to the citizens and the traders of Mithila."

"you had agreed in the principle to pay for two-third of the cost of the road, if Mithila financed the remaining one-third……………lets seal the agreement and construction begins."

In this it clearly mentioned that the contracts made and must be followed for the roads and other essential things of state. The prior is that the facilities are made for merchants and public or civilians of the state, which is duty of state towards his people.

In chapter five there is the most important description is made which is one the important duty of state is to educate his people. It is duty of state to provide free education to all persons of the state and in that consequence the Sita is sent to the Shvetaketu's gurukul at the age of ten with her friends. It means that the education is compulsory to all, there is no discrimination of sex. Every one has right to get education while it is girl or boy in ashram or gurukul. In gurukul there were Ayuralaya where the children gets education of Ayurveda and become a doctor. There were also subjects regarding non-violence, impulse control, the art of warfare were taught to inculcate self-discipline and a code of conduct for future royal duties.

"Sita sat by the pond, reading Nayayasutra, the classic text which introduced a key school of Indian philosophy, Nyaya Darshan."

This is the sign of highly qualified girls of the state reading and practicing dharma and darshana. These books are used to solve the policy puzzles of the state. They are also essential books for practicing the judjement and to become a good judge by polishing knowledge and understanding shastra related to Dharma.

A girl of slums Samichi a friend of Sita, who studies with her, now She joined police of Mithila. She was raising star, she was no more a girl of slum and later she became minister of state. In this way the lower cast poor girl makes her living with royalists. This shows the power of equality in the state of Mithila.

In chapter twenty six there is wide description of a welfare state and a philosophical and political conversation starts in second paragraph between Sita and Bharata in presence of Ram. In which Sita made a strong statement in the favour of Mithila and criticise the Tax system of Ayodhyans or Sapt Sindhu.

Bharat says "The revenue of a hundred villages for your thoughts, Bhabbi……"

Sita replied "The revenue of a hundred villages from your wealthy Kosala or my poor Mithila?"

This is time of vast change, Bharat. It can be exciting Energising. But many are unsettled by change. The Saptasindhu society has foolishly decided to hate Vaishyas. They see their businessmen as criminals and thieves. It is over-simplistic to assume that the only way a Vaishya makes money is through cheating and profiteering. It is also biased. Such radicalisation increases in times of change and uncertainty. The fact is that while a few businessmen may be crooks, most Vaishyas are hardworking, risk-taking, opportunity-seeking organisers. If they do not prosper, then society does not produce wealth. And if a society does not generate money, most people remain poor. Which leads to frustration and unrest.

It didn't stop here it carries forward and now it time to

criticise Brahamins and Kshatriyas. On this point sita states that by wisdom of knowledge people can adjust to poverty but may not resented like Vaishyas, but it is also true that Brahmins or path of knowledge are not respected today. As a result people do not listen to the learned Brahimins so that they hate Vaishyas and in this process they have ensured poverty for themselves. The people with ideal status and are honoured today are Kshatriya, the warriors."Battle-honour" is an end in itself! For kshatriyas Sita stated that there's hatred for money, disdain for wisdom and love of violence, and what anyone should expect from this one. And in all this when Bharat asked what they are mere caste or caste by Birth. Sita replied she didn't believe on caste system by birth and its obvious its by way of life what people choose by their living.

Here Amish Tripathi explained the motto of Indian constitution there is no discrimination by birth, caste, or religion. Everyone is equal by birth and their shall not be any discrimination by sex, caste, creed or religion. the evil birth based caste system must be destroyed. Hereinafter not only the caste system is discussed in brief but also the gender and radicalisation is criticised. Usually, they are the biggest fools.'Now days radicalisation is the biggest problem in the world the radical powers are so strong that create disturbances and nuisance. Amish explained in his work that not only young man but some women are too radicalised. These problems should be shot out by education and awareness of ethics.

In all that we reach at the point where the concept of welfare state is fully defined and exercised in the novel of Amish Tripathi. The Rajdharma or Ramrajya is the same concept of welfare state, where every person of a country have right to live happily and enjoy their life and rights provided by the state. In all that state only exercise their powers on behalf of state and for welfare of countrymen.

References :-

1. Tripathi,Amish.Ram Chandra Series: Sita: Warrior of Mithila.Westland Press,New Delhi,2017.
2. Sankhdher, M.M. Yogakshema the Indian model of welfare state. (Delhi: Deep and Deep publications pvt. Ltd.) 2003.
3. Malhotra Kumar Vinay. Welfare State and Supreme Court in India. (Delhi: Deep and Deep Publications).

Websites referred -

1. Available at http://en.wikipedia.org/wiki/Welfare_state last visited on September 10, 2010.
2. Available at http://en.wikipedia.org/wiki/Welfare_stat, last visited on September 13, 2010.

****

Nature, In The Poetry Of Tagore & Page

Dr. Manisha Joshi*

Introduction - Rabindranath had been a great worshipper of Nature. Nature, influenced the poet so much that we find him sitting, with his creativity, in the company of Nature, with brush in hand and bowls of paint, filling the pages with the most beautiful & breath-taking images.

Like Tagore, the Canadian poet, Patricia Kathleen Page also, is not only a great poet but also possesses great command over the domain of colours, brushes & paints, "Since she could not write poetry she began to draw, going first through a realist phase in which she had to 'see with the eye of an ant' in order to appropriate the new & exotic environment; then, she says 'the pen began dreaming'".[1] Hence, it is these multidimensional qualities of theirs, that ex ercise its impact upon their creative mind & bring them closer to Nature. It is the combination of pen & brush, & as, Nature being the common subject it definitely plays a vital role in making their work all the more artistic & creative. Their attitude towards Nature & the flow of their thoughts are spontaneous.

Both the poets have incessantly written on various themes and the there of Nature, is one of the major themes of their poetry. Nature had started influencing Rabindranath right since his childhood. When he was sent to regular school at the age of five, at first he was excited, but after some time, "He did not like to sit in the closed classrooms. Instead, he liked to walk on the grass, in the open ground, under the green trees…. He wanted to see trees, plants & beautiful flowers all around. The chirping of birds & their flitting in the sky gave him immense pleasure."[2] And he has himself mentioned in his biography that during the suffocating loneliness of his childhood, the company or mother Nature only, could provide him the solace & satisfaction, at which he always looked at hungrily and craved for its company. At the age of eight, when Tagore was sent to live in a villa on the bank of the Hughly at Peneti he saw : "the various gaits of so many different boats; & over the fringe of shade patches of the woods on the opposite bank, the gush of the golden life-blood through the pierced breast of the evening-sky."[3] It was since then that, river occupied his mind, he has written many poems on it. On a rainy day the poet's heart dances 'Like a peacock' and 'spread its plumes tinged with rapturous colours of thoughts."

Patricia, was a great traveller. She travelled widely with her husband, W.A. Irwin, when he was Canadian High Commissioner in Australia & Ambassador to Brazil and then Mexico. "Some of her later poems contain the exotic local colour of the countries she has lived in-and in this period she began a second career as an artist, producing intricately detailed, fantastic drawings & paintings."[4] Hence Patricia's 'sea' plays its own major role, as in her poem, "Boy with a Sea Dream", she sees :

Whole finely fretted archipelagoes
of coral where white flowery sea-weeds creep to break
with his tide
and all th deep
clear bottle-green……

Still in another poem "At Sea', the poet describes the sea, 'Sea-birds wheeling', 'the revolving & churning of sea', 'the salt-rimmed deck' very enchantingly.

These descriptions of accuracy of perception of Nature, appear to be palpitating in the poems of both these master poets. The are also the poets of Indian & American seasons, though since both had travelled immensely, they have not made a demarcation line, yet the seasons of which they have usually mentioned in their poems are more of their own native land. Tagore, is a master in describing the different seasons which are fragrant with the delightful smell of rains, on the mother earth and are also filled with the imaginative touches of rains & the rainy seasons – 'the rumbling of the clouds from sky to sky', its soothing showers, the croaks of the frogs and his heart, as previously said rejoicing with it. He almost forgot, that Nature has its harsher side as well. Yet it was never that, he only enjoyed Nature for its serene beauty, but enjoyed it for its fierceness as well. He sang, "Today, the summer has come to my window with its sighs & murmurs & the bees are playing their minstrels at the court of flowering grove.

'Now its time to sit quiet, face to face with thee, & to sing dedication of life in this silent & overflowing leisure."[5] He describes the land-storm, in his 'New Year' & the sea-storm in, 'Sea-waves' (which have been translated by Edverd Thompson) most vividly. In 'New Year' he describes the terrible land-storm -

Like fruit, shaken free by an impatient wind from the villas of its mother flowers,

*Professor (English) Govt. M.L.B. P.G. Girls College, Fort, Indore (MP) INDIA

thou comest, New year, whirling in a frantic dance
& in A sea-storm he says :
Lifting the ship, the storm, an ogress, shouts,
Give ! GIve ! Give !
Patricia Kathleen in her 'Storm in Mexico', describes :
Sky blackening that day over badlands,
Red badlands. Sky blackening, rolling finally falling
Rivers of blood cutting wide earth wide open.

As for the Indian & American seasons are concerned, it is very true that, "Nature has put on a different appearance in Europe & America. Westerners accustomed to snow-capped hills & frozen seas, the bloom of scentless flowers and stunted plants, cannot imagine the luxuriance of eastern vegetation, the dense foliage, the dark blue of a cloudless sky & the scent of 'Bela', 'Shepali' & 'Chameli'." [6]

Hence, despite the crude aspect of Nature, Tagore has soaked pages with his intense realism & has given a realistic picture of the beauty of other seasons also. And undoubtedly, it is Autumn that occupies a favoured position, the poet has personified her as Lakshmi, the gracious goddess. The magic of the poet's pen makes 'bakul' blossom & spread its fragrance not only in spring but throughout the year. Patricia, in her 'After Rain' gives the most realistic & beautiful picture with its 'snails' 'the gum-boots', 'flimsy mesh' & 'slipping in the mud', which are experienced not only in Canada but in India too. Rain, in its torrents too, has been the subject of her poem. Both the poets deal with the seasons, with the same ease & efficiency.

There are flowers which frequently blossom in their poems. In one of his poems "Balaka' Tagore describes how continuously the flowers fell on the path of the river –
Flowers drop down ceaselessly –
Jessamine, Champak, Bakul, palas..
The sight of lovely flowers is also often described in the poems¸Page's poetry, as in her 'Short Spring Poem … the short-sighted', she describes daffodils and Jonquils :
Framed by shrub's'
differing greens
the daffodils :
soft-golden stars on stilts
Jonquils
red-eyed as vireo
peer out.

Also the sight of refreshing tulips is seen. Personification is one of the major techniques used by her as, in her 'Vegetable Island', she has personified flowers and trees as the owners :
Flowers own it.
Everywhere their flags flutter.
The deep woods are stormed.
and trees throw bouquets to each other, pass..

As for Tagore, it is said "Tagore is a pantheist. To him every object of Nature pulsates with life."[7] Hence personification is often noticed in his poems and even the inanimate objects derive an active personality.

"Why I he earth called me to her arms
Why her night's silence spoke to me of stars, &
Her day light kissed my thoughts into flower."[8]

Patricia's expanse of imagination & her bend towards Nature becomes quite obvious when one goes through her series of Nature poems. The over-powering image of sunflowers, create a deep impact when in the 'Flower Bed', she desribes the forest of "sunflowers, turned sunward, yellow-lashed".

Somewhat similar feeling is experienced, when one comes across lines of Tagore, when in 'The Gardener' he says -
Over the green & the yellow rice fiels,
Sweep the shadow of autumn
clouds follwed by the swift chasing sun.

Then it is bakul, which blossoms making the atmosphere fragrant & it also becomes musical with the buzzing of the bees. This foliage, fragrance & beauty enhances the charm of his poetry, making his garden of poetry richer & beautiful.

The impact of Nature on these two poets has been so deep, that in their later poetry, they identify not only themselves completely with nature but start merging other human figures as well, with their landscapes. As, Tagore in one of his poems, in which he has referred of a dumb girl, who has been residing near a river and all the fishermen had gone for their dinner and everything had been absolutely still & silent. In the midst of this loneliness and silence this dumb girl sat beneath a tree. It is here that we find, how Nature merges into the lonely life of the girl, for beneath the vast sky there was this lonely dumb girl & on the other hand there was the dumb Nature, who accompanied her. This protean gift of self-effacement gives him an access to ecstatic moments of identification with Nature. In her poem 'At Sea' Patricia feels that the words spoken by sea-birds were like :
butterfly or bird
lighting upon my wrist,
blue butterfly or Brazil………
And then, in 'Finches Feeding', the poet is so deeply engrossed in observing the quiet & busy birds, that she says :

Neither my delight nor the length of my watching is conveyed and nothing profound recorede, yet these birds
as I observe them
stir such feelings up –
such yearnings of weightlessness, for hollowness…

With Tagore, the element of total identity or hs merging with Nature is to such an extent that no poet can equal him, as in his, 'Fugitive III-7' he says :

"How often great earth, have I felt my being yearn to flow over you, sharing in the happiness of each blade that raises its signal banner in answer to the beckoning blue of the sky. I feel as if I had belonged to you ages before I was born. That is why in the days when the autumn light shimmers on the mellowing ears of rice, I seem to

remember a past when my mind was everywhere & even to hear voices as of play-fellows echoing from the remote and deeply veiled party." This complete identification with Nature of the poet & his thirst to be one with Nature is revealed when in another of his poem he is reminded of his pre-human cosmic existence & recalls of his embryonic connection with the sea. All these past memories came flooded to him when he recalls that he had remained as an embryo in the womb of the sea for a million of years. In 'Banabani' or the 'Message of forest' Tagore mingled himself with Nature.

In a word both the poets, Tagore & Page have the capability of bringing Nature with its different moods enchantingly & effectively. Nature has filled their poems with warmth, colour, dream & fragrance. The love for Nature is beauty, loveliness as well as in rage. Nature holds somewhat a deeper meaning for Tagore than it is for Page. Yet, her great contribution as a Nature poet cannot be overlooked.

References :-

1. Garry Geddes & Phyllis Bruce, ed., Fifteen Canadian Poets, Plus Ficve) Toronto : Oxford University Press, 1978), p.23.
2. Vivek Ranjan Bhattacharya, Tagore's Vision of a Global Family (New Delhi : ENkay Publishers Pvt. Ltd., 1987), p.23.
3. R.N. Tagore, Reminiscences (New Delhi : The Mac Millan Company of India Ltd., 1980), p.45.
4. Robert Weaver & William Toye, ed., The Oxford Anthology of Canadian Literature (Toronto : Oxford University PRess, 1973), p. 387.
5. V.K. Bhattacharya, Tagore's Vision of a Global Family (New Delhi : Enkay Publishers Pvt. Let., 1987), p. 98
6. M.M. Bhattacherje, Rabindranath Tagore : Poet and Thinket (Delhi : Kitab Mahal Pvt. Ltd., 1961), p. 74
7. T.R. Sharma,..on Rabindranath Tagore (Ghaziabad : Vimal Prakashan Publishers and Distributors, 1986), p.39.
8. Fruit Gathering (Calcutta : Macmillan and Company, 1971), p. 71.

****

Diasporic Writings In English Literature

Dr. Vedprakash Malani*

Introduction - The diasporic writings which are also known as 'expatriate writings' or 'immigrant writings' give voice to the painful encounters of the writers when they undergo and subjected to the clash of two cultures or face the severe brunt of the racial discrimination they undergo. They often find themselves squeezed between two different cultures. The suffering of nostalgia, a feeling of loss and stress of reinventing home obsess them which find expression, consciously or unconsciously in their writings. The literary works of these diasporic writers reflect such deep anguish and experiences of deep pain and agony.

The word "diaspora", derived from the Greek word *diaspeiro*, literally means scattering or dispersion of the people from their homeland. Diaspora in Hebrew means exile (*Jeremiah*: 24:5) that is "expulsion of a national from his country by the government or voluntary removal of a citizen, usually in order to escape punishment." (The *Columbia Encyclopedia*) Diaspora has been mentioned in the Old Testament also as punishment. The Jews were displaced from Judea in 586 BCE by Babylonians and Jerusalem in 135 CE by the Roman Empire. Their homelessness, dislocation and memories of their native land were feelings of the Diasporic sensibility. Hardships in a new land under new laws and geographical situations and inability to go back, were the remarkable features of the Diaspora of the Jews.

In this sense, it is accompanied with a "dream of return". (Vertovec. *Aspects* 228) It describes with their country of origin and includes a range of groups "Such as political refugees, alien residents, Guest workers, immigrants, expellees, ethnic .And racial minorities, and overseas communications." (Shuval pp 41-57)

The term diaspora has been approached in various ways. Cohen (1997) proposes a typology in which he classifies diasporas as: victim diasporas, labor and imperial diasporas, trade diasporas, culture diasporas, and global deterntorialized diasporas. Cohen identifies the Jewish, Palestinian, Irish, African and American Diasporas as victim Diasporas. He represents the British as an imperial diaspora and the Indian as a labour diaspora. Cohen suggests the following features for Diasporas and discusses how each type of Diasporas demonstrates some of these aspects:

1. Dispersal from an original homeland, often traumatically;
2. The expansion from a homeland in search of work, in pursuit of trade or to further colonial ambitions;
3. A collective memory and myth about homeland;
4. An idealization of the supposed ancestral home;
5. A return movement;
6. A strong ethnic group consciousness sustained over a long time;
7. A troubled relationship with host societies;
8. A sense of solidarity with co-ethnic members in other countries; and
9. The possibility of a distinctive creative, enriching life in tolerant host countries. (Salehi 15)

Vertovec (1997) discusses in his essay, *Three Meanings of Diaspora*, the current usage of the term and sums up three meanings for diaspora."…to study them as social networks and as functions of process. Researchers with a transnational approach place diaspora in its broad geographical and historical context. They do not see immigration flow as linear movement but a fragmentary process of connection". (Vertovec. *Three meanings* 235)

Vertovec believes that the first meaning that of diasporas as social construction is the most common in the literature. There is a dense web of affiliation between Diasporas and their country of origin. Diasporas communities in the host countries usually reconstruct the class, ethnicity, religion, political affiliation, and language that they belonged to in their homeland. Hence, Diaspora as a social form is based on a Diaspora's continued ties, imaginary or actual, with a homeland despite separation from that homeland. Vertovec contends that diasporas as social form is characterized by a relationship "between (a) globally dispersed yet collectively self- identified ethnic groups, (b) the territorial states and contexts where such groups reside, and (c) the homeland states and contexts whence they or their forbears came." (Vertovec. *Aspects* 235)

Diaspora as mode of cultural production contextualizes diasporic communities in globalism and transnationalism. There are other models for conceptualizing Diasporas, to the social nature of diaspora is significant -

Some diaspora definitions put an emphasis more on the traumatic exile from historical dispersal throughout the

*Asst. Professor (Guest Faculty) Govt. College, Pandhana (M.P.) INDIA

other lands. In this manner, Chaliand and Rageau (1991) consider four characteristics for diaspora: forced dispersion, retention of a collective historical cultural memory of dispersion, the will to transmit a heritage, and the ability of the group to survive over time (Salehi 42).

Some scholars conceive of diaspora as an identified group characterized by specific social relationships despite their dispersal for instance, defines modern Diasporas as "ethnic minority groups of migrant origins residing and acting in host counties but maintaining strong sentimental and material links with their countries of origin- their homelands" (Sheffer 12).

Skeldon (2003) holds that and remarks - Diasporas preserve these connections by creating associations and organizations such as ethnic affinity groups, alumni associations, religious organizations, professional associations, charitable organizations… investment groups, affiliates of political parties, humanitarian relief organizations, schools and clubs for the preservation of culture, virtual networks, and federations of associations… (Skeldon 2003)

Diaspora, the dispersal of people around the world often forced by major historical and political upheavals, carries along with it seeds from the original land that help people on the move and their descendants to root themselves in new places and live as communities of people living together in a county and share language, religion, custom or folklore and claim on their loyalty and emotions. Diasporic writing has been increased and for that they get disciplinary and academic recognition. It has emerged as a distinct literary genre these days. A large number of people have migrated from India to various foreign lands by 'forced exiles' or 'self-imposed exiles'. Some of them created history in the field of writing. These immigrant writers shows the feeling of alienation and rootlessness lying in them. It may include also the unwilling acceptance of the host country.

Diasporans maintains contact with their native land and with other dispersed peopleof the same group. Ethnic writers do not have an organization of their own to remain in touch with one another. As Stephen Gill (13th Aug. 2007) quoted in his blogs, "Diasporans in history had diaries in which they recorded the hard life in the lands of their birth. They often talked and wrote against the laws and prejudices in the land of their birth. Because those factors were responsible for their exile, they attacked them."

Second generation children might not be included in diasporans. This new generation cannot be nostalgic about their country because they only heard, read or seen about it on the TV screens like any other country and any person. While their children are the results of mixed marriages between various ethnic groups, they should not be known as diasporans. They had nothing to be nostalgic about. They may have had soft corner for the country of their mother, and nothing more than that.

The immigrants who go abroad for their betterment cannot be Diasporans, because they can easily go back. These migrations are not Diaspora, because professional and skilled immigrants, that includes doctors, engineers, nurses and investors are not in compulsion of leaving their country. Many immigrants who left their lands of birth for newer opportunities are not diasporans beccause they left their homeland showing loyalty towards god of gold. Most of them cannot adjust to the life back home. It is an amazing fact that the existence of Diaspora is equally old as the history of Diasporic writings in India.

References :-

1. Cohen, R. (1997). Global diasporas: An introduction. London: UCL Press.
2. Salehi, Soodabeh. Buiding Bridges: The Role of the Indian Diaspora in Canada Literature Building Review.
3. Sheffer, G. (1986). A new field of study: Modern Diasporas in international politics. In G. Sheffer (Ed.), Modern diasporas in international politics, (pp. 1-16). London: Croom Helm.
4. Shuval, J. (2000). Diaspora migration: Definitional ambiguities and a theoretical paradigm. International Migration, 38(5)
5. Skeldon, R. (2003). The Chinese Diaspora or the Migration of Chinese Peoples? In L. J. C. Ma & C. Cartier (Eds.), The Chinese Diaspora: Space, Place, Mobility and Identity (pp.51-66). Oxford: Rowman and Littlefield.
6. Vertovec, S. (1997). Three meaning of "diaspora" exemplified among South Asian religions. Diaspora, 6(3),
7. Vertovec, Steven, *Aspects of South Asian Diaspora*, Delhi: Oxford University Press, Papers on India. Vol.2 Part 2 1991.

****

Thematic Re-Appraisal Of Girish Karnad's Plays

Dr. Niranjana Shrivastava Malani*

Introduction - A remarkable feature of Karnad's plays is that they have a socio-cultural concern despite being mythical and metaphysical. They show how Karnad is deeply rooted in his soil and how he evokes the sensibility of the present day audience. The dilemma of the characters represents the dilemma of common man.

Themes in the Plays of Girish Karnad presents before us the dramatic world of Girish Karnad. He draws the source of his plays from myths, legends, folktales, history and his contemporary reality. To make his sources alive and true, he reworks with them. Moreover, he gives subjective interpretation to the events and inscribes the socio-cultural, philosophical, political and empirical specificities. He presents Indian culture and tradition in his plays, and combines the worlds of reality, fantasy and universality of human knowledge.

In **Yayati** Karnad delineates the pervasive philosophy of existentialism. "He takes the myth of **Yayati** from the **Mahabharata** and presents the ¯conflicting philosophies, physical, emotional and psychological repercussions of his characters in an attempt to integrate his creative enterprise on duty and responsibility, existence and essence, and the ethics and aesthetics." (Nayak 28) **Yayati i**s a self-consciously existentialist drama on the theme of responsibility. This play also deals with the issues of class and caste division. Issue of women subordination gets highlighted in the Yayati's treatment of the women in the play.

The source of his plays are mainly myths, folktales, legends, contemporary reality and history. "His plays have Indian settings and potential thematic values based on Indian philosophy, sociology, religious beliefs, psychology, historical developments, myths legends and folk-lores". (Nayak 5)

He demonstrates traditions and culture of India in his plays. His plays are a combination of fantasy, reality and universality, in this context, Mukherjee aptly says, "In Karnad's plays, the worlds of reality and fantasy or illusion meet in such a way that poetry is created". (Mukherjee 17) He always draws the wealth of his dramatic knowledge from the past, weaves them in the present and makes them desirable for the future. Nayak remarks, "Karnad has the association of sensibility with the indispensable past, immediate present and impending future. In his modernist approach, he makes them his repertoire in contemporary discourse". (Nayak 6)

Babu rightly points out that in Karnad's plays, "Myths, legends and folk forms function as a kind of cultural anesthesia and they have been used for introducing and eliminating, in our racial unconsciousness, cultural pathogens such as caste and gender distinctions and religious fanaticism" (Babu 238)

Girish Karnad's **The Fire and the Rain** is based on the myth of Yavakri taken from the **Mahabharata**. This play consists of symbolical and allegorical connotations and is a dramatic portrayal of a difference between good and evil. Dharwadker rightly states that in this play, "Karnad reimagines the world of Hindu antiquity and constructs a story of passion, loss, and sacrifice in the context of Vedic ritual, spiritual discipline (tapasya), social and ethical differences between human agents."(Dharwadker. Collected Plays pp xvi-xvii)

Bali-The Sacrifice is an moral study that questions the authenticity of Rigvedic practice of animal sacrifice in Hindu customs. In this play, he presents India's clashing religious and cultural ethos. Karnad selected this thirteenth century Kannad epic **Yashodhara Charite** and presents a new interpretation on moral, social and religious structure of an individual's faith. He also explores an individual's association with love, sex and passion for the gratification of his public life. The play presents a great philosophical thinking on the Indian tradition and ideological contents about values, moral conflicts and dilemmas. The play becomes a sight for struggle between personal authority and popular culture of cruelty. In this context Nayak is right in stating: "Karnad uses the context of the play with a hint at a positivist and exclusivist possibility of all ideologies and necessary human bonds in human relationships."(Nayak 29) He negotiates between the culture and need based ideology in their functional relevance and philosophical thinking.

The theme of **Hayavadana** is man's incompleteness and his desire for entireness and perfection. It is this desire which makes people anxious in this ordinary existence and makes them reach out for extraordinary things. In the main plot, there is the story of the transposition of heads and in

***Asst. Professor (Guest Faculty) Govt. S. N. P. G. College, Khandwa (M.P.) INDIA**

the sub-plot is the story of Hayavadana. The theme of the **Hayavadana** depicts socio-cultural aspect and also metaphysical one. Taking this in view Raykar writes: "…. the theme of the play has two aspects, a socio-cultural aspect and a metaphysical one. At both levels it shows the conflict between two polarities (namely Apollonian and Dionysian) as the vital truth of human existence." (Raykar 177)

In **Naga-Mandala** Karnad depicts the man-woman relationship in their conjugal life. "It is a powerful illustration of the agony and anguish faced by both men and women in their development into adult roles. It also deals with social adjustment of an individual in a society where he is given little space for self development and independence as a being. The male conception of keeping full control over the body, sexuality and virtue of woman through the institutions of family and values like chastity are mocked in the play." (Gupta 250) This combination of "human, abstract, and magical elements creates a synthesis that is thematically and philosophically simpler than the polysemy of *Hayavadana*; it allows for innovative staging and rich visual effects, but appeals more to the fancy than the imagination." (Dharwadker. Complete Plays xxx)

Tale-Danda is a historical play and depicts the conditions of north Karnataka in the twelfth century. Karnad has presented a socio-religious movement which happened in time of Kalachurya dynasty. He is looking back at the history in its immoral anticipation and presents the mystery of caste and religion in Indian society. The play has been written in the backdrop of growing radicalism and presents an individual's attempt towards communal integration during an era of violence. Brooding over the theme of the play, Shukla writes: "The major theme of Karnad's **Tale-Danda** is that of deconstruction of caste and religion to arrive at its real, proper meaning and to restructure the same for the benefit of the society and the country." (Shukla 290)

Karnad's **Tughlaq** is a historical play is praised by critics for its broad range. The play is a rich source of art and contributes itself to different interpretations at various levels. It has the historical and textual facts of Postmodern and neo-historicist discourses. In **Tughlaq**, Karnad unfolds macro-historical situations like the social relations, power affections, political reasons and conservative thoughts in its formation. The play contains the theme of communialism and power-politics. It is the reclaiming of the past with the prominence on the social and political requirements of the present. Nayak holds the view: "For [Karnad] history is no longer a static background for his play; rather it is timeless, alive and absurd in its entirety." (Nayak 139)

Karnad's **The Dreams of Tipu Sultan** is based on the historical events of the eighteenth century in India. The play depicts the psychology of Tipu and his struggle for peace. The play shows his strategic resistance when the princely states were struggling for their individual dominance, and the British were stablizing their empire. Karnad has scrutinized history from Postcolonial perspective and depicted his controversial debates and point of view into the socio-political patterns.

A study of his plays reveals humanistic concern that he has for his fellow beings. "Karnad is India's best living playwright ....his journey from **Yayati** to **The Fire and the Rain** holds a mirror to the very evolution of Indian theatre during nearly four decades. The likes of Girish Karnad enable us to pretend that there is such a thing as a truly "Indian" theatre which can be true to its traditions and at the same time responsive to contemporary concerns." (Tandon 6)

References :-

1. **Babu M. Sarat**. "Social deformity in Tale-Danda". The Plays of Girish Karnad: Critical Perspectives. Dodiya, Jaydipish, Ed. New Delhi: Prestige Books, 1999.
2. **Dharwadker Aparna Bhargava**, "Introduction". Collected Plays : Girish Karnad, Delhi: Oxford University Press, 2006
3. **Dharwadker Aparna Bhargava**, (ed.) Girish Karnad, Complete Plays, Vol. I, New Delhi: Oxford University Press, 2011
4. **Gupta, Santosh**. "Naga-Mandala: A Story of Marriage and Love". The Plays of Girish Karnad: Critical Perspectives: Critical Perspectives. Dodiya, Jaydipish, Ed. New Delhi: Prestige Books, 1999.
5. **Nayak Bhagabat,** Girish Karnad's plays : Archetypal and Aethetical Presentations, Delhi: Author Press, 2011
6. **RaykarMeenakshi**, "An Interview with Girish Karnad". New Quest. November-December, 1999
7. **Shukla Supriya**, "Indian English Drama : An Introduction". Perspectives and Challenges in Indian English Drama. Neeru Tandon, (ed.) New Delhi: Atlantic Publishers and Distributers, 2006
8. **Tandon Neeru**, Perspectives and Challenges in Indian English Drama, New Delhi: Atlantic Publishers, 2006
9. **Mukherjee, Tutun**, (ed). Girish Karnad's Plays. New Delhi: Pencraft International, 2006.

****

A Verbal Opera, Blended With The Wordly And Cynical

Dr. Manisha Mathur *

Abstract - In Victorian England Oscar wilde noted the differences in the displayed moral standards socially and the improper behavior outside the public eye. So he came to see the social interaction as a force and wrote several social satires to highlight the strange perspectives and behaviors of the aristocratic society. In the Importance of Being Earnest he pokes fun at the snobbish, dishonest, fickle minded upperclass, their Victorian values, including their ideas on courtship. The Victorian society was flowery outwardly but artificial and hollow within.

Morality and the constraints it imposes on society is a favourite topic of conversation in the Importance of Being Earnest. Oscar wilde makes fun of the whole victorian idea of morality as a rigid body of rules about what people should and should not do. The very title of the play is a double-edged comment on the phenomenon. The plays central plot the man who both is and isn't ernest/earnest-present a moral paradox-earnestness, which refers to both, the quality of being serious and the quality of being sincere, is the plays primary object of satire.
Key Words - earnest, ernest, satire, moral, paradox, morality, sincerity, humour, comedy, laughter.

Introduction - Characters, such as Jack Gwendolen, Miss prism and Dr. chasuble, who put a premium on sobriety and honesty are either hypocrites or else have the rug pulled out from under them. What wilde wants us to see as truly moral is really the opposite of earnestness: irreverence. Algernon and Jack may create similar deceptions, but they are not morally equivalent characters. When Jack fabricates his brother Ernest's death, he imposes that fantasy on his loved ones, and though we are aware of the deception, they of course, are not. He rounds out the deception with costumes and props, and he does his best to convince the family he is in mourning. He acts hypocritically. In contrast, Algernon and Cecily make up elaborate stories that don't really assault the truth in any serious way or try to alter anyone else's perception of reality. In a sense Algernon and Cecily are characters after wilde's own heart, since in a way they invent life for themselves as though life is a work of art. In some ways, Algernon, not Jack, is the play's real hero. Not only is Algernon like wilde, in his dandified, exquisite wit, tastes and priorities, but he also resembles wilde to the extent that his fictions and inventions resembles those of an artist.

Earnestness, which implies seriousness and sincerity, is the great enemy of morality in the Importance of Being Earnest. Earnestness can take many forms, including boringness, solemnity, pomposity, complacency, smugness, self righteousness, and sense of duty, all of which wilde saw as, hall marks of the Victorian character. When characters in the play use the word serious, they tend to mean trivial and vice-versa. For example, Algernon thinks it shallow for people not to be serious about meals and Gwendolen believes, in matters of grave importance, style, not sincerity is the vital thing. For wilde the word earnest comprised two different but related ideas: thr notion of false truth and the notion of false morality or moralism. The moralism of Victorian society- its smugness and pomposity- impels Algernon and Jack to invent fictitious alter egos so as to be able to escape the structures of propriety and decency. However, what one member of society considers decent or indecent doesn't always reflect what decency really is. One of the play's paradoxes is the impossibility of actually being either earnest (meaning serious or sincere) or moral, while claiming to be so. The characters, who embrace triviality and wickedness are the ones who may have the greatest chance of attaining seriousness and virtue. The earnest/ernest joke strikes at the very heart of Victorian notions of respectability and duty. Gwendolen wants to marry a man called ernest, and she doesn't care whether the man actually possesses the qualities that comprise earnestness. She is, after all, quick to forgive jack's deception. In embodying a man, who is initially neither earnest nor ernest, and who, through forces beyond his control subsequently becomes both earnest and ernest. Jack is a walking, breathing paradox and a complex symbol of Victorian hypocrisy.

One of the most common motifs in the 'Importance of Being Earnest' is the notion of inversion and inversion takes many forms. The play contains inversions of thoughts, situations, and characters, as well as inversions of common notions of morality or philosophical thought. When Algernon

*Associate Professor (English) Shri Atal Bihari Vajpayee Govt. Arts and Com. College, Indore (M.P.) INDIA

remarks, - divorces are made in heaven, he inverts the cliché about marriages being made in heaven. Similarly, at the end of the play, when Jack calls it, a terrible thing for a man to discover that he is been telling the truth all his life, he inverts conventional morality. Most of the women in the play represent an inversion of accepted Victorian practices with regards to gender roles. Lady bracknell usurps the role of the father in interviewing Jack, since typically this was a father's task and Gwendolen and cecity take charge of their own romantic lives, whikle the men stand by watching in a relatively passive role. The trick that wilde plays on miss prism at the end of the play is also a kind of inversion.

The trick projects onto the play's most fervently moralistic character, the image of the 'fallen woman' of melodrama. To the form of Victorian melodrama, wilde contributed the figure of the dandy, a character, who gave the form a moral texture it had never before possessed. In wilde's works, the dandy is a witty, over dresses, self styled philosopher, who speaks in epigrams and paradoxes and ridicule the cant and hypocrisy of society's moral arbiters. To a very large extent, this figure was a self-portrait, a stand-in for wilde himself. The dandy isn't always a comic figure in wilde's work. In a woman of no importance and the picture of dorian gray, he takes the form of the villains Lord Illingworth and Lord Henry wooton, respectively.

But in works such as 'Lady winderrneres Fan', 'An Ideal Husband' and the Importance of Being Earnest, wilde seems to be evolving a more positive and clearly defined moral position on the figure of the dandy. The dandy pretends to be all about surface which makes him seem trivial, shallow and ineffectual. Lord Darlington and Lord Goring (in Lady winderrnere's Fan and An Ideal Husband) both present themselves this way. In fact, dandy in both plays turns out to be something very close to the real hero. He proves to be deeply moral and essential to the happy resolution of the plot.

Though Oscar wilde generally subordinates his plots and characters to his brilliant dialogues with a view in producing ineffable laughter in. the Importance of Being Earnest – has revealed his consummate artistry in working up a good plot line. He is able to carry his audiences through a well-knit plot with its sudden surprises, turns and twists dovetailed with a couple of sub-plots leading to a happy resolution towards the end of the play. His style is typical of him and his bent of mind. He reveals his rich artistry in his unique style. He unfolds the beauty of the English language and all its delicate nuances by his deft handling of it. By his brilliant style, wilde provides a very rich comic fare with his ability to sustain the flow of scintillating dialogue. His style has lucidity, simplicity and euphony. His style provides an intellectual appeal to the theatre-gores and keep them glued to their seats from beginning to end. At times wilde's style reaches poetic heights as we find in the following remarks of Lady Brackwell . 'Ignorance is like a delicate exotic fruit: touch it and the bloom is gone.' He employs metaphors just as poets do. The remarks of Dr. Chausuble:

….Were I fortunate enough to be Miss prism's pupil, I would hang upon her lips….I spoke metaphorically- My metaphor was drawn from bees.

Wilde's dialogues cannot be analyzed, only quoted. The flavor of the play, the sense of an immensely agile and vivacious mind, and the thrusts of a sardoffic intelligence skeptical of received Victorian values, are all present in the exchange between Lady Bracknell, the dread naught dowager and Jack. She will consider him as an eligible suitor for her daughter's hand if his answers to her questions are satisfactory. Comedy, here seems to have created a world, all of its own; when we look closer, we see our own world, after all, through the irreverent gaiety of an iconoclastic mind.

The chief purpose of 'The Importance of Being Earnest' is to provide unalloyed entertainment to its audience and readers. As a result, wilde subordinates the interests of the plot and characters to his brilliant dialogue. As we can observe, the plot line of the play is very thin and it lacks action. Wilde's dialogues here is replete with his witty sayings. From the start of the play to the end, the audience is roaring with laughter at wildean fireworks consisting of wit, epigrams and paradoxes and irony. Without a single exception, all the characters of wilde are a constant source of laughter employing on or all the above devices of humour. Wilde's humour is a self-concious one. All he saw personally, in terms of opposites-mask and antimask. Imagery of acting and of play was to him a way of expressing a profound psychological and metaphysical.

Concepts of man's nature. He placed enormous emphasis on the uniqueness of the individual vision, which meant realizing himself to the full, for 'the beauty of a work of art comes from the fact, that the author is, what he is'. The Importance of Being Earnest have a strong emotional thrust towards a sacrificial climax, in which the love triumphs over baser like the desire for revenges.

References :-

1. Bird, A., the plays of Oscar wilde (vision press 1977).
2. Kermode, F., Modern essays (fontana,1971).
3. Nassar, C.S., Into the Demon universe (new haven and London: yale university press, 1974).
4. Shewn, R., Oscar wilde: Art and Egotism (macmillan,1977).

****

Mahesh Dattani's Tara - A Sociological Study Of Women

Sonakshi Solanki*

Introduction - It is a naked reality that the condition of women in the traditional Indian society was below the rank. A shabby treatment meted out to them by their male counterparts. Women's marginalization, inferiorization had turned them merely a shadow of their male prototypes. She had to remain silent and powerless against the male dominance. Their condition is not much improved in modern Indian society as well. Just 20-30 years back women were not allowed to go out alone. They have no role to play except taking care of their male and children.

This paper is a study about such women in Mahesh Dattani's 'Tara'. Mahesh Dattani is a renowned name in Indo Angliandrama. He was honoured with Sahitya Kala Parishad Awards in 1997. Dattani is internationally acclaimed playwright. His best known plays include "Where There is a Will"(1988), "Dance like a Man"(1989), "Tara"(1990) and "Final Solution"(1992-93).

Dattani is not only a playwright but also a sociologist. In most of his dramas he talks about social problems. His drama 'Tara' is a good study about women's condition in contemporary Indian society.

Dattani through the character of Bharati shows that the only place for a woman is her house and her work is only to look after the children and prepare food for the whole family. In 'Tara', when Patel,Bharati's husband saw Chandan knitting and helping his mother in house work he is annoyed to see this and chides Bharati for not looking after the children properly. He speaks:

Patel (to Bharati): How dare you do this to him…can't you even look after the children? ...what did you do whole day, huh? Watch video?

Bharati: I can't think of things for them to do all the time.

Patel: But you can think of turning him into a sissy teaching him to knit.

This dialogue shows the mentality of Indian male. In their views knitting and preparing food for the family are the only works the Indian women should perform.Patel is a firm believer in old values of male dominance in which women have no voice except to keep themselfsilent.Patel thinks like a typical Indian father giving importance to his son's career over daughter as he speaks to Chandan:

Patel: I am disappointed in you. From now on you are coming to the office with me. I can't see you rotting at home. M.K. Mishra says: "He(Patel) represents the attitude of his generation that believes in blatant discrimination and ridicules the advocates of equality for women in society ". When Chandan suggests his father to take Tara to his office he does not accept his advice. Patel loves to see women knitting, manning the kitchen, rearing children, and seeking happiness in the happiness of their family. Patel wants his son to get good education, good earning and an easy life, but gives no thought to his daughter's career. Dattani also suggests that there is an atmosphere of apathy with the girls in the orthodox Indian family. Girls were not given their proper right in their ancestral property. Tara's maternal grandfather had willed his entire property to Chandan and Tara was completely ignored by him.

It is not only male who is giving second hand treatment to women in Indian family but women are equally responsible. Indian women prefer male child to girl child. If Patel is to believed, Tara's mother and grandfather committed the most cruel act on Tara. They conspired with doctor Thakkar to give leg to Chandan against medical ethics though it was almost certain that the implant would not work. The chances for the girl to retain the leg were better, yet it was decided to take risk of giving both legs to the boy. The implant was a failure and Chandan could have two legs only for two days. The leg was amputated. It was most horrible tyranny meted out to Tara by her own mother. But later she comes to know through his father that her own mother is responsible for tragedy.

Husband beats their wife .It is very common phenomena in Indian orthodox society not only in middle or lower middle class family but also in the so called higher class. Bharati threatens Patel that she would disclose some secrets of his to the children. At this Patel becomes angry and slaps her.As he says:

"you can not tell them. For their sake, don't!if at all they must know, it will be from me not from you".

This incident clearly shows male chauvinism and even the educated male does not hesitate while doing such mean act."In patriarchy men command and it is women's lot to obey, silently, without so much as a protesting sound"[1].Patel is an orthodox Indian male in his thinking towards woman. He believes in the dictum "men for the field and women for

*Research Scholar, Pacific Academy of Higher Education and Research University, Udaipur (Raj.) INDIA

the hearth". Tara also says that her father has a primitive mind set. She tells Roopa, "The men in the house were deciding on hunting while women looked after the cave". This satirical remark reveals the idea of her being imprisoned within four walls of the house. In the end I would like to conclude with observation ofSubhash Chandra who says that, "women remained a marginalised and suppressed group, without voice, withoutpower, and may be without consciousness of their peripheralposition in the society"[2].

References :-

1. Mahesh Dattani. Collected Plays. New Delhi: Penguin Books,2000.
2. The Plays of GirishKarnad: Critical Perspectives,ed. JaideepsinhDodiya,SangamBook ,London,P. 299
3. Ibid. 299

****

अस्तित्ववादी चेतना और मोहन राकेश - औपन्यासिक संदर्भ में

रेखा *

शोध सारांश – अस्तित्ववाद मूलत: एक ऐसा शब्द है जो देखने में जितना सरल और स्वाभाविक प्रतीत होता है वास्तव में उतना सरल और स्वाभाविक नहीं है। इसके भीतर गूढ़ और रहस्यमय कृति है जो हर बदलते क्षण के साथ करवट बदलती रहती है। क्योकि प्रत्येक क्षण कुछ नूतन और कुछ प्राचीन जो परिवर्तित करने अपने अनुरूप ढालने का प्रयास करने में लगा रहता है। अस्तित्व – अर्थात् वजूद! किसी व्यक्ति विशेष का अपने आस-पास के वातावरण के साथ संबंध और महत्व कितना और क्या है यह उसके अस्तित्व से ज्ञात होता है। उसके होने न होने रहने न रहने से किसी को कुछ अंतर पड़ता है तो स्पष्ट अभिप्राय: है कि वह उसके जीवन का अभिन्न अंग है इसी बात को स्पष्ट करने के लिए मोहन राकेश जी ने उपन्यासों के संदर्भ को लिया गया है। मोहन राकेश मानव स्वभाव व मानव मन के कुशल ज्ञाता और मर्मज्ञ भी रहे है। उसी प्रज्ञा का प्रयोग उन्होंने अपने उपन्यास साहित्य में वर्णित किया है।

शब्द कुंजी – अस्तित्व, अंधकार, छटपटाहट, मुक्ति, अभिव्यक्ति, घुटन, संत्रास, पीड़ा, व्याख्या, चेतना, मूल्य, सम्पूर्णता, विवशता।

प्रस्तावना – मोहन राकेश ने आधुनिकता बोध के धरातल पर अस्तित्ववादी चिन्तन के परिपार्श्व में अपने उपन्यास की सर्जना की है। इसका विवेचन करते हुए यह कहना अधिक उचित लगता है कि मोहन राकेश का यह सामाजिक अस्तित्व चिंतन मूलत: व्यक्तिवादी स्तर पर अपनी गहरी छाप बनाए हुए समाज में अपने अस्तित्व के प्रति संघर्षरत मानव की एक ऐसी कथात्मक अभिव्यक्ति के रूप में उभरता है जो समाज में रहकर भी समाज से जुड़ पाने में विवशता अनुभव करता है। व्यक्तिवादी अस्तित्व चेतना बताती है कि जीवित रहना ही मनुष्य की नियति है। उसे जीवन का अर्थचुक जाने की स्थिति में भी लचार होकर जीना है क्योंकि पुरानी मान्यताएँ अर्थहीन हो चुकी है और मनुष्य के सामने कोई ठोस विकल्प भी नहीं है।

अस्तित्ववादी चिंतन की आधारभूमि पर विकसित मोहन राकेश के तीनों उपन्यास मुख्यत: नारी पुरुष के बदलते सन्दर्भ और उनके बीच पनपते जटिल संबंधों की सूक्ष्म व्याख्या प्रस्तुत करते है। प्रमुख शब्द-अस्तित्ववाद पूंजीवाद, चेतना, मूल्य, भौतिक व्यक्तिवादी।

अस्तित्ववादी विचारधारा का उद्गम जर्मन दार्शनिक हर्सेल तथा हेडेगर और डेनिश चिन्तक कीर्कगार्द भी विचार पद्धतियों से माना जाता है।

परन्तु वर्तमानयुग में उसकी ख्याति का श्रेय प्रसिद्ध अस्तित्वादी चिन्तक ज्यां पाल सार्त्र को जाता है। डॉ भारत भूषण अग्रवाल कहते हैं कि अस्तित्ववाद मानव जन्म और मानव जीवन को एक अभिनव रूप में ग्रहण करता है। वर्गसा ने जिसे चिरन्तन प्रवहमान एवं परिवर्तनशील कहा यह उसी का अगला चरण है। यह उस युग का वैचारिक विग्रह है। पूंजीवाद फासिज्म का रूप ले चुका है और साम्यवाद शक्तिशाली सुसज्जित वर्ग राज्य का। बाहय संघर्ष में आबद्ध मनुष्य विवश एवं निरुपाय होकर अपने अस्तित्व के संबंध में प्रश्न उठता है तो पाता है कि उसका अस्तित्व अनेक शक्तियों से अनुशासित है, जिन पर उसका कोई वश नहीं है।'[1]

अस्तित्ववाद साहित्य में मानवीय नियति एवं मानवीय जीवन के यथार्थपरन विश्लेषण के रूप में उपलब्ध होता है। हिन्दी के व्यक्तिवादी उपन्यासकारों ने अपनी रचनाओं में मानवीय चेतना और उसकी नियति का जो यथार्थपरन चित्रण किया है, उसने मूल में अस्तित्ववादी चिन्तन का प्रभाव पड़ा है। ऐसे उपन्यासकारों में अज्ञेय, नरेश मेहता, देवराज और मोहन राकेश प्रमुख है। मोहन राकेश के उपन्यासों में अस्तित्ववादी चिन्तन का विवेचन निम्नांकित तीन स्तरों पर किया जा सकता है-

1. सामाजिक अस्तित्व चेतना
2. भौतिक अस्तित्व चेतना
3. व्यक्तिवादी अस्तित्व चेतना

आज का व्यक्ति समाज से कटा हुआ जीवन जी रहा है। सामाजिक रूढ़ियों, मान्यताओं के प्रति उसे कोई आसक्ति नहीं है। वह चेतना के धरातल पर सोचता है। वह ईश्वर की सत्ता को नहीं मानता अत: धर्म पर भी उसे कोई विश्वास नहीं है। समाज के बीच रहकर भी उसकी स्थिति एक द्वीप के समान है। मुक्तिबोध ने इस स्थिति का चित्रण इस प्रकार किया है-

'मेरे साथ
हण्डहर में दबी हुई अन्य धुकधुकियाँ सोचो तो
कि स्पन्द अब
पीड़ा भरा उत्तारदायित्व भार हो चला,
कोशिश करो, कोशिश करो
जीने की जमीन में गड़कर भी।'[2]

मोहन राकेश ने आधुनिकता बोध के धरातल पर अस्तित्वादी चिंतन के परिपार्श्व में अपनी उपन्यास सर्जना की है। इसका विवेचन करते हुए यह कहना अधिक अचित लगता है कि मोहन राकेश का यह सामाजिक अस्तित्व चिंतन मूलत: व्यक्तिवादी स्तर पर अपनी गहरी छाप बनाए हुए समाज में अपने अस्तित्व के प्रति संघर्षमय मानव की एक ऐसी कथात्मक अभिव्यक्ति के रूप में उभरता है जो समाज में रहकर भी समाज से जुड़ पाने में विवशता अनुभव करता है। सामाजिक आस्तित्व के आधार पर अंधेरे बंद कमरेय का विवेचन निम्न प्रकार प्रस्तुत है-

*सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) हिन्दू महाविद्यालय, रोहतक (हरियाणा) भारत

ठकुराइन के अतिरिक्त अंधेरे बंद कमरेय के सभी पात्र व्यक्तिवादी है। वे धर्म और ईश्वर के प्रति कोई आस्था नहीं रखते। सामाजिक रूढ़ियों की उन्हें कोई चिन्ता नहीं है। यहाँ प्रत्येक पात्र समाज और परिवार में रहते हुए भी 'आत्म निर्वासित' जीवन जी रहा है। हरवंश और नीलिमा पति-पत्नी होते हुए भी निर्वासित जीवन जी रहे है। मधुसूदन, सुषमा, ऊबानू, इबादत उली अकेलेपन से संजस्त है। मूल्यों के प्रति विद्रोह की छटपटाहट एक विचित्र स्थिति को जन्म देती है। तुम्हारे साथ और तुम्हारे बिना, दोनों ही तरह जिन्दगी मुझे असंभव लगती है।'[3]

जीवन में एक-दूसरे के लिए पूरक की संभावनाओं को नकारते हुए नीलिमा और हरवंश अलग-अलग रास्ता चुनते है और असफल रहते हैं। सामाजिक यथार्थ का संत्रास मधुसूदन, सुषमा, जीवन भार्गव की वरण की स्वतंत्रता के अधिकार का गला घोट देते है। 'न आने वाला कल' में धार्मिक आस्था के प्रति स्पष्ट विद्रोह व्यक्त हुआ है। उसके पात्र पादरी के 'सर्मन' को पचा नही पाते और घुटन महसूस करते है मनोज विवाहित होते हुए भी एकाकी, उदास और ऊब का जीवन व्यतीत करने पर अपने को एक यभ 'में जकड़ा हुआ भी अनुभव करता है- वह डर किस चीज का था? उस खामोशी का? अपने अकेलेपन का अपनी सांसों में रूकावट आ जाने के खतरे का ? या कि वहाँ होते हुए भी न होने, बीत चुकने के अहसास का।'

दूसरी और बानी अपनी स्वतंत्रता का उन्मुक्त उपयोग करती है वह किसी पुरुष के नियन्त्रण को स्वीकार नहीं करती, यौन नैतिकता में उसे बिल्कुल विश्वास नहीं। शोभा अपने सामाजिक अस्तित्व को बनाए रखने के लिए मनोज से पुनर्विवाह करती है। परन्तु स्वचेतना उसे मनोज के साथ बांधकर नहीं रहने देती। तीसरी स्थिति में अपने अस्तित्व के प्रति संघर्ष करते हुए मनोज स्कूल से त्यागपत्र देने का निर्णय लेता है।

'अन्तराल' के सभी पात्र अपने-अपने 'द्वीपों' में जीते हैं। सीमा अपनी माँ और भाभी से कटी रहती है और स्वतंत्रता का भरपूर फायदा उठाती है। उसे सब 'अजनबी' दिखाई देते है। जब तक देव जिन्दा रहा वह उससे एकरस नहीं हो सकी। वह चेतना के धरातल पर सोचती है इसलिए कुमार से उसके संबंध कभी सवाभाविक नहीं हो पाए। कुमार स्वयं विवाहित है, परंतु वह विवाह भी उसके अकेलेपन को दूर करने में असमर्थ रहता है। कभी उसका भावात्मक संबंध कस्बे की एक 'पीली लड़की' से बना था, जो अभी तक उसकी चेतना में छाई हुई है। अस्तित्वादी चिंतन के स्तर पर आधुनिक बोध से संपन्न रचनाकार प्राय: भौतिक आस्तित्ववाद का चिंतन ही प्रधान मान लेते हैं और उनके पात्रों का व्यवहार और कार्य का निर्दिष्ट लक्ष्य की ओर विकसित हाता दिखाई देता है। यह लक्ष्य मात्र भौतिक अस्तित्ववादी चेतना है। मोहन राकेश ने आधुनिकता के धरातल पर प्रकाशित रचनाओं में भौतिक अस्तित्व की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए यह भी स्पष्ट किया है कि उसके औपन्यासिक पात्रों में ऐसी मानसिकता विद्यमान है पर वे उसके दास नहीं है, परिस्थितिक परिवेश में उससे मुक्त भी नहीं है। यही कारण है कि भौतिकवादी युग में व्यक्ति अपने लिए तमाम सुविधाएं जुटा लेना चाहता है वह बिलासी जीवन जीता है उसके संबंधों का एक मात्र आधार आर्थिक होता है इस कारण से व्यक्ति स्वार्थ केन्द्रित हो जाता है उसकी संवेदना मरने लगती है परन्तु अपने सामाजिक आस्तित्व के कारण दुहरा-तीहरा जीवन जीता है। मोहर राकेश के अंधेरे बंद कमरे उपन्यास का पात्र हरवंश स्वयं असफल रहने के कारण अपनी पत्नी के माध्यम से अपना स्वार्थ सिद्ध करना चाहता है और असफल रहने पर चिढ़ जाता है। नीलिमा भी भैतिकवादी है। वह यूरोप जाकर हरवां ऊबानू के साथ होटल में रूक जाती है, वह टुप के साथ वापस न आकर स्वतंत्र जीवन जीना चाहती है। मधुसूदन प्रत्यक्ष रूप से आदर्श से बंधा रहता है परंतु वह ठकुराइन की प्रत्येक भांगीमा में यौन-संदर्भो को ही देखता है। वह शुक्ला के प्रति आसक्त होने पर भी इच्छा व्यक्त नहीं कर पाता। इस प्रकार उपन्यास के अधिकांश पात्र भौतिक जगत में अपने स्वार्थ से पीड़ित दुहरा जीवन जीते है। अपनी भौतिक कामनाओं के उत्कर्ष चिंतन के धरातल पर यन आने वाला कल उपन्यास के सभी पात्र अपने-अपने स्वार्थ में जकड़े है। वहाँ साथी एक-दूसरे के प्रति षड़यंत्र करते है ताकि उनका अपना भौतिक संबंध स्थिर बना रहे है उनके अस्तित्व का संघर्ष उनकी स्वार्थलोलुपता के सामने दम तोड़ देता है।

बॉनी अपने स्वार्थ में कई लोगों से शारीरिक संबंध स्थापित करती है। चेरी और लैसरी मनोज के 'त्यागपत्र' का अपने हित में लाभ उठाना चाहते है। शारदा दूसरा विवाह करने की इच्छा व्यक्त करती है। मनोज स्वयं त्यागपत्र देने के बाद भी भौतिक अस्तित्व की चिंता से उबर नहीं पाता। भौतिक अस्तित्ववादी चिंतन के परिणामस्वरूप 'अन्तराल' के सभी पात्र दुहरी मानसिक स्थिति में जी रहे है। बाजी ओर सीमा इसलिए श्यामा को झेल रहे हैं क्योकि वह कमाती है। बेबी के लिए परिवार भी जरूरत श्यामा को उस घर से जोड़े रखती है। अन्यथा वह कभी भी वहाँ से चली गई होती कुमार जी ने का अर्थ का नाम देते हुए भी श्यामा से शारीरिक संबंध बनाना चाहता है। श्यामा कुमार के मण्डी आने की संभावना में अपनी सहेलियों से कुमार के प्रति सामान्य भाव प्रकट करती है परन्तु उसकी वास्तविकता का पता उसकी 'फैनटेसी' कल्पना से चलता है। व्यक्तिवादी आस्तित्व चेतना बताती है कि जीवित रहना ही मनुष्य की नियति है। उसे जीवन का अर्थ चुक जाने की स्थिति में भी लाचार होकर जीना है क्योंकि पुरानी मान्यताएं अर्थहीन हो चुकी है और मनुष्य के सामने कोई ठोस विकल्प भी नहीं है ईश्वर भी अनुपस्थिति के भाव ने उसे स्वतंत्र और अकेला बना दिया है। अपनी असहायता के लिए वह कोई बहाना नहीं ढूंढ़ सकता। मनुष्य की यह नियति उसे व्यक्तिवादी बनाती है। वह निरूद्देश्य और दिग्भ्रांत रहता है। यअंधेरे बंद कमरेय उपन्यास के पात्रों में शुक्ला और सुषमा भी तरफ से निराश मधुसूदन को जीवन व्यर्थ लगता है अपने व्यक्तिवादी अस्तित्व का संकट झेलता हुआ मधुसूदन अन्ततः ठकुराइन के घर में जाने का निर्णय करता है क्योंकि वहीं पहुँचकर उसको अपना अस्तित्व सुरक्षित दिखाई देता है। हरवंश और नीलिमा दोनों व्यक्तिवादी पात्र हैं। अपने जीवन को अर्थ देने में असफल हरवंश नीलिमा संभावना देखता है और घर त्याग कर चली जाने वाली नीलिमा वैयक्तिक चेतना के कारण ही पुन: वापिस आ जाती है। सुषमा भी व्यक्तिवादी है। यही अस्तित्व संकट मधुसूदन के साथ उसके जुड़ाव को समाप्त कर देता है।

व्यक्तिवादी अस्तित्व चिंतन भी परिणति में यन आने वाला कल के पात्र भी जीवन को कोई अर्थ देते हुए नहीं जीते है। बॉनी के सामने कोई बाधा नहीं है। स्कूल के टीचर्स सड़ चुकी व्यवस्था में भी अपनी स्थिरता बनाए रखने के लिए विवश हैं। मनोज अपने जीवन की निरर्थकता से उठकर यआत्महत्या की बात सोचता है, परंतु उसकी वैयक्तिक चेतना उसे ऐसा करने से रोकती है। शोभा पुनर्विवाह के बाद मनोज से एटजस्ट नहीं कर पाती और घर छोड़कर खुर्जा चली जाती है, परन्तु अपने अस्तित्व की चिंता के कारण ही वह मनोज को खुर्जा से बार-बार पत्र लिखती है। व्यक्तिवादी स्तर पर अपने अस्तित्व की चिंता से ग्रसित अंतराल के पात्र कुमार और श्यामा के सामने भी जीवन का कोई अर्थ नहीं है। इसे अर्थ देने के लिए जब वे एक-दूसरे के निकट आते है तो उनकी वैयक्तिक चेतना उन्हें रोक देती है।

कुमार के आवासीय फ्लैट में आकर दोनों स्वत: एक–दूसरे के लिए समर्पित होकर अपनी दैहिक मांग की पूर्ति में अपनी अस्तित्व चेतना ही खोज पाते हैं आंतरिक संदर्भो की गहनता यौन–संबंधों के बीच नहीं उभरती तभी कुमार के साथ यौन संसर्ग करते समय श्यामा को अपने पूर्व प्रेमी की स्मृति उसके निजी अस्तित्व चिंतन की परिणति का आभास देते हैं। सीमा का जीवन भी व्यर्थता बोध से पीड़ित है वह आत्मकेन्द्रित एवं आत्मरति से ग्रसित ऐसी नारी पात्र के रूप में अपनी अस्तित्व चेतना भी जटिलता चरितार्थ करती है। जहाँ रात्रि में पीकर लौटने पर दर्पण के समक्ष निर्वस्त्र रूप में अपनी शारीरिक संरचना के प्रति आत्ममोह से परितृप्ति पाती है श्यामा देव के सामने कमी खुल नही पाती और देव भी अपनी पीड़ा में घुटकर मर जाता है। अस्तित्ववादी चिंतन की आधारभूमि पर विनासित मोहन राकेश के तीनों उपन्यास मुख्यत: नारी–पुरुष के बदलते संदर्भ और उनके बीच पनपते जटिल संबंधो की सूक्ष्म व्याख्या प्रस्तुत करते है। युद्धोत्तार संत्रास औद्योगिक प्राविधिक युग का वर्चस्व एवं स्खलित होती प्राचीन परंपराओं व नैतिक संस्थाओं के व्यक्ति के अपने अस्तित्व के प्रति ही एक संकट खड़ा कर दिया है। फलत: व्यक्ति केवल अपने बारे में सोचता है। सामाजिक व पारिवारिक दायित्व बोध को वह बोझ समझता है और सर्वधा मुक्त जीवन की कामना करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 अग्रवाल भारत भूषण, हिन्दी उपन्यास में पाश्चात्य प्रभाव पृष्ठ– 380
2 मुक्तिबोध, चांद का मुंह टेढ़ा– पृ 64
3 मोहन राकेश, 'अंधेरे बंद कमरे'– पृ –153
4 मोहन राकेश, 'न आने वाला कल'– पृष्ठ–11

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में राजनीतिज्ञों का प्रश्रय प्राप्त असामाजिक तत्त्वों द्वारा उत्पन्न राजनैतिक साम्प्रदायिकता के सन्दर्भों का अनुशीलन

भारती वर्मा *

प्रस्तावना – स्वातंत्र्योत्तर भारतीय राजनीति की अस्थिर नीतियों ने स्वतंत्रता प्राप्ति में अत्यधिक बाधा पहुँचाई है। इसका कारण सिद्धान्तों की कमी नहीं है अपितु सिद्धान्तों का अव्यवहार्थ रूप है। भ्रष्ट नेताओं की अदूरदर्शिता सिद्धान्तों का अव्यवहार्थ रूप है। भ्रष्ट नेताओं की अदूरदर्शिता सिद्धान्तों की पवित्रता का निर्वाह न कर सकी। परिणाम स्पष्ट था कि अराजक तत्तवों को बढ़ावा मिला और राष्ट्रीय राजनीति गुमराह होती गई। स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासकारों ने इसका व्यापक चित्रण किया है। उपन्यासकारों ने सिद्धान्तों के मूल में नेताओं द्वारा अराजक तत्त्वों को प्रश्रय देने और समय-समय पर अपने स्वार्थ के लिए उनका इस्तेमाल राजनीतिक साम्प्रदायिकता उत्पन्न करवाने के लिए किस प्रकार किया जाता है। इसका उल्लेख स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासकारों में किया है।

स्वातंत्र्योत्तर काल में भारतीयों को जिन स्थितियों का सामना करना पड़ा उसका जीता-जागता चित्रण यशपाल कृत 'झूठा सच' उपन्यास में प्रस्तुत किया गया है जिसमें यशपाल जी ने भारत-पाकिस्तान विभाजन के पूर्व व पश्चात् की साम्प्रदायिक स्थिति का यथार्थ वर्णन किया है। इस साम्प्रदायिकता की असलियत को बेनकाब करते समय यशपाल जी ने समसामयिक स्थिति को उभारा है। साम्प्रदायिक चुनाव प्रणाली के आरम्भ में बोया वैमनस्य बढ़ते-बढ़ते देश विभाजन होते ही साम्प्रदायिक दंगों के रूप में अपहरण, बलात्कार, अग्निकाण्ड, छुरेबाजी जैसे दुष्कृत्यों में कैसे बदल जाता है? शरणार्थियों की समस्या, रेलों में कत्ले आम नेताओं का नकाबपोश चरित्र भ्रष्टाचार का वातावरण आदि का यथार्थ अंकन इस उपन्यास में चित्रित है।

इस उपन्यास में यशपाल जी ने असामाजिक तत्तवों द्वारा फैलाई गई साम्प्रदायिकता को उपन्यास पात्र मिर्जा के निम्नलिखित कथन के माध्यम से चित्रित किया है-

'परसो ही दोपहर में कर्फ्यू हो गया था। ....कर्फ्यू में साधारण लोग बाहर नहीं निकल सकते। बाजारों में सशस्त्र पुलिस मौजूद होगी। इस प्रकार फैलाकर आग लगाने का अवसर कैसे हुआ?'

उपर्युक्त कथन के माध्यम से लेखक ने विभाजन के समय असामाजिक तत्तवों द्वारा कर्फ्यू के दौरान उत्पन्न साम्प्रदायिकता को चित्रित किया है।

कमलेश्वर ने आजादी के समय नौजवानों द्वारा स्वतंत्रता प्राप्ति के जुनून से फैली साम्प्रदायिकता को दिग्दर्शित किया है-

'स्वतंत्रता प्राप्ति की गूँज चारों ओर फैल चुकी थी। उसका प्रभाव नौजवानों पर कितना गहन असर डाल रहा था कि इसका वर्णन इस कथन में देखा जा सकता है-

'बस्ती के जवान लड़कों को जैसे ही खबर मिली वे शहर पहुँचें और हंगामा खड़ा कर दिया। उन्हें मालूम नहीं था कि ये सब तोड़फोड़ क्यों कर रहे हैं लेकिन उनके पास केवल एक ही जवाब था..............हम आजादी लेंगे, पुलिस राज हटाएँगे। एक अजीब सनसनी थी और उस सनसनी में आजादी की भनक थी।............जिस वक्त डाकखाना जलाया गया, तब रात हो रही थी............लपटों की रोशनी चारों ओर फैल रही थी। लोगों के दिलों में खुशी भर रही थी। क्योंकि इन्तकाम का सन्तोष छोटा नहीं होता। जाती हुई रेलगाड़ियों पर पत्थर फेंकने के लिए लड़कों की कतार रेल्वे लाईन के पास आसपास खड़ी रहती थी। गलियों में गर्मागर्म बहसें होती थीं और बाजार में सन्नाटा छाया रहता था। एकाएक सन्नाटे को चीरती आवाजें आती थीं और किसी सरकारी इमारत से लपटें फूटने लगती थीं। ऊपर से यह सब एक जुनून ही लगता था क्योंकि आन्दोलन को चलाने वाले नेता लोग जेलों में बन्द थे और उनकी गैर हाजिरी में जो जिसकी समझ में आ रहा कर रहे थे क्योंकि जुनून और तोड़-फोड़ के पीछे आजादी की भावना का दौर था।'

इस उपन्यास में साहित्यकार ने राजनीति का कच्चा चिट्ठा पाठकों के समक्ष खोलने की चेष्टा की है। राजनीतिज्ञों के माध्यम से फैलाई गई साम्प्रदायिकता के हर एक सूक्ष्म बिन्दु का अवलोकन इस कृति में किया है।

कमलेश्वर ने 'लौटे हुए मुसाफिर' उपन्यास में साम्प्रदायिकता फैलाने वाले असामाजिक तत्तवों का सूक्ष्मता से अध्ययन कर उन्हें सभी के समक्ष लाने का एक उल्लेखनीय प्रयास किया है-

'यासीन एक भीतरी बात जो मैं आज सबको बताना चाहता था वह यह है कि हुकूमत बर्तानिया ने हम मुसलमानों को यह यकीन भी दिलाया है कि जंग जीतने के बाद वे हमें पूरी मदद देंगे और अगर मुमकिन हुआ तो हमारा एक नया मुल्क भी होगा।............. पर असल बात यह है भाइयों कि हम मुसलमानों के लिए अलग हक चाहते हैं। हम उस बात को कतई नहीं माँगेंगे जिसे गाँधी जैसे हिन्दू नेता तय करेंगे।................ हिन्दू नेता यह चाहते हैं वे मुसलमानों को अँगूठा दिखा देंगे यही उनकी चाल है।............. तो भाइयों की इस वक्त जरूरत इस बात की है कि हम पाकिस्तान की माँग को जोर-शोर से उठाए। ऐसा कोई काम न करें जिसमें हमें हिन्दुओं के साथ शामिल समझा जाए।............ इसके लिए खून-खराबा भी हो सकता है। आसानी से हिन्दू इस तकसीम को स्वीकार नहीं करेंगे। हमें उनसे लोहा लेना पड़ेगा। जरूर; हुई तो हमें कुर्बानियाँ भी देनी पड़ेंगी क्योंकि हिन्दुओं के दिलों में हमारे लिए एक नफरत है, क्योंकि हमने यहाँ सल्तनतें कायम की थीं। हमारी कौम हुकूमत करने और इस्लाम को फैलाने के लिए ही जिन्दा है।'

उपर्युक्त सन्दर्भ में लेखक ने यासीन के माध्यम से असामाजिक तत्तवों द्वारा साम्प्रदायिकता फैलाने वाली मनोवृत्ति को उजागर किया है जो सत्ता पर आसीन अधिकारियों का नाम लेकर जनता में साम्प्रदायिकता रूपी बीज बो रहे हैं।

काली आँधी उपन्यास में निरूपित राजनीतिक हिंसा-हिंसक ताकतों

* शोधार्थी (हिन्दी) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

और उन्हें संरक्षण देने वाले की स्थिति को रेखांकित नहीं करती बल्कि उनके माध्यम से उपन्यासकार की राजनीति स्थिति का वास्तविक दस्तावेज भी प्रस्तुत करती है। किस तरह राजनीतिक पार्टियाँ चुनावी क्षेत्र में विजय प्राप्त करने के लिए असामाजिक तत्तवों को उपयोग में लाते हैं इसका खुलासा उपन्यासकार ने मालती के सेक्रेटरी गुरुचरण के माध्यम से किया है 'जब घूमता-फिरता वह पुराना बाजार पहुँचा तो देखा तनाव सचमुच था। वह इलाका भी ऐसा ही था। नानबाइयों की दुकानें और मामूली काम करने वालों के धन्धे। वे पढ़े-लिखे लोगों का इलाका। यही दर्जी और छाते बनाने वाले चमड़े का काम करने वाले के लोगों से मैंने हालत दरयाफ्त की। मालूम हुआ कि यों तो सब शान्त दिखाई देता है पर जब जुलूस निकलते हैं तो तनाव बढ़ जाता है। जुलूस में हमेशा कुछ चेहरे ऐसे नजर आते हैं जो इलाके वालों के पहचाने हुए नहीं होते पता नहीं ये लोग कहाँ से आते हैं?

अत: कहा जा सकता है कि चुनाव के समय असामाजिक तत्तवों द्वारा शान्त इलाकों में साम्प्रदायिक तनाव उत्पन्न करने का कार्य किया जाता है।

लेखक ने शासनतन्त्र के माध्यम से मन्त्रियों द्वारा फैलाई जा रही साम्प्रदायिकता का खुलासा किया है। मंत्रीगण अपने आदमियों या कहा जा सकता है असामाजिक तत्तवों द्वारा पहले तो साम्प्रदायिक दंगें करवाते हैं, फिर जनता से सहानुभूति, वाहवाही लूटने के लिए उनके बीच उपस्थित हो जाती है जिसे लेखक द्वारा इस कथन के माध्यम से व्यक्त किया गया है। मिर्जा साहब कहते हैं आप मालती जी खुद आज सबसे मिलने और कुछ कहने आई हैं। कल में जब से इन्हें पता चला कि बदमाश गुण्डों ने यहाँ मारपीट की है और भाइयों-भाइयों में वफरका फैलाने की कोशिश की है।............मालती यह काम उन जाहिल और फिरकापरस्त लोगों का है जो इंसानी कीमतों को धूल में मिला देना चाहते हैं। गरीब और उन भूखे लोगों को, जो जिन्दगी की जद्दोजहद में अपना खून-पसीना बहा रहे हैं; ये वहशी लोग उन्हें खूँखार जंगली जानवरों में बदल देना चाहते हैं, ताकि वे आपस में लड़ते रहें, अपने भाइयों की गर्दन काटते रहें और उन लोगों के खिलाफ न उठ खड़े हों जो सचमुच इनका खून चूसते हैं। गरीबों का खून चूसने वाले तबके की यह साजिश है कि गरीब एक न होने पाए।'

उपर्युक्त पंक्तियों से स्पष्ट होता है कि राजनीतिज्ञ पहले तो असामाजिक तत्तवों द्वारा साम्प्रदायिक दंगें करवाते हैं, और जनता के बीच उपस्थित हो उनसे बड़ी-बड़ी बातें कर साम्प्रदायिक सद्भाव के मसीहा बनते हैं।

भैरव प्रसाद गुप्त जी ने 'सती मैया का चोरा' उपन्यास में धार्मिक स्थल सती मैया का चोरा को हटाने के विषय में की गई राजनीतिक साम्प्रदायिकता का चित्र खींचा है। राजनीतिज्ञ जो हमेशा नौजवानों को अपनी तरफ खींचना चाहते हैं। जिससे उनके काम आसानी से हो सकें। पिपरीगाँव में स्थित सती मैया का चोरा को राजनीतिज्ञों ने राजनीति का केन्द्र बना रखा है। सती मैया का चोरा उपन्यास में गुप्त जी ने क्रूर राजनीति के प्रभावों पर पर्दा उठाया है। विभिन्न पार्टियों के आपसी विवाद तथा उनके क्रियाकलापों को सुलझाने के बजाय उन समस्याओं को ज्यादा प्रज्वलित करते हैं, ताकि उनकी आग से अपनी राजनीतिक रोटियाँ सेंक सकें। उनके द्वारा किए जाने वाले सभी कार्य उनकी राजनीतिक दाँव-पेंचों का हिस्सा होते हैं, न कि नि:स्वार्थ भाव से किए जाने वाले कार्य। गुप्त जी ने इन सभी का यथार्थ वर्णन इस उपन्यास में किया है।

राजनीतिज्ञों द्वारा साम्प्रदायिक स्थिति उत्पन्न करने में असामाजिक तत्तवों का सहारा किस प्रकार किया जाता है इसे निम्नलिखित पंक्तियों द्वारा दर्शाया गया है-

उपन्यास में आजमगढ़ जिले के पिपरी गाँव का चित्रण है जहाँ हिन्दू-मुस्लिम से सौहार्द्रपूर्ण रहते हैं किन्तु कुछ असामाजिक तत्तव उनके बीच साम्प्रदायिक तनाव उत्पन्न करना चाहते हैं। गाँव का अय्याशी, शराबी सिराजुद्दीन जमींदारी हथियाने सभी मुसलमानों को उत्तेजना दिलाने हेतु कहता है-

'हिन्दू उनकी रियाया है और उन्हें उनके साथ रियाया का बर्ताव करना चाहिए............. तब उसे उस गाँव में साम्प्रदायिक सद्भाव की मोटी चादर तार-तार होकर फेटने लगती है और साम्प्रदायिकता का भयावह दानव अंकुरित होने लगता है।'

उपर्युक्त पंक्तियों में लेखक ने यह बताया है कि राजनीति का आश्रय पाकर असामाजिक तत्तवों द्वारा उत्पन्न की गई साम्प्रदायिकता की स्थिति समाज में किस प्रकार प्रज्वलित की जाती है।

राही मासूम रजा कृत 'दिल एक सादा कागज' उपन्यास में राही जी ने राजनैतिक स्थितियों से उत्पन्न साम्प्रदायिकता को चित्रित किया है। समसामयिक व्यवस्था को चित्रित करने वाला यह उपन्यास स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय राजनीतिक उथल-पुथल और उसमें चलने वाले साम्प्रदायिक षड्यन्त्र से पाठक का साक्षात्कार कराता है। यह उपन्यास धार्मिक और सामाजिक स्तर पर पनपी साम्प्रदायिकता को भी अभिव्यक्त करता है।

असामाजिक तत्तवों द्वारा धार्मिक भावना को साम्प्रदायिक संघर्ष उत्पन्न करने में किस प्रकार इस्तेमाल किया जाता है, इसी की ओर संकेत करता गुनी (पात्र) का कथन द्दष्टव्य है।

'कुछ लोग अराजक तत्तव को एक हथियार के रूप में इस्तेमाल करते हैं। जिसके द्वारा वे अपने व्यक्तिगत स्वार्थों की पूर्ति करते हैं...........नेता लोग जीवन में साम्प्रदायिकता का जहर घोलकर एम.पी. हो जाते हैं।'

उपर्युक्त पंक्तियों में यह दर्शाया गया है कि धर्म का इस्तेमाल भी अराजक तत्तवों द्वारा साम्प्रदायिक विद्वेषाग्नि को प्रज्वलित करने में किस प्रकार किया जा रहा है।

यज्ञदत्त शर्मा कृत 'इन्सान' उपन्यास में लेखक ने स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय पनपी साम्प्रदायिक राजनैतिक स्थितियों को चित्रित किया है। शर्मा जी ने राजनीतिज्ञों के द्वारा फैलाई जा रही साम्प्रदायिकता का यथार्थ चित्रण इस उपन्यास में किया है। सामान्य व्यक्ति अपने अधिकारों की रक्षा करते-करते खुद जाने-अनजाने साम्प्रदायिकता का शिकार हो जाने को विवश है। इन सभी लोगों की मानसिकता को शर्मा जी ने इस उपन्यास में उजागर किया है।

यज्ञदत्त शर्मा कृत 'इन्सान' उपन्यास में अराजक तत्तवों द्वारा साम्प्रदायिक विष घोलने का कार्य किस प्रकार किया गया इसी निम्नलिखित सन्दर्भ द्वारा प्रकाश डाला गया है-

'धर्म का भूत मानवता के सिर पर चढ़कर बोल रहा था और शासन की बागडोर शहर के छँटे हुए गुण्डों के हाथों में आ चुकी थी। आवारागर्दों का बोलबाला था। ये गुण्डे ही निर्बलों की सम्पत्ति की रक्षा के लिए चौकीदार बन गए थे। चारों ओर आतंक छाया हुआ था।'

इसी प्रकार का एक अन्य सन्दर्भ प्रस्तुत है जब आजाद शान्ता को देखने उसके घर जाता है उस समय अराजक तत्तवों द्वारा की जा रही लूटपाट को निम्नलिखित उदाहरण में प्रस्तुत किया गया है 'बस्ती पर गुण्डों का साम्राज्य था। कितने ही शव पटरी पर इधर-उधर पड़े थे और उन विशाल अट्टालिकाओं का सामान जो लूट से बचाया गया था, अग्नि के हवाले किया जा रहा था।'

निम्नलिखित सन्दर्भ में लेखक ने यह दर्शाया है कि अराजक तत्तवों का कोई धर्म नहीं, ये तो अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए धर्म की आड़ लेते हैं; जिसे उपन्यास का एक बुजुर्ग व्यक्त करता है 'बेटा ये लोग खुदगर्जी के लिए

हिन्दुओं को मार रहे हैं। मजहब इनका बहाना है। मारने में तो ये मुसलमानों को भी नहीं हिचकिचाते।'

उपर्युक्त पंक्तियों में लेखक ने असामाजिक तत्तवों द्वारा धर्म की आड़ में साम्प्रदायिक संघर्ष उत्पन्न करने और लूटपाट करना यही बतलाया है।म

श्री मनहर चौहान कृत सीमाएँ उपन्यास में विभाजन के समय छाई अमानुषिक स्थिति का जीता-जागता दर्पण प्रस्तुत किया है। यह उपन्यास विभाजन समय उत्पन्न राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक साम्प्रदायिकता को प्रस्तुत करता है। इस उपन्यास में दर्शाया गया कि चन्द अराजक तत्तवों ने मिलकर मानवीय एकता को सदियों के सद्प्रयासों को इतनी आसानी से कैसे धूल-धूसरित कर दिया-

'चन्द असामाजिक तत्त्वों ने वेदों को जला डाला, कुरान को फाड़ डाला, अपने पूर्वजों की विरासत को मिटा डाला। सामाजिक जीवन की सशक्त उच्च संस्कृति को पाताल लोक में पहुँचा दिया.........।'

उपर्युक्त पंक्तियों में लेखक असामाजिक तत्तवों द्वारा फैलाई गई साम्प्रदायिक संघर्ष की स्थिति पर प्रकाश डाला गया है।

राही मासूम रजा कृत 'असन्तोष के दिन' उपन्यास में स्वातंत्र्योत्तर कालीन साम्प्रदायिकता को उजागर किया गया है। जिसमें लेखक ने विविध पात्रों के माध्यम से साम्प्रदायिकता फैलाने वाले राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक आदि को सूक्ष्मता से उजागर किया गया है।

राही जी ने जवाहर नगर में राजनीतिज्ञों द्वारा उत्पन्न करवाए गए साम्प्रदायिक संघर्ष का चित्रण निम्न पंक्तियों में किया है-

'उप स्वास्थ्य मंत्री कर्माकर, नट्टा करीम और कालेकर ने अमीरजादा का असर तोड़ने का फैसला तो उसी दिन कर लिया था, जिस दिन शिवसेना के नेता ने मुसलमानों के खिलाफ भाषण दिया था और जिस भाषण के जवाब में कॉंग्रेस (आई) के एक एम.एल.ए. के खान ने बाल ठाकरे की तस्वीर को जूते का हार पहनाया था और जब भिण्डी बाजार में आग लगी तो उसके शोलों की रोशनी में इन लोगों ने जवाहर नगर की तकदीर साफ-साफ पढ़ ली। नट्टा करीम तो अपने आदमियों को लेकर पिछली रात की भिण्डी बाजार उठ गया था। लम्बे कालेकर ने भी अपना परिवार सरका दिया था और खुद कर्माकर की हवालात में बन्द हो गया था। कर्माकार ने कालेकर के आदमियों को घासलेट, सोडे की बोतलें और देसी बम सप्लाई किए जिसका खर्च उप स्वास्थ्य मंत्री के चुनाव फण्ड से दिया गया।'

उपर्युक्त पंक्तियों में लेखक ने राजनीतिज्ञों द्वारा आपसी मतभेदों के मामलों को लेकर उत्पन्न की गई साम्प्रदायिकता को उजागर किया है।

अपने स्वार्थ के लिए राजनीतिज्ञों, असामाजिक तत्तवों द्वारा साम्प्रदायिकता किस प्रकार फैलाते हैं उसे निम्न सन्दर्भ द्वारा प्रस्तुत किया गया है-

'पुलिस की गोली से कालेकर का कोई आदमी न घायल हुआ, न मरा, कालेकर का कोई आदमी गिरफ्तार भी नहीं हुआ। जो आदमी पकड़े गए वह सोशल वर्कर थे और शान्ति चाहते थे। धर्माधिकारी जब आर्मी की एक टुकड़ी लेकर वहाँ पहुँचा तो 57 लाशें जमा की गईं। .... और जिस जवाहर नगर में लाशें शिनाख्त की जा रही थीं, उस वक्त लम्बा कालेकर नट्टे करीम के साथ उसके बहनोई मुहम्मद अली शेडवाले घर में हलीमा के घर से उठवाए हुए वी.सी.आर. पर यश चोपड़ा की फिल्म 'दीवार' देख रहा था। आमची मुम्बई।'

इस सन्दर्भ में लेखक ने यह दर्शाया है कि राजनीतिज्ञों का प्रश्रय प्राप्त असामाजिक तत्तवों द्वारा किस प्रकार एक बस्ती में साम्प्रदायिकता फैलाई गई। जिसमें अनगिनत मासूम व्यक्तियों की जान गई और दंगा करवानों वालों को कोई नुकसान तक नहीं होता, उन्हें दंगों में चोट तक नहीं आती।

राजनीतिक व्यवस्था में नौजवानों को भ्रमित कर किस प्रकार साम्प्रदायिकता की और मोड़ दिया जाता है। राजनीतिज्ञ अपनी लक्ष्यसिद्धि के लिए उनकी शतरंज पर अपनी गोटियाँ खेलते हैं और उनसे अनैतिक कार्य करवाते हैं। कमलेश्वर ने एक सड़क सत्तावन गलियाँ उपन्यास में सन् बयालीस में गाँधी जी द्वारा स्वराज्य प्राप्ति के ऐलान की प्रतिक्रिया क्या हुई, उसकी निम्नलिखित पंक्तियों की सार्थक अभिव्यक्ति दर्शाती है-

'जुगनू ने मार्के की बात बताई फिर धीरे से कहा आज रात सब लोग जमा हो रहे हैं तैयार होने का हुक्म मिलेगा। पता नहीं कब दिल्ली चलना पड़े और रात की मीटिंग के इकरारनामों के मातहत सबसे अधिक काम रंगीले ने किया था। दिन दहाड़े उसने डाकघर में दस-पन्द्रह साथियों के साथ आग लगा दी।............ इन दिनों रंगीले नेता जी हो गए थे। एक ही नारा उसकी जुबान पर था। अपने देश में अपना राजा............. जगह-जगह उसने आग भड़काई थी। स्कूलों में हड़ताल करवाने के लिए वह आगे-आगे झण्डा लेकर आया था। खिड़कियों और दरवाजों पर पत्थर बरसाए। लड़कों को जबर्दस्ती बाहर खींच लाया............यहाँ तक कि अकेले उसने एक आन्दोलन खड़ा कर दिया पर किसी पार्टी ने उसे अपने साथ नहीं लिया पता नहीं कल क्या कर बैठे?' उपर्युक्त सन्दर्भ में राजनीतिज्ञ प्रश्रय प्राप्त असामाजिक द्वारा फैलाई गई साम्प्रदायिकता को दर्शाया गया है।

राजनीति में राजनीतिज्ञों द्वारा नौजवानों को भ्रमित कर फैलाई गई साम्प्रदायिकता का चित्रण इन पंक्तियों में कमलेश्वर ने किया है-

'सन् बयालीस के आन्दोलन में चिकतों के जवान लड़कों ने बड़ा उधम मचाया था। उन्हें नहीं मालूम था कि देश कैसे आजाद होगा पर इतना उन्हें मालूम था कि उन्हें कुछ करना चाहिए और वे जो कर सकते थे वह उन्होंने किया था।'

स्वातंत्र्योत्तर साहित्य का फलक बहुत व्यापक है। स्वतंत्रता के पूर्व-पश्चात् राजनैतिक स्तर पर होने वाली साम्प्रदायिकता की विसंगतियों और विडम्बनाओं को उपन्यासकारों ने रेखांकित किया है। भारत-पाकिस्तान विभाजन के पूर्व व पश्चात उत्पन्न साम्प्रदायिक समस्या ज्यों की त्यों उसी रूप में किसी न किसी रूप में वर्तमान में भी विद्यमान है बल्कि यह कहा जा सकता है इन समस्याओं के मुखौटे बदल गए है। एक सजक पाठक के रूप में हमारा यह दायित्व है कि इस प्रकार की समस्याओं निपटने के लिए दुरदर्शी दृष्टिकोण को अपनाया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. यशपाल - झूठा सच भाग-1, पृ. 126
2. कमलेश्वर - एक सड़क सत्तावन गलियाँ, पृ. 11
3. कमलेश्वर - लौटे हुए मुसाफिर, पृ. 14
4. कमलेश्वर - काली आँधी, पृ. 33
5. कमलेश्वर - काली आँधी, पृ. 35
6. भैरवप्रसाद गुप्त - सती मैया का चोरा, पृ. 261-62
7. राही मासूम रजा - दिल एक सादा कागज, पृ. 175
8. यज्ञदत्त शर्मा - इंसान, पृ. 1
9. यज्ञदत्त शर्मा - इंसान, पृ. 6
10. यज्ञदत्त शर्मा - इंसान, पृ. 6
11. मनहर चौहान - सीमाएँ, पृ. 109
12. राही मासूम रजा - असन्तोष के दिन, पृ. 67
13. राही मासूम रजा - असन्तोष के दिन, पृ. 69
14. कमलेश्वर - एक सड़क सत्तावन गलियाँ, पृ. 37
15. कमलेश्वर - एक सड़क सत्तावन गलियाँ, पृ. 2

आधुनिक हिन्दी कविता में दलित - काव्यधारा

डॉ. आशुतोष तिवारी *

प्रस्तावना - हिन्दी साहित्य के आधुनिक युग के समय गांधी जी और राष्ट्रीय आंदोलनों का दौर चल रहा था। गांधी जी और अनेक समाज सुधारकों द्वारा दलितोंद्धार के लिए कार्य किया जिसका प्रभाव उस समय के अनेक कवियों पर पड़ा। कवियों ने दलितों की स्थिति का अच्छा चित्रण किया, जिसका समाज ने स्वागत भी किया। ऐसी कविताओं में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की 'अछूत की आह', श्री ब्रम्हदत्त दीक्षित की 'तुम स्वतंत्र हो मनुष्य', 'जाति रंग देश सेय, मैथिलीशरण गुप्त की 'महाभिनिष्क्रमण', 'में अछूत', श्री सोहनलाल द्विवेदी की 'हरिजनों का गीत', 'सेवाग्राम', 'जीवन साहित्य', श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान की 'प्रभु तुम मन की जानोय, श्री सियारामशरण गुप्त की 'एक फूल की चाह', प्रो. प्रेमप्रकाश वर्मा की 'अछूतोद्धार' और 'हरिजन', श्री हरिकृष्ण 'प्रेमी' की 'हरिजन बन्धु', 'सत्यनाश भयो भारत कोय आदि इस युग की उल्लेखनीय कविताएं हैं। इसके अतिरिक्त सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', सुमित्रानन्दन पंत, नागार्जुन, मुक्तिबोध, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', त्रिलोचन आदि अनेक कवियों की कविताओं में दलितों के प्रति संवेदनशीलता का भाव दृष्टिगोचर होता है। बानगी के तौर पर कुछ कवियों की कविताओं को यहां देखा जा सकता है -

आधुनिक कवियों में सर्वप्रथम भारतेन्दु हरिशचन्द्र ने दलितों की सामाजिक स्थिति का आकलन करते हुए उन पर होने वाले सामाजिक बहिष्कारों का जैसे छुआछूत, मंदिर प्रवेश पर रोक आदि का विरोध किया। भारतेन्दु ने कविता के माध्यम से दलितों के प्रति अपनी संवेदना को इस प्रकार व्यक्त किया है -

'अपरस, सोला, छूत रचि
भोजन प्रीति छुड़ाय।
किये तीन तेरह सबै,
छौका चौका लाय।
बहुत हमने फैलाए धर्म।
बढ़ाया छुआछूत का कर्म।'

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' - निराला हिन्दी कविता में क्रान्ति के साथ उपस्थित हुए। निराला की क्रान्ति का मतलब सामाजिक व्यवस्था में आमूल-चूल परिवर्तन से था। निराला ने समाज में दलितों की स्थिति को देखा और उनकी वेदना को अपने लेखों, सम्पादकीय टिप्पणियों आदि में व्यक्त किया। दलितों की दशा में सुधार लाने के लिए वे सामाजिक क्रान्ति की बात करते हैं। क्रान्ति भी वही करेंगे जो पद दलित हैं, शोषित हैं और सदियों से उत्पीड़िन से पीड़ित हैं। इस क्रान्ति से ही समता मूलक समाज की रचना की जा सकती है। 'धारा' कविता में निराला कहते हैं -

'आज हो गये ढीले सारे बंधन,
मुक्त हो गये प्राण
रूका है सारा करूणा-क्रन्दन।'

चूंकि निराला सामाजिक क्रान्ति की बात करते हैं इसलिए उनकी क्रान्तिकारी भावधारा का स्त्रोत दलितों के प्रति गंभीर मानवीय करूणा है -

'पड़े हुए सहते हो अत्याचार
पद-पद पर सदियों के पद प्रहार
बदले में पद में कोमलता लाते
किन्तु हाय, वे तुम्हे नीच ही है कह जाते।'

निराला जी स्वयं शोषण के दौर से गुजरे थे। दलितों की वेदना को उन्होंने निकट से महसूस किया था। वे स्वयं उस उपेक्षित, अपमानित एवं शोषित जन सामान्य के प्रतीक पुरूष बन गए। 'भिक्षुक' में इस वेदना को देखा जा सकता है -

'पेट-पीठ दोनों मिलकर हैं एक
चल रहा लकुटिया टेक
मुट्ठी भर दाने को
भूख मिटाने को
मुँह फटी पुरानी झोली का फैलाता।
साथ दो बच्चे भी हैं सदा साथ फैलाये
बांये से वे मलते हुऐ पेट को चलते
और दाहिना दया-दृष्टि पाने की ओर बढ़ाये
चाट रहे जूठी पत्तल वे कभी सड़क पर खड़े हुए
और झपट लेने को उनसे कुत्ते भी हैं अड़े हुए।'

ब्राम्हणों ने भारतीय संस्कृति की पुर्नसंरचना की है, उतनी ही बार उन्होंने दलितों पर अनेक बहानों से अत्याचार किया। हर बार ब्राम्हणों ने दलितों को अपनी पोथियों में दबाकर रखा। इन सबके पीछे एक ही भावना थी अपने लाभ की इसके लिए उन्होंने सब कुछ किया। 'राजे ने अपनी रखवाली की' कविता में इस भावना को देखा जा सकता है-

'राजे ने अपनी रखवाली की,
किला बनाकर रहा
बड़ी-बड़ी फौजे रखी
चापलूस कितने सामंत आये
मतलब की लकड़ी पकड़े हुए
कितने ब्राम्हण आये
पोथियों में जनता को बांधे हुए।'

सुमित्रानन्दन पंत - सुमित्रानन्दन पंत ने दलितों की सामाजिक स्थिति का आकलन करते हुए समाज द्वारा जाति एवं वर्ण भेद की निन्दा करते हुए,

* (हिन्दी) आदर्श कॉलोनी, बुढ़ार, जिला-शहडोल (म.प्र.) भारत

समतामूलक समाज की बात कही है। उनकी कई रचनाओं में जाति एवं वर्ण से मुक्त समाज की बात देखने को मिलती है। ऐसी रचनाओ में 'उद्बोधन', 'युगवाणी', स्वर्ण किरण', 'अस्पृश्यता', 'शतबाहु-पद' 'जाति वर्ण संस्कृत समाज सेय आदि रचनाएं उल्लेखनीय हैं। पंत ने दलितों के प्रति अपनी संवेदनाओं को जिन भावों में व्यक्त किया है उनमें से कुछ रचनाओं की पंक्तियां यहां द्दष्टव्य हैं-

'खोलो जीर्ण विश्वासों, संस्कारों के जीर्ण बसन,
रूढ़ियों, रीतियों, आधारों के अवगुंठन,
छिन्न करो पुराचीन संस्कृतियों के जड़ बंधन,
जाति वर्ण, श्रेणी वर्ग से विमुक्त जन-नूतन।'

'युगवाणी' में पंत ने जाति और वर्ग से ऊपर उठकर लोगों से मानव के कल्याण की बात कही है -

'क्षुधा, तृषा औ स्पृहा, काम से ऊपर
जाति वर्ग औ देश, राष्ट्र से उठकर,
जीवित स्वर में व्यापक जीवन मान
सद्य: करेगा मानव का कल्याण।'

पंत ने जाति वर्ण संस्कृत समाज से सभी वर्गो को समानता की द्दष्टि से देखने की बात कहते हुए मानवीय चेतना फैलाने की बात पर जोर दिया -

'आज मनुज को खोज निकालो।
मूल व्यक्ति को फिर से चालो।
राजा, प्रजा, धनी और निर्धन,
सभ्य असंस्कृत सज्जन, दुर्जन,
नवमानवता से सबको भर, खण्ड मनुज को फिर से ढालो।
मानव ही भू-देव, दलित, कुंठित, औ जग से लांछित,
कलुष कालिमा के भीतर, हो रही चेतना विकसिता।'

नागार्जुन - नागार्जुन के काव्य में दलितों के प्रति गहरी सहानुभूति दिखती है। 'हरिजन गाथा' नामक नागार्जुन की प्रसिद्ध कविता में दलितों के साथ किए जा रहे अत्याचारों की मार्मिक अभिव्यक्ति है। इस कविता का प्रारंभ एक साथ तेरह दलितों को जिन्दा जला दिए जाने की लोम हर्षक घटना के प्रति दु:खद विस्मय व्यक्त करते हुए होता है -

'ऐस तो कभी नहीं हुआ था कि
एक नहीं, दो नहीं, तीन नहीं
तेरह तेरह अभागे
जिन्दा झोक दिए गए हों
प्रचण्ड अग्नि की विकराल लपटों में।'

कविता का मूल क्रान्तिकारी स्वर कविता के दूसरे खण्ड में अभिव्यक्त होता है, जब नवजात दलित शिशु की हथेली रैदासी सन्त बाबा गरीबदास देखते हैं और कहते है -

'आड़ी तिरछी रेखाओं में
हथियारों के ही निशान हैं
खखरी है, बम है, असि भी है
गड़ासा भाला प्रधान है
दिल ने कहा-दलित माओं के
सब बच्चे अब बागी होंगे
अग्नि पुत्र होंगे वे अन्तिम
विप्लव के सहभागी होंगे ....
खान खोदने वाले सौ सौ
मजदूरों के बीच पलेगा
युग की आंचों में फौलादी
सोच सा यह वही ढलेगा ....
हिंसा और अहिंसा दोनों
बहने इसको प्यार करेंगी
इसको आगे आपस में वे
कभी नहीं टकरार करेंगी।'

चूंकि यह कविता दलित नायक की एक अवतारी कल्पना के ताने-बाने से बुनी गयी है, पर इसका मूल समग्र परिवर्तनवादी स्वर उसको एक महत्वपूर्ण दलित कविता बना देता है।

सोहनलाल द्विवेदी - सोहनलाल द्विवेदी ने दलितों की स्थिति परिस्थितियों को अच्छी तरह समझा है और उनके उत्थान के लिए लोगों में एकता की भावना को अभिव्यक्ति किया है। हरिजनों के लिए उन्होंने 'हरिजनों का गीत' नामक एक प्रार्थना में मंदिर के पुजारी से हरिजनों के लिए मंदिर के द्वार खोलने का आग्रह किया है -

'खोलो मंदिर द्वार पुजारी।
मत ठुकराओं, चरण धूलि लूं बार-बार जाऊं बलिहारी।
क्यों तुमने शबरी-निशाद की, अपने मन से बात बिसारी?
मैं भी एक उन्हीं के कुल का, प्रभु-पद पूजन का अधिकारी।
खोलो मंदिर द्वारा पुजारी।
सच मानो तुमको न कभी मैं, भूलंगा मेरे उपकारी।
प्रभु की सुधि के साथ-साथ आयेगी प्रतिदिन याद तुम्हारी।
खोलो मंदिर द्वारा पुजारी।'

'सेवाग्राम' कविता में सोहनलाल द्विवेदी मानव से जाति-पॉति से ऊपर उठने की बात करते हुए सभी मानव को एक समान मानते हुए कहते हैं-

'जाति-पॉति का है यहां कोई नहीं विचार
ईश्वर के पूत सभी उद उदार
मानव-मानव समान एक गान,
गूंजता रहता महान।
जो भी यहां आते हैं,
एक साथ बैठकर एक पंगत में खाते हैं,
एक क्षण को ही सही निज में परिवर्तन-सा पाते हैं,
मानव-मानव समान
उनके भी प्राणों में बल उठता। यह महान गान।'

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' - राष्ट्रीय काव्यधारा के विद्रोही कवि बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने किसी दावत के बाद किसी मेहतर बच्चे को अतिथियों की जूठी पत्तले चाटते देखा तो उनके समता बोध और मानवीय गौरव-भावना को इतनी चोट पहुंची कि उन्होंने ललकार कर कहा-

'अरे चाटते देखा जूठे पत्ते जिस दिन मैंने नर को
उस दिन सोचा : क्यों न लगा दूँ आग आज इस दुनिया भर को
यह भी सोचा : क्यों न टेटुआ घोटा जाए स्वयं जगपति का
जिसने अपने ही स्वरूप को, रूप दिया इस घृणित विकृति का।
जगपति? कहां और सदियों से वह तो हुआ राख की ढेरी
वरना समता संस्थान में लग जाती क्यों इतनी देरी?
छोड़ आसरा अलख शक्ति का रेनर स्वयं जगपति तू है
तू यदि जूठे पत्ते चाटे, तो तुझ पर लानत हैं, थू है।'

रामधारी सिंह 'दिनकर' – रामधारी सिंह 'दिनकर' ने सामाजिक असमानता, पूंजीवादी संस्कृति, जातिप्रथा, ऊंच-नीच की भावना आदि को अपनी कई कविताओं में प्रमुखता के साथ वर्णन किया है। 'कुरूक्षेत्र', 'सामाजिक असमानता', 'रश्मिरथी', 'हाहाकार', 'दिल्ली और मास्कोय, 'पूॅजीवादी संस्कृति पर' आदि दिनकर की उल्लेखनीय कविताएं हैं जिसमें दलितों के प्रति संवेदनशीलता को प्रकट किया गया है। इन कविताओं की कुद पंक्तियॉ दृष्टव्य है –

'जाति-जाति रटते जिनकी पूॅजी केवल पाखण्ड।
मैं क्या जानू जाति जाति है, ये मेरे भुजदण्ड।
पढ़ो उसे जो झलक रहा है मुझमें तेज प्रकाश।
मेरे रोम-रोम में अंकित है मेरा इतिहास।
किन्तु मनुज क्या करे? जन्म लेना तो उसके साथ नहीं
चुनना जाति और कुल अपने बस की बात नहीं।'

गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही' – गया प्रसाद 'सनेही' ने अपनी अनेक कविताओं में दलितों के प्रति संवेदनशीलता को प्रकट किया है। उनकी प्रमुख कविताओं में 'अछूत', 'साम्यवाद', 'हरिजन गीत' आदि उल्लेखनीय हैं। इन कविताओं में शुक्ल जी ने अछूतों की पंक्तियों को यहां देखा जा सकता है–

'सेवक अगर अछूत न होते,
कैसे आप अछूते रहते।
किसी तरह तो पूत न होते।
सेवक अगर अछूत न होते।
भर जाता घर-घर पाखाना,
सिर पर पड़ता तुम्हें उठाना।
मृतक ढोर भी ढोने पड़ते,
बहते रहते घिन के सोते।
सेवक अगर अछूत न होते।
सकल राज-पथ गंदे होते,
कौन उठाता, गन्दे होते।
गांव-गांव महामारियां होती,
लोग भाग्य को रोते।
सेवक अगर अछूत न होते।'

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि दलित काव्यधारा का जो बीजारोपण दलित संतों ने किया, उसे ज्योतिबा फूले, स्वामी अछूतानन्द 'हरिहर' आदि ने अपनी ओजस्वी वाणी से अंकुरित करके आगे बढ़ाया। तत्पश्चात बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर के संघर्ष और मार्गदर्शन से प्रेरणा पाकर दलित काव्य छठे दशक में महाराष्ट्र की भूमि पर नव जीवन पाकर प्रकट हुआ फिर भारतीय दलित साहित्य अकादमी के प्रयास से आठवें दशक में दलित काव्यधारा हिन्दी काव्य में पूर्णरूप से शामिल हो गया। फलत: आज दलित काव्यधारा अनेक दृष्टियों से समृद्ध हो रहा है। यह हम सबके लिए गौरव की बात है। यह दलित काव्यधारा की जीवन्तत: का परिचायक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी काव्य में दलित काव्यधारा – माताप्रसाद।
2. निराला रचनावली खण्ड-1 एवं खण्ड-2
3. उद्बोधन-सुमित्रानन्दन पंत।
4. युगवाणी- सुमित्रानन्दन पंत।
5. जाति वर्ण संस्कृति समाज से-सुमित्रानन्दन पंत्र।
6. दलित साहित्य – सम्पादक जयप्रकाश।

****

समकालीन हिन्दी कविता एवं कवयित्रियाँ

डॉ. संध्या दुबे *

प्रस्तावना – समकालीन हिन्दी कविता मानवीय सरोकारो से जुड़ी हुई कविता है जो स्त्रियों, आदिवासियों पीड़ितो को पूरी मानवीय गरिमा और संवेदन शीलता के साथ चिन्हित करती है। यह जहाँ स्त्री की समाज में स्थिति का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करती है, वही उसके लिए नया स्पेस (विस्तार) भी तलाशती है। हिन्दी की समकालीन कवयित्रियों ने इस भारी प्रचार तंत्र के तमाम प्रलोभनों के बावजूद अपनी पैनी दृष्टि अपने ही समाज में – फैले अंतर्द्वन्दों और विसंगतियों से पल भर के लिए भी नही हटाई है। इन्ही विसंगतियों से जूझती समकालीन कवयित्रियां अपनी अपने समाज की, अपने राष्ट्र की अस्मिता की तलाशं में दूर – दूर तक अपनी नजरे दौड़ाती नजर आती है। समकालीन युग में रहकर युग के समानान्तर जो घटित हो रहा है उसका आक्रामक चित्रण इन कविताओं का प्रिय विषय है।

अपनी बात ये बहुत ही सादगी से कह रही है, अपनी पीड़ा अपना दर्द समाज के बीच रख देना ही इनका मूल विषय है। कविताई के निमित्त ही कवित्त का अंकन इनका ध्येय नही है। इनकी कवितायें अपने आस – पास से प्रस्थान कर चारों और घुमती हुई, फिर – फिर वापिस आती है और उसके मुल में समूची नारी की अव्यक्त पीड़ा शब्दों को माध्यम बना आग उगलती है। इनकी कविताए प्राय: छन्दमुक्त और ध्वन्यात्मक पदों की कविता है और इसके सौन्दर्य का

धरातल भी पुख्ता है। इनकी अधिकांश कवितायें प्राय: सरल है। जीवन की जटिलताओं, विषमताओं को उकेरती आज के युग सत्य, भूख और अकाल, विस्थापन, गैर बराबरी , अत्याचार और अनाचार को उद्घटित करती, समाज के सामने एक प्रश्न चिन्ह लगाते, पहाड़ी नदी के वेग से हरहराती बढ़ती जाती है। जीवन के प्रतिपल बदलते रंगों को शब्दों में समेट लेने की ललक समकालीन कवियित्रियों की विशेषता है। तीव्र वेग में भागते जीवन में जब–जब कुछ तेजी से पीछे छूटता जा रहा है, हम अपने आपसे अजनबी होते जा रहे हैं। 'टूटते जीवन मूल्यों और विखंडित हो चले सामाजिक परिवेश में अपनत्व की अस्मिता को तलाशति चपा वैद' की यह कविता पुराने जीवन मून्यों को धुंधलाती आँखों से देख रही हैं –

धुँध में धुँधलाती
चल रही हूँ
रास्ता पथरीला
चन्द्रमा के पत्थरों पर निगाहें बिखेरती
कैक्टसों की पथरीली आँखों में बैठी
एक अजनबी नम्रता उनके फूलों में देखती
आने जाने वालों की आँखों से आँख मिलाती
कुछ सोचती बढ़ रही हूँ गोलाई में जहाँ कुछ बूढ़े एक घेरे में
आँख मूंदे मंत्र पढ़ रहे हैं।'[3]

समाजिक बंधनों का जो नेह था जो आतमियता थी, सहजता और सरलता थी आदमी को आदमी समझे जाने की जो भावना थी, अब वह मर चुकी है। आदमी को नहीं पहचान पा रहा है। गगन की विशालता बढ़ते ही जा रही है और अब तो आदमी को बपने घरौंदे में वापिस लौटना भी असम्भव होता जा रहा है। आदमी की उड़ान अब उसे थकाये दे रही है लेकिन दूर – दूर तक आस्थाओं का कोई वृक्ष नही दिखाई पड़ रहा है। जहाँ पल भर के लिये ही सही वह विरामपा सकता आदमी की यह अन्नत उड़ान' निर्मल शर्मा' यों व्यक्त करती हैं –

'आइने के सामने खड़ी होकर
जाने क्या ढूँढती रहती हूँ
अपनी ही आँखों के
अक्स की गहराई में
जहाँ पसरी है दूर–दूर तक
एक वीरान खामोशी
खेजड़ियों के जंगल में
तलाशती हूँ विशाल जट वृक्ष कोई आस्था का
इतना बड़ा फ्रेम गढ़ लिया है न मैंने
कि कोई तस्वीर पूरी आती ही नही।'[4]

उत्तर आधुनिकतावाद को इस दौड़ में जब दुनिया भागम भाग के खेल में उलझी है, हर आदमी दूसरे आदमी को खत्म करने की ही चिन्ता में रत है, भू–मण्डल की सरहदों को भी पार कर जाने की ललक लिये बैठा है। आज छोटी–छोटी घटनाओं पर रोजमर्रा की बातों पर बात करना गुजरे जमाने की बात समझी और कही जाती है। यह बात ओर है कि हर व्यक्ति को परिवार की आवश्यकता है, जो नेह, जो सकून उसे यहाँ मिलता है उसके बिना शायद वह रह भी नहीं पाये। भारतीय समाज में नारी की स्थिति अति विशिष्ट है। नारी को भी अपनी इस सामाजिक स्थिति का भान है। अपनी इस स्थिति में उसके अपने राग–विराग, दु:ख दर्द, सुख चैन सभी सम्मिलित है। जमाने की दौड़ को देख उसके मन में भी जमाने के साथ–साथ दौड़ पड़ने की इच्छा जाग पड़ती है पर अगले ही पल उसके मन में घर परिवार की जिम्मेदारी का एहसास जन्म ले लेता है। नारी के मन में अपने इस घर–संसार को आधुनिकता के रंग में रंग डालने की इच्छा जन्म लेती है। एक अलग ही स्वरूप दे डालना चाहती है पर इस आधुनिकता के बदले वह अपना घर परिवार और बच्चे नहीं बदल सकती। नारी के इसी अलौकिक, अनुभव का वर्णन नारी ही कर सकती है। 'अनामिका' ने इस अनुभव की अभिव्यक्ति कुछ इस प्रकार से की है –

अभी मुझे घर की कतरनों का

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) पूनमचन्द गुप्ता वोकेशनल कॉलेज, खण्डवा (म.प्र) भारत

अनुवाद करना होगा
जल की भाषा में,
फिर जूठी प्लेटों का
किसी श्वेत पुष्प की पंखुड़ियों में
अनुवाद करूँगी मैं।
तब थोड़ी देर खड़ी सोचूँगी
कि एक भाग भरे सिंक का
क्या मैं कभी कर सकूँगी
किसी राग में अनुवाद
दरअसल इस पूरे घर का
किसी दूसरी भाषा में
अनुवाद चाहती हूँ मैं,
पर वह भाषा मुझे मिलेगी कहाँ
सिवा उस भाषा के जो मेरे बच्चे बोलते हैं।'[5]

आज के सामाजिक परिवेश में नारी बदली हुई प्रतीत होती है पर पारीवारिक जीवन में अपने महत्व और अपनी जिम्मेदारी के निर्वहन के प्रति अधिक सचेत है। इसी स्थिति पर 'वीणा सिन्हा' का सूक्ष्म विवेचन कविता की भाषा में निम्न प्रकार मुखर हुआ है।

उसके एकान्त में
घुस पड़ते हैं।
आटे का खाली कनस्तर
रात का खाने का मेनू
बच्चों की फीस,
मैले कपड़ों का ढेर
छत पर फैले कपड़े
ससुर की दवाओं की फेहरिस्त
खुद की आँखों से
पुरानी राहों पर।[6]

इन कवियित्रियों की कविताओं में जीवन की परिभाषायें बनने बनाने की ललक भी है। इनकी जीवनानुभूतियों का एक भाग शोषित नारी की त्रासदी का चित्रण भी है। नारी होने की त्रासदी, नारी होने की पीड़ा और समाज में उसके प्रति किये जा रहे व्यवहार के प्रति वह जागरूक है। इन कविताओं में जीवन की विसंगतियों और विस्तृत जीवन फलक को शब्दों में समेट लेने की अकुलाहट साफ दिखाई देती है। 'लीना गौतम' ने इस भावों को निम्न प्रकार से व्यक्त किया – घर के बड़े कथानक में

बस, क्षेपक या आमुख है लड़की
जब कभी मिला स्नेह
बाँधा आँचल की कोर में
फिर जुट गई कामकाज में
माड़ के चाँवलों की तरह
अपने अस्तित्व को
निरंतर घुलाती है लड़की
मानते हुये इसका कहना, उसका कहना
नहीं रह जाता कुछ भी अपना
पाँव में बेड़ी की तरह पायल
जिस्म और दिल सब घायल।'[7]

नारी को लेकर बहुत कुछ कहा गया है लिखा गया है, पूरा सौन्दर्य शास्त्र ही उस पर लिखा जाता रहा है, पर वास्तविकता कुछ और भी है। सीधे–सरल शब्दों में 'लीना गौतम' ने लिखा –

यूँ तो, कविताओं में बिखरी है लड़की
पर ढूँढों उसे जीवन में
तो वह नहीं मिलती,
मिलती है – उसके दु:ख दर्द की कहानी।'[8]

इन कवियित्रियों की कविताओं में जीवन की विसंगतियों और विस्तृत जीवन फलक को शब्दों में समेट लेने की अकुलाहट साफ दिखाई देती है। जब इनकी कविताऐं वर्जनाओं से मुक्ति के लिये सामूहिक प्रयास की सार्थकता को सिद्ध करती है' वही समाज में फैले अनाचार और उस अनाचार को जीवन भर भोगने की पीड़ा से अभिशप्त नारी की कथा – व्यथा को पूरे साहस के साथ समाज के सम्मुख रखने का साहस भी रखती है। एक प्रश्न चिन्ह इस सभ्य समाज के सम्मुख खड़ा भी करती है। यह शाश्वत प्रश्न भू–मण्डलीकरण और उत्तराधुनिकतावाद के सामने दीवार की तरह अड़ा है जब तक हम इन प्रश्नों का समाधान नहीं कर लेते हम और हमारा समाज आगे नहीं बढ़ सकता। 'वीणा सिन्हा' ने लिखा है –

पाँच साल की उम्र / अगवा हुई औरतें
बिखेर दी जाती है गलियों में
और पूरी दुनिया ही बन जाती है
सोना गाछी।।
लिंगों की चट्टानों के बीच / मिलते हैं।
दुधिया हँसी और / नन्हीं सिसकियों के
जीवाश्म / फिर भी
खून और वीर्य से / सने चेहरों की
भीड़ में / रिश्तों को तलाश करती
जाती है / फैली आँखों से
पाँच साल की उम्र में / अगवा हुई औरतें।'[9]

औरत होना ही शायद अभिशाप है। आज हम सभ्यता के तथा–कथित सोपानों पर लगातार बढ़ते जा रहे हैं पर औरत की स्थिति आज भी नहीं सुधरी है। उसे स्थिति में किसी भी प्रकार का परिवर्तन समाज के लिये असहय हो उठता है 'लीना गौतम' लिखती है –

अक्सर हमारे भाव
शब्दों में बँध नहीं पाते
और हमारा साथ लोगों की आँखों में लगता है
मिर्च की तरह।'[10]

आज की औरतों पर अत्याचार और अनाचार लगातार हो रहे हैं। नारी की यह पीड़ा का अनुभव नारी ही अधिक अच्छे से कर सकती है। नारी पर अनाचार की अंतिम सीमा 'बलात्कार' भी है। शारीरिक और मानसिक यातनाओं की एक अनवरत श्रृंखलाओं की यह एक कड़ी है जिसे भोगने के लिये नारी ही अभिशप्त है। इस पीड़ा की 'अनीता वर्मा' ने 'बलात्कार जिसके साथ हुआ' नामक अपनी कविता में बड़ी बेबाकी के साथ लिखा है –

वह हममें से एक थी
जिसकी साँस आयी थी थम थम तूफान बन
एक भारी पहाड़ सीने पर चढ़ बैठता था
सन्नाटे में परस्त चीखें थी, क्योंकि घटना बीत चुकी थी
वह दिन से डरत थी रात की तरह
और रात जानवर सी रेंगती थी वहाँ रुधिर में

दीवारें दहशत बन टूटती थीं
वह चुप थी जैसे ज्वालामुखी
रो सकत थी गहरे कुएँ में

इनकी कविताऐं जीवन और समाज के कई-कई स्तरों, पर्तो का अनावृत करती है। यहाँ जीवन के मूलभूत प्रश्नों पर विचार करती है। जीवन के सभी अंगों पर ये लगातार सूक्ष्म दृष्टि लिये चल रही है। प्रकृति के पंच महाभूतों से विकसित सृष्टि को, विस्तार को अपनी दृष्टि में रखती है। विघटन, भेद और शत्रुता के स्थान पर संस्कृति के समष्टिगत सद्‌भाव की स्थापना उन कवियित्रियों की प्राथमिकता है। जीवन उल्लासित बना रहे यही इनकी भावनायें हैं। 'आज का आदमी' नामक कविता में 'निर्मला शर्मा' इन्हीं बातों की ओर संकेत करती हैं।

आज का आदमी / सहज ही करता है विश्लेषण
सतत अन्वेषण छिद्रों का / अविश्वसनीयता के इस दौर में
बड़ा हीं कठिन है / भव्य प्रतिमायें गढ़ना
आदर्शों के साँचे में ढलना / किसी शख्सियत का
संस्कारित सपनों का / भ्रूण हत्या के निमित्त
जिसे चलाया जा सके / किसी उत्तरा के गर्भ में'।[11]

समकालीन हिन्दी कविता में कवियित्रियों के योगदान की चर्चा करने पर हम निश्चित रूप से पाते हैं कि आज की कविता - 'मैं नीर भरी दु:ख की बदली, विस्तृत नभ का कोई कोना या ' - अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी' कहने वाली नारी अब इतनी असहाय नहीं रह गई है। अपनी पीड़ा अपने दु:ख दर्द का प्रकटीकरण यह पूरी साहस के साथ करने में सक्षम है। कविता के क्षेत्र में वह किसी बँधे-बँधये लीक के स्थान पर, जीवन के समान्तर में विश्वास रखती है। समाज में शिक्षा के व्यापक प्रचार-प्रसार से नारी पुरुष के बराबर ही आ खड़ी है और यह सन्देह नहीं की कई स्थानों पर तो भावनाओं के स्पष्ट प्रकटीकरण में पुरुषों से बहुत आगे है। वैश्वीकरण और उपभोक्तावाद की पश्चिमी संस्कृति में, भोग विलास की भूल भूलैया में तथा अर्थ केन्द्रित जीवनदृष्टि में डूबकर आत्मा को चाकरी से गुलामी के रास्ते पर ढकेलाये जा रहे हैं। यह सचमुच प्रसन्नता की बात है कि हिन्दी की समकालीन कवियित्रियों ने इस मरीचिका के मायाजाल को समझ लिया है। अंधेरे की ओर बढ़ते समाज को ये कवियित्रियाँ कविता की दीपशिखा लिये पथ आलोकित कर रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'वागार्थ' में प्रभाकर श्रोत्रिय का सम्पादकीय, मई 1998
2. 'वही'
3. 'साहित्य अमृत' में चम्पा वेद - दिसम्बर 1999, पृ. 9
4. 'मधुमती' में निर्मला शर्मा - नवम्बर 1998, पृ. 18
5. 'साहित्य में अमृत' में अनामिका - नवम्बर 1998 पृ. 27
6. 'दस्तावेज' में वीण सिन्हा - जनवरी / मार्च 1998 पृ. 66
7. 'वागार्थ' में लीना गौतम - मई 1998 पृ. 59
8. 'वही'
9. 'साक्षात्कार' में वीणा सिन्हा - जनवरी 1999 पृ. 61
10. 'वागार्थ' में लीना गौतम - मई 1998 पृ. 60
11. 'मधुमति' में निर्मला शर्मा - नवम्बर 1998 पृ. 16 - 17

****

अजहर हाशमी के पद्य साहित्य में व्यंग्य

डॉ. मंशाराम बघेल *

प्रस्तावना - प्रो. अजहर हाशमी के पद्य साहित्य में व्यंग्य - भूमिका- प्रो. अजहर हाशमी का पद्य साहित्य गीतों गजलों एवं मुक्तकों के माध्यम से विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में, हाशमीजी अपनी लेखनी के माध्यम से व्यंग्य बाण चलायें, हाशमीजी ऐसे वक्ता है उनको कही भी समाज, देश, आम आदमी के विरुद्ध कोई कृत्य दिखाई देता है, तो अपनी कविता, गजल एवं गीत के माध्यम से उन पर करारा व्यंग्य करते हैं। हाशमी ऐसे समाज के निडर व्यक्ति है, वह अपने मस्त मौला अंदाज में रहते हैं, उनकी भावनाएँ हमेशा समाज के पक्ष में रहती हैं, न की समाज के विरोध में। हाशमीजी ने विभिन्न व्यंग्य रचनाएँ लिखी है कविता के माध्यम से भावना प्रावधानता को विशेष महत्व दिया है। कुछ कविताओं और गजलों के माध्यम से प्रेरणास्पद संदेश भी दिये है। आज जब हमारा देश साम्प्रदायिकता की आग में झुलस रहा है, धर्म के नाम पर कटुता फैलाई जा रही है। मानवता की भावना धर्मो की संकीर्ण विचारधाराओं में जकड़ी गई है। ऐसे समय में हाशमीजी ने सर्वधर्म समभाव मानवतावादी उदार विचार धारा को ही कविता में अधिकतर व्यक्त किया है।

यह सनातन सत्य है कि व्यक्ति समान का अंग होता है, किन्तु कुछ लोग अपने को सम्पूर्ण समाज का प्रतिनिधि मान लेता है और यही से विवाद पैदा होता है। हाशमी के शब्दो में 'सभ्यता पोखर में पंकिल गंध हो' ...(1)

धर्मयुग पत्रिका में प्रकाशित गजल का उद्देश्य वर्तमान सभ्यता में फैले हुए व्याप्त खोखलेपन को जनता के सामने उजागर करते हुए समाज में व्याप्त कुण्ठा एवं ईर्श्या का वातावरण इस प्रकार हावी है कि युवा वर्ग इस बेरोजगारी, बेकारी के कारण अपने आपको अपाहिज सा महसूस करता है। हाशमीजी का मानना है कि वर्तमान सभ्यता गढ्ढे में सढ़े हुए कीचड़ के समान हैं। समाज में चारों और कुंठा ही कुंठा और ईर्श्या, द्वेष व्यापक रुप से फैली है। वर्तमान समय में शिक्षित युवा वर्ग के पास सम्पूर्ण योग्यता होने के बाद भी उनकी योग्यता का कोई मूल्य नही है। उनकी योग्यता की काबिलियत की कोई कीमत नही है। इसलिए युवा पीढी कुण्ठा ग्रस्त हैं, दु:ख तथा तकलीफों के पहाड़ इस प्रकार सामना कर रहा है कि जैसे उनके सामने कोई दीवार खड़ी कर दी है।

सभ्यता पोखर की पंकिल गंध हो जैसे
कुण्ठा के संविधान का उपबंध हो जैसे
इस तरह रग, रग से पीड़ा बस गई आकर
'मेरे मन का दर्द ले अनुबंध हो जैसे'

उपर्युक्त गजल के माध्यम से प्रो. अजहर हाशमी ने वर्तामान युग के युवावर्ग को मानस छटपटाहट को बखूबी प्रस्तुत किया है।' जिनके आंगन मे लगा हो पेड़ दौलत का ..(2)

प्रो. हाशमीजी कहते हैं वतर्मान राजनिति मे इतना अहंकार पैदा हो गया है कि एक भाई दूसरे भाई को अपना नही समझता पद पाने पर व्यक्ति के मन मे अहंकार पैदा हो जाता है, जब पद नही रहता तब साथ बैठने वाले लोग भी साथ छोड़ जाते है, वतर्मान समय मे जिसके पास पद है, दौलत है, वह चाहे कितना भी भ्रष्टाचारी है। उसे हर जगह सम्मानित किया जाता है, उसके बुरे कर्मो पर किसी का ध्यान नही जाता है, इसके विपरीत जब कोई सामान्य व्यक्ति जो धनहीन है, यदि छोटी सी गलती भी कर बैठता है, तो उसकी सजा उसे गलती से दो गुनी दी जाती है, प्रस्तुत है उक्त गजल का कुछ अंश-

'खास लोगों के मजे है, मौज मस्ती है
आम जनता अब भी रोटी को तरसती है
जिसके आंगन मे लगा हो पेड़ दौलत का
उनके हर दुर्गुण को दुनिया गुण समझती है।'

इसका अर्थ यह है कि धनवान ही इस दुनिया में गुणी माना जाता है, भले ही वह मूर्ख है। यह परम्परा सदियों से चलली आ रही है। सुविधा सम्पन्न लोग जहां मौज मस्ती में जिंदगी गुजारते है। वहां गरीब रोटी के लिये तरसता है। अमीर गरीब की यह विषमता सदियों से चली आ रही है। वर्तमान में भी समाज में अमीरी और गरीबी की खाई है।

'रोशनी का पथ बुहारें' ...(3)

प्रो. अजहर हाशमी ऐसे ही स्वस्थ समाज की कामना करते हैं, उक्त कविता के माध्यम से वे बैर भाव को हटाकर मैत्री का भाव विकसित करें। इन पंक्तियों के माध्यम से अनेक प्रतीकों द्वारा कवि अपनी बात को कहते हैं, जहाँ परस्पर विश्वास होता है। वहाँ बसन्त होता है। बसन्त माने उल्लास, बसन्त माने आनंद का वातावरण व विश्वास से ही आयेगा। ईश्वर का निवास प्यार मे है, नफरत मे नही। यदि इस बात पर विश्वास हो तो, वहाँ बसन्त होता है। यदि हृदय मिले हो, आपस में दुराव न हो तो वहाँ बसन्त है। बसन्त के लिए जीवन में सच्चा आनंद पाने के लिए मन मे विश्वास, प्रेम और स्वछता होनी चाहिए।

परस्पर दुश्मनी बहुत की अब उसे छोड़कर दोस्ती का नया अध्याय खोलें। पूर्व मे जो हमने गलतियाँ की है उन्हे हम सुधारे हाशमी जी कहते कि-

दीप की लो से अंधेरे को नकारे,
आईये हम रोशनी का पथ बुहारे
बैर का तो व्याकरण कण्ठस्थ है, पर
स्नेह का अध्याय हम पढ़ ही न पाये
दुश्मनी का तो षिखर हमने हुआ पर
दोस्ती की सीढ़ियां चढ़ ही न पाये
गलतियाँ जो हुई उसको सुधारें
आईये, हम रोशनी का पथ बुहारे।'(4)

जिस प्रकार धीरे-धीरे अंधेरा कितना भी घना हो पर रोशनी/उजाले के सामने वह कम/हारता है। इसी प्रकार प्यार से नफरत मिटती है। नफरत से कुछ भी हासिल नही होता है। उक्त कविता में कवि का केंद्रीय भाव अंधेरे पर उजाले की विजय है। इस दीपोउत्सव संबंधी गीत के माध्यम से कवि कहते हैं कि अंधेरा चाहे जितना भी घना हों, जीत हमेशा रोशनी की ही होगी,

* शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी, जिला- बड़वानी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

जिस प्रकार झूठा व्यक्ति कितने भी षड्यंत्र रच लें, पर अंत मे वह हार जाता है, क्योंकि जीत हमेषा सच्चाई की ही होती हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि दीपक की लो से अंधकार को मिटाने की बात कही गयी हैं।

जोड़ने वाले चिरागो को जलाएं– प्रो. अजहर हाशमीजी हिन्दू त्यौहारों के उपर भी अपनी अनेक रचनाओं माध्यम से रंग बिखरते हैं, जहां पर भारतवासी निवास करते हैं, ऐसे देशों मे भी दीपों के माध्यम से उजाला करने वाला त्योहार दीपावली का पर्व हमारे लिए दीपो को रोशनी और आतीषबाजी मै गुम होकर न रह जाए। भावार्थ यह है कि अगर हम प्रेम के दीपक जलाएंगे तो नफरत द्धेष आदि का रंग प्रेम रूपी दीपक के सम्मुख अधिक समय तक नहीं टिक सकेगा। प्रस्तुत हैं उक्त गीत की कुछ पंक्तियां

'तोड़ने वाला तिमिर गहरा रहा है, जोड़ने वाले चिरागो को जलाएं
हर दिशा मे प्यार में प्यार के दिपक जलाकर विश्व द्धेष नफरत को हटाएं'5

प्रो. अजहर हाशमीजी ऐसे धर्म परायण व्यक्ति हैं जो सभी धर्मो को सम्मान आदर पूर्वक देखते है उनके लिए सभी धर्म समान है उनका कहना है, जो लोग धर्म के आधार पर राजनीति करते है वह केवल अपना उल्लू सीधा करते हैं।

प्रो. अजहर हाशमीजी अपने पद्य साहित्य यें व्यंग्य को झलक दिखाते हुएं वे कहते हैं कि पड़ोसी देश की प्रायोजित आतंकवादी गतिविधियों से हमारा देश त्रस्त है। भारत के कुछ भागों में नक्सलवादी बेगुनाह लोगों की हत्याएं कर रहें हैं, जिसमे महिलाएं बच्चे एवं गरीब लोगों की जाने ले रहे हैं। इसके अतिरिक्त देश की सुरक्षा करने वाले जवानों को भी निशाना बनाया जा रहा है। परम पिता महात्मा गांधी ने भारत को आजादी दिलाने के लिए अहिंसावादी देश को हिंसा के गहरे घाव सहने पड़ रहे है। कवि आतंकवाद की समाप्ति की अपेक्षा करता है। कवि चाहता है कि देश से आतंकवाद मिटना चाहिए, देश साम्प्रदायिक तनाव से मुक्त होना चाहिए। देश मे सद्भावना सौहार्द्र और प्रेम स्नेह का वातावरण फैलाना चाहिए इन्ही भावनाओं को गजल के माध्यम से प्रस्तुत किया है। 'जहां भी हो '.. 6

गजल की कुछ पंक्तियां निम्न है –

'पावन है वो कुटिया या इमारत जहां भी हो
मन्दिर के पुजारी हो कि मस्जिद के मौलवी
रोके वे तनावों की तिजारत जहां भी हो
सद्भावना, सौहार्द, स्नेह, सत्यता वाला चाहिए
उसे खोजे कि वो भारत जहां भी हो।'

प्रो. अजहर हाशमीजी अपनी रचनाओं मैं धार्मिक क्षेत्र में भी कहीं–कहीं पर व्यंग्य मिलते है। हाशमी जी के अनुसार धार्मिक क्षेत्र मे होने वाले पाखण्डपूर्ण कर्मकाण्ड पर पर कवि ने व्यंग्य के ढ़ंग में काफी कुछ लिखा है। अपने आपको धार्मिक समझते समुदाय भी परस्पर द्धेष को संतुलित भावना रखते हैं। धर्म की आड़ लेकर भोली भाली जनता को भयभीत करते हैं। हाशमी जी ने लोगो के सामने त्याग, विश्वास और प्रेम का मार्ग प्रशस्त किया किया है। धार्मिक आदमी को अहंकार रहित होना चाहिए अहंकार आदमी को पतन की और ले जाता है। व्यक्ति जैसा कर्म करता है वैसा ही फल पाता है दुष्कर्मी हर पल मरता है।

'दुनिया से तो बहुत मिला तु खुद से भी तो मील'..7 कविता में इसी प्रकार की भावनाएं कवि ने व्यक्त की है।

मद की चोटी पर बैठ हर शख्स फिसलता है
तेजी से गिरता है नहीं संभलता है
सारे सब ग्रंथो का यही सार निकलता है
जैसा कर्म करोगे वैसा ही फल मिलता है
दुष्कर्मी हर पल मरता है घुट घुट कर तिल तिल
दुनिया से तो बहुत मिला तु खुद से भी तो मिल'

प्रो. हाशमी जी कहते है कि आदमी जीवन भर दूसरों के बारे में अधिक सोचता रहता है और कभी आत्मावलोकन नही करता है। इसलिए वह आपके भीतर छिपे ईश्वरीय अस्तित्व को अनुभव नहीं कर पाता। व्यक्ति का अहंकार भी उसे आत्मा साक्षात्कार नही देता। कवि का मानना है कि मन मे घर लेने वाले लोभ और लालच का जिस दिन अन्त होगा सच्चे अर्थो मे वहीं दिन उत्सव की तरह आनंद से भरा होगा।

प्रो अजहर हाशमी ने भ्रूण लिंग परीक्षण के विरोध मे तथा बेटियों की महत्ता के सन्दर्भ मे अपना व्यंग्य गीत लिखा हैं जो 'बेटियां पावन दुआएं '8

शीर्षक में समाज का हर वर्ग आज बेटे और बेटियों मे फर्क करते हैं। वे बेटियां नही चाहते हैं, क्योंकि उनके विवाह के लिए दहेज जुटाना पड़ता है। उनके लिए योग्य लड़के भी तलाश करना पड़ती हैं और लड़की का पिता होने के नाते वर पक्ष के सामने झुकना पड़ता है। इस प्रकार लड़की के जन्म से लेकर विवाह होने के पश्चात् भी उसे अनेक मुसीबतो का सामना करना पड़ता हैं। इसलिए इन दिनों कन्या भ्रूण हत्याएं अधिक होने लगी है। हाशमीजी ने बेटियों की साख को समाज में इस गीत के माध्यम से उंचा उठाने का प्रयास किया है। वे बेटियों को पवित्र दुआओं एवं शुभ कामनाओं को संज्ञा देते हैं। कवि ने उक्त गीत की पंक्तियां प्रस्तुत की है

'बेटियां शुभकामनाएं है
बेटियां पावन दुआएं है
जिनमें खुद भगवान बसता है
बेटियां वे वंदनाएं है,

निष्कर्षतः प्रो अजहर हाशमी एक शषक्त व्यंगकार हैं, उन्होंने गद्य साहित्य में व्यंग्य के सामने पद्य साहित्य में भी व्यंग्य किये हैं। आये दिन उनकी कलम से विभिन्न समाचार पत्रों में निर्धारित कॉलम में उनकी व्यंग्य भरी रचनाएं प्रकाशित होती रहती हैं। व्यंग्य लेखक में हाशमी जी ने सामाजिक सरोकारों से जुड़े किसी भी विषय को नही छोड़ा हैं। वे सामाजिक परम्पराएं, राजनीतिक व्यवस्था, उच्च शिक्षा की कुण्ठाग्रस्त स्थिति, नौकरशाही का रिष्वत से भरा रवैया मनुष्य की वैयक्तिक मानसिक कमजोरियां आदि सब चित्रण हाशमीजी ने बड़ी बेबाकी से किया है। वे शासकीय सेवा मे रहते हुए भी वे शासन की कमजोरियों पर बेबाक कलम चलानें से नही चुके वर्तमान समय मे हाशमीजी धार्मिक, राजनीति आम आदमियों की मनोवृतियों के माध्यम से व्यंग्य किये हैं।

मानव समाज ने धर्म के मूल तत्व को ही भूला दिया हैं। कोरे कर्मकाण्ड और दिखावा धार्मिक क्षेत्र के लिए चिंतनीय बात हैं। हाशमीजी यद्यपि धर्म निरपेक्ष द्दष्टिकोण रखते है। किसी कि धार्मिक भावनाओं को अघात पहुंचाये बिना उन्होनें धार्मिक पाखण्डों और आडम्बरो का विरोध किया है। इस प्रकार हाशमीजी ने समूचे परिवेश मे व्याप्त विद्रूपताओं को अपने पद्य साहित्य का व्यंग्य विषय बनाया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. धर्मयुग पत्रिका 07 अप्रैल 1974
2. नवनीत हिन्दी डाइजेस्ट मई 2002
3. नवनीत हिन्दी डाइजेस्ट सितम्बर 1996
4. नवनीत हिन्दी डाइजेस्ट नवम्बर 1996
5. दैनिक भास्कर दीपावली विशेषांक 1994
6. नवनीत हिन्दी डाइजेस्ट जुलाई 1996
7. नवनीत हिन्दी डाइजेस्ट अक्टूबर 2002
8. दैनिक भास्कर 10.07.1994

वेदों में शिव तत्व

प्रमिला यादव *

प्रस्तावना – 'भारतीयों मेंअनादिकाल से अब तक शिव पूजा चली आ रही हैं, यह तो प्रत्यक्ष ही है। वेदों में शिव-तत्व का विस्तृत वर्णन किया गया है। देवाधिदेव भगवान् शिवजी का महत्व अपूर्व है। इसलिये भारतीय वामय मेंशिव की महत्ता सर्वत्र वर्णित है। शिव साक्षात् ब्रह्म ही है।

शिव ही ब्रह्म है– श्वेताश्वतरोपनिषद् के प्रारम्भ मेंब्रह्म के सम्बन्ध मेंजिज्ञासा उठायी गयी है। पूछा गया है कि जगत का कारण जो ब्रह्म है, वह कौन है? कि कारण ब्रह्म (श्वेताश्वतरोपनिषद्1/1)

श्रुति ने आगे 'ब्रह्म' शब्द के स्थान पर 'रुद्र' और 'शिव' शब्द का प्रयोग किया है–

'एका हि रुद्रः।' (श्वेताश्वतरोपनिषद् 3/2)

'स.........शिव' (श्वेताश्वतरोपनिषद् 3/11)

जगत् का कारण स्वभाव आदि न होकर स्वयं भगवान् शिव ही है–

एको हि रुद्रो न द्धितीयाय तस्थुर्य
इमाँल्लोकानीशत ईशनीभिः।
प्रत्यजनांस्तिष्ठति सकुकोचान्तकाले
संसृज्य विश्वा भुवनानि गोपा।। (श्वेताश्वतरोपनिषद् 3/2)

अर्थात् जो अपनी शासन-शक्तियों के द्धारा लोकों पर शासन करते है, वे रुद्र भगवान् एक ही है। इसलिये विद्धानों ने जगत् के कारण के रूप मेंकिसी अन्य का आश्रयण नहीं किया है। वे प्रत्येक जीव के भीतर स्थित है, समस्त जीवों का निर्माण कर पालन करते हैं तथा प्रलय में सबको समेट भी लेते है।

इस तरह 'शिव' और 'रुद्र' ब्रह्म के पर्यायवाची शब्द ठहरते है। 'शिव' को 'रुद्र' इसलिये कहा है कि अपने उपासकों के सामने अपना रूप शीश की प्रकट कर देते है–

कस्यादुच्यते रुद्र ? यस्माद्रषिभिः......द्रुतमस्य
रूपमुदलभ्यते। (अथर्वशीर्ष. उप.4)

भगवान् शिव को 'रुद्र' इसलिये भी कहते है-ये 'रुत्' अर्थात् दु:ख को विनष्ट कर देते है–

सत् = दुःखम् द्रावयति = नाशयतीति रुद्रः

अनेक तपों व नामों मेंसमाहित एक तत्व– शिव तत्त्व तो एक ही है–

'एकमेवाद्धितीयं ब्रह्म' (छा.उ. 6/2/1)
'एकमेव सत्। नेह नानास्ति किंचन' (तृ.उ. 4/4/19)
'एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति।' (तृ.उ. 1/164/46)
अग्निर्यर्थेको भुवन प्रविष्टो
रूप रूपं प्रतिरूपो बभूव।
एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा
रूपं रूपं प्रति रूपो बहिश्च।। (कठोपनिषद् 2/2/9)

जैसे कण-कण मेंअनुस्यूत अग्नि एक ही हैं, किन्तु अनेक रूपों मेंहमारे सामने प्रकट होते है। लोक कल्याण के लिये सद्योजात, वामदेव, तत्पुरुष, अघोर, ईशान आदि अनेक अवताररूपों मेंवे प्रकट हुए है। (शिवपुराण-शतरुद्रसंहिता)

प्रयोजनार्थ रुद्रेण मूर्तिरेका त्रिधा कृता। (रुद्रहृदय. उप. 15)

अर्थात् प्रयोजनवश भगवान् शिव अपनी अनेक मूर्तियाँ बना लेते है-आखिर वह कौन-सा प्रयोजन है, जिसके लिये वह अद्धय-तत्त्व अनेक नामों और रूपों को ग्रहण करता है।

'लोकवत् तु लीलाकब्वल्यम्।' (ब्रह्मसूत्र 2/1/33)

अर्थात् वह अ-द्धवय-तत्त्व जो सृष्टि के रूप मेंआता है, उसका प्रयोजन एकमात्र 'लीला' है।

ब्रह्मन् कथं भगवतश्चिन्मात्रस्याविकारिणः।
लीलया चापि युज्येरन्निर्गुणस्य गुणाः क्रियाः।।
क्रीड़ायामुद्यमोऽर्भस्य कामश्चिक्रीडिषान्यतः।
स्वतस्तृप्तस्य च कथं विवृत्तस्य सदान्यतः।। (श्रीमुद्रा. 3/7/2-3)

ईश्वर तो किसी वस्तु का अभाव तो है नहीं फिर वे कामना किसकी करेंगे। यह जिज्ञासा महात्मा विदुर को भी व्यग्र करती थी। उन्होंने मैत्रेयजी से पूछा था- 'ब्रह्मन्'! भगवान् तो शुद्ध बोध-स्वरूप निर्विकार और निगुर्ण है। फिर उनके साथ लीला से ही गुण और क्रिया का सम्बन्ध कब से हो सकता है? बालकों मेंजो खेल की प्रवृत्ति होती हैं, वह कामना-प्रयुक्त होती हैं, किन्तु भगवान् तो असंग है और नित्य-तृप्त है फिर लीला के लिये संकल्प ही कैसे करेंगे?

शिव लीला– जब ईश्वर एक है, अद्धितीय है, तब देखा देखी और अर्पण का यह खेल किसके साथ खेले और कहाँ रहकर खेले?

इसकी पूर्ति के लिये प्रभु स्वयं स्थावर भी बन जाते है और जंगम भी। उनका स्थूल-से-स्थूल रूप है- ब्रह्माण्ड, जो क्रीडास्थली का काम देता है–

विशेषस्तस्य देहोऽयं स्थविष्ठश्च स्थवीयताम्।
यत्रेदं दृश्यते विश्वं भूतं भव्यं भवच्य सत्। (श्रीमद्रा. 2/1/24)

अर्थात् यह ब्रह्माण्ड, जिसमेंभूत, वर्तमान और भविष्य की समस्त वस्तुएँ दिख पड़ती हृ। भगवान् का स्थूल शरीर है।

पुरश्चक्रे द्धिपद पुरश्चक्रे चतुष्पदः।
पुरः स पक्षी भूत्वा पुरः पुरुष आविशत्।। (बृ.उ. 2/5/18)

प्राकृत होने के कारण प्रारम्भ मेंयह ब्रह्माण्ड निर्जीव था। भगवान् ने इसमें प्रवेश कर इसे जीवित कर दिया। फिर वे विराट् कर उसे जीवित कर

* शोधार्थी, डॉ. परमेश्वर दत्त शोध संस्थान, श्री मध्यभारत हिन्दी साहित्य समिति, इन्दौर (म.प्र.) भारत

दिया। फिर विराट् पुरुष के रूप मेंआये। उसके पश्चात् दो पेशवाले और चार पैरों वाले बहुत से शरीर बनाये और अशरूप से इनम प्रविष्ट हो गये।

इन प्राणियों के जो अनन्त सिर, अनन्त आँख और अनन्त पैर हैं, ये सब उन्हीं के ब्रह्माण्ड देह मेंहै। इसी से प्रभु को सहस्त्रशीर्षा, सहस्त्रपाद कहा गया हृै-

सहस्त्रशीर्षा पुरुष सहस्त्रा: सहस्त्रपात्।
स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशागुलम्।। (श्वे.उ. 3/14)

भगवान् शिव से सब जगह आँख, मुँह और पैर कर लिये-

विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो
विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात्। (श्वे.उ. 3/3)

इसलिये कि अपने प्रेमियों को हजार-हजार नेत्रों से निरन्तर निहारा करे, अपने प्रेमियों के अर्पित वस्तुओं का भोग लगा सके और जहाँ-कही बुलाया जाय, वहाँ तत्काल पहुँच भी सके। श्रुति कहती है-

यो देवानां प्रभवश्चोद्भवश्च
विश्वाधियो रुद्रो महर्षि:।
हिरण्यगर्भं जनयामास पूर्वं स नो
बुद्धया शुभया संयुनक्तु।।

अर्थात् जो रुद्र भगवान् देवताओं की उत्पत्ति एवं वृद्धि के हेतु हैं, जो विश्व के नाथ और सर्वज्ञ है तथा जिन्होंने सृष्टि आदि मेंहिरण्यगर्भ को उत्पन्न किया था, वे हमशुभ बुद्धि से संयुक्त करा।

रुचि के अनुसार रूप- रुचि के अनुरूप महत्त्व नाम और रूप न मिले तो उपासना मेंप्रगति नहीं हो पाती।

भक्त अपनी रुचि के अनुसार भगवान् के नाम और रूप का वर्णन कर सके, इसलिये वे अनन्त नामों और रूपों में आते हृ।

चिन्मयस्याद्वितीयस्य निष्कलस्याशरीरिण:।
उपासकानां कार्यार्थं ब्राह्मणों रूपकल्पना।। (श्रीरा. पू.उ. 1/7)

अर्थात् ब्रह्म चिन्मय, अद्वितीय, प्राकृत शरीर रहित है फिर भी वह उपासकों के हित के लिये रूचि के अनुसार वरण करने के लिए भिन्न-भिन्न रूपों मेंप्रकट होता है।

वही विराट्-पुरुष के रूप मेंआता है, विष्णु, दुर्गा, गणेश और सूर्य के रूप मेंआता है

उमारुद्रात्मिका: सर्वा: प्रजा: स्थावरजङ्गमा:।
व्यक्त सर्वमुमारूपमव्यक्तं तु महेश्वरम्।। (रुप्रहृदयोपनिषद् 10)

जिसकी रुचि उमापति नीलकण्ठ महादेव पर हो जाती है, वह ब्रह्म को इसी रूप में पाना चाहता है-

तमादिमध्यान्तविहीननमेकं विभुं चिदानन्दमरूपमद्भुतम्।
उमासहायं परमेश्वर प्रभुं त्रिलोचनं नीलकण्ठ प्रशान्तम्।।(केवल्योपनिषद्7)

यदि ब्रह्म की अभिव्यक्ति इस रूप मेंन होती तो इस रुचिवाले व्यक्ति की आध्यात्मिक भूख कभी शान्त नहीं होती।

इसी तरह यदि किसी की रुचि जगदम्बा की ओर है, तो उसके लिये परमात्मा देवी रूप मेंआते हैं। वेद ऐसे उपासकों को बताता है कि सृष्टि के आदि मेंएकमात्र मेंदेवी ही थी। इन्हीं देवी ने ब्रह्माण्ड पैदा किया, इन्हीं से ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र उत्पन्न हुए-

देवी ह्येकाग्र आसीत् सैव जगदण्डमसृजत...। तसया एव ब्रह्मा अजीजनत्। विष्णुरजीजनत् रुद्रोऽजीजनतसर्वे मरुद्गणा अजीजनन्। गन्धर्वाप्सरस: किन्नरा वादित्रवादिन समन्तादजीजनन्।....सर्वमजीजनत्। (बह्म चोपनिषद्)

यदि पराम्बा स्वयं अपने श्रीमुख से कहे कि वत्स! में ही ब्रह्म हूँ, में है ही प्रकृति-पुरुषात्मक जगत् हूँ। शून्य और अशून्य में ही हूँ। मैं ही आनन्द हूँ और अनानन्द हूँ, मैं ही विज्ञान हूँ और अविज्ञान हूँ, तो इन उपासकों को कितना आश्वासन प्राप्त होता है-

'अहं ब्रह्मस्वरूपिणी। मत्त: प्रकृतिपुरुषात्मकं जगच्छून्यंचाशून्यं च। अहमानन्दानन्दौ। विज्ञानाविज्ञेने अहम्। (देव्युपनिषत्)

सूर्य के रूप में- इसी तरह किसी का रूझान प्रत्यक्ष देव सूर्य की ओर हो उसका हृदय इस ज्योतिर्मय देवता मेंरम गया। ऐसे उपासक के लिये यदि ब्रह्म आदित्य रूप मेंन आते तो इसकी आध्यात्मिक प्रवृत्ति कैसे होती ? और वह आदित्य पूर्ण ब्रह्म न हो, केवल देवता हो तो भी उपासक की रुचि को ठेस लग सकती है। अत: ब्रह्म आदित्य के रूप मेंआये।

आदित्याद्वायुर्जायते। आदित्याद्भूमिर्जायते। आदित्यदापो जायन्ते। आदित्याज्ज्योतिर्जायते। आदित्याद्व्येदिशो जायन्ते। आदित्याद्रदेवा जायन्ते। आदित्याद्धेष जायन्ते। आदित्योवा एष एतन्मण्डलं तपति असवादित्यो ब्रह्म। (सूर्योपनिषद्)

इन पंक्तियों से यह स्पष्ट हो जाता है कि शिव तत्त्व एक ही है, उसी के ब्रह्मा, विष्णु, गणपति, दुर्गा, सूर्या आदि भिन्न-भिन्न नाम और रूप है। यदि भक्त उपमन्यु का मन उस सत्तत्त्व के शिव रूप नाम और रूप मेंअनुरक्त था, तो शैव उपनिषदों, पुराणों एवं आगमों ने उन रुचि के अनुसार इस अद्वयतत्त्व सर्वविध निरूप किया। इसी तरह रुचि दुर्गा में है, उनके लिये शाक्त उपनिषदों, पुराणों, आगमों ने इस अद्वयतत्त्व की सर्वात्मकता का निरूपण किया यही गणपति आदि अन्य देवताओं के लिये भी है।

निष्कर्ष- इस तरह वेद ने मानव मात्र के लिये बहुत ही सुगम साधन प्रस्तुत कर दिया है। जब हम समस्त जड़ चेतना को भगवन्मय देखते है, तब सबका सम्मान करना हमारे लिये आवश्यक हो जाता है। अपमान करने वाले का भी हमको सम्मान ही करना होगा, क्योंकि वह भी शिव तत्त्व से भिन्न नहीं है। हमारे साथ उसका जो अभद्र व्यवहार हो रहा है, उसका मूल कारण तो वस्तुत: हम ही है। हमसे जो कभी बुरे कर्म हो गये होंगे उसी का परिणाम हम भुगत रहे है। निमित्त चाहे कोई भी बन जाय। हमतो निमित्त से भी प्यार ही करना है-

अथ मां सर्वभूतेषु भूतात्मानं कृतालयम्।
अर्हयेद्दानमानाभ्यो मैत्र्याभिन्नेन चक्षुषा।। (श्रीमद्भा. 3/29/27)

भगवान् आदेश देते है कि सब प्राणियों के भीतर में बसे हुए मुझ परमात्मा को उचित रूप से दान और सम्मान प्रदान करेंगे मुझमें मैत्री भाव रखो और सबको समान दृष्टि से देखो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कठोपनिषद्- चोखम्बा संस्कृत संस्थान, पुणे, व्याख्याकार- स्वामी प्रखर प्रतानन्द सरस्वती ।
2. कठोपनिषद्- चोखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, व्याख्याकर्त्री- डॉ. पुष्पा गुप्ता ।
3. कब्वल्योपनिषद्- चोखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी ।
4. छान्दोग्योपनिषद्- चोखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, व्याख्याकार रायबहादुर बाबूजालिमसिंह ।
5. ब्रह्मसूत्र- चोखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी ।
6. श्वेताश्वतरोपनिषद्- चोखम्बा संस्कृत संस्थान, पूणे, व्याख्याकार- स्वामी प्रखर प्रज्ञानन्द सरस्वती ।
7. श्रीमद्भागवत- शीलप्रेस, गोरखपुर ।
8. ऋग्वेद- गीताप्रेस गोरखपुर ।

मालती जोशी का कृतित्व

सुरेश प्रसाद चौधरी *

शोध सारांश – मालती जोशी के कृतित्व में मानवीय जीवन के लिए बरामदे में बैठे ईश्वर का नाम जप रही थी। अचानक उनकी नजर घड़ी में पड़ती है। वहाँ पर मानवीय जीवन की कला का साहित्य के क्षेत्र में अविस्मर्णीय योगदान रहा है। उसी समय उनकी निगाहे रोड़ की तरफ जाती हैं जहाँ से गुजरने वाली गाड़ियों की आवाज सुनाई देती है। मालती जोशी एक उपन्यास लेखिका हैं। जिन्होंने सामाजिक मूल्यों को बड़ी ही वैचारिक विंसगतियों से जूझते हुए लेखन कार्य करने का प्रयास किया है। मालती जोशी जी का जन्म एक मध्यमवर्गीय परिवार में हुआ था। जिनका जन्म 4 जून 1934 को औरंगाबार शहर में हुआ था। इनका जन्म और पालन-पोषण नाना जी के यहाँ हुआ था। विवाह के पहले इनका नाम कु. मालती था। विवाह के बाद इनका नाम कुल मालती कृष्ण राव दिघे था। राष्ट्रीयता के प्रखरता को प्रसारित करने में इनका अमूल्य योगदान रहा है। इन्होंने अपना उपनाम बदलकर मालती जोशी रखा। इनके पिता न्यायालय में जज के पद पर आसीन थे। इनके जीवन में गाँधी की परम्पराओं के साथ विनोबा भाबे की विचार धारा को स्वीकार करती थी। इनके साहित्य समन्वय में मानवीय जीवन के मूल्यों की ओर पग-पग पर कदम बढ़ाया है। जिसकी हम अलोचनात्मक पहलू के साथ सामाजिक जीवन की विचारधारा का मूल्य भी वैचारिक रूपों में दिखाई देता है। इस हेतु समाज में वैचारिक पूर्णता और गरीबी के मर्म का चित्रण उपन्यास के माध्यम से मालती जोशी ने किया है।

मालती जोशी ने मानवीय जीवन की धारा को सराहने के लिए यहाँ पर कबीर के दोहें से तुलना करती है –

माला तो कर में फिरे, जीभ फिरे मुख माँहि,
मनुआ तो दस दिसी फिरे, यह तो सुमिरन नाँहि।1

प्रस्तावना – कबीर की वाणी में मानवीयता को स्वर दिखाई देता है। जहाँ एक वैचारिक धरातल पर जाप करते हैं। कहते है कि मन में दुनिया सभी बाते आती-जाती रहती है। किन्तु कौन व्यक्ति कितना किया यह सबसे महत्वपूर्ण बात है। जिसके मन में स्थिरता के धरातल पर मानवीय जीवन की कसौटी का परिणाम ही दिखाई नहीं देता है। वहाँ विभिन्नता का स्वरूप भी इनके कथा साहित्य में दिखाई देता है। हृदय में बसने वाले भगवान को अलग से माला फेरने की क्या जरूरत है। इसके बाद कहते हैं कि तुम्हारे मन में मोह माया की अविरल विचारधारा उत्पन्न हो रही है। ठीक कहती है कि अम्मा जी कि इस जग में कौर सहार जिसके भरोसें पड़ी दुनिया का किनारा। ऐसी अनेक विसंगतियाँ से मानवीय जीवन की धारा का परिणाम ही दिखाई देता है। जहाँ मानवीय मूल्यों की बाते कहते हैं।

शोध प्रविधि – शोध प्रविधि के रूप में द्वितीयक सामाग्री संकलन के द्वारा इस शोध पत्र मालती जोशी का कृतित्व को अध्ययन कर आधार बनाया गया है। जिसकी विचारधारा का परिणाम इनकी पुस्तकों, कथा साहित्य, उपन्यास, के साथ-साथ साहित्यकार और विद्वानों के मार्गदर्शन का भी अनुसरण किया गया है। इस शोध पत्र में साहित्य जगत् में विखंण्डित होने वाले मूल्यों का भी प्रयास किया गया है। जहाँ मानवीय जीवन के औचित्य का परिणाम ही शोध पत्र के द्वारा समाज में प्रसारित होगा।

उद्देश्य –

- मालती जोशी के कथा साहित्य का अध्ययन करना।
- मालती जोशी के कथा साहित्य में मानवीय मूल्यों का अध्ययन करना।
- मालती जोशी के कृतित्व में सामाजिक मूल्यों का अध्ययन करन।
- मालती जोशी के साहित्य में आर्थिक विसमताओं का अध्ययन करना।
- साहित्य जगत् में उत्पन्न होने वाले वैचारिक मतभेद का अध्ययन करना।

समस्याऐं – सामाजिक स्तर पर स्त्रियों को अनेकों समस्याओं से समान करना पड़ता है। चाहे वह सामाजिक हो, आर्थिक हो, राजनीतिक हो, शैक्षणिक प्रत्येक क्षण में समस्याऐं उत्पन्न हो रही है। समाज में दहेज को लेकर एक लहर सी गूँज रही है। जिसका अध्ययन मालती जोशी के साहित्य में भी जिक्र मिलता है। उन्होंने स्त्री पुरूष सम्बन्धों में होने वाली विसमताओं को भी बताया है। इससे यह बात तो स्पष्ट हो जाती हैं कि सामाजिक स्तर पर चाहे पड़ा लिखा पुरूष हो या अनपढ़ सभी में विद्धेषु की भावना, स्त्रि के प्रति हीन सोच जन्म लिया है। इससे सामाजिक व्यवस्था का विखंडन होना भी स्वभाविक कहा जा सकता है। 'खुशबू का एक झोंका आया और रंजना सीढ़ियाँ फलाँगती हुई नीचे उतरी। उनके मन में हमेशा यह कसक बनी रही कि काश, एक बेटी होती। सुना था कि बेटियाँ माँ-बाप पर जान छिड़कती हैं। पर इस घर की तो माया ही निराली है। किसी को किसी की परवाह नहीं है। सबकी अपनी दुनिया है, अपने कार्यक्रम है।'[2] दादी से रंजना बहुत ही प्यार करती थी। जिसके प्यार की परिभाषा ही अलग हो जाती है। जहाँ मानवीय जीवन की अतंरंगता का प्रश्न ही नहीं उत्पन्न होता है। यही कहते हुऐ कि दादी की सेवा मैं कुछ दिनों तक यहाँ रह कर करूँगी। दादी के प्यार ने रंजना के सिर पर हाथ थपथपाने लगती है। जिनके मनोमय में एक प्रेम का संचार होता है।

हमारा देश धर्मपरायणता को स्वीकार करता है। उस प्रेम को मालती जोशी ने जीवन के प्रत्येक क्षण में अविस्मरणीय माना करती थी। जिसकी

* (हिन्दी) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

विचारधारा ने मानवीय जीवन के लिए एक राष्ट्र प्रेम की दिशा बना लेता है। मालती जोशी कहती है कि माँ बाप का एक सपना होता है कि हमारी संतान एक काबिल इन्सान बने। 'जिसे यह सब कहना चाहिए वही दिन–दिन भर गायब रहती हैं। वह बच्चों को क्या संस्कार देगी। बुढ़ापे में यह भार उन्हें ही ढोना है।'[3] इस सम्बन्ध में सुषमा को शुक्ला जी बताते है कि यह घर तुम्हारा है। जिसकी संरक्षण का उत्तारदायित्व भी तुम्हारा ही है। जीवन के प्रत्येक क्षण में मानवीय संवेदना का परिणाम ही समाज की व्यवस्था पर टिका है। उसके लिए सब काम नहीं देखती हूँ। वहाँ पर पुनः शुक्ला जी कहते है कि मैं आपको नीचा नहीं दिखाना चाहता हूँ सुषमा के चिन्तन की प्रणाली में विसंगतियों का मानवीय दृष्टिकोण ही अलग हो जाता है। मुझे मालूम है, मेरा बाहर जाना किसी भी दशा में औचित्यपूर्ण नहीं है। जिसके आधार पर वैचारिक मतभेदों का होना। तब उनके परिवार में कहते हैं कि तुम्हारे जीवन की दिशा क्या है। मानवीय जीवन को अच्छा नहीं लगता। बाहर इतनी पॉपुलर हूँ ये उनका अहंकार था। जिसके माध्यम से मेरी घर में मेरी बात नहीं मानता है। मुझे कोई सम्मान नहीं देता है। इससे मैं कितना भी अच्छा मन बताकर घर को लौटू किन्तु इसका मतलब ही क्या है। घर की दशा को देखकर सारी खुशी खत्म हो जाती है। मेरी इतनी–छोटी सी खुशी भी यहाँ इस घर में किसी को पसंद नहीं है।'[4] मालती जोशी की विचारधारा को देखकर मानवीय जीवन की अनेक घटनाओं का वर्णन भी इन्हीं तथ्यों से मिलता है।

'रूचि के वे राजा जान प्यारे हैं आनंदघन,
होत कहा हेरे, रंक! मानि लीनो मेल सो।'[5]

कवियों की इस आन्तरिक दृष्टियों के मन से होने वाले लक्ष्य साधन की परोपकारा वस्था से समाज की वैचारिक बुनियादी ढ़ाँचे से मानवीय मूल्यों को बढ़ाया जाता है। यहाँ तक की मानवीय जीवन की दिशा का परिणाम ही कवियों की वाणी में निहित होता है। उसी प्रकार मालती जोशी के साहित्य सृजन ने मानव के लिए एक मानवीय पहलू प्रदान करते हैं। जिसकी समस्याओं को प्रत्येक व्यक्ति जीवन की कठिनाईयों से लड़ने में सफल हो जाता है।

निष्कर्ष – मालती जोशी ने भारतीय समाज की परम्पराओं में पति भक्ति का वर्णन किया है। कहती है कि पति के प्रति एक स्त्री कहाँ तक सोचती है। किन्तु एक पुरूष क्या नजरिया रखता है। यह एक उनके मन में हमेशा प्रश्न बना रहा। पता नहीं ऐसा हीन बोध क्यों उत्पन्न होता है।? यह सब किसका प्रसार है। यहाँ तक व्याह की स्थिति और परिस्थितियों ने मुझसे एक लड़की को मजबूरन उसकी स्वतंत्रता में हाँ करवाया जाता है।'[6] क्योंकि वह खुले वातावरण का ऐहशास नहीं होता है। जहाँ नारी स्वतत्रंता का प्रश्न ही खत्म हो जाता है। जिकसी प्रत्येक व्यक्ति अलोचना करता है। इस कहानी संग्रह के माध्यम से मानवीय जीवन की अनेक कठिनाईयों से दूर हुआ जा सकता है। जब व्यक्ति नैतिक मूल्यों को आत्मसात करेगा। तभी उसके जीवन और इस जगत् में परिवर्तन होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मालती जोशी, पिया पीर न जानी, परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली, 2013, पृष्ठ 44
2. मालती जोशी, पिया पीर न जानी, परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली, 2013, पृष्ठ 44
3. मालती जोशी, पिया पीर न जानी, परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली, 2013, पृष्ठ 45
4. मालती जोशी, पिया पीर न जानी, परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली, 2013, पृष्ठ 47
5. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, कमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, नवीनतम संस्करण, 1997, पृष्ठ 234
6. मालती जोशी, वो तेरा घर ये मेरा घर, परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली, 2008, पृष्ठ 16

****

रामचरित मानस में सामाजिक समरसता

डॉ. मंजुला जोशी *

प्रस्तावना – समय काल परिस्थितियॉ और परिवेश किसी भी महाकाव्य की रचना के महत्वपूर्ण सोपान होते हैं; इसके बगैर किसी भी रचना की निर्मिति संभव नहीं। मानस भारतीय साहित्य और संस्कृति का मानक ग्रंथ है। भारतीय जनमानस हर आपद्-विपद् हंसी- खुशी शादी ब्याह मंगल-अमंगल मे रामचरित मानस से प्रेरणा लेकर जीवन जीता है। यह जाने बगैर कि वह युग कैसा था? किन विपरीत परिस्थितियों का सामना करते हुये तुलसीदास ने सामाजिक समरसता की वानस्पतिक गंध से सबको जोड़ लिया। यह प्रवाह के विपरीत बहते हुये समत्व स्थापित करने का दृढ़ संकल्प है। तुलसी जिस कलिकाल का वर्णन करते है, वह निश्चित ही सामयिक परिवेश की उपज है।

मध्यकाल की अराजक स्थिति से असन्तुष्ट, टूटती हुई वर्ण व्यवस्था चारो ओर फैले धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक कलह और उन्माद छोटी - छोटी बातो पर धर्म, जाति वर्ण और ईश्वर के अस्तित्व को लेकर होते विवाद, धर्म सम्प्रदाय की आपसी टकराहट लड़खड़ाते सामाजिक संबन्ध कुल मिलाकर तुलसी के सामने जो समाज है, वह काफी विकृत हैं। तुलसीदास समाज मे धर्म के नाम पर हो रहे इस बिखराव को देखकर दुखी होते है तथा समाज में सामाजिक, धार्मिक सदभाव बनाए रखने के लिये रामचरित मानस की रचना करते है।

'सामन्ती ढॉचेवाला शोषण पर आधारित उखड़ा- उखड़ा मध्यकालीन समाज उनकी संवेदना पर बार- बार चोट करता है। खुशहाली विशिष्ट वर्ग तक थी। सामान्य जन की हालत खस्ता थी'[1] ।

सारी प्रतिकूल परिस्थितियो के बावजूद रामचरित मानस की रचना का काव्य प्रयोजन स्पष्ट करते हैं।

'सुरसरि सम सब कह हित होई'

देवताओ की नदी गंगा जैसे सबका हित करती है वैसे ही रामचरित मानस की रचना सबके हित के लिये है। अमीर-गरीब, संत-असंत, शैव-वैष्णव, सगुण-निर्गुण, सज्जन -दुर्जन सबके साथ चल रही है। यह वही मानवीय दृष्टि है जो मध्यकाल में नए संस्कार प्राप्त कर रही थी। तुलसी अपने राम को मानवीय पृष्ठभूमि पर रखते हैं वाल्मिकी अथवा भवभूति की तरह राम का रामत्व तुलसी की एक आदर्श कल्पना है जो दीन दुखियो पर अपनी दया करुणा प्रेम की बारिश कर देते हैं। विनय पत्रिका राम के इस मानवीय पक्ष को उजागर करती है।

'बिनु सेवा जो द्रवे दीन पर राम सरिस कोउ नाही'

जो अकारण भी कृपा बरसा दे वही तो ईश्वर है वही तो राम है परमतत्व है 'पर हित सरिस धर्म नही भाई' का जयघोष ही सामाजिक समरसता का शंखनाद है। राम के वनगमन की बात सुनकर जहॉ सारा समाज कैकयी को कोसता है और सारे अयोध्यावासी राम के विरह मे कैसे जी पायेंगे जैसे विषय पर विचार विमर्श करते हैं।

'सबहि विचारु कीन्ह मन माहि। राम लखनु सिय बिनु सुख नाही
जहॉ रामु तह सबुई समाजु। बिनु रघुवीर अवध नही काजु'
अयोध्याकाण्ड पृ 401

राम के बगैर सारा समाज क्रियाहीन हो गया हतप्रभ होगया उनके पास कोई काम ही नही रह गया। पूरा अवध (पूरा समाज है राम केसाथ) पिकनिक मनाने नहीं पूरे चौदह वर्ष वनवास के लिये किन्तु राम व्याकुल है प्रजा केप्रेम से पीड़ा से।राम के समझाने उपदेश देने के बावजूद प्रजा घर लौटने को तैयार नही थक कर सब सो गये। रात्रि के दो पहर बीतने पर राम ने सुमंत से कहा-

खोज मारि रथ हांकहु ताता। आन उपाय बनहि न बाता।
अयोध्याकाण्ड दोहा 99 पेज 409

'खोज मारि रथ' जिससे पहियो के चिन्हों से दिशा का पता न चल सके। अन्यथ सारे अवधवासी मेरे साथ चल पड़ेंगे। यही है प्रेम की प्रगाढ़ता और यही है संबन्धो की सामाजिक समरसता जहॉ राजा का अनुगमन बिना विचारे प्रजा करती है और राजा प्रजा को कष्टो से बचाने के लिये चुपचाप वनगमन को प्रस्थान करते हैं।

युवावस्था व्यक्तित्व के विकास का ज्ञान, बुद्धि विवेक का, सृजन संवाद का पहला सोपान है।राम के व्यक्तित्व का पहला सोपान कैकयी के वनगमन के आदेश के साथ होता है। यहॉ राम का स्वभाव एवं संस्कार ज्ञात होते हैं। राम का व्यक्तित्व तब प्रकट होता है जब निर्वासित राजकुमार वन की बाधाओं से टकराता है और जातिगत संकीर्णताओ से दूर वर्गविहीन समाज की रचना के लिये सर्वथा अपरिचित जंगली जातियो के सम्पर्क में आते हैं। अयोध्या से प्रस्थान करने के पश्चात वे गंगा के किनारे निषादों की बस्ती श्रृंगबेरपुर पहुॅचे। राम के आगमन की सूचना निषादराजगुह को भावविव्हल कर देती है।

नाथ कुसल पद पंकज देखे। भयऊ भाग भाजन लेखे।
देव धरनि धनु धाम तुम्हारा। मैं जनु नीचु सहित परिवारा।[5]
अयोध्याकाण्ड पृष्ठ 400

निषादराज कहते है मै आपके दर्शन कर भाग्यवान पुरूषो की गिनती में आ गया। हे देव यह पृथ्वी धन और घर सब आपका है मै तो परिवार सहित आपका नीच सेवक हूॅ।

करि दण्डवत भेंट धरि आगे। प्रभु बिलोकत अति अनुरागे।
सहज सने विषम रघुराई। पुछी कुसल निकट बैठाई।
अयोध्याकाण्ड

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) श.भी.ना.शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

निकट बैठाई शब्द राम की निकटता को स्पष्ट करता है।

श्रृंगबेरपुर से गंगा किनारे पहुँचकर केवट से नाव मॉगी तब जाति वर्ण धन सम्पदा बुद्धि सब में छोटा सा केवट राम से कहता है।

'कहहि तुम्हार मरमु मैं जाना' मैने तुम्हारा भेद जान लिया है। 'पग धूरि को प्रभाव महा' आपके पैरो की चरण रज का बड़ा प्रभाव है और वह सप्रमाण अपनी बात रखता है।

छूअत सिला भई नारि सुहाई। पाहन ते न काठ कठिनाई।
तरनिउ मुनि धरिनी होई जाई। बाट परई मोरी नाव उड़ाई॥

अयोध्याकाण्ड

जिनके पैरो के स्पर्श से शिला स्त्री हो गई तो मेरी नाव तो काठ की है। यदि यह स्त्री हो गई तो मैं दोनो ओर से लूट जाऊंगा दोनो तरफ से हानि (1) पहला आप गंगा पार नही जा सकेंगे और (2) मेरी रोजीरोटी चली जायेगी।

सुनि केवट के बैन प्रेम लपेटे अटपटे
बिहसे करूणाऐन चितई जानकी लखन तन।

अयोध्याकाण्ड दोहा 100 पृ 427

राजा ऐसा जो प्रजा के मनोविनोद को समझ सके और प्रजा ऐसी जो अपने राजा को अपनी बात कह सके। सामाजिक समरसता तब आती है।

कृपासिन्धु बोले मुस्काई। सोई करू जेहि तव नाव न जाई।

अपनी नाव जिस विधि बचाना चाहो वैसा करो। (कर्मस्वातंत्र्य) आम आदमी को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता दे दी। तब तुलसीदास लिखते है।

जासु नाम सुमिरत एक बारा। उतरहि नर भवसिन्धु अपारा।
सोई कृपालु केवट हि निहोरा। जेहि जगु किय तिहु पगहु थोरा।

अयोध्याकाण्ड पृ 427

एक बार नाम स्मरण करने से जो भवसागर पार कर जाना जिन्होने वामन अवतार में जगत को तीन पग से भी छोटा कर दिया वही राम केवट से अनुनय कर रहे हैं। अपना प्राभुत्व बताये बगैर यही सामाजिक समानता है। यही बड़प्पन है। रामकथा में सामान्य व्यक्ति भक्ति के सहारे मोक्ष पा लेता है।

लोक वेद सब भांतिहु नीचा। जासु छॉहलेईअ सींचा।
तेहि भरि अंक राम लघु भ्राता। मिलत पुलिक परिपूरित गाता।

अयोध्याकाण्ड

निषाद जिसकी छॉह छूने से स्नान करना होता था वही निषाद राम सखा होते ही जातीय संकीर्णता से दूर हो जाते हैं। वशिष्ठ जैसे ऋषि उसे हृदय से लगा लेते हैं। भक्त भगवान /ऋषि मुनि/जनसामान्य और राम जंगली जीव पशु वानर गिद्ध जटायु मारीचि विभीषण कौल किरात भील केवट अहिल्या शबरी सभी पात्र संबंधो की पुण्य सलिला में स्नान करते हैं। तुलसीदासजी का प्रयोजन परम्परागत धर्म का बखान नहीं वरन मध्यकालीन सामाजिक धार्मिक परिवेश में वे पृथक आचार संहिता प्रस्तुत करते हैं। निषाद के बाद राम शबरी के आश्रम मे पहुॅचते हैं। राम के दर्शन से शबरी प्रसन्न होती है। और राम को स्वादिष्ट फल खिलाती है। यहॉ शबरी की जाति उसका स्त्री होना अर्थात राम भक्ति के आगे वर्गभेद लिंग भेद सब समाप्त हो जाते हैं। उपेक्षित वर्ग के प्रति सम्मान प्रकट कर वर्गविहीन समाज की स्थापना करना ही रामचरित मानस का महत्वपूर्ण गुण सूत्र था। शबरी जाति से भीलनी थी किन्तु तत्कालीन समाज की सामाजिक राजनैतिक गतिविधियों की विवेकसंगत जानकारी रखती थी। शबरी के परामर्श से ही राम पंपासर जाते है एवं सुग्रीव से मित्रता करते है।

पंपासरहि जाहु रघुराई। तहँ होई सुग्रीव मिताई।

किष्किंधकाण्ड

राम का उदार चरित्र अपने समय की सीमाओं का अतिक्रमण कर जाति, वर्ण, धर्म, रूढ़ियो को तोड़कर वानर समुदाय से संबंध स्थापित करता है।

बालिवध के साथ ही सुग्रीव से मित्रता जिससे दक्षिण भारत की अपूर्व शक्ति बानर और रीछों के रूप में उठ खड़ी हुई। यहीं से उत्तर व दक्षिण भारत के सामाजिक संबंधो का सूत्रपात राम और सुग्रीव की मित्रता से होता है। तुलसी यह मानते है कि भक्ति में जाति वर्ण सब टूट जाते है निषाद तथा आदिवासी (कोल किरात भील तथा वानर गिद्ध जटायु तक मुक्ति पा जाते है) उत्तरकाण्ड मे राम के मुख से कहलवाया है।

भगतिहीन विरंच कित होई। सब जीवहु सम प्रिय मोहि सोई।
भगतिवंत अति नीचउ प्राणि। मोहि प्राण प्रिय अति मम बानी।

अयोध्याकाण्ड

सारे भक्त राम को प्रिय है। राम सीता मे सारा जग समाहित है फिर भेद क्यो **सीय राममय सब जग जानी। करहु प्रणाम जोरि जुग पानी।** वर्ण भेद को तुलसी भक्ति के द्वारा तोड़ते है। अवर्ण यदि रामभक्त हो तो वह सवर्ण से छोटा नही वह अभक्त सवर्ण से बढ़कर है। रामचरित मानस मे ऐसे पात्रो की कमी नही है जो रामप्रिय है। केवट निषाद राम सखा है जटायु दशरथ के समान है। कोल किरात अवर्ण ही है।

रामचरित मानस रामराज्य की स्थापना का एक क्रान्तिकारी कदम है। जहॉ समाज के निचले वर्ग को लेकर मुनि मंत्री तक शामिल है तभी मध्यकाल की दुरावस्था के बाद रामराज्य की स्थापना होती है।

वही मूलमंत्र सबका साथ सबका विकास रामकथा वनगमन से प्रारम्भ होकर जीवन के विभिन्न सोपानो को स्पर्श करती है। प्रेम को, युध्द को, घृणा को, दुलार को, पशु-पक्षी, कोल-किरात, स्त्री-पुरूष, वानर रीछ भालू-गीध जटायु तक को मानवीय प्रेम से अभिभूत कर सामाजिक समरसता का साक्षत्कार कर सत्यम् शिवम् सुन्दर के शाश्वत स्वरूप का साक्षी बनाती है। इसलिये वंचितो के लिये संचित है राम, इसलिये सामाजिक समरसता मे अंकित है राम।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अयोध्याकाण्ड-तुलसीदास पृ.12
2. अयोध्याकाण्ड-तुलसीदास पृ.192
3. अयोध्याकाण्ड-तुलसीदास पृ.243
4. अयोध्याकाण्ड-तुलसीदास पृ.397 दोहा 84
5. अयोध्याकाण्ड-तुलसीदास पृ.400
6. अयोध्याकाण्ड-तुलसीदास पृ.400
7. अयोध्याकाण्ड-तुलसीदास पृ.401
8. अयोध्याकाण्ड-तुलसीदास पृ.410
9. अयोध्याकाण्ड-तुलसीदास पृ.411
10. अयोध्याकाण्ड-तुलसीदास पृ.650
11. अयोध्याकाण्ड-तुलसीदास पृ.833
12. अयोध्याकाण्ड-तुलसीदास पृ.879
13. अयोध्याकाण्ड-तुलसीदास पृ.911
14. अयोध्याकाण्ड-तुलसीदास पृ.400

****

इलेक्ट्रानिक मीडिया साहित्य के नये प्रयोग

डॉ. अमित शुक्ल *

शोध सारांश – वास्तव में इलेक्ट्रानिक मीडिया ने साहित्य को नया स्वरूप दिया है। मीडिया मे मोबाईल के क्षेत्र में संचार मीडिया तथा मनोरंजन व्यवसायों का मिलाप हो गया है। इसलिए अब संबधित सॉफटवेयर कंटेंट डेवलपर्स, उपकरण निर्माता, विपणन तथा विज्ञापन का क्षेत्र अत्यंत तीव्र गति से विकसित हो रहा है। इस प्रकार वर्तमान समय के संचार माध्यमों में हिन्दी और साहित्य का अधिकाधिक प्रयोग मोबाईल पर दिनोदिन लोकप्रियता की ओर अग्रसर हो रहा है।आज इलेक्ट्रानिक मीडिया ने हिंदी के नये स्वरूप की तस्वीर बदल दी। विश्व का सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य आज इंटरनेट पर देखकर अपनी प्रतिक्रिया को व्यक्त किया जा सकता है। यह कहा जा सकता है कि इलेक्ट्रानिक मीडिया के माध्यम से हिंदी व साहित्य का महत्व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बढ़ा है।

शब्द कुंजी – इलेक्ट्रानिक, हिंदी, साहित्य,मीडिया,परंपरागत,आधुनिक,प्रचार तंत्र,देवनागरी लिपि,अंतर्राष्ट्रीय इंटरनेटइंटरनेट अंतर्राष्ट्रीय,इंटरनेट।

प्रस्तावना – हिन्दी और साहित्य के प्रचार – प्रसार और उसे वैश्विक परिदृष्य में स्थापित करने में अगर किसी का महत्वपूर्ण योगदान है तो वह सबसे अधिक मीडिया अर्थात साहित्यिक पत्र- पत्रिकाओं, रेडियो व टेलीवीजन को। आज के समय में जहां साक्षरता का प्रतिशत बढ़ जाने से हिन्दी व साहित्यिक पत्र-पत्रिकाएं पढ़ने के इच्छुक लोंगों की संख्या में वृद्धि हुयी है, वहीं अखबारों की प्रसार संख्या बढ़ने से हिन्दी बोलने वालों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि देखी जा सकती है। परंपरागत और आधुनिक माध्यमों दोनों में से साहित्य का रिश्ता सबसे अधिक यदि किसी में दृष्टिगत होता है तो वह इलेक्ट्रानिक मीडिया है। मीडिया का संबंध समाचार पत्र, पत्रिकाओं, पुस्तकों जर्नलों, पंपलेटों और पोस्टरों में है पर सबसे अधिक साहित्य पुस्तकों के रूप में दिखाई देता है।[1] फिर पत्र पत्रिकाएँ और समाचार पत्र जिनके रविवारीय परिशिष्टों में साहित्यिक सामग्री दिखाई पड़ती है। पुस्तकों साहित्यिक पत्रिकाओं और समाचार पत्रों के साहित्यिक परिशिष्टों के अलावा साहित्य को जनता तक पहुँचाने का श्रेय श्रव्य संचार माध्यमों में रेडियों को सबसे अधिक यदि दो साहित्यकारों की बातचीत टेप की जाय तो उसका महत्व अधिक हो जाता है। हरिवंशराय बच्चन की 'मधुशाला' का कैसेट साहित्य की धरोहर है। महात्मा गॉधी और पंडित नेहरू जी के कैसेट बंद भाषण भी दुर्लभ होने के कारण अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मीडिया के क्षेत्र में रेडियों के साहित्यिक कार्यक्रम का सीधा और स्पष्ट प्रभाव श्रोताओं पर पड़ता है।[2] आज का समय, व्यावसायिक है फिर भी जो रेडियों पर साहित्यिक कार्यक्रम पेष होते हैं, उन्हें सुनने वाले पूरी दुनिया में है चोटी के अनेक साहित्यकारों का संबंध रेडियों से रहा है। और उनकी कई रचनाएँ आज भी रेडियों स्टेशन के संग्रहालयों में उपलब्ध है। मीडिया का सशक्त माध्यम इण्टरनेट में दुनिया भर की ढेर सारी सामग्री उपलब्ध है। लेकिन इन सारे अत्याधुनिक संचार माध्यमों में साहित्य का रिश्ता फिल्मों और टेलीवीजन से अधिक है। भीष्म साहनी का 'तमस' आर.के. नारायण का 'मालगुडी डेज', नेहरू जी का 'भारत एक खोज' और प्रेमचन्द, शरदचन्द्र चट्टोपाध्याय, बलाईचांद, मुखोपाध्याय उर्फ वनफूल, ताराशंकर बंधोपाध्याय जैसे मशहूर साहित्यिकों की कुछ कृतियों के नाम लिये जा सकते है जो दूरदर्शन के माध्यम से जनता तक पहुंचाया गया है।[3] देखा जाए तो किसी भाषा, विचार, भाव, सूचना अथवा जानकारी को विशाल जन समुदाय तक पहुँचाना ही मीडिया है। यह बड़ी तादाद में लोगों तक संदेशों को संप्रेषित करने की आधुनिक कला है। व्यापक जन-समुदाय तक यह संप्रेषण 'प्रसारित' रूप में अथवा प्रकाशित रूप में सीधे या फिर प्रकारांतर से ही संभव हो पाता है। इसमें गृहीता वर्ग का संप्रेषक से प्रत्यक्ष संपर्क नहीं होता, भौतिक रूप में उनमें पर्याप्त दूरी होती है। किंतु मीडिया माध्यमों से गृहीता वर्ग में विचारों का परस्पर आदान-प्रदान होता है। और वे भावनात्मक रूप से जुड़ जाते है। इस गृहीता वर्ग में दर्शक, श्रोता और पाठक शामिल है। जनसंचार को समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, पोस्टर, पैम्पलेट, होर्डिंग तथा वॉलराइटिंग आदि मुद्रित रूप में 'लिखित जनसंचार माध्यम', रेडियों और श्रव्य कैसेटों के रूप में 'श्रव्य जनसंचार माध्यम' टेलीविजन, सिनेमा, वीडियों, कैसेटों तथा कम्प्यूटर आदि के रूप में दृश्य-श्रव्य जनसंचार माध्यम के रूप में देखा जा सकता है।[4]

इलेक्ट्रानिक मीडिया मे हिन्दी साहित्य संसार – इंटरनेट एवं मोबाइल एसोसिएशन आफ इंडिया द्वारा जारी रिपोर्ट के मुताबिक जून 2015 में भारत में इंटरनेट उपभोक्ताओं की संख्या 21 3 करोड़ थी। यह संख्या भारत की कुल आबादी की करीब 15 प्रतिशत है। इस रिर्पोट के जरिए जो एक विशेष बात सामने आई वह यह कि अधिकतर इंटरनेट उपभोक्ता सोशल मीडिया के लिए इंटरनेट का उपयोग कर रहे हैं। वर्तमान समय में हिन्दी की बढ़ती लोकप्रियता के क्षेत्र में मोबाईल का योगदान भी सराहनीय है। आज मोबाईल हर व्यक्ति के हाथों में पहुंच चुका है। कम्प्यूटर की तरह लोकप्रियता पाने वाला मोबाईल बल्कि उससे भी अधिक सुविधाजनक व सारी दुनिया को मुट्ठी में कैद कर लेने वाला यह उपकरण अब हिन्दी में भी उपलब्ध है।इनमे साहित्य की संभावनाएं तीव्र गति से बढ़ी है। आज के दौर में मोबाइल का बाजार तीव्र गति से बढ़ रहा है।भारतीय ग्राहकों को आकर्षित करने के लिए अनेक कंपनियों के मोबाईल देवनागरी लिपि का प्रयोग एस एम एस के लिए उपलब्ध है। मोबाईल उपकरणों में हैड हेल्ड, वायरलेस, पाकेट पी सी , पामटॉप, पामसाईज, आई फोन उपकरणों की नयी श्रृंखला बाजार में उपलब्ध है। इनकी आपरेटिंग सिस्टम भी अलग-अलग है।[5] फोटो पाम, ओ एस पाकेट, पी सी विंडो, सी बी एन इसमें भारतीय भाषाओं का स्थानीयकरण करना एक जटिल प्रक्रिया है। सिबिएन नोकिया में एस डी के तीन विभिन्न सिरीज जैसे 60 सिरीज, 80 सिरीज, 90 सिरीज मोबाईल उपकरण के अनेक एप्लीकेशन का डिजाईन करने के लिए विजुअल स्टूडियो, विजुअल स्टूडियो

* एसोसिएट प्रोफेसर (हिन्दी) शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

नेट, नेट, जे–बिल्डर, डेल्फि, सी तथा कोडवारीअर के टूल्स का प्रयोग किया जाता है। मोबाईल एप्लीकेशन के विभिन्न प्लेटफार्म्स जैसे विंडो–विन–32 तथा डॉट नेट, जावा तथा नेट एम–ई, सिबिएन के लिए नोकिया ने अनेक थर्ड पार्टी टूल्स जैसे क्रास फायर का प्रयोग किया गया है। कनाडा की जी कापरेशन कंपनी ने भविष्य सूचक पाठ संक्षिप्त संदेश सेवा में हिन्दी को विकसित किया है। इस कंपनी ने हिन्दी तथा देवनागरी लिपि की व्यवस्था मोबाईल उपकरण में विकसित की है। हिन्दी के माध्यम से नूतन की बोर्ड ले आउट की सहायता से टंकण का काम आसान हो गया है। कृत्रिम बुद्धि तकनीक पर आधारित लीला साफटवेयर अब कम्टप्यूटर के साथ मोबाईल पर उपलब्ध हो गया है। ध्वनि और चित्र के साथ हिन्दी सीखना आसान हो गया है। यह सुविधा मल्टी मीडिया कार्ड एम.एम.सी द्वारा उपलब्ध हो गई है। इस मोबाईल पैकेज की सहायता से देवनगरी अक्षरों की पहचान, पढ़ना, सुनना, हिन्दी शब्दों का उच्चारण, व्याकरण, वीडियो क्लिप, हिन्दी अनुवाद, हिन्दी–अंग्रेजी शब्दकोश आदि सुविधाएं मोबाईल धारक को मैत्रीपूर्ण शैली में प्राप्त हो गई हैं। यह मोबाईल प्रबोध मल्टिमीडिया कार्ड–सी–डैक से प्राप्त किया जा सकता है। मोबाईल पर विदेशी पर्यटकों के लिए अंग्रेजी हिन्दी शब्दकोश, अनुवाद, वीडियो आदि सुविधा उपलब्ध है। इसमें पर्यटन,सामाजिक प्रसंग पर अनेक हिन्दी के विकल्प उपलब्ध किए गए हैं। मोबाईल सेवा के अंतर्गत wap 07, 08– जी तकनीक पर आधरित मल्टिमीडिया सेवाएं जैसे मल्टिमीडिया मैसेजिंग सर्विस एम.एम. वीडियो मैसजिंग, संगीत, गेम, समाचार,चित्रपट, मनोरंजन आदि सेवाओं का उपयोग मोबाईल इन्टरनेट पर किया जा सकता है। मोबाईल के क्षेत्र में संचार मीडिया तथा मनोरंजन व्यवसायों का मिलाप हो गया है। इसलिए अब संबधित सॉफटवेयर कंटेंट डेवलपर्स, उपकरण निर्माता, विपणन तथा विज्ञापन का क्षेत्र अत्यंत तीव्र गति से विकसित हो रहा है। इस प्रकार वर्तमान समय के संचार माध्यमों में हिन्दी और साहित्य का अधिकाधिक प्रयोग मोबाईल पर दिनोदिन लोकप्रियता की ओर अग्रसर हो रहा है। भारतीय संगीत, हिन्दी फिल्मी गीत, चित्रपट व्यवसाय के लिए मोबाईल फोन धारक महत्वपूर्ण घटक बन गया है। ध्वनि चित्र के साथ–साथ भारतीय भाषाओं की लिपि का भी विकास बाजार की मांग के अनुरूप मोबाईल सेवा में धीरे –धीरे बढ़ जाएगा। मोबाईल हैंडसेट के लिए अब भारतीय भाषाओं में ई–बुक, ई–कामर्स आदि सेवाएं उपलब्ध होने के आसार अब दिखाई दे रहे है। आज कई देशी–विदेशी कंपनियों मोबाईल, कम्प्यूटर आदि के माध्यम से हर नयी सूचना को हिन्दी मे उपलब्ध करवा रही है, साथ ही जो सूचना पुरानी हो गयी है पर महत्वपूर्ण है, उसे हिन्दी मे अनुवाद कर प्रस्तुत करने मे जुटी हुयी है।इससे कम्प्यूटर मे माइक्रोसॉफट के कई डेक्सटाप उत्पाद हिन्दी मे उपलब्ध हो रहे हैं। इंटरनेट एक्स्प्लोलर, नेट स्केप, मंजिला, ओपेरा आदि के माध्यम से लेनिक्स आदि पर हिंदी आ गयी है। आई बी एम सन साइक्रोसिस्टम, आरेकल, आदि ने भी हिंदी को अपनाया। आफिस के मंगलम, कृतिदेव आकि कॉन्ड से प्रारंभ होकर आज अमृत, अभिलाषा, बसंत, आकृति,–65 आदि हिंदी फांट के नये प्रयोग ने हिंदी के महत्व को बढ़ाया। आज इलेक्ट्रानिकमीडिया मे हिन्दी के नये प्रयोग से मीडिया की अलग पहचान बनी है। याहू, गूगल, वे टू एस एम एस वेब दुनिया, एम एस एन सब हिंन्दी के विषाल बाजार की ताक मे हैं।[6] आज की मोबाईल की दुनिया मे उससे जुड़े न जाने कितने एप्प हिंदी मे उपलब्ध हैं और यूनीकोड जैसी ग्लोबल हिन्दी सुविधा ने हिंदी साहित्य को वैश्विक रूप प्रदान करने की दिशा मे अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। आज इनफार्मेशन टेकनालॉजी कम्प्यूटर विज्ञान के साथ हिन्दी साहित्य को भी जुड़कर कार्य करने की आवश्यकता है। कम्प्यूटेशनल हिंदी जैसी प्रणाली विकसित होने पर पूरा विश्व भारतीय साहित्य और संस्कृति की शाश्वत सुधा से रोमांचित हो सकेगा। यूनान, फ्रांस, इटली, आदि का साहित्य जहां नयी बाते बतायेगा वहीं रघुवंशम, पदमावत, कामायनी, के साथ–साथ अन्य भारतीय भाषाओं के बेजोड़ साहित्य को भी समझा जा सकेगा। पर हिंदी से अलग तकनीक विकसित करने की आवश्यकता है और अंग्रेजी के साथ अनुवाद की प्रणाली को भी विकसित करना होगा।हिन्दी मे राजभाषा के स्तर पर कार्य के लिए सुपरटेक साफटवेयर एण्ड हार्डवेयर अंग्रेजी दस्तावेजों के हिन्दी रूपांतर के लिए बनाया गया है। कार्यालयीन हिन्दी के स्तर पर कार्य करने के लिए डी–बेस, लोटस, कोबोल को सुलिपि के द्वारा द्विभाषिक रूप मे चलाया जा सकता है। बेसकि डी बेस,वर्ड स्टार के द्वारा हिन्दी लेखन मे जो त्राुटियां होती हैं उनकी व्याख्या के लिए मित्रा नामक साफटवेयर विकसित किया गया है। किंतु यह सुधार केवल वाक्य रचना से संबंधित सुधार है भाव रचना से संबधित नही। देखा जाए तो मीडिया के चलते आज भारत मे ई –पुस्तक का बड़ा बाजार है। जिसमे हिन्दी प्रकाशक हिन्दी में ई – पुस्तकें प्रकाशित कर रहे हैं। इंटरनेट के विस्तार के साथ ई–पुस्तकों का बाजार बढ़ा है। हालांकि अभी इसे बहुत बड़ी लोकप्रियता प्राप्त नही हुयी है। आर्काइव डॉट ओ आर जी, वाइइडीयू , आदि चंद बेबसाइटस पर कुछ सीमित विषयों पर किताबें तो बहुत उपलब्ध है पर इसमे अभी अनेक संभावनाएं नजर आती हैं। प्रकाशक ई– पुस्तकों के जरिये एक नया बाजार स्थापित कर रहे हैं।

निष्कर्ष यह है कि इलेक्ट्रानिक मीडिया मे साहित्य के नये प्रयोग से आज हिंदी का महत्व बढ़ गया है। हमारे देश के साहित्य से विदेशी लोग व उनके साहित्य से हम हम भारतीय लोग परिचित हो रहे हैं। मीडिया के कारण आज हिंदी ने राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बनाते हुए हिन्दी अनेक शब्दों को समाहित कर हिन्दी भाषा की समृद्धि की है। मीडिया समाज और भाषा का जुड़ाव विशेष महत्व रखता है। आज हिंदी केवल कबीर के दाहों व प्रेमचंद की कहानियों की भाषा नही है। वही मीडिया की भाषा बनकर रोजगार के अवसर भी दे रही। मीडिया की वजह से हिन्दी भाषा व साहित्य फलफूल रहा है। आज **इलेक्ट्रानिक** मीडिया ने हिंदी के नये स्वरूप की तस्वीर बदल दी। विश्व का सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य आज इंटरनेट पर देखकर अपनी प्रतिक्रिया को व्यक्त किया जा सकता है। यह कहा जा सकता है कि **इलेक्ट्रानिक** मीडिया के माध्यम से हिंदी व साहित्य का महत्व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बढ़ा है।[7]

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जगदीश्वर चतुर्वेदी–भूमंडलीकरण और ग्लोबल मीडिया, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्टीव्युटर्स, नई दिल्ली, 2008, पृष्ठ 26
2 सुधीश पचौरी– उत्तर आधुनिकता मीडिया विमर्श, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 2006 पृष्ठ, 71
3 नया ज्ञानोदय प्रबंध संपादक अखिलेश जैन भारतीय ज्ञानपीठ की मासिक साहित्यक पत्रिका अंक 36 फरवरी 2006 लोंदी रोड नई दिल्ली। पृष्ठ 25
4 . रचना द्विमासिक पत्रिका अंक 80 सितंबर 2009 हिंदी ग्रंथ अकादमी भोपाल पृष्ठ 36
5 कथादेश मासिक पत्रिका अक्टूबर 2008 सम्पादक हरिनारायण सहायात्रा प्रकाशन नवीन शाहदरा नई दिल्ली। पृष्ठ 25
6 . वाग्अर्थ अंक 175 फरवरी 10 संपादक विजय बहादुर सिंह 13 प्रफुल्ल सरकार स्ट्रीट, कोलकाता पृष्ठ , 113
7. स्वयं का सर्वेक्षण एवं निष्कर्ष।

बाणभट्ट का वैशिष्ट्य एवं अवदान

डॉ. कल्पना मकवाने *

प्रस्तावना - बाणभट्ट का वैशिष्ट्य एवं अवदान - बाण की प्रशंसा में यह उक्ति प्रसिद्ध है-बाणोच्छिष्टं जगत् सर्वम् अर्थात् सभी जगत् बाण का उच्छिष्ट है। इस उक्ति की सार्थकता कादम्बरी से स्पष्ट होती है। इनका गद्यकाव्य असाधारण है। भावपक्षःऔर कलापक्ष दोनों दृष्टि से बाण ने अपने गद्य लेखन में सफलता प्राप्त की है। बाण ने किसी भी वर्णनीय विषय को नहीं छोड़ा है। उपमा, श्लेष, परिसंख्या, उत्प्रेक्षा, रूपक, विरोधाभास और समासोक्ति अलंकारों के यथोचित प्रयोग ने उनकी काव्य शैली मेंएक अभूतपूर्व सौन्दर्य की अभिवृद्धि की है।

डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल, 'कादम्बरी : एक सांस्कृतिक अध्ययन' में बाण की गद्यशैली के वैशिष्ट्य के सम्बन्ध मेंलिखते हैं-'कादम्बरी बाण के परिपक्व मानस की देन है। बाण अपने सरस जीवनानुभव एवं तत्वालोकन से उस आदर्श भारतीय मानव के स्वरूप थे जो जीवनरस का पान करके पूर्ण विदग्ध बने थे। उन्होंने लोक व्यवहार की सामग्री से कथा का ठाट निर्मित करने मेंसाहित्यकार की रसानुभूति एवं कलाकार के रचना कौशल का परिचय दिया है।'

बाण की गद्य शैली तीन प्रकार की मिलती है-

1. आडम्बरपूर्ण लम्बे-लम्बे समास, (उत्कलिका या ताण्डक)
2. छोटे- छोटे समास (चूर्णक)
3. समास रहित

समास के भारी-भरकम ठाट से बनी गद्य शैली उत्कलिका या ताण्डक कहलाती है। अल्प समास युक्त शैली चूर्णक कहलाती है। तीसरे प्रकार की समास रहित शैली सहज, सरल और आकर्षक है।

विन्ध्याटवी के वर्णन में बाणभट्ट लिखते है:- जिसमें समसबहुलता के साथ सहज उपमा अलंकार का सौंदर्य भी अनुस्यूत है :-

'करिकुलमदजलसेकसंवर्धितैरतिविकचधवलकुसुमनिकरमत्युच्चतया तारागणमिव-
शिखदेशलग्नमुद्वहद्भिःपादपैरूपशोभिता,'

जो जंगली हाथियों के मदजल के सेचन से बढ़ाये गये अत्यंत ऊँचे होने से अतिशय खिले हुए पुष्प समूह की मानो शिखरप्रदेश में लगे हुए तारा समूह को धारण करते हुए पेड़ों से शोभित है।

बाण की धारा प्रवाह लेखनी से किसी वर्ण्य विषय के वर्णन के प्रवाह में अलंकारों का सहज प्रयोग भी पाठक को आनंदित कर देता है। निम्नांकित परिच्छेद जाबाल्याश्रमवर्णनम् में परिसंख्या अलंकार दृष्टव्य है-यथा

'यत्र च महाभारते शकुनिवधः, पुराणे वायुप्रलपितम्, वयः परिणामेन द्विजपतनम्, वनवन्दनेषु, अग्नीनां भूतिमत्वम्, एणकानां गीतश्रवणव्यसनम्, शिखडिनां नृत्यपथपातः, भुजङ्गानां भोगः कपीनां श्रीफलाभिलाषः, मूलानामधोगतिः।'

उक्त परिच्छेद में श्लेष और परिसंख्या दोनों अलंकार आये है। शकुनि- दुर्योधन के मामा, पक्षी, वायु प्रलपित पुराण में वायु का प्रवचन, आश्रम में वायु रोग, द्विज-दाँत, ब्राह्मण, जाय-चन्दन के पक्षः में शीतलता, आश्रम के पक्षः में मूर्खता, भूति-अग्नि के पक्षी में राख, आश्रम के पक्ष में वैभव। इस प्रकार शकुनि, वायु प्रलपित, द्विज, जाय में श्लेष है। संपूर्ण परिच्छेद में परिसंख्या अलंकार है। इस प्रकार 'जाबालिवर्णनम्' में जाबालिषि का वर्णन करते हुए बाण ने मालोपमालमार की झड़ी लगा दी है:- जैसे

'उग्रतपोभिर्भुवनमिव सागरै, कनकगिरिमिव कुलपर्वतैः, क्रतुमिव वैतानिकद्विभिः, कल्पान्तदिववसमिव रविभिः। कालमिव कल्पैः, समन्तान्ममहर्षिभिः परिवृत्तम्।'

'जो समुद्रों से घिरे हुए भुवन के समान, महेन्द्र आदि कुल पर्वतों से घिर हुए सुमेरु पर्वत के समान, अग्निहोत्र के दक्षिणाग्नि आदि अग्नियों से यज्ञ के समान, सूर्य से घिरे हुए प्रलयकाल के दिन के समान, कल्पों से घिरे हुए समय के समान, उग्र तपस्या करने वाले मुनियों से घिरे हुए थे।'

जाबालि ऋषि उपमेय है और करूणा रस के प्रवाह समुद्र सेतु, क्षमा जल के आधार, कृष्णा रूपी जड़ के लिए कुल्हाड़ी, संतोषरूप अमृत आदि उपमान है।

आगे भी इनकी विशेषताओं के रूपकों का प्रयोग किया है यथा- **'अस्तगिरिरसद्ग्रहकस्य, मूलमुपशमतरोः, नाभिः प्रज्ञाचक्रस्य स्थितिवंशो धर्मध्वजस्य, तीर्थ सर्वविद्यावताराणाम्, वड़वानलो लोभार्णवस्य, निकषोपलः शास्त्ररत्नानान् दावानलो रागपल्लवस्य, मन्त्रः कोपभुजङ्गस्य दिवसकरो मोहान्धकारस्य,अर्गलाबन्धो नरकद्धाराणाम्, कुलभवनाचाराणाम्, आयतनं मङ्गलानाम्, अभूमिर्मदविकाराणाम्, दर्शकः सत्यपथानाम् उत्पतिः साधुतायाः नेमिरुत्साह चक्रस्य, आश्रय सत्वस्य, प्रतिपक्षः कलिकालस्य, कोशस्तपसः, सखा सत्यरूय, क्षेत्रमार्जवस्य, प्रभवः पुण्यसञ्चयस्य, अदतावकाशो मत्सरस्य, अरातिर्विपत्तेः अस्थानं परिभूतेः, अननुकूलोऽभिमानस्य, असम्मतो दैनस्य, अनायत्ता रोषस्य अनभिमुस्वः सुखानाम्।'**

'अशुभग्रह के अस्तपर्वत, शांतिरूपी वृक्ष की जड़, बुद्धिरूपी चक्र की नाभि, धर्मरूपी पताका के आधारवंश, सर्व विद्याओं के तीर्थ, लोभरूप समुद्र के वड़वाग्नि, शास्त्ररूप रत्नों की कसौटी, विषयों के अभिलाष रूप पल्लव के दावाग्नि, क्रोधरूप सर्प के मंत्र, मोहरूप अंधकार को मिटाने वाले सूर्य,

* भाषा अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

नरकद्धार बंद करने के लिए अर्गलाबन्ध स्वरूप, आचारों के मूल गृह, मङ्गलों के आधार, मद विकारों के लिए अभूमि, सन्मार्गों के दर्शक, सज्जनता के उत्पत्ति स्थान, उत्साहरूप चक्र के आरा (नेमि), सत्वगुण के आश्रम, कलियुग के शत्रु, तपस्या के कोश, सत्य के मित्र सरलता के क्षेत्र, पुण्यसंचय के उत्पत्ति स्थान मत्सर को स्थान न देने वाले, विपत्ति के शत्रु, तिरस्कार के अस्थान (जहाँ तिरस्कार के लिए कोई जगह नहीं है।) अहंकार के प्रतिकूल, दैन्य से असहमत, क्रोध के वशीभूत नहीं सुख से परावृत्ता'

'शुकनासोपदेशवर्णन्' में लक्ष्मी वर्णन के प्रसंग मेंविरोधाभास के अनेक उदाहरण दिये गये हैं। यथा-

(1)'ईश्वरतां दधानास्य शिवप्रकृतित्वमातनोति।'

ईश्वर (शिव) भाव को धारण करती हुई भी अशिव प्रकृति का विस्तार करती है।

(2) 'बलोपचयमाहरन्त्यपि लधिमानमापदयति।'

बल की वृद्धि लाती हुई भी लघुता पैदा करती है।

(3) 'अमृत सहोदरापि कटु विपाका।'

अमृत की सहोदरा होकर भी परिणाम मेंकटुतावादी है।

(4) 'विग्रहवत्यव्य प्रत्यक्ष दर्शना।'

उत्तम पुरूषों पर आसक्त होते हुए भी दुष्ट लोगों की प्रिया है। यहाँ पर उत्तम पुरूष के रूप मेंभगवान् विष्णु का संकेत है।

(5) 'पुरुषोत्तमरतापि खत्मजनप्रिया'

'उत्तम पुरुषों पर आसक्त होते हुए भी (श्लेष अर्थ में- विष्णु भगवान् में रहत रहते हुए भी) दुष्ट लोगों की प्रिया है।'

एक ही लक्ष्मी में परस्पर विरोधी भाव प्रदर्शित कर विरोधाभास के उपयुक्त उदाहरण बाण ने व्यक्त किये है।

'महाश्वेता वर्णनम्' मेंभी महाश्वेता को वर्णन मेंअनेक मनोरम उत्प्रेक्षाओं का प्रयोग किया है:-

(1) अतिधवलप्रभापरिगतदेहतया स्फटिकगृहगतामिव

अतिशय श्वेतकांति से व्याप्त शरीर होने से स्फटिक गृह मेंविद्यमान के समान दिखाई देती है।

(2) दुग्धसलिलमग्नामिव

मानव शील समुद्र मेंडूबी हुई के समान प्रतीत होती है।

(3) विमलचीनांशुकान्तरितामिव

निर्मल रेशमी वस्त्र से आच्छादित के समान लगती है।

(4) आदर्शतलसक्रान्तामिव

दर्पण में मानो प्रतिबिम्बित हुई हो।

(5) शरदभ्रपटलतिरस्कृतामिव

शरद ऋतु के मेघ समूह से मानो वह आच्छादित है।

आगे भी उत्प्रेक्षाओं से महाश्वेता का वर्णन भरा पूरा है। महाश्वेतावर्णनम् मेंमहाश्वेता का लंबा वर्णन है।

पुण्डरीक और महाश्वेता का प्रथम दर्शन मेंपरस्पर प्रेम और दोनों का एक दूसरे के प्रति काम मोहित हो जाने का प्रसंग भी बाण ने अत्यंत भावपूर्ण रीति से चित्रित किया है।

काम मोहित पुण्डरीक की मृत्यु से महाश्वेता अत्यंत दु:खी हो जाती है। महाश्वेता का इस अवसर पर किये गये विलाप में लंबे-लंबे समास और संधियुक्त वाक्यों का प्रयोग न करते हुए छोटे छोटे भावपूर्ण वाक्य लिखे हैं जो प्रसंगानुकूल है। बाण की प्रतिभा को स्पष्ट करते हैं। महाश्वेता विलाप का कुछ अंश, जो बहुत भावपूर्ण है, द्दष्टव्य हैं :-

'हा नाथ! जीवित निबन्धन! आचक्ष्व! क्वमामेका किनीमशरणामकरुणं! विमुच्य यासि ?।'

'प्रसीद। सकृदप्यालप। दर्शय भक्तवत्सलताम्। ईषदपि विलोकय। पूरय मे मनोरथं। आर्तास्मि। भक्तास्मि। अनुरक्तास्मि। अनाथास्मि। बालास्मि। अगतिकास्मि। दु:खितास्मि अनन्य शरणास्मि। मदनपरिभूतास्मि। किमिति न करोति दयाम् ? कथय, किमपराद्धम्? किंवा नानुष्ठितं मया? कस्यां वा ना ज्ञायामादतम्? कस्मिन् वा त्वदनुकूले नाभिरतम्? येन कुपितोऽसि। दासीजनम् अकारणात् परित्यज्य व्रतन् न विभेषि कौलीनात्? अलीकानुरागविप्रतारण कुशलया किं वा मया वामया पापया। आ: अहमद्यापि प्राणिमि। हा हतास्मि मन्दभागिनी। कथं मे न त्वं जात:, न विनय:, न बन्धुवर्ग:, न परलोक:। धिङ्मां युष्कृतकारिणीम् कृते तवेयमीदृशी दशा वर्त्तते।'

'प्रसन्न हो। एक बार भी बोलो। भक्तवत्सलता बताओ। थोड़ा सा ही देख लो। मेरी इच्छा पूरी करो। मैं पीड़ित हूँ। भक्त हूँ। अनुरक्त हूँ। अनाथ हूँ। बाला हूँ। मेरी कोई गति नहीं है। दु:खी हूँ। केवल तुम्हारी शरण हूँ। कामदेव से तिरस्कृत हूँ। तुम क्यों मुझ पर दया नहीं करते हो। कहो, मैंने क्या अपराध किया है? मैंने तुम्हारा क्या नहीं किया ? मैंने तुम्हारी किस आज्ञा का आदर नहीं किया? तुम्हारे अनुकूल किस विषय में मैंने अनुराग नहीं किया? जिससे क्रुद्ध हो ? मुझ दासीजन को अकारण छोड़कर जाते हुए तुम लोकापवाद से क्यों नहीं डर रहे हो ? मिथ्या अनुराग से प्रतारणा करने मे कुशल, प्रतिकूल मुझ पापिनी से क्या ? ओह ! में अभी भी जी रही हूँ। मैं अभागी नष्ट हो गई। तुम मेरे कब से नहीं हुए ? न विनय हुआ, न बन्धु, न वर्ग, न परलोक मेरा हुआ। दुष्कर्मकारिणी ही मेरा धिक्कार हो जिसके कारण तुम्हारी यह दशा हुई।'

'कादम्बरीवर्णनम् मेंकादम्बरी के अलौकिक सौंदर्य चित्रण मेंउत्प्रेक्षाओं की भरमार है। 'तत्र च मध्य भागेय'.. से कादम्बरी के सौंदर्य का चित्रण शुरू होता हैं जो करीबन 68 से 70 पंक्तियों में... पृच्छन्तीं कादम्बरी ददर्श' पर पूर्ण होता है। अर्थात् 68-70 पंक्तियों का एक वाक्य है जो बाण की अद्भुत शैली का उदाहरण है। अनेक सुन्दर उत्प्रेक्षाओं के द्वारा कादम्बरी के सौंदर्य का चित्रण अत्यंत हृदयंगम बना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. वासुदेवशरण ,अग्रवाल-कादम्बरी : एक सांस्कृतिक अध्ययन पृ. 6.7. भूमिका से. विन्ध्याटवी वर्णनम् पृ. 55.
2. जाबाल्याश्रम वर्णनम्- कथामुखे- पृ. 128-129.
3. कादम्बरी- जालालि वर्णनम्, पृ. 130.
4. जाबालिवर्णनम् पृ. 140-141.
5. कादम्बरी, शुकनासोपदेशवर्णनम्, पृ. 331.
6. कादम्बरी, महाश्वेतावर्णनम्, पृ. 399.
7. महाश्वेता महाश्वेता विलाप, कादम्बरी, पृ. 506.
8. कादम्बरी- महाश्वेता विलाप:- पृ. 507, 508.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

हिन्दी की संतकाव्य परंपरा में मुनि क्षमासागर का योगदान

नीलम जैन *

शोध सारांश – संतों का निर्गुण, इस्लाम के खुदा की निराकारता, सूफी संतों की प्रेमपूरित रहस्यमय भावना, हठयोगियों की साधनात्मक रहस्यवाद, वैष्णवों के अहिंसावाद का मेल करता संत साहित्य बहुत विख्यात हुआ। सन्तमत के अनुसार भक्ति आडम्बर विहीन होती है। अत: उन्होंने कर्मकाण्ड का विरोध कर मानसिक भक्ति, नामस्मरण, गुरु–उपदेश का महत्व, जीवन व जगत की क्षणभंगुरता के ज्ञान से वैराग्य भावना जागृत करने, चरित्र की शुद्धता व आत्मानुभूति के बल पर सहज साधना का मार्ग प्रशस्त किया। भारतीय हिन्दी काव्य में जहां लोकमंगल की कामना समाहित है, वहीं हमारे भारतीय दर्शन का अंतिम लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति है, तो कविता भी इस लक्ष्य की प्राप्ति का हेतु बनी है। संत कवियों ने चारों पुरूषार्थों पर चिंतन करते हुए अंतिम पुरूषार्थ प्राप्ति में बाधक विचारों को त्यागा है और जहाँ जन्म–मृत्यु, शोक–रोग, सुख–दुख न हो ऐसी शुद्ध अवस्था को भक्ति व साधना से प्राप्त करने का प्रयास किया है।
शब्द कुंजी –हिन्दी की संतकाव्य परंपरा मे मुनि क्षमासागर का योगदान।

प्रस्तावना – भारतीय संस्कृति में सभी धर्म व सम्प्रदायों के प्रति सहिष्णुता व सम्मान का भावरहा। जो भी कोई अच्छा विचार कहीं से भी प्राप्त हुआ उसे आत्मसात कर लिया और यही इसकी अमरता का कारण बना। डॉ. इकबाल के शब्दों में–

यूनान मिस्र, रोमा सब मिट गये जहाँ से।
बाकी मगर अभी है नामों निशां हमारा।।

इस प्रकार भारतीय संस्कृति मानव समाज की अमूल्य निधि है व संत भारतीय संस्कृति व मानव समाज के प्रहरी।

संत शब्द की व्युत्पत्ति – व्याकरण की दृष्टि से संत शब्द संस्कृत के 'सत्' शब्द का बहुवचन रूप है जो अस् धातु से बना है। 'सत्' से तात्पर्य है, शुद्ध रूप में होने या रहने वाला अर्थात् ब्रह्मा। इसीलिए ब्रह्मा को सत् कहा गया है।[1]

आचार्य पं. परशुराम चतुर्वेदी का मानना है जिसने सत्रूपी परमत्व का अनुभव कर लिया हो और अपने साधारण व्यक्तित्व से ऊपर उठ उसके साथ तद्‌रूप हो गया हो, वही संत है।[2]

आचार्य विनयमोहन शर्मा के अनुसार– जो आत्मोन्नति, सृष्टि परमात्मा के मिलन भाव को साध्य मानकर लोकमंगल की कामना करता है, संत कहलाता है।[3]

संतकाव्य परंपरा के प्रर्वतक कबीरदास जी के अनुसार– निष्काम, निर्बेरी और प्रभु प्रेमी, विषयों से रहित व्यक्ति संत माना गया है।

निरबैरी निह–कांमता, सांई सेती नेह।
विषया सूं न्यारा रहै, संतनि का अंग एह।।[4]

कवि मुनि क्षमासागर भी ऐसे ही संत है जो स्वयं तो अपने कर्मो को काट रहे है तथा डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल की संत संबंधी मान्यता को चरितार्थ कर रहे है कि 'जो पृथ्वी पर रहते हुए दिव्यलोक का संदेश भूतल पर लाते हैं, संत कहलाते है।' हिन्दी की संतकाव्य धारा के कवियों में मुनि योगेन्दु, नामदेव, कबीर, दादू, रैदास,गुरूनानक आदि की गणना की जाती है।

डॉ. पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल का कहना है कि 'भारतीय जीवन में संचार करने वाली आध्यात्मिक प्रवृत्ति की यह धारा युग युगान्तर को पार करती हुई अनवरत रूप से प्रवहमान है। प्रवाहभूमि के अनुरूप यह कभी सिमटती, कभी फैलती, कभी बालुका में विलीन होती और फिर प्रकट होती हुई अनेक रूप धारण करती है। इसका प्रवाह कभी बंद नहीं हुआ है।[5] इस धारा को आगे बढ़ाने में जैन धर्म के मर्मज्ञ कवियों का भी योगदान रहा है।

मुनि क्षमासागर का जन्म 20 सितंबर सन 1957 को मध्य प्रदेश के सागर जिले में हुआ। आपके पिता श्री जीवनकुमार सिंघई व माता का नाम आशादेवी सिंघई था।

अपने गुरू विद्यासागर के प्रति असीम श्रद्धा ने उन्हें परमात्मा में गुरू दर्शन करा दिए और गुरू में परमात्मा के। जैसे यगुरू ही परमात्मा है संत नानक ने यही कहा था, गुरूकृपा से ही मुक्ति पथ पहचाना जा सकता है। मुनि क्षमासागर ने जब कुंडलपुर में बड़े बाबा का दर्शन किया तो उनके मुख से बरबस निकल पड़ा –

देवता मेरे/जब मैंने/अपने भीतर झांका/अपने को देखना चाहा,
तब वर्षो पूजित/प्रतिमा में/मैंने पहली बार/तुम्हें देखा। पाया।[6]

नीचे जब आचार्य गुरूवर विद्यासागर के दर्शन किये, फिर पहाड़ी पर तीर्थंकर आदिनाथ के, तब कवि को अनुभूति हुई कि ऐसे ही भंगिमा में नीचे मूर्त रूप में वे गुरूवर हैं, आप यहाँ मूर्तिमान! गुरू सान्निध्य व उनके दर्शन का ही परिणाम था कि जिस प्रतिमा के दर्शन अनेक बार किए पर परमात्मा स्वरूप को न जान पाए। जब अपने भीतर के परमात्म के दर्शन करना चाहा तो बाहर प्रतिमा में भी परमात्मा के दर्शन हो गए। यह गुरू महिमा ही है। अपने आत्मस्वरूप को पहचानने व श्रद्धा विगलित होकर अपने मानमद को धीरे धीरे तोड़कर मनुष्य में प्रभुत्व उत्पन्न करने के लिए कवि मंदिर व मूर्तियों के दर्शन का महत्व उजागर करते हैं, कि ये मंदिर हमारे भीतर प्रवेश का द्वार है,

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शासकीय पी.जी. महाविद्यालय, राजगढ़, ब्यावरा (म.प्र.) भारत

क्योंकि हम मंदिर के पवित्र वातावरण में पहुंचकर बाहरी माया मोह के प्रपंच को छोड़ने का प्रयास करते हैं और प्रभु के समक्ष अपनी अच्छाइयों बुराइयों को स्वीकार कर बुरे कार्यों से दूर रहने का संकल्प भी करते हैं। मूर्तियों को देखकर महावीर जैसे अहिंसक, राम से मर्यादा पुरूषोत्तम व कृष्ण से कर्मयोगी बनने का प्रयास करते हैं। इसलिए कवि लिखते है, मूर्तियां अनुपम सुंदर इसीलिए है कि हम उनके प्रति श्रद्धावान होकर अपने मान घमंड व आठों मद को कम कर सकें।

श्रद्धा से झुक कर/गलाते जाएं/अपना मान मद/
पर्त दर पर्त निरंतर/ताकि कम होता जाए/हमारे/
और प्रभु के बीच का अन्तर।[7]

आज मनुष्य अपने आपको भ्रम में डाले हैं, भौतिक सुख सुविधाओं को समेटे उसने अपनी आंखों पर वासनाओं के पर्दे डाल रखे हैं जिससे उसे उसका अंतिम समय भी निकट आते नहीं दिखता, न उसमें इस संसार से विरक्ति का भाव जागृत होता है, क्योंकि बाल सफेद होने पर बुढ़ापे पर मेंहदी व डाई का व बत्तीसी टूटने पर कृत्रिम बत्तीसी का पर्दा डालकर नित नवीन बने रहने का अहसास आदमी को भ्रम में डाले है। इसीलिए कवि कहते हैं –

कुछ नया लगे/जिंदगी/भ्रम में गुजर सके
और बासेपन का अहसास/हमें/विरक्त न कर सके।[8]

मृत्यु की निकटता व निश्चितता ही व्यक्ति में वैराग्य उत्पन्न करने में सहायी है।

व्यक्ति भले ही अनेक प्रयास कर यौवन को बरकरार रखने का भ्रम पाल ले पर चाहकर भी जन्म–जरा–मृत्यु के क्रम को तोड़ नहीं सकता।

अधुनातन संत कवि मुनि क्षमासागर ने अपने साहित्य द्वारा मनुष्य को राग–द्धेष, छल, कपट, माया–मोह से दूर रहकर अपने जीवन को सहज व मन को निर्मल करने की तथा एक बेहतर इंसान बनने की कवायद की है।

संत कवि क्षमासागर जी ने उन साधकों को भी फटकारा है, जो अहंकार, मान, का मर्दन करने के लिए साधना करते हैं, फिर उसी साधना को लेकर अहंकार करते हैं संत कवि कहते हैं–

जो साधना/अहंकार तोड़ने के लिए/हम स्वीकार करते हैं,
बाद/उसी साधना को लेकर/अहंकार भी/करते हैं।[9]

अपनी ही साधना पर अहंकार करने लगे तो उस साधना का फल ही नहीं मिलेगा प्राचीन कवियों की भाँति अधुनातन संत कवि भी अहं को, कामनाओं को नियंत्रित कर संतोष रखने का संदेश देते हैं। संत कवियों की भांति मुनि क्षमासागर भी कहते हैं, कामनाओं के कलश को कितना भी भरों वह हमेशा रीता का रीता रहता है, क्योंकि उसकी पैंदी में कहीं छेद होता है –

कामनाओं – का – कलश/ऊपर से/सोने सा/दमकता है
सुराख उसमें कहीं नीचे/पैंदी में होता है/कोई इसे
कितना भी भरे/वह सदा/अतृप्त रहता है।[10]

व्यक्ति की इच्छाऐं कभी समाप्त नहीं होती, एक इच्छा की पूर्ति होने पर दूसरी पैदा हो जाती है। कबीरदास जी ने कहा भी है 'माया तृष्णा न मुई मर मर जाए शरीर।' कामनाओं भरा मन सदैव अतृप्त रहता है। अत: कवि संतोष धारण करने की सलाह देते हैं।

संत कवि क्षमासागर ने भी उसी निर्वचनीय सत्ता का गुणगान किया है, जो रस, गंध आदि के पार है, जो कबीर का निर्गुण ब्रम्ह व योगीन्दु का निरंजन कहलाता हैं क्योंकि कवि ने यही अहसास किया है कि छूकर जिसे पा नहीं सका, रस लेना चाहा पर रसना भी थक गई। अनेक बार पुकारा पर कोई ध्वनि नहीं आई, जिसे सुन सकूं। सोचा रूप देखूंगा आज उसका पर नजर भी चुक गई, पांचों चर्मेंद्रियों से उसे पाने का प्रयास किया पर विफल रहा। फिर अनुभव किया –

बस! एक ही अहसास/उसका/कि वही है
जो रूप–रस/औ गंध सबके पार है। [11]

इस प्रकार इन्द्रियातीत ब्रहम की सत्ता को मुनि क्षमासागर भी स्वीकारते हैं। इस प्रकार संत काव्य परंपरा की विशेषताओं का निर्वहन करते हुए मुनि क्षमासागर अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सन्त साहित्य, प्रेमनारायण शुक्ला, पृ.24
2. सन्त साहित्य के प्रेरणास्त्रोत, परशुराम चतुर्वेदी, पृ.59
3. साहित्यिक निबंध, गणपति चंद्र गुप्त, पृ.227
4. कबीर ग्रंथावली, डॉ. श्यामसुंदर दास, पृ.39
5. कबीरवाणी, पीयूष, डॉ. जयदेव सिंह, पृ.5
6. साक्षात्कार–2 (कविता), मुनि क्षमासागर की कविताएं, मुनि क्षमासागर, पृ.16
7. 'अन्तर', पगडंडी सूरज तक, मुनि क्षमासागर, पृ.7
8. 'अहसास' वही, पृ.17
9. 'साधना' में तुम्हारा हूँ, मुनि क्षमासागर, पृ.21
10. 'अतृप्त' पगडंडी सूरज तक, मुनि क्षमासागर, पृ.22
11. सबके पार, वही, पृ.43

****

निमाड़ अँचल के आदिवासियों का सामाजिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन

डॉ. मनजीत अरोरा *

प्रस्तावना – प्रत्येक समाज की अपनी रीति–रिवाज,परम्पराएँ एवं संस्कृति होती हैं। आदिवासियों की भी अपनी संस्कृति है, जो समाजशास्त्रियों एंव शोधकर्ताओं के लिए प्राचीन काल से कौतुहल एवं आकर्षण का केन्द्र रही हैं। निमाड़ अँचल में मुख्यत: तीन आदिवासी उपजातियॉ निवास करती है– भील, भीलाला एवं बारेला। इन तीनों उपजातियों में ज्यादा अंतर नहीं हैं। आदिवासियों का संपूर्ण जीवन प्रकृति एंव मृत आत्माओं के पूजक रहा हैं। वनोपज एकत्रित करना, कृषि एंव पशुपालन उनका मुख्य व्यवसाय रहा हैं।

निमाड़ अँचल मे प्रमुख जनजाति भील है। यह विभाजन मध्यकाल से माना जाता है, जिसके कारण उनकी सभ्यता, संस्कृति और जीवन–शैली में शनै–शनै पर्याप्त अंतर आया है। भीलों की ऐतिहासिक चेतना से भिलाले और बारेला भिन्न नहीं हैं। भीलों के इतिहास में उनका इतिहास है, भीलों के संस्कारों में उनके संस्कार है।

आदिवासी की चिंता जल, जंगल भाषा और संस्कृति की है, जो आदिवासी अस्मिता के लिए आवश्यक है। आदिवासी को सहज ही सभ्य और बर्बर समझ लिया जाता हैं। उसकी सभ्यता और संस्कृति को ना तो समझने की कोशिश की जाती है और ना ही उसके साथ सहृदयता के साथ व्यवहार किया जाता हैं। बाहरी स्वरूप और आवरण के आधार पर परिभाषा गढ़ दी जाती है, जो यथार्थ से बिल्कुल दूर की बात होती है। 'आदिवासी देश के मूल निवासी माने जाने वाले तमाम आदिम समुदायों का सामूहिक नाम हैं। इस संदर्भ में यह विचारणीय है कि आदिवासी पद का 'आदि' उन समुदायों के आदिम युग तक के इतिहास का द्योतक हैं।

यदि भारतीय संदर्भ में आदिवासी जातियों को देखे तो पूर्व से पश्चिम तथा उत्तर से दक्षिण सीमा तक आदिवासी समुदाय अनेक जातियों में बंटा हुआ हैं। लेकिन आदिवासी का जातीय स्वरूप व्यापक होते हुए भी इनका केन्द्रीय भाव प्राकृतिक उद्यमों से जुड़ा हैं।

आदिवासी अस्मिता के परिप्रेक्ष्य में आदिवासी की अवधारणा पर हमें कायदे से आलोचनात्मक ढंग से विचार करना चाहिए। एक विकासमान मानव को जंगली, वनवासी, असभ्य, बर्बर, लंगोटियॉ आदि नामों से संबोधित कर उन्हें समझ लेना कितना सार्थक है, इस बात की पुष्टि होनी चाहिए। इल्विन महोदय ने आदिवासी को परिभाषित करते हुए लिखा है कि 'आदिवासी वह है जो सबसे शुद्ध है। वह ऐसा ग्रुप है, जो मैदानी इलाकों में रहने वालों के संपर्क मे हो और आदिवासी जीवनशैली में रहता है।' विभिन्न विद्वानों ने आदिवासी के संदर्भ में अलग–अलग मत प्रकट किया है जिससे स्पष्ट होता है कि आदिवासी भारतवर्ष के मूल निवासी हैं, इसलिए किसी अन्य शब्दों के बजाय इनके लिए 'आदिवासी' उपयुक्त शब्द है।

हर आदिवासी समुदाय की अपनी भाषा, संस्कृति तथा स्वतंत्र सुरक्षात्मक संगठन होता हैं बहुतायत संख्या में आदिवासी जातियाँ हैं लेकिन अधिकांशत: आधुनिक विकास, शिक्षा, संस्थान, नौकरी और सरकारी लाभ से वंचित हैं। कुछ जातियों को आदिवासी की सूची में भी नहीं रखा गया हैं तथा कुछ जातियाँ आदिवासी होने का ढोंग भी कर रही हैं। कुछ आदिवासी जातियॉ हिन्दू समाज के संपर्क में आने के कारण हिन्दू धर्म, संस्कृति को अपना चुकी हैं। गैर आदिवासी समाज का शोषणात्मक प्रभाव आदिवासियों की निजता और विशिष्टता को तेजी से खत्म कर रहा है। अत: आदिवासी अस्मिता और उसके विकास के लिए आवश्यक है कि वैचारिक शिक्षा की रोशनी प्रत्येक आदिवासी समुदाय तक पहुँचे।

साहित्य का पुनरावलोकन –

जनजातियों की सांस्कृतिक परम्परा और समाज – संस्कृति पर विचार की एक दिशा यहॉ से भी विचारणीय मानी जा सकती हैं। मानव विज्ञानिकों और समाजशास्त्र के अद्येताओं ने विभिन्न जनजातीय समुदायों का सर्वेक्षण मूलक व्यापक अध्ययन प्रस्तुत किया हैं और उसके आधार पर विभिन्न जनजातियों के विषय में सूचनाओं के विशद कोश हमें सुलभ हैं। पुन: इस अकूत शोध–सामग्री के आधार पर विभिन्न जनजातियों और समाजों के बारे में निष्कर्षमूलक समानताओं का निर्देश भी किया जा सकता है। लेकिन ऐसे अध्ययन कर संकट तब खड़ा हो जाता है जब हम ज्ञान को ज्ञान के लिए नहीं मानकर उनकी सामाजिक संगति की तलाश शुरू करते हैं। ये सारी सूचनाएँ हमें एक अनचाही, अनजानी दुनिया से साक्षात्कार कराती है, किन्तु इस ज्ञान का संयोजन भारतीय समाज में उनके सामंजस्यपूर्ण समायोजन के लिए किस प्रकार किया जाए, यह प्रश्न अन्य दूसरे सवालों से अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। यहाँ समाज–चिंतन की हमारी दृष्टि और उसके कोण की वास्तविक परीक्षा भी शुरू हो जाती है। ठीक यही से सूचनाओं का विश्लेषण, विवेचना चुनौति बनकर खड़े हो जाते है।

किसी भी समाज का अतीत बहुत महत्वपूर्ण होता है, तो भी शुद्ध अतीतजीवी होने की भी तार्किकता नही हो सकती है। जनजातियों के संदर्भ में विचार करे तो यह सवाल और पेचिदा हो जाता है कि क्या उन्हें आदिम मानव सभ्यता के पुरातात्विक पुरावेश के रूप में पुरातन जीवन–स्थिति में ही अलग–थलग छोड़ दिया जाए या विज्ञान और तकनीकी प्रगति की आधुनिक व्यवस्था में समायोजित होने का अवसर भी दिया जाए? सवाल तो यह भी उतना ही महत्वपूर्ण है कि क्या उनके विकास के नाम उन्हें आधुनिक जटिल राज्य, जटिल राज्य तंत्र और समाज व्यवस्था के सामने टूटकर बिखरने के लिए छोड़ दिया जाए या उन्हें नए परिवेश मे सहज गतिशील होने के लिए पर्याप्त अवसर दिया जाए।

भाषा लोक की अभिव्यक्ति का माध्यम होती है। भारत लोक भाषा और

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

लोक साहित्य से समृद्ध देश है। हिन्दी की अनेकानेक उपभाषा और बोलियॉ हैं। प्रमुख –ब्रज, अवधी, बुन्देली, छत्तीसगढ़ी, भोजपुरी, बघेली, मालवी, निमाड़ी और राजस्थानी हैं। निमाड़ अँचल की प्रमुख बोली निमाड़ी है।

उसमें भी बारेली, भिलाली आदिवासियों की प्रमुख है। निमाड़ का लोक साहित्य भी अत्यन्त समृद्ध है, जिसमें लोक गीत, लोक नाट्य, लोक वार्ता, लोक कथाएॅ इत्यादि है। निमाड़ की लोक संस्कृति ने समस्त भारत हो प्रभावित किया है। निमाड़ अँचल के लोक मानस को यहॉ की लोक सांस्कृतिक परम्पराओं ने पूरी तरह से आत्मसात् कर रखा है। इस क्षेत्र की सुदीर्घ सांस्कृतिक परम्पराओं को सुरक्षित करने का महान कार्य यहॉ के लोक साहित्य ने किया। यह लोक मानस की उस भावधारा का प्राप्य रूप है, जो व्यक्तिगत चेतना का आश्रय लेकर समाज में लिखित रूप मे उपस्थित न होकर सामाजिक चेतना का आश्रय लेकर श्रुति परम्परा से काल के असंख्य थपेड़े खाती हुई लोक विश्वासों का अंग बनकर आज तक अक्षुण रूप से सुरक्षित रही हैं। यहॉ के आदिवासियों के आख्यान उनके मिथक, उनकी परम्पराएॅ आज इसलिए महत्वपूर्ण नहीं है कि वे बीते युगों की कहानी कहती है, बल्कि उनकी संस्थाओं और संस्कृति के ऐतिहासिक तर्क और बौद्धिक प्रसंगिकता के लिहाज से भी महत्वपूर्ण है। उनकी कलात्मक अभिव्यक्तियॉ, सौन्दर्यात्मक चेष्टाएॅ और क्रियाएॅ हमारी आपकी कला–संस्कृति की तरह आराम के क्षणों को भरने वाली चीजें नहीं है, उनकी पूरी जिन्दगी से उनका एक क्रियाशील प्रयोजनशील और पारस्परिक रिश्ता है, इसलिए उनकी संस्कृति एक ऐसी अन्विति के रूप में आकर ग्रहण करती है जिनमें उनके जीवन और यथार्थ की पूनर्रचना होती है।

टी.शंकरा रेड्डी (1996), ने अपने अध्ययन मे बताया कि जनजातीय महिलाओं के विकास मात्र से जनजातीय समुदाय की समस्याओं का अंत नही होगा अपितु जनजातीय परिवारों में शिक्षा के साथ–साथ जनजाति क्षेत्र का भी विकास करना होगा जिससे उस क्षेत्र में निवास कर रहे सभी वर्गों के जनजाति का विकास हो सके। इसके अतिरिक्त शोधकर्ताओं व नीति निर्माताओं को चाहिए कि जनजाति क्षेत्रों की समस्याओं को सूक्ष्म अध्ययन कर इन क्षेत्रों के लिए पृथक से विकास योजनाओं को लागू करने की सिफारिश करें।

पांडे जी.डी. (1993), ने जनजाति तथा हरिजन समुदाय के मध्य शिक्षा तथा रोजगार के बीच तुलनात्मक अध्ययन किया जिसमें निम्नलिखित निष्कर्ष ज्ञात हुआ –

अ) अनुसूचित जाति में अनुसूचित जनजाति की तुलना में लिंगानुसार परिवारों की संख्या अधिक होती हैं।

ब) अनुसूचित जनजाति का मुख्य व्यवसाय कृषि है जबकि अनुसूचित जाति का मुख्य व्यवसाय कृषि के अतिरिक्त अन्य रोजगार भी होता हैं।

स) दोनों ही वर्गों मे शिक्षा का स्तर जनजाति की तुलना में हरिजनों में अधिक हैं।

द) जनजाति के लोग दुर्गम क्षेत्रों मे रहते है जबकि अनुसूचित जाति मैदानी भागों मे रहते हैं। अत: इनका विकास अधिक होता हैं।

निमाड़ अँचल के आदिवासी जनजाति या अनेक तत्सम शब्दों से भले ही किसी भी क्षेत्र के भूमि–पुत्रों का बोध होता हो, ये शब्द हमारे अपने समाज में अब दो अर्थों में प्रयुक्त होने लगे हैं। अकादमिक संदर्भ में आदिवासियों को भले ही सबसे निरीह मानव समूह माना जाय, अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में इस शब्द का प्रयोग अब कूटनीति के सबसे मजबूत मोहरे के लिए किया जा रहा हैं।

जनजातियों के भारतीय संदर्भ से हमारा तात्पर्य है कि जनजातियों के नाम पर न केवल ऐसे राष्ट्रीय वरन् अंतर्राष्ट्रीय संगठनों का निमार्ण हो चुका है, जो खुले आम विश्वमंच पर यह कहने में गर्व का अनुभव करते है कि भारत में जनजातियों का शोषण बहुसंख्यक हिन्दू या मुसलमान समाज कर रहा है और शोषण को रोकने के लिए अंतर्राष्ट्रीय नियंत्रण होना आवश्यक है। अर्थात् कुल मिलाकर देश की स्वतंत्रता और सार्वभौमिकता पर प्रहार किया जा रहा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. आदिवासी की अवधारणा और जातीय स्वर–मुन्ना शाह।
2. आदिवासी साहित्य विमर्श–गंगा सहाय मीणा।
3. जनजाति जीवन और संस्कृति–राजीव लोचन शर्मा।
4. निमाड़ का सांस्कृतिक इतिहास–पं.रामनारायण उपाध्याय।
5. भारत की जनजातीय संस्कृति–विजय शंकर उपाध्याय विजय प्रकाश शर्मा।
6. जनजातीय समुदाय अध्ययन–टी.शंकर रेड्डी।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

हिन्दी काव्य धारा में दलित भावना के विविध आयामों का अध्ययन

डॉ. आशुतोष तिवारी *

प्रस्तावना – हिन्दी साहित्य में दलित-साहित्य, मराठी भाषा से आया। सर्वप्रथम महाराष्ट्र मे दलितों ने ही अनेक रचनाएं लिखी। उन्नीसवीं शताब्दी में पूना मे ज्योतिबा फूले जैसे संघर्षशील क्रांतिकारी का उदय हुआउन्होंने दलितों के लिए पाठशालाएं खोली। छुआछूत और जातिप्रथा के विरूद्ध आवाज उठाई। 'गुलामगिरि' नामक पुस्तक लिखकर उन्होंने दलित समाज मे जागृति फैलाई। बीसवीं शताब्दी मे डॉ.भीमराव अम्बेडकर का आविर्भाव भी महाराष्ट्र में ही हुआ उन्होंने भी जाति-पॉति, अन्याय-अत्याचार आदि का खुलकर विरोध किया। शिक्षित बनो, संगठित हो, संघर्ष करो का नारा दिया इसका प्रभाव पूरे महाराष्ट्र मे पड़ा। बीसवीं शताब्दी में महात्मा गाँधी का आगमन हुआ उन्होंने पृश्यता निवारण की तरफ लोगों का ध्यान दिलाया और दलितों को मन्दिर प्रवेश तथा छुआछूत खत्म करने के लिए कार्य किया। ऐसे समय मे हिन्दी साहित्यकारों मे प्रेमचन्द का नाम सर्वप्रथम आता है, उनकी 'सद्गति' 'ठाकुर का कुआँ' 'कफन' 'दूध का दाम' आदि कहानियों के साथ उपन्यासों मे कोई न कोई दलित पात्र अवश्य है। जिसमे दलित की दशा का यथार्थ चित्रण है। हिन्दी के आधुनिक कवियों में अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' मैथिलीशरण गुप्त, भगवतीचरण वर्मा, सियाराम चरण गुप्त, सुभद्राकुमारी चौहान, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' सोहनलाल द्विवेदी, नागार्जुन, माखनलाल चतुर्वेदी आदि अनेक कवियों ने कविता के माध्यम से दलितों के प्रति अपनी संवेदनशीलता को प्रकट किया।

दलित भावना के विविध आयाम – दलित काव्य दलितों की पीड़ा, उत्पीड़न और उनके आक्रोश एवं प्रतिशोध तथा परिवर्तन के संकल्प का काव्य है, जो समाज के सर्वागीण विकास का पक्षधर है। साथ ही यह जातिविहीन समाज का सपना देखता है। जब हम दलित काव्य पर नजर डालते हैं तो हमें उसमे दलित भावना के विविध आयामों के दर्शन होते हैं। इन्हीं दलित भावनाओं के विविध आयामों को सारांश में यहां देखा जा सकता है

विद्रोह की भावना – दलित भावना का सबसे तीव्र और उग्र अंश विद्रोह का है। इस विद्रोह के मूल में सामाजिक एवं आर्थिक अन्याय के साथ सांस्कृतिक उपेक्षा है। दलित कविता मे सभी प्रकार की सामाजिक-राजनैतिक संस्थाओं के रूप मे स्थापित विषम व्यवस्था को उखाड़ने की, उनके खिलाफ संघर्ष करने की भावना बड़ी तीव्र है। जब नव शिक्षित दलित युवा पीढ़ी को समाज में समानता की दृष्टि से नहीं देखा जाता तो दलित कवि उनका प्रतिनिधि बनकर विद्रोह के लिए सक्रिय होता है। वह विद्रोह के लिए विवश है। त्रयम्बक सपकाले का सवाल है

'अब रोऊं किस किस के लिए कहां है
मेरी आंखो में आंसू ?सूखी पलकों से निकलती है
विद्रोह की चिनगारियां वे अगर भड़क उठी तो मै 'या करूं ?'

अपने बंधुओं पर होने वाले अत्याचारों, उनकी जलती हुई झोपड़ियों, स्त्रियों पर होने वाले अत्याचारों, बहिष्कार और नरबलि आदि की खबरें जब कवि के कानो तक पहुंचती हैं तब कवि के मन में उफान उठता है। जवीप़वार ने इस उफान को शब्द दिये है-

नही जानता 'यों उस दिन से मेरी मुट्ठियां तन गयी
खूंटी पर टंगे हथियारों की दिशा मे हाथ उठ रहे है
अब मैं ही समुन्दर हो गया हूँ
उठान और उफान बन रहा हूँ
तुम लोगो की कब्रें बांधने बाहर निकला हूँ'

राजस्थान के डॉ.अमर सिंह 'उस दिन के लिए' कविता के माध्यम से दलितों को विद्रोह करने के लिए प्रेरित करते हुए कहते है-

'घृणा के पात्र बने
बहुत दु:ख गयी होगी
तुम्हारी पीठ
गल गये भोजपत्र
अब इतिहास में
जुल्मों को
लिखना हो तो
पीठ पर नहीं
छाती पर लिखाओं
सामने आ कर
तुम गोलियां खाओ'।

राजेन्द्र शर्मा ने बीज के प्रतीक के रूप में शोषित समाज की संघर्षोन्मुखी भूमिका को अभिव्यक्ति दी है-

'अपना नन्हा सा सिर
उठाकर
छाती तानकर
खड़ा हो गया है वह
तुम्हारी हिमाकत की
परवाह नहीं है उसे
चाहो तो उखाड़ फेंको
वह बिरवा
और साथियों समेत
जमीन तोड़ेगा
वह तुम्हारे खिलाफ ही नही दुनिया भर में भूख के खिलाफ
लड़ रहा है।'

इस तरह दलित कवि ने समाज में होने वाले दलितों के प्रति अमानवीयता को पहचान लिया है और वह अनुभव करता है कि दलितों को मानवीय स्तर से वंचित रखा गया है। ऐसी परिस्थितियों के विरूद्ध दलित कवि अपनी विद्रोह की आवाज बुलन्द करता है। विद्रोह की इस कविता में स्थापित मूल्यों, प्रतिमानो और भाषादर्शो के प्रति भी विद्रोह व्यक्त हुआ है। विद्रोह के आवेग में दलित काव्य में बेलौस भाषा शैली पाठक को तिलमिला देती है।

निषेध की कविता – विद्रोह का अनुवाद निषेध में हो जाता है। अत: हम

*(हिन्दी) आदर्श कॉलोनी बुढ़ार, जिला-शहडोल (म.प्र.) भारत

जिनके प्रति विद्रोह करते हैं उनके प्रति निषेध आवश्यक हो जाता है। इस नकार की भाषा में घृणा और तिरष्कार के भाव घुल मिल जाते है। दलित काव्य की भाषा स्वत: ही नकार की भाषा बन जाती है क्योंकि वह उन सब सामाजिक धार्मिक, सांस्कृतिक आदि रूढ़ियों और संस्थाओं का निषेध करना चाहती है, जिन्होंने इस विषम और अन्यायपूर्ण व्यवस्था को बनाया, विकसति किया और सुदृढ़ बनाया। दलित काव्य इन परम्पराओं को बदलने की कामना करता है। दलित कवि अपना निषेध कविता के माध्यम से करते है। जैसे नामदेव ढसाल ने अपना निषेध इस प्रकार व्यक्त किया है–

'मैं तुम्हे गालियां देता हूँ
तुम्हारे पाखण्डीपन को गालियां देता हूँ
इंव्हन मैं मां–बाप को भी गालियां देता हूँ।

गालियां देने से ही यह उबाल समाप्त नहीं होता, वह समुची संस्कृति को ही उखाड़ देना चाहता है।

'आदमी को चाहिए कि वह रास्ते उखाड़ दे
ब्रीज उखाड़ दे लेम्प पोस्ट गिरा देपोलिस स्टेशन, रेलवे स्टेशन तोड़ दे
बसें, ट्रेन, कार गाड़ियां जला दे'

संघर्ष की चेतना – विद्रोह और निषेध से संघर्ष की चेतना मुखर होने लगती है जो दलित संवेदना की रचनात्मक क्षमता को सबल कर देती है। सहन करने का समय अब समाप्त हो गया है अब दलित काव्य लड़ने का फैसला कर लेता है 'योकि अस्तित्व के लिए संघर्ष अनिवार्य है। इस संघर्ष का कोई अन्त नहीं है। वामन निम्बालकर इस संघर्ष के लिए अपने आप को प्रस्तुत करते हुए कविता के रूप मे कहते है–

'जल चुकी जिन्दगी को फिर
अंगारो की तरह जलता है
इसलिए रोशनी की पगडण्डियों को मैने अपना लिया है।'

विद्रोह के जल में आग जल उठती है और संघर्ष की दृढता स्पष्ट हो जाती है। बाबूराव बागुल दो रास्ते के चुनाव की अनिवार्यता की ओर संकेत करते हुए कहते है–

'गलती की जिन्होने यहां पैदा होने की
उन्हें उसे सुधार लेना चाहिए।
देश छोड़कर या भीषण युद्ध लड़कर'.

वेदना का भाव – विद्रोह, निषेध, संघर्ष आदि दलित काव्य के प्रखर और तेज तेवर है परन्तु उसका मूल उत्स वेदना का ही है। दु:ख की संवेदना काव्य की प्रेरणा रही है। दलित काव्य के गर्भ में भी सघन पीड़ा का स्पन्दन है। यह पीड़ा कविता की तरह रोमानी, मानसिक या आध्यात्मिक नहीं है। किसी ने ठीक ही कहा है 'आदमी ने आदमी को कितना हीन कर दिया है'। मानव द्वारा मानव पर किए गए अन्याय और अत्याचार ऐसे दर्दनाक कितने ही उदाहरण देखने को मिल जाएगे।वामन निम्बालकर ने लिखा है–

'शब्दों मे समाएगी नहीं इतनी कथाएं और व्यथाएं
कहते हुए सीना टुकड़े–टुकड़े हो जाएगा क्योंकि
यहां इन्सान धंस गया था और टूट गए थे कगार इन्सानियत के'

दु:ख और दु:ख के कारण आज भी मौजूद है। आज भी दलितों की झोपड़ियां जलाई जाती है, इज्जत लूटी जाती हैं, उन्हें घृणा से देखा जाता है और मानवीय न्याय से वंचित रखा जाता है। कुंओ पर उन्हें पानी भरने नहीं दिया जाता। पानी के बूँद के लिए मोहताजों के दु:ख को व्यक्त करते हुए यशवन्त मनोहर पूछते है–

'पानी की कमी हुई तो
तुम लोग बदलते हो शहर कमीज की तरह
फिर बताओ पानी के बिना तड़प–तड़पकर मरने वालों को
क्या बदलना होगा' ?

परम्परागत दु:खों के साथ–साथ दलित काव्य में कुछ नए दु:ख भी शमिल हो गए है। पहले अज्ञान में आनन्द था। अब शिक्षित होने से अन्याय का एहसास पीड़ा जगाता हे। दया पवार सोचते हुए कहते है–

'सच क्यों हो गयी पहचान किताब के साथ
अच्छा था बहाव में पत्थर का गोला ढोता था
गॉव के मवेशियों के पीछे जाता
तो इस कदर काले बिच्छू तो नहीं काटते'

अस्मिता की खोज – दलित काव्य की भावनाओं को यदि एक ही वाक्य मे पूर्ण रूप से व्यक्त करना हो तो कहना होगा कि दलित काव्य अस्मिता की निरंतर खोज है। दलित यातना और यंत्रणा की परिणति भी अस्मिता की पहचान हो जाती है। दलित काव्य का संपूर्ण आक्रोश अस्मिता की पहचान का प्रयास है। युग–युग से पीड़ित और पशु के समान जिन्दगी जीने वाले दलित को अपने मनुष्य होने का एहसास होते ही अपनी शक्तियों का ज्ञान हो जाता है अस्मिता की खोज दूसरा
नहीं करता अपनी पहचान अपने को ही करनी पड़ती है। वामन विम्बालकर जानते है।

'जहां बैठे हो वहीं
खून के शब्दों की कै करके काम नही होता
अपने रास्ते तुम्हें ही ढूँढने होगें
इस रेगिस्तान मे ओयासिस के ठिकाने
कोई किसी की मद्द करने नहीं जाता'

इस तरह दलित काव्य अस्मिता की खोज है। दलित काव्य कल के लिए आवश्वासन की कविता है। प्रेरणा और आत्मविश्वास उसे मिलता है डॉ. अम्बेडकर बुद्ध और मार्क्स के व्यक्तित्व से।

सामाजिक समानता का हिमायती – दलित काव्य केवल दलितों की प्रतिष्ठा और अस्मिता तक ही सीमित नहीं है बल्कि वह समाज के सर्वागीण विकास का भी हिमायती है। मूल रूप से दलित काव्य की प्रथम प्राथमिकता सामाजिक समानता है। दलितों की शिक्षा–दीक्षा, अस्मिता आदि समग्र विकास के मुद्दे को दलित काव्यधारा उठाती है। सवर्णो मे व्याप्त सामंतीपन, अविकसित मानसिकता, उच्चता का भाव आदि का विरेचन कर दलित कवि समानता एवं अपनत्व को समाज में स्थापित करना चाहता है। डॉ. एनसिंह समाज मे समानता और एकता की बात करते हुए कहते है–

'दुकान हमारी है और तुम्हारी भी
यह बात और है कि हमारी दुकान पर बिकता है जूता
और तुम्हारी दुकान पर रामनामी
हमारे लिए जूते का महत्व वही है जो तुम्हारे लिए रामनामी का
आओ समानता का तार पकड़ेएकता का सूत्र गढ़ें साथ बढ़ें'।

सामाजिक समानता की बात करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने भी लिखा है– 'समानता, आजादी, भाईचारा लक्ष्य ही नहीं बल्कि जन्मसिद्ध अधिकार है मनुष्य का। इन्हें हासिल करने के लिए दलित समाज को शिक्षित होना संघर्षरत रहना और संगठित होना लाजमी है' दलित साहित्यकार अपनी कृतियों मे इन्हीं विषयों को प्रमुखता देता है'।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. साहित्य और दलित चेतना – सं.महीप सिंह एवं चन्द्रकान्त बांदिवडेकर।
2. हिन्दी काव्य में दलित काव्यधारा – माता प्रसाद।
3. उत्तरप्रदेश पत्रिका सितम्बर – अक्टूबर 2002

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

'मन्नू भंडारी के कथा साहित्य में' नारी मुक्ति आंदोलन : गतिरोध की मीमांसा और खीझ

डॉ. अंजना यादव *

प्रस्तावना - मन्नू भंडारी स्वयं एक नारी है और लेखिका भी। इसलिए उन्होंने' नारी मुक्ति आंदोलन' का हलफ न भी उठाया होता तो उनके लेखन में किसी तरह का अंतर आ गया होता यह कहना मुश्किल है।

लेकिन, मन्नूजी के स्वयं नारी होने का ही परिणाम है कि वे अनवरत एक ऐसी खोज में रत दिखती रही है ' जहाँ उन्हें अपनी नारी जाति के सही रूप का ज्ञान हो सके, नारी मात्र की आत्मा की आवाज को पकड़ सके उसे सच्चे मानवीय धरातल पर प्रस्तुत करते हुए उसकी जटिलतम गहराइयों में जाकर उनकी खोज कर सके। इसलिए उनकी समूची कहानियाँ 'नारी मुक्ति' की सशक्त गवाही पेश करती हुई दिखती है में अपने आप में पुरजोर बहस एक सिलसिलेवार जवाब तलवी लगती है।

आधुनिक नारी की पूरी गरिमा, देह सम्पदा वास्तविक सम्मान और मुक्ति की पुरजोर मांग का उद्घाटन और उसकी रक्षा के प्रति मन्नूजी की समस्त चेतना सजग होकर व्यस्त दिखाई देती है उनकी कहानियों में सिर्फ इसका संकेत ही नही मिलता बल्कि वे सब की सब उनकी इस सच्चाई का खुलासा प्रस्तुत करती हैं। एंजिला (ईसा के घर इंसान) के संबंध में व्यक्त, उसकी अपनी भावना के बहाने मन्नूजी ने नारी मुक्ति की घोर मांग की हैं, इन शब्दों में 'अपने इस रूप को चर्च की दीवारों के बीच नष्ट नही होने दूंगी। मैं जिंदा रहना चाहती हूँ आदमी की तरह, जिंदा रहना चाहती हूँ। मैं इस चर्च में घुट घुटकर नही मरूंगी। मैं भाग जाऊंगी मैं भाग जाऊंगी। मुक्ति की ऐसी पुरजोर और दृढ़ से दृढ़तर होती मांग की जबरदस्त गूंज या फिर कहीं कहीं हल्की, मद्धम सी अनुगूंज कहानियों के बीच से उभरकर आती है।

वास्तव में, मन्नूजी की सारी चेतना उनके अपने परिवेश पर केन्द्रित रही है अपने चारों ओर फैली हुई शिक्षित , मध्यम वर्गीय और निम्न-मध्यमवर्गीय नारी की कठिनाईयाँ, उसकी बेबसी पुरूष निर्भरता से मुक्ति पाने की कामना तथा आंतरिक संस्कारों भावनाओं और संवेदनाओं की बाहरी स्थितियों और दबावों को झेलती, कभी उनको तोडती और कभी खुद उनके सामने टूटती हुई नारी के प्रति वह काफी जागरूक और उस स्थिति की विध्वंसक रही है उनके अंदर जागती हुई एक मुक्तिकामी आदर्शवादी प्रवृत्ति बराबर कार्यरत् रही है। इस प्रकृति के फलस्वरूप ही नारी की अंतरात्मा की आवाज के उद्धार की कोशिश में दिखती रही है लेकिन उद्धार का रास्ता अवरूद्ध होने से वह कोशिश पुन: अपने उद्गम तक लौट आती है। इसलिए विवष होकर उनकी पात्रा (तनु, त्रिषंकू) एक स्थान पर कहती है।

(1) 'मम्मी से लड़ा कैसे जाये जो एक पल नाना होकर जीती है तो एक पल मम्मी होकर।' आखिर इस दोलायमान स्थिति में फंसी स्त्री कर भी क्या सकती है। असल में ' हमारे यहाँ सामाजिक संस्कारों और रूढ़ियों से उबरने में या फिर दहेज, जाति, आर्थिक परतंत्रता, शील-सुरक्षा संतीत्व या भारतीय नारी का बहू प्रचारित शिकंजा और भी ऐसी अनेक रूकावटें हैं जो हमें खुला आसमान देखने ही नहीं देती। ' (1)

जैसे खीझ भरे शब्दों में मन्नूजी ने अपनी विवशता प्रकट की है उनका यह खीझ भरा वक्तव्य समस्त नारी जाति का प्रतिनिधित्व करता है कहना चाहिए कि परोक्ष, अपरोक्ष रूप से मन्नूजी इस महादेश की नारी की मुक्ति के मार्ग में गतिरोध बने हुए संकट की ओर इशारा करती हैं जो आज के संवेदन शून्य स्वार्थी, शक्ति, उद्धत, उपयोग शील और व्यवहार में प्रवंचनापूर्ण किंतु ऊपरी तौर पर नारी से मुक्ति की भद्रता दिखाने वाले पुरूष के द्वारा उत्पन्न किया है।

(2) वास्तव में, पुरूष प्रधान समाज के बोझ से दबी भारतीय नारी जो हर वक्त में स्वतंत्र मुक्त, सहयोगी जीवन पद्धति की भागीदार बनने की हिमायत करती है। आज भ्रम की स्थिति में है और इस स्थिति विषेष का चित्रण ही मन्नूजी की नारी चेतना की समसामयिकता एवं यथार्थता को उजागर करता है, कभी भावावेश में बहकर कमी पूर्ण अथवा खंडित व्यक्तित्व की कशमकश को उकेरते हुए तो कभी स्त्री पुरूषों के द्वंद्व संबंधों को कह पाने की गहरी क्षमता जतलाते हुए।

यद्धपि मन्नूजी एक औसत भारतीय नारी का वास्तविक चित्रण न कर सकी हों, लेकिन उन्होंने जिस 'विशिष्ट भारतीय नारी' को प्रस्तुत किया है वह न सिर्फ समसामायिकता का सही अक्स भर है। बल्कि अपने आप में 'नयी' बनने का प्रयत्न करने वाली नारी समाज की आकांक्षाओं की पहचान भी कराता है। (2)

(3) समकालीन हिन्दी कहानियों ने इस सत्य को प्रकट किया है कि नारी- चेतना का प्रसार ग्राम तक हुआ है और गाँव की स्त्री भी आधुनिकता के उन स्तरों का स्पर्ष करने लगी है जो पाँचवे दशक तक केवल नगर की नारी को उपलब्ध थे। समकालीन साठ के दशक की हिन्दी कहानी में नारी के संदर्भ में भी समाज की व्यक्तिवादिता स्पष्ट हुई है, क्योंकि नारी ने व्यक्ति के रूप में प्रतिष्ठा पाने की कोषिष की है उसका यह संघर्ष ही उसकी स्थिति में गतिहीनता तोड़ने में सफल हुआ है और वह उसे यथास्थिति की सीमाओं को तोड़ नया स्थान निर्धारित करने में सक्षम हुई है कहानीकारों ने उसके संघर्ष को पहचाना और कहानियों के माध्यम से सशक्त बनाने का प्रयास किया इस आधार पर छटे दषक की (समकालीन) कहानी वस्तु संबंधी गतिरोध तोड़ कर नये संदर्भ आयाम प्रस्तुत कर सकी है। इसमें संदेह का कोई स्थान नहीं है। (3)

कामकाजी महिला का चित्रण

(4) आधुनिक नारी का एक स्वरूप ,''नौकरीपेषा नारी'' का है नारी का नौकरी करना या तो इसलिये कि वह अपने को परावलंबी नही रखना

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शा.नर्मदा स्नाकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.) भारत

चाहती या यह उसकी विवषता है आधुनिक नारी शिक्षा के परिणाम स्वरूप घर से बाहर आ गई है यह उसे अनेक व्यक्तियों से मिलने जुलने का अवसर देता है अब वह केवल शिक्षा ही नही या साधारण ग्रहिणी के रूप में नहीं, आर्थिक रूप से भी स्वतंत्र हो गई है पहले नारियों का नौकरी करना असंभव था लेकिन अब यह संभव हो गया है। अब वह न केवल, बाहर आकर अन्य व्यक्तियों से संबंध स्थापित करती है मुक्त आचरण भी करने लगती है घर की चारदीवारी से बाहर निकलने के कारण उसकी प्रेम और विवाह के प्रति दृष्टि बदलने लगी अब उसका स्वतंत्र व्यक्तित्व है लेकिन इस प्रक्रिया में वह कभी टूटती है तो कभी जुड़ती है और कभी निराशा से घिरकर आत्मघात भी कर लेती है। इस विवशता से वे स्त्रियाँ बहुत गहरे स्तर तक ग्रस्त है जिन्हें आजीविका अर्जित करने के लिये नौकरी करनी होती है और इस वर्ग में विधता, परित्यक्ता, कुमारी और नौकरी करने में असमर्थ पति की पत्नि आदि। हर प्रकार की स्त्री का चित्रण समकालीन महिला रचनाकारों के कथा साहित्य में उपलब्ध होता है।

नौकरी पेशा नारी की स्थिति पर मन्नू भंड़ारी उषा प्रियम्वदा और सूर्यबाला आदि ने अपनी कहानियों में प्रकाष डाला है कहीं कहीं से आधुनिक नारी स्वावलंबी होकर भी पुरूष से परिचालित है अर्थात् कहीं पर आधुनिक शिक्षिता नारी आर्थिक दृष्टि से परावलंबी न होकर भी पुरूष की आश्रित है कई बार पुरूष के साथ उसकी जिंदगी में कुछ ऐसे क्षण आते हैं जब उसे वही भयंकर स्थिति का सामना करना पड़ता है ऐसे समय एक ओर अपनी स्वतंत्र 'दृष्टि के कारण' वह न तो किसी की आश्रित बन कर रहना चाहती है न रहने दी जाती है। ऐसे समय कई बार वह बड़ी निर्ममता से संबंध विच्छेद करते हुए नहीं घबराती है। कई समस्यायें उनके सामने ऐसी होती है जिनसे जूझना कठिन हो जाता है शायद आधुनिक नारी की यही नियति हैं कभी-कभी उसका स्वावलंबी होना भी उसके लिए अभिशप्त हो जाता है। [4]

(5) आज की नारी आत्मनिर्भर है वह पुरूष का आधिपत्य स्वीकार करने वाली अबला नही है। मन्नू भंडारी की 'इन्कम टैक्स और नींद' कहानी की महिमा डॉक्टर है कहानी का डॉक्टर दयाल होम्यौपैथिक डॉक्टर है, महिमा पढ़ने में तेज लडकी है और वह डॉ. दयाल के भाई की बेटी है महिमा अपना अस्पताल चलाती है उसने अभी तक शादी नहीं की है महिमा के प्रति दयाल के मन में भी ईर्ष्या है। लड़कियों को उँची शिक्षा देने के संबंध में डॉ. दयाल का कहना है कि भाई साहब ने इस लड़की की जिंदगी खराब करके रखदी। 26 बरस की बिन ब्याही लड़की घर में बिठा कर रख ली। कितना -कितना समझाया मैनें बाप-बेटी दोनों को बस सेमिनार-वेमिनार में ही डोलती फिर रही है घर ठिकाना तो कोई होना नही है इनका। पता नही साला क्या जमाना आया है। जमाने का बदलाव ही इसका विषय है। जमाने के अनुसार नारी भी बदल गयी है और उसके संघर्ष की जड़ भी है। [5]

(6) मन्नू भंडारी की ही 'एखाने आकाश नांइ'' कहानी शिक्षित और नौकरी पेशा नारी की समस्याओं को उद्घाटित करती है। लेखा शिक्षित है ओर कॉलेज में नौकरी भी करती है किन्तु कलकत्ता जैसे शहर की दौड़ भाग भरी दिनचर्या ने उसे पस्त कर दिया है वह व्यस्त और यांत्रिक जिन्दगी से उबकर अपने गाँव चली जाती है। गाँव पहुचकर वह देखती है कि वहां का वातावरण घुटन से भरा है। सुषमा, गौरा, सुरेश, रमेश सबके सब जैसे इस माहौल से मुक्त होने के लिये छटपटा रहे हैं। पर कहीं भी आकाश खुला हुआ नहीं है। ये लोग संयुक्त परिवार की मर्यादाओं के बीच मजबूरन जीये जा रहें है। आर्थिक विपन्नता के कारण गौरा को मर्यादाओं के बीच वह स्कूल में नौकरी भी करना चाहती है, परन्तु माँ का गया गुजरा तर्क है कि - ' जवान लडकी एक बार घर से पैर बाहर निकाले तो फिर बाहर की ही हो रहेगी। आज और चाहे कुछ हो, कम से कम अपनी इज्जत तो ओढ़े बैठे है। [6]
यह सुनकर युवा गौरा की स्वावलम्बी बनने की नयी चेतना पर एक तरह से जबरदस्त रोक लगवा देती है।

(7) मन्नू भंडारी ने नारी की संघर्षपूर्ण मन: स्थितियों का चित्रण बड़ी सफलता से किया है। उनकी लिखी एक और कहानी - 'स्त्री, सुबोधिनी पर प्रकाश डालें तो उसमें भी कुछ यूंही समस्यायें है। कहानी की नायिका 'मैं' कामकाजी महिलाओं के हॉस्टल में रहती है। उसकी उम्र सत्ताईस साल है वह अपने सीनियर अधिकारी से प्रेम संबंध बना लेती है। बाद में उसे पता चलता है कि शिदे शादीशुदा और बाल-बच्चे वाला है। आठ साल के प्रेम के बाद षिन्दे की रूमानी जरूरत घटती चली जाती है। और एक दिन 'मैं' को उसके घर के गृहप्रवेष का पत्र मिलता है। मकान षिन्दे, और उसकी पत्नी और बच्चों को देखकर 'मैं' समझ लेती है कि आठ साल तक चलने वाला प्रेम सिर्फ खिलवाड था 'मैं' का निष्कर्ष वाक्य है कि 'भूलकर भी शादीषुदा आदमी के प्रेम में मत पडियें ' 'दिव्य' और 'महान प्रेम' की खातिर बीवी बच्चों को दाव पर लगाने वाले प्रेमवीरों की यहाँ पैदावार ही नही होती। दो नावों पर पैर रखकर चलने वाले 'शूरवीर' जरूर सरेआम मिल जायेंगे। यह मन्नू भंडारी की आधुनिक शिक्षित (नोकरीपेशा) नारी का क्रांतिकारी विचार है यह नारी जीवन की परिवर्तित मानसिकता और नर-नारी के बीच संबंधों के विभिन्न आयामों को बोल्डनेस के साथ उद्घाटित करने वाली कहानी है। नारी की परम्परागत, निष्ठा, प्रेम, श्रृध्दा, चहारदीवारी के आंतरि व्यक्तित्व से भिन्न कुछ और आयामों का उद्घाटन करने में मन्नू भंडारी प्रयत्नशील दिखाई देती है।

पुराने संस्कारों और नयी परिस्थितियों के बीच पुरूष के अनेक टूटे संदर्भो के बीच अकेली होती जाने वाली नारी की कहानियां उन्होंने लिखी। ऐसी नारियों के मानसिक गठन और मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों को इनकी कहानियों में विविध संवेदनशील पक्षों से स्पष्ट किया गया है। हिन्दीं कहानी को नयी दिषा देने वाली महिला कथाकारों में मन्नू भंडारी अग्रणी है। [7]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मन्नू भंडारी - मैं हार गई'' ईसा के घर इंसान, पेज -19।
2. मन्नू भंडारी - त्रिशंकू, पेज-16 कवि अजीत कुमार से बातचीत, प्रथम संस्करण 1978।
3. डॉ. सुरेष धींगड़ा - हिन्दी कहानी : दो दशक।
4. डॉ. भगवान प्रसाद वर्मा - कहानी की संवेदनशीलता : सिध्दांत और प्रयोग पेज -232।
5. मन्नु भंडारी - इंकम टैक्स और नींद, यही सच है पेज-105।
6. मन्नु भंडारी - (मेरी प्रिय कहानीयाँ) एखाने आकाश नांई, पेज -64।
7. मन्नु भंडारी - वही, पेज -78।

सहायक ग्रंथ :-

1. राजेन्द्र यादव - एक दुनिया समानांतर, पेज-36।

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

जयशंकर प्रसाद के नाटक और राष्ट्रीय बोध

डॉ. संगीता निर्वेल *

प्रस्तावना – जयशंकर प्रसाद ने सन् 1918 के पूर्व ही नाटक रचना शुरू किया था। इस कालखण्ड मेंउनके निम्नांकित नाटक प्रसिद्ध रहे– विशाखा (1921), अजातशत्रु (1922), कामना (1923), जनमेजय का नागयज्ञ (1926), स्कंद गुप्त (1928), एक घूंट (1931), चन्द्र गुप्त (1931), ध्रुवस्वामिनी (1933)– प्रसाद के नाटकों के हिन्दी नाटकों के क्षेत्र मेंस्मरणीय स्थान पाया है। वस्तुत: भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के कार्यकाल से ही भारतेन्दुजी ने नाट्य लेखन का आरंभ किया था। इसी कालखण्ड मेंपारसी नाटक कंपनियों का असाहित्यिक, कुरुचिपूर्ण नाटक लिखे जाते थे और उन्हेंखेला भी जाता था। जहाँ पात्रों को कोई गरिमापूर्ण स्थान नहीं था। बड़े-बड़े सम्राट् और साम्राज्ञी पात्र नृत्य करते थे, जिनका लक्ष्य व्यावसायिक रंगमंच को बढ़ावा देकर मात्र पैसे कमाना ही लक्ष्य था।

इस काल मेंप्रसादजी ने ऐतिहासिक नाटक लिखें, जिनमेंअतीत के गौरवमयी काल को महिमामण्डित करने का लक्ष्य था। अत: प्रसादजी ने देश के गौरवमय अतीत को अपने नाटकों का विषय बनाया। प्रसाद ने अपने नाटकों में इतिहास प्रसिद्ध चरित्रों को उभारा है। इतिहास प्रसिद्ध पात्रों को नया जीवन प्रदान किया है, जिनमेंगौतम बुद्ध, चाणक्य, चन्द्र गुप्त, स्कन्द गुप्त, राज्यश्री, ध्रुवस्वामिनी जैसे पात्रों का उदात्त चित्रण किया है।

इन्हीं नाटकों के कुछ राष्ट्रीय बोध के चरित्रों का चित्रण इस आलेख के माध्यम में किया जा रहा है। चाणक्य– चन्द्रगुप्त नाटक मेंकहते हैं कि– 'आंभी के साथ चर्चा करते हुए कहते हैं– 'ब्राह्मण न किसी राज्य मेंरहता है और न के अन्न से पलता है। स्वराज्य मेंविचरता है और अमृत होकर जीता है।'[1]

चाणक्य इस कथन मेंकेवल मात्र ब्राह्मणत्व का वर्चस्व प्रतीत नही होता, किन्तु आचार्यत्व की महिमामण्डन भी परिलक्षित होता है। चन्द्र गुप्त चाणक्य कहते हैं– ''आर्य! संसारभर की नीति और शिक्षा अर्थ मैने यहीं समझा हैं कि आत्मसम्मान लिए मर मिटना ही दिव्य जीवन है।'[2]

उक्त वक्तव्य में राष्ट्र की अस्मिता के साथ अपने आत्म सम्मान के लिए मर मिटने की गौरवास्पद की चर्चा की है।

चाणक्य नन्द की सभा में मगध अमात्य राक्षस से आवेश मेंकहते हैं कि–'राष्ट्र शुभ–चिन्तक केवल ब्राह्मण ही कर सकते हैं। एक जीव की हत्या मेंडरने वाले तपस्वी बौद्ध, सिर पर मंडराने वाली विपत्तियों से, रक्त–समुद्र की आंधियों से, आर्यावर्त की रक्षा करने से असमर्थ प्रमाणित न होंगे।'[3]

डॉ. नगेन्द्र जयशंकर प्रसाद के नाटकों की विषय वस्तु को परिलक्षित कर कहते हैं कि–'चन्द्र गुप्त' सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसम विदेशियों से भारत के संघर्ष में अन्तत: भारत की विजय की थीम ही उठाई है।' प्रसाद के मन मेंभारत की पराधीनता को लेकर गहरी व्यथा थी।[4]

गुप्तकाल मेंविभिन्न राजवंशों ने भारत पर शासन किया था और ये सब भारत की दुर्दशा को ही सूचित करते थे। उस कालखण्ड मेंजैन और बौद्ध धर्म के प्रभाव के कारण, विशेष रूप से जैन तीर्थंकर पार्श्वनाथ के समय एक जीव दयामय धर्म प्रचारित किया गया। इससे राष्ट्र की शौर्य प्रतिमा अस्त होने लगी थी। अहिंसा को सर्वोपरि प्रचारित किया जाने लगा, जिससे वैदिक धर्म पर बहुत से आघात होने लगे थे, जिससे देश जर्जर होता गया। राष्ट्र धर्म की रक्षा करने वाली शूरवीर जाति का राष्ट्र निर्वीर्य होता गया। इस काल में राजपूत जाति ने क्षात्रधर्म के उन्ननय हेतु और विदेशी शक्तियों को पराभूत करने के लिए राजपूतों ने अहिंसा मार्ग को त्याग दिया तभी देश के शौर्य की रक्षा हो सकी।

चाणक्य नन्द को सावधान करते हुए कहते हैं– सावधान नंद! तुम्हारी धर्मान्धता से प्रेरित राजनीति की तरह चलेगी, उसम नंदवंश समूल उखड़ेगा।[5]

इस प्रकार चाणक्य ने ऐय्याश और क्रूर नंदवंश के समूल नष्ट कर चन्द्र गुप्त को अपनी प्रेरणा से शक्तिशाली साम्राज्य की नींव रखने म सफलता प्राप्त की।

जैन और बौद्धों के प्रभाव के परिणाम के राष्ट्र की शूरता का लोप होना राष्ट्र राष्ट्रवाद के लिए हानिकारक बताते हुए चाणक्य कहते हैं– 'आर्य क्रियाओं का लोप हो जाने से इन लोगों को वृषलत्व मिला, वस्तुत: ये क्षत्रिय हैं। बौद्धों के प्रभाव मेंआने से इनके श्रौत–संस्कार छूट गये है।'[6]

पोरस एक प्रणाली सम्राट् था। सिकन्दर के साथ युद्ध मेंपोरस ने भरपूर शौर्य का प्रदर्शन किया। यद्यपि वे पराजित हो गये लेकिन पोरस ने न तो :क्षात्रतेज को धूमिल किया और न विदेशियों के आगे नतमस्तक हुआ। सेल्यूकस के साथ पोरस के वार्तालाप मेंपोरस कहता है कि– 'उनसे कह दो आज रणभूमि मेंपर्वतेश्वर (पोरस) पर्वत के समान अचल है। जय–पराजय की चिंता नहीं। इन्हें बतला देना कि भारतीय लड़ना जानते है।'[7]

इस प्रकार पोरस ने अपने अभूतपूर्व पराक्रम पर किसी तरह की आँच नहीं आने दी और प्राणपण से अपने राष्ट्र की रक्षा हेतु तत्पर रहे।

चन्द्र गुप्त नाटक मेंअलका समवेत स्वर से राष्ट्र प्रेम का गीत जाती हैं, जो राष्ट्रभक्ति की प्रेरणा देती हैं।

'हिमाद्रि तुग शृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयं प्रभा समुज्ज्वला स्वतंत्रता पुकारती।'
000
सपूत मातृभूमि के रूको न शूर साहसी
अराति सैन्य सिन्धु मेंसुवाडवाग्नि से चलो
प्रवीर हो जयी बनो– बढ़े चले बढ़े चलो।[8]

गुप्तकाल भारत का स्वर्णयुग था। सन् 275 से 540 ई तक अतीत भारत के उत्कर्ष का मध्याह्न काल था। इस काल मेंगुप्त साम्राज्य मध्य एशिया से जावा सुमात्रा तक फैला था। स्कन्दगुप्त इस वंश का उज्ज्वल नक्षत्र था। स्कन्दगुप्त ने साम्राजय को एकछत्र चक्र वर्तिता पाया था। जयशंकर प्रसाद

* अतिथि शिक्षक, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

के इस नाटक के पात्र मगध का महानायक पर्णदत्त कहता है- गुप्त साम्राज्य की सेना म उसी गरूड़ बाज की छाया म पवित्र क्षात्र धर्म का पालन करते हुए उसी के मान के लिए मर मिटूँ- यह कामना है। [9]

मातृ गुप्त (कालिदास) ने स्कन्द गुप्त नाटक में हूणों के कारण गुप्त साम्राज्य की दुर्दशा का चित्रण करे हुए कहता है- 'इधर तो शक और हूणों की सम्मिलित सेना घोर आतंक फैला रही हैं, चारों ओर विप्लव का साम्राज्य है। निरीह भारतीयों की घोर दुर्दशा है।' [10]

इस मुद्गल के साथ संवाद मेंकालिदास गुप्त साम्राज्य को संकट काल से चिंतित दिखाई दे रहे है। अपनी मातृभूमि की दुर्दशा के प्रति वे व्याकुलता प्रदर्शित कर रहे हैं। स्कन्द गुप्त नाटक मेंमालव का राजा बन्धु वर्मा क्षत्रिय धर्म की प्रवृति पर प्रकाश डालते हुए राष्ट्र भक्ति की बात कहता है- भीम से वार्तालाप करते हुए- क्षत्रियों का कर्तव्य है- आर्त-त्राण परायण होना, विपद का हँसते हुए आलिंगल करना, विभीषिकाआं को भी मुस्कुराकर अवहेलना करना और... और विपन्नों के लिए, अपने धर्म के लिए, देश के लिए प्राण देना। [11]

मगध सम्राट् कुमार गुप्त के बड़े भाई गोविन्द्र गुप्त और स्कन्द गुप्त के वार्तालाप के प्रसंग में गोविन्द गुप्त और बन्धु वर्मा से स्कन्दगुप्त कहते है- 'आर्य! इस गुरुतर उत्तरदायित्व का सत्य से पालन कर सकूँ और आर्य राष्ट्र की रक्षा में सर्वस्व अर्पण कर सकूँ, आप लोग इसके लिए भगवान् से प्रार्थना कीजिए और आशीर्वाद दीजिए कि स्कन्द गुप्त अपने कर्तव्य से, स्वदेश सेवा से, कभी विचलित न हो।'[12]

स्कन्द गुप्त के इस सम्बोधन में अपने राष्ट्र प्रेम के प्रति अपने कर्तव्य पालन में दृढ़ हैं। अपने राष्ट्र के लिए अपना सर्वस्व तक अर्पण करने के लिए तत्पर है। राष्ट्रभक्ति का यह अनुपम उदाहरण है।

मालव का राजा जब स्कन्द गुप्त के साथ हूणों को पद दलित करते हुए निकल पड़ता है तब वह अपने वीरों को सम्बोधित करते हुए कहता है कि- 'असीम साहसी वीर सैनिकों! तुम्हारे शस्त्र ने बर्बर हूणों को बता दिया है कि रणविद्या केवल नृशंसता नहीं हैं, जिनके आतंक से आज विश्व विख्यात रूम-साम्राज्य पदाक्रान्त है। उन्हेंतुम्हारा लोहा मानना होगा और तुम्हारे पैरों के नीचे दबे हुए कण्ठ से उन्हेंस्वीकारना होगा कि भारतीय दर्जेय वीर हैं।' [13]

नाटक के अन्त में स्कन्द गुप्त महाबलाधिकृत भटार्क से सांत्वना देते हुए कहते हैं कि-'तुम वीर हो, इस समय देश को वीरों की आवश्यकता है।... रणभूमि में प्राण देकर जननी जन्मभूमि क उपकार करो।.. भटार्क! यदि कोई साथ न मिला तो साम्राज्य के लिए नहीं- जन्मभूमि के उद्धार के लिए मैंअकेला युद्ध करूंगा और तुम्हारी प्रतिज्ञा पूरी होगी।' [14]

इस प्रकार स्कन्दगुप्त भटार्क को आत्महत्या करने के लिए रोकता है और राष्ट्र सेवा के लिए युद्ध का सामना करने की प्रेरणा देता है।

इस प्रकार जय शंकर प्रसाद ने अपने नाटकों से राष्ट्रप्रेम और राष्ट्रभक्ति की प्रेरणा दी है। वस्तुत: जय शंकर प्रसादजी ने उस काल के स्वाधीनता संग्राम की भावना को ही मानो प्रज्ज्वलित करने का का कार्य किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. (जयशंकर प्रसाद-चन्द्र गुप्त, पृ.48)
2. जयशंकर प्रसाद- चंद्र गुप्त, पृ.50
3. वहीं, पृ.66
4. डॉ. नगेन्द्र- हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. 550
5. जय शंकर प्रसाद, चन्द्र गुप्त, पृ.67
6. जयशंकर प्रसाद- चन्द्र गुप्त, पृ.80
7. वही, पृ. 102
8. वही, पृ. 177
9. जय शंकर प्रसाद- स्कन्द गुप्त, पृ.9
10. वही, पृ. 37
11. वही पृ. 66
12. स्कन्द गुप्त- पृ. 74-75
13. स्कन्द गुप्त- पृ.96
14. स्कन्द गुप्त- पृ. 139

****

बलचनमा - नागार्जुन की वैचारिक क्रान्ति

डॉ. विजय लक्ष्मी राय *

शोध सारांश - मनुष्य चिंतनशील प्राणी है उसका मास्तिष्क कभी खाली नहीं रहता। मन में नित नये भावों का उदय होता रहता है। जब यही भाव स्थायी रूप धारण कर लेते है तो विचार के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। बीसवीं शताब्दी को दिशा देने वाले प्रतिनिधि साहित्यकार हैं नागार्जुन। वह देश एवं समाज की समस्याओं के प्रति चिंतन, यथार्थबोध और विचार-क्रान्ति की भूमिका लेकर साहित्य सृजन में प्रवृत्त हुये। 'बलचनमा' उपन्यास में बलचनमा सम्पूर्ण निम्न वर्ग का प्रतीक है। एक ऐसा भारतीय किसान जो अनेकानेक वर्षो से जमीदारों के शोषण और दमन का शिकार है। जमींदार कमजोर पुरूषों, स्त्रियों एवं बच्चों से उसी प्रकार काम लेता है जिस प्रकार पालतू पशुओं से लिया जाता है। लेखक का उद्देश्य बलचनमा के जीवन संघर्ष के चित्र द्वारा उस समाजवादी चेतना की और निर्देशित करना है जो साधना एवं स्वाधिकार वंचित किसान के अन्तर में अन्याय तथा अत्याचार के प्रति विद्रोह की भावना को जन्म दे रही है। बलचनमा भी एक ऐसे परिवार का सदस्य है जिसमें परिवार के सभी सदस्य मजदूर हैं।उसने बचपन से अपने परिवार को दयनीय अवस्था में देखा माँ, बहन और पिता पर जमींदार के अत्याचार की कोई सीमा नहीं। मन में विरोध ओर क्रोध का भाव बचपन से ही घर कर गया था। अत: बढती उम्र के साथ बलचनमा में सामती व्यवस्था के विरूद्ध क्रान्ति के विचार परिपक्व होते गये और उसने सामन्ती व्यवस्था के विरोध में क्रान्ति का बिगुल बजा दिया। बलचनमा के माध्यम से नागार्जुन जी की वैचारिक क्रान्ति की आभिव्यक्ति राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक सभी रूप में हुई है।

शब्द कुंजी - चिंतन, वैचारिक क्रान्ति, शोषण, अत्याचार सामंती व्यवस्था जमींदारी व्यवस्था।

प्रस्तावना - बलचनमा भारतीय किसान का एक प्रतिनिधि चरित्र है। उपन्यास में मिथिला अंचल के भूमिहीन किसान के संघर्ष, उत्पीड़न और नई चेतना की कहानी है। डॉ. सुषमा धवन के अनुसार -'लेखक का उद्देश्य बलचनमा के जीवन संघर्ष के चित्रण द्वारा उस समाजवादी चेतना की ओर निर्देश करना है जो साधनहीन एवं स्वाधिकार वंचित किसान के अन्तर में अन्याय तथा अत्याचार के प्रति विद्रोह की भावना को जन्म दे रही है।'[1] बलचनमा उपन्यास में नागार्जुन नें जमींदार के अत्याचारों से पीड़ित ग्राम्य समाज का चित्रण कर बलचनमा को उसके विरोध में खड़ा किया है। मालिक के बाग से किसुन भोग चुराने पर बलचनमा के पिता को खमेली से बाँध कर पीटने[2] मालिकाईन का बलचनमा को अपने पुत्र को रूलाने के आरोप में गालियाँ देना और आड़ देर से पहुंचाने पर क्रोध वश झाडू से मारना [3] आदि जगह नागार्जुन में यथार्थ की मजबूत पकड़ दिखाई देती है। यथार्थ के धरातल पर ही उपन्यास की बुनावट की गई है।

नागार्जुन नें अपने उपन्यासों में समाज की विभिन्न समस्याओं को रेखांकित किया है। नागार्जुन गॉधीवादी विचारधारा का विरोध करते हुये कांग्रेसी चरित्र के दोहरेपन को भी उजागर करते हैं। आम जनता का गॉधीवाद से मोहभंग तेजी से हो रहा था। गॉधी जी को कांग्रेस के द्वारा जो स्वराज मिलने जा रहा था, वह पूँजीपति, सामन्त-जमींदार और धनिकों का स्वराज्य होगा। गरीबों का स्वराज्य से कोई मतलब नहीं। क्योकि अमीर और गरीब के बीच आकाश-पाताल का अन्तर है। नागार्जुन की आस्था पूँजीवादी व्यवस्था में नहीं बल्कि समाजबाद व्यवस्था में है। उन्होंने निरन्तर साम्राज्यवादी शक्तियों, सामंत, जमींदार वर्ग और उससे समझौता करने वाली कांग्रेस सरकार का विरोध किया है। नागार्जुन का दृढ़ विश्वास है कि जब समाजवाद आयेगा - 'दरभंगा के महाराज हों, चाहे पटना के लाडसाहब, मुफ्त का खाना किसी को नहीं मिलेगा। सब काम करेंगे, सब दाम पावेंगे। 'आगे भी कहते हैं -'जिसका हर-फार उसकी धरती ! जिसका हुनर और जिसका हाथ, उसी का कल-कारखाना।' नागार्जुन जानते है कि सब समाज वाद आने पर ही संभव होगा। साम्राज्यवादियों को भगाकर यह काम- 'सोशलिस्ट पार्टी' करेगी। ऐसी उनकी आस्था।'[4] वास्तव में नागार्जुन जनवादी है और उनकी आस्था समाजवाद में है। वह शोषित जनता के प्रति भावुक रहे हैं। बलचनमा के विचार नागार्जुन के ही विचार है जो कि उपन्यास में व्यक्त हुये।

राजनैतिक विचार - नागार्जुन के उपन्यास 'बलचनमा' में मिथिला के ग्रामों, वहाँ के निवासियों की मन: स्थिति, प्राचीन रूढ़ियों, जमींदार, किसान संघर्ष और नयी राजनैतिक चेतना के साथ प्राकृतिक चित्रण का अंकन कुषलता से हुआ है। 'उन्होंने जहाँ सांमती जीवन, विधि एवं पूँजीवादी हथकण्डों पर प्रहार किया वहाँ कांग्रेस साम्राज्यवादी तथा अन्य राजनैतिक दलों के नेताओं की वैयक्तिक दुर्बलताओं का चित्रण भी किया है। ऐसा करते समय समाज के प्रति व्यक्ति के संकुचित स्वार्थो के प्रति उनकी दृष्टि व्यंग्यात्मक रही है। यही कारण है कि उनके उपन्यासों में सामाजिक राजनैतिक स्थिति के जीवंत उदाहरण मिलते है।'[5]

नागार्जुन ने गॉधीवाद एवं उनके सुधारवाद, अहिंसा, सत्याग्रह तथा सर्वोदयवादियों आदि का विरोध करते हुये विप्लव एवं क्रान्ति का आह्वान किया है। नागार्जुन के स्वयं के विचार है- 'शोषक और तानाशाही' शक्तियों के खिलाफ जनमत तैयार करना मेरा पहला काम है। संघर्ष के लिये जो प्रतीक मुखरित होते है उन्हें उभारता हूँ ताकि रग-रग में माहौल पैदा हो जाये। सर्वहारा जनता मेरे लिये आराध्य हैं।' नागार्जुन के बलचनमा में गांधीवाद के विरोध में विचार व्यक्त हुये है। वह जानते हैं कि गांधी जी के चेले कुछ नहीं करेंगे। 'फूलबाबू' के द्वारा कांग्रेसी दाव-पेंच की तरफ इशारा किया है। वह जानते

* प्राध्यापक, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर (स्वशासी) महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

हैं कि आज की राजनीति इतनी फूहड़ होती जा रही है कि उसे साधारण जन के दुख-दर्द से कोई मतलब नहीं अपने तुच्छ स्वार्थो के लिये राजनैतिक पार्टियां वोट की राजनीति लिये कभी हरिजनों पर अत्याचार तो कभी साम्प्रदायिक दंगो की ऑच में अपने-अपने हाथ सेंकते है। आम जनता से उन्हें कुछ लेना देना नहीं है।

सामाजिक विचार – उपन्यास बलचनमा में नागार्जुन ने सामाजिक यथार्थ को चित्रित किया है। समाज में व्याप्त कुरीतियों को उन्होने कभी नहीं स्वीकारा हमेशा विरोध किया है। समाज की गरीब व निम्न वर्ग के लोगों के प्रति आपने सहानुभुतिपूर्वक विचार व्यक्त किये है। 'समाज में व्याप्त बुराईयों, अंधविश्वासों, रूढ़ियों और दलित शोषित वर्ग के लोगों का उन्हें गहरा अनुभव है बिना लाग-लपेट के वे समाज में व्याप्त सभी बुराईयों की कड़े शब्दों में भर्त्सना करते है। उन्होंने अपने वास्तविक जीवन में भी दलित, शोषित वर्ग के लिये हमेशा संघर्ष किया था। क्योंकि निम्न वर्ग के अभावों को उन्होंने भी भोगा है। गॉव के गरीब और निम्न जातियों की सामाजिक और आर्थिक गिरावट को नजदीक से देखा है। इसीलिये जीवन और उनकी रचनाओं मे कही अलगाव नजर नहीं आता। वे जीवन के व्यापक अनुभवों से गुजरने के बाद ही सहित्य में उसकी अभिव्यक्ति करते है। मार्क्सवादी दृष्टि से सम्पन्न होने के कारण वह शोषण, अनाचार, अनैतिकता की तस्वींरें सुविधापूर्वक न केवल खींच सके हैं बल्कि उनके पीछे निहित विचारों की टीका करने में भी कामयाब हुये है।'[6] नागार्जुन आज के समाज के कवि है वे कल्पना लोक में विचरण नहीं करते बल्कि हकीकत की जमीन पर पैर जमाकर चलते है।

नागार्जुन पूंजीपतियों के छल- छद्म से भी पूरी तरफ वाकिफ है जिनके कारण निम्न वर्ग के लोग अभाव की चक्की में पिसते है। विजय बहादुर जी ने कहा है- 'नागार्जुन सर्वहारा की संस्कृति को जानते है। उनकी आधारभूत विशेषता है सामाजिक जीवन शैली। कुण्ठाहीन जीवन। पारस्परिक हित लाभ। पूंजीवादी जीवन शैली जहॉ शोषण और दमन पर आधारित है वही सर्वहारा की सामाजिकता का रहस्य है उनकी श्रम परायणता।नागार्जुन इसी श्रम परायण जीवन का चित्र हमारे सामने खींचता है और इसी दुनिया में रचता है। अनगढ़ किन्तु बेबाक चरित्र का प्रशंसक है। आधुनिक दुनिया की कूट बदमाषिया और चतुराई से उसे बेहद चिढ़ है। पर इसका इस्तेमाल इसी दुनिया के खिलाफ अगर कोई करे तो हमारे इस कवि का आशीष पा सकता है।'[7] इस तरह नागार्जुन ने उपन्यास में समाज के यथार्थ चित्र को व्यक्त किया है।

आर्थिक विचार –बलचनमा में नागार्जुन के आर्थिक विचार एकदम स्पष्ट है। उनके अनुसार धन का उन्मुक्त प्रदर्शन वे लोग करते है, जिनके पास धन, कालाबाजारी एवं शोषण द्वारा प्राप्त किया हुआ होता है पहले राजा एवं सामंतो द्वारा जनसाधारण का शोषण किया जाता था तो आज के युग में मिल-मालिकों द्वारा मजदूरों का एवं नेताओं द्वारा आम जनता का शोषण किया जाता है। बलचनमा में भी निम्न वर्ग इसी तरह के शोषण का षिकार है। बलचनमा अंतत: उन साजिषों को जान लेता है जो शोषण करने वाली है 'राधाबाबू जो पहले सामन्ती घराने के थे अब आश्रम में रहने पर भी वे अपनी विलासी आदतों से मुक्त नहीं हो पाते हैं। राधाबाबू राजा खानदान के थे। पढ़ाई करते समय स्टेट का पैसा फूंकते रहे और अब पब्लिक का चन्दा आश्रम में काफी आता था। कोई उनसे हिसाब लेने वाला नही था। जैसी मर्जी आई, वैसा खर्च किया।'

शोषक और शोषित के मध्य व्याप्त इस खाई का प्रमुख कारण आर्थिक है। 'बलचनमा' के अभावों और उसके आधार पर शोषित समस्याओं के आर्थिक पक्ष पर समाजवादी दृष्टि कोण से विचार प्रस्तुत करने में नागार्जुन को पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई है। उपन्यास में एक और सुखी सम्पन्न वर्ग है तो दूसरी और दुखी-विपन्न सर्वहारा वर्ग जो नित नई मुसीबतों से जूझता रहता है। बलचनमा की माँ को मालिक बारह रूपये का कर्ज देकर उम्रभर उसका ब्याज लगाता जाता है जिससे मूल धन कभी खत्म ही नहीं हो पाता है। बलचनमा सुनाता है मंझले मालिक सौ कसाई के एक कसाई थे। उनके बारह रूपये का कर्ज चुकाते-चुकाते हम थक गये, मूल ज्यों का त्यों खडा था। छोटी मलिकाईन दुअन्नी के हिसाब से साल भर की तनखा डेढ़ रूपया देती थी, उतने से क्या होता .....। यह जमींदारी वर्ग अब भी सामन्ती मूल्यों को बनाये रखना चाहता है। इसका चित्रण नागार्जुन ने बहुत अच्छी तरह से किया है।'[9]

उपसंहार – इस प्रकार बलचनमा उपन्यास में बलचनमा एक ऐसा किसान है जिसके माध्यम से नागार्जुन ने अपने विचारों से जमींदारो का विरोध करते हुये सामाजिक चेतना का बिगुल बजाया है। अपने विचारों की क्रान्ति से साधनहीन एवं सर्वाधिकार वंचित किसानों को अन्याय एवं अत्याचार के प्रति विरोध की भावना को जन्म दिया है। नागार्जुन के विचार अत्याधुनिक है उनका विश्वास धार्मिक अन्ध विश्वासों और पाखंडो पर से उठ गया हैं जातिगत भेदभाव और छुआछूत से उन्हें नफरत है। संकट की घड़ी में शोषण के प्रतिरोध में खड़ी जनता जाति-पॉति छुआछूत का भेद-भाव भुलाकर एक साथ लड़ती है। उस समय हिन्दु-मुस्लिम, ऊँच-नीच का कोई भाव नहीं रहता। सभी मिलकर संघर्ष करते है। अंत में यही कहूँगी नागार्जुन एक सचेत रचनाकार थे जो निरन्तर निम्न वर्ग के साथ उनके संघर्ष में हिस्सा लेते रहे। रचनाकार और व्यक्ति दोनों स्तर पर उनमें कहीं भी द्वेतता नहीं है। वह हमेशा पीढ़ित, शोषित जनता के पक्षधर रहे हैं रचना में भी जीवन में भी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी उपन्यास -डॉ. सुषमा धवन, पृष्ठ -305
2. बलचनमा - नागार्जुन, पृष्ठ -3
3. बलचनमा - नागार्जुन - पृष्ठ -81
4. नागार्जुन का कथा साहित्य - तेजसिंह, पृष्ठ 25-26
5. हिन्दी के राजनैतिक उपन्यासों का अनुशीलन - डॉ. ब्रजभूषण सिंह आदर्श पृष्ठ - 423
6. नागार्जुन का रचना संसार - विजय बहादुर सिंह, पृष्ठ -117
7. नागार्जुन का रचना संसार- विजय बहादुर सिंह, पृष्ठ - 49
8. बलचनमा - नागार्जुन, पृष्ठ -109
9. नागार्जुन का कथा साहित्य - तेजसिंह - पृष्ठ -81

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

नागार्जुन के उपन्यास में नारी विमर्श (कुम्भीपाक उपन्यास के विशेष संदर्भ में)

देवेन्द्र सिंह ठाकुर * डॉ. मंजुला जोशी **

प्रस्तावना – नागार्जुन एकमात्र ऐसे साहित्यकार है जिन्होंने अपने उपन्यासों में सामाजिक सरोकार को प्रमुखता से चित्रित किया है। वे ऐसे उपन्यासकार थे जिन्होंने सर्वहारा वर्ग और विशेषकर नारी वर्ग को आधार बनाकर अपनी लेखनी से इन शोषित वर्ग की आवाज सभ्य कहे जाने वाले समाज तक पहुँचाने का प्रयास किया। बाबा नागार्जुन ने जब समाज में इस प्रकार की लैंगिक असमानता को देखा तो आप उपन्यास साहित्य के माध्यम से नारी वर्ग की आवाज बनकर उभरें तथा ऐसे उपन्यासों की रचना की जिसके नारी पात्र सशक्त, आत्मविश्वासी, साहसी, निडर और निर्भय रहकर समाज की सड़ी–गली परम्पराओं का मुँहतोड़ जवाब दे सके। नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में यथार्थवादी शैली, सामाजिक यथार्थवाद का प्रभावशाली चित्रण किया है। नागार्जुन के सभी उपन्यास सामाजिक विषयो पर आधारित हैं। उनके उपन्यासों में आए सभी नारी पात्र लोक जीवन के विभिन्न सच्चाईयों को प्रमाणित करते हैं। आपने नारी पात्रों के माध्यम से समाज के राजनीतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक सच को उजागर करने का प्रयास किया है। नागार्जुन ने अपने उपन्यास कुंभीपाक में नारी के विविध रूपों का प्रभावी चित्रण किया है। आपने नारी जीवन से जुड़ी अनेक समस्याओं जैसे जमींदारों के अत्याचार, अनमेल विवाह, सामाजिक बुराईयों, अंधविश्वास, स्त्री–पुरूष में भेद, ढोंग–पाखण्ड, बेतुके रीति–रिवाज को पाठक के समक्ष उठाया है।

नागार्जुन एक ऐसे साहित्यकार है जिनके साहित्य में हमें जनवादी, प्रगतिवादी तथा समाजवादी मूल्य देखने को मिलते है। आपने अपने उपन्यासों में नारी पात्रों के संघर्ष को रेखांकित करने का प्रयास किया है।

आपने कुंभीपाक उपन्यास लिखने का मन सन् 1957 में ही बना लिया था, जब आप पटना की भिखना पहाड़ी के एक मकान में रहते थे। आपने उसी स्थान एवं वातावरण को आधार बनाकर कुंभीपाक लिखना आरंभ किया और सन् 1958 में कलकत्ता में इसे पूरा कर दिया। सन् 1960 में यह उपन्यास प्रकाशित हुआ था। सन् 1972 में चम्पा नाम से इसे पॉकेट बुक संस्करण दिल्ली से प्रकाशित किया गया, चम्पा इस उपन्यास की एक प्रमुख पात्र है, शायद प्रकाशक व्यावसायिक कारणों से इसे चम्पा नाम से प्रकाशित किया होगा। कुंभीपाक उपन्यास के नारी पात्र दो भागों में विभाजित है जिसमें पहला पारम्परिक सामाजिक–सांस्कृतिक रूढ़ियों में पिसता हुआ तथा दूसरा सामाजिक कठिनाईयों से जुझता हुआ। नागार्जुन ने अपने उपन्यासों के माध्यम से बताया है कि सामाजिक विसंगतियों, कुरीतियों का सबसे पहला शिकार नारी को ही बनाया जाता हैं क्योंकि पुरूष प्रधान समाज में स्त्री को दोयम दर्जे का माना गया है। आपने ये भी बताने का प्रयास किया है नारी चाहे उच्च वर्ग से हो या निम्न वर्ग से, सभी को सामाजिक और पारिवारिक समस्याओं का सामना करना पडता है और उनमें से कुछ नारी पात्र नियति मानकर हार जाती है तथा कुछ डटकर मुकाबला करके अपनी राह खुद बनाती है। इस तरह नागार्जुन ने सामाजिक कुरीतियों, विसंगतियों और बुराईयों पर करारे व्यंग्य का प्रहार किया है। नागार्जुन सदैव सर्वहारा वर्ग के प़ा में रहे। अभिजात्य वर्ग की मनोवृत्ति से वे पूर्णत परिचित थे और जानते थे कि इनकी करनी और कथनी में कितना अंतर होता है।

नागार्जुन का उपन्यास कुम्भीपाक – नागार्जुन की प्रगतिशील दृष्टि अपने उपन्यासों में निम्न वर्ग की स्त्रियों को प्रतिष्ठा प्रदान करती है तथा उच्चवर्गीय स्त्रियों पर करारा व्यंग्य करती है।

कुम्भीपाक एक सामाजिक उपन्यास है जिसमें हमें जनवादी, प्रगतिवादी मूल्य भी देखने को मिलते है। कुंभीपाक उपन्यास में इंदिरा, कुंती, बुआ, मामी, नेपालिन, रंजना, निर्मला आदि प्रमुख महिला पात्र है, जिसमें निर्मला उपन्यास की नायिका है, जो एक निडर, निर्भीक, साहसी, स्वाभिमानी महिला है जबकि चंपा और भुवन शोषित नारी वर्ग की प्रतिनिधित्व कर रही है। निर्मला समाज की दकियानूसी परंपराओं का विरोध करके अपनी राह स्वयं बनाती है तथा दूसरी सताई हुई स्त्रियों का मार्गदर्शन करके व्याभिचारी पुरूषों से मुक्त कराती है। कुम्भीपाक के माध्यम से देह व्यापार के दलदल में धकेल दी गई स्त्रियों की मजबूरियों को उपन्यासकार ने उजागर करते हुए बताने का प्रयास किया है कि किस प्रकार गरीब स्त्रियों की लाचारी का फायदा उठाकर उन्हें ऐसे घिनौने कार्य में लगा दिया जाता है जहाँ उनका अपना कोई वजूद नहीं होता है वे एक भोग की वस्तु, एक कठपुतली, एक मोम की गुड़िया बनकर रह जाती है। कुंभीपाक में हमें नारी संघर्ष के निम्नांकित रूप दिखाई देते है–

नायिका के माध्यम से मानवीय मूल्यों के प्रति आस्थवादी दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया है। उपन्यास की नायिका निर्मला के व्यक्तित्व और कृतित्व में मानवता, उदारता, प्रेम, दया, ममता, परोपकार आदि गुण झलकते हैं। आज भी समाज में हमारे बीच कुछ ऐसे लोग मौजूद हैं जो मानवीय मूल्यों को बनाये रखने, बचाये रखने का प्रयास कर रहे हैं। कुंभीपाक उपन्यास की नायिका निर्मला जो उपन्यास में कंपाउण्डर की बीबी के नाम से जानी जाती है, मानवीय मूल्यों का प्रतीक बनकर उभरी है। वह हर समय दुखी, पीड़ित, बेबस, लाचार, शोषित स्त्रियों के लिए संघर्ष करने लिए तैयार रहती है।

नागार्जुन ने निर्मला के माध्यम से सामाजिक संघर्ष को व्यापक ढंग से प्रस्तुत किया। निर्मला एक बुद्धिमान, साहसी, सषक्त, निडर महिला है जो उपन्यास की नारी पात्रों को अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों से लड़ने के

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, धरमपुरी, जिला-धार (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (हिन्दी) श.भी.ना.शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

लिए प्रेरित करती है तथा स्वयं भी उनके संघर्ष में भाग लेती है। इसमें नारी को जीवन के विविध क्षेत्रों में अपने अधिकारों के लिए समाज से संघर्ष करते हुए और अपने अस्तित्व के लिए लड़ते हुए दिखाया गया है।

आपने कुंभीपाक उपन्यास के माध्यम से समाज का असली चेहरा प्रकट किया है। उन्होंने निडर होकर समाज के असली रूप को पाठक के समक्ष प्रस्तुत करने का प्रयास किया है तथा कुंभीपाक उपन्यास के जरिये सभ्य समाज के छुपे, विकृत चेहरे को बेनकाब कर दिया है। आपके इस उपन्यास में तथाकथित सभ्य समाज का घिनौना चेहरा देखने को मिलता है। कुम्भीपाक उपन्यास की नायिका निर्मला के माध्यम से समाज में व्याप्त व्याभिचार, भ्रष्टाचार के प्रति विरोध प्रकट किया है। इसमें बताया गया है कि समाज में किस कदर लोगो में मन में काम–वासना भरी हुई है कि उन्हें स्त्री का मन नहीं सिर्फ तन ही दिखाई देता है। उपन्यास में चंपा और इंदिरा के द्वारा अत्याचारों का विरोध किया जाता है तो उनकी पिटाई करके चुप करा दिया जाता था। वे चाह कर भी कुछ नहीं कर पाती है ऐसे समय में निर्मला उन्हें देह व्यापार के दलदल से बाहर निकालकर एक अच्छा जीवन जीने के लिए प्रेरित करती है।

नागार्जुन ने कुंभीपाक में सभ्य समाज के काले चेहरे को बेनकाब करते हुए शोषित वर्ग परेशानियों, सामाजिक, आर्थिक, पारिवारिक समस्याओं का मर्मस्पर्शी चित्रण किया है। उनका मानना है इन सबका कारण हमारी सामाजिक व्यवस्था है जिसने जाति–पांति, ऊँच–नीच का भेदभाव पैदा करके समाज को बाँट दिया है। आपने कुंभीपाक की नायिका के माध्यम से भारतीय समाज के सबसे घिनौने पक्ष को निडरता के साथ उजागर किया है। इसमें आपने देह व्यापार में धकेल दी गई निम्न, गरीब वर्ग की स्त्रियों के षोषण का चित्रण किया है। उच्च वर्ग अपने पैसों और घमण्ड के मद में व्याभिचार में लिप्त रहता है तथा महिलाओं की मजबूरी का फायदा उठाकर उनका शोषण करता है।

कुंभीपाक उपन्यास में स्त्रियों को भोग की वस्तु के रूप में चित्रित करते हुए लैंगिक असमानता की ओर संकेत किया गया है। पुरूष पात्रों में दिवाकर को छोड़ दिया जाये तो बाकी सभी पुरूष पात्र किसी न किसी रूप में नारी का षोषण करते हुए दिखाई देते है तथा अत्याचारों का विरोध करने वाली स्त्रियों पर कई तरह के लांछन लगाकर उन्हें बदनाम करने की कोशिश करते है। धनी वर्ग अपने पैसों और पद के बल पर निम्न गरीब वर्ग की लाचार, बेबस स्त्रियों को अपना शिकार बनाकर उन्हें जीते जी नरक से बदतर जीवन जीने के लिए मजबूर कर देते है। उपन्यास में भी इंदिरा और चंपा को गरीबी के कारण समाज के ठेकेदारों की हवस शिकार बनना पड़ता है तथा कुछ लोग उनकी मजबूरी की फायदा उठाकर उन्हें देह व्यापार नरक में धकेल देते है। कुंभीपाक उपन्यास में सभ्य समाज में व्याप्त यौनाचार का चित्रण किया गया है तथा ये बताने का प्रयास किया गया है कि जो हमें दिखाई देता है वो सच नहीं होता है। तथाकथित सभ्य समाज में यौनाचार इस कदर हावी हो गया है कि व्यक्ति लाचार मजलूम औरतों को अपना शिकार बनाकर उनका शोषण करता रहता है तथा उनके जीवन को नरक बना देता है। हिन्दू समाज में व्याप्त कुरीतियों पर व्यंग्य करते हुए कहा गया है कि हिन्दुओं के माने हुए नरकों में से एक नरक 'कुम्भीपाक' भी है, जहाँ मरने के बाद ही मनुष्य जा सकता है। किन्तु समाज में व्याप्त व्याभिचार के कारण नारी जाति नारकीय जीवन भोगने को मजूबर है। पुरूषों द्वारा अपने मनोरंजन का साधन बनाकर छोड़ी गई स्त्रियाँ तिरस्कृत जीवन जीने के लिये अभिशप्त हैं। इस उपन्यास में समाज में फैली भोग विलास की प्रवृत्ति की ओर संकेत किया गया है। कुंभीपाक उपन्यास के माध्यम से नागार्जुन ने विभिन्न सामाजिक समस्याओं को बताने का प्रयास किया है जैसे लड़की का जन्म होना, स्त्री शिक्षा का विरोध, स्त्रियों को परदे में रखना, बेवजह शक करना, स्त्रियों को घर की चारदीवारी में रखना, लैंगिक असमानता, आर्थिक असमानता, अधिकारों से वंचित करना, भोग की वस्तु समझना, परम्पराओं के नाम पर कुरीतियों को थोपना आदि। ये समस्याएँ नारी जाति को आगे बढ़ने से रोकती है और समाज भी परम्पराओं के नाम पर नारी के पैरों में बेड़िया डाल देता है ताकि नारी आगे बढ़कर अपने अधिकारों की मांग ना कर सके।

निष्कर्ष– कुंभीपाक उपन्यास का विष्लेषण करने पर हमने पाया कि नागार्जुन ने अपने उपन्यास के माध्यम से नारी के दो रूपों का मर्मस्पर्षी चित्रण किया है। नारी का पहला रूप निडर, निर्भीक और साहसी है जो पुरूषप्रधान समाज से लोहा लेते हुए कमजोर वर्ग को समाज की मुख्यधारा से जोड़ने का प्रयास करती है तथा नारी का दूसरा रूप जो समाज की कुरीतियों, व्याभिचारों को अपनी नियति मानकर जीवन जीने के लिए विवश होती है। उपन्यासकार ने नायिका निर्मला के माध्यम से सशक्त पात्र को गढ़ा है। निर्मला एक गृहिणी है, जो अपने पारिवारिक दायित्वों का भलिभाँति निर्वाह करते हुए चंपा और इंदिरा जैसी समाज की सताई हुई महिलाओं को देह व्यापार के नरक से निकाल कर एक अच्छा जीवन जीने के लिए प्रेरित करके आम गृहणियों के लिए एक आदर्श स्थापित करती है।

इस प्रकार नागार्जुन ने कुंभीपाक के माध्यम से बताने का प्रयास किया है कि नारी क्या कुछ नहीं कर सकती यदि वो एक बार ठान ले तो कुछ भी करना मुश्किल नही। उनके उपन्यासों की नारी पात्र परिवर्तन में विश्वास रखती है क्योंकि वे जानती है परिवर्तन प्रकृति का नियम है। ये नारी पात्र बुद्धिमान, साहसी, चतुर, आत्मविश्वासी, निडर हैं, जो अंधविश्वासों, व्याभिचारों, सामाजिक कुरीतियों तथा बुराईयो के प्रति संघर्ष करती हुई दिखाई देती हैं। ये नारी पात्र अपनी असीम करूणा से पाठक के मन में असीम संवेदना उत्पन्न कर देती हैं।

इस उपन्यास को पढ़ते ही मन मानवीय संवेदनाओं से भर उठता है। साथ ही हमारा मन निर्मला जैसी साहसी पात्रों के समक्ष नतमस्तक हो जाता है। आज समाज को ऐसे ही साहसी लोगों की जरूरत है जो एक अच्छे समाज का निर्माण कर सके। जिससे भारतीय नारी प्रतिष्ठा, सम्मान और गौरवपूर्ण जीवन जी सके। सारा गगन, सारी जमीं, सारा जहाँ उसका अपना हो, जहाँ वह बेख़ौफ होकर जी सके। उसकी साँसों पर, बातों पर, जीवन पर, यौवन पर किसी का पहरा न हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. नागार्जुन – नागार्जुन रचनावली – राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. डॉ. प्रणव– नागार्जुन की सामाजिक चेतना – राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. नागार्जुन– कुंभीपाक – राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

भारतीय शिक्षण प्रणाली में ऋग्वेद का महत्व

डॉ. कोयल विश्वास *

प्रस्तावना – भारत की शिक्षा प्रणाली विश्व में उत्तम है इस बात में कोई संदेह नहीं है। विश्व स्तर पर भारतीय विद्यार्थियों ने सदैव यह सिद्ध किया है कि उनकी मेधा, विवेक एवं बुद्धिबल उनके देश की सांस्कृतिक, नैसर्गिक एवं दार्शनिक निधि से प्राप्त हुआ हैं, भारतीय शिक्षा प्रणाली वेदों की अमानत है। चार वेदों के योग से बनी नीति पर शिक्षा प्रणाली स्थित है। इस प्राचीन पद्धति का अवलोकन करना आवश्यक है।

वेद –

ऋक – गीतों का संकलन

यजु – यज्ञ विधि से संबंधित

साम – विशुद्ध कर्मकाण्ड से संबंधित

अथर्व – मायिक इंद्रजालिय धर्म से संबंधित

प्रत्येक वेद के तीन भाग है, जिन्हें मंत्र संहिता, ब्राहमण और उपनिषद् के नामों से जाना जाता है। मंत्र अथवा ऋचाओं या सूक्तों के संग्रह को संहिता कहते है। ब्राहमणों में उपदेश एवं धार्मिक कर्त्तव्यों का विधान है। उपनिषद् एवं आरण्यक ब्राहमणों के अंतिम भाग है, जिनमें दार्शनिक समस्याओं के बारे में वर्णन किया गया है। उपनिषदों में भारत की आत्मा बसी है। इसमें हमें देश की परवर्ती विचारधारा की कुल मानसिक पृष्ठभूमि दिखाई देती है। वेदों के अंतर्गत उपनिषदों की रचना हुई है।

वेद	संबंधित उपनिषद्
ऋग्वेद	ऐतरेय और कोशतकि
सामवेद	केन और छान्दोग्य
यजुर्वेद	ईश, तैत्तिरीय और बृहदारण्यक
अथर्ववेद	प्रश्न और मुण्डक

ब्राहमण ग्रंथों एवं उपनिषदों के बीच आरण्यकों का स्थान है। आरण्यक का संबंध अरण्य से है। यह ग्रंथ उन पुरुषों के चिंतन और मनन का संकलन है जो वन में रहते थे। आरण्यक एक प्रकार से ब्राहमणों में स्थित कर्मकाण्डों एवं उपनिषदों के दार्शनिक ज्ञान के मध्यवर्ती संक्रमणकाल की श्रृंखला के रुप में विद्यमान हैं। ब्राहमण ग्रंथों में उन कर्मकाण्डों का वर्णन है जिनका विधान गृहस्थों के लिये था। गृहस्थाश्रम के पश्चात् जब वानप्रस्थ का समय आता था तब विधानों में भी परिवर्तन हुआ करता था। सूक्तों के स्वरुप का धर्म, ब्राहमण ग्रंथों के नियमबद्ध धर्म एवं उपनिषदों का भावनामय धर्म अत्यन्त निकट है। इन तीनों का विकास अलग अलग कालों में भले ही हुआ हो आगे चलकर ये तीनों विभाग साथ साथ विद्यमान रहे है।

वैदिक सूक्तों का अध्ययन – वेदों में भारतखण्ड का वास्तविक इतिहास स्थित है। यदि भारतीय विचारधारा से परिचित होने का उद्देश्य है तो वेदों को जानना अनिवार्य हैं। डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार वेद की मूल संहिताएँ, जो आधुनिक युग में उपलब्ध हैं, उस काल की बौद्धिक स्फूर्ति से प्राप्त हुई है जबकि आर्य लोग अपनी वास्तविक मातृभूमि को छोड़कर इस देश में आकर बसे थे। उनके संस्कार, विश्वास, भाव आदि ने भारतीय समाज को प्रभावित किया जिससे देश का विकास संभव हुआ।

मैक्समूलर ने संहिता काल को दो भागों में विभक्त किया हैं – छन्द काल और मंत्रों का समय।

पहले भाग में सूक्तों की रचना हुई। वह एक रचनात्मक काल रहा है, जिसका विशेष स्वरुप वास्तविक काव्य था। मनुष्य के मनोभाव, गीतों के रुप में प्रस्फुटित होती थी। यज्ञों के स्थान पर केवल प्रार्थना द्धारा ही देवताओं को भेट अर्पित किया जाता था। दूसरा काल संकलन काल था। इस काल में सूक्तों का संकलन क्रमबद्ध रुप में हुआ। इस काल में यज्ञपरक विचारों का भी विकास हुआ। माना जाता है कि सूक्तों का निर्माण एवं संकलन लगभग 500 ई. पूर्व हुआ।

ऋग्वेद में 1017 ऋचाएँ या सूक्त है जो कुल 10600 स्तवकों में है। ये आठ अष्टकों में विभक्त हैं। प्रत्येक में आठ अध्याय हैं जिनका आगे जाकर फिर वर्ग रुप में लघु विभाग किया गया है। कभी कभी ये दस मण्डलों (चक्रों) में भी विभक्त किये गये है। प्रथम मण्डल में 191 सूक्त है और 15 भिन्न भिन्न ऋषि जैसे गौतम, कण्व आदि इसके रचयिता माने जाते है।

वेदों की शिक्षा एवं दार्शनिकता – कई मनीषियों ने वेदों का गहन अध्ययन करने के पश्चात् अपना मत प्रस्तुत किया है। फ्लीडर ने ऋग्वेद की प्रार्थना का प्रांरभिक रुप, निश्छल प्रार्थना का रुप माना हैं। पिक्टेट का मत है कि ऋग्वेद के आर्य एकेश्वरवादी थे। राममोहन राय की सम्मति में वैदिक देवता परमब्रह्म के भिन्न भिन्न गुणों के आलंकारिक प्रतिनिधि के रुप में है। अर्थपूर्ण रुप में ऋग्वेद सरल एवं निराडम्बर धर्म का प्रतिपादक है। महान भारतीय विद्धान योगी श्री अरविंद की सम्मति में वेद रहस्यमय सिद्धांतों एवं गूढ़ दार्शनिक ज्ञान से भरे हुए है। उनके मत में सूक्तों में जिन देवताओं का वर्णन हुआ है। उनके साथ मनौवैज्ञानिक व्यापारों के संकेत है। सूर्य मेधा का संकेत है, अग्नि इच्छा की और सोम मनोभावों का संकेत है। उनके अनुसार वेद एक रहस्यपूर्ण धर्म है जिसकी तुलना प्राचीन ग्रीस के आरफिक और इल्यूसिनियन संप्रदायों के साथ की जा सकती है। डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार रहस्यवादी योगियों का एक मुख्य सिद्धांत यह था कि आत्मज्ञान एवं देवताओं के विषय में सत्यज्ञान को पवित्र समझकर उसे गुप्त रखा जाए। वे मानते थे कि इस प्रकार का ज्ञान साधारण मनुष्य के लिये अनर्थकारी हो सकता है एवं लोग उस ज्ञान का दुरुपयोग भी कर सकते है। इसलिए वे बाहय पूजा को को क्रियात्मक रुप में बनाए रखने के पक्ष में थे, दीक्षित व्यक्ति के लिये आंतरिक नियंत्रण का विधान बनाया गया था। वे अपनी भाषा को ऐसे शब्दों एवं

* प्राध्यापक (हिन्दी) माउंट कार्मल कॉलेज, स्वायत्ता, बैंगलूरू (कर्नाटक) भारत

मूर्तियों का रुप देते थे जो चुने हुए वरिष्ठ व्यक्तियों के लिये उतना ही धार्मिक अर्थ रखता था और साधारण पूजकों के लिये एक ठोस मूर्तरुप अर्थ रखता था। वैदिक सूक्तों की भावना एवं रचना इन्हीं सिद्धांतों को लेकर हुई है।

ऋग्वेद में हमें पुरातन कवि एवं उनकी भावनाओं का एक ऐसा चित्र प्राप्त होता है जिससे विदित होता है, कि वे इन्द्रियों एवं बाह्य जगत के विषय में उठनेवाली अदम्य आंकाक्षाओं से मुक्ति पाना चाहते थे। इसलिये ऋग्वेद के सूक्त कई अंशों में दार्शनिक है और वे संसार के रहस्य की व्याख्या स्वतंत्र तर्क द्धारा करने का प्रयत्न करते थे। इन सूक्तों में बुद्धि का प्रकाश भी सर्वत्र एक जैसा नहीं है। परंतु जीवन का जो स्वरुप वैदिक सूक्तों के काव्य एवं कर्मकाण्ड में प्रतिबिंबित होता है वह शिक्षाप्रद अवश्य है।

शिक्षा शास्त्र में जिस प्रकार काल्पनिक इतिहास पुरातत्व विज्ञान, रसविद्या-रसायनशास्त्र और फलित एवं गणित ज्योतिष आदि विज्ञानों से पहले आता है, इसी प्रकार पुराणविद्या और कविता, दर्शनशास्त्र एवं भौतिक विज्ञान से पहले आती है।

दर्शनशास्त्र संबंधी मानसिक प्रेरणा सबसे पहले पुराणविद्या और धर्म के रुप में अभिव्यक्त होता हैं। परमसत्ता के बारे में जो भी प्रश्न मानव मन में जागृत होते है उन सबका उत्तर इन्हीं पुराणशास्त्रों और धर्मग्रंथों से मिलता हैं।

ऋग्वेद के सूक्तों को चार शीर्षकों के अंतर्गत विभाजित किया जा सकता हैं -

1. **परमार्थविद्या या ब्रह्मज्ञान -** वैदिक सूक्तों में सबसे विस्मयकारी तत्व है उनका बहुदेववादी स्वरुप। अनेक देवताओं एवं देवीयों का नाम व उनकी पूजा का विधान इनमें मिलता हैं।
2. **विश्वविज्ञान या सृष्टि विज्ञान -** ऋग्वेद के मण्डल 10, सूक्त 72 में संसार के प्रारंभिक आधार का वर्णन हुआ है। सृष्टि के निर्माण के बारे में अनेक कल्पनाएं भी की गई है।
3. **नीतिशास्त्र -** इस अंग में कानून पर बल दिया गया है। जहाँ नियम है वहाँ व्यवस्था है, अन्याय अस्थायी एवं आंशिक रुप में स्थित है। स्थिरता एवं संगति धार्मिक जीवन का मुख्य लक्ष्य है।
4. **परलोकविज्ञान या परलोक शास्त्र -** वैदिक आर्यो को इस बात का ज्ञान था कि मृत्यु ही वस्तुओं का अंत नहीं है। एक बार जो उत्पन्न हुआ है वह एकाएक समाप्त नहीं हो सकता। पितरों एवं देवों के मार्ग के विषय में एक वर्णन ऋग्वेद के 10वें मण्डल की 88, 15वीं ऋचा में पाया जाता है। वैदिक सिद्धांतों के अनुसार मनुष्य के तीन जन्म है - पहला बच्चें के रुप में, दूसरा धार्मिक शिक्षा से, तीसरा मृत्यु के पश्चात का जन्म।

उपसहार - वेदों में लिखे गये सूक्तों एवं उनसे प्राप्त ज्ञान का भण्डार भारत की अपनी निधि हैं। ज्ञान की इस अपार धारा में वह सभी तत्व एवं विषय प्रस्तुत है जो शिक्षा की सामग्री कहलाती है। सदियों पूर्व हमारें पूर्वजों ने जिस मेधा बल से इन वेदों में ज्ञान रुपी प्रकाश को समाया है, उससे आज का युग एवं समाज आलोकित हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. राधाकृष्णन, भारतीय दर्शन, प्रकाशक-राजपाल एण्ड सन्ज, नई दिल्ली-1966

****

महिलाओं के विकास के बढते कदम में महिला पत्रकारिता की अहम भूमिका

डॉ. एम.चंद्रशेखर *

प्रस्तावना - पत्रकारिता जैसे व्यापक और विशद विषय में महिला पत्रकारिता की अवधारणा भले ही कुछ अटपटी लगती है, किंतु नारी स्वातंर्त्य और समानता के इस युग में भी आधी दुनिया से जुड़े ऐसे अनेक पहलू हैं जिनके महत्तव को देखते हुए महिला पत्रकारिता की अलग विधा की आवश्यकता महसूस होती है। यह सच है कि वर्तमान परिदृष्य में महिलाओं के विकास के बढते कदम में महिला पत्रकारिता अपनी अहम भूमिका निभा रहा है।

पुरुष और नारी के भेद का सबसे बड़ा आधार तो उनकी अलग शारीरिक संरचना है। प्रकृति ने पुरूष को एक सांचे में ढाला है तो नारी को उससे अलग। एक समय था जब समाज पुरूष प्रधान हुआ था। पुरूष प्रधान समाज ने अपनी सुविधानुसार नारी को अबला बनाकर घर की चारदीवारी तक सीमित कर दिया था। विकास के निरंतर तेज गति से बदलते दौर ने महिलाओं को प्रगति का समान अवसर दिया और महिलाओं ने अपनी प्रतिभा और लगन के बलबूते पर समाज के हर क्षेत्र में अपनी आमिट छाप छोड़ने का जो सिलसिला शुरू किया वह लगातार जारी है। आज के दौर में कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं जहाँ महिलाओं की सशक्त उपस्थिति नहीं महसूस की जा रही हो। वर्तमान दौर में राजनीति, प्रशासन, सेना, शिक्षण, चिकित्सा, विज्ञान, तकनीक, उद्योग, व्यापार, समाजसेवा आदि प्रमुख क्षेत्रों में महिलाओं ने अपनी प्रतिभा और क्षमता के आधार पर अपनी राह खुद बनाई है। कई क्षेत्रों में तो कड़ी स्पर्धा और कठिन चुनौती के बावजूद महिलाओं ने अपना शीर्ष मुकाम बनाया है। भारत की इंदिरा नूई, नैनालाल किद्वाई, चंदा कोचर आदि महिलाओं ने सफलता के जिस शिखर को छुआ है वे सभी कड़ी स्पर्धावाले क्षेत्र माने जाते हैं।

वस्तुत: तेजी से बदलते सामाजिक परिवेश तथा महिला पुरूष समानता के इस दौर में महिलाएँ अब घर की दहलीज लाँधकर बाहर आ चुकी हैं। प्राय: हर क्षेत्र में महिलाओं की उपस्थिति और भागीदारी नजर आती है। शिक्षा ने महिलाओं को अपने आधिकारों के प्रति जागरूक बनाया है। अब महिलायें भी अपने करियर के प्रति सचेत हैं। महिला जागरण की इस नवचेतना के साथ-साथ महिलाओं के प्रति अत्याचार और अपराध के मामले भी बढ़े हैं। महिलाओं की सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए बहुत सारे कानून बने हैं और आवश्यकतानुसार उसमें समय-समय पर संशोधन भी किये जाते रहे हैं। महिलाओं को सामाजिक सुरक्षा दिलाने में महिला पत्रकारिता की अहम भूमिका रही है। महिला पत्रकारिता की आज अलग से जरूरत ही इसलिए है कि उसमें महिलाओं से जुड़े हर पहलू पर गौर किया जाए और महिलाओं के सर्वागीण विकास में यह महत्तवपूर्ण भूमिका निभा सके। महिला पत्रकारिता की सार्थकता महिला सशक्तिकरण के उद्देश्य से जुड़ी है।

कुछ प्रमुख महिला पत्रकार: मृणाल पांडे, विमला पाटील, बरखा दत्त, सीमा मुस्तफा, तवलीन सिंह, मीनल बहोल, सत्या शरण, दीना वकील, सुनीता ऐरन, कुमुद संघवी चावरे, स्वेता सिंह, पूर्णिमा मिश्रा, मीमांसा मल्लिक, अंजना ओम कश्यप, नेहा बाथम, मिनाक्षी कंडवाल आदि। आज भारत में पत्रकारिता के क्षेत्र में महिला पत्रकारों के आने से देश के हर लड़की को अपने जीवन में आगे बढ़ने की प्रेरणा मिल रही है।

आज वह कौन-सा क्षेत्र है जहाँ नारी कार्यरत नहीं है। आकाश की ऊँचाइयों में प्रगति के पर फैला नारी आश्चर्यजनक उड़ान भरने लगी है। हमें उस पर गर्व है, पर प्रगति का अर्थ अपनी परंपरा, मर्यादा तथा संस्कृति को भूलना नहीं है। आधुनिकता की शर्मनाक आँधी से अपने को बचा कर रखना भारतीय महिला का पहला कर्तव्य है। काश, यह बात समझ में आ जाती तो खोती हुई लज्जा और भारतीय संस्कृति का बिगड़ता रूप हमारे सामने न आ पाता।

सदियों से लज्जा और नारी का अटूट संबंध रहा है, यहाँ तक कि लाज को स्त्री का आभूषण कहा गया है। भारतीय नारी शब्द से एक सुंदर-सी कंचन काया की साम्राज्ञी लजाती-सकुचाती-सी एक संपूर्ण स्त्री की छवि आँखों के समक्ष उभर कर आ जाती है, जिसके हर भाव में मोहकता है, मादकता नहीं, आकर्षण है, अंगड़ाई नहीं। जिस्म के उतार-चढ़ाव को आप आँचल के तले महसूस कर सकते हैं उसके लिए प्रदर्शन की कोई आवश्यकता नहीं। अदब का जामा लिए अपने मोहक हाव-भाव और तीखे नयन-नक्श से सौन्दर्यप्रेमी को प्रभावित करने वाली भारतीय नारी सिर से लेकर पैर तक लज्जा से सराबोर रही है। पर, अब समय ने करवट बदल ली है, ऐसा लगने लगा है कि लज्जा और नारी का, भारतीय संस्कृति से जो अटूट संबंध था, वह टूट कर बिखरता जा रहा है।

कुछ समाज के एक हिस्से में अभी भी लज्जा की एक सीमा-रेखा है, स्त्रियाँ अभी भी लज्जा की देवी मानी जाती हैं, घर और घर के बाहर भी उनका सम्मान करने वाला पुरुष वर्ग है, पर अधिकांश समूह ऐसा है जो लाज को पिछड़ेपन की संज्ञा देकर आधुनिकता की निर्लज्ज फिजा में साँस लेकर अपने को अत्यधिक चतुर, मॉडर्न और सुशिक्षित समझने लगा है।

जनसंचार साधनों ने भारतीय नारियों को मुखर बनाया है। जेम्स स्टीफेन की वाणी को पत्रकारों ने सार्थकता प्रदान की है। ''औरतें मर्दो से अधिक बुद्धिमती होती हैं, क्योंकि वे जानती कम, समझती अधिक हैं।'' वस्तुत: सभी महान् कार्यो के प्रारंभ में औरतों का हाथ रहा है औरत मर्द की सबसे बड़ी ताकत है। मर्द की जिंदगी अधूरी है, औरत उसे पूर्ण करती है। मर्द की जिदगी अंधेरी है, औरत उसे रोशनी देती है, मर्द की जिंदगी फीकी है, औरत उनमें रौनक लाती है। औरत न हो तो मर्द की दुनिया वीरान हो जाए

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.) भारत

और आदमी अपना गला घोंटकर मर जाय।

इसीलिए संचार-साधनों ने नारी-जाति में जागरुकता पैदा की है। दहेज-बलि, पति-प्रताड़ना, पत्नी-त्याग के समाचारों के प्रकाशन से मानव-समाज के अर्द्धांग को गौरवान्वित करना पत्रकारों का ही कार्य है। पत्रों ने समाज में एक नई दृष्टि दी है कि आज भी हम महिलाओं को महराजिन, महरी, आया, धोबन, नर्स के रूप में ही देखते हैं।

पत्रकारों के लिए विचारणीय बिंदु यह है कि हम लोगों ने ही नारी को एक रंगीन बल्ब बना दिया है। सर्वत्र स्त्रियाँ सामिष भोजन की तरह परोसी जा रही हैं। नारी दुर्व्यवहार का समाचार करुणा और सदाशयता के स्थान पर सनसनीखेज हो रहा है। चिंता की जगह चटपटापन पैदा कर हम लुत्फ उठा रहे हैं। अब नारियों को मुखरित होना पड़ेगा।

आजकल नारी-जगत् से संबंधित पत्र-पत्रिकाएँ समय काटने और मनोरंजन के साधनस्वरूप हैं। ऐसी पत्रिकाएँ साज-श्रृंगार, फैशन, रूप-रंग को कैसे निखारें, घर को कैसे सजाएँ, पति को सुंदर कैसे दिखें आदि पर ही जोर देती हैं। वस्तुत: स्त्रियों में सौन्दर्यानुभूति अधिक होती है। वे सुरुचिपसंद और सलीकापसंद होती हैं। सजने-सँवरने में रुचि रखती हैं। इन प्रश्नों के अतिरिक्त विज्ञान, खेल, राजनीति, साहित्य विषयों में भी महिलाओं की भागीदारी होती है जिसके संदर्भ में पत्र-पत्रिकाओं को प्रकाश डालना चाहिए।

कुछ पत्रिकाएँ नारियों की अपरिष्कृत और सतही रुचियों को बढ़ावा देती हैं। बाल-विवाह, पर्दा-प्रथा, दहेज-प्रथा एवं अनेक सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन में हिंदी के पत्र प्रभावकारी भूमिका का निर्वहन कर रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं को कुटीर उद्योग एवं हस्तकला से कैसे संबद्ध किया जाय, इस प्रश्न को पत्रिकाएँ सुलझा रही हैं।

हिंदी पत्र-पत्रिकाएँ जनता को सही दिशा-निर्देश और नूतन प्रेरणा देने में सक्षम हैं। महिलाओं की मानसिकता परिमार्जित करने में महिलोपयोगी प्रकाशन महत्तवपूर्ण हैं। इनसे सजने-सँवरने के अतिरिक्त चतुर्दिक जागरण का शुभ संदेश प्राप्त होता है। आजकल की कुछ हिंदी पत्रिकाओं के अनुसार नारी का अर्थ माँ नहीं, वात्सल्य नहीं, सहचरी नहीं, अपितु सेक्स का धमाका है। छोटे-बड़े स्थानों में स्थित सभी बुक स्टॉल नारी की कामुक मुद्रा से सजे हैं। काले-पीले कारोबार पर समाज का अंकुश नहीं है। नयी पीढ़ी की सोच में यह बात डालनी होगी कि उन्मुक्त सेक्स बिना किनारे वाली बरसाती नदी है जो कुछ घंटों की मूसलाधार बारिस में सब-कुछ बहा ले जाती है। जिंदगी का आनंद तो अनुशासन के बाँध के नियमित प्रवाह में है जिससे दुनिया सुख-शांति से परिपूर्ण हो जाती है।

यद्यपि पिछले 25 वर्षों में महिला पत्रकारों की संख्या बढ़ी है, किंतु रिपोर्टिंग में अभी भी दो फीसदी महिला पत्रकार नहीं हैं। तमाम गंभीर विषयों को उठाने, मौका मिलने पर खुद को सिद्ध करने के बावजूद उन्हें बेहतर अवसर नहीं दिए जाते। उनकी क्षमता को संदेह की नजरों से देखा जाता है। यही वजह है कि उन पदों पर महिलाएँ नहीं है, जहाँ निर्णय लिए जाते हैं एवं नियम बनते हैं। विभागों की प्रमुख भी महिला नहीं हैं। महिला और सौंदर्य-स्वास्थ्य पत्रिकाओं को छोड़ दे तो एक-दो समाचारपत्रों को छोड़कर महिलाएँ संपादक नहीं हैं। महिला पत्रकारों को तीन स्तरों पर जूझना पड़ता है। एक व्यक्ति के रूप में, एक नारी के रूप में फिर एक पत्रकार के रूप में। तीनों भूमिकाओं में समन्वय पर ही वह सामाजिक भूमिका निभा सकती है। हालाँकि प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक दोनों तरह की मीडिया में स्त्री-विमर्श के लिए जगह नहीं है। स्त्री-विषयक संपादकीय भी लिखे जाते हैं। सप्ताह में कम-से-कम एक बार महिला पृष्ठ या परिशिष्ट दिए जाते हैं, पर यह माना जाता है कि महिला मुद्दों पर ही महिला लिख सकती है। इन मुद्दों में भी घर-परिवार, शादी, सौंदर्य जैसे विषय ही रखे जाते हैं। दहेज-हत्या, बाल-वेश्याएँ, कार्यस्थल पर यौन प्रताड़ना, घरेलूहहिंसा जैसे कई मुद्दे या तो उठाये ही नहीं जाते और यदि छपते भी हैं तो संक्षेप में। वहीं चाय पीते या हाथ मिलाते नेताओं के समाचार तस्वीरों सहित डबल कॉलम में स्थान पाते हैं। आधुनिक मीडिया में बोल्ड एंड ब्यूटीफुल के लिए तो जगह है, किंतु कर्मठ एवं जुझारू महिला के लिए नहीं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महिला सृजन के विविध आयाम- डॉ तारा परमार- प्रकाशक भारतीय साहित्य अकादमी म.प्र. 2002
2. वैष्वीकरण एवं महिला सशक्तीकरण- विपिन कुमार- रीगल पब्लिकेशन दिल्ली 2009।
3. मीडिया के सामाजिक सरोकार- निषांत सिंह 7 राधा पब्लिकेशननई दिल्ली 2003।
4. जनसंचार एवं पत्रकारिता- प्रो. राजेष जैन- यंदीप पब्लिकेशन जयपुर 2003

****

मृणाल पाण्डे के साहित्य में स्त्री-विमर्श

डॉ. मंजू देवी मिश्रा *

प्रस्तावना – स्त्री-विमर्श और दलित विमर्श को लकर आजकल हिन्दी साहित्यिक मंच पर घमासान जारी हैं। अपने स्त्रीत्व को लेकर अपने अस्तित्व स्थापना के लिए सदियों से संघर्षरत नारी और उसकी चेतना के विविध रूपों का चित्रण है। समाज की एक इकाई के रूप में अपनी पहचान निर्मिति करने के लिए नारी जिस अदम्य जिजीविषा एवं प्रबल इच्छा शक्ति का परिचय दिया, उसका यहाँ खुलकर विश्लेषण किया गया है। भारतीय समाज में परम्परागत नारी की छवि, उसका ऐतिहासिक स्वरूप तथा नारी चेतना को प्रतिबिम्बित करने हिन्दी साहित्य की सम्यक् मीमांसा की गई है।

महिला कथाकारों का मानना है कि स्त्री कोई निष्क्रिय मांसपिंड नहीं है और न ही किसी की दासी है बल्कि वह एक स्वतंत्र व्यक्तित्व रखने वाली मनुष्य है। स्त्री समाज की आधा हिस्सा है इसलिए उसका भी प्रत्येक क्षेत्र में बराबरका हक है। स्त्री की उपेक्षा करना आधी दुनिया की सच्चाई से मुँह मोड़ना है क्योंकि सच्चाई वही होती है जो समग्र हिस्से पर विचार करें। स्त्री का व्यक्तित्व लोचदार होता है जिसके कारण विषम परिस्थितियों में भी अपने अस्तित्व का बचाए रखती है। सहनशीलता, विनम्रता और उदारता उसे आन्तरिक शक्ति प्रदान करते है। महिला लेखिकाओं का मानना है कि पुरूष ने स्त्री के इन विशिष्ट गुणों को अपने अधीन बनाने के लिए प्रयोग किया। स्त्री की दइन विशिष्टताओं को उसकी कमजोरी समझा।

इस प्रकार स्त्री – विमर्श को लेकर सुप्रसिद्ध रचनाकार मृणाल पाण्डे जी ने विचारोत्तेजक चेतना जिसमें परिधि पर स्त्री, स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीतिक तक, ओ उब्बीरी, जहाँ औरतें गढ़ी जाती है। ग्रन्थों का संकलन है। लेखिका ने अपने ग्रन्थों में नारी वाद से जुड़ी विभिन्न समस्याओं पर बेबाकी से प्रकाश डाला है।

'लेखिका ने जहाँ शोषित – प्रताड़ित ग्रामीण-शहरी कामकाजी महिलाओं के दु:ख – दर्द को प्रभावशाली ढंग से रेखांकित किया है, वहीं इनके कल्याणार्थ मानवीय दृष्टि विकसिकत करने पर भी बल दिया है – ताकि नारीवाद महज नारों या निजी स्वार्थ में लिप्त कुछ संगठनों तक ही सीमित होकर न रह जाए।'

'परिधि पर स्त्री' संग्रह में बीस निबन्ध संग्रहित हैं। उर्फ हासिए पर मित्र संलाप 'प्रसंग में भिन्न और लेखिका मृणाल पाण्डे की आपसी संवाद का चित्रण हुआ है।' दरअसल नारीवाद का वि6ाय ही ऐसा है कि अच्छे-अच्छे बुद्धिमान पुरूष भी इसको हॉथ में लेते ही अपनी सहज मानवीयता छोड़कर एक पकी – पकाई पारम्परिक भाषा में न्यायाधीश के सुर में बोलने लगते है – सभाओं में, घरों में, सम्पादकीयों में। ऐसे कई वक्ताओं की वक्तृता, बहसें अक्सर अनुभव के आधार पर नहीं , बल्कि अंदाज के आधार पर सिर्फ बहस उठाने भर को छेड़ दी जाती है।'

मृणाल जी ने नारी विमर्श के क्षेत्र में स्त्री समाज के हित का द्वार खोलने का विचार लोक के समक्ष रखा है। ' भॅवरी नाम है एक लहर 'शीर्षक के माध्यम से मृणाल पाण्डे जी ने प्राणिलोक को सम्बोधित करते हुए लिखा है कि – 'राजस्थान की बस्सी तहसील के इस लगभग अचर्चित गॉव में जाति से कुम्हार , भॅवरीबाई , 'साथिन' (समाजसेविका) का काम करती है।

'स्त्री विमर्श' के दायरे में मृणाल पाण्डे की दूसरी महत्तवपूर्ण रचना – 'स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक' है। इसके अन्तर्गत उनका कथन है कि हमारे पुराणों के समय से स्त्रियों को लेकर जिन नियमों और मर्यादाओं की रचना हुई , उनकी स्वाधीनता और आत्म-निर्भरता के खिलाफ निहित स्वार्थों द्वारा जो महीन किस्म का सांस्कृतिक षड्यंत्र रचा गया ओर भारतीय संविधान में लागू होने के बाद भी व्यावहारिक जीवन में स्त्रियों को जिन जटिल अन्तर्विरोधों से जुझना पड़ रहा है – पुस्तक में प्रस्तुत लेखों में एक स्त्री के नजरिए से इस सभी समसामायिक संदर्भो में पड़ताल की गयी है। 'स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक' दो खण्डों में विभक्त है। खण्ड एक के अन्तर्गत जिनमन मुकुर सुधारि, तलहटी का अकेलापन, स्त्रियॉ अश्लीलता का विरोध 'यों कर रही है ?, अभिज्ञान के बाद , कला –जगत का आतंकवाद , उत्पादकों को उत्पादक स्त्री, की मुरझाती दुनिया , देखों , एक आजाद स्त्री की गुलामी , बहू की नहीं, धन , स्त्रीशू हिंसा हिंसा न भवती, इनकी परवाह किसे है ? भोजन की राजनीति शीर्षकों पर स्त्री विमर्श की अभिव्यक्ति हुयी है।

खण्ड दो के परिवेश में लेखिका ने घर , परिवार और स्त्री , श्रमजीवी स्त्री : कुछ सच्चाईया, प्रगति के साथ महिला – कामगारों की छॅटनी भ, वे8यावृत्ति और कानूनी मान्यता का सवाल , समालोचक मिल तो ले उनसे जो पापड़ बेलती है, अ से अन्नापूर्णा, अ से अहिंस, पशुपालन उद्योग की अद्द8य धुरी : स्त्री, इक्कीसवीं सदी की खेतिहर स्त्री, जनानियॉ हल नई ना लगाणी , स्त्री –शिक्षा की अॅधेरी भूल-भुलैया , बच्चे वाली मॉओं के कामकाज को मोल, स्त्री : खबरों में नहीं , उनके बीचोंबीच मं नारी समाज की बेबसी का दृष्टान्तों के माध्यम से यथार्थ तथ्य का निर्वाह किया है।

स्त्री विमर्श के क्रम में मृणाल जी कहती है – 'ज्यों –ज्यों मेरी यात्राएँ तय होती गयी, त्यों-त्यों परिचित दुनिया एक दूसरी ही भाक्ल लिये मेरे आगे उजागर होती गई। मैंने देखा कि समग्र दृष्टि के अभाव में कितरह औरतों के सशक्तीकरण के लिए उठाए नेकनीयत सरकारी कदम भी कई बार आम स्त्री के मानवाधिकारों का कुचल सकते है कि अगर कोई गरीब स्त्री अनपढ़ हो, पिछडे इलाके के गॉव या बड़े शहरों की किसी मलिन बस्ती में रहती हो , और अॅग्रेजी भाषा बोलने – समझने से महरूम हो, तो राज्यसत्ता और उसके संवाहकों की नजर में एक दोयम दर्जे का जीवन ही बनी रहती है।

* शासकीय शहीद केदारनाथ महाविद्यालय, मऊगंज, जिला – रीवा (म.प्र.) भारत

स्त्री सशक्तीकरण की पक्षधर जिस व्यवस्था का अंग है मै स्वयं भी थी, अक्सर ऐसी स्त्री से कहती हैं कि अशिक्षित और गरीब होने के नाते वह अपनी प्रजनन क्षमता की बाबत सही चुनाव करने में असमर्थ है, अत: राज्यसत्ता ही उसके लिए सही–गलत तय करेगी। इसके साथ ही मैने कई मामलों में यह भी देख कि अगर स्वेच्छिक गर्भपात जैसा कोई मुद्दा नैतिक और राजनीतिक रूप से जटिल और बहुआयामीं हो, तो स्त्री का वर्ग, जाति और आय उसकी क्षमता नर रोक लगाने को निर्णायक तौर से आड़े आ सकता है। नतीजतन, प्रजनन प्रक्रिया, जो पूरी स्त्री जाति के लिए उसकी एक बुनियादी और एक जैसी साझी स्मृतियों – अनुभवों का आगार होनी चाहिए – भारत में वर्ग और वर्ण विशेष की बुनियाद पर औरतों के अनुभवों को अलग – अलग रंग और आकादेती है।'

'जहॉ औरतें गढ़ी जाती है ' मृणाल पाण्डे की अब तक की सर्वोत्तम स्त्री – विमर्श रचना है। हिन्दी की वरिष्ठ कथाकार और पत्रकार मृणाल पाण्डे अपने लेखन में समय तथा समाज के गम्भीर मसलों को लगातार उठाती रही है। भारतीय स्त्रियों के संघर्ष और जिजीविषका को भी वे इसी व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखती – परखती रही है। यही कारण है कि स्त्री–प्रश्न के प्रति गहरी प्रतिबद्धता के बावजूद,उनका लेखन स्त्री–विमर्श के संकीर्ण दायरे में सिमटा नही है। वे 'अन्दर के पानियों का सपना' देखती है, तो य नारीवादी आन्दोलन की विडम्बना य को भी उजागर करती है।

कुल मिलाकर मै इस निष्कर्ष पर पहॅुचती हूॅ कि मृणाल पाण्डे जी का स्त्री –विमर्श यह संकेत करता है कि वे विसंगतियॉ य धर्म एवं आस्था य तथा 'परम्परा एवं मूल्यों' के प्रति समाज के दोहरे मानदण्ड के कारण हैं जो पुरूष एवं स्त्री के लिए एक समान नहीं हैं। सभी सम्बन्धों में नारी की स्थिति अधीनस्थ की है इसलिए उनके मन में समाज के प्रति अंसतोष है। शोषण के प्रति उनकी अभिव्यक्ति मुखर हो उठी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. 'जहॉ औरतें गढी जाती है'।
2. 'ओ उब्बीरी'।
3. 'स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक'।
4. 'यानि की एक बात थी'।
5. 'परिधि पर स्त्री'।

****

प्रेमचंद की कहानियों का तात्कालिक प्रभाव

प्रीति बबेले *

प्रस्तावना – कलम के सिपाही मुंशी प्रेमचंद जिस युग में थे, तथा उस समय जो परिस्थितियां विद्यमान थी।वही स्थिति वर्तमान समय में भी किसी न किसी रूप में व्याप्त हैं। सर्व विदित हैं ,कि कोई भी सुधारक अथवा रचनाकार अपने काल के लिए ही मार्गदर्शन का कार्य नहीं करता अपितु , आने वाले समय में भी उनके बताए मार्गो और सुझावों की आवश्यकता बनी रहती है, यही स्थिति प्रेमचंद की कहानियों के साथ के साथ भी हैं।

प्रेमचंद ने कहानी का एक भारतीय सांचा उभारा हैं, जिसमें तीनों काल एक साथ प्रवाहित रहते हैं। जिसमें न तो अतीत मरता हैं–न भविष्य फूटता है–केवल वर्तमान अपनी वर्तमानता , निरन्तरता ,विकासमयताके साथ मानव को मथता –उद्धेलित करता चलता हैं।

प्रेमचंद की कहानियों में पहली बार जन–सामान्य को वाणी मिली हैं। क्योंकि ,पहली बार सामान्य जनता की समस्याओं की कलात्मक अभिव्यक्ति का प्रमाणिक एवं वास्तविक चित्र प्रस्तुत हुआ हैं।उन्होंने वर्तमान के दु:ख–दर्द,हार–जीत, और न्याय–अन्याय के विभिन्न पक्षों को उजागर कर आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की ओर ध्यान केन्द्रित किया हैं। जैसे– 'नमक का दरोगा'(1907) समाज की यथार्थ हकीकत को उद्धाटित करती हैं। यह कहानी अधर्म पर धर्म की जीत का संदेश देती हैं। इस कहानी के माध्यम से प्रेमचंद जी ने बताया है,कि शिक्षा मानसिक संबल व चरित्र निर्माण का आधार नहीं, अपितु उदर पूर्ति का माध्यम हैं। ऊपरी आमदनी वाली नौकरी के लिए सभी लालायित्व रहते हैं। कहानी की घटनाए प्रशासनिक और न्यायिक व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार तथा उस भ्रष्टाचार की व्यापक सामाजिक स्वीकार्यता को दर्शाती हैं। अदालतें न्याय का मंदिर कहीं जाती हैं,लेकिन वहां भी सब कुछ बिकता हैं। पैसे से सत्य के सभी सबूत मिटा दिए जाते हैं। आज भी हमारे समाज में भ्रष्टाचार अपनी जड़े जमायें हुए हैं।यह कहानी तत्कालीन परिस्थितियों को प्रतिबिंबित करती हैं। 'आखरी मंजिल'(1911) एक दार्शनिक कहानी हैं,इसमें दीपक के बुझने और चिता के जलने से जीवन की नष्वरता प्रतिपादित होती हैं।'बाँका जमींदार'(1913)में संदेश हैं,कि जुल्मों का मर्दो की तरह सामना करने वाले लोग ही जालिम जमींदारों के गाँव में रह सकते हैं। 'शंखनाद'(1916) कर्मपथ की ओर अग्रसर करने वाली कहानी हैं। 'घमंड का पुतला'(1916) प्रेमचंद के आदर्शो के विपरीत कहानी हैं। 'पंच परमेश्वर'(1916) जिम्मेदार पद की गरिमा की कहानी हैं।'बूढ़ी काकी'(1921)में आदर्शवादी समाधान ,पुराने मूल्यों के प्रति आस्था की अभिव्यक्ति, समाज की आलोचना कम और मार्मिक स्थितियों को उनकी पूरी मनोवैज्ञानिकता और यथार्थता में उभारने की कोशिश अधिक हैं। वक्त के साथ बहुत कुछ बदल गया, परन्तु मुंशी प्रेमचंद की कहानी बूढ़ी काकी का तात्कालिक प्रभाव आज भी हैं। यह समाज की हकीकत को व्यक्त करने वाली कहानी हैं,जो बहुत ही मार्मिक ,ह्रदयस्पर्शी ,संवेदनशील एवं यथार्थ का जीवंत चित्रण करने वाली कहानी हैं ।वर्तमान में समाचार पत्रों और न्यूज चैनलों में पढ़ने ,सुनने में आता हैं,कि वृद्ध माता–पिता को उनके बेटे–बहू ने घर से बाहर निकाल दिया। यह कहानी आज हमारे सामने आइने की तरह हैं।''पूस की रात''(1930)में भारतीय किसान की लाचारी का यथार्थ चित्रण किया गया हैं।वर्तमान में भी किसान की स्थिति बहुत दयनीय हैं। आज भी किसान अत्माहत्या करने के लिए मजबूर हैं।''ईदगाह'' (1933)बालमन पर आधारित कहानी हैं।जिस में एक बच्चा साल भर ईद के आने का इंतजार करता हैं। और जब मेले में जाने का समय आता हैं,तो उसे नाम मात्र के पैसे मिलते हैं। वह उन पैसे से स्वयं के लिए कुछ न खरीद कर अपनी दादी के लिए चिमटा खरीदता हैं।जिस की कमी की वजह से उसकी दादी का हाथ रोटियां बनाते समय हमेशा जलता रहता हैं। 'कफन'(1936) तक आते –आते उन की कहानियां यथार्थवादी हो जाती हैं।कुछ आलोचकों ने कफन को प्रेमचंद के आदर्शो का कफन कहा हैं।अर्थात् आदर्शता को पूरा नकारा हैं। इस में प्रेमचंद ने अयथार्थ का खोल खींच कर यथार्थ को नग्न कर दिया हैं। बिना किसी लागलपेट के।

इस प्रकार से हम देखते हैं,कि प्रेमचंद ने जीवन के व्यापक फलक को अपनी कहानियों में जितना सिमेटा हैं,उतना अन्य किसी लेखक ने नहीं।अपने जीवन काल में प्रेमचंद ने लगभग 300 कहानियों की रचना की जो मानसरोवर के आठ खंड़ो में प्रकाशित हुई। उन्होंने अपनी कहानियों में जीवन के यथार्थ का चित्रण एवं मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया हैं।

प्रेमचंद मानव की मानवता का उद्घाटन करते हैं।वह जीवन के यथार्थ से हमारा साक्षात्कार कराते हैं, समाज में बढ़ रहे उत्पीड़न, अन्याय और शोषण के विरुद्ध आवाज उठातें हैं। इस प्रकार वर्तमान में भी पूंजीवाद ,जातिवाद, साम्प्रदायिकता आदि अनेक समस्याएं यथावत विद्यमान हैं। प्रेमचंद जिस समाजिक और राजनीकि क्रांति के अग्रदूत थे, वह क्रांति अभी अधूरी हैं। क्योंकि समाज आज भी उन समस्याओं से जूझ रहा है,जिनसे प्रेमचंद का समाज जूझ रहा था, उन समस्याओं से हम आज भी उबर नहीं पाए।

वस्तुत: मानवतावादी लेखक प्रेमचंद का सारा कथा साहित्य यथार्थ के धरातल लिखा गया है,जो तात्कालीन राजनीति ,सामाजिक,आर्थिक और धार्मिक परिवेश में रचित होने के बाबजूद काल और परिवेश वद्ध नहीं ,अपितु काल और परिवेश का अतिक्रमण कर सर्वकालिक बन गया हैं।

वर्तमान समय में भूमंडलीकरण के कारण आर्थिक पीड़ा बढ़ती जा रही हैं। शोषक नये रुप में अवतरित हो रहे हैं। गरीब फिर पिस रहा हैं। बोट बैंक की कलुशित राजनीति चारों ओर दिखाई दे रही है, अमीर और अमीर हो रहे

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शासकीय विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय बेनजीर, भोपाल (म.प्र.) भारत

है। गरीब और गरीब होता जा रहा हैं।सभी अपनी –अपनी स्वार्थ की रोटियाँ सेंकने में लगे हुए है। नैतिक मूल्यों का पतन आज जिस तीव्रता से हो रहा है,तथा मानवीय मूल्यों का विघटन जो समाज में दिखाई दे रहा है,उसके जहरीले प्रभाव को कम करने के लिए प्रेमचंद की अमृतमयी कहानियों की आवश्यकता बराबर अनुभव की जा रही हैं। आज पुन: प्रेमचंद की हमें आवश्यकता है। उनकी कहानियों का तात्कालिक प्रभाव आज भी हैं।और कल भी रहेगा। हां ,यह बात अलग है कि उनकी कहानियों की तात्कालिकता का संदर्भ बदल सकता हैं। अत: हम कह सकते हैं। कि प्रेमचंद की कहानियां सर्वकालिक, सार्वभौमिक एवं सार्वजनीन हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. नगेन्द्र(हिन्दी साहित्य का इतिहास)
2. उपकार पब्लिकेशन
3. डॉ. राज कुमार जैन 15जुलाई2005
4. www.swargvibha.in\aalekh\all

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

अजहर हाशमी के गद्य साहित्य में व्यंग्य

डॉ. मंशाराम बघेल *

प्रस्तावना – प्रो अजहर हाशमी के गद्य साहित्य में व्यंग्य – भूमिका– गद्य शब्द गद् (बोलना) धातु से निष्पन्न है, जिसका अर्थ है बोलचाल की शैली मे लिखा गया साहित्य ही गद्य साहित्य कहलाता है। उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी, निबन्ध, आलोचना गद्य की विधाएं है।

संस्कृत साहित्य परम्परा से विकसित होते हुए प्राकृत भाषाओं से वर्तमान भारतीय भाषाओं का विकास हुआ है। व्यंग्य को बहुत से आलोचकों ने एक स्वतंत्र विधा न मान कर एक शैली मात्र माना हैं, क्योंकि व्यंग्य गद्य की प्राय: अधिकांश विद्याओं में पाया जाता हैं, यहां तक कि पद्य साहित्य मे भी व्यंग्य के अधिक दर्शन होते है।

भारतेन्दु हरिश्चंद्रजी से हिन्दी गद्य लेखन का उद्‌भव हुआ। भारतेन्दु युग में सामाजिक आडम्बर और पश्चिमी संस्कृति के अंधानुकरण से उपजी विद्रूपताओं पर व्यंग्य किये गये हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के व्यंग्य की धार और पैनी होती गई। सर्वाधिक व्यंग्य वर्तमान राजनीतिक विकृतियों पर, नेताओं के ढोगले आचरण पर, नौकरशाही के छद्म और चालाकी भरे व्यवहारों पर लिखे गये। विभिन्न क्षेत्रों मे जो विसंगतियां दिखाई देती हैं, उन्हे व्यंग्य का साधन बनाया गया। इसके अतिरिक्त व्यक्ति के स्वभाव मे निहित विकृत मानसिकता और आचरण शैली पर भी व्यंग्य लिखे गये। हरिशंकर परसाई, शरद जोषी, श्री लाल शुक्ल, रविन्द्रनाथ त्यागी, मनोहर श्याम जोशी, डॉ. बालेंदुशेखर तिवारी, डॉ. पुणताम्बेकर, लतीफ घोंघी, नरेन्द्र कोहली आदि प्रसिद्ध व्यंग्यकारों ने व्यंग्य विद्या को समृद्ध किया। इसी श्रेणी मे आगे चलने पर मालवा क्षेत्र के रतलाम जिले मे निवासरत् प्रो अजहर हाशमीजी भी ऐसे व्यंग्यकार हैं, जिनकी व्यंग्य रचनाएं आए दिन विभिन्न पत्र पत्रिकाओ में अपने निहित कालम में छपती हैं। समाज की संरचना ऐसी है कि शांतिपूर्ण सह अस्तित्व के लिए प्रत्येक जगह समझोते से काम लेना पड़ता है। मनुष्य न चाहते हुए भी वह सब कर लेता हैं, जिसका जीवनपर्यन्त वह विरोध करता हैं, उसकी वास्तविकता और भारी मन से उतपन्न स्थिति से तादात्मय पाकर व्यंग्यकार की वाणी मुखर होती हैं।

हाशमीजी ने अपनी व्यंग्य रचनाओं मे सामाजिक विसंगतियों और मूल्यहीनता पर तीखे व्यंग्य किये हैं। पिछले कई वर्षो से उनकी लेखनी जहां भी सामाजिक ढोगला पन देखती हैं, व्यंग्य की आग उगलने लगती हैं। आदमी के छद्म को उधड़ने मे हाशमीजी की कलम बड़ी सशक्त भूमिका निभाती हैं। उन्ही के उदाहरण यहां प्रस्तुत करना सीमीचीन होगा, जिनमें उनके व्यंग्य के विविध रूपों के दर्शन होते हैं। वर्तमान में वैज्ञानिक निरन्तर पर्यावरण के विनाश की बात करते हैं, किन्तु पर्यावरण सुधारने मे काई भी यथार्थ काम नही कर रहे है। पर्यावरण सुधार के नाम पर व्यर्थ के आयोजन हो रहे है।

हाशमीजी ने 'आओं पर्यावरण पर्यावरण खेलें' में पर्यावरण के प्रति जनता में जागकरुकता लाने का प्रयास किया है हाशमीजी कहते है।

'पर्यावरण की रक्षा करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्म है। पर्यावरण को शुद्ध रखना प्रत्येक व्यक्ति का धर्म है। हर नागरिक का कानुनी कर्त्तव्य है कि पेड़ को काटे नहीं बाग उजाड़े नही पृथ्वी का जलवायु अर्थात् प्रकृति का पर्यावरण बिगाड़े नही।'...1

शिक्षा जगत मे व्याप्त बुराहयो पर 'ट्यूशन के चलन ने शैक्षणिक मूल्यो पर तुषारापात किया।' मे व्यंग्य के साथ यथार्थ का चित्रण किया हैं। कुछ शिक्षक ट्यूशन की दुकान चलाकर शैक्षणिक मुल्यों की धज्जियां उड़ा रहे शिक्षा क्षेत्र की वतर्मान स्थिति का यह जीवंत उदाहरण है। वर्तमान समय में शिक्षा जगत में ट्यूशन का चलन है। शिक्षा के ठेकेदारो मे शिक्षा का मूल्य कम किया है। इस पर हाशमी जी कहते हैं 'जिस प्रकार उपभोगतावादी ने मानवीय संवेदनाओं की अर्थी निकाल दी हैं, ठीक उसी प्रकार ट्यूशन के चलन ने शैक्षणिक मूल्यो पर तुषारापात किया है। ट्यूशन की प्रवृत्ति किसी समय सुविधा थी, बाद में विलासिता हो गई, किन्तु अब नशे की तरह हो गई। कुल मिलाकर ट्यूशन शिक्षक विद्यार्थी के बाद विद्या के विक्रय का वाणिज्यिक समझौता हैं, जिसमें एक पक्ष अर्थात् शिक्षक को मिलता है। धन, और विद्यार्थी को मिलते हैं। अंक और अन्य सुविधाएं ट्यूशन एक ऐसा मंच हैं, जिसमें खुलेतौर पर विद्यार्थी को प्रत्यक्ष लाभ और पर्दे के पीछे शिक्षक को अप्रत्यक्ष लाभ मिलता है।'.....2

समाज मे दूसरो से ईर्ष्या करने वालों की कमी नही है कुछ लोगों को दूसरो की थाली में घी अधिक नजर आता है। दूसरों की उन्नति उन्हें फटी आंख नही सुहाती हैं। इसलिए पड़ोसी को मगर थोड़ा सभी सुख मिलता हैं, तो ईर्ष्यालु लोगों को भारी दुख होता है। ऐसे लोगों की विकृत मानसिकता पर इस लेख में व्यंग्य किया है। 'पड़ोसी इसलिए दुखी है कि उसका पड़ोसी सुखी है।'........ 3

'तिलक मुँह देखकर लगाया जाता है शिक्षा में।'..........4

प्रकाशित निबंध में वतर्मान शिक्षा प्रणाली मे जो आमूलचूल परिवर्तन हुआ है, उनके बारे मे हाशमीजी ने अपने विचार व्यक्त किये है। महाविद्यालय की सेमेस्टर प्रणाली के वास्तविक ढोषो पर प्रकाश डालते हुए हाशमीजी ने लिखा है कि 'टिचर्स डायरी एक धोखेबाज डायरी हो गयी है।' महाविद्यालय का प्राध्यापक वर्ग पढ़ाने से जी चुराने लगा है। झूठी डायरी भरकर वह अपने अध्यापन का ब्योरा अंकित करता है। इस प्रकार डायरी लेखन महत्वपूर्ण हो गया है और अध्यापन कार्य गौण हो गया है। साथ बहुत सारे गैर जरूरी और महत्वहीन कार्यो मे अध्यापक वर्ग अधिक रुचि लेता है। ढोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली तथा प्रश्न पत्रों का आउट हो जाना आदि ऐसे तथ्य हैं, जिसने शिक्षा को गुणवत्ता मे निरन्तर गिरावट आ रही है।

* शहीद भीमा नायक, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी, जिला- बड़वानी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

प्रायमरी शिक्षा को झोपड़ी की तरह तुच्छ और महाविद्यालय को शिक्षा के महल की तरह उच्च समझने की सोच ही संकीर्ण मानसिकता को जन्म देती है।

'झोपड़ी के साथ सभी ने किया छल।'....5

उक्त निबंध मे हाशमीजी ने झोपड़ी मे निवासरत व्यक्ति और महल मे निवासरत व्यक्ति की तुलना की है। गरीब और अमीर के प्रतीकों के रुप मे झोपड़ी मे निवासरत तथा महल मे निवासरत लोगो की तुलना की हैं। अमीरों ने हमेषा गरीबों के साथ अन्याय किया है। इसमे राजनेताओं ने अमीरो का ही साथ दिया है। झोपड़ी मे भी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति पैदा हुए है। झोपड़ी मे रहने वाले लोग कठिन परिश्रम करके खेतो मे फसले उगाले है। कारखानों से माल पैदा करते हैं, किन्तु अमीर लोग नेता और अधिकारी गरीबो के साथ उपेक्षापूर्ण व्यवहार करते है केवल वोट बैंक की तरह गरीबों का इस्तेमाल किया जाता है फिर उनको भुला दिया जाता है। हाशमी जी कहते है 'झोपड़ी की जड़े अतीत मे कितनी गहरी होती थी जो कभी कुण्व मुनि की कुटीया अथवा आश्रम के नाम से पुकारी जाती थी और शकुन्तला पुत्र भरत खेल-खेल मे अपने हाथो से शेर के जबड़े खोलकर उसके दांत गिना करता था वाल्मीकी का आश्रम भी तो झोपड़ी ही थी, वह झोपड़ी जहां भगवती सीता में 'लव' और 'कुश' को जन्म दिया था। वे लव-कुश जिन्होने भगवान राम के अश्वमेघ यज्ञ का अश्व रोक दिया था।'

'नेता एक शरीर है, कुर्सी उसकी आत्मा' 6

आज कल नेता कुर्सी के भव्य है। मंत्री पद पाना ही आज के नेताओं का लक्ष्य है। कुर्सी नेता की आत्मा है, जैसे शरीर बिना आत्मा के जीवित नहीं रहता। उसी प्रकार बगैर कुर्सी के नेता का अस्तित्व ही नही होता नेता की विशेषता बताते हुए हाशमीजी लिखते है

'नेता के भाषण पर ताली पड़ती है उधर नेता के चेहरे पर लाली बढ़ती है।

नेता जीके भाषण का उच्चारण कुर्सी से, व्याकरण कुर्सी है। दूध मे जिस प्रकार पानी धुल जाता है उसी प्रकार नेता भी कुर्सी मे विलीन हो जाता है। प्रस्तुत है इस आलेख का अंश- 'नेता और कुर्सी का वही संबंध हैं, जो शरीर का आत्मा से नेता एक शरीर है, कुर्सी एक आत्मा है कुर्सी खोने पर जो नेता सुखा हुआ छुआरा हो जाता है। कुर्सी पाते ही वह फूल हुआ गुब्बारा हो जाता है।' इस प्रकार हाशमीजी ने वर्तमान राजनीति के नेताओं के चरित्र को उजागर कर उन पर करारा व्यंग्य किया है।

'कागजी उन्नती मे तो हमने सबको पछाड़ दिया'...7

इस आलेख के माध्यम से प्रो. अजहर हाशमीजी सरकारी विभागों की पोल खोलकर जनता के सामने उसकी वास्तविकता को उजागर करते हुए सरकारी तंत्र विकास की वास्तविक स्थिति केवल कागज पर बताता है। इस पर व्यंग्य करते हुए वे कहते हैं कागज के घोड़े पर सवार उन्नति के आंकड़े देश को उन्नति होने का तमाशा दिखाते हैं।

हमारा देश कृषि प्रधान देश है। देश मे कृषि को महत्व देने के बजाय क्रिकेट को अधिक महत्व दिया जाता है। कागज पर भरपूर खाद्य सामग्री होने का उल्लेख किया जाता है, किन्तु खाद्यन्न जनता तक नही पहुंचा। कितनी कागजी योजनाएं देश में प्रगति का भ्रम फैला रही है। कागज पर पुल बनते हैं, जो यथार्थ में कही नही होते, किन्तु इस बहाने ढेर सारा धन सत्ता पर बैठे लोग अफसर और ठेकेदार हजम कर जाते है। इस स्थिति पर व्यंग्य करते हुए प्रो हाशमीजी लिखते है कि 'नेता और अफसरो की तोंद तो बढ़ती जा रही है; किन्तु जनता का पेट पिचक रहा है। तात्पर्य यह कि देश ने उन्नति तो की हैं पर कागजों पर कागजी उन्नति में देश का स्वास्थ्य कागज को गया है।'

'लालबत्ती वाली गाड़ी कब आएगी तू'8

'प्रो अजहर हाशमीजी ने वतर्मान राजनीति से प्रेरित होकर नेताओं को अपने व्यंग्य विषय मे निशाना बनाया है। व्यंग्य मे वतर्मान नेताओं की जो लालची प्रवृत्ति और तानाशाही को व्यक्त किया गया है, उक्त अपने सिद्धांतो और विचारों पर दृढ़ रहने वाले हाशमी स्वार्थवश कार्य करने वालों को जमकर फटकार लगाने मे भी नही चुकते हैं। प्रस्तुत है उक्त व्यंग्य रचना के कुछ अंश- 'रीछ को जिस प्रकार छत्तेवाला शहद बहुत भाता हैं, उसी प्रकार नेता को लालबत्ती वाली गाड़ी का सपना बहुत सुहाता है। कार में लालबत्ती लगते की नेता 'सरकार' हो जाता है। कार से लालबत्ती हटते ही नेता बेकार हो जाता है।'

निष्कर्ष – प्रो अजहर हाशमीजी अपने रचनाओं मे राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार, भाई भतीजावाद और नेताओं के दोगले आचरण, कटु किन्तु यथार्थ व्यंग्य प्रहार किये है। जनता में जिस अपेक्षाओं से उन्हे चुना है। वे सारी अपेक्षाएं नेताओं ने मिट्टी मे मिला दी है। प्रजातंत्र मे नेताओं को वस्तुत: जनता के प्रति उत्तरदायी होना चाहिए, किन्तु यथार्थ मे ऐसा कुछ भी नहीं है। नेता लोग अधिक से अधिक सम्पत्ति जोड़ने मे लगे हुए है। वे जनता के प्रति पूरी तरह से असंवेदनशील हो गये है। वर्तमान व्यंग्य की धारा राजनीति पर ही अधिक केंद्रित हो गई है। इसका कारण है कि सबसे अधिक प्रदूषण राजनीति में ही फैली है।

सामाजिक क्षेत्र मे जहां-जहां हाशमीजी को विसंगतियां दिखाई देती हैं। उन पर भी उन्होने अपनी लेखनी चलाई है। समाज मे रहने वाले लोग अपने ही समाज के स्वार्थी लोग दौलत और राजनीति के बल पर उन गरीब जनता को कष्ट पहुंचा रहे है। उनके अधिकारों का हनन कर रहे है। पूरी सामाजिक संरचना ऐसे लोगों से पूर्णत: विषमता से व्याप्त है। प्रो अजहर हाशमीजी ने धार्मिक विषमता पर भी खुलकर व्यंग्य किया हैं। जहां पर भी धार्मिक क्षेत्र के विपरीत कृत्य दिखाई देता हैं। वहां पर हाशमीजी उन वाह्य आडम्बरो का खुलकर विरोध करते हैं। इस प्रकार हाशमीजी ने हमारे समूचे परिवेश में व्याप्त विद्रूपताओं को अपने व्यंग्य का विषय बनाया है। इसके पीछे हाशमीजी कि यही धार्मिक भावना रही है कि इन सबका एक स्वस्थ रूप कायम किया जा सके। इस रुप मे हाशमीजी ने अपने लेखकीय दायित्व का पूरी निष्ठा से पालन किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चौथा संसार 10 जुलाई 1995
2. चौथा संसार 29 अप्रेल 1995
3. चौथा संसार 29 दिसम्बर 1995
4. चौथा संसार 01 जुलाई 1995
5. चौथा संसार 23 जुलाई 1995
6. चौथा संसार 17 जून 1995
7. चौथा संसार 18 दिसम्बर 1995
8. चौथा संसार 30 अक्टूबर 1996

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

कथा साहित्य में अमृतलाल नागर के मानवीय मूल्यों का अध्ययन

अलका चौहान *

प्रस्तावना – 17 अगस्त 1916 ई. को अमृतलाल नागर का गोकुलपुरा नामक शहर में जन्म हुआ था। जिनके परिवारिक परिवेश आगरा उत्तरप्रदेश के ननिहाल में परवरिस हुई। इनका परिवार संस्कृत के मर्मज्ञ विद्वानों से एक था। इनके जीवन में मूल्यों की अनेक छाप पारिवारिक परिवरिस से प्राप्त होती है। अमृतलाल नागर ने साहित्य के क्षेत्र में अविस्मरणीय योगदान रहा है। जिन्होंने गंभीर एवं मननशील कथाकारों में श्रेणी में गिने चुने जाते हैं। इनकी लोकप्रियता का मुख्य श्रेय कथा साहित्य में दिखाई देता है। जहाँ मूल्य परक जीवन की विवेचना का सन्दर्भ प्रस्तुत करते है। इससे मानवीय जीवन की लोकप्रियता का वर्णन सामाजिक और आर्थिक चिन्तन का आधार रहा है। उन्होंने भारतीय परंपरा के महानता श्रेय को मानवीय जीवन में चुनाव करते रहें। जिसकी विचारधारा के सामने हमेशा नतमस्तक होना पड़ा। इस प्रकार की विचारधारा ने मानवीय जीवन के शुभ अवसर में आधुनिकता की विचारशीलता का मुँह कभी भी इन्होंने नहीं मोड़ा है। उन्हें तो अपने समय की दोनों ही अनेकों पुरानी पीड़ियों को देखा और समझा है। इसके लिए वहाँ मानवीय जीवन की नयी दिशा का पूर्णत: भवसागर ही दिखाई देता है। इन्होंने नयी पीढ़ीयों का स्नेह एवं समर्थन करते रहें। अध्यात्मिक पक्षों पर इनका अटूट विश्वास रहा है। इसके साथ-साथ ये समाजवादी विचार धारा को प्राश्रय देते रहें। किन्तु अध्यात्मिकता किसी संप्रदाय की अलोचना नहीं की। भरसक सभी को आत्मीय भाव से देखने का प्रयास किया है।

शोध प्रविधि – हिन्दी साहित्य के कथा साहित्य में अमृतलाल नागर के मानवीय मूल्यों का अध्ययन नामक शोध पत्र के निर्माण करने में द्वितीय सामाग्री का संकलन किया गया है। जहाँ मानवीय जीवन की आधारशिला को वैचारिक स्तर पर अनुशीलन करने के लिए एक पद्धति कथा साहित्य का अध्ययन रहा है। इसी के विश्लेषण से मानवीय जीवन के औचित्य को पता लगाया जा रहा है। इस हेतु पुस्तकों शोध पत्रिकाओं, कथा साहित्य, उपन्यास आदि का अवलोकन किया गया है।

शोध पत्र का उद्देश्य –

- अमृत लाल नागर के जीवन मूल्यों का अध्ययन करना।
- कथा साहित्य में समाज के प्रति होने वाले चिन्तन का अध्ययन करना।
- वैचारिक मतभेद के साहित्यिक मूल्यों का अध्ययन करना।
- सामाजिक समरसता और विभिन्नता का अध्ययन करना।
- सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक अध्ययन करना।
- साहित्यकार अमृतलाल नागर के धार्मिक विचारधाराओं का अध्ययन करना।

समस्याऐं –

- सामाजिक विसंगतियों के साथ होने वाले साहित्यिक मतभेद ही आज समस्या बन कर सामने उभर रहे हैं।
- मूल्यों और मनुष्य की जीवन शैली और विचारधारा में साहित्य के सृजन की समस्यात्मक दृष्टिकोण भी दिखाई देता है।
- वैचारिक मतभेद साहित्य के मूल्यों को प्रभावित कर रहे हैं।
- मनुष्य की विचारधारा ने आज के युगों को संगति के स्वरूप धारण करने में संकुचित विचारधारा का पाया जाना भी मानवीय जीवन की दिशा को अवरूद्ध कर रही हैं।
- मानवीय मूल्यों का धार्मिक क्षेत्र में क्या औचित्य है। जिसकी विचारधारा का मूल भी सामाजिक विसंगतियों का परिणाम नकारात्मक होने की समस्या विद्यमान हो रही है।

हमरे पिय ठाढ़े सरजू तीर।
छोड़ि लाज में जाय मिली जहँ खड़े लखन के वीर।।
मृदु मुसकाय पकरि कर मेरो खैंचि लियो तब धीर।
झाऊ वृक्ष की झाड़ी भीतर लगे रति धीर।।[1]

भगवान राम के चरित्र का दिव्य ज्ञान की ज्योति का कितने घोर पतन की आशा से व्यक्ति देखते है। इस प्रकार वीभत्स देखकर मानवीय जीवन के रौंगटे खड़े हो जाते है। जिसकी विचार धारा का मानवीय जीवन में मूल्यों का महत्व दिखाई देता है। इससे रामभक्ति का वर्णन मिलता है। जहाँ सात्विक मानोविनोद को विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है। जहाँ खुले रूप में राम भक्ति का प्रकाश फैलाया जा रहा था। जिसकी कल्पना प्रत्येक प्राणी करता है।

इसके सम्बन्ध में श्री अमृतलाल नागर ने कहा कि कटघरे में बंधी नहीं है। क्योंकि समाजवाद किसी राजनीतिक दल का गुलाम नहीं है। यह सामाजिक व्यवस्था स्वतंत्र है। जिसकी हम कल्पना ही नहीं उसकों स्वच्छ बनाने में दल की प्रणाली का परिणाम भी देखकर साहित्य के कथा का वर्णन भी करते है। जहाँ मानवीय जीवन के लिए मूल्यों का होना भी एक दल की कल्पना नहीं ये तो समाजवादी समाज की कल्पना है। जहाँ व्यक्ति और समाज दोंनों के स्वस्थ्य विकास के लिए मानवीय चरित्र उत्तारदायी होता है। किन्तु समस्याओं की झंझट में मानवीय बुद्धि कार्य करना भी बन्द कर देती है। उससे चरित्र का पतन तो नहीं अवमूलन जरूर होता है। जिसकी समालोचना करने की अतिआवश्यकता प्रतीत होती है।[2]

मनुष्यत्व को जानने के लिए मानवीय सम्वेदना का मूल्य ही बढ़ता जा रहा है। मानव जीवन की क्रूरता, कुरूपता और विफलता का परिणाम ही मानवीय जीवन की दिशा को तय करता है। वहाँ असफलता को भी अंकित करते चले गये। किंतु वे उसे ही मानव नियति को समझ नहीं पाते हैं। उनके मन की संकीर्ण स्वार्थो और धनलोलुपता में व्याकुल हो जाती है। जिसकी

* (हिन्दी) अध्ययनशाला विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

मृत धार्मिकता के दुष्टों ने सामाजिक जीवन की वैचारिक धरातल में समाज का कोई भी ऐसा समाज देखने को तैयार नहीं है। जहाँ वे लेखन कार्यों को करते हुए सामाजिक विसंगतियों का मूल्य औचित्य पूर्ण रहा है। इससे सामाजिक मूल्यों का वैचारिक मतभेद होने के लिए विदूषित होना भी आवश्यक समझते थे।

आज्ञाम् देहि महाराज आगमिष्यामि वै पुन:।
कृपादृष्ट्या सदा पश्य सिरसा प्रणमाम्यहम्।।[3]

सामाजिक विसंगतियों को लेकर मित्रता और आने वाले महानुभावों के लिए हितैषी पूर्ण श्लोक द्विवेदी जी तुरन्त सुना देते हैं। जहाँ मानवीय जीवन का सार उपस्थिति होता है। कहते है जिनकी कृपादृष्टि से मानवीय संसार व्याकुल था वह आने वाले है। जहाँ राजा एक प्रजा क अंग है। राजा के अंग ही प्रजा है। जहाँ मानवीय जीवन का आधार ही सामाजिक समरसता हो आधार प्रदान किया जाता है। जिसके सामाजिक पहलू के सन्दर्भ में समाज के मूल्यों के विघटन से होनी वाली दुर्दशा का वर्णन श्रीअमृत लाल शुक्ल जी करते हैं। जिसकी दिशाहिनताा, अर्थहीनता इत्यादि का आदर्श कथा साहित्य प्रस्तुत करते हैं। जहाँ मानव की निष्कृयता का परिचायक उसकी बौद्धिक कुशालता को कहा जा सकता है।

'रिसता रहता है वह पुराना नासूर-सिसकता हैं अधमरा,
स्वाभिमान सिकता से लथपथ और/फिर अपने कुचले,
हुए मस्तक को जरा -सा उठा कर कराह की ध्वनि में बुदबुदाता है।'[4]

साहित्यकाल कवि निर्मल की संवेदना हैं जो मानव समाज के प्रति चिन्तन शील रहते हुए मानवीय जीवन को जीने की पहल करते रहें। वहाँ प्रत्येक प्राणी के व्यंग और रौद्र रूपों का वर्णन कसक की तरह हमेंशा उभरती रही है। जिसकी सामाजिक विसंगतियों का मूल ही मानवीय जीवन के दर्पण का मूल विन्दु ही रखा दिखाई देता है। जहाँ समय और साहित्य के मूल्यों का औचित्य दिखाई देता है। मानवीय निष्क्रियता के साथ होने वाली बौद्धिकता को भी नहीं नकारा जा सकता है। जिसमे जो मनोवैदेहिक चेतना है। उसके लिए जड़-चेतन के समान हैं। जिसे भारतीय समाज स्वीकार करता है। मुझे जीना ही पडेगा। क्योंकि कर्म की महानता का वर्णन ही समाज की विचारधाराओं पर टिका हुआ है। इसे ही मुक्ति के मार्ग पर ले जाने का असली रास्ता दिखाया गया है। जहाँ दोनों की वैचारिकता का औचित्य भी दिखाई देता है। यहीं से यह बंधन ही मेरी मुक्ति का मार्ग है। इस बंधन से निकलना ही अंधकार से बाहर होना है। प्रकाशमान होना है।[5]

निष्कर्ष - श्री अमृत लाल नागर ने मानवीय जीवन को अंधकार से बाहर निकालने का अथक प्रयास किया हैं। जिसकी विचारधारा के औचित्य और मार्ग की विचारधारा का बोध होना भी मानवीय जीवन का आधार रहा है। जहाँ साहित्य के सृजन में कथाकार का एक साहित्यिक पक्ष मूल्यों को बढ़ावा देता है। जहाँ मूल्य हैं वहाँ मानवीय जीवन का कोई भी संकट नहीं सामना कर सकता है। इससे मानवीय संवेदना का औचित्य परिणाम पूर्ण हैं। जहाँ वैचारिक विशालता का परिणाम ही मानवीय जीवन की कला कौशल के परिणाम को सामाजिक दृष्टि से साहित्यकारों ने समझने का प्रयास किया है। उसकी विचारधारा के परिमार्जन का औचित्य ही मानवीय संग्रह का परिणाम दिखाई देता हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, कमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, नवीनतम् संस्करण 1997, पृष्ठ 113
2. अमृत और विष, लेखक अमृतलाल नागर, पृष्ठ 716
3. केशव प्रसाद वाजपेयी, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का हिन्दी जगत्, भारत प्रकाशन लखनऊ, 2014, पृष्ठ 448
4. डॉ. विश्वम्भर नाथ उपाध्याय, समकालीन साहित्य की भूमिका, रचना प्रकाशन, जयपुर, 2012, पृष्ठ 105
5. मानस के हंस, लेखक अमृतलाल नागर, पृष्ठ 01

****

इक्कीसवीं सदी के हिन्दी साहित्य में नारी लेखन

प्रो. झेलम चंद्रकांत झेंडे *

प्रस्तावना – साहित्य सामाजिक परिवर्तन का जीवंत दस्तावेज होता है। इक्कीसवीं सदी में समाज, परिवार और व्यक्ति सभी स्तरों पर जो तीव्रता से बदलाव आया है उसका असर हिन्दी साहित्य पर भी व्यापक रूप से परिलक्षित होता है। नारी शिक्षा के कारण स्त्रियों की मानसिक और बौद्धिक स्थिति में काफी बदलाव हुए हैं। उन्होंने पुरानी मान्यताओं को तोड़कर व्यक्तिगत स्वतंत्रता का मार्ग अपनाया है। इक्कीसवीं सदी के साहित्य का स्वरूप वह नहीं रह गया जो स्वतंत्रता पूर्व हुआ करता था। नारी के सम्बन्ध भी परिवार के साथ पूर्व जैसे नहीं रहे। वर्तमान परिपेक्ष्य में नारी अपनी सही भूमिका को तलाशती हुई स्वयं को पहचानने और कुंठा से मुक्त करने की दिशा में आगे बढ़ रही है। उसकी संकल्प की दृढ़ता और आत्म गौरव से परिपूर्ण निष्ठा समाज में उसे लेखनी के माध्यम से प्रतिष्ठित करने में सहायक सिद्ध हो रही है। इक्कीसवीं सदी का नारी लेखन हमें आधुनिकता, वैज्ञानिकता, तार्किकता, समसामयिकता तथा युगीन भाव बोध का परिचय कराता है। आज का नारी लेखन उच्च कोटि का होने के साथ-साथ वैविध्यपूर्ण भी है। इस सदी की महिलाओं ने अपने लेखन में जीवन और समाज के सभी रंगों को अपनी तूलिका रूपी लेखनी से बड़ी भावात्मकता और कलात्मकता से उकेरा है। इनमें कहीं वृद्ध समस्या है तो कहीं नारी मुक्ति की छटपटाहट, कहीं किसी बड़े परिवार की समस्या है, तो कहीं आधुनिक जीवन का खोखलापन। इक्कीसवीं सदी के नारी लेखन को मैंने क्रमश: उपन्यास, कहानी, काव्य और आत्मकथा जैसी विधाओं के अंतर्गत विभक्त कर प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

इक्कीसवीं सदी और हिन्दी साहित्य में नारी लेखन की प्रमुख विधायें इक्कीसवीं सदी के नारी लेखन को अध्ययन की दृष्टि से साहित्य के निम्न मुख्य विधाओं में बाँटा जा सकता है-

(क)उपन्यास – हिन्दी उपन्यास साहित्य में नारी लेखन पिछले दो-तीन दशकों से एक महत्वपूर्ण स्थान बना चुका है। नारी लेखन के अंतर्गत उपन्यास के क्षेत्र में एक बेहद उर्वर जमीन हिन्दी के रचनात्मक साहित्य में देखी जा सकती है। कृष्णा सोबती की 'मित्रो मरजानी' एक अक्खड़ और और दबंग औरत की एकांतिक तस्वीर प्रस्तुत करती है। वहीं उषा प्रियंवदा की 'रुकोगी नहीं राधिका', 'पचपन खम्भे लाल दीवारें' और 'शेष-यात्रा' में परंपरा और रूढ़ियों के द्वंद्व में फँसी एक आधुनिक स्त्री की अस्मिता को ढूँढने का प्रयास है। मन्नू भंडारी का उपन्यास 'आपका बंटी' की नायिका शकुन की कहानी हिन्दुस्तान के हजारों औरतों के त्रासदी की कहानी है। ममता कालिया के उपन्यास 'बेघर' और 'एक पत्नी के नोट्स' में एक मध्यमवर्गीय पढ़ी-लिखी महिला और पढ़े-लिखे वर्ग को बेनकाब करते हैं। नारी लेखन के क्षेत्र में मृदुला गर्ग के उपन्यास 'अनित्य', 'चितकोबरा', 'मैं और मैं', 'कठगुलाब' आदि ऐसे उपन्यास हैं जिसमें स्त्री विमर्श के विभिन्न रंग देखने को मिलते हैं। चित्रा मुद्गल का 'एक जमीन अपनी' और 'आवाँ' इस दृष्टि से महत्वपूर्ण उपन्यास हैं। मेहरुनिस्सा परवेज ने अपने उपन्यास 'कोरजा' में आदिवासी परिपेक्ष्य में एक औरत के त्रासदी का वर्णन किया है। नासिरा शर्मा का उपन्यास 'एक और शाल्मली' एक अलग किस्म की स्वतंत्र चेतना से युक्त स्त्री की कहानी है जो अपने पति से संवाद चाहती है, बराबरी का दर्जा चाहती है। वहीं उनका दूसरा उपन्यास 'ठीकरे की मंगनी' में बचपन में बिना पैसे के लेन-देन की हुई मंगनी और उसके कारण संघर्ष करती स्त्री की कहानी है। राजी सेठ का 'तत्सम', चंद्रकांता का 'अपने अपने कोणार्क' तथा गीतांजलि श्री का 'माई' आदि ऐसे उपन्यास हैं जिनमें औरत के सामाजिक सरोकार उभर कर सामने आते हैं। नारी लेखन के दृष्टिकोण से प्रभा खेतान का 'पीली आँधी' तथा 'छिन्नमस्ता, मैत्रेयी पुष्पा काइदन्नमम' तथा 'चाक', मधु कांकरिया का 'सलाम आखिरी', अल्का सरावगी का 'शेष कादम्बरी' अनामिका का 'दस द्वारे पिंजरा' आदि प्रमुख स्थान रखते हैं। कमल कुमार का हाल ही में प्रकाशित उपन्यास 'मैं घूमर नाचूँ' राजस्थान के एक बाल-विधवा कृष्णा के चरित्र को दिखाते हुए स्त्री की आजादी को स्पष्ट रूप से रेखांकित करता है।

(ख)कहानी – यदि इक्कसवीं सदी के नारी लेखन के परिपेक्ष्य में कहानी की बात की जाये तो यकीनन कहा जा सकता है कि महिला रचनाकारों ने हिन्दी कहानी के परिदृश्य को ज्यादा व्यापक, संवेदनशील और मानवीय बनाया है। अपने आस-पास के परिवेश का सच शब्दों में रूपायित होकर कल्पना के सही अनुपात में संयोग से कथा का आकार ग्रहण कर लेता है। बीसवीं सदी के अंतिम दशक में कहानी लेखन नारी वर्चस्व के साथ अपनी उपस्थिति दर्ज करता है और इनमें कई लेखिकाओं का लेखन जारी रहते हुए इक्कीसवीं सदी में प्रवेश कर जाता है। इनमें ममता कालिया, चित्रा मुद्गल, नासिरा शर्मा, मृदुला गर्ग, मेहरुनिस्सा परवेज आदि के नाम प्रमुखता से लिये जा सकते हैं। ममता कालिया ने नारी विमर्श के दृष्टिकोण से प्रामाणिक लेखन किया है। उनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं-छुटकारा', 'एक अदद औरत', 'सीट नंबर छ:', 'उसका यौवन'। चित्रा मुद्गल की कहानी 'ताशमहल' दो भागों में बँटी नारी की व्यवस्था को अंकित करती है। सरला अग्रवाल के नारी विमर्श के प्रमुख कहानी संग्रह हैं - 'पुनरावृति नहीं होगी', 'मेंटल पीस'। नीलम शंकर की कहानी 'जो रुकता नहीं' विवाहेत्तार संबंधों पर आधारित है, वहीं चंद्रकांता की कहानी 'बच्चे कब मिलेंगेय दादी के रूप में बुढ़ापे के दर्द से टीसती नारी की व्यथा है। कहानीकार अंजू दुआ जैमिनी का संग्रह 'कंक्रीट की फसल' अपने भीतर की चुनौतियों, व्यक्ति के भीतर की लड़ाई को सहजता से अभिव्यक्ति देता है। तेजी ग्रोवर का कहानी संग्रह 'सपने में प्रेम की सात कहानियाँ' जीवन राग के रंगों का कई आयामों में परिचय देता है। गीतांजलि श्री का कहानी संग्रह 'यहाँ हाथी रहते थेय समय के तेज परिवर्तन को संकेत करता है। भावना शेखर का कहानी संग्रह 'खुली छतरी' धारणाएं ध्वस्त करता है, नये निकष गढ़ता है और पाठक को संतप्त कर चमत्कृत

* वीरवाजेकर अे.एस.सी.कॉलेज, फुंडे, ता. उरण, जिला - रायगड (महाराष्ट्र) भारत

कर देता है। इसमें नारी है तो अभिशप्त, वेश्या है तो चरित्रहीन, दलित है तो पीड़ित जैसे भ्रम और पूर्वाग्रह बार–बार टूटते दिखाई पड़ते हैं। अल्पना मिश्र का कहानी संग्रह 'कब्र भी कैद भी और जंजीरें भी' जुल्म, दहेज हत्या, स्त्री शोषण से जुड़ी घटनाओं को केन्द्र में रखे हुए है। लवलीन की कहानी 'प्रतीक्षा' एक आजाद ख्याल की लड़की की व्यथा कथा है जो अपनी कल्पना के अनुरूप पुरुष की प्रतीक्षा में अपने जीवन का बड़ा हिस्सा गुजार देती है। सुषमा मुनीन्द्र की कहानी 'पिया बसंती' स्त्री मुक्ति के सोपान की चार पीढ़ियों की व्याख्या करता है। श्रीमती दीपक शर्मा की कहानियां 'मेढकी' और 'ऊँची बोली' पुरुष सत्ता के दायरे में अभिशप्त औरत की असामयिक मृत्यु पर खत्म होते हैं। इसी तरह उपासना की कहानियां 'एगहीं सजनवा बिन हे राम' और 'अनाभ्यास का नियम' स्त्री संघर्ष को सजगता से चित्रित करते हैं। इक्कीसवीं सदी की महिला कथाकारों के साहित्य में परिवार के स्वरूप में व्यापक परिवर्तन मिलता है। नारी लेखिकाओं के लेखन का स्वर बदला है और समय के साथ–साथ पारिवारिकता के साथ नारी की भूमिका में क्रमशः अंतर आता गया है।

(ग) काव्य – इक्कीसवीं सदी की लेखिकाओं का लेखन क्षेत्र बहुत विस्तीर्ण और बहुआयामी है। उनके लेखन में नारी विमर्श स्वर प्रमुखता से देखने को मिलता है जिसमें इस सदी की नारी की चुनौतियों, अवरोधों, चिंताओं, विवशताओं का चित्रण प्रमुख है। आज की लेखिकायें नारी को 'आँचल में दूध, आँखों में पानी' लेकर नहीं अपनी अस्मिता की रक्षा करनेवाली और अपनी पहचान बनाने वाली नारी के रूप में प्रस्तुत कर रही हैं। काव्य लेखन के क्षेत्र में नारी लेखन की चर्चा की जाये तो इस सदी की कवयित्रियों ने नारी के अन्तरंग, विषम, जटिल समस्याओं, ज्वलंत सवालों को समझदारी से समझने, सुलझाने का अथक प्रयास किया है। प्रसिद्ध लेखिका ममता कालिया का कविता संग्रह 'खांटी घरेलू औरत' काफी चर्चित रहा है–

'मेरी जगह तुम होते
इस घर में
एक सर्वहारा का जीवन जीते हुए
मैंने परिश्रम को ही माना पारिश्रमिक
तुम मेरी जगह होते
क्या करते सातों दिन श्रम
यह तुम्हारा सौभाग्य है
कभी कोई ऊँची बात नहीं सोचती
खांटी घरेलू औरत'[1]

डॉ. रेणु शाह के 'देहरी के उस पार' में भी यही उद्घोष मिलता है–

'एक अँधेरे से लड़ना है हमको बारम्बार
कैसे कह दें खुश होने की
घड़ियाँ सम्मुख खड़ी हुई
दुविधाओं की बौछारों पर
सबकी आँखें गड़ी हुई
अबकी तो जाना ही होगा
देहरी के उस पार'[2]

जया गोस्वामी की 'पुस्तक हूँ मैं' रचना वंचित, प्रताड़ित नारी का दर्द अभिव्यक्त करती है–

'मैं अनजानी लिपि की पुस्तक
बाँच न पाया कोई अब तक'[3]

वहीं कवयित्री ममता किरण अपने पीढ़ी के एक नये परिदृश्य को अपनी कविता में सशक्तता की आवाज देती हुई कहती हैं –

'लगते हैं उसपर
कितने ही संगीन आरोप
पर वह उफ भी नहीं करती'[4]

इस प्रकार के अनेकों उदाहरण इक्कीसवीं सदी में कविता के क्षेत्र में नारी लेखन के मिलते हैं।

(घ) आत्मकथा – साहित्य के उपन्यास, कहानी और काव्य की विधाओं में अपनी उपस्थिति विशिष्टता से दर्ज करने के पश्चात नारी लेखन का रुझान आत्मकथा की ओर देखने को मिल रहा है। वर्तमान में लेखिकायें आत्मकथा लेखन में अपनी साहसिक अभिव्यक्ति के लिये चर्चा में हैं। यूँ तो आत्मकथा लेखन की शुरुआत पहले ही हो चुकी थी परन्तु पूर्ण रूप से प्रतिष्ठित नहीं हो पायी थी। जैसे 'सरला: एक विधवा की आत्म जीवनी' का प्रकाशन वर्ष 2009 में हुआ परन्तु धारावाहिक के रूप में यह वर्ष 1915 में 'स्त्री दर्पण' में प्रकाशित हो चुकी थी। आज लेखिकाओं ने अपनी समग्र जीवनी का चित्रण बड़ी ही निर्भीक और सशक्त रूप से अपनी आत्मकथा में करना प्रारंभ किया है। प्रसिद्ध पत्रकार शीला झुनझुनवाला ने 'कुछ कही कुछ अनकही' में अपने सात दशकों की जीवन गाथा को बखूबी बयां किया है। 'कस्तूरी कुंडल बसेय मैत्रेयी पुष्पा द्वारा रचित आत्मकथात्मक उपन्यास है जिसमें उनकी जीवन कथा के यथार्थ को नाटकीय ढंग से प्रस्तुत किया है। मन्नू भंडारी की आत्मकथा 'एक कहानी' काफी चर्चित कृतियों में एक है। वहींगुड़िया भीतर गुड़िया' मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथा का दूसरा भाग है। दिनेश नंदिनी डालमिया ने अपनी आत्मकथा चार भागों में लिखी है जिसमें मारवाड़ी परिवार के अंतःपुर का चित्रण मिलता है। कुसुम अंसल ने अपनी आत्मकथा 'जो कहा नहीं गया' शीर्षक से लिखी है। प्रभा खेतान की आत्मकथा 'अन्या से अनन्या' आज के नारी लेखन का सशक्त उदाहरण है जिसमें एक विवाहित पुरुष से अपने सम्बन्ध की साहसपूर्ण स्वीकारोक्ति है। आत्मकथा सच्चे मायने में वही होती है जिसमें पीड़ा के साथ–साथ आपने जो भोगा है, आपका शोषण हुआ है, उसे सच्चाई से चित्रित किया जाये, जिसमें आपकी कमजोरियां भी दर्ज हों। इसीलिए अगर स्त्रियां आत्मकथा लिख रही हैं तो उनपर तरह–तरह के लांछन भी लगाये जा रहे हैं। आत्मकथा के क्षेत्र में यही लगता है सामान अवसर होने के बाद भी अभी औरत निर्द्वन्द्व होकर कुछ मनचाहा रच या लिख नहीं पा रही है। फिर भी महिला लेखिकाओं ने अपनी हिम्मत और समझदारी का परिचय दिया है और इक्कीसवीं सदी में वे नारी लेखन के क्षेत्र में स्वेच्छा से आगे आ रही हैं। हिन्दी साहित्य के समकालीन परिदृश्य की इस चर्चा से स्पष्ट है कि इस सदी की लेखिकायें अपने लेखन को वैविध्यपूर्ण विषयवस्तु देकर, सुसंपन्न कर रही हैं। हमने यहाँ काव्य, कहानी, उपन्यास और आत्मकथा जैसी विधाओं में नारी लेखन की एक झांकी प्रस्तुत की है। किन्तु नारियों के समग्र योगदान से स्पष्ट लक्षित है कि वे नाटक, आलोचना, लघुकथा, संस्मरण आदि विधाओं में यथेष्ट उच्चस्तरीय, गंभीर लेखन से हिन्दी साहित्य की गौरवमयी परंपरा में श्रीवृद्धि कर रही हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. खांटी घरेलू औरत – ममता कालिया।
2. स्त्री विमर्श ब्लॉग।
3. रचनाकार ब्लॉग।
4. हिन्दी शोध डॉट कॉम।

'डोआठन' कहानी दी पार राधा इक आदर्श मां दे रूपै च

कामिनी देवी *

प्रस्तावना – सुदेश राज दी कहानी डोआठन डोगरी साहित्य च अपना खास थाह रखदी ऐ। कहानी दी पात्तार राधा इक आदर्श मांऊ दे रूपै च साढ़े सामनै औंदी ऐ। राधा अपनी धीऊ गी ओह् सारियां खुशियां देना चांह्दी ही जेह्ड़ियां उसी नेईं हियां थ्होइयां। ओह् अपनी धीऽ दा जन्मदिन बड़ी गै खुशी कन्नै मनांदी ही। अपनी धीऽ सोनिया गी दिक्खी-दिक्खी ओह् बड़ी गै खुश होंदी ही।

अपनी अधूरी इच्छाएं गी ओह् अपनी धीऊ दीयां इच्छां पूरियां करियै पूरा करना चांह्दी ही। जेह्दा उदाहरण कहानी दिये इ'नें सतरें च लभदा ऐ -'जदों दी सोनिया जन्मी दी ही- ओह् अदों दी ओह्दी बरसगंढ मनादीं आ दी ही। बडलै पंडित कौला बरसगंढ पूजन कराना, कंजका पूजनियां ते फ्ही सञांलै पार्टी करनी। अज्ज तक उन्न कोई बी ओह्दी बरसगंढ मनाने थमा नेईं खझांई एह खुशिये भरा दिन ओह्दी आसे ते मेदें दा दिन होंदा। ओह् अपनियां अधूरियां इच्छा अपनी धीऽ दे रूप च पूरा करदी ही।'[1]

राधा इक जागरूक मां ऐ। जिस बेल्लै ओह्दी सस्स उसी आखदी ऐ जे ओह् अपनी धीऊ गी ब्याही देयै तां ओह् सस्सू दी गल्लै दा विरोध करदे होई आखदी ऐ-' माता जी। तुस एह् केह् आखा दियां ओ। एह ते अजे ञ्यानी ऐ। सतमी पढ़ने आह्ली कुड़ी बी कदे ब्याहने जोग होंदी ऐ।'[2]

इक मां होने करी उसी धीऊ दी चैंता बी होंदी ऐ ते ओह् ओह्दी हर निक्की-बड्डी हरकत पर नज़र रखदी ऐ। पर जिसलै उसगी एह् एह्सास होंदा ऐ जे ओह्दा ऐसा बर्ताऽ सेही नेईं ऐ तां उसी पशतावा बी होंदा ऐ -'हून ओह्दा एह् रोजै दा नियम बनी गेदा हा जे ओह् चोरी-छिप्पे अपनी धीऽ दी चीजें गी; ओह्दी कताबें गी, अलमारी गी ते ओह्दे पलंग दे गद्दे दे हेठ पेदी दरी गी बी फरोली-फरोलियै दिखदी जे ओह्दे च कोई चीज जां कागज दा पूर्जा ते नेईं। पर अपनी इस हरकत दा पता कुड़ी गी नेईं लग्गन दिंदी। सोचदी, पता नेईं मेरी इस हरकत दा कुड़ी पर केह् असर होग।।'[3]

राधा रूढ़ीवादी नेईं होइयै खुल्ले वचारें आह्ली माऊ दे रूपै च बी नज़री औंदी ऐ। जिसलै ओह्दी धीऽ कुसै जागतै आसेआ दित्तो दा काड उसी दसदी ऐ जेह्दा खुल-मखुला ब्याह् दा निमंत्रण हा तां राधा ओह् काड दिक्खियै अपने पराने चेते च डुब्बी जंदी ऐ जदूं उसी कुसै चिट्ठी लिखी ही ते ओह्दी माऊ नै उसी सुधारने लेई मारेआ हा। पर, ओह् अपनी धीऊ गी उ'आं नेईं ही सुधारना चांह्दी ते चुप्प रेहियै उसी समां दिंदी ऐ तां जे समां पाइयै ओह् आपूं गै गल्त सेही गी समझी सकै। उदाहरण -'पर ओह् अपनी धीऽ गी अपनी मां आह्ला लेखा समझाना न ही चांह्दी। ओह् अपनी धीऽ गी छड़ी इक मो बनियै गै नेईं बल्कि ओह्दी स्हेली बनियै, औने आह्ले जीवन दियें उ'नें गल्ले दे बारे च जानकारी देना चांह्दी ऐ। ओह् चांह्दी ऐ जे ओह्दी धी अपने जीवन दे ऐह्म फैसले बिना कुसै डर-त्राह् दे करै। ओह् अपनी धी गी हांबने लेई चन्न तारे आह्ला सतरंगी पींह्गें आह्ला खुल्ले ते विस्तृत आकाश देना चांह्दी ऐ।'[4]

ओह् हिरखी माऊ दे रूपै च बी चित्रत ऐ। जिसलै ओह्दी धीऽ उसी अपने मनै दा दुख दसदी ऐ जे ओह्दा मन करदा ऐ जे ओह् बी कुसै गी चिट्ठियां लिखै। कुसै गी अपना दोस्त बना। तां मां ओह्दे दुखै गी समझदी ऐ ते उसी इक डायरी आनी दिंदी ऐ तां जे ओह्दी धीऽ अपने मनै दे भाव उस डायरी पर लिखी सकै। ओह् धीऊ दी सेहली बनियै ओह्दा दुख दूर करदी ऐ-'राधा ने ओह् डायरी खरीदी ते घर आइयै डायरी च एह् सतरां लिखियै अपनी सोनिया गी डायरी भेंट कीती। उदाहरण- 'अपनी लाडली धी गी, ओह्दे कमजोर खिन-पलें लेई, ओह्दे अतंर मन दी उसी अपने आप दी पनछान कराने आस्तै, अपने आप गी इ'नें डायरी दे ब'रकें पर तोआरने लेई। ओह्दा सच्चा ते पक्का दोस्त ऐ डायरी। भेंट सरूप' । ओह्दी सच्ची ते पक्की दोस्त मां पासेआं।'[5]

आखर च एह् गलाया जाई सकदा ऐ जे जेकर इक मां, धीऊदी दोस्त बनी जा तां समाज बदली सकदा ऐ। मां, अपने बच्चे गी सेही रस्ते पर पाई सकदी ऐ। इस कहानी दी ऐह् पात्तार हर माऊ गी एह् नसीत दिंदी ऐ जे जेकर मां अपनी धीऊ कन्नै दोस्त बनियै र'वै तां अपने बच्चें गी गल्त रस्ते पर जाने शा बी रोकी सकदी ऐ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कथा कुंज भाग-2, सुदेश राज, डोआठन, सफा-16
2. कथा कुंज भाग-2, सुदेश राज, डोआठन, सफा-17
3. कथा कुंज भाग-2, सुदेश राज, डोआठन, सफा-(17-18)
4. कथा कुंज भाग-2, सुदेश राज, डोआठन, सफा-23
5. कथा कुंज भाग-2, सुदेश राज, डोआठन, सफा-26

* (हिन्दी) जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू (जम्मू - कश्मीर) भारत

जैन भक्त कवि भागचंद जी की रचनाओं का अध्ययन

डॉ. श्रीपाद आरोणकर *

शोध सारांश – जैन संत कवि भागचंद एक महान रचनाकार है। मैंने राग यमन के अंतर्गत उनकी रचनाओं को अपने शोध पत्र के माध्यम से विश्लेषित करने का प्रयास किया है।

शब्द कुंजी – इमन, अध्यात्म, आरोह अवरोह, ध्रुपद, धमार, तराना, आत्मा ।

प्रस्तावना – कविवर का परिचय – कविवर भागचंद जी 19वीं शताब्दी के विद्वान थे। इनके जन्म एवं देहान्त का सही समय ज्ञात नहीं है। ये ईसागढ़ ग्वालियर के रहने वाले थे। ये प्रतापगढ मालवा और लश्कर में भी रहे। ये संस्कृत के साथ हिन्दी के भी मर्मज्ञ विद्वान थे। कवि की संस्कृत और हिन्दी दोनों ही भाषाओं में कविता करने की अपूर्व क्षमता थी, दोनों भाषाओं पर समान अधिकार था। तत्वचर्चा और शास्त्र प्रवचन में इनकी विशेष रूचि थी। इनकी अब तक छ: रचनायें प्राप्त हो चुकी हैं –

1. महावीराष्टक (संस्कृत)
2. उपदेश सिद्धान्त रत्नमाला वचनिका
3. प्रमाण परीक्षा वचनिका
4. नेमिनाथ पुराण
5. अमितगति श्रावकाचार वचनिकाभाषा
6. ज्ञानसूर्योदय नाटक

इसके अतिरिक्त कविवर के 86 भजन प्राप्त हैं।

इन सभी कृतियों की रचना संवत् 1906 से 1913 के मध्य हुई है। यह इनके साहित्यिक जीवन का स्वर्णयुग था। प्रमाणपरीक्षा भाषा की रचना संवत् 1913 में हुई थी इससे अनुमान किया जा सकता है कि इनका जन्म समय इससे 25–30 वर्ष पूर्व अथवा इसके आसपास का रहा होगा।

कवि द्वारा रचित पदों से ही उनके व्यक्तित्व के बारे में जानकारी होती है कि कवि जिनभक्त होने के साथ उच्च विचारक और आत्मचिंतक/आत्मसाधक भी थे। कवि को सांसारिक भोगों की निस्सारता की भरपूर समझ थी। वस्तुस्वरूप की समझ होने से इनके पदों में तर्क विचार और चिंतन की प्रधानता है, दार्शनिकता का पुट है। कवि तत्वश्रद्धानी और ज्ञानी की प्रशंसा करते हैं। इनके पद सैद्धान्तिक हैं। कवि के पदों में ज्ञानी जीव किस प्रकार निर्भय होकर संसार में विचरण करता है, ज्ञानी जीव को किस प्रकार अपना आचार–विचार–व्यवहार करना चाहिए, इस प्रकार का विश्लेषण भी मिलता है। इस प्रकार आपके उपलब्ध सभी पदों में आपके आध्यात्मिक विचारों की गहनता स्पष्ट दिखाई देती है।

राग यमन का परिचय – राग यमन को कल्याण राग के नाम से भी जाना जाता है। यह राग अत्यंत मधुर एवं रात्रि के प्रथम प्रहर में गाया जाता है। मध्यम स्वर का तीव्र होना ही कल्याण थाट जनित रागों की मुख्य पहचान है। कल्याण राग को इमन/यमन आदि अपभ्रंषित नामों से भी पहचाना जाता है।

राग यमन का आरोह अवरोह निम्नानुसार है
नि रे ग म प ध नि सां
सां नि ध प म ग रे सा

राग यमन में सभी तीव्र स्वर होने के कारण यह राग संगीत के विद्यार्थीयों को विषय प्रवेश की जानकारी हेतु अध्ययन संस्थानों एवं गुरूकुलों में सिखाया जाता है।

संगीत के विभिन्न घरानों में यमन राग से संबंधित रचनायें लोकप्रिय है। इसमें गजल, तराना, ध्रुपद, ख्याल, सभी शैलियों को सामान्यत: गाया जाता है।

राग ईमन –

धन धन श्रीश्रेयांसकुमार! तीर्थदान करतार ।। टेक ।।
प्रभु लखि जाहि पूर्वश्रुत आई, चित हरषाय उदार।
नवधा भक्ति समेत इक्षुरस, प्रासुक दियो अहार ।। 1 ।।
रतनवृष्टि सुरगन तब कीनी, अमित अमोघ सुधार ।
कलपवृक्ष पहुपन की वर्षा, जहँ अलि करत गुँजार ।। 2 ।।
सुरदुंदुभि सुंदर अति बाजी, मंद सुगंधि वयार।
धन धन यह दाता इमि नभ में, चहुँदिषि होत उचार ।। 3 ।।
जस ताको अमरी नित गावत, चंद्रोज्जवल अविकार ।
'भागचंद' लघुमति क्या वरनै, सो तो पुन्य अपार ।। 4 ।।

विश्लेषण – वे राजा श्रेयांस (कुमार) धन्य हैं जिन्होंने मुनिवर ऋषभदेव को प्रथम आहार दान किया। श्री ऋषभदेव की मुनिचर्या को देखकर राजा श्रेयांस को अपने पूर्वभव का स्मरण हो आया। उन्होंने नवधा भक्तिसहित प्रासुक विधि से मुनि ऋषभदेव को गन्ने के रस का आहार कराया, जिससे उनके चित्त में अत्यंत हर्ष हुआ।

उस आहारदान की महिमा हेतु देवों ने श्रेष्ठ रत्नों की निरंतर (धाराबद्ध) वर्षा की। कल्पवृक्षों ने सुगंधित पुष्पों की वर्षा की जिनपर भंवरे गंजार करते हुए मंडरा रहे थे।

देवों ने दुंदुभि–नाद किया। मन को प्रिय व सुहावनी लगने वाली, सुगंध से भरी मंद–मंद हवा बहने लगी। अर्थात् आहारदान के प्रभाव से पंच आष्चर्य प्रकट हुए। सारे लोक में सभी उस दाता को 'धन्य–हो–धन्य होय कहकर सराहने लगे।

*विभागाध्यक्ष (संगीत) राजमाता सिंधिया शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

देवांगनाओं ने जिनेन्द्र के चंद्रमा की विकाररहित, धवल कांति के समान यष का गुणगान किया। कविवर भागचंद कहते हैं कि मैं अल्पमति उस अपार पुण्य का कैसे व किस प्रकार वर्णन करूं? अर्थात् वे उस अपार पुण्य का कथन करने में स्वयं को असमर्थ पा रहे हैं।

राग दीपचंदी खम्माचकी –

जैनमन्दिर हमको लागै प्यारा ।।टेक।।
कैंधौ ब्याह मुकति मंगल ग्रह, तोरनादि जुत लसत अपारा।।1।।
धर्मकेतु सुखहेत देत गुन, अक्षय पुन्य रतन भंडारा।।2।।
कहुं पूजन कहूं भजन होत हैं, कहुं बरसत पुन श्रुतरसधारा।।3।।
ध्यानारूढ़ विराजत हैं तहां, वीतराग प्रतिबिम्ब उदारा।।4।।
'भागचंद' तहां चलिये भाई, तजिकै गृहकारज अघ भारा।।5।।

विश्लेषण – हे भव्यजन! जहां जिनेन्द्र की प्रतिमा विराजि तहै वह जैन मंदिर हमें बहुत प्रिय लगता है, अच्छा लगता है।

उस जिनमन्दिर की साज–सज्जा ऐसी हो रही है मानो वह मुक्तिरूपी वधू के विवाह के लिए सज्जित मांगलिक घर हो जो तोरण आदि मांगलिक चिन्हों से चित्रित/मंडित हो।

ये जिन मंदिर जैन धर्म की पताका है अर्थात् जैन धर्म के फैलाने वाले हैं। धर्म स्थल होने से सुख के साधक हैं, स्वाभाविक गुणों को प्रकट करने में सहायक तथा अक्षय कभी न समाप्त होने वाले पुण्यरूपी रत्नों के भण्डार हैं अर्थात् जिन मंदिर में आने वाले को असीम पुण्य होता है।

इन जिन मंदिरों में कहीं पूजन हो रही होती है, कहीं भजन हो रहे होते हैं तो कहीं श्रुत–शास्त्र का पठन–पाठन–विश्लेषण हो रहा होता है जिससे वातावरण पवित्र रहता है।

जिनमंदिर में वीतराग भगवान की ध्यानरूढ/ध्यान में मग्न मुद्रा का प्रतिबिम्ब विराजित है।

कवि भागचंद कहते हैं कि हे भाई! अपनी घर–गृहस्थी का पापयुक्त भार छोड़कर कुछ समय के लिए वहां अवश्य चलिये।

राग ठुमरी –

सन्त निरन्तर चिंतत ऐसैं, आतमरूप अबाधित ज्ञानी।।टेक।।
रोगादिक तो देहाश्रित हैं, इनतें होत न मेरी हानी।
दहन दहत ज्यों दहन न तदगत, गगन दहन ताकी विधि ठानी।।1।।
वरणादिक विकार पुदगलके, इनमें नहिं चैतन्य निशानी।
यद्यपि एकक्षेत्र–अवगाही, तद्यपि लक्षण भिन्न पिछानी।।2।।
मैं सर्वांगपूर्ण ज्ञायक रस, लवण खिल्लवत लीला ठानी।
मिलौ निराकुल स्वाद न यावत, तावत परपरनति हित मानी।।3।।
'भागचंद' निरद्वन्द निरामय, मूरति निश्चय सिद्धसमानी।
नित अकलंक अवंक शंक बिन, निर्मल पंक बिना जिमि पानी।।4।।

विश्लेषण – हे साधो! आत्मा का स्वरूप आवरणरहित, बाधारहित अबाधित है, ज्ञानमय है, संतजन सदैव आत्मा के इसी स्वरूप का चिंतन करते हैं, ध्यान करते हैं, मनन करते हैं।

संतजन चिंतन करते हैं कि रोग आदि तो इस देह के, शरीर के आश्रित हैं अर्थात् रोग का आधार तो यह शरीर है, रोग आदि शरीर के ही होते हैं, इन रोग आदि से मेरे शुद्ध रूप की/जीवस्वरूप की हानि–क्षति नहीं होती। जिस प्रकार आग की ऊँची–ऊँची, गगनचुम्बी लपटें उठती हैं, सारे वातावरण को दग्ध व तप्त करने की क्रिया करते हुए भी वे आकाश को नहीं जलाती उसी भांति आत्मध्यान की अग्नि सभी विजातीय द्रव्य–पाप–पुण्य आदि विकारी भावों को नष्ट कर देती है पर अपने आत्मस्वरूप को नहीं जलाती, उसे नष्ट नहीं करती, बल्कि उसे निखारती है। कहने का तात्पर्य है कि आत्मा अविनाशी है, उसका चिंतन पर का, कर्मों का क्षय करता है, उन्हें जलाता है।

रूप–रस–गंध–स्पर्ष आदि तो पुद्गल के चिन्ह हैं, पुद्गल के लक्षण हैं, पुद्गलजन्य हैं। ये चेतन के लक्षण, चेतन की निशानी, चेतन का स्वरूप नहीं हैं। यद्यपि जीव व पुद्गल दोनों मिलकर एकक्षेत्र में, एक ही स्थान में अवगाह कर रहे हैं, रह रहे हैं फिर भी जीव व पुद्गल के गुण भिन्न भिन्न हैं, दोनों का अस्तित्व पृथक पृथक है।

मैं–आत्मा चैतन्य रूप हूँ, सर्व अंगों से संपूर्णतया ज्ञाता हूं, ज्ञानस्वभावी हूं। फिर भ जैसे मुंह में लवण का टुकड़ा दबाकर खांड की बोरी पर बैठी हुई चींटी खांड के मीठेपन का, मीठे रस का स्वाद नहीं ले पाती उसी भांति मैं/आत्मा निज स्वरूप को भूलकर पुद्गल में ही मग्न हो रहा हूं। मैं पुद्गल के रूप–रस–गंध आदि विषयों के परिणमन को अपना मान रहा हूं, उसमें ही अपना हित समझ रहा हूं इसलिए मैं निराकुलता जो कि मेरा अपना स्वभाव है, का आस्वादन नहीं कर पा रहा, इसलिए मुझे स्वभावजन्य निराकुल आनंद का अनुभव नहीं हो रहा।

कवि भागचंद कहते हैं कि मैं/आत्मा सभी द्वंद्वों से मुक्त, सम्यक बिना किसी टेढे बांकेपन के, सीधा सहज हूं, इसमें किसी भी प्रकार की कोई शंका नहीं है कि मेरा स्वरूप मलरहित स्वच्छ–निर्मल–शुद्ध जल की भांति है, संत लोग निरंतर ऐसा चिंतन करते हैं।

राग चर्चरी –

सांची तो गंगा यह वीतरागवानी,
अविच्छन्न धारा जिन धर्मकी कहानी।।टेक।।
जामें अति ही विमल अगाध ज्ञानपानी,
जहां नहीं संशयादि पंककी निशानी।।1।।
सप्तभंग जहं तरंग उछलत सुखदानी,
संतचित मरालवृंद रमैं नित्य ज्ञानी।।2।।
जाके अवगाहनतैं शुद्ध होय प्रानी,
'भागचंद' निहचै घटमाहिं या प्रमानी।।3।।

विश्लेषण – यह वीतरागवाणी रूपी गंगा/नदी ही सच्ची गंगा है/नहीं है? यह वीतरागवाणी निज की/आत्मा की कथा है जो सतत/निरंतर, निराबाध बहनेवाली है।

इस वीतरागवाणी रूपी गंगा में/नदी में ज्ञानरूपी अत्यंत निर्मल एवं अगाध/गहरा जल है जिसमें संचय भ्रम रूपी कीचड़ का नामोनिशान भी नहीं है, वह संशय आदि से सर्वथा रहित है।

इस वीतरागवाणीरूपी गंगा में सप्तभंगरूपी तरंगे हैं जिनमें सभी पक्षों का कथन/वर्णन अत्यंत सुख प्रदान करने वाला है। इन सप्तभंग तरंगों में संतजनों के चित्तरूपी हंस सदैव ज्ञान–केलि करते रहते हैं।
जिस प्रकार लोक में गंगा में स्नान करना पवित्र माना जाता है, ऐसा माना जाता है कि गंगा में स्नान करने से पवित्रता आती है – पाप नष्ट होते हैं उसी प्रकार यथार्थ में वीतरागवाणी रूपी इस ज्ञान गंगा में अवगाहन करने से समस्त शुभ–अशुभ भाव नष्ट होते हैं और शुद्धता आती है।

कवि भागचंद कहते हैं कि इस बात का निश्य करके अपने अंतर में प्रमाणरूप में सत्य/यथार्थ ज्ञान के रूप में धारण कर लो।

राग दादरा –

चेतन निज भ्रमतैं भ्रमत रहै।।टेक।।
आप अभंग तथापि अंगके, संग महा दुखपुंज वहै।
लोहपिंड संगति पावक ज्यों, दुर्धर घनकी चोट सहै।।1।।

नामकर्म के उदय प्राप्त कर, नरकादिक परजाय धरै।
तामें मान अपनपौ विरथा, जन्म जरा मृत्यु पाय डरै।।2।।
कर्ता होय रागरूष ठानै, परको साक्षी रहत न यहै।
व्याप्य सुव्यापक भाव बिना किमि, परको करता होत न यहै।।3।।
जब भ्रमनींद त्याग निजमें निज, हित हेत सम्हारत है।
वीतराग सर्वज्ञ होत तब, 'भागचंद' हितसीख कहै।।4।।

विश्लेषण – हे चेतन! तुम अपने ही भ्रम के कारण संसार में भ्रमण करते रहे हो।

तुम स्वयं अखण्ड चैतन्य–पिण्ड हो परंतु अपने अखण्ड रूप को न देखकर इस पुदगल देह के संग के कारण अपार दुखों को सहन कर रहे हो, जैसे लौह का पिण्ड जब अग्नि की संगति पाता है तब अग्नि में तपकर स्वयं अग्निरूप हो जाता है, उस समय उस पर कठोर घनों की चोटें पड़ती हैं जो उसे सहनी पड़ती है।

नामकर्म के उदय से यह आत्मा मनुष्य, तिर्यंच, देव व नारकी आदि अनेक पर्यायें धारण करता है और फिर उन्हीं पर्यायों को अपना मानकर उनमें रत हो जाता है, वहां जन्म–बुढ़ापा–मृत्यु आदि को प्राप्त करता है और उनसे भयभीत होता रहता है।

यह चैतन्य पर द्रव्यों का कर्ता नहीं है, फिर भी विभावश, अशुद्ध भावों के कारण पुदगल की ओर उन्मुख होते हुए अपने आप को कर्ता मानकर राग द्वेष मोह आदि की परिणति करता है, उन्हें मात्र ज्ञाता दृष्टा होकर साक्षीरूप से नहीं देखता, नहीं जानता। पुदगल और चेतन में व्याप्य व्यापक भाव नहीं है, दोनों द्रव्य सर्वथा भिन्न है। दोनों में व्याप्य व्यापक भाव के बिना यह जीव कभी भी पर का पुदगल का कर्ता नहीं हो सकता।

कवि भागचंद जी हितकारी सीख देते हुए कहते हैं कि जीव को जब यथार्थ स्थिति का भान होता है तब कर्तापने की भ्रम का नाश होता है, भ्रम की तन्द्रा भंग होती है तब स्वकल्याण के लिए स्वरूप समझ में आता है। फिर निजरूप में, स्वरूप में अवस्थित होकर वह वीतरागी हो जाता है, सर्वज्ञ हो जाता है।

कवि भागचंद की रचनाओं में संगीत का प्रभाव – कविवर संगीत के प्रति अपनी गहरी जानकारी को भजनों के माध्यम से व्यक्त करते हैं। राग के अनुरूप एवं भाव के अनुरूप राग के स्वरों को चुनना एवं एक मधुर ताना बाना बुनना भी कविवर की विशेषता है। कवि ने प्रचलित तालों का अपनी रचनाओं में समावेश किया है। तिस्म एवं चतुरल जाति के तालों का अधिक प्रयोग परीलक्षित होता है।

कविवर न केवल संगीत में अपितु काव्य में भी प्रवीण है क्योंकि शब्दों, भावों एवं स्वरों के माध्यम से अपने परमतत्व की गौरव गाथा वे गाते हैं। साथ ही सहज एवं बोधगम्य भाषा के साथ आध्यात्मिक अनुभूतियों को समझाते हैं तथा उसकी आवश्यकता का गुणगान करते हैं।

निष्कर्ष – निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि कविवर भागचंद संगीत एवं काव्य कला में मर्मज्ञ हैं। संगीत के स्वरों को एवं काव्य के शब्दों को आपने अलग बनाया है ताकि कठिन आध्यात्मिक अनुभूतियों को प्रेषित किया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कविवर भागचंदजी की पुस्तक ।
2. संगीत विशारद ।
3. संगीत बोध ।

****

सौंदर्य की अवधारणा कला एवं संगीत के परिप्रेक्ष्य में

प्रो. वनिता धुर्वे * प्रो. रवीन्द्र कु. धुर्वे **

प्रस्तावना – बोध का संबंध बुद्धि से है। इसलिए सौंदर्य बोध मनुष्य के बुद्धि-विवेक में जुड़ा है। मनुष्य की बुद्धि ही सौंदर्य की धारणा करती है। चाहे कोई सौंदर्य के तत्व न बता पाए, पर सुंदर क्या है उसे वह जानता है। यह उसकी बुद्धि और अनुभव से तय होता है। अनुभव से ही वह किसी वस्तु दृष्य, पंक्ति या ध्वनि को सुन्दर मानता है। मगर सुन्दरता के साथ कल्याण का तत्व भी है। मानव अपने अनुभव से उसे सुन्दर मानने से बचता है, जो कल्याणकारी न हो। कोई विषैली वस्तु या दुष्ट व्यक्ति देखने में कैसा भी हो, उसे सुंदर कहने वाले कम ही होगें। वही साहित्य के साथ भी है। जुगुप्सापूर्ण लेखन में कितनी भी शाब्दिक बाजीगरी हो, उसे सुंदर नही माना जाता है। इसलिये सौंदर्य बोध शिवत्व बोध से जुड़ा हुआ है।

सौंदर्य की धारणा मनुष्य के भौतिक कामनाओं से जुड़ी हुई नहीं है। कामनाए जो हमसे काम कराती है, उससे स्वतंत्र है, सौंदर्य बोध जब किसी रंग बिरंगी धरती बहती हुई नदी, आसमान में बादलों का खेल या किसी संगीत को सुन कर ठिठकते है, तो यह हमारी किसी जरूरत को पूरा नही करता।

आहार, भय, निद्रा या मैथुन से निरपेक्ष सौंदर्य बोध हमारी विवेक का मुक्त उपहार है। अज्ञेय वे कहा था कि सुंदर से हमें जो उपलब्धि होती है, उसे हम आनंद कहते है। यह आनंद किसी कामना या धन से जुड़ा हुआ नहीं है। इसमें भौतिक सुख से अधिक बड़े गौरव की उपलब्धि है। हवा में झूमते पेड़, खिलखिलाता हुआ शिशु, चिड़ियों की चहचहाहट महान साहित्य को पढ़ कर, महान संगीत को सुन कर, महान कलाकृति को देख कर मिला आनंद एक स्वतंत्र अनुभूति है। उसे हमारी किसी न किसी भौतिक जरूरत से जोड़ कर देखना भूल है।

कला के संदर्भ में – कला मनाव संस्कृति की उपज है। मनुष्य मे रचनात्मक प्रवृति स्वाभाविक है। कलाओं के संदर्भ में सौंदर्य-चेतना के विचार विमर्श की शुरूआत कब हुई यह ठीक-ठीक बता पाना मुश्किल है, लेकिन व्यवस्थित चिंतन के रूप में 'सौंदर्यशास्त्र' अठारवीं शताब्दी की देन है। 'सौंदर्यशास्त्र' पाश्चात्य शब्द 'एस्थेटिकस' का हिन्दी अनुवाद है। लेकिन इस शब्द के आने से बहुत पहले ही पश्चिम में दर्शन-शास्त्र के अंतर्गत सौंदर्य और कला संबंधी चिंतन होता आया था। इस प्रकार सौंदर्यशास्त्र का प्रारम्भिक विकास दर्शनशास्त्र की एक शाखा के रूप में हुआ और बाद में क्रोचे द्वारा बीसवीं शताबदी के आरम्भ में इसे दर्शनशास्त्र की एक स्वतंत्र और सम्पूर्ण शाखा के रूप में मान्यता दी गई।

क्रोचे का सौंदर्य-सिद्धांत अभिव्यंजना के सौंदर्य या उक्ति के सौंदर्य पर आधारित था। उसमें वस्तु (Content) कुछ नहीं। वह कल्पना की सहायता के बिना प्रकृति में कही कोई सौंदर्य नहीं मानते। जो कुछ सौंदर्य होता है वह केवल अभिव्यंजना में, उक्ति स्वरूप में। यदि सुंदर कही जा सकती है तो उक्ति ही, असुंदर कही जा सकती है तो उक्ति ही। अनुभूति का आत्म-प्रकाश सौंदर्य ही है।

कला के भेद – कलाओं को सामान्यत: दो वर्गो मे विभक्त कला, मनुष्य के सौदर्यबोध की प्रतीक है। उपयोगी कलाओं में बौद्धिकता तथा उपयोगिता का सम्मिश्रण रहता है। ललितकलाओं में वस्तुकला, मूर्तिकला, चित्रकला, संगीतकला और काव्यकला की गणना होती है। उपयोगी कलाऐं मनुष्य की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति से संबंद्ध है। उपयोगी कलाओं में थोड़ा-बहुत सौंदर्यबोध का भाव तो रहता है। कुर्सी, मेज आदि वस्तुओं में डिजाइन का बयान रखा जाता है। इस प्रकार उपयोगी कला व्यवहारजनित और सुविधाबोधी है तथा ललित कला मन के संतोष के लिए है। साथ ही उसमें उस विशिष्ट मानसिक सौंदर्य की योजना है, जो उपयोगिता से भिन्न वास्तु है।

संगीत में सौंदर्य बोध – मनुष्य के हृदय में स्थायी भाव सदैव विद्यमान रहते है। उन भावों के उद्दीयन से ही रस उत्पन्न होता है और इस रस से कला-जन्म सौंदर्य की अभिव्यक्ति होती है। इसी को अंग्रेजी भाषा में 'ऐस्थेतिक वेल्यू ऑफ आर्ट' कहते है।

भाव प्रधान कृति या रचना ही श्रेष्ठकला की श्रेणी में आती है। सनातन भाव कला के माध्यम से स्वाभाविक रूप में उभरकर कला जन्म आनंद प्रदान करते है। उस समय व्यक्तिगत राग और द्वेष मनुष्य के हृदय या मन का स्पर्श नहीं कर पाते। इसीलिए पास में बैठे हुए शत्रु के साथ भी हम तन्मयतापूर्वक साहित्य, संगीत अथवा नाट्य का आनंद लेते है। देश, काल, संबंध स्थिति -इन सबको भूलकर हम कला की सनिर्वचनीय सत्ता में पंहुच जाते है, और उस समय हमारे हृदय में जिस आनंद का अविर्भाव होता है, उसी को सौंदर्य-बोध अथवा रसानुभूति की अवस्था कहते है। संगीत को सौंदर्य शक्ति के द्वारा प्राणी के स्थायी भावों को जगाकर उसे इस-मग्न कर देना कलाकार का लक्ष्य होता है। इसका ठीक-ठीक परिपाक सिद्ध कला कार की प्रवीणता का परिचायक होता है। संगीत का सौंदर्य, ताल, लय और गति पर निर्भर तो होता ही है। सौंदर्य-बोध की दृष्टि से किसी श्रोता का संगीत-मर्मज्ञ होना आवश्यक नही है। क्योंकि संगीत समझने की नही, अपितु अनुभव करने की वस्तु है। शब्द समझा जाता है, स्वर का अनुभव किया जाता है। लय अनुभव से उत्पन्न आनंद को रक्त और प्राण के माध्यम से मनोमय कोष तक पंहुचाती है। कुछ व्यक्ति गंध-भेद नहीं कर सकते, अर्थात् गुलाब और केवड़े की गंध उनके लिए केवल सुगंध मात्र होती है। उनके प्रकार अथवा भेद की अनुभूति उन्हें नहीं होती। इसी प्रकार कुछ व्यक्ति

* सहायक प्राध्यापक (संगीत) शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (संगीत) शासकीय ठा. रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

स्वाद-शेष, स्पर्श-भेद, रंग-भेद करने में असमर्थ होते है। ऐसे व्यक्ति नाद-भेद भी नही कर सकते।

संगीत का सौंदर्य नाद और लय के सूक्ष्म तत्वों पर आधारित होता है। ये तत्व संगीत में प्राण की प्रतिष्ठा करते है। श्रुति को स्वर, स्वर को राग और राग को रस में परिणत करके उत्साह, विनोद, मादकता, करूणा, चिंता एवं उत्सुकता इत्यादि को उभारकर प्राणी को तन्मय कर देते है। तन्मय कर देने वाले इस सौंदर्य बोध पर बहुत कम लोगों ने विचार किया है। संगीत का सौंदर्य उस रस में निहित है, जो रजोगुण तथा तमोगुण के समाप्त होने पर अंत: करण के सत्व गुण को उभार कर चेतना-विशेष में परिणित कर देता है और उन क्षणों मे मुनष्य काम, क्रोध, शोक, लोभ तथा चिंता इत्यादि से मुक्ति पाकर ब्रम्हानंद-सहोदर संगीत - आनन्द में अवगाहन कर देता है।

ध्वनि से उत्पन्न व्यंजन शब्द को जन्म देता है, शब्द अर्थ को जन्म देता है, अर्थ से स्पंदन होता है, स्पंदन से पुन: स्वर का जन्म होता है, और उस स्वर से सौंदर्य की सृष्टि होती है तथा शब्द और उससे उत्पन्न अर्थ बहुत पीछे छूट जाते है। जब तक शब्द की सत्ता रहती है, तब तक भौतिक आनंद और जब स्वर की सत्ता प्रारंभ होती है, तब आध्यात्मिक आनंद की अनुभूति होती है। यह आध्यात्मिक आनंद ही विशिष्ट आनंद या 'सौंदर्यतत्व' है।

आहत वाद से सौंदर्य के असीमित भेद प्रकट होते है और श्रोता को सविकल्प समाधि उपलब्ध होती रहती है, एवं अनाहत नाद से निर्विकल्प समाहिका उपलब्धि होती है। संगीत के शास्त्रकारों ने आहतनाद पर ही अधिक विचार किया है, क्योंकि स्वांत: सुखाय के अतिरिक्त वह लोक-रंजक भी है।

संगीत का सौंदर्य बुद्धि-निरपेक्ष है, यह बात कभी नहीं भूलनी चाहिए। अन्यथा न तो संगीतकार आल्हाद संगीत का सृजन कर सकेगा और न श्रोता को उस संगीत से रस उपलब्ध हो सकेगा। समस्त कलाओं में केवल संगीत ही ऐसी कला है, जिसे अपना स्वरूप प्रकट करने के लिए संतुलित नाद बिन्दुओं की अपेक्षा होती है अन्य किसी उपादान की नहीं। एक प्रकार से उसका सौंदर्य स्वत: सिद्ध है। क्योंकि सम्पूर्ण जगत नादाधीन है।

संगीत का सौंदर्य-बोध स्वर की उत्पत्ति उसकी विशेषता, उसके प्रकार, समय, जाति, घनत्व, लय एवं गुण पर आधारित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राग सौन्दर्य - डॉ. रमाकान्त द्विवेदी
2. संगीत का सौन्दर्य बोध - डॉ. उमा गर्ग

****

कत्थक नृत्य में सहायक वाद्यों की भूमिका एवं प्रयोग ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य के संदर्भ में

चन्द्रसिंह केलवा *

प्रस्तावना – भारतीय संगीत में गायन,वादन एवं नृत्य इन तीन कलाओं का समावेश किया गया है। सारंगदेव ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ–संगीत रत्नाकर में लिखा है–

'गीतं वाद्यम् तथा नृत्य त्रयं संगीतमुच्यते'[1]

भारतीय जीवन मे कला को सत्य, शाश्वत, नित्य और अनादि माना गया है। इसकी आराधना लोक रंजन और परमार्थ दोनों के लिए की गई है। सृष्टि की रचना एक अदृश्य कुशल सर्जक की संरचना है। जो समय के विभिन्न उत्सवों को स्वर. लय–ताल में गतिमान कर छंद, रंग एवं रेखाओं से सम्पूर्ण चराचर प्रकृति में रचती है। प्रकृति के लय ताल एवं स्वर से जुड़कर मनुष्य का तन–मन जब अप्रतिम आनन्द और उल्लास से थिरक उठा होगा, तभी शायद उसी क्षण देह का परिचय हुआ होगा नृत्य से। नृत्य और गायन को हमारे यहा मोक्ष प्राप्ति का श्रेष्ठतम साधन बताया गया है। द्वारिका महात्म्य में लिखा है –

यो नृत्यति, प्रहष्टात्मा भावैरत्यन्त भक्तित: ।
स निर्दहति पापानि जन्मान्तर शतैरपि ।। [2]

अर्थात– जो प्रसन्न चित्त से, श्रद्धा और भक्तिपूर्वक भावों सहित नृत्य करता है वह जन्म–जन्मांतरों के पापों से मुक्त हो जाता है। नृत्य मनुष्य को स्वभाव से प्रिय है। तभी यह नृत्यकला जीवन की विविध खुशियों में सजती, जीवन की हर अनुभूति नृत्य में समायी हुई है। नटराज शिव ने जीवन की हर अनुभूति को नृत्य में व्यक्त किया है, श्रीकृष्ण और राधा ने भी रास नृत्य की सरस भूमि पर श्रृँगार, दर्शन, भक्ति और वैराग्य का रहस्य उद्घाटित किया है।

भारत के प्राचीन परम्परागत शास्त्रीय नृत्यों की श्रृंखला में कत्थक नृत्य का प्रमुख स्थान है। वस्तुत: कत्थक नृत्य अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व बोध के लिए कथक शब्द पर ही अवलम्बित है। संस्कृत, पाली, प्राकृत के अतिरिक्त नेपाली भाषा के साहित्य व शब्दकोषों में प्राप्त अर्थ परम्परा कथक शब्द को मुख्यत: तीन विशेषताओं से सम्बद्ध करती है, कथा, अभिनय और उपदेश।[3]

कत्थक नृत्य अपने प्रस्तुतिकरण में जितना स्वतंत्र है उतनी कदाचित् कोई भी अन्य नृत्य शैली नहीं। जिसके अंतर्गत ठाट, आमद, बोल, तोड़े टुकड़े, परन, तत्कार का प्रस्तुतिकरण सामान्य रूप से किया जाता है। कत्थक नृत्य के इस नृत्य अंश की कतिपय विशेषताएँ उल्लेखनीय हैं जैसे कि यों तो सभी भारतीय नृत्य शैलियों के कलाकार अपने पैरों में घुंघरू बाँधते हैं किन्तु इन घुंघरूओं का जैसा वास्तविक प्रयोग कत्थक शैली में किया जाता है वह संसार में अद्धितीय है। तबला पखावज से निकलने वाले एक–एक बोल को ये कत्थक नर्तक बहुत सफाई के साथ अपने घुंघरूओं से प्रतिध्वनित करते हैं। सौ वर्ष पूर्व तक के नृत्य संबंधी ग्रंथों में तोड़ा व परमेलुओं का उल्लेख तो मिलता है किन्तु 'परनों' का नहीं। इससे पता चलता है कि तबला– पखावज का इतिहास ज्यादा पुराना नहीं किन्तु जब से यह प्रचार में आए तब से ही कत्थक की संगत कर रहे हैं।

सांगीतिक पृष्ठ भूमिका का प्रभाव प्रस्तुतकर्ता, दर्शक के मन पर प्राय: होता है, जहाँ वह प्रस्तुतकर्ता को भावाभिव्यक्ति की स्फुरणा देता है वही दर्शकों को भाव, कला अनुभूति को सुग्राह्य बनाने में भी सहायक होता है।सृष्टि का उत्स नाद ही है नादात्मक सृष्टि के प्रत्येक सृजन का नाद से अन्यान्य सम्बन्ध अभीहित है। अत: जहॉ जो भी है वह नाद से आबध्द है, प्रस्फुटित है, व्यक्त है। आहत – अनहत दोनो ही इस सृष्टि का मूल आधार है।

प्रतीत होता है यह प्राकृतिक अंर्तसंबंध नृत्य के व्यापक भाव हेतु अपरिहार्य है इस प्रकार नृत्य के साथ सांगीतिक संगत का तालमेल इतना व्यापक हो गया या यह भी कह सकते है कि अपरिहार्य सा हो गया है कि इसके अभाव में नृत्य अपूर्ण सा प्रतीत होता है।

संगीतात्मक अभिव्यक्ति अभिनय, काव्य तथा विचारों को परिपुष्ट करती है, पोषित करती है जहॉं कथन की मुद्राओ, भंगिमाओं की अभिव्यक्ति, क्षमता को गुणात्मक वर्धमान बनाती है वहीं लास्य से महिमामण्डित भी करती है। गीत, बोल तथा स्वर और राग कथन के आधार है विभिन्न मुद्रा तथा भंगिमाओं के माध्यम से नृत्य का अवतरण होता है सुधी दर्शक व श्रोता उसे आत्मसात करते है, परंतु उन भावों को तद्धत, तद्धरूप अभिप्रेत उद्देश्य के अनुरूप मंच से दर्शकों तक व्यापक बनाने में संगीत वाद्यों की बड़ी भूमिका होती है। तंतुवाद्य, तालवाद्य, वायुवाद्य जैसे आधुनिक व प्राचीन सभी वाद्यों ने कत्थक नृत्य परम्परा को बहुत व्यापक बनाया है कत्थक नृत्य के साथ साथ अन्य विधाओं को भी समृद्ध तथा परिपोषित भी किया है।

ताल वाद्यों में सर्वप्रथम बोल के पूरक के रूप में मृदंगम् ही समावेषित हुआ है जो नृत्य की अभिव्यक्ति आधार भूत तत्व है, घुंघरूओं की खनक तथा मृदंगम की ताल तथा थाप के अभाव में कत्थक नृत्य की परिकल्पना भी नही की जा सकती है, ये वे तत्व है जिनसे नृत्य की निष्पत्ति होती है यह कहना अतिश्योक्ति नही होगा।

भगवान नटराज के 'ढक्का' के विविध रूपों में नाद (ताल) वाद्य का नृत्य के साथ अविच्छिन्न सम्बन्ध है ये दोनो ही एक दूसरे के बगैर अभिव्यक्त भी नही हो सकते है। अत: मृदंगम् अनिवार्य और अपरिहार्य वाद्य है ये नृत्य को प्राणवान बनाते है दर्शक के भीतर भाव की सृष्टि का आधार सृजित करते है।

कत्थक के साथ जहॉ अनादिकाल से ढक्का, मृदंग, ताल, बोल आदि जुड़ रहे है कालांतर में आधुनिक ताल वाद्य यंत्रों के परिष्कार, आविष्कार ने नये नये वाद्य तथा यंत्रों को कत्थक के साथ समाहित किया। ये प्रयोग तथा

* शोधार्थी (संगीत) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

इसका दर्शकों के लिये प्रतिफलन इतना प्रभावी हुआ कि यह कत्थक के मौलिक तथा मूर्त रूप का पर्याय बनकर रह गया। मृदंग, पखावज, तबला सितार, सारंगी, वायलिंन, वेणु, हार्मोनियम जैसे वाद्य यंत्र कत्थक ही नही अपितु नृत्य मात्र के लिये अपरिहार्य संगत यंत्र हो गए है।

आज कत्थक में तबले की प्रधानता बढ़ती जा रही है। तबले के विशिष्ट बोलों जैसे ढुपल्ली, तिपल्ली, चौपल्ली, गत उठान, फरमाईशी, कमाली आदि कत्थक के अंग बन चुके है। शुद्ध तबले के पेशकार, आदि भी तत्कार में निकाले जाने लगे हैं। इस प्रकार हम देखते हैं तबला–पखावज ने कत्थक के नृत्तांग के भण्डार में दिनों दिन वृद्धि की हैं।

इनका प्रभाव, गुण, ओज, गांभीर्य तथा संगत की समग्र समावेषित उर्जा नृत्य को दर्षकों को आत्मसात करने के लिये पूर्ण सहायक होती है वहीं नर्तक अथवा प्रस्तोता के लिये नृत्य को सहज, सरल और स्वाभाविक रूप प्रदान कर देती है।

अत: इस शोध पत्र के लक्ष्य के अनुरूप हमें यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि कत्थक की प्रस्तुति स्वरूप तथा उद्देश्य की सिद्धि के लिये सहायक वाद्यों की भूमिका नि:संदेह अपरिहार्य है। इसके अभाव में नर्तक, दर्षक तथा श्रोताओं को समग्र रसानुभूति होना असंभव सा होना प्रतीत होता है।

सारांशत: यह स्वयं सिद्ध है कि सहायक वाद्य यंत्र अनादिकाल से नृत्य के साथ रहे है और रहेंगे। अद्यतन नित नवीन, सर्जित वाद्य यंत्रों को नृत्य के साथ जितना–जितना समावेषित किया है वह नृत्य विधा, दर्शक तथा सुधीजनों के साथ शोधकर्ताओं के लिये बहुआयामी आनंदवर्धक रहा है, उपादेय रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कत्थक नृत्य शिक्षा भाग 1 – लेखक डॉ. पुरू दाधीचजी पेज क्र. 7
2. कत्थक नृत्य – लेखक डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्ग पेज क्र. 16
3. कत्थक नृत्य शिक्षा भाग 2 – लेखक डॉ. पुरू दाधीचजी पेज क्र. 87

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

Jodha Akbar Costumes - A Timeless Inspiration For Indian Weddings

Sameeksha Gautam* Rajeev Kumar**

Abstract - There are so many love stories and it is always endeared by many people. Among the stories some are appointed for the screen film, with the aim that can provide entertainment for many people. Not only fictional stories, seems now quite popular to lift a love story based on the history of the world. The stories are real is what raised the rating of a film. Especially when added lots of spice and intrigue in the story. Jodha- Akbar tells the story of a journey of true love between a king Jalaluddin Akbar and queen Jodha Bai. The love story filled with political conflicts during the reign of mughal. The story that took place in the 16th century is very interesting, especially the history of the Islamic empire. This love story has interfaith, between Islam and Hinduism. A Muslim and Hindu marriage has never been done before during this time. On the mughal side, Jalal is not without opposition as well. However, tired of war, Jalal hopes to unite the Hindus and the Muslims in a different way other than force. He hopes this political marriage will help. Thus they marry. This drama series have forecasted on television and is interesting ever had highest rated by the audience. The touching story between interfaith romances is certainly favoured by many connoisseurs of television, especially for housewives and they enjoy romance of king and queen and also interested in beautiful clothes, bold chunky jewellery designed by the costume designer. It is not an easy job to design epic costume and jewellery of that period its need well research. As the Mughal era was known for its grandiosity for designing outfits for Jodha and Akbar warm tones of color, rich woven fabrics, zardozi, kundan, gotta Patti and stones embedded embroideries work are used.
Key Words - Jodha, Akbar, Mughal Empire, Costumes, Jewellery, Fashion Designer, Romance.

Introduction - In each and every civilization costumes are the main sources to determine the polity, social status and hierarchy in any society. The costumes help to determine economic status too and to some extent culture and religion also. The other important factor which determines the nature of costumes is the climatic conditions of the region. Costume is a set of clothes of a particular country or historical period. Costumes are the mirror of civilization. The different stages in a civilization urban, rural, tribal, feudal or industrial can easily observed with the help of dress. The dress of the Mughal like their fine art and architecture was not completely confined to one race. The contemporary culture like that of Muslims or Hindus, Persians or Turks had influenced its culture. This great combination of different cultures contributed a lot to the development of the culture of the Mughal. Costumes design is the fabrication of clothing for the overall appearance of a character or performer. Costume is specific in the style of dress particular to a nation, a class, or a period. The most basic designs are produced to denote status, provide protection or modesty, or simply decorate a character. Costume design is a tool to express an art form, such as a play or film script, dance piece. Costumes may be for a theatre, cinema or musical performance but may not be limited to such. In many civilization costumes reflect something more than mere clothing. Costumes reflect mainly the structure of society.

Mughal Clothing- Mughal clothing refers to clothing developed by the Mughal in the 16th, 17th and 18th centuries throughout the extent of their empire in the Indian subcontinent. It was characterized by luxurious styles and was made with muslin, silk, velvet and brocade. Elaborate patterns including dots, checks and waves were used with colors from various dyes including cochineal, sulphate of iron; sulphate of copper and sulphate of antimony were used. Fabrics of the time included wild goat's hair cloth (tus) and pashmina, light and warm wool. Silks were often embroidered with gold and silver thread and embellished with laces. Men wore long and short robes and coats including the chogha (clothing), a long sleeved coat. A"Pagri" (Turban) was worn on the head and "Patka", an adorned sash, was worn on the waist. "Paijama" style pants were worn (leg coverings that gave the English word Pajama). Other clothing types included: "Peshwaz" style robes and "Yalek" robes. Women wore "Shalwar", "Churidar", "Dhilja", "Garara", "Farshi". They wore lots of Jewellery including earrings, nose Jewellery, Necklaces, Bangles, Belts, and Anklets.

Pagri styles included: "Chau-goshia", in four segments,

*Department of Fashion Designing, J.V.W.U., Jaipur (Raj.) INDIA
**Lecturer (Fashion Designing) J.V.W.U., Jaipur (Raj.) INDIA

the dome shaped “Qubbedar”, “Kashiti”, “Dopalli”, embroidered “Nukka Dar”, and embroidered and velvet “Mandil”. Shoes styles included “Jhuti”, “kafsh”, “Charhvan”, “Salim Shahi” and “Khurd Nau” and were curved up at the front. Lucknow was known for its shoes and threading embroidery with gold and silver aughi during the Era. Mughal emperor turban ornaments on them. They were made of gold and precious gems such as rubies, diamonds, emeralds and sapphire. **(Picture See next page)**

Jodha - A Historical account which is no less than a fairytale is the story of Jodha, who was the queen of the great Mughal emperor Akbar. What started off as a matrimonial alliance to strengthen the relationship between Hindus and Muslim becomes a story of love and power that has been showcased in different ways over several years. Movies, Stories, documentaries and interesting articles have over time proved the story of love between the Rajput princess and the great Mughal King, so much so that it is hard to not acknowledge the fact that Jodha bought much more than just her title to the pages of history. Her timeless beauty, her regal approach in dressing and style has carved a legend of its own.

History of Jodha Costume and Style - The costumes worn by Jodha before entering the limelight, traces its roots and emergence way back to the Mughal Period which was truly patronized by the historic legend ‘Jodha Bai’. These royal costumes were inspired by the Mughal style of clothing which also had innovative slices of the Rajput style of designs and embroideries in it. The grandness of these costumes was given the essence of reality by the artisans who intricately woven exquisite styles of embroidery, motif and embellishments on the finest forms of Silk and Cotton, during the golden era of the mughal dynasty.

Fabrics like silk; cotton and brocade were stitched along with intricate embroideries of Kundan, Crystal Stones and Zardozi. Based on historical facts figures, Jodha wore ornate jewellery and lehengas along with dupattas that had rich colors and heavy borders. Large neck pieces and earrings, and a large nose ring, also called a ‘BALI’ were used to adorn her flawless beauty. She may have married the greatest Mughal ruler, but her roots were deeply embedded in the Rajput culture and style which always showed in her colourful dupattas or her elaborate lehengas. For the most part Jodha always covered her head with pallu of her dupattas, while on the hand she only went bare heated when she was in her palace room, or basically indoors. Another symbol of her Rajput roots was her way of adorning herself, which was a red bindi, which also further showcased her sense of tradition.

Sketches of Jodha Ensembles - (Picture see in the next pgage)

Akbar - Akbar was a great patron of art and culture, and his court had several luminaries serving him. He promulgated Hindu-Muslim unity and propagated a new religion Din-I-llahi. Akbar had a distinct sartorial style and his persona continues to inspire Indian Ethnic Fashion even today.

History of Akbar Costume and Style - In spite of being one of the greatest kings in India and having all the wealth and nobility, Akbar was a simple man, and was deeply inclined towards religion and philosophical matters. Akbar was fond of comfortable things and had an inclination towards shawls, especially a kind that was known as the ‘Dorukha’ shawl, which was a two, sided or double faced shawl which if worn frame any side would represent the same embroidery. These shawls were of Kashmir creation and certain references have been made in an autobiography written by Akbar known as ‘Ain-e-Akbari’. He had an extremely large collection of these shawls and was often seen wearing one.

Even though Akbar was simple in his thoughts and a man who did not indulge in pomp and show, his clothes of that era definitely marked a distinct style in the way they were designed. Akbar wore a small rounded turban on his head studded with precious stones which was a clear mark of his prestige and honourable persona, along with which he wore a long Kurta, on top of which he wore a jacket which resembled the modern day Sherwani.

According to certain historical artifacts found from that period, Akbar wore pearls around his neck and also as a waist band, with large pieces of emeralds adorning them. He also wore rings on his fingers which were extremely ornate and spectacular to look at, besides being heavy. All his clothes possessed intricate Zari or Kundan work which brought out his majesty’s regal persona to the fore front.

Conclusion - The colored stones which previously studded all royal costumes, especially the Jodha costume, are now innovatively replaced by semi precious stones and shimmering metallic threads of silver and gold. More of block prints and bandhani patterns are weaved into the royal fabrics which have taken fashion onto a different level altogether. Ethnic saris and ghagra cholis are being embroidered with the designs and patterns of the Jodha costume, this aiming at retaining the originality. Skirts and Lehengas are now traditionally woven with the same fabric and textures, thus suiting the changing tastes of the generations. Now, such style becomes a hit with weddings all over India, since every bride wanted to look like Jodha. The regional Rajasthani charm and the vintage style of saris and lehengas came back into fashion and in a huge way! Besides Akbar’s personality and historical accounts which exhibited upmost grandiose, it was his style of clothing and the way in which he carried himself, which till date has a profound place in Indian fashion and heritage. Several movies and television shows have reminisced over the greatest Mughal ruler and his fascinating stories and style. Even children’s cartoons have time and again portrayed the ruler’s divine presence and what made him stand apart from the rest of the Mughal rulers. The extravagant Sherwani’s with fine Zari embroidery and studded Kundan work has become exceedingly popular with the way bridegrooms dress for their weddings. Akbar’s majestic style

and royal appeal have made him a major source of inspiration even today for several designers across the globe, who loves to play up the ornate and vintage style in their clothes and various designer collections.

References :-

1. http://www.costumersguide.com/cr_jodhaa.shtml. Retrieved October 18, 2017
2. https://in.pinterest.com/pin/70368812900421370/?lp=true. Retrieved October 22, 2017
3. http://www.divyavithika.com/jodha-akbar-a-timeless-inspiration-for-indian-weddings/.Retrieved October 25, 2017
4. https://www.utsavpedia.com/fashion-cults/jodha/. Retrieved October 30, 2017-12-17
5. https://www.utsavpedia.com/fashion-cults/indias-greatest-emperor-in-history-akbar/.Retrieved November 05, 2017
6. https://wenku.baidu.com/view/4123cd443169a4517723a3e9.html Retrieved November 10, 2017
7. http://shodhganga.inflibnet.ac.in/bitstream/10603/110792/8/11_chapter1.pdf. Retrieved November 20, 2017

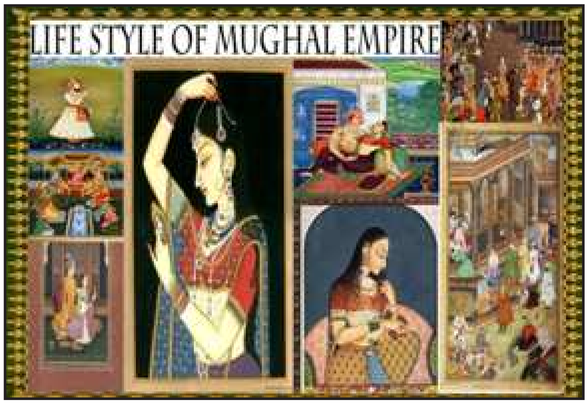

1

2

3

1,2,3 Sketeches of Jodha Ensemble

Costume Photograph

****

Designing The Costume For Mythological Show Mahadev - By Modern Fashion Designer

Aparna Joshi * Rajeev Kumar**

Abstract - Costume designing for period dramas or mythological shows for god Shiva and goddess Parvati is not easy. Since, its need the deep acknowledgement of those periods and techniques are used to design so; it is a type of research work. Costume designers have a team comprising assistant, researchers and consultants. The costume designing for such shows is not just about the characters, it is also about the script for instance, if Maharana Pratap is in the jungle or in his kingdom, his costumes will depend on the terrain and knowledge of everything around this. There is a lot of research material available apart from books, which is the primary source. For Mahadev poster and calendar art that is available as reference material. As a costume designer, one must understand that the audience wants to see these characters in their traditional avatar, but also want a bit of innovation. Large amounts of money and manpower required to design costumes for mythological show, one has to be little careful while designing the costume and can't hurt people's religious sentiments. This research project work has designed for designing the costume for god Shiva and goddess Parvati for mythological drama shows.

Key Words - Shiva and Parvati, Mythological, Costume, Designer, TV-shows.

Introduction - Whether a TV- serial is set in the present, the past, in a distant location or in an imaginary time and place, costume designers collaborate with the director, the cinematographer and the production designer to tell the story. Costume designers collaborate with actors to bring the characters in the screenplay to life. Every garment worn in TV- Serial is considered a costume. Costumes are one of many tools the director has to tell the story. Costumes communicate the details of a character's personality to the audience, and help actors transform into new and believable people on screen. Many different elements influence costume design, including the time and place in which the story is set, the relationships between the different characters, and the vision of the director. Clothes may be specifically designed or purchased for characters in contemporary TV- serials. The costume designer chooses each piece to create real people for every story. Costumes can tell you a lot about the characters in a TV- serial. The fabrics, fit and style of each costume are all carefully chosen by the costume designer to help the audience know the characters. All the elements in a painting must work together, and costumes must blend with the lighting and sets to create a coherent look for the frame and the story. The color of the costumes must conform to the overall palette chosen by the director. Costumes also help the audience immediately identify the central character in a crowd by using color and silhouette. A costume is worn by one actor, as one specific character, in a specific scene or scenes in the story. Most important, the audience must believe that every person in a story has a life before the movie begins. The costume design process begins with studying the screenplay. Scripts describe the action (what happens in the scene), the time period (when the action takes place), the location (where the action takes place), and the characters in each scene. After reading the script, the costume designer meets with the director to discuss the overall vision for the TV- Serials. Two different directors will make different TV- serials from the same script. At the first meeting with the director, the costume designer may learn about the casting choices and specifics about characterization, the overall color palette and the mood of the serial. After speaking with the director, the costume designer begins the research portion of the design process. This may include research on the Internet and at archives, museums and libraries; reviewing periodicals and studying historical and contemporary visual references. Research may also include original place of story was happen depending on the setting of the story.

The Inspiration Board - For design the costume designer take reference of theme and inspiration. This Inspiration board has created for designing the costume for lord Shiva and goddess Parvati.

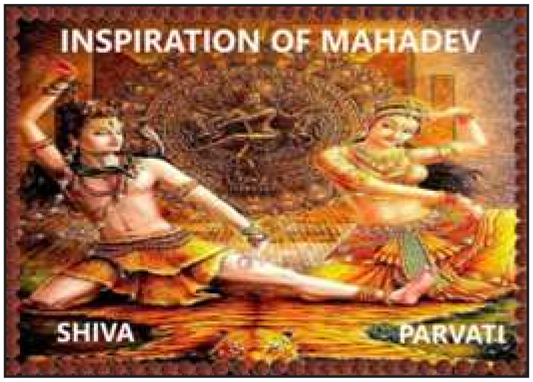

* Department of Fashion Designing, J.V.W.U., Jaipur (Raj.) INDIA
** Lecturer (Fashion Designing) J.V.W.U., Jaipur (Raj.) INDIA

The Mood Board - The mood board shows the brainstroming of inspiration for design the thematic costume. In this mood board of lord Shiva and goddess parvati shows the key pictures of lord Shiva and goddess Parvati on the basis of these key elements fashion designer design the costume. It is important to know the key elements of theme and inspiration by this way the designed costume look original.

The Lifestyle Board - The lifestyle board shows the living lifestyle of lord Shiva and goddess Parvati. It shows the attire of lord Shiva and goddess Parvati in different living mode. It has also need the designer to study the lifestyle of inspirational body and their attire. It helps in creating the original design for the character.

The Color Board - The color board has designed for the purpose to use those colors in garment. In this picture all colors are picked from the inspiration lord Shiva and goddess Parvati attire and from their living place background. The importance of color is also very useful in creating the design because themes and inspirations have their own colors and it shows the value. Using the same color of theme and inspiration the designed costumes look real.

The Design Concept Board - The design concept board shows the details of designing the costume. It explain theme, purpose, color story, silhouettes and design construction details.

Illustration Boards - This is the first ensemble designed for lord Shiva and goddess Parvati. **(See in the next page)**

Design Details (Parvati) - Fabric- Brocade and net, Construction Details - Round neck, gotta patti border on sleeve and front opening blouse. Circular, floral border has used on skirt hemline. H silhouette has used for blouse and Convex for skirt.

Design Details (Shiva) - Century cotton fabric has used in dhoti and silk fabric has used in shawl of lord Shiva dress. Construction details- Gathers dhoti and pleats on waistband. Silhouette- Trapezium and H.These are the second and third ensemble has designed for lord Shiva.

Design Details: Gathers and pleats on waist band and century cotton fabric has used in dhoti of barrel silhouette

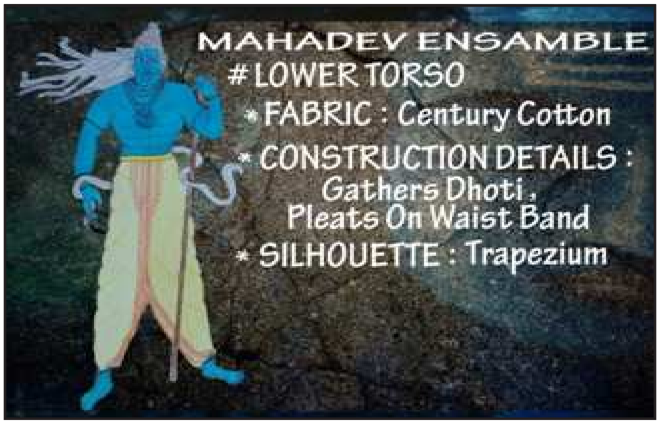

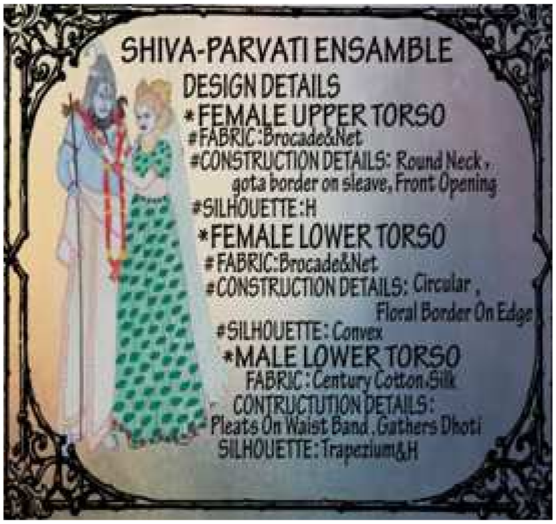

Conclusion - The key purpose of this project is to demonstrate the influence of the Hindi daily soaps in the fashion and the business world. For a long time the charisma of Hindi daily operas has amazed the viewers all across. Different fads of clothes, accessories, make- up and hair style are copied by the people. These fads are promoted by the media which has increased the obsession of people to pursue it; thus flourishing the business of clothing and accessories. On watching the soaps obtained from the survey, we surmised that love, family relationship, social problems and Hindu mythology are some of the common themes presented in the story. Depending upon these themes, designers design the costume and accessories of the actors. The fashion from the serials-like clothes, accessories and hairstyle are highly advertised by the media, consequently increasing the customer rate. To support this statement we had interviewed the vendors shopkeeper of Latest Fashion said that his business is heavily influenced by Hindi daily soaps. Most of the Hindi daily soaps are thirty minutes long. In that short duration the audience can taste every facet of entertainment-comedy, romance, and action. Along with entertainment they also get to see a range of styles. The styles used by the actors come to the market within a week or less. This quick accessibility motivates the viewers to purchase the outfits and accessories used by their favorite celebrity.

References :-

1. www.bollywoodlife.com. Retrieved October 21, 2017
2. https://in.pinterest.com. Retrieved October 25, 2017
3. https://shiva-hd-wallpaper.en.aptoide.com. Retrieved November 01, 2017
4. http://hdwallpapersquotes.com/shiv-parvati-wallpaper/ . Retrieved November 05, 2017
5. https://wenku.baidu.com/view/4123 cd443169a 4517723a3e9.html Retrieved November 07, 2017
6. https://www.oscars.org/sites/oscars/files/ teachersguide-costumedesign-2015.pdf.Retrieved November 10, 2017

Costume Photograph

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय के विद्यार्थियों में मित्रता की भावना का अध्ययन

डॉ. निशा श्रीवास्तव * पूनम रावत ** शाहिना बेगम ***

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय के विद्यार्थियों में मित्रता की भावना का अध्ययन किया गया है। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय में (प्रथम वर्षीय) अध्ययनरत् विद्यार्थियों में मित्रता की भावना का अध्ययन करना है। प्रस्तुत अध्ययन में न्यादर्श हेतु शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय के प्रथम वर्षीय विद्यार्थियों में मित्रता की भावना के अध्ययन के लिए दुर्ग शहर के 120 विद्यार्थियों में मित्रता की भावना के अध्ययन हेतु Dr. Sunanda Chandana and N.K. Chandha द्वारा निर्मित मित्रता के आयाम मापनी का प्रयोग किया गया है। प्राप्तांक के आधार पर परिकल्पनाओं के सत्यापन हेतु टी–मूल्य ज्ञात किया गया। शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय में अध्ययनरत् स्नातक स्तर के प्रथम वर्षीय विद्यार्थियों में मित्रता की भावना में सार्थक अंतर पाया गया है।

प्रस्तावना – 'अरस्तु' के अनुसार 'मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है।' तथा मानव समाज का अहम हिस्सा माना जाता है मानव जिस समाज में रहता है, वहाँ वह अनेक संबंधों के बंधन से बंधा हुआ होता है तथा मानव के लिए हर संबंध अपनी – अपनी जगह महत्वपूर्ण होता है। हर संबंध के साथ उसकी भावनाएँ भी जुड़ी हुई होती है। मानव की भवनाएँ ही उसके संबंध की दिशा तय करती है। जो संबंध रक्त से संबंधित होते है। वह पारिवारिक रिश्ता कहलाता है तथा कुछ संबंध मानवीय व्यवहार से भी कायम होते है, इन्हीं रिश्तों में मित्रता का रिश्ता भी शामिल होता है।

मित्रता एक ऐसा संबंध होता है जो दो लोगों के मध्य होता है जिसे हर उम्र का व्यक्ति अपनी भावनाओं में बंधकर करता है। मित्रता जीवन का एक Secondry Relationship है, जो जीवन में बहुत महत्वपूर्ण होता है। यह मानव को मानव से जोड़ने का कार्य भी करता है। लेकिन मित्रता के कई पहलू होते हैं जिसमें कुछ सकारात्मक तथा नकारात्मक पहलू भी सामने आते है। कुछ लोगों की मित्रता समाज के लिए आदर्श है तो दूसरी ओर मित्रता समाज को कलंकित भी कर देती है। मित्रता भावनाओं से जुड़ा एक ऐसा रिश्ता है जो व्यक्ति को व्यक्ति से जोड़कर उसके सुख और दुख में साथ निभाने के लिए हमेशा तत्पर रहता है। भावनाएँ ही मित्रता की प्रगाणता तय करती है तथा उसकी मित्रता को सफल बनाती है। Rathee Indu (2014) ने किशोरों के बीच दोस्ती के विभिन्न आयामों के साथ आक्रमकता का एक अध्ययन विषय पर शोध किया तथा यह निष्कर्ष निकाला कि किशोर लड़को में आक्रमकता, मनोरंजन, आपसी समझ, विश्वास और समझ को छोड़कर दोस्ती, सम्मान, विश्वास पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। Monika Mohan, Sharma Aditi (2013) ने किशोरावस्था के कल्याण में सहकर्मी रिश्तों का प्रभाव विषय पर शोध किया तथा यह निष्कर्ष निकाला कि विश्वास आपसी सहयोग और समझ में सरकारी स्कूल और पब्लिक स्कूल के विद्यार्थियों में कोई अंतर नहीं होता। पब्लिक स्कूल के बच्चे खुलकर अपने सहपाठी के साथ अधिक समय व्यतीत करते हैं। Lydiya K. Merriam (2012) ने समझदार दोस्तों के साथ संबंधों के लाभ और उसमें शामिल लोग विषय पर शोध किया तथा यह निष्कर्ष निकाला कि जब तक हम खुद दोस्ती के रिश्ते में शामिल न हो तब तक हम दोस्ती में लाभ के संबंध के बारे में किसी व्यक्ति का आँकलन नहीं कर सकते हैं और उसमें भावनात्मक रूप से उद्देश्य की प्राप्ति की निकटता होती है। Keller Monika, (2006) ने मित्रता पर विभिन्न सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य का एक अध्ययन विषय पर शोध किया तथा यह निष्कर्ष निकाला कि दोस्ती एक ऐसा रिश्ता है, जिसका परिणाम सामाजिक और व्यैक्तिक दोनों परिस्थितियों पर पड़ता है। Chair, C.A.B.(2002) ने रिश्ता संतोष के साथ स्वयं प्रकटीकरण के आयामों की खोज विषय पर शोध किया तथा यह निष्कर्ष निकाला कि रिश्ते में संतोष तथा 8 अलग भावनाओं को मापा जिसमें अवसाद, खुशी, ईर्ष्या, चिंता, क्रोध, शांति, उदासीनता और डर था। जिसमें भावनात्मक स्वयं प्रकटीकरण दोनों लिगों के लिए काफी सकारात्मक थे तथा महिलाओं में पुरूषों की तुलना में भावना अधिक पाई गयी।

उद्देश्य –

- शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय के विद्यार्थियों में मित्रता की भावना का अध्ययन करना
- शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय के छात्रों में मित्रता की भावना का अध्ययन करना।
- शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय के छात्राओं में मित्रता की भावना का अध्ययन करना।

न्यादर्श – प्रस्तुत अध्ययन में न्यादर्श हेतु शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय में अध्ययनरत् (प्रथम वर्षीय) विद्यार्थियों में मित्रता की भावना के अध्ययन के लिए 120 विद्यार्थियों (जिनमें 60 शासकीय तथा 60 अशासकीय विद्यार्थी शामिल हैं) का चयन किया गया है।

उपकरण – प्रस्तुत शोध में शासकीय एवं अशासकीय विद्यार्थियों में मित्रता की भावना के अध्ययन हेतु Sunanda Chandana and N. K.

* रीडर एवं विभागाध्यक्ष (शिक्षा) घनश्याम सिंह आर्य कन्या महाविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.) भारत
**सहायक प्राध्यापक (शिक्षा) घनश्याम सिंह आर्य कन्या महाविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.) भारत
*** एम.एड. छात्रा, घनश्याम सिंह आर्य कन्या महाविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.) भारत

Chandha द्धारा निर्मित मित्रता के आयाम मापनी का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन की परिसीमा – प्रस्तुत शोध कार्य में दुर्ग शहर के महाविद्यालय में अध्ययनरत् (प्रथम वर्षीय) विद्यार्थियों को लिया गया है यह अध्ययन केवल छात्र-छात्राओं में मित्रता की भावना के अध्ययन से संबंधित है।

सांख्यिकीय विश्लेषण – मध्यमान, मानक विचलन एवं टी परीक्षण द्धारा दो समूहों के मध्य अंतर की सार्थकता को ज्ञात किया गया है।

परिकल्पना परिणाम एवं विवेचना – प्रस्तुत शोध की समस्या शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय के विद्यार्थियों में मित्रता की भावना का अध्ययन के लिए प्राप्त आँकड़ों की व्याख्या विश्लेषण एवं निष्कर्ष हेतु परिकल्पनाओं का सत्यापन किया गया है।

H_{01} **शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय के विद्यार्थियों में मित्रता की भावना पर सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा ।**

सारणी क्रमांक – 1 (सारिणी देखे आगे पृष्ठ पर)

सारणी क्रमांक – 01 का अवलोकन करने पर df = 118 पर टी का मान 5.35 प्राप्त हुआ। जो कि टी तालिका के मान 0.05 सार्थक स्तर के लिए आवश्यक टी मान 1.98 से अधिक है।

अत: यह प्रमाणित होता है कि शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय के विद्यार्थियों में मित्रता की भावना में सार्थक अंतर पाया गया। अत: यह परिकल्पना अस्वीकृत होती है।

H_{02} **शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय के छात्रों में मित्रता की भावना पर सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।**

सारणी क्रमांक –2 (सारिणी देखे आगे पृष्ठ पर)

सारणी क्रमांक – 02 का अवलोकन करने पर df = 58 पर टी का मान 2.66 प्राप्त हुआ। जो कि टी तालिका के मान 0.05 सार्थक स्तर के लिए आवश्यक टी मान 2.00 से अधिक है।

अत: यह प्रमाणित होता है कि शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय के छात्रों में मित्रता की भावना में सार्थक अंतर पाया गया।अत: यह परिकल्पना अस्वीकृत होती है।

H_{03} **शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय के छात्राओं में मित्रता की भावना पर सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।**

सारणी क्रमांक –3 **(सारिणी देखे आगे पृष्ठ पर)**

सारणी क्रमांक – 03 का अवलोकन करने पर H_{02} = 58 पर टी का मान 4.96 प्राप्त हुआ। जो कि टी तालिका के मान 0.05 सार्थक स्तर के लिए आवश्यक टी मान 2.00 से अधिक है।

अत: यह प्रमाणित होता है कि शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय के छात्राओं में मित्रता की भावना में सार्थक अंतर पाया गया। अत: यह परिकल्पना अस्वीकृत होती है।

परिकल्पना परिणाम एवं विवेचना – सारणी क्रमांक – 01, 02 एवं 03 से स्पष्ट है कि शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय में अध्ययनरत् स्नातक स्तर के प्रथम वर्षीय विद्यार्थियों में मित्रता की भावना में सार्थक अंतर पाया गया है। अत: परिकल्पना H_{01} , H_{02} एवं H_{03} अस्वीकृत होती है। प्रदत्तों के विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष पाया गया कि अशासकीय महाविद्यालय में अध्ययन करने वाले विद्यार्थी उच्च आर्थिक स्थिति एवं शैक्षिक वर्ग से संबंधित होते हैं। उनकी मनोकांक्षा, जीवन स्तर महाविद्यालय में उपलब्ध सुविधाएँ शासकीय महाविद्यालय की अपेक्षा भिन्न होती है जिसका प्रभाव उनकी सोंचने समझने की क्षमता पर पड़ता है तथा मित्रता कहीं न कहीं स्वार्थ पूर्ति पर भी असर डालती है और आर्थिक सम्पन्नता भी मित्रता को प्रभावित करती है। इन्ही कारणों के कारण अशासकीय महाविद्यालय के विद्यार्थियों में शासकीय महाविद्यालय के विद्यार्थियों की अपेक्षा मित्रता की भावना अधिक पायी जाती है।

सुझाव – विद्यार्थियों में सामाजिक भावना का विकास किया जाना चाहिए। विद्यार्थियों में सामाजिक संबंधों के विकास पर बल देना चाहिए। समाज में व्याप्त मित्रता के संबंध की नकारात्मकता को दूर करना चाहिए। मित्रता के संबंध की सकारात्मक पहलू पर बल देना चाहिए।मित्रता का प्रभाव समाज में अच्छा भी पड़ता है और बुरा भी, इस पहलू से विद्यार्थी को अवगत कराना चाहिए।मित्रता में भरोसा, सम्मान, आपसी समझ, सहजता, आनंद, स्वीकृति एवं आपसी सहायता का भाव देखने को मिलता है और जिस मित्रता में इन भावों का तालमेल होता है वह मित्रता समाज के लिए लाभकारी होती है इस बात का ज्ञान कराना चाहिए।समाज में मित्रता का संबंध एक अलग ही स्थान रखता है। संगति का असर जीवन में बहुत हद तक पड़ता है, अच्छी संगति के माध्यम से जहाँ उन्नति के शिखर पर पहुँचा जा सकता है तो वहीं दूसरी ओर बुरी संगति लोगों को समाज में कलंकित भी कर देती है इस बात का ज्ञान कराया जाना चाहिए। मित्रता का समाज पर सकारात्मक तथा नकारात्मक प्रभावों के विषय में ज्ञान कराया जाए। विद्यार्थियों के व्यक्तित्व पर शिक्षक के व्यक्तित्व का सीधा प्रभाव पड़ता है अत: शिक्षकों का भी व्यक्तित्व आकर्षक हो जिससे विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का विकास हो सके।

अनुकरणीय अध्ययन –

1. खिलाड़ी तथा गैर खिलाड़ी अंर्तमुखी तथा बर्हिमुखी विद्यार्थियों में मित्रता की भावना का अध्ययन।
2. कामकाजी एवं गैर कामकाजी महिलाओं में मित्रता की भावना का अध्ययन।
3. स्नातक स्तर के तकनीकी एवं गैर तकनीकी विद्यार्थियों में मित्रता की भावना का अध्ययन।
4. विश्वविद्यालय के शिक्षकों में मित्रता की भावना का अध्ययन।
5. सी.बी.एस.सी. तथा सी.जी. बोर्ड स्कूलों के विद्यार्थियों में मित्रता की भावना का अध्ययन।
6. महाविद्यालय में अध्ययनरत उभयमुखी व्यक्तित्व वाले विद्यार्थियों में मित्रता की भावना का अध्ययन।
7. बी.एड के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व तथा मित्रता की भावना का अध्ययन।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Agrawal, G.K.,Sociology, Shahitya Bhawan Publication: Agra, Page No. 132-137.
2. Asthana Bipin, Asthana Shweta, Educational Research and statistics, Agrawal Publication, Page 546-549.
3. Chair, C.A.B. (2002). An Exploration of Eight Dimensions of Self –Disclosure with Relationship Satisfaction.
4. Chandna, Sunanda & Chandha, N. K. (2005). Dimensions of Frienship Scale. Department of Psychology University of Delhi. National Psychological Corporation, Bhargava Bhawan, 4/230, Agra, 282004.
5. Kapil H.K., Bhargav H.P., Anusandhan Vidhiya, Book House, Agra,282004, Page,50-59.
6. Keller, M.(2006). A Cross Culturer Perspective on Friendship Research, Max planck Institute for Human

Development Berline.
7. Mohan, M.& Sharma, A.(Jan 2013).Influence of Peer Relationship on Adolescents Well Being. Indian Journal of Psychological Science, Vol-3(2), ISSN-09769218.
8. Pigg, L. K. M.(May 2012).Lovers and friends understanding friends with benefits Relationship and those Involved, Department of Psychology San Jose State University.
9. Rai,Parasnath, Rai C.P. , Anusandhan Parichay, Laxmi Narayan Agrawal, Agra, Page 233-234.
10. Raj, K.(2011).Friendship Pattern as a Correlate of age and gender differences among urbon Adolescents,Stud Home Sci,5(2):105-111(2011).
11. Rathee, I.(2004). Relationship of Aggression with various Dimensions of Friendship among adolescents, Haryana, India,Vol-IV,ISSN-2294-9598.,
12. Singh, Mamta, Kapil H.K., Shankhikiya ke Mool Tatva, Agrawal Publication, Page 85-86.
13. Sharma, R.A., (2013). Fundamental of Educational of Research & Statistics Meruth: R Lalbook Depot 1-37.

H_{01} शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय के विद्यार्थियों में मित्रता की भावना पर सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।

सारणी क्रमांक – 1

क्र.	चर	प्रदत्तों की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	टी मूल्य
1	शासकीय महाविद्यालय के विद्यार्थी	60	36.58	4.88	5.35
2	अशासकीय महाविद्यालय के विद्यार्थी	60	38.83	6.46	
	df = 118			P<0.05	

H_{02} शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय के छात्रों में मित्रता की भावना पर सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।

सारणी क्रमांक –2

क्र.	चर	प्रदत्तों की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	टी मूल्य
1	शासकीय महाविद्यालय के छात्र	30	35.06	3.98	2.66
2	अशासकीय महाविद्यालय के छात्र	30	36.63	6.84	
	df = 58			P<0.05	

H_{03} शासकीय एवं अशासकीय महाविद्यालय के छात्राओं में मित्रता की भावना पर सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।

सारणी क्रमांक –3

क्र.	चर	प्रदत्तों की संख्या	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	टी मूल्य
1	शासकीय महाविद्यालय की छात्रा	30	38.1	5.22	4.96
2	अशासकीय महाविद्यालय की छात्रा	30	41.03	5.51	
	df = 58			P<0.05	

****

भारत की अभिनव पहल - निरक्षरता के अंधकार का हल

रूपेन्द्र मुनि * डॉ. अश्विनी गौड **

प्रस्तावना – एक समय ऐसा आया जब विश्व स्तर पर यह बात पूरी तरह से स्वीकार्य होनी लगी कि अशिक्षा का अंधेरा कुछ वैश्विक समस्याओं का कारण बनता है। खास तौर से कुछ दुविधाऍं जिन्हें धार्मिक कट्टरता और रूढियों ने अमलीजामा पहना दिया गया था। इसके मूल में अशिक्षा को देखा जाने लगा और व्यापक स्तर पर शोध तथा सामूहिक चिंतन के बाद कुछ सम्पन्न और विकसित राष्ट्रों ने इस पर अपनी गहरी चिंताएँ व्यक्त की।

दुनिया जब इस दिशा में कदम बढ़ा रही थी तब भारत पर अंग्रेजों का शासन था। सदियों की गुलामी ने लोगों के अधिकार दबा रखे थे, और शिक्षा के अधिकार का वजूद ही नहीं था। ऐसे में भारत का एक बुद्धिजीवी वर्ग इस बारे में सोचने लगा था। वस्तुत: 2009 के नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के अधिकार की नींव का पत्थर तो तब ही रखा गया था।

उस दौर में इस अधिनियम की चाहे एक कल्पना ही की गई थी, यह तब भी भविष्य में एक अवश्यभावी कदम के रूप में देखा जा रहा था। आज हम इतिहास के पन्नों से देखे तो सन् 1893 में ही भारत देश की ऐसी अभिनव पहल सामने आ चुकी थी। एक तरह से यह किसी चमत्कार जैसा ही कुछ था जो प्रयोग के तौर पर बडौदा राज्य के शिक्षा प्रेमी और विद्वान शासक समाजीराव गायकवाड ने अपने राज्य के अमरेली तालुका के चुनिंदा नो गांवों में किया था।

बीसवीं सदी के आते - आते बम्बई नगर में सर इब्राहिम रहीम तुल्ला और सर चीमनलाल सीतलवाड जैसे प्रखर राष्ट्र प्रेमी विद्व जनों ने अंग्रेजी सत्ता के सम्मुख यह प्रस्ताव रखा कि बम्बई नगर में शिक्षा की अनिवार्यता लागू की जानी चाहिए। सन 1906 में श्री रहीम तुल्ला और सर चीमनलाल सीतलवाड के प्रभाव के रहते इस हेतु एक समिति का गठन किया गया। यहॉं भी अंग्रेजों के अवरोधों के कारण कोई नतीजा सामने नहीं आया।

इन स्थितियों से आगे चले तो हम यह पाते है कि भारत की राजनीति आजादी वर्ष 1947 तक दुनिया का परिदृश्य बदल रहा था। विश्व के कदम शिक्षा की ओर बढने लगे थे। विभिन्न शोध कार्यो को अधिक महत्व दिया जाने लगा था। कई तरह के अविष्कारों के शोध कार्य दुनिया के सामने आने लगे थे, जिनका प्रभाव स्पष्ट व निर्विवाद था। यह विश्व जनमत के लिए अनुकरणीय उपलब्धि थी, जिसने सारी दुनिया को शिक्षा की ओर विचार हेतु अभिप्रेरित किया।

इस आजादी के बाद भी शिक्षा के अधिकार की बात दूर की कौडी ही थी। इस दौरान भारतीय प्रखर राष्ट्र भक्त नेताओं को संविधान सभा का कार्य सौपा गया। तब यह भावना उस स्तर पर बलवती होती रही कि जो कार्य अंग्रेजों ने नही किये अथवा जिनके लिए अंग्रजों ने भारतीय नेतृत्व की राहों में रोडे अटकाने का कार्य किया उन सभी कार्यो को यथोचित तत्परता के साथ प्राथमिकता दी जाऍं। इस तरह संदर्भित नीति निर्देशक सिद्धांत घोषित किया गया जिसके तहत उस दिशा में चेष्टा करने की बाते सामने आ सकी।

यहॉं पर एक संदर्भ मुझे याद आता है, यह संदर्भ है- आंख और उजास के अन्वय का, किसी के पास ऑंखे है जिनसे वह सब कुछ देखता है, ऑखों का यही महत्व होता है, लेकिन इन ऑखों को देखने के लिए उजाला चाहिए। अगर अन्धकार है तो वह दूर होने पर ही व्यक्ति कुछ देख सकेगा। यही अन्वय जीवन में परिणाम देने वाला होता है।

शिक्षा के अधिकार को लेकर इस अन्वय को समझने की आवश्यकता है। भारतीय लोगों के पास वह ऑख सदा से रही जो निरक्षता के अन्धकार को देख सकती थी,देख भी रही थी। लेकिन समस्या शासन वर्ग की थी वह शासन भारतीय जन मानस की ऑख नही छीन सकती थी। लेकिन वह अंधेरा तो कर ही सकती थी। अंग्रेजी सत्ता के दौरान ऐसा घना अंधकार सदैव बना ही रहा।

इस तरह कहा जा सकता है कि भारत देश में नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनयम 2009 एक तरह से ऑख और उजास का अन्वय बनकर सामने आया। कहॉं वह परिस्थितियॉं थी, जहॉं अंग्रेज इसकी हमेशा अनदेखी कर देते थे, और आज यह अनेकानेक सार्थक प्रावधानों के साथ हमारे सामने है, जो भारत की एक सौ पच्चीस करोड जनता की उपलब्धि है। हम इस पर गर्व करते हुए इस यात्रा के सहयात्री बने हुए है।

अब सवाल है इस अधिनियम का छात्र - छात्राओं, अध्यापकों एवं अभिभावकों पर होने वाले विषय का फलक अंत्यत विस्तृत है। ऐसा नहीं है कि यह जो कुछ हमारे सामने है वही निरक्षरता के अंधकार का हल है। अत: इस हल को पाने के लिए हमें इस पहल के साथ एक लंबी यात्रा पर निकलना होगा।

मैं स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के दौर से आगे बढते हुए देखता हूॅं तो सामने आता है कि कोठारी आयोग जिसका गठन सन 1964 में हुआ। यह आयोग 1964-1966 तक का रहा जिसका उद्देश्य था, भारत देश में अनिवार्य शिक्षा के महत्व को समग्रता से रेखांकित करते हुए इस बाबत् सिफारिश करना।

हालांकि उस दौर में इस आयोग को लेकर बहुत सारी उम्मीदें बंधी तथा इस पर व्यापक कार्य भी हुआ। इस वैचारिक मंथन ने देश को जगाया और विगत से सीखने तथा आगे बढने की दिशा भी दी। दुर्भाग्य से तब भी सरकार ने ऐसा कुछ नहीं किया कि देश में परिवर्तन की लहर आ सके। इस

*शोधार्थी (शिक्षा) पेसीफिक यूनिवर्सिटी, उदयपुर (राज.) भारत
**प्राचार्य, कृष्णा महिला टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, सीसारमा, उदयपुर (राज.) भारत

प्रकार इस आयोग की सिफारिशे भी दबी रह गई।

दरअसल वर्ष 1964 में बने कोठारी आयोग की सिफारिशों के प्रति सत्ता पक्ष की उदासीनता हमारे सामने कई तरह के सवाल खडे करती है। इन सवालों के प्रति पडताल की दृष्टि होनी ही चाहिए। ऐसा इसलिए भी जरूरी प्रतीत होता है क्योंकि तब भारत में जनता की अपनी निर्वाचित सरकार थी। इस सरकार को अंग्रेजी सता के अब तक रहे नजरिये का भी आभास था, जिसके कारण भारत का तब शिक्षा का अधिकार सामने नही रह सका और वर्षो दशकों तक निरक्षरता का आतंक बना रहा।

अवश्य ही यह शोध इस दिशा में भी कुछ नतीजों तक पहुंचने का सार्थक उपक्रम करेगा। विगत से सीखना और वर्तमान का आंकलन करना, इसके साथ भविष्य की दिशा तय करना ही प्रत्येक शोध का उद्देश्य होता है। मैं कहना चाहूंगा कि यही मेरी दृष्टि में मेरा सर्वोपरी ध्येय है।

देश में परिवर्तन की क्रांतिकारी बननेवाली भारत की पहली महिला प्रधानमंत्री के साथ पूर्व प्रधानमंत्री व आधुनिक भारत के निर्माता कहे जाने वाले पण्डित जवाहर लाल नेहरू की विरासत थी। इस विरासत से अंग्रेजी सत्ता के वे दोगले और खोखले दावे भी जुडे थे, जिनसे कांग्रेस पार्टी नेहरू जी ने लोहा लिया। अत: इन्दिरा गांधी का आगमन अन्य विषयों के साथ शिक्षा के अधिकार को लेकर भी देश के जन सामान्य में उम्मीद की नई किरण के रूप में देखा जाने लगा था।

प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने 22 अगस्त 1974 को भारत देश के लिए राष्ट्रीय बाल नीति की घोषणा की जिसका देश भर में व्यापक स्वागत हुआ तथा जिसे विश्व भर में सराहना मिली। इस नीति के तहत देश में 14 वर्ष तक की आयु के बालकों व बालिकाओं को नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा देने की बात कही गई।

कहा जा सकता है कि श्रीमती इन्दिरा गांधी की छवि के अनुरूप इस पर देश भर में काम की एक शुरूआत हुई तब यह लगने लगा कि अब देश में शिक्षा का परिदृश्य बदल जाने वाला है। सम्भावनाओं की नई आहट भी सुनाई पडने लगी। फिर भी सम्रग रूप से कहे तो यह अभियान भी र्धीरे -र्धीरे कही दबता चला गया। और देश की राष्ट्रीय बाल नीति एक बार फिर राजनीति के दरकारों के शोर में दबकर रह गयी।

स्वतंत्र भारत में भी शिक्षा ओर बाल अधिकारों को लेकर ऐसा क्यों होता रहा यह भी गहन अन्वीक्षा का विषय है। देश की बाल पीढी को लेकर क्यों ऐसा क्षेत्र रहा, इस पर सता पक्ष के लोग तो लगभग मौन ही रहे। नीतियां और कार्यक्रम बनते रहे किन्तु उनका क्रियान्वयन न हो सका था। कम से कम इस दौर में इस पर हंगामा होना ही चाहिए था।

यदि हम नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 की व्याख्या करे तो पाते है कि छात्र -छात्रों और अध्यापकों तथा अभिभावकों पर इसका भिन्न किन्तु निर्णायक प्रभाव पडा। इस प्रभाव की गहराईयों तक आगे जाने का प्रयास करेगे। फिर हाल यह देखा जाना अधिक प्रासंगिक होगा कि देश की आजादी के बाद वर्ष 2009 (इस अधिनियम के आने तक) विभिन्न वर्गो पर सत्ता पक्ष की लम्बी और लगातार चुप्पी के क्या - क्या प्रभाव हुए।

ऐसा तो दुनिया कई देशों में हुआ कि वहॉ कि बाल पीढी प्राथमिक शिक्षा से वंचित रही। सभी देशों की अपनी परिस्थितियां रही होगी। हम भारत में संदर्भ में इस पर गहनता से विचार करे तो एक तथ्य उभर कर सामने आता है कि अंग्रेजों की नीतियों और उनकी सोच से स्वतंत्र भारत के कुछ राजनेता आजादी के बाद तक प्रभावित रहे।

इस दौरान विकास हुआ । सडके बनी, गांव में बिजली पानी पहुँचाने के व्यापक उपक्रम हुए। अस्पताल और स्कूले खुली। यहाँ तक कि महाविद्यालय और विश्वविद्यालय तथा हवाई अडडे भी बने। हमारे राजनेताओं की एक पीढी ने इसी को विकास मान लिया और इस सब पर गर्व से इतराते हुए जश्न मनाते रहे।

इन सब भवनों के निर्माण की गाथाएॅ तो गाई जाती रही। लेकिन इन के भीतर क्या कुछ होता रहा इस पर व्यापक चिंतन नहीं हुआ। हाँ, विकास हुआ लेकिन इसे हम अनियोजित विकास ही कहेगें। क्योंकि इस समयगत विकास को सही चिंतन मिल ही नहीं पाया।

जैसे सडकों का जाल बिछा लेकिन जंगल के जंगल साफ होते चले गये। पानी गांव तक पहुॅचा लेकिन जल की निकासी का प्रबंधन नहीं हुआ। अस्पतालों में तो चिकित्सक ही नहीं पहुॅचे और विचाराधारा के नाम पर छात्र वर्ग में विभाजन होता रहा। इससे महाविद्यालय और विश्वविद्यालय राजनीति के केन्द्र हो गये। किसान वर्ग की जमीने ली गई लेकिन इसे ठीक से समझा ही नहीं गया।

प्राथमिक शिक्षा के प्रति सरकारों का ढुलमुल और उदासीन रवैया छात्र वर्ग के लिए भारी दुविधा का कारण बनता चला गया। जो बच्चे शिक्षा प्राप्त नहीं कर सके वह बहुत छोटी उम्र में ही मजदूर बनते चले गये। इस तरह कुछ ही वर्षो में बाल मजदूरी की समस्या खडी हो गई। इसक लिए भी कई कानून बने और नित नये प्रावधान सामने आते रहे। इन सभी का भी कमोवेश वही हाल हुआ जो आजादी के बाद के शैक्षिक प्रावधानों और नीतियों का हुआ। अशिक्षा का एक बडा प्रभाव बाल विवाह के रूप में भी सामने आया । चूंकि देश की आबादी का एक बडा वर्ग अशिक्षा के अंधेरे में था। अत: बाल विवाह की कुरीति को व्यापक बल मिलता गया। देश में शारदा एक्ट लागू था किन्तु किसी एक्ट को समझ पाने और उसकी पालना की दृष्टि का अभाव स्पष्ट लक्षित होता रहा। बाद के वर्षो में इस बाबत् बने कानून का असर प्रशासनिक कडाई से कुछ प्रभावी हुआ। किन्तु तब तक भी बहुत देर होती चली गई।

यह भी विचारणीय है कि अशिक्षित माता - पिता किसी कुरीति के संव्यूहन से बाहर नहीं निकल सके। वही अशिक्षित बालक बालिकाओं ने भी इस का विरोध नहीं किया। हाल ही के वर्षो मे इस तरह की खबरे कई बार अखबारों की सुर्खिया बनने लगी है। इसके मूल में देश में शिक्षा का प्रचार - प्रसार ही मुख्य रहा है। इसके साथ प्रशासनिक सक्रियता तथा समाचार पत्रों का दृष्टि सामर्थ्य भी इस कुरीति के विरूद्ध नजर आने लगा है।

बाल शिक्षा के संदर्भ में कहना ही होगा कि छात्रों को लेकर फिर भी कुछ होता रहा, छात्राएं इस लिहाज से फिर पीछे रह गई। हमारे देश में दशकों का एक दौर ऐसा रहा जब लोग बेटों को पढाने के प्रति कुछ सजग हुए, बेटियां फिर भी घरों की चारदीवारी में कैद रही। ऐसी बेटियों को उम्र से पहले ही शादी के बाद ससुराल जाना पडा। इसके भी अपने कुछ अलग ही दुष्प्रभाव रहे।

उल्लेखनीय है कि विश्व स्तर पर बालकों के अधिकारों की बात तो सन् 1924 में ही उठ चुकी थी। बाद में संयुक्त राष्ट्र महासभा में बाल अधिकारों की घोषणा हुई तब देश स्वतंत्र हो चुका था। वर्ष 1959 में ही यह घोषणा हुई थी जिसे लागू करने में तीन दशक लग गये। इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारत ही नहीं बल्कि विश्व स्तर पर भी बालकों की शिक्षा अथवा बाल अधिकारों के प्रति अधिक सकारात्मक दृष्टि का अभाव ही रहा।

अर्थात इस बात को लगातार नकारा जाता रहा कि शिक्षा और स्वास्थ्य बच्चों का जन्मजात अधिकार है। लगातार प्रगति के पथ पर बढती मानव

सभ्यता ने यह तो माना कि मानव परमात्मा की सर्वोतम कृति है। दुर्भाग्य से ऐसी कृतियों को पढने का भावात्मक उपक्रम हुआ ही नहीं। इससे यह अंधकार सदी – दर– सदी और दशक – दर –दशक अधिक घना और अधिक त्रासद होता चला गया।

हम इस बाबत हुए बदलावों को भी देखे तो यही कहेगे कि हा कुछ होता रहा है वह होते रहने की रफतार बहुत मंद रही। कभी – कभी तो यह रफतार इतनी मंद रही कि उन सरसराहट भी नजर नही आयी। इस तरह मानव सभ्यता ने ऐसी चूक की जिसके नतीजों के तौर पर पीढियां शिक्षा से वंचित रहती गई और कई –कई दुष्प्रभावों से ग्रस्त होते हुए विभिन्न दुविधाओं में घिर गई।

हाल ही में देश में बेटी बचाओं, बेटी पढाओं का व्यापक अभियान शुरू हुआ है। इस बारे में विश्व स्तर, अथवा राष्ट्रीय स्तर आंकडों की बात न भी करें तो आज सामाजिक स्तर पर यह चिंता सामने आ रही है कि लगभग सभी समाजों में बेटियों की संख्या कम है। मैं किसी जाति विशेष की बात नहीं करता । आज ज्यादातर लोग यह चिंता व्यक्त करते नजर आते है, कि उनके समाज में बेटियों की बहुत कमी है। कुछ समाजों अथवा प्रांतों में यह असंतुलन चिंता जनक स्थितियों तक पहुँच गया है।

यह सब क्यों और कैसे हुआ इस पर भी विचार कर लेना चाहिए। यह तकनीक के दुरूपयोग और मानवीय भूल के साथ क्रूरता के उदाहरण के तौर पर भी देखा जाना चाहिए। विज्ञान का एक अविष्कार हुआ, जिसमें गर्भस्थ शिशु की उचित देखभाल का भाव था। उस अविष्कार को मनुष्य ने अति क्रूर और निंदनीय तरीके से आजमाया। इसके तहत बेटियों को गर्भ में ही मार डाला जाने लगा। यह भी कई वर्षो तक हुआ किसी न किसी स्तर पर आज भी हो रहा है।

भारत जैसे धर्म – प्रेमी देश में होना सचमुच सवाल खडे करता है। यह सीधे तौर पर हत्या का पाप था। इसके कानून भी बने और विभिन्न धर्मो के संत एवं साध्वीवंद ने इसके विरूद्ध आवाज उठाई। विभिन्न जैनाचार्यो और साधु साध्वीयों अवश्य ही इस दिशा में लोगों को जगाने का बडा काम किया। अन्य धर्मो और सम्प्रदायों धर्माचार्य भी आगे आये।

बच्चों के शिक्षा अधिकार के साथ हुई ज्यादातियों का एक प्रभाव यह भी रहा कि संख्यातित बालक केवल उन्हीं कार्यो से जुडे रह गए जो उनके पिता कर रहे थे। मसलन ईंट भट्टों पर काम करने वाले स्त्री – पुरूषों के बच्चे केवल इसी काम से जुडे रहे। किशोर वय से पहले ही उन्हे इस अंधेरे में ढकेल दिया गया। ऐसा पशु पालन भवन निर्माण अन्य प्रकार की मजदूरी में भी हुआ।

ऐसे में देश की बाल पीढी के पास अधिकार के नाम पर कुछ भी नहीं रहा। अपने अधिकारों के लिहाज से वह खाली – खाली हाथ भटके रहे और कडा श्रम करते रहे। इस अंधकार में कई बच्चे विभिन्न अपराधों की ओर बढते चले गये। इस दुष्प्रभाव की तरफ हमारा ध्यान बहुत देरी से आया।

कडे परिश्रम अथवा हाड– तोड श्रम की दृष्टि से बालिकाएँ भी अछूती नहीं रही। इस प्रकार सर्वहारा वर्ग के बच्चे बिना किसी भविष्य की राह को प्राप्त किये केवल अपना जीवन जीते रहे बिना शिक्षा का जीवन, बिना पोषण, आश्रय का जीवन, बिना मनोरंजन का जीवन, ऐसे जीवन को हम क्या कहेगे। इस दिशाहिनता ने देश के सामने कई चुनौतियॉ खडी कर दी।

अभी भी हम बेटी बचाओ, बेटी पढाओं अभियान अथवा इस तरह के प्रारम्भ हुए अभियानों के बारे में कुछ भी अधिकार से नहीं कह सकते है। उनका सफल क्रियान्वयन ही भविष्य की उजली राहों को खोज सकेगा। हॉ, आज हम यह उम्मीद अवश्य कर सकते है कि विगत से कुछ सीखने और कुछ नया व बेहतर करने का यह अवसर हम इस बार खोना नहीं चाहेगे। यदि ऐसा हो सका तो यह आगे के लिए एक नव्य नवीन सम्भावना को अवश्य जन्म देगा।

शिक्षा के अधिकार से वंचित बालक – बलिकाएँ, माता–पिता तथा देश का अध्यापक वर्ग भी इससे प्रभावित हुआ। अध्यापकों के सामने सबसे बडी चिंता तो यह रही कि सामाजिक स्तर के ऐसे असंतुलन से कैसे निपटा जाएँ। अलग – अलग परिवेश के बच्चे एक स्थान पर पढने तो आने लगे लेकिन घर की सुविधाओं का अंतर और परिवेश का प्रभाव कई चुनौतियों का कारण बनता रहा, यह कमोवेश आज भी बना हुआ है।

आज ऐसे कई अभिभावक है जो शिक्षित नहीं है किन्तु उनके बच्चे शिक्षा प्राप्त कर रहे है। ऐसे अभिभावक बेटों के साथ बेटियों को पढाने के प्रति भी सजग हुए है। नि:संदेह यनि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का अधिकार 2009 के कारण हो रहा है। यह हाथ उठाने का मनाही का संकेत लोगों की सजगता का परिचायक है।

अब भी ऐसा प्रतीत होता है कि यह यात्रा बहुत लम्बी है। अवरोध अब भी आएँगे और हमारे सामने प्रश्न खडे होते रहेगे। हम अतीत से कुछ सीखते हुए वर्तमान की चुनौतियों का सामना करने के प्रयास करे और भविष्य का पथ चुने, यह बहुत आवश्यक है। यह 2009 का अधिनियम बच्चों को व्यापक अधिकार और शक्तियॉ देता है। हमारी बाल पीढी इन अधिकारों और शक्तियों के प्रति सजग हो, यह तो प्रत्येक माता–पिता, शिक्षक और हम सभी के चिंतन का आधार होना चाहिए। यही अधिकार एक दिन हमारी बाल पीढी के भविष्य का आधार बन जाएँगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर ।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

विभिन्न भारतीय शिक्षा आयोगों में अध्यापक शिक्षा

डॉ. रश्मि पण्ड्या *

प्रस्तावना – अध्यापक शिक्षा की दृष्टि से सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन दृष्टिकोण का है। पहले शिक्षक प्रशिक्षण (टीचर ट्रेनिंग) की चर्चा की जाती थी। इसके मूल में यह धारणा थी कि जिस प्रकार अन्य कार्यों का प्रशिक्षण दिया जाता है, उसी प्रकार शिक्षण कार्य का भी प्रशिक्षण हो लेकिन जब यह अनुभव किया गया कि अध्यापन कार्य का सम्बन्ध अध्यापक के व्यक्तित्व और योग्यता से है, न कि मात्र किसी प्रकार के कौशल से, तब शिक्षक प्रशिक्षण के स्थान पर 'अध्यापक शिक्षा' की संकल्पना को मान्यता प्रदान की गई।

अध्यापक शिक्षा की संकल्पना अधिक व्यापक, अधिक गहरी और शिक्षा के मूल उद्देश्यों के अनुरूप है। इस सन्दर्भ में **माध्यमिक शिक्षा आयोग** (1952-53) का निम्नलिखित कथन महत्वपूर्ण है -

'शिक्षा के पुनर्निर्माण में सबसे महत्वपूर्ण स्थान शिक्षक का है। अत: उसकी व्यक्तिगत विशेषताएँ, शैक्षिक योग्यता, व्यावसायिक प्रशिक्षण और विद्यालय एवं समाज में उसके द्वारा प्राप्त किया गया स्थान सभी अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।'

1. शिक्षा के आयोग और अध्यापक शिक्षा – स्वतन्त्र भारत में अध्यापक शिक्षा की प्रगति से अवगत होने के लिए **सन् 1947** और **1975** की अवधि में नियुक्त शिक्षा के विभिन्न आयोगों के प्रतिवेदनों का अध्ययन आवश्यक है। सन् 1948 में **डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन्** की अध्यक्षता में **'विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग'** गठित किया था। इस आयोग की रिपोर्ट सन् 1949 में प्रकाशित हुई।

माध्यमिक शिक्षा की जाँच के लिए भारत सरकार ने सन् 1952 में **डॉ. ए. लक्ष्मण स्वामी मुदालियर** की अध्यक्षता में **'माध्यमिक शिक्षा आयोग'** का गठन किया। इस आयोग ने अपनी रिपोर्ट भारत सरकार को **1953** में दी। अध्यापक शिक्षा की दृष्टि से इस आयोग के विचार अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण हैं।

बारह वर्ष बाद सन् 1964 में **डॉ. दौलत सिंह कोठारी** की अध्यक्षता में **'शिक्षा आयोग'** भारत की सम्पूर्ण शिक्षा-प्रणाली के पुनर्गठन हेतु सुझाव देने के लिए नियुक्त किया गया। इस आयोग ने अपनी रिपोर्ट सन् 1966 में प्रस्तुत की। आयोग ने अध्यापक शिक्षा की ओर भी ध्यान दिया और उपयोगी सुझाव दिए।

2. विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग के विचार – विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948-49) ने अध्यापक शिक्षा के सम्बन्ध में लगभग **आठ पृष्ठों** में अपने विचार व्यक्त किए हैं। आयोग ने शिक्षक प्रशिक्षण, महाविद्यालयों में प्रवेश, शिक्षण, पाठ्यक्रम आदि की गहराई से छानबीन कर **पृष्ठ 213** पर आयोग ने आलोचना सम्बन्धी विचार प्रस्तुत किए हैं। **राधाकृष्णन् आयोग** ने अध्यापक शिक्षा को प्रभावकारी बनाने के लिए बी. एड. के पाठ्यक्रम के पुनर्गठन पर बल दिया। इस आयोग का मत था कि 'विद्यालय पाठन अभ्यास के लिए अधिक समय रखा जावे तथा परीक्षार्थी की योग्यता मापन में प्रत्यक्ष पाठन अभयास को अधिक महत्व दिया जावे। प्रत्यक्ष पाठन अभ्यास हेतु उपर्युक्त विद्यालयों का ही प्रयोग किया जावे। प्रशिक्षार्थियों को विद्यालय के वर्तमान पाठन अभ्यास पाठन क्रम को बदलने और इसे श्रेष्ठतम बनाने के लिए प्रोत्साहित किया जावे। शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय के अध्यापक वर्ग में अधिकतर उन्हीं व्यक्तियों का चयन किया जावे जिन्हें विद्यालयों में पढ़ाने का प्रत्यक्ष अनुभव हो। शिक्षा के सैद्धान्तिक विवेचन का पाठ्यक्रम लचीला होना चाहिए और उसमें स्थानीय परिस्थिति के अनुकूल परिवर्तन एवं परिवर्तन की क्षमता अपेक्षित है।'

लेकिन यह दुर्भाग्य का विषय है कि **विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग** ने जो सुझाव अध्यापक शिक्षा में गुणात्मक सुधार के लिए दिए थे, वे कार्यान्वित न हो सके। यदि इन सुझावों को ध्यान में रखकर अध्यापक शिक्षा को पुनर्गठन किया गया होता तो आज हमारे सम्मुख एक दूसरा ही दृष्य परिलक्षित होता।

3. माध्यमिक शिक्षा आयोग के विचार – माध्यमिक शिक्षा आयोग ने माध्यमिक विद्यालयों के अध्यापकों की सामान्य दशा को असन्तोषप्रद पाया था। इस आयोग का निश्चित मत था कि अध्यापकों की सामान्य दशा में सुधार किया जाए। इस निमित्त इसने अध्यापकों की भर्ती के तरीके में परिवर्तन, योग्यताएँ तथा अर्हताएँ, परिवीक्षा (Probation) अवधि, वेतनक्रम, सेवा सुरक्षा एवं अवकाश प्राप्ति की आयु आदि पर सेवा सुरक्षा एवं अवकाश प्राप्ति की आयु आदि पर विचार किया तथा उपयोगी सुझाव दिये जैसा कि विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग की संस्तुतियों के साथ हुआ, माध्यमिक शिक्षा आयोग की संस्तुतियों की ओर भी नाममात्र का ध्यान दिया गया।

जहाँ तक अध्यापक शिक्षा का सम्बन्ध है, माध्यमिक शिक्षा आयोग ने शिक्षक प्रशिक्षण की संकल्पना को अपनाते हुए यह मत व्यक्त किया कि शिक्षक प्रशिक्षण की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। आयोग ने यह भी पाया कि विभिन्न प्रदेशों में शिक्षक प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम भिन्न-भिन्न प्रकार के हैं और अनेक दृष्टियों से त्रुटिपूर्ण भी हैं। आयोग के अनुसार अध्यापक शिक्षा के पुनर्गठन एवं विकास के निमित्त निम्नलिखित सुझावों को व्यावहारिक रूप देना आवश्यक होगा -

1. शिक्षा प्रशिक्षणालय केवल दो ही प्रकार के ही होने चाहिए- दो वर्ष का प्रशिक्षण, हाई स्कूल या हायर सेकेण्डरी परीक्षोत्तीर्ण छात्राध्यापकों के लिए एवं एक वर्ष का प्रशिक्षण, स्नातक परीक्षोत्तीर्ण छात्राध्यापकों के

* सहायक प्राध्यापक (शिक्षा) सरस्वती शिक्षा महाविद्यालय, ऋषिनगर, उज्जैन (म.प्र.) भारत

लिए। स्नातकोत्तर प्रशिक्षण की अवधि दो सत्र की जा सकती है। इन्हें विश्वविद्यालयों से डिग्री देने की दृष्टि से संयोजित किया जाना चाहिए एवं माध्यमिक स्तर के परीक्षोत्तीर्ण छात्राध्यापकों के प्रशिक्षण को इस हेतु प्रथम रूप से गठित एक बोर्ड के नियंत्रण में किया जाना चाहिए।

2. छात्राध्यापक एक या एक से अधिक शिक्षणेत्तर प्रवृत्तियों में प्रशिक्षित किए जाने चाहिए। प्रशिक्षणालय पुनर्नवीकरण (रिफ्रेशर) पाठ्यक्रम, ऐच्छिक विषयों में सेवाकालीन पाठ्यक्रम, (इनसर्विस कोर्सेज), प्रत्यक्ष प्रशिक्षण हेतु कार्यगोष्ठी (वर्कशाप) एवं अध्यापन व्यवसाय से सम्बन्धित सम्मेलन इत्यादि कार्यक्रमों का सामान्य रूप में आयोजन पहलुओं पर शिक्षक-प्रशिक्षणालय अनुसन्धान कार्य करत रहे। इस हेतु उनके सीधे नियन्त्रण में परीक्षणात्मक (एक्सपेरीमैण्टल) तथा प्रदर्शनात्मक (डिमांसट्रेटिव) विद्यालय होने चाहिए।
3. शिक्षक प्रशिक्षणालयों में कोई भी शुल्क नहीं लिया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त सभी छात्राध्यापकों को प्रशिक्षण की अवधि में उपयुक्त आर्थिक सहायता राज्य सरकार द्वारा दी जानी चाहिए। अध्यापक के रूप में कार्य करने वाले व्यक्तियों को प्रशिक्षण काल में भी वही वेतन दिया जाए। सभी प्रशिक्षण महाविद्यालयों में छात्राध्यापकों के समुचित आवास की व्यवस्था करें। जिससे सामुदायिक जीवन एवं अन्य उपयुक्त प्रवृत्तियों का आयोजन किया जा सके।
4. शिक्षाशास्त्र में स्नातकोत्तर प्रशिक्षण (एम. एड. कोर्स) के लिए 3 वर्ष तक अध्यापक के रूप में कार्य करने वाले शिक्षा स्नातकों को ही प्रवेश दिया जाये। प्रशिक्षण महाविद्यालय में कार्य करने वाले प्राध्यापक, चुने हुए प्रधानाध्यापक एवं निरीक्षण अधिकारियों के बीच में खुले रूप से अदला-बदली (एक्सचेन्ज) होनी चाहिए। महिला अध्यापकों की कमी को पूरा करने हेतु अर्धकालीन (पार्ट टाइम) पाठ्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिए।'

यदि हम इन सुझावों का विश्लेषण करें और आज जो अध्यापक शिक्षा की दशा है, उसकी ओर ध्यान दें तो हमें ज्ञात होगा कि भारत के अनेक विश्वविद्यालयों में शिक्षा विभाग अथवा शिक्षा संकाय की स्थापना इसी दृष्टि से की गयी कि अध्यापक शिक्षा का दायित्व विश्वविद्यालय ले लें। माध्यमिक शिक्षा आयोग की यह संस्तुति कार्यान्वित की गयी लेकिन जहाँ तक छात्राध्यापकों से शुल्क न लेने की बात है, इस संस्तुति के अनुसार कार्य नहीं किया गया। एम. एड. कक्षा में प्रवेश के लिए जो सुझाव इस आयोग ने दिया था। उसकी ओर भी पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया।

4. कोठारी शिक्षा आयोग के विचार - कोठारी शिक्षा आयोग की नियुक्ति सन् 1964 में की गई थी। इस आयोग ने सन् 1953 से लेकर 1964 तक की अवधि में अध्यापक शिक्षा की जो स्थिति थी, उसका विश्लेषण करते हुए जो मत व्यक्त किया, उसके प्रमुख अंष निम्नलिखित हैं-

1. अध्यापक प्रशिक्षण विद्यालय - अन्य सामान्य महाविद्यालय एवं माध्यमिक ताकि प्राथमिक विद्यालयों से कोई सम्पर्क नहीं रखते।
2. शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में अध्यापन सम्बन्धी पुराने सिद्धांतों एवं नियमों का ही ज्ञान कराया जाता है, जो कि आधुनिक भारतीय परस्थिति के सन्दर्भ में उपयोगी नहीं है।
3. अध्यापन अभ्यास में हरबार्ट द्वारा निर्धारित पंचपदी के आधार पर जो पाठ-योजना बनाई जाती है, वह अनेक दृष्टियों से अनुपयुक्त है।
4. प्रशिक्षण की अवधि में जिन शिक्षण विधियों का ज्ञान भावी अध्यापकों को कराया है उनकी उपयोगिता इसलिए सीमित है कि प्रशिक्षण के बाद अध्यापक इन विधियों का उपयोग दैनन्दिन कक्षा अध्यापन में नहीं करते।
5. अधिकतर अध्यापकों को विधि का ज्ञान तो होता है लेकिन पाठन विषय की समुचित जानकारी नहीं होती।

कोठारी शिक्षा आयोग ने **विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग** एवं **माध्यमिक शिक्षा आयोग** द्वारा दिये गये सुझावों को कर्यान्वित न करने के लिए सरकार की आलोचना भी की और इस सन्दर्भ में लिखा -

'अध्यापक शिक्षा पर किया जाने वाला व्यय बहुत अधिक लाभांश (रिच डिवीडेन्ड) दे सकता है, क्योंकि आवश्यक आर्थिक स्त्रोत एवं साधन, यदि करोड़ों व्यक्तियों की शिक्षा को समुन्नत बनाने की दृष्टि से देखा जाय तो सीमित ही है।'

निष्कर्ष - इसमें संदेह नहीं है कि भारतीय शिक्षा के वर्तमान स्वरूप में आमूल परिवर्तन की आवश्यकता है। भारत सरकार का शिक्षा मंत्रालय एवं विभिन्न प्रदेशों के शिक्षा विभाग अब प्रयत्नशील है कि शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन का सशक्त साधन बनाया जाये। कुछ प्रदेशों में यह कार्य द्रुत गति से हो रहा है।

तमिलनाडु तथा राजस्थान के शिक्षा विभागों द्वारा किए गए शैक्षिक परिवर्तन एवं अध्यापक शिक्षा में सुधार उल्लेखनीय है लेकिन फिर भी अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन की आवश्यकता है। अध्यापक शिक्षा का पाठ्यक्रम लचीला हो, जीवन से सम्बन्धित हो, राष्ट्रीय एकता एवं अन्तार्राष्ट्रीय सद्भावना के विकास में सहायक हो, यह अत्यन्त आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

A Comparison Between Anthropometric Measurements Of Football And Hockey Players

Ankush Kanwar * Dr. Om Prakash Aneja **

Abstract - The purpose of the study is to compare the Anthropometric measurements between the Hockey and Football players. A total number of Forty (N=40) subjects were selected for the study, in which, twenty (n=20) male athletes had participated in various inter-college tournaments in Football and twenty (n=20) male athletes had participated in various inter-college tournaments in Hockey during the year 2014-15. The athletes were selected by applying purposive sampling technique. The variables selected for measurement and comparison between the athletes were height, weight, arm length and leg length. The age of subjects ranged between 16 to 18 years. The Mean, Standard Deviation, Mean Difference and 't'-value were calculated to find out the significance of difference between the groups. The level of significance was set at 0.05. The result revealed no significant differences between the height, weight and leg length of the Football and Hockey players however there was significant difference between the arm length of the two groups. In conclusion there was no significant difference between the height, weight and leg length of the Football and Hockey players. The Hockey players, however, have longer arms than the Football counterparts.

Introduction - In Greek 'Anthro' means man and 'pometry' means measurements literally meaning: "measurement of humans". The study of measurements or proportions of the human body according to sex, age, etc. for identification purposes & understanding human physical variation. Anthropometry is the systematic collection and correlation of measurements of the human body. Anthropometry is used for identification, for the purpose of understanding human variation and in various attempts to correlate physical with racial and physiological traits. In the 19th century, anthropometric data were applied, often subjectively, by social scientists attempting to support theories associating biological race with levels of cultural and intellectual development. The Italian psychiatrist and sociologist Cesare Lombroso, seeking physical evidence of the so-called criminal type, used the methods of anthropometry to examine and categorize prison inmates. In Physical Education and Sports anthropometry is used in many different ways. Many a times it is used for information of an individual and many a times to see how they affect performance.

Methodology-

Sample - Total forty male subjects (N=40), who have participated in various college level tournaments in their respective games. Twenty subjects (n=20) participated in the game of Football while the other remaining twenty subjects (n=20) participated in Hockey. All the subjects played their respective games during the session of 2014-15 at Nagpur University. Purposive sampling technique was used for the selection of subjects. The age of the subjects ranged between 16 to 18 years.

Tools - For Weight (kilograms) a weighing machine was used, for Height (centimeters) a stadiometer was used and for arm and leg length (centimeters) a measuring tape was used.

Statistical Analysis - The Mean, Standard Deviation, Mean Difference and 't'-values were calculated to find out the significance of differences between the selected anthropometric components of Football and Hockey players. The level of significance was set at 0.05.

Analysis of Data- The results with regard to the anthropometric variables height, weight, arm length and leg length are given in the tables below.

Table - (See in the last page)

The above table shows that the Mean value of Hockey players is 170.6 and the Mean value Football players is 171.95. Similarly it shows that the Standard Deviation of hockey players is 4.99 and 3.80 is the Standard Deviation of Football players. The Mean Difference between both groups was of 1.35. After calculations the value of the 't' ratio is 0.96 whereas the table value of the 't' ratio is 2.09. As the obtained 't' ratio is less than the table value of 't' ration, there is no significant difference between the height of Hockey and Football players. **(Graph See in the last page)**

Table 2 - (See in the last page)

***Asst. Professor, Dr. Punjabrao Deshmukh College of Arts and Commerce (Evening), Subhash Road, Cotton Market, Nagpur (Maharashtra) INDIA**
**** Dr. Baba Saheb Ambedkar College, Brahmapuri (Maharashtra) INDIA**

The above table shows that the Mean value of Hockey players is 56 and the Mean value Football players is 58.4. Similarly it shows that the Standard Deviation of hockey players is 8.45 and 7.88 is the Standard Deviation of Football players. The Mean Difference between both groups was of 2.4. After calculations the value of the 't' ratio is 0.92 whereas the table value of the 't' ratio is 2.09. As the obtained 't' ratio is less than the table value of 't' ration there is no significant difference between the height of Hockey and Football players.**(Graph See in the last page)**

Table 3 - (See in the last page)

The above table shows that the Mean value of Hockey players is 56 and the Mean value Football players is 58.4. Similarly it shows that the Standard Deviation of hockey players is 8.45 and 7.88 is the Standard Deviation of Football players. The Mean Difference between both groups was of 1.35. After calculations the value of the 't' ratio is 0.92 whereas the table value of the 't' ratio is 2.09. As the obtained 't' ratio is more than the table value of 't' ration, there is a significant difference between the height of Hockey and Football players.

Table 4 - (See in the last page)

The above table shows that the Mean value of Hockey players is 93.05 and the Mean value Football players is93.15. Similarly it shows that the Standard Deviation of hockey players is 2.52 and 1.82 is the Standard Deviation of Football players. The Mean Difference between both groups was of 0.35. After calculations the value of the 't' ratio is 0.14 whereas the table value of the 't' ratio is 2.09. As the obtained 't' ratio is less than the table value of 't' ration, there is no significant difference between the height of Hockey and Football players.

Findings & Conclusion - The study shows that that there is no huge difference between the height, weight and leg length of the players of both games. This may be because of the similarities of both the games as both the games require extensive running and other such activities. However, the arm length of the Hockey players seems to be significantly larger than those of the Football players. This provided the Hockey players with much larger range with the Hockey stick. As many of the subjects are still developing further training might bring even more changes, albeit much slowly, in their bodies in response to their training.

References :-

1. A Practical Approach to Measurement in Physical Education (Third Edition); Harold M. Barrow, Rosemary McGee (1979) Lea &Febiger, Philadelphia (U.S.A.).
2. Anthropometric History: What Is It?; John Komlos(1992); OAH Magazine of HistoryVol. 6, No. 4, Communication in History: The Key to Understanding (Spring, 1992)
3. Anthropometry – The measurement of Body Size, Shape and Form; Dr. S. Nath (2006) Friends Publications, New Delhi – 110002.
4. From a History of Anthropometry to Anthropometric History; Stanley Ulijaszek and John Komlos(2009); Institute of Social and Cultural Anthropology, University of Oxford, Oxford, U.K.; Department of Economics, University of Munich, Munich, Germany; 2009
5. New Horizons in Kinanthropometry; Dr. Shyamal Koley (2005) Friends Publications, New Delhi – 110002.
6. Test and Measurement in Physical Education; Devendar K. Kansal (1996) DVS Publishing Kalkaji, New Delhi – 110059.

Table 1 - Significance of difference between the height of hockey and football players

Sport	Mean	Standard Deviation	Mean Difference	Obtained t ratio	Table value of t ratio
Hockey	170.6	4.99	1.35	0.96	2.09
Football	171.95	3.80			

*Significant at 0.05 level.

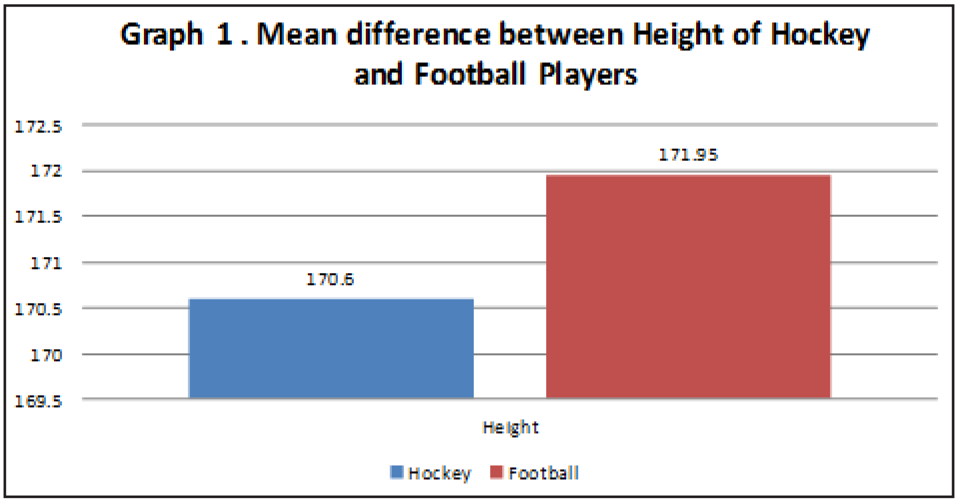

Table 2 - Significance of difference between the weight of hockey and football players

Sport	Mean	Standard Deviation	Mean Difference	Obtained t ratio	Table value of t ratio
Hockey	56	8.45	2.4	0.92	2.09
Football	58.4	7.88			

*Significant at 0.05 level.

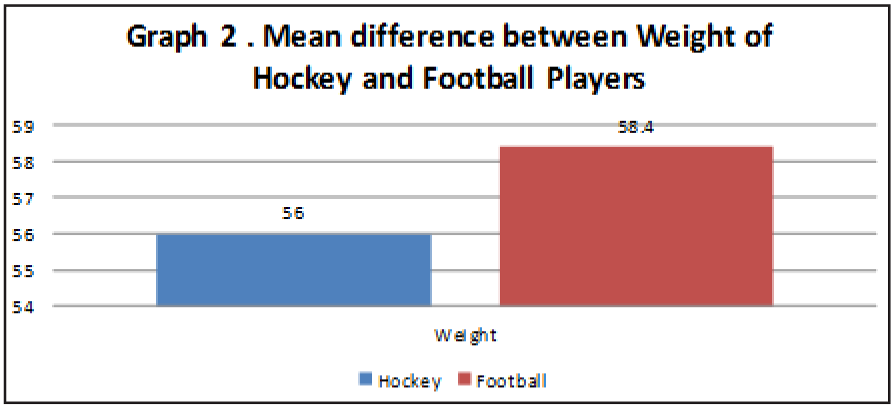

Table 3 - Significance of difference between the arm length of hockey and football players

Sport	Mean	Standard Deviation	Mean Difference	Obtained t ratio	Table value of t ratio
Hockey	69	3.65	2.2	2.39*	2.09
Football	71.2	1.83			

*Significant at 0.05 level.

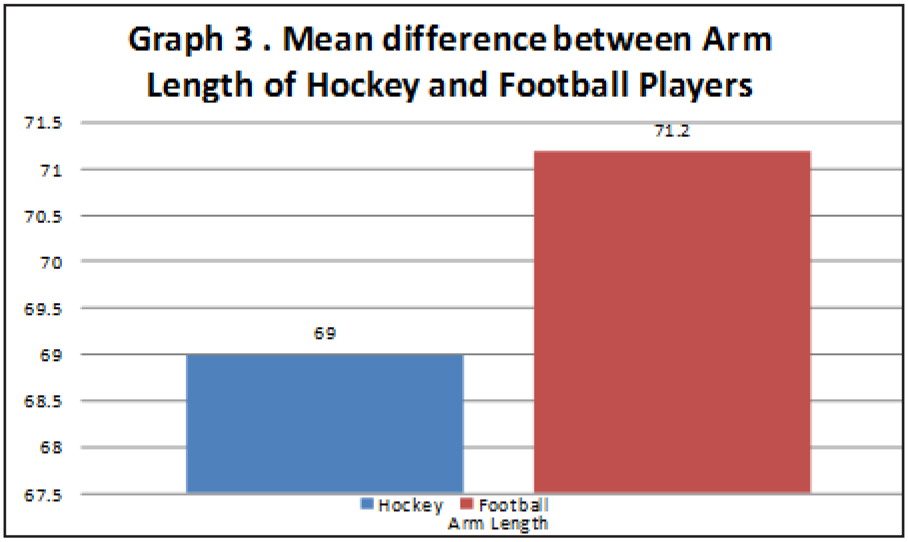

Table 4 - Significance of difference between the arm length of hockey and football players

Sport	Mean	Standard Deviation	Mean Difference	Obtained t ratio	Table value of t ratio
Hockey	93.05	2.52	0.35	0.14	2.09
Football	93.15	1.82			

*Significant at 0.05 level

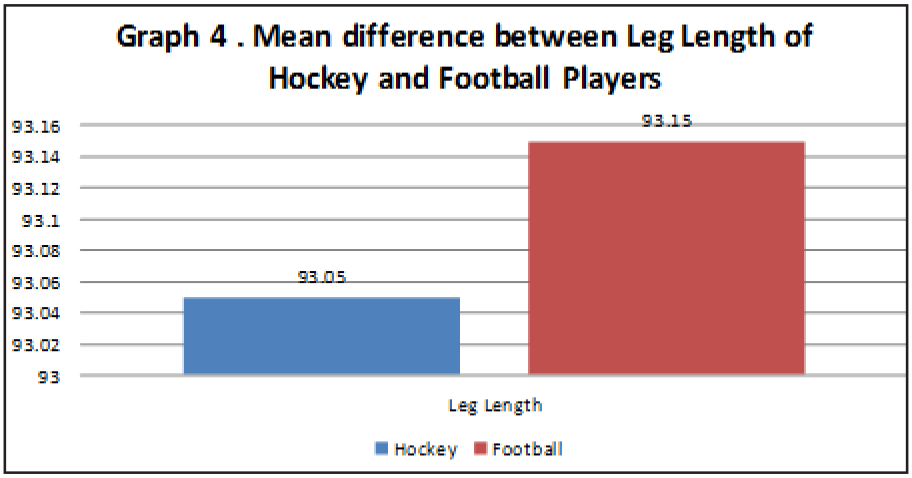

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

The Heritage Of Undivided Punjab (Sikh Wall Paintings)

Dr. Rupali Razdan *

Introduction - "Punjab", the land of five rivers is not only known for it's history and it's jovial and celebratory culture but is also known for art that includes frescoes and mural paintings. Although, the sikh belief against image worship left very little scope for the development of visual arts yet the wall paintings remain to be the benchmark craft styles across the state and were painted on the settled places like gateways, ceilings and walls of the buildings.

Ever since the commencement of scholarly interest in Eastern Punjab wall paintings, there has been a great demand for well-documented inventory of monuments and wall paintings of the west Punjab. From what we know of ancient art monuments as well as their visual art evidences. Sikh wall paintings have come down to us as a cultural heritage of both Punjab. (East Punjab & West Punjab) of which we can be justly proud.

The partition of Punjab in 1947 created a paradoxical situation that Punjabi's had never experienced before, they were one people, but with two mainland now – India and Pakistan. The impact of the partition was quite distressing. Communal riots took place throughout the country destroying lives, wealth and resulting in bitterness that was hard to wipeout. It not only affected the wealth, lives of both countries but also affected art and culture of the same.

Lahore, the united Punjab's former Capital, had long been considered the jewel in the crown of North India and had been developed as a cultural capital under both the Mughals and Maharaja Ranjit Singh. Most of the evidences of the Sikh wall paintings are left there.

So far as knowledge goes, it is true that due to political confusions and disorders at Punjab, the evidences of Sikh wall paintings from West Punjab are less in number as compared to the evidences we got from the east Punjab of India.

About wall paintings in ancient Punjab, we have no evidence that has survived. Percy Brown spoke of the possibility of some kind of mural decoration on the edifices of the Indus Valley civilization. Similarly Charles Fabri felt that more carefully conducted excavations in future may reveal such kind of mural decorations[1]. Despite wanton destruction carried on in Punjab by successive waves of invaders, the art of mural painting, it is conjectured, continued to languish in a broken tradition.

The documented history of painting in the Punjab dates to at least the 16th Century, when the region was part of the Mughal empire. Artists produced works on paper for the court as well as painted pictures and other designs on the walls of monuments. It's concrete evidence has come down to us from the walls of the Lahore fort painted during the times of Akbar.[2]

Meanwhile, in the hill states stretching from Jammu in the West to Sirmur in the east, the great Pahari (literally of the hills) styles of painting were flourishing. From the late 17th Century, and throughout the 18th Century, the rulers of these Hindu Kingdoms employed families of artists to produce works at first, free from all sign of Mughal influence, and later, in a more hybrid style.

By the 18th Century, there is evidence that artists trained in the hills were working for patrons in the plains. So when Ranjit Singh was proclaimed Maharaja of the Punjab in 1801, there was already a vigorous painting tradition in the region involving Muslim, Hindu and Sikh artists, who were employed by the Maharaja and others at court.

Basically, in Punjab, the art of wall painting was commonly practiced in 18th Century as a tradition to decorate the shrines and homes. Despite the political confusion and disorder that this century saw in Punjab on such a vast scale, the art of wall painting flourished under the Sikhs, especially under the powerful and well organized kingdom of Maharaja Ranjit Singh.[3]

Themes that are recognizably 'Sikh' include sets of idealized portraits of the ten Gurus, and paintings or drawings illustrating the Janam Sakhi, the traditional and much revered account of the life and travels of the founder of the faith, Guru Nanak.[4]

Ranjit Singh's empire was secular, none of the subjects were discriminated against on account of their religions.[5] He did not force Sikhism on non-Sikhs and respected all religions.[6] He encouraged the craftsmen to produce gifts worthy of exchange between himself and the representatives of the powers around him.

In Maharaja Ranjit Singh's time, as Sikhism had royal patronage, the Sikhs began to devote themselves to magnificence and splendour of their shrines. According to some art historians, the walls of over 700 shrines associated with the Sikh Gurus in the Punjab were available to be painted.[7] Many individuals went to the extent of getting certain portions of the walls painted as an act of dedication and many of them contributed money and labour for the construction of these shrines. Maharaja Ranjit Singh himself, who was a liberal patron of arts, commissioned painters to decorate the walls and panels of the wonderful Golden Temple, at Amritsar. During his reign several paintings in the Lahore fort were embellished with the wall paintings.[8] He also got his palace at Wazirabad (now in Pakistan) painted with murals illustrative of the religion of

*Asst. Professor (Fine Arts) Lyallpur Khalsa College for Women, Jalandhar (Punjab) INDIA

the Sikhs. Lieut William Barr, who visited Lahore in 1839, saw several murals in the royal palace , including the one that depicted Maharaja Ranjit Singh standing in reverence before the Guru. He wrote: "The picture represents the Maharaja in the presence of Baba Nanak , the founder of the Sikh sect; the holy father being most splendidly robed in a suit of embroidered gold, and sitting; whilst his disciple, who had done so much to extend the domains of his followers, is dressed in bright green silk, and standing, with his hands joined in a supplicatory manner. Behind the Guru, a guard is standing called by the name Akali, with drawn sword, and with but very little covering."[9] Thus, he constructed a large number of other shrines and got them decorated with the number of wall paintings.

A considerable amount of patronage of painting, in the form of commissioning of wall painting, came from the nobility in 19th Century Punjab. Under the Sikh regime, it was the courtiers and nobles who were also big landlords or Jagirdars that constituted the uppermost stratum of the society. It was their interest in surrounding themselves with style which led them to commission murals. They had portals, chamber, private villas and loggia embellished with murals.[10]

Some of the buildings having Sikh wall paintings including Samadhs, Gurudwaras, Havelis & Temples built by Maharaja Ranjit Singh, his sons and by others which are left at West Punjab (Pakistan) after partition are as under-

1. Samadh of Maharaja Ranjit Singh, Lahore, Pakistan – Sikh themes.
2. Haveli Maharaja Naunilal Singh, Lahore, Pakistan – Sikh Themes.
3. Gurudwara Bhai Bannu at Mangat, Distt. Mandi Bahauddin, Pakistan – Floral frescoes and Sikh Themes.
4. Samadhi of Than Singh at Kot Fateh Khan, Attock district, Pakistan – Sikh Themes & Hindu mythologies.
5. Dharam Shala Bhai Ram, Lahore, Pakistan-Sikh Themes, Nanak Shahi.
6. Residence of Allard & Ventura, Anarkali, Lahore, Pakistan – Sikh Themes.
7. Lahore fort, Lahore, Pakistan, Sikh Themes, Religions.
8. Fort of General Hari Singh Nalwa, Gujrawala, Pakistan, Sikh Secular, Battle of Jamrood.
9. Country House of Ranjit Singh, Wazirabad, Pakistan, Sikh, Religious, Sikh Gurus.[11]

All above references are taken from written records only. Much has disappeared, some only due to natural causes like Dampness, Salt petre, vegetation each did their works. Human agencies have had their own role in this matter. No care is taken by the Pakistan government to take care of such a marvelous historic Sikh art. Many old buildings having murals are demolished and much more are going to be fell down anytime due to lack of restoration works. Many of them are covered with the thick layers of whitewash in the name of restoration such as the eastern façade of Maharaja Ranjit Singh's Samadhi which are having frescoes of guardian figures that Dr. Nadhra Sahbaz Naeem Khan from college for women University, Lahore, Pakistan found after scraping thick layers of whitewash during her research work on ornamental program of Maharaja Ranjit Singh's Samadhi in Lahore.[12]

It is all due to ignorance of Pakistani government towards art and poor relations between India and Pakistan. It is a matter of our common culture, heritage and art which is a part of us. We need to look at it with pride, whether it is the art of Sikh period, the Mughal or the British. The major problem is that we are not trying to look at the long-term benefits of these buildings. These buildings can become a source of huge benefit for our own people. They are not for one individuals. This is important for our own people, may be they are from Pakistan or from India. Both need to be familiar with their own heritage as the cultures are common for both countries and for this government of both countries should try to make relations friendly but there is also an urgency to preserve these endangered sites as they are fast decaying. Since murals are more or less vanishing from Punjab because of decay, ignorance and lack of interest, it is suggested that we should consider a virtual museum of murals of Punjab, where photographs of the murals could be put on the internet and be accessible to all. The virtual museum would evoke interest and that would bring a spotlight on this literally dying art.

References :-

1. Kang, Kanwarjit Singh, "Mitti Appo Apni", Arsee Publishers, Chandni Chowk, Delhi – 110006, 1985, Page. 31
2. Meleod, W.H., "Popular Sikh Art," Oxford University Press, Oxford New York, 1991, Pg. 8
3. Ibid, Page. 8.
4. Kang, Kanwarjit Singh, "Punjab De Kandh Chittar- wall paintings of Punjab", Publication Bureau, Punjabi University, Patiala, 1988, Page. 35-40.
5. Duggal, K.S., "Ranjit Singh: A secular sikh sovereign", Abhinav Publications (1989)
6. Singh, Khushwant, "Ranjit Singh: Maharaja of the Punjab", Penguin Books, New Delhi, 2008.
7. Aryan, K.C., "Punjab Murals", Atma Ram & Sons (H.O.) Kashmere Gate Delhi, 1985, P.26-27.
8. Kang, Kanwarjit Singh, "Wall Paintings of Punjab and Haryana", Atma Ram & Sons (H.O.) Kashmere Gate Delhi, 1985, P.22.
9. Goswamy, B.N., Marg, A Matter of Taste : some notes on the context of painting in Sikh Punjab', Marg Publications, Bombay, 1981, P. 63.
10. Kang, "Wall Paintings of Punjab", Publication Bureau, Punjabi University, Patiala, 1988, Pg. 77-87.
11. Kang, "Wall Paintings of Punjab & Haryana", Atma Ram & Sons (H.O.) Kashmere Gate, Delhi, 1985. Chapter – 3
12. The Dawn, Pakistan Newspaper, 'Rediscovering our Sikh Heritage', Published May 24' 2012. Also personally interacted her during her visit to India on 13.5.06 & on a conference on 'The Time of Ranjit Singh' held at Spring Dale School , Amritsar .

Age Of Dependent Child And Social Support

Dr. Mamta Barman*

Abstract - Urban educated unmarried girls and married women have been entering into various kinds of jobs both in the private and public sectors. In India we still have support systems. We have parents, in-laws and reliable domestic help. We still don't face the problems western women do. Social support is the expression of liking, admiration, respect, love and agreement as well as the provision of direct aid and assistance. This paper studied social support among married working women in relation to age of last dependent child. It was based on 75 married women working in BSNL. Social Support Scale for working women (Arora and Kumar, 1992) was conducted. Findings of the study show that there is an impact of age of last dependent child on social support among married women working in BSNL. Female employees whose dependent child is less than fifteen years need greater social support then others.

Introduction - Indian women is moving towards an ideal balance of traditional and progressive values. The house hold chores and brining up of children are considered to be the responsibility mainly of women. The combination of work and family responsibility may cause considerable stress. Both types of work require giving care and attention to the needs of others. Receiving support gives meaning to individuals live by virtue of motivating them to give in return to feel obligated, and to be attached to their ties.

Social support is a concept that is generally understood in an intuitive sense, as the help from other people in a difficult life situation. Cobb, 1976 defines social support as the individual belief that one is cared for and loved, esteemed and valued, and belongs to a network of communication and mutual obligations.

Social support is the physical and emotional comfort given to us by our family, friends, co-workers and others. We are part of a community of people who love and care for us and value and think well for us. It is a way of categorizing the rewards of communication in a particular circumstance. Several types of social support have been investigated, such as instrumental (e.g. assist with a problem), tangible (e.g., donate goods), informational (e.g. give advice), and emotional (e.g. give reassurance), among others.

The profound social changes have affected women much more than man. The objective of the study is to discuss the impact of age of last dependent child on social support in married working women. It was hypothesized that, "there will be no impact of age of last dependent child on social support among working women.

Method - 75 married women working in BSNL were selected for the study. Social Support Scale for working women developed by Arora, M. and Kumar, R. (1992) was administered. Responses were to be given on a seven point scale ranging from not at all (score. 0) to too much (score=6). The total number of items in the questionnaire are 38. Alpha coefficient of the scale was calculated for actual and expected social support.

Table – 1
Comparative results of Social Support among BSNL employees in relation to Age of last dependent child

Age of last dependent child	N	Mean	SD
<15	59	176.68	28.67
15-20	8	121.88	49.25
>20	8	150.25	38.41

Summary ANOVA Table (See in the next page)

The results presented in the above table it is clear that obtained value of 'F' ratio is 11.52 which is more than 4.92 the minimum value for significance at 0.01 level, which shows that there is greater impact of age of last dependent child on social support in married female employees of BSNL. The hypothesis is rejected here.

Thus, from the above results it may be concluded that there is an impact of age of last dependent child on social support of married women working in BSNL. Employees whose dependent child is less than 15 years need greater social support than others.

Female are comparatively more concerned with social traditions and norms. The feeling of guilt which is always surrounding in the mind of working women because of lack of supervision, need fulfillment, and attachment. Ross (1961) reported that feeding children, sending them to school, disciplining etc. is mainly a female task. Bowers and Gesten (1986) found that social supports can be a type of protection against anxiety.

*Associate Professor (Psychology) Govt. MKB College, Jabalpur (M.P.) INDIA

Social support, assists in coping with the physical emotional and financial domains of care giving. Psychological support, guidance, advice and care are traditionally carried out by family or community members. Working women spent less time with their infants, but compensated by spending more time with their children in the evenings. Working women found that if she can deal with her emotions. She can manage her career and home, well enough. By identifying self-values, strengths and strong personal beliefs she can create a good balance within herself.

References :-

1. Berk, S.F. (1980); Women and House hold Labour. Sage Publication California.
2. Lin, N; Ye, X; (1999); Social Support and depressed Mood. Journal of health and Social Behaviour. Vol. 40.

Summary ANOVA Table

Source of Variation	d.f.	Sum of squares	Mean Square	'F' Ratio	'P' value
Between Groups	2	23983.73	11991.87	11.52	<0.01
Among Groups	72	74969.26	1041.24		

Degrees of freedom – 2, 72

Minimum value at 0.05 level – 3.13
Minimum value at 0.01 level – 4.92

****

क्या पेरिस जलवायु समझौता अफ्रीका को जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न हुई समस्याओं से निजात दिलाने में सक्षम हो सकता है ?

डॉ. रश्मि कपूर *

प्रस्तावना – पेरिस जलवायु समझौता 2015 वैश्विक स्तर पर पहला सामूहिक प्रयास नहीं है जो जलवायु परिवर्तन के अपरिवर्तनीय विनाशकारी प्रभाव को शमन करने और अनुकूलन करने के आशय से परक्रामण किया गया। इस समझौते से पूर्व कई अन्य वैश्विक प्रस्ताव और संकल्प किए गए। किन्तु बदलते समय के साथ नई और अज्ञात चुनौतियों ने पहले के समझौतों को विफल कर दिया और सम्पूर्ण विश्व एक बार फिर सृष्टि को बचाने के समाधान के लिए जुट गया। ग्लोबल वार्मिंग जिसकी बहुत पहले से भविष्यवाणी की गई थी, एक वास्तविकता बन गई, जो पूर्वानुमानित से भी बहुविध और बदतर स्तर तक पहुँच गयी।

अंतर्राष्ट्रीय संधि, यू.एन.एफ.सी.सी.सी. (UNFCCC 1992) एक ऐतिहासिक समझौता था। जिसमें वैश्विक तापमान में वृद्धि को रोकने के लिए और परिणामस्वरूप जलवायु परिवर्तन के अनुकूल होने में सहयोग करने के लिए, ग्रीनहाउस गैसों की कमी को सीमित करने की आवश्यकता को दोहराया। इसके तुरंत बाद 1995 के क्योटो प्रोटोकॉल ने उत्सर्जन में कटौती की अपर्याप्तता दर्ज की और उत्सर्जन में कमी के लक्ष्य निर्धारित किए। ये लक्ष्य हस्ताक्षरकर्ताओं पर बाध्यकारी थे। इसके बाद अपनाए गए अनुकूलन और शमन प्रक्रियाओं के परिणामों का मूल्यांकन करने के लिए कई जलवायु परिवर्तन सम्मेलन आयोजित किए गए थे।

जलवायु प्रकारान्तर एक सामान्य प्रक्रिया है लेकिन जलवायु परिवर्तन के समसामयिक दौर में विषम और अप्रत्याशित मौसम की स्थिति पैदा हो रही है, जिससे आने वाले समय में प्रतिकूल परिस्थितियाँ दृष्टिगोचर होगीं। भारी हानि और क्षति का सामना करना पड सकता है। दिसंबर 2015 में 195 देशों ने पेरिस समझौते पर हस्ताक्षर किए थे। पेरिस में आयोजित संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन ऑन क्लाइमेट चेंज पर कांफ्रेंस ऑफ पार्टियों (सीओपी) के 21 वें सम्मेलन का उद्देश्य ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को इस प्रकार समायोजित और कम करना था कि तापमान में वृद्धि 2 डिग्री सेल्सियस से नीचे रहे। क्योटो प्रोटोकॉल ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन के स्तर में कटौती में संतोषजनक परिणाम प्राप्त करने में सक्षम नहीं हो सका। क्योटो प्रोटोकॉल ने अनुकूलन के मुकाबले शमन पर अधिक बल दिया, परिणामस्वरूप अनुकूलन के लिए आवंटित धन बहुत कम रहा। केवल 12% राशि अनुकूलन पर खर्च की गई थी।

पेरिस जलवायु समझौते ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन, शमन, अनुकूलन से निपटने और वित्त राशि जुटाने के लिए जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (यू.एन.एफ.सी.सी.सी.) के अंतर्गत एक समझौता है। इस समझौते का मुख्य उद्देश्य जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से निपटने की क्षमता को प्रबल करना है और लक्ष्य है कि जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन को सक्षम करना और संभवत: व्यवहार्य बनाना। प्रत्येक देश ग्लोबल वार्मिंग को कम करने के लिए अपना खुद का योगदान निर्धारित करेगा और नियमित रूप से अपनी गतिविधियों की और उपलब्ध परिणामों का विवरण भी देगा। किसी देश को किसी विशिष्ट तारीख तक एक विशिष्ट लक्ष्य निर्धारित करने के लिए मजबूर करने के लिए कोई तंत्र नहीं है, लेकिन प्रत्येक लक्ष्य पूर्व निर्धारित लक्ष्यों से अपेक्षाकृत अधिक बेहतर होने चाहिए।

जलवायु परिवर्तन से जूझने और नियंत्रित करने के लिए पेरिस जलवायु समझौता दो दीर्घकालिक उत्सर्जन लक्ष्यों को अभिव्यक्त करता है। पहला, जितनी जल्दी हो सके जो उत्सर्जन की मात्रा चरम सीमा पर पहुँच गयी है, घटनी शुरू हो जाए और दूसरा, इस सदी के अंत तक निवल ग्रीन हाउस गैस तटस्थता का लक्ष्यपूर्ण हो जाए। जलवायु परिवर्तन अनुकूलन के लिए जो वैश्विक लक्ष्य अपनाए जाएगे वे इस प्रकार हैं: अनुकूली क्षमता बढ़ाना, जलवायु परिवर्तन विकृति को कम करना, अपने अनुकूलन प्रयासों और या जरूरतों पर सूचना देने के लिए सभी को प्रोत्साहित करना, विकासशील देशों को बेहतर अनुकूलन समर्थन देना और अनुकूलन की प्रगति की समीक्षा शामिल करना है।

पेरिस समझौते का दृष्टिकोण लचीला बनाया गया है ताकि विश्व समुदाय की व्यापक भागीदारी सुनिश्चित हो सके और जलवायु परिवर्तन के शमन और अनुकूलन के लिए देशों की उत्तेजनात्मक जवाबदेही भी प्राप्त की जा सके। किसी भी अंतरराष्ट्रीय मंच पर पहली बार, विकासशील देशों को एक प्रभावशाली और महत्त्वपूर्ण भूमिका निर्दिष्ट की गयी है ताकि वे पूर्ण सक्रियता से पेरिस समझौते के निर्माण में एक निर्णायक भूमिका निभा सकें। पूर्ण वैश्विक समुदाय को बिना शर्त और स्वैच्छिक आधार पर उत्सर्जन में कमी के लक्ष्यों को निर्दिष्ट करने के लिए आग्रह किया गया है। इन लक्ष्यों को हासिल करने और सफल बनाने के लिए अंतर्राष्ट्रीय समर्थन की भी अपेक्षा रखी है। इन्हें इन्टेन्डेड नॅशनली डिटर्मिन्ड कॉंट्रिब्यूशंस (INDC) कहा जाता है।

जलवायु परिवर्तन ने अफ्रीका को बहुत ही प्रतिकूल तरीके से प्रभावित किया है। अफ्रीका के अधिकांश निवासियों की आजीविका कृषि है और प्रकृति पर कृषि की चरम निर्भरता है। इसके अतिरिक्त सीमित विकास, गरीबी, अविकसित बुनियादी ढांचे और अपरिपक्व अर्थव्यवस्था अफ्रीका को जलवायु परिवर्तन और जलवायु परिवर्तनशीलता के लिए अत्यधिक संवेदनशील बनाती है। आई पी सी सी (IPCC) की 5वीं असेसमेंट रिपोर्ट (AR5) ने रेखांकित किया कि बढ़ते वैश्विक औसत तापमान ने अफ्रीका के सभी क्षेत्रों को प्रभावित किया है।

इस स्थिति ने अफ्रीका महाद्वीप के लिए अनेक गंभीर स्वास्थ्य और

* (अफ्रीकी अध्ययन विभाग) दिल्ली विश्वविद्यालय (दिल्ली) भारत

आर्थिक चुनौतियों को उत्पन्न किया है। 'क्लाइमेट चेंज: पेरिस एग्रीमेंट' लेख में यह लिखा गया है,' (जलवायु परिवर्तन ने अफ्रीका) महाद्वीप के लिए काफी स्वास्थ्य और आर्थिक चुनौतियां उत्पन्न की है, जिनमें शामिल हैं : खाद्य असुरक्षा में वृद्धि, जल की कमी, मौसम संबंधी संवेदनशील रोगों की वृद्धि, और फसल की पैदावार व पशुधन उत्पादकता में कमी।' उप-सहारा अफ्रीका में कृषि उपज का नुकसान 22% तक पहुंचने का अनुमान है। अप्रैल 2017 तक, 143 देशों ने समझौते की पुष्टि की है। जिसमे से 33 अफ्रीका से हैं, यह अफ्रीकी देशों की कुल संख्या का 60% है। अफ्रीका के लिए यह समझौता महत्वपूर्ण है क्योंकि इस समझौते से अफ्रीका को मदद की उम्मीद है, जिससे वे जलवायु परिवर्तन को कम करने के लिए धन और प्रौद्योगिकी प्राप्त कर सकता है। नवीकरणीय ऊर्जा स्रोत का विकास और टिकाऊ भविष्य के लिए तेजी से अनियमित मौसमी मिजाज के प्रभाव के अनुकूलन के लिए भी धन राशि की उम्मीद है।

अफ्रीका औद्योगिकरण के मार्ग पर है, जिसके लिए बुनियादी ढांचे और सम्बंधित उद्योगों के निर्माण की आवश्यकता होगी, जिससे अफ्रीका ग्रीन हाउस गैसों की उत्सर्जन में वृद्धि की चुनौती का सामना कर सकता है। वह पेरिस समझौते का हस्ताक्षरकर्ता भी है, जो स्वैच्छिक रूप से उत्सर्जन के स्तर को कम करने की और अनुकूलन प्रक्रियाओं को अपनाने की अपेक्षा रखता है। अफ्रीका को दुविधा है कि किस प्रकार अपनी अर्थव्यवस्थाओं का उद्योगीकरण करे और साथ ही साथ कार्बन उत्सर्जन के स्तर को भी कम रखे। इसके अतिरिक्त, जलवायु परिवर्तन के कारण पर्यावरण अद्योगति के लिए अनुकूली रणनीतियों और शमन के पहल की आवश्यकता भी है, जिसके लिए अफ्रीका के पास पूंजी की कमी है। यह नहीं है कि जलवायु ही प्रदूषित हो रही है, अफ्रीकी समाज के सभी वर्ग जलवायु परिवर्तन के हानिकारक परिणामों से भी प्रभावित हो रहे हैं, जो काफी चुनौतीपूर्ण हैं। अफ्रीका के लिए पेरिस समझौता जलवायु परिवर्तन प्रतिकूलता से जूझने के लिए एक आशावादी विकल्प है।

इस समझौते के तहत, अनुकूली क्षमता को बढ़ाने, प्रतिक्षेप मजबूती और जलवायु परिवर्तन की संवेदनशीलता को कम करने के वैश्विक लक्ष्य स्थापित किए गए हैं। विभिन्न आर्थिक क्षेत्रों और मानवीय गतिविधियों पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से निपटने के लिए अफ्रीकी देशों की क्षमता को काफी चुनौतियों का सामना करने की आशंका है। इन प्रभावों की तीव्रता और तीव्रता से संभावित रूप से अभिभूत होना स्वाभाविक है। उम्मीद है कि पेरिस समझौता अनुकूलन लक्ष्यों को आगे बढ़ाने के लिए अफ्रीका के लिए एक बड़ा अवसर पेश कर सकता है। इकि-ओबीओहा (2017) ने कहा कि अफ्रीकी लोगों के लिए 2015 के पेरिस जलवायु शिखर सम्मेलन से दो प्राथमिकताएँ सामने आई हैं। सबसे पहले एक महत्वाकांक्षी सहमति की 2^0C के भीतर तापमान वृद्धि को बनाए रखने की प्रतिबद्धता। दूसरा, जलवायु समझौते के तहत वित्त पोषण और क्षमता - निर्माण की चुनौतियों को सुलझाने में अफ्रीका को सहायता मिलेगी।

अफ्रीकी नेतृत्व को जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन के लिए आवश्यक वित्त की कमी की भलीभांति जानकारी है। साई (2016:60) कहते हैं कि, 'हालांकि अफ्रीका ग्लोबल वार्मिंग से बहुत अधिक दुष्प्रभावित होगा, परन्तु अंतरराष्ट्रीय वार्ता में इसकी अक्सर सीमित मोल तोल की शक्ति रहती है।' इस प्रतिकूल स्थिति को अभिभूत करने के लिए, अफ्रीकी देशों ने अपनी बात को बलपूर्वक रखने के लिए अफ्रीकन कॉमन पोजीशन (ए सी पी) के जरिये प्रयास किया है। पेरिस में, अफ्रीकी नेताओं और वार्ताकार एक समावेशी, महत्वाकांक्षी और न्यायसंगत समझौता हासिल करना चाहते हैं जो कार्बन उत्सर्जन को कम करेगा। साई (2016:61) ने कहा है कि 'अफ्रीकी वार्ताकार 2020 तक 100 अरब डॉलर से अधिक विकसित अर्थव्यवस्थाओं से बंधी हुई प्रतिबद्धता सहित अधिक वित्त की मांग कर रहे हैं। वे यह चेतावनी भी दे रहे हैं कि जलवायु वित्त पोषण की कमी को भरने के लिए नए सार्वजनिक वित्त का इस्तेमाल किया जाना चाहिए और मौजूदा आधिकारिक विकास सहायता (Official Development Assistance) का इस्तेमाल जलवायु वित्त पोषण के लिए नहीं किया जाना चाहिए।'

पेरिस समझौते का अफ्रीका के लिए दूरगामी प्रभाव है क्योंकि वह सिर्फ विकास प्रक्रिया की दहलीज पर ही नहीं खड़ा अपितु वह जलवायु परिवर्तन के कारण अतिसंवेदनशील भी है। अफ्रीका में सीमित संसाधन के साथ सीमित तकनीकी विशेषज्ञता के चलते, यह समझौता जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों का सामना करने के लिए वित्तीय और साधनों को उपलब्ध कराने में सहायक बन सकता है। पेरिस समझौते से उम्मीद न केवल स्थाई विकास और उज्जवल भविष्य के लिए नीति ढांचे को बनाना की है बल्कि इसके कार्यान्वयन और संचालन के लिए एक अवसर भी प्रदान कराने की है।

पेरिस जलवायु समझौता अफ्रीका के लिए जलवायु परिवर्तन के अनुकूल होने के लिए देशीय स्तर और महाद्वीपीय स्तर पर वित्तीय सहायता प्राप्त करने का एक अवसर है। चूंकि पेरिस समझौते का दृष्टिकोण अधिक लचीला है और कार्बन उत्सर्जन के स्तरों के आत्म-निर्धारित लक्ष्य पर जोर देता है, इसलिए इसे प्राप्त करना संभव है। विकासशील देशों को सौंपीं गयी मध्यस्थता और समझौते में निर्णय लेने की प्रक्रिया में उनकी प्रभावी भूमिका यह संकेत कर रही है। यह एक विश्व व्यवस्था की नई शुरुआत है जहाँ वैश्विक कॉमन्स के दमनकर्ता अब उन राष्ट्रों को भुगतान करेंगें जो क्षतिग्रस्त हैं और जो हानि सहन कर रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आयेको-कुमैथ, ज. (2017), पैरिस क्लाइमेट डील : व्हाट डस द ण ड पुलआउट मीन फॉर अफ्रीका? http://www-dwcom/en/paris-climate-deal-what-does-the-us-pullout-mean-for-africa-39097370. 10/6 /2017 को प्राप्त किया।
2. इकि-ओबीओहा, ज. (2017), व्हाट द विदड्रॉल ऑफ द णड फ्रॉम द पेरिस क्लाइमेट चेंज एग्रीमेंट मीन्स फॉर अफ्रीका। http://venturesafrica-com/what-does-the-us-withdrawal-from-the-paris-climate - change - agreement-mean-for-africa. 10/6/2017 को प्राप्त किया।
3. क्लाइमेट चेंज : पैरिस एग्रीमेंट, ऑफिस ऑफ डी स्पेशल एडवाइजर ऑन अफ्रीका रिपोर्ट (2016)। http://www-un-org/en/africa/osaa/advocacy/climate-shtml. 10/6/2017 को प्राप्त किया।
4. गोलुबस्कि, क. (2017), इवन बिफोर थे णड लैफ्ट द पेरिस एग्रीमेंट, अफ्रीका स्टेप्पेड अप टू द प्लेट ऑन क्लाइमेट चेंज। https://www-brookingsedu/blog/africa-in-focus/2017/06/02/even-beforethe-u -s-left-the-paris-agreement-africa-stepped-up-to-the-plate-on-climate-change.10/6/2017 को प्राप्त किया।
5. द पेरिस एग्रीमेंट सम्मरी, क्लाइमेट फोकस, 28 दिसम्बर, 2015।
6. फोटाबॉन्ग, इ. (2016). द पेरिस एग्रीमेन्ट एंड अफ्रीकन एग्रीकल्चर,

ग्रेट इनसाइट्स मैगजीन, वॉल्यूम 5(3), मई /जून 2016, http://ecdpm-org/great-insights/from-climate-commitments -to- action / paris-agreement-african-agriculture. 10/6/2017 को प्राप्त किया।

7. मुनान्ग,र.& मगेंडी, र. (2017), पेरिस एग्रीमेंट ऑन क्लाइमेट चेंज : वन येअर लेटर, हाउ इस अफ्रीका फेयरिंग ? अफ्रीका रिन्यूअल (मई, जुलाई 2017) http://www-un-org/africarenewal/ magazine/ may-july-2017/paris-agreement-climate-change-one-year-later-how-africa-faring. 10/6/2017 को प्राप्त किया।

8. साई, अ. (2016), अफ्रीका : फिनान्सिंग एडेप्टेशन एंड मिटिगेशन इन द वर्ल्डश्स मोस्ट वल्नरेबल रीजन। https://www-brookings-edu/wpcontent/uploads/2016/08/global_20160818_cop21_africa pdf. 15/6/2017 को प्राप्त किया।

****

चिकित्सकीय पद्धति में आचार्य चाणक्य के नीतिगत विधान

देवदास साकेत *

प्रस्तावना – चिकित्सा नीति की अगर हम बाते करते हैं तो सबसे पहले यह पद्धति को राज्य के आधीन होना चाहिए। इस चिकित्सा पद्धति का औद्योगीकरण किया जा रहा है। उससे नैतिक मूल्यों का छूटना स्वाभाविक है, क्योंकि खर्च करने वाला व्यक्ति वसूलना चाहता है। वह क्यों? किसी के जीवन पद्धति के बारे में सोचे। जब हम भारतीय नीतिशास्त्र की बात करते हैं तो हमें लगता है कि अर्थ साधन है साध्य नहीं। अर्थ के अभाव में किसी भी व्यक्ति को उसके जीवन के मूल्यों को खत्म नहीं किया जाना चाहिए। जब नैतिक मूल्यों की बात आती है। वहाँ पर प्रत्येक व्यक्ति आपने जीवन के साथ–साथ दूसरों के जीवन मूल्यों के बारे में सोचना प्रारम्भ करता है। आज किसी भी चिकित्सक के पास जाने के बाद लगता है कि वह एक छोटे से मर्ज की कम पैसे में इलाज होने की दशा में वह बाजारीकरण के पैदा हुई कम्पनियों के द्वारा प्राप्त होने वाले, आधुनिक (भौतिकवादी) सुखों और पैकेजों के पीछे ये चिकित्सक उस गरीब मजदूर की अह्मियत को नहीं समझना चाहता। क्योंकि अगर उस गरीब को पाँच–दस रूपयें की दवा से आराम मिलता है। उस चिकित्सक को पचॉस रूपये की दवा अपने स्वार्थो और कमीशन के लिए न जाने कितनी अनावश्यक दवाईयाँ लिखता है। यहाँ पर उस चिकित्सक की मानवीयता पर प्रश्न चिन्ह खड़ा होता है कि उसकी जिन्दगी बचेगी। या वह व्यक्ति मरेगा? इसकी चिन्ता इस चिकित्सक को नहीं है जबकि कहा जाता है कि ईश्वर के बाद दूसरा रूप चिकित्सक और वैद्य का होता है। इन्हीं आशा और विश्वास के साथ व्यक्ति की जीवन और मृत्यु के बीच उसकी साँसे चलती रहीं है। ईश्वर ही इस जगत् का नियंता है। उसके आगे सब कुछ नाश्वर प्रतीत होता है। मनुष्य अर्थ के पीछे अपनों से दूर होता जा रहा है। व्यक्ति की सोच पर भौतिक जगत् हटती जा रही हैं। आज की चिकित्सा पद्धति में नैतिक मूल्यों का अभाव होता जा रहा है। कहीं–न–कहीं उसमें 'अहं' 'मै' 'मेरा' जैसा विचार तो कहीं प्रतिपादित नहीं हो रहे हैं। जब व्यक्ति में ऐसे विचार आते हैं। तब वह दूसरों के बारे में सोचना या उसकें जीवन की दशा और दिशा को सुधारना सब भूल जाता है ? ऐसे विचारों का आज के मानवीय मूल्यों में बहुत ही बुरा प्रभाव दिखाई दे रहा है। इसी कारण उस व्यक्ति के मन में विद्यमान भ्रान्तियाँ मूल्यों को नहीं पहचान पा रही है। इससे छुटकारा पाने के लिए अपने आपकों यह समझना होगा, कि 'तुम्हारा कल्याण होय तुम भी श्रेष्ठ हो। 'मै' की जगह में 'आपय जैसा भाव होना चाहिए। जब ऐसे भाव मनुष्य में विकसित होते है। तब वह निर्जरा, निरोग इत्यादि सुखों की शान्ति को प्राप्त करता है।

अस्मिन् शास्त्रे पञ्चमहाभूतशरीरिसमवाय: पुरूष इत्युच्यते। तस्मिन् क्रिया, सोऽधिष्ठानम्: कस्मात् ? लोकस्य द्वैविध्यात्। लोको हि द्विविध:–स्थावरो जङ्गमश्च। द्विविधात्मक एषाग्नेय: सौम्यश्च।

द्विविधात्मक एषाग्नेय: सौम्यश्च, तद्भूयस्त्वात्; पञ्चात्मको वा। तत्र चतुर्विधो भूतग्राम:–संस्वेदजजरा युजाण्डजोद्भिज्जसंज्ञ:। तत्र पुरूष: प्रधानं, तस्योपकरणमन्यत्। तस्मात् पुरूषोऽधिष्ठानम्।।[1]

पृथ्वी, जल, वायु, तेज और आकाश इन पञ्चमहाभूतों के द्वारा शरीर निर्मित है। इनकी शरीरी आत्मा के संयोग को ही पुरूष कहा गया है। चिकित्साशास्त्र में इन्हीं पुरूषों की चिकित्सा की जाने की बात कही गयी है। इन्हीं कर्मफल और स्वास्थ्य के साथ अनेक रोगों का अधिष्ठान है क्योंकि इस पृथ्वी पर दो रूप पाये जाते है। पहला स्थावर दूसरा जंगम। इन्हीं के आधार पर दो उपभेद भी पाये जाते हैं। अग्नि, जल तत्व की अधिकता होने से आग्नेन की सौम्यता का बोध होने की क्रिया पंच महाभूतों से निर्मित होती है। इसे ही सृष्टि का पंचात्मिक कहा गया है। इनमें मानव के सम्पूर्ण अंगों को लेकर स्वेदज, अण्डज, जरायुज, और उद्भिज्ज इस प्रकार के चार मूलक बताये गये हैं। इसीलिए यहाँ पर पुरूष प्रधान है। किन्तु इसके साधन होने के कारण पुरूष को अधिष्ठान माना गया है। जिससें मानवीय चेतना के कार्य की उपलब्धि में नैतिकता अधिक महत्वपूर्ण हैं। जहाँ आचार्य चाणक्य ने मानव को स्व पर जितनी चिन्ता होती है। उसी प्रकार परत: पर भी चिन्ता और भाव होना चाहिए। यहाँ पर चिकित्सक द्वारा पैसे की लालच में न जाने कितने कार्य किये जाते हैं। वेतन से अधिक प्राप्त करने की लालसा से उस डॉक्टर को जॉन बचाना उद्देश्य नहीं है। सिर्फ पैसा प्राप्त करना उद्देश्य मात्र रह गया है। इसी कारण आचार्य चाणक्य ने दण्ड विधान की उपयोगिता को सिद्ध करते हैं। किसी व्यक्ति को मारने और धन लूटने के उद्देश्य से चिकित्सा में लापरवाही किये गये व्यक्ति को दण्ड दिया जाना चाहिए।

सर्पदष्टस्य भस्मना पूर्णा प्रचलाकभस्त्रा मृगाणामन्तर्धानम्।[2]

आचार्य चाणक्य कहते है कि यदि सर्प के द्वारा कटे हुए जन्तुओं की राख को मोरपेंच के बने हुए थैले में रख कर उसी थैली को जंगली जन्तुओं में बाध देने वहाँ से वह जानवर अन्तर्धान हो जाता है। यह सबित होता हैं कि प्राचीन काल की वैद्य पद्धति में मंत्रों के उच्चार के साथ औषधि मरीज को खिलाई जाती थी। जिससे उस मरीज का जीवन स्वास्थ्य रह सके।

कैडर्यपूतितिलतैलमुन्मादहरं नस्त:कर्म, प्रियङ्गनक्तमालयोग: कुष्ठहर:। कुष्ठलोध्रयोग: पाकशोषघ्न:, कट्फलद्रवन्तीविलङ्गचूर्णं नस्त:कर्म शिरोरोगहरम्।।[3]

आचार्य चाणक्य ने मानवीय जीवन के आधार को चिकित्सा की दृष्टि से औषधियों का समन्वय करते हुए उन्माद को शांत करने की विधि का भी निरूपण किया है। जिसमें कायफल (कैडर्य) का कांटेदार कंजरूआ (पूति) के साथ तिल इस प्रकार की औषधि का मिश्रण करके नाक में डालने से उन्माद शान्त होता है। मानव की अहंकार और अनैतिकता की स्थिति में

* शोधार्थी (दर्शनशास्त्र) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

सोचने के लिए सही रास्ता का चुनाव करता हैं। इससे मानवीय मूल्यों को वह परख करना प्रारम्भ कर देता है। कुष्ट रोग से छुटकारा पाने के लिए आचार्य चाणक्य ने मेंहदी या कांगनी जिसे (प्रियंगु) कहते हैं। उसके साथ–साथ करंजी (नक्तमाल) का उपयोग करने के साथ कुष्टरोग और खाज को दूर किया जाता है। कूट तथा लोध से निर्मित किये हुये काढ़ा से पाकरोग के साथ क्षयरोग को भी नष्ट कर देता है। यहाँ तक कि इन औषधि के प्रयोग से बाल आदि का पकना बन्द हो जाता है। आचार्य चाणक्य का मानना है कि यदि औषधि का सही प्रयोग नहीं हुआ। व्यक्ति की मृत्यु हो जायेगी। इससे उस वैद्य को दण्ड का प्रावधान किया गया है। ताकि दूसरे व्यक्ति को ऐसी औषधि न दे। जिसमें मृत्यु को झेलना पडे।

शतं या भेषजानि ते सहस्त्रं सगतानि च।
श्रेष्ठमास्त्राव–भेषजं वनिष्ठं रोगनाशनम्।।[4]

सायणाचार्य कहते हैं कि सैकड़ों चिकित्सकों के द्वारा शत हास्य भिषज: अनेकों प्रकार की वनों में पाई जाने वाली औषधियाँ विद्यमान है। किन्तु इनके द्वारा जो करना चाहिए। वह तो सिर्फ मूल मंत्रों के द्वारा ही रक्षा कवच के रूप में कर पाना सम्भव है। इस हेतु कहा गया है कि रक्षा मंत्र और टोने के रूप में एक सूत्र में बाधने के बाद ही इस औषधि के ज्ञान को और औषधि के असर को पहचाना जा सकता है। जिसका मूल्य ही आचार परम्परा के अथर्ववेद में भरे पड़े हैं। यहाँ तक कि वनौषधियों का कमाल ऐसा था जैसा केवल मंत्र और उपचार का किया जाना सम्भावित होता जा रहा है। जिसमें चिकित्साशास्त्रों में औषधियों का अतिशय महत्व पहले भी था और आज भी है। बिना औषधि के कोई भी दवा नहीं बनाई जा सकती है। उसके प्राचीन मूल स्त्रोतों को कैसे भूल रहे हैं। ये चिकित्सक जिसके लिए इन्हें उन औषधियों को मूल्य (अर्थ) के रूप में प्रयोग कर रहे हैं। जबकि इन औषधियों को मूल्य के रूप में नहीं नैतिक मूल्य (आचरण) के रूप में स्वीकार करना चाहिए। जिससे मानव जीवन के सद्कर्म में लगाया जाना चाहिए। लौह, भष्म का प्रयोग सद्कर्म में जीवन बचाने के लिए करना चाहिए। न कि किसी की हत्या और दुराचार के लिए प्रयोग किया जाना चाहिए। प्रकृति के अनुकूल ही मनुष्य को चलना चाहिए। जिस प्रकार से व्यभचार (सेक्स) करने की एक उम्र होती है। उसको उसी उम्र के अनुकूल तक ही करने की बात शास्त्रों में कही गई है। न कि इन औषधियों और चिकित्सकों के माध्यम से प्रकृति के दोयम दर्जे का रूप देकर अनियंत्रित अर्थ की लालच में भोग करने की बात करें। किन्तु आधुनिक युगीन चिकित्सक अर्थ प्राप्ति के लिए इन अमूल्य औषधियों का प्रयोग अनिष्ठकारक जगहों पर प्रयोग कर रहा है। अनिष्ठकारक व्यभिचार के लिए करोड़ों की औषधियाँ व्यभिचारी को दुराचार के लिए देता जा रहा है। इसके विपरीत किसी निर्धन या गरीब को दो पैसे की औषधि को जॉन सलामती के लिए देने को तैयार नहीं है। यह मानवीय मूल्यों के क्षरण का सबसे बड़ा उदाहरण है। यहाँ तक कि जिस जाँच की जरूरत नहीं हैं। उसकों भी डॉक्टर पैसों की लालच के लिए लिख रहा है। एक जरूरत मंद गर्भवती स्त्री के लिए एक सोनोग्राफी के लिए न जाने कितने कार्ड और कितनी बातों का शिकार होना पड़ता है। यह कौन सा मूल्य है ? व्यभिचारियों के लिए किसी भी कार्ड की जरूरत नहीं डॉक्टर को अर्थ चाहिए। सब कुछ ठीक है। सारी जाँच जो कानूनी है वह हो जायेगी। जो सद्चरित्र वाला व्यक्ति है उसके पास पैसे नहीं है उसकी कुछ भी जाँच नहीं होगी। चाहे वह जिन्दा रहे या मर जाये।

वैदिक ग्रन्थों में भी औषधियों के मूल मंत्र को बताया गया हैं। जो प्राचीन काल से चली आ रही हैं। भैषज्यानि–व्याधियों के द्वारा रक्षसों से सुरक्षित रहने का मंत्र बताया गया है। दूसरा, आयुष्यानि–दीर्घायुष्य इस मन्तव्य के साथ प्रत्येक प्राणी को स्वास्थ्य रहने की मनोकामना की गई हैं। तृतीय आभिचारिकारिण के साथ–साथ कृत्या–प्रतिहारणानि–पिशाचों आदि के द्वारा शत्रुओं से सुरक्षा करने का उपाय भी मंत्र के माध्यम से बताया गया है। चतुर्थ स्त्री–कर्माणि और स्त्रियों से सम्बन्धित सुखद कामना के लिए मंत्रों से उपचार की विधि हैं। पंचम् सौमन–स्यानि–एकता का अनेक समितियों में एकता को प्राप्त करने का मंत्र भी बताया गया है। छठा राजा के कार्य और कर्मो को करने का मंत्र का भी उद्घोष किया गया है। सातवाँ ब्राह्मण के हित में शाप और प्रार्थना के लिए मंत्रों का नियम है। अष्ठम् पौष्टिकानि–धन सम्पदा आदि भी प्राप्त करने का भी मंत्र हैं। नवम् प्रायश्चितानि के साथ पाप करने के बाद भ्रष्टता के निवारण का भी मंत्र किया गया है। दसवां संसार के उत्पत्ति और ईश्वर की कल्पना का मंत्र। ग्यारहवाँ यज्ञ क्रियासम्बन्धी और सामान्य जन को सुरक्षित रहने का भी मंत्रोंचार किया गया है।[5]

ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यानामन्यतममन्वयवय शीलशौर्य शौचाचारविनय शक्तिबलमेधाधृतिस्मृतिमतिप्रतिपत्ति– युक्तं तनु जिह्वौष्ठदन्ता ग्रमृजुवक्त्राक्षिनासं प्रसन्नचित्तावाक्चेष्टं क्लेशसहभिषक् शिष्य मुपनयेत्। अतो विपरीतगुणं नोपनयेत्।।[6]

सुश्रुत संहिता में कहा गया है कि ब्रह्मण, क्षत्रिय, वैश्य इनमे जो योग्यता रखता हो उसे ही चिकित्सक होना चाहिए। उसके गुणों को परख करने के लिए आयु को भी ध्यान में रखा गया है। योग्यता से भरपूर, सुशील, शक्तिशाली, आत्मिक पवित्र, चरित्रवान, विनम्रता का परिचायक, कार्य करने में उत्साह दिखाने वाला, मेधावी, पराक्रमी, स्मृति तेज बुद्धिवाला मेधा, धृति आदि इस प्रकार के गुणों का होना चाहिए। शारीरिक रूप से सक्षम हो जिससे कार्य में बाधा न हो। यहाँ तक की मेडिकल परीक्षण में स्वस्थ्य परीक्षण किया जाता है कि वह स्वस्थ्य है कि नहीं। जिसमें जिह्वा, ओठ, दाँत अग्रभाव सुचारू रूप से पतले हो। आँख, कान नाक सीधे हो। जिसके मन, और वाणी की सुध्यता हो, कष्ट सहन करने की शक्ति हो। इस प्रकार के विद्यार्थी को प्राध्यापक (आचार्य) वैद्य पढ़ावे। जिन लोगों और समुदायों में ऐसे गुण न हो उनको नहीं पढ़ाना चाहिए। ऐसा विचार सुश्रुत संहिता में कहा गया है। किन्तु वर्तमान समय में अनेकों ऐसे उदाहरण आते हैं कि अन्य वर्ग में भी इस प्रकार के गुण होने पर उनके ज्ञान को विकसित किया जाना चाहिए। प्राचीन काल में गुण की पूजा होती थी। धन के बल पर किसी को ज्ञान नहीं दिया जाता था। न ही उसे चिकित्सक वैद्य बनाया जाता था। किन्तु वर्तमान में चिकित्सकों ने धन के बल पर चिकित्सक बना दिया। योग्यता न होने पर भी पैसे भरकर या पूँजीपति, मंत्री जी या कुण्डे का पुत्र है। उसकों चयनित करना है। ऐसी दशा में योग्य विद्यार्थी के साथ होने वाले अन्याय को कौन सहन करेगा? इस स्थिति में व्यक्ति कौन से मूल्यों की बात करेगा। वह तो सिर्फ आर्थिक मूल्यों का प्राश्रय दे रहा है। मानवीय मूल्य तो उसके सामने निर्थक है। इस प्रकार की कल्पना प्राचीन ऋषि परम्परा में नहीं थी। छल, कपट पहले भी होता था। किन्तु वर्तमान समय के व्यापम घोटाले जैसा नहीं। जहाँ कमीशन (घोंस) के दम पर चिकित्सक पैसे देकर बनाये जाये। जिसे किसी भी औषधि का न तो प्रयोग ही आता हो और न ही उसकी विधि से परिचित होता हों। ऐसे ही विद्यार्थी पूँजी के दम पर प्राध्यापक पर भारी पड़ते हैं।

नागर्जुन ने अलयविज्ञान की व्याख्या बौद्धिक रूप से किया है कि परमार्थता और परमार्थतत्व दोनों में गतिविहीन क्रिया के रूप में संचालित होते हैं। जिसका मूल मन्तव्य मानवीय आवश्यकताओं से अधिक मानवीयता को समझने से है। जिसका विस्तार आगे चलकर योगाचार विज्ञान में सार्वभौम

चेतना के रूप में मनुष्य के आन्तरिक चेतना से सम्बन्धित माना गया है। जिसका पूर्णत: स्वरूप मानवीयता के रूप में बढ़ने वाला माना गया है। इसका सबसे बड़ा कारण स्वयं के अस्तित्व में मर्यादित होना है। इसी हेतु कहा गया कि अलय विज्ञान का अन्तरूपों में क्या सम्बन्ध हैं। जिसकी विवेचना में 'आलयविज्ञान' कोई अवस्था न होकर एक प्रक्रिया है। यह धार्मिकता या आध्यात्मिकता है, विज्ञान स्वयं पदार्थ का रूप धारण करता है या अपने को पदार्थ जगत् में अभिव्यक्त करता है। उच्चतम श्रेणी का मार्ग, जिसके द्वारा विचार परमार्थतत्व का चिन्तन व मनन कर सकता है, इसे चेतना, चित्ताशक्ति अथवा विज्ञान के रूप में मानने से ही है।'[7]

अलौकिकत्वाददृष्टार्थत्वादप्रवृत्तानां यज्ञादीनां शास्त्रात्प्रवर्तनम्, लौकिक-त्वदृष्टार्थत्वाच्च प्रवृत्तोभ्यि मांसभक्षणादिभ्य: शास्त्रादेव निवारणं धर्म:।।[8]

धर्म के स्वरूप और शास्त्र की मर्यादाओं को ध्यान में रखते हुए विद्या अध्ययन का अधिकार प्रदान है। जिससे यह अलौकिक के साथ-साथ अदृष्टार्थ रूपों में परोक्ष फल प्रदान करने वाले यज्ञ में सम्मिलित न होने वाले व्यक्तियों को शास्त्रों द्वारा लौकिक दृष्टि से प्रत्यक्ष रूपों में फल प्रदान करने वाली क्रिया के अतिरिक्त माँस-मदिरा में प्रवृत्ति लोगों का शास्त्र के ज्ञान को प्राप्त करने की निवृत्ति का परिणाम ही धर्म पालन का अधिकार देता है। इसके अतिरिक्त को नहीं। जिसमें मानवीय संवेदना और मूल्य नहीं है। उसे ऐसे शास्त्रों के ज्ञान का औचित्य हैं। वर्तमान समय में जिस प्रकार साबुन का प्रयोग हो रहा है। उसी प्रकार प्राचीन काल में मिट्टी का उपयोग होता था। आजकल देहातों में नारियाँ अपने सिर को चिकनी मिट्टी से या बेसन से धोती है। मिट्टी पवित्र स्थान से ली जाती थी। इसके सम्बन्ध में महर्षि वल्मीकि कहते हैं कि चूहों के बिल या जल के अन्दर पाई जाने वाली मिट्टी उपयुक्त और स्वच्छ होती है। इसके सम्बन्ध और मार्ग पर पेड़ की जड़, मन्दिर के पास की। किसी व्यक्ति के उपयोग करने के बाद अवशेष मिट्टी का उपयोग नहीं करना चाहिए।[9] आधुनिक सन्दर्भ में मिट्टी का पूर्णत: प्रयोग बंद सा हो गया है। आधुनिकता ने पैसों की भरमार कर दिया। किन्तु आज भी इन मिट्टियों का प्रयोग खुजली, खाज या अन्य बीमारी होने पर ग्रामीण इलाकों में इसका प्रयोग किया जाता है। क्योंकि वहाँ आर्थिक रूप से कमजोर होने के कारण महँगे साबून नहीं खरीद पाते हैं।

**पृथिव्यम्भस्तमोरूपं रक्तगन्धं तिन्मय:।
तस्माद्रक्तस्य गन्धेन मूर्च्छन्ति भुवि मानव:। द्रव्यस्वभाव इत्येके दृष्ट्वा यदभिमुह्यति।।**[10]

रक्त मुर्च्छा के लक्षण को सुश्रुत संहिता में बताया गया है। पृथ्वी और जल इन दोनों में तमोगुण की प्रधानता रहती है। रक्त की गन्ध से ही पृथ्वी और जल के सद्गुणों से युक्त होने के कारण तमोगुण की युक्ति प्राप्त होती है। इससे यह साबित होता है कि कुछ लोग तो इसके गन्ध से ही मुच्छित हो जाते हैं। कुछ रक्त को देखकर मुच्छित हो जाते है। इसके अतिरिक्त कुछ आचार्य रक्त को स्वभाविक गुणा के रूप में व्यक्त करते हैं, कि किसी व्यक्ति को देखने मात्र से भी व्यक्ति डर जाता है। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति में सहन शक्ति अलग-अलग रूपों में पाई जाती है।

निष्कर्षत: आचार्य चाणक्य की नीति में यह देखा जाता है कि दण्ड व्यवस्था के आधार पर व्यवहार का ज्ञान प्राप्त होता है। इसी हेतु अर्थ प्राप्त करने की विधि व्यवहार मूलक है।[11] किन्तु अति सर्वत्र वर्जते का नारा गीता देती है। जहाँ अति होती है। वहाँ विनाश भी होता है। अधिक धन गृह क्लेश को बढ़ावा देता है। इससे यह साबित होता है कि आचार्य चाणक्य जैसा आज तक कोई नीतिकार नहीं हुआ। जिसने राष्ट्र के लिए इतना समर्पण दिखाया हो। उन्होंने एक सुचिता पूर्ण राज्य और राजा का निर्माण किया। किन्तु उन्होंने न ही कमीशन लिए और न ही दान लिये। निस्वार्थ भाव से राज्य का संचालक तैयार करते हैं। इससे मूल्य का ज्ञान प्रत्येक संचालक और प्रजा को करना चाहिए। परहित सुख की कामना स्व हित मूलक होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कविराज डॉ. अम्बिकादत्तशास्त्री, *सुश्रुतसंहिता, भाग-1,* चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 2016, पृष्ठ 9
2. वाचस्पति गैरोला, *कौटिलीय अर्थशास्त्रम्,* चौखम्भा विद्या भवन वारणसी, 2013, पृष्ठ, 753
3. वाचस्पति गैरोला, *कौटिलीय अर्थशास्त्रम्,* चौखम्भा विद्या भवन वारणसी, 2013, पृष्ठ, 761
4. *अथर्ववेद* 6, 45, 2 सूक्त 2,9,3.
5. एस.एन. दासगुप्त, *भारतीय दर्शन का इतिहास,* भाग-2, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर,-4, 1989, पृष्ठ 252
6. कविराज डॉ. अम्बिकादत्तशास्त्री, *सुश्रुतसंहिता, भाग-1,* चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 2016, पृष्ठ 13
7. डॉ. राधाकृष्णन, *भारतीय दर्शन भाग-1, (वैदिक युग से बौद्ध काल तक)* राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली, 2008, पृष्ठ 545
8. डॉ. पारसनाथ द्विवेदी, *कामसूत्रम्,* चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वारणसी, 2014, पृष्ठ 22
9. डॉ. पाण्डुरंग वामन काणे, *धर्मशास्त्र का इतिहास,* उत्तार प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 1992, पृष्ठ 367
10. कविराज डॉ. अम्बिकादत्तशास्त्री, *सुश्रुतसंहिता, भाग-2,* चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 2016, पृष्ठ 404
11. वाचस्पति गैरोला, *कौटिलीय अर्थशास्त्रम्,* चौखम्बा विद्याभवन, वारणसी, 1984, पृष्ठ 447

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

जागनी अभियान और सामाजिक चेतना का दार्शनिक चिन्तन

डॉ. मौसमी सोलंकी *

शोध सारांश – भारतीय दार्शनिक परम्पराओं के आधार पर मानवीय जीवन की कलाओं के परिणाम स्वरूप सामाजिक जीवन की कलाओं का वर्णन किया गया है। सामाजिक और वैचारिक विद्वताओं का वर्णन किया जाता है। प्रणामी धर्म और सम्प्रदाय के जीवन में वैचारिक, धार्मिक, सामाजिक सांस्कृतिक स्वरूपों का वर्णन किया जाता है। जगनी अभियान और सामाजिक चेतना में प्रणामी सम्प्रदाय में मूल्यों की वैचारिक धार्मिका का परिणाम बताया है। जिनकी समस्याओं का राजनैतिक और सामाजिक जीवन की अनेक घटनाओं का वर्णन किया गया है। सामाजिक समस्याओं में अराजक स्थिति के पैदा होने से मानवीय जीवन में अविशमर्णीय चिन्ता प्रत्येक प्राणी को होती है। जहाँ वैचारिक मतभेद के दौरान अनेक समस्याओं का समाज में होना भी संकट की स्थिति है। समाज में उन्नति और प्रसार के लिए महामति प्राणनाथ का आगमन हुआ। सामाजिक व्यवस्था को कायम रखने के लिए अपनी समन्वयवादी प्रवृत्तियों और प्रेरणाओं के लिए उन्होंने सामाजिक चेतना के द्धारा भारत की आत्मिक भावनाओं और धार्मिक एकात्मकता की स्थापना किये। महामति प्राणनाथ की वाणी कालजयी दूरदर्शी थी। इनके सामाजिक चेतना को लेकर इतिहास की काली छाया समाज में स्वच्छ दिखाई देती है। इस के युगान्तरकारी परिवर्तन से उनका व्यक्तित्व प्रत्येक व्यक्ति के लिए स्पष्ट दिखाई देता है। धर्म के साथ-साथ अध्यात्मिक चेतना के औचित्य को आत्मा को निर्बन्ध रूप में समझने का प्रयास किया गया है। जिससे यह सिद्ध होता है कि भारतीय परम्पराऐं और स्वायत्तव से समन्वय की विचारधारा का प्रदुर्भाव हुआ है। इस हेतु महामति प्राणनाथ ने वैचारिक मतभेद को दूर करने का प्रयास किया है। महामति के परमार्थिक जीवन के आलोक में लोक साधन की प्रविधि का एक उद्घोस मंत्र के रूप में होता है। जहाँ साधना, पद्धति के माध्यम से आत्मिक संवाद, के साथ शास्त्रों के साक्ष्य और विभिन्न धर्मों के बीच होने वाले वैचारिक मतभेद को जान लिया था। इसीकारण अपने अराध्य के लक्ष्य तक जाने के लिए आत्म तत्व के चिन्तन परम्पराओं का वर्णन भी करते हैं। जिनके बीच होने वाले कुल, शील और शास्त्र का अहंकार छोडकर परमात्मा के प्रति सम्पूर्ण समर्पण का भाव दिखाने से प्रत्येक व्यक्ति की आत्मिक शक्ति का संचार होने लगता है।

प्रविधि – जागनी अभियान और सामाजिक चेतना का दार्शनिक चिन्तन नामक शोध पत्र में द्धितीय सामाग्री संकलन के द्धारा तैयार किया गया है। इसके साथ-साथ महामति प्राणनाथ के मूल साहित्य से अध्ययन के मूल तथ्यों तक पहुँचने में सहायता मिली है। इन तथ्यों के विश्लेषण में विद्धानों का मार्गदर्शन के पत्र-पत्रिकाओं से भी संग्रहण किया गया है। जिनकी मौलिकता का परिणाम प्रणामी धर्म समन्वय की पुस्तकों को अत्यधिक शोध में उपयोगी सिद्ध हुई हैं।

शोध के उद्देश्य –
- जागनी अभिया से आध्यात्मिक तत्वों का अध्ययन करना।
- दार्शनिक चिन्तन प्रणाली का अध्ययन करना।
- समाज में धर्म के प्रति वैचारिक मतभेद का अध्ययन करना।
- प्रणामी सम्प्रदाय में सामाजिक गतिशीलता के तात्पर्य का अध्ययन करना।
- सामाजिक तथ्यों और मूल्यों का अध्ययन करना।

समस्याऐं –
- सामाजिक प्रारूप में होने वाले अनैतिक कार्यो की समस्या आज अत्यधिक विद्यमान है। जिसके प्रतिरूप में मानवीय मूल्यों का भी क्षरण हो रहा है।
- मूल्यों का संकट से जीवन में प्रभाव की समस्या।
- आधुनिक सन्दर्भ में मानवीय मूल्यों का संकट की समस्या।
- प्रणामी सम्प्रदाय के तत्तव चिन्तन को समाज में प्रसारित करने की समस्या।

समाधान –

जो लो न कादूँ विकार, तो लो क्यों करके जगाय।
जागे बिन इन रास को, किन निज सुख लियो न जाय ।।1

प्रारम्भिक कठिनाइयों के साथ-साथ महामति प्राणनाथ जैसे संतों ने अप्रतिम लोक साधना का मार्ग प्रत्येक प्राणी को दिखाया। ये ऐसे मनीषी विद्धान है जिनके जीवन की कलाओं का कल्याण और मार्ग की दिशा को दिखाने में औचित्यपूर्ण मूल्यों की खोज की है। व तात्कालिक लाभ या समर्थन नहीं करते है। वह तो कहते हैं कि सभी के सहयोग से होने वाले विद्धतापूर्ण सापेक्षिक करूण रस की भाँति मानवीय जीवन की साहभागिता प्रदान करते हैं। यही आकांक्षा मानवीय जीवन की आधार भी बनी रही। इससे भारतीय समाज में होने वाले वैचारिक मतभेद को दूर करने में उनकी अह्म भूमिका दिखाई देती है। जिससे सुन्दर समाज का निर्माण होता है। समाज को 'सुन्दर साथ' की संज्ञा प्रदान भी प्रदान की गई है। जहाँ जागनी का अभिनव मन्त्र प्रदान किया गया है। इससे महत् कार्य की आवश्यकता का समर्पण जीवात्माओं संस्कार से मुक्त करना है। जिससे सम्पूर्ण संसार में भय, क्रोध, संशय की ज्वाला भटक रही है। जहाँ मानवीय जीवन में जय-पराजय से जुड़े अनेक विकारों अहंकार नामक बीज पैदा हो गया है।

ए जोत होसी जागनी, ए नूर बिना हिसाब।

*पोस्ट डॉक्टरल फैलो, भारतीय दार्शनिक अनुसंधान परिषद् नई दिल्ली, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

लोक चौदे पसरसी, तब उड़ जासी ए ख्वाब ।।2

प्रणामी सम्प्रदाय में मानवीय जीवन की निष्ठावान सेवक और गुरू चरणों के प्रति समर्पण में अधिक जोर दिया गया है। जिसके स्वरूपों की व्याख्या में स्वामी लालदास मिलते अपने विचार अभिव्यक्त करते हैं। जहाँ मानवीय जीवन की समर्पित आत्मा का औचित्य भी सदचारी और साहसी होता गया है। जहाँ मानवीय समाज की करूणा का कष्टपूर्ण 'आनन्द यात्रा' की यात्रा में जागतिक रूपक को महामति प्राणनाथ ने आध्यात्मिक यात्रा करने का अवाह्न किया है। इसके अनेकों जीवन्त उदाहरण मिलते हैं। लोक यात्रा का यह जन अभियान जिसे 'जागनी' को बताया गया है। क्योंकि आत्मा से परमात्मा के शाश्वत सम्बन्धों की महिमा का वखान पाया गया है। जहाँ वैचारिक सम्बन्धों की विचारधारा का महत्वपूर्ण अवलोकन भी सामाजिक विसगतियों का मूल्य बन गया है। जिसके परस्पर सन्धान के साथ ढोनों के अंतरंग सम्बन्ध की बातों को अधिक महत्व दिया गया है। आराध्य-अप्रियतम के साथ होने वाले मिलन का भी प्रसंग दिखाया गया हैं। जहाँ जातीय ढ़ाचे की अभिकल्पनाऐं भी मानवीय जीवन को बढ़ाने में प्रबलता का भाव दिखाती है।

प्रेम सेन्या है अति बड़ी। जब मूल आउथ ले चढ़ी ।।
सो रहे न काहू की पकड़ी। या सो सके न कोई लड़ी ।।3

महामति प्राणनाथ ने मानवीय जीवन की दशा को देखकर भाषा, जाति, वर्ण, धर्म, संस्था, वर्ग, सत्ता और व्यवस्था की ओर विशेष ध्यान दिया है। जिसकी अभिलाषा प्रत्येक मानव प्राणी को होती है। इसके सम्बन्ध में सबने जमकर वैचारिक मतभेद को एक परिष्कृत परिणाम भी दिखाई देता है। जहाँ मानवीय जीवन की कलाओं के परिणाम में सम्पूर्ण प्राणी की रक्षा समाहित है। व्यक्ति को पात्रता और योग्यता का आनन्द तभी सम्भव है। जब वह सद्आचरण की शुद्धि की ओर आगे बढ़े जहाँ वैचारिक परिणाम ही मानवीय जीवन का आधार रहा है। इस प्रयोजन से प्रेम की ज्वाला प्रत्येक अनुयायियों और 'सुन्दर जीवन की सार्थकता के लिए एक साथ' की लम्बी फौज ही खड़ी कर दी। जहाँ परमात्मा के मूल सम्बन्ध को जताने वाला 'आत्म परिच' मानवीय मूल्यों की तलास करने लगता है।

प्रेम पियाजी के आउथ। प्रेम स्यामाजी के अंग सुथ।
ब्रह्म सृष्टि की एही विथ। ए दूजे काहू न दिथ ।।4

इस तारतम्य में जागनी अभियान एक 'सुन्दर साथ' और सफल जीवन की कामना करता है। इनके जोड़ने के मूल आधार को महामति प्राणनाथ ने जीवन की अनेक शैली का वर्णन भी मानवीय जीवन के आधार पर रखा है। जिससे समाज में व्याप्त कुरीतियों और विकृतियों के लिए मानवीय शक्तियों और संस्थाओं अनधिकृत हस्तक्षेप को खत्म कर दिया हे। ऐसी विचारधारा प्रणामी सम्प्रदाय में दिखाई देती है। जिसकी हम कभी भी कल्पना नहीं कर सकते है। जिनके निर्देशों पर ही नहीं बल्कि संस्कृति के एक व्यापक जन-समर्थन को प्रेरित करने का कार्य महामति प्राणानाथ ने किया हैं। जो सामाजिक जीवन की अविरल धारा में सजीविता को ढूढ़ता है। जहाँ सामाजिक बुराईयों का परिणाम ही मानवीय जीवन का आधार रही है। जागनी के प्रेम ही सर्वोत्तम व्यक्ति के साधना का परिणाम रहा है। जहाँ मानवीय जीवन की धारा ने सम्बन्ध को जोड़ने का कार्य किया है। तोड़ने का नहीं इसके प्रिय मिलन ही साध्य।

अब तुम निकसो नींद से, आए पोहोंची सरत।
कौल किया था हक ने, सौ आई कयामत ।।5

महामति प्राणनाथ ने कयामत के मूल रूपों का वर्णन सैमेटिक रूपों में करता है। जहाँ सामाजिक, आर्थिक मूल्यों के सम्बन्धों को एक विचारधारा की भाति जोड़ने का अथक प्रयास किया है। इन्होंने कयामत का वैचारिक अर्थ नश्वर परम्परा बताया है। जहाँ पार्थिव शरीर का एक स्वरूप में आत्मा की दिव्यता का रूप है। जब उसका अज्ञान और अहंकार मिट जाता है। वहाँ मानवीय जीवन के मूल्यों का प्रश्न ही खत्म हो जाता है। इसी कयामत के स्वरूप को इस्लाम में कई जगहों पर वर्णन किया गया है।

अंग दिए बिना आवेस, नाहींप्रेम उपजाए।
आवेस दे करूँ जागनी, लेऊँ अंग में मिलाए ।।6

प्रणामी सम्प्रदाय में महामति प्राथनाथ की वाणी में, जागनी के अनेक प्रसंग से अभिभूत होकर आत्मिय भाव प्रकट करते हैं। जहाँ वैचारिक मतभेद की कामना का मूल रूप भी सबसे अधिक निकट होने की असक्ति का स्वरूप ही महामति प्राणनाथ की जीवन दिशा ने अन्तरंग का प्रभाव छोड़ा है। जहाँ सबसे अधिक निकट होने में आत्मीय सुख और शांति प्राप्त होती है। उस समय वे एक अन्तरंग पुण्यात्मा की जिज्ञासा का ज्ञान प्रत्येक व्यक्ति को होता है। जहाँ सामाजिक जीवन की आधारशिला ही मानवीय जीवन का आधार रही है।

अब दुख आवे तुमको, तहाँ आड़ देऊँ मेरा अंग।
सुख देऊँ भली भॉत सो, ज्यो होय न बीच में भंग ।।7

महामति प्राणनाथ जी कहते हैं कि अब इतना दुख तुम्हारे पास आने के बाद तुम क्यों परेशान हो रहे हों। इतना ही नहीं, और अधिक दु:ख प्राप्त होगा। इसको सहन करने के बाद ही तुम्हें सुख भी प्राप्त होगा जिसको जितना दुख होता है।

निष्कर्ष - निष्कर्षत: महामति प्राणनाथ ने प्रत्येक सम्प्रदाय के जीवन और जगत् की बातों का अनुसरण करते हुए मूल्यांकन करने का प्रयास किया है। उसकों उतना ही सुख भी प्राप्त होता है। इस हेतु मानवीय जीवन की कल्पनाओं का वर्णन भी मानवीय जगत् के वैचारिक समाजस्यता की विचारधारा का परिमार्जन करते हुए करते है। जिससे प्रत्येक प्राणी का कल्याण हो। यही मानवीय जीवन और आदर्श है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आचार्य श्री 108 धर्मदास जी महाराज तथा बाबाजी श्री लक्ष्मीदासजी- श्री 5 नवतनपुरीधाम, जामनगर-2006, कलश हिन्दुस्तानी 21/22
2. आचार्य श्री 108 धर्मदास जी महाराज तथा बाबाजी श्री लक्ष्मीदासजी- श्री 5 नवतनपुरीधाम, जामनगर-2006, कलश हिन्दुस्तानी 23/83
3. आचार्य श्री 108 धर्मदास जी महाराज तथा बाबाजी श्री लक्ष्मीदासजी- श्री 5 नवतनपुरीधाम, जामनगर-2006, परिक्रमा 1/41
4. आचार्य श्री 108 धर्मदास जी महाराज तथा बाबाजी श्री लक्ष्मीदासजी- श्री 5 नवतनपुरीधाम, जामनगर-2006, परिक्रमा 1/40
5. आचार्य श्री 108 धर्मदास जी महाराज तथा बाबाजी श्री लक्ष्मीदासजी- श्री 5 नवतनपुरीधाम, जामनगर-2006, खुलासा 18/1
6. आचार्य श्री 108 धर्मदास जी महाराज तथा बाबाजी श्री लक्ष्मीदासजी- श्री 5 नवतनपुरीधाम, जामनगर-2006, कलश हिन्दुस्तानी 23/37
7. आचार्य श्री 108 धर्मदास जी महाराज तथा बाबाजी श्री लक्ष्मीदासजी- श्री 5 नवतनपुरीधाम, जामनगर-2006, कलश हिन्दुस्तानी 23/29

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

राजस्थान के किसान आंदोलन

डॉ. चित्रा तंवर *

शोध सारांश – किसान त्याग व तपस्या का दूसरा नाम है। वो धरती का सीना चीरकर अन्न उपजाता है, मिट्टी को सोना बनाता है। राजस्थान के किसानों द्वारा जिन आंदोलनों का सूत्रपात किया गया वो राजस्थान के इतिहास में अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं क्योंकि इन आंदोलनों ने आततायी ब्रिट्रिश सरकार, जमींदारों व राजे-रजवाड़ों को कृषिगत नीतियां बदलने के लिये मजबूर कर दिया। राजस्थान के कृषकों की वेदना किसान आंदोलनों के रूप में सामने आयी।

इन सभी आंदोलनों का मूल कारण किसानों पर होने वाले अत्याचार व लगान दर का अधिक होना, बेगार प्रथा माने जाते है। इन किसान आंदोलनों के कर्णधार नेताओं ने तात्कालिक सरकार को इन आंदोलनों के माध्यम से यह बता दिया कि अब उनकी आवाज को अधिक दिनों तक नहीं दबाया जा सकता।

राजस्थान के किसानों द्वारा जिन आन्दोलनों का सूत्रपात किया गया, वह अत्यन्त महत्वपूर्ण माने जाते है। बिजौलिया, बेगूं, बूंदी, सिरोही, अलवर, जयपुर, शेखावाटी, बीकानेर व मारवाड़ आदि के किसानों ने जुल्म के विरूद्ध झण्डा उठाया। इनमें बिजौलिया आन्दोलन सबसे अग्रणी व प्रेरणादायक कहा जा सकता है। देश के अन्य भागों की भांति राजस्थान भी कृषि प्रधान क्षेत्र था जिसमें कृषकों का सीधा संबंध राज्य से या जागीरदारों से रहा था। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के संपर्क में आने के पश्चात् राज्यों व जागीरदारों के व्यवहार में परिवर्तन आने लगा। राजा-महाराजा व सामंत अंग्रेजी छत्र-छाया में विलासी जीवन बिताने लगे। अंग्रेजो का आशीर्वाद प्राप्त करने हेतु राज्य एक निश्चित खिराज (कर) देते थे जिसके बदले में राज्यों ने जागीरदारों से इसी प्रकार का कर लेना प्रारम्भ कर दिया था। जागीरदारों ने कृषकों से स्वयं की इच्छानुसार कर वसूलना प्रारम्भ कर दिया। शनै: शनै: जागीरदारों की यह कर वसूली स्वच्छन्दता व तत्पश्चात् निरंकुशता में परिवर्तित हो गई।

जागीरदारों के खर्चे एवं निरंकुशता बढ़ती गई, कृषकों का आर्थिक भार बढ़ता चला गया। लगान के अतिरिक्त कई प्रकार के कर लिये जाने लगे जिसकी संख्या 100 से अधिक थी जैसे: अखराई, कमठा लाग, कांसा, खरड़ा, खिचड़ी लाग, चूड़ा लाग, पांवणा पावरा, राम-राम लाग एवं हल लाग इत्यादि।

शब्द कुंजी – खिराज, कर, कमठा लाग, पांवणा पावरा, लाग-बाग, बेगार, चैवरी, तलवार बंधाई, बोल्शैविक, बिजौलिया (ऊपरमाला), बन्दोबस्त, बेगूं ,ढोहरी डायरशाही, मारवाड़ हितकारिणी सभा।

प्रस्तावना – बिजौलिया किसान आन्दोलन – बिजौलिया (ऊपरमाला) मेवाड़ का एक प्रथम श्रेणी का जागीरी इलाका था। यहाँ के उमराव् रावजी कहलाते थे। विंध्याचल के ऊंचे पठार पर बसा लगभग 259 वर्ग किलोमीटर का 83 गांवो का समूह था। यहाँ प्रधानत: धाकड़, भील, कराड़, लुहार, सुथार, सिलावट, राव, चारण, राजपूत, वैश्य, ब्राहाण, साधु, बैरागी तथा मुसलमान बसे हुऐ थे। बिजौलिया के किसान ठिकाने के अत्याचारों, लाग-बाग और बेगार से ग्रस्त अत्यन्त संकटपूर्ण जीवन व्यतीत कर रहे थे। लागें अत्यंत कठोरता व अमानवीय तरीके से वसूल की जाती थी।

बिजौलिया किसान आन्दोलन में 1916 में विजय सिंह पथिक ने प्रवेश किया। विजय सिंह पथिक का वास्तविक नाम भूप सिंह था। वे बुलन्द शहर (उत्तार प्रदेश) के रहने वाले थे। विजय सिंह पथिक ने 1917 में हरियाली अमास्या के दिन ऊपर माल पंच बोर्ड की स्थापना की थी। श्री मन्ना पटले को इसका सरपंच बनाया गया।

बिजौलिया के किसानों से जब प्रथम विश्वयुद्ध का चन्दा वसूला जाने लगा तो किसान और भड़क गए। माणिक्य लाल वर्मा, रामनारायण चौधरी इत्यादि नेता ने बिजौलिया आन्दोलन को स्वरूप विस्तृत स्वरूप प्रदान किया। शासकों एवं किसानों में विरोध एवं दमन का दौर प्रारम्भ हो गया।

1920 ई. में जब राष्ट्रीय कांग्रेस ने असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ किया तो बिजौलिया किसान आन्दोलन को इससे प्रोत्साहन मिला। सितम्बर 1920 के कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन में श्री विजय सिंह पथिक, साधुसीताराम दास, रामनारायण चौधरी, माणिक्य लाल वर्मा, किंकरजी एवं कई किसान नेता बिजौलिया सत्याग्रह के संबंध में महात्मा गांधी से मिले। भारत सरकार के राजपूताना स्थित एजेण्ट हॉलैण्ड 4 फरवरी, 1922 को बिजौलिया आए थे।

ब्रिटिश सरकार ने आन्दोलन को समाप्त करने के लिए एक उच्चस्तरीय सीमिति गठित की जिसके अध्यक्ष एजेन्ट टू गवर्नर जनरल राजपूताना मि. राबर्ट हालेण्ड थे। इस समिति द्वारा ठिकानेदार तथा किसानों में समझौता करवाया गया जिसे जून 1922 में लागू कर दिया गया। (इसमें 84 मे से 35 लाग माफ कर दी गई।) 1927 में बिजौलिया किसान आन्दोलन के मुख्य नेता माणिक्य लाल वर्मा बने। जनवरी 1927 में मेवाड़ के बन्दोबस्त अधिकारी श्री ट्रेन्च बिजौलिया आए थे।

* संविदा व्याख्याता, जगद्गुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.) भारत

अक्षय तृतीयासन् 1931 को प्रात: 6 बजे चार हजार किसानों ने अपनी इस्तीकाशुदा जमीन पर हल चलाना आरम्भ किया। राजस्थान सेवा संघ द्वारा प्रकाशित राजस्थान केसरी तथा नवीन राजस्थान जैसे समाचार पत्रों में बिजौलिया किसान आन्दोलन के समर्थन में क्रान्तिकारी लेख छापे। बिजौलिया किसान आन्दोलन 1941 ई. में मेवाड़ के प्रधानमंत्री टी. राधवाचार्य तथा ब्रिटिश रेजीडेन्ट विल्किन्स की मध्यस्थता से किसानों एवं शासकों के मध्य हुए समझौतो द्वारा 'जय हिन्द' 'वन्दे मातरम' के उद्बोधन के साथ समाप्त हुआ।

बेगूं किसान आन्दोलन – बेगूं किसान आन्दोलन 1921 में शुरू हुआ। बेगूं वर्तमान चित्तौड़गढ़ जिले में स्थित है। जब बेगूं के किसान मेनाल नामक स्थान पर एकत्र हुए और निश्चय किया कि बेगूं मे भी लाग-बाग, बैठ-बेगार और ऊँचे लगान को ठिकाने की मनमर्जी के अनुसार न देकर जायज एवं न्यायपूर्ण बनवाने के लिए संघर्ष किया जायेगा। विजय सिंह पथिक ने इस आन्दोलन का नेतृत्व रामनारायण चौधरी को सौंपा। रामनारायण चौधरी के नेतृत्व में किसानो ने निर्णय किया कि फसल का कूंता नही करवाया जायेगा। लागे व बैगार नही दी जावे और सरकारी कार्यालयों तथा अदालतो का बहिष्कार किया जाए। इस पर सता ने अपना दमन चक्र प्रजा पर चलाना प्रारम्भ कर दिया। और तब दो वर्ष की टकराहट के बाद ठाकुर अनुप सिंह सुलह की लेकिन राजस्थान सेवा संघ और ठाकुर अनुप सिंह के मध्य हुए समझौते को मेवाड़ सरकार ने 'बोल्शैविक' फैसले की संज्ञा दी। इस मामले के सम्बन्ध में सरकार ने बंदोबस्त अधिकारी मि. ट्रेन्च को शिकायतो की जाँच के सिलसिले में बेगूं भेजा। किसानों ने ट्रेन्च कमीशन का बहिष्कार किया। मि. ट्रेन्च ने एक तरफा निर्णय में चन्द मामूली लागतो के अलावा अन्य सभी लागतो एवं बेगार को जायज ठहराया।

13 जुलाई 1923 को किसानों की अहिंसक सभा (गोविन्दपुरा में) पर ट्रैंच द्वारा लाठी चार्ज कर गोलियाँ चलाई गई। सेना की गोली से रूपाजी एवं कृपाजी नामक दो किसान शहीद हो गए। इस अमानवीय कृत्य की सर्वज निन्दा की गई। अब स्वयं पथिक जी ने बेगूं आन्दोलन की बागडोर सम्भाली। तब किसानों का आन्दोलन पूर्णता तक पहुँचा। आन्दोलन के कारण बने दबाव की वजह से बेगूं ठिकाने में व्याप्त मनमानी के राज व ठाकुर शाही के स्थान पर बन्दोबस्त व्यवस्था लागू हुई लगान की दरे निर्धारित की गई, अधिकांश लागे वापिस ले ली गई एवं बेगार प्रथा को समाप्त कर दिया गया।

अलवर किसान आन्दोलन – अलवर रियासत में जंगली सुअरों को अनाज खिलाकर रोधों में पाला जाता था। ये सुअर किसानों की खड़ी फसल बरबाद करते थे। उनको मारने पर राज्य सरकार ने पाबंदी लगा रखी थी। सुअरों की समस्या के निराकरण हेतु किसानों ने 1921 में आन्दोलन शुरू किया। अंतत सरकार समझौता कर किसानों को सुअर मारने की इजाजत दे दी।

नीमूचाणा किसान आन्दोलन – 1923-24 में अलवर के महाराजा जयसिंह ने लगान की दरों को बढ़ा दिया। विरोधस्वरूप 14 मई, 1925 को लगभग 800 किसान अलवर के निमूचाणा गॉव मे एकत्र हुए। उस सभा पर सैनिक कमाण्डर छाजू सिंह ने किसानों पर मशीनगनों से अंधाधुध फायरिंग की जिससे सैकड़ो लोग मारे गए। महात्मा गांधी ने इस आन्दोलन को जलियावाला बाग हत्याकांड से भी वीभत्य बताया और उसे (दोहरी डायरशाही) Dyrism Dauble Distilled की संज्ञा दी। अंतत: सरकार को लगान के बारे में किसानों के समक्ष झुकना पड़ा और एक बार आन्दोलन रूक गया।

मेव किसान आन्दोलन – अलवर व भरतपुर रियासतों के मेवात क्षेत्र के किसानों ने 1932 में डॉ. मोहम्मद अली के नेतृत्व में आन्दोलन शुरू किया। अलवर के मेव किसानों ने लगान देने से इन्कार कर दिया। अलवर साम्प्रदायिक हिंसा का शिकार होने लगा। 1933 में में ब्रिटिश सरकार ने किसानों की कुछ मांगे मानकर आन्दोलन रोका। भरतपुर के मेव किसानों ने भी 1933 में लगान देना बन्द कर दिया। लेकिन यहाँ सरकार ने आन्दोलन को सफल नहीं होने दिया।

बूँदी किसान आन्दोलन – सन् 1926 में पं. नयनूराम शर्मा के नेतृत्व में बून्दी के किसानों ने बेगार लाग बाग और लगान की ऊँची दरों के विरूद्ध आन्दोलन छोड़ा। स्थान-स्थान पर सभाएँ एवं सम्मेलन हुए राज्य ने दमन का सहारा लिया। डाबी में किसानों के सम्मेलन पर पुलिस ने गोली चलबा दी, जिससे नानक जी भील घटना स्थल पर ही शहीद हो गए।

जाट किसान आन्दोलन – मेवाड़ के महाराणा फतेह सिंह के अल्यवस्क काल में 22 जून, 1880 को चित्तौड़गढ़ में रश्मि परगना स्थित मातृकुडियाँ नामक स्थान पर हजारों जाट किसानों ने नई भू-राजस्व व्यवस्था के विरूद्ध एक जबरदस्त प्रदर्शन किया। जुलाई माह के अन्त में यह आन्दोलन समाप्त हो गया।

मारवाड़ किसान आन्दोलन (1923-43) – मारवाड़ में किसान आन्दोलन का प्रारम्भ सन् 1922 में हो था जब बाली व गोड़वाड़ के भील-गरासियों ने मोतीलाल तेजावत के 'एकी आन्दोलन' से प्रभावित होकर जोधपुर राज्य को लगान देने से मना कर दिया। ये आन्दोलन अधिक प्रभावशाली नही हो सका। मारवाड़ सेवा सघ जिसकी स्थापना 1920 मे चान्दमल सुराणा ने की थी, तत्पश्चात् 1924 में इसका नाम बदलकर जयनारायण व्यास ने 1924 में मारवाड़ हितकारिणी सभा कर दिया। जयनारायण व्यास के नेतृत्व में मारवाड़ हितकारिणी सभा ने मादा पशुओं के नियति कर रोक लगाने हेतु आन्दोलन किया, अगस्त1924 में यह आन्दोलन सफल हो गया, राज्य ने मादा पशुओ के निर्यात पर रोक लगा दी।

सन् 1929 को मारवाड़ हितकारिणी सभा ने जागीरों के किसानों को लाग-बाग तथा शोषण से मुक्ति दिलाने के लिए पुन: आन्दोलन चलाया। किसानो को 136 लोगों एवं कदम-कदम पर बेगार देनी होती थी। जयनारायण व्यास ने तरूण राजस्थान के अंको में किसानो पर होने वाले और उनकी दयनीय स्थित पर विस्तार से प्रकाश डाला। 'मारवाड़ की दशा' तथा पोपा बाई की पोल' नामक पैम्फलेटी में भी जागीऐ जुल्मों का मार्मिक वर्णन किया गया। जोधपुर राज्य ने 'तरूण राजस्थान' पर प्रतिबन्ध लगाते हुए 20 जनवरी 1930 को जयनारायण व्यास, आनन्दराज सुराणा व भंवर लाल सर्राफा को बंदी बना लिया गया। ठिकाने के खिलाफ 7 सितम्बर 1939 को लोकापरिषद के नेतृत्व में किसानों ने लाग-बाग देना बन्द कर दिया। इसी प्रकार 28, मार्च 1942 को लाडनू में उत्तारदायी शासन दिवस मनाने आये लोक परिषद कार्यकर्ताओं पर चण्डावल ठाकुर के आदेशों से लाठियों व भालों से प्रहार किया गया। सैकड़ो कार्यकर्ताओं को चौटें लगी। महात्मा गांधी एवं देश के अन्य कई नेताओं ने इस दु:खद घटना की निंदा की।

संदर्भ गंथ सूची :-

1. डॉ. पेमाराम – राजस्थान में कृषक आंदोलन, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
2. डॉ. पेमाराम – उत्तरी राजसथान में कृषक आंदोलन, राजस्थान ग्रंथागार, जोधपुर
3. Dr. Pemaram: Agrarian Movement in Rajasthan (1913-1947 A.D) Panchsheel Prakashan, Jaipur
4. Brij Kishore Sharma: Peasant Movement in Rajasthan (1920-1947), Pointer Publishers

वैदिक आख्यान एवं उनका महत्व

डॉ. कल्पना मकवाने *

प्रस्तावना – वेदों का महत्व – ऋग्वेद आर्य संस्कृति के प्राचीन अभिलेख है, जिनम आर्यो की जीवन पद्धति, धार्मिक विश्वास और क्रियाकलाप, प्राचीन प्रकृति परक देवताओं की पूजन विधि, यज्ञादि कर्मकाण्डों आदि का उल्लेख किया किया गया है। पुरुष सूक्त (ऋग्वेद 10.90) में पुरुष (परमात्मा) के विराट रूप का वर्णन किया है। चराचर जगत की उत्पत्ति, चारों वर्णो मे गुण और कर्म के आधार समाज का परिवर्तनशील स्वरूप, उदात्त धार्मिक सिद्धान्तों की चर्चा की गई है।

नासदीय सूक्त (ऋग्वेद 10:129) में ऋषियों के आध्यात्मिक चिन्तन, सृष्टि का निर्माण आदि का वर्णन किया गया है। हिरण्यगर्भसूक्त (ऋग्वेद 1.121) में दार्शनिक विचारों के साथ सृष्टि निर्माणकर्ता एवं नियामक प्रजापति के महत्व को प्रतिपादित किया गया है।

ईशावास्यीय सूक्त (ऋग्वेद 1.164) में अध्यात्म, मनोविज्ञान, भाषाविज्ञान, ज्योतिष और भौतिक विज्ञान से संबंधित विषयों का उल्लेख किया गया है।

श्रद्धा सूक्त (ऋग्वेद 10.151) में श्रद्धा की परिभाषा, महत्व, उपयोगिता की चर्चा की गई है।

वाक् सूक्त (ऋग्वेद 10.125) में वाणी का महत्व, आदि के साथ वाक् तत्व, शब्द ब्रह्म और शब्द शक्ति का ब्रह्म के स्वरूप के रूप में महत्व बताया गया है।

इसके अलावा ऋग्वेद में संज्ञान सूक्त (10.191), दानस्तुति सूक्त (10.107,117) आदि की चर्चा की गई है। विवाह सूक्त (10.85) में विवाह का महत्व, स्त्री के कर्तव्य, स्त्री का परिवार और समाज की दृष्टि में महत्व आदि पर प्रकाश डाला है। विवाह सूक्त से ज्ञात होता कि आर्यो में सुव्यवस्थित विवाह नामक संस्था स्थापित हो चुकी थी। जिससे आर्यो के पारिवारिक संगठन का पता चलता है। ऋग्वेद में कुल 1028 सूक्त, और 10,552 मंत्र संख्या है। सूक्तों के रचनाकार मंत्रद्रष्टा ऋषियों के नाम भी आये हैं।

विष्णु के तीन पग – विष्णु ने तीन पैरों से अन्तरिक द्युलोक तथा पृथ्वी को व्याप्त कर लिया। इस प्रकार विष्णु के पराक्रम की स्तुति की है। वस्तुत: विष्णु शब्द का अर्थ है जो समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। विष्णु ही सूर्य है जो मेघों में स्थित, अत्यंत प्रशंसनीय, जलवृष्टि में सहायक है। इन्हीं से सत्व, रज और तम की उत्पत्ति हुई है।

सोम-सूर्या विवाह – सोम सूर्या विवाह का आख्यान भी प्राकृतिक रूपक है। सोम अर्थात् चंद्रमा और सूर्या याने सूर्य पुत्री उषा के विवाह का वर्णन है। अश्विनी कुमार दोनों के विवाह में सहयोग करते हैं। अश्विनी कुमार भी प्राकृतिक रूपक है। इस सूक्त में स्त्री के कर्तव्यों का विस्तार से वर्णन किया गया है। जिससे सिद्ध होता है कि ऋग्वेद काल में आर्य समाज में विवाह नाम संस्था स्थापित हो चुकी थी। पत्नी के कर्तव्य और उसकी पारिवारिक पृष्ठभूमि में उसकी भूमिका का भी विशद वर्णन है। स्त्री से अपेक्षा की है कि विवाह पश्चात् उसे सास-ससुर की सेवा करनी चाहिए। पति की आज्ञानुसार चलना चाहिए। स्त्री को उस समय पुरुष के समान दर्जा दिया गया है। वह गृह-स्वामिनी कहलाती थी। उसे अपने घर की साम्राज्ञी तक कहा गया है। सोम-सूर्या विवाह एक सुन्दर प्रकृति परक रूपक है।

सोमो वधू युरभवदश्विनास्तामुभा वरा।
सूर्या यत्पत्ये संसन्तीं मनसा सविता ददात्।।

सूर्यपुत्री हृदय से पति की कामना करती थी, जब सूर्य ने अपनी पुत्री सूर्या को अश्विनी कुमारों को प्रदान किया। तब सोम भी उसके साथ विवाह करने के इच्छुक थे, परन्तु अश्विनी कुमार ही उसके वर के रूप में स्वीकृत किये गये।

कन्या की विदाई करते हुए उसके मंगलमय सुखी दाम्पत्य जीवन की वरिष्ठ लोग कामना करते है। प्राचीन ऋषियों ने भी सूर्या के दाम्पत्य जीवन हेतु शुभकामनाएँ व्यक्त की है।

'जास्पत्यं सुयममस्तु देवा:।'

ये पति-पत्नी आदर्श दम्पत्ति सिद्ध हों ।

'प्रेतो मुञ्चामि नामुत: सुबध्दाममुतस्करम्'
यथेयमिन्द्र मीव: सुपुत्रा सुभगासति।

हे कन्ये! पितृ कुल से आपको मुक्त करते है, लेकिन पति कुल से नहीं।
हे इन्द्र! यह वधू सुसंततियुक्त और सौभाग्यवती हों।

'गृहान्गच्छ गृहपत्नी यथासो वाशिनी त्वं विदथमा वदासि।'

वहाँ आम गृह स्वामिनी और सबको अपने अनुशासन में रखने वाली बन। वहाँ आप विवेकपूर्ण वाणी का प्रयोग करऔर भी अनेक शुभकामनाएँ व्यक्त की गई है। जैसे माया (जन्म देने वाली) होकर पति के साथ सहगामिनी बन जाती है।

'इहैन स्तं मा वि यौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम्।
क्रीळन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वे गृहे।।'

हे वर और वधू! आप दोनों यही रहे। कभी भी पृथक न हो। सम्पूर्ण आयु का विशेष रीति से उपभोग कर। अपने गृहस्थ धर्म का निर्वाह करते हुए संतानों के साथ आनंद से जीवन व्यतीत कर।

'सम्राज्ञी श्वसुरे भव सम्राज्ञी श्वश्र्वा भव।
ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधि देवृषु।।'

हे वधू! आप सास, ससुर, ननद और देवरों की सम्राज्ञी हो। आप सबके

* भाषा अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

ऊपर स्वामिनी स्वरूपा हो।

इन्द्र-वृत्र युद्ध - इन्द्र ने अपने शक्तिशाली वज्र से वृत्र का वध कर मेघों से जल को मुक्त किया। यहाँ भी इन्द्र, वज्र, वृत्र और जल को मुक्त करने की क्रिया सभी प्राकृतिक रूपक है। प्रकृति का प्रतीकात्मक प्रयोग इन्द्र और वृत्र के युद्ध के रूप में किया गया है। ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के 80 वेंसूक्त मेंयह आख्यान आया है।

'येन वृत्रं निदभ्यो जघन्थ वज्रिन्नोजसार्चन्ननु स्वराज्यम्।।'

अपने अपने बल से वृत्र को मारकर जलों से दूर कर दिया है। इस प्रकार स्वराज्य की रक्षा की है।

पुरुरवा- उर्वशी- आख्यान - ऋग्वेद (10-95) मेंपुरुरवा- उर्वशी संवाद है। इसमेंपुरुरवा (पुरुरवस्) और स्वर्ग की अप्सरा उर्वशी के प्रणय का आख्यान है। कुछ शर्तों के साथ उर्वशी-पुरुरवा के साथ पत्नी की तरह रहती हैं। शर्तें टूट जाने पर वह पुरुरवा को छोड़कर स्वर्ग चली जाती है। कुछ पुराणों में इस प्रेम प्रसंग को लेकर आख्यान रचे गये है। थोड़े बहुत प्रकारान्तरों से पुराणों में यह आख्यान वर्णित है। कालिदास ने 'विक्रमोर्वशीयम्' में इस आख्यान को एक उदात्त स्वरूप प्रदान किया है। पुराणों में वर्णित उर्वशी की शर्ते कालिदास की रचना में नहीं है। क्यों कि शर्तो के आधार पर किया गया प्रेम शुद्ध प्रेम नहीं होता।

वेद में पुरुरवा और उर्वशी भिन्न-भिन्न अर्थो मेंआये हैं। पुरुरवा सूर्य है और उर्वशी उषा के रूप में उसकी प्रेयसी है। सूर्य प्रकट होने पर उषा लुप्त हो जाती है।

यम-यमी संवाद - यम-यमी भाई-बहन है। यमी कामसक्त होकर यम के कामभाव की शांति चाहती है। तब इसे अनुचित और अनैतिक मानकर अस्वीकार कर देते हैं।

'पापमार्डय: स्वसारं निगच्छात्।'

इससे सिद्ध होता है कि प्राचानी आर्यो ने नैतिकता के मानदण्ड बहुत पहले से ही सामाजिक व्यवस्था के लिए निश्चित किये थे। हमारे सम्पूर्ण शास्त्रों में नैतिक आचरण पर सर्वाधिक बल दिया है। यद्यपि यम-यमी संवाद का परवर्ती काव्य में अन्यत्र कहीं उल्लेख नहीं है।

सरमा-पणि संवाद - पणि (कृपण व्यापारी) इन्द्र की गायचुरा ले जाते है।इन्द्रदूती सरमा (कुतिया) उनका पता लगाकर सरमा पणियों को चेतावनी देती है। इसी घटना पर आधारित है सरमा-पणि संवाद।

डॉ. कपिल द्विवेदी इस संवाद मेंनिहित अध्यात्मपरक रूपक होने का उल्लेख किया है। उन के मतानुसार इन्द्र जीवात्मा है। जीवात्मा सत्य ज्ञान को जानने का अभिलाषी है। सरमा बुद्धि का प्रतीक है। जिस के द्वारा रहस्यों का पता लगाया जा सके।

इस अंश के कुछ उदाहरण द्दष्टव्य है:-

'असेन्या व: पणवो।'

सरमा कहती है कि, 'हे पणियों तुम्हारी ये बातसैनिक गरिमा के युक्त नहीं है।'

'अधृष्टो व एतवा अस्तु पन्था बृहस्पतिर्व उभया न मृकात्।।'

आपके मार्ग देवताओं द्वारा अनुल्लंघनीय हो। बृहस्पति आपको पीड़ित न करयदि आप गाँये देने के लिए तैयार नहीं।

शुन:शेप आख्यान अथवा हरिश्चन्द्र उपाख्यान - हरिश्चन्द्र निस्संतान थे। वरूण की उपासना से पुत्र प्राप्त हुआ। रोहित राजा ने वरूण को उसे समर्पित करने का वचन दिया था। राजा ने वरूण को दिया वचन टाल दिया। जिससे उसे जलोदर हुआ। रोहित बड़ा होकर वन मेंचला गया। लोभी ब्राह्मण पिता अपने पुत्र शुन:शेप को बलि देने को तैयार हो जाता है। अन्त मेंशुन:शेप देवताओं की स्तुति से बच जाता है। शुन:शेप लोभी पिता का त्याग कर विश्वामित्र का दत्तक पुत्र हो जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. ऋग्वेद 10.85
2. ऋग्वेद 10/85/9.
3. ऋग्वेद 10/85/23.
4. ऋग्वेद 10/85/25.
5. ऋग्वेद 10/85/26
6. ऋग्वेद 10/85/42.
7. ऋग्वेद 10/85/46.
8. ऋग्वेद 1.80, 2.12.
9. ऋग्वेद 1/80/2.
10. ऋग्वेद 10-10.
11. ऋग्वेद 10-10-12.
12. ऋग्वेद 10-108.
13. ऋग्वेद 10/108/6.
14. ऋग्वेद 10/108/06.
15. ऋग्वेद 1/24-30.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

स्वामी विवेकानंद दर्शन के अनुसार युवा शक्ति की आवश्यकता है

डॉ. इन्दु डुडवे *

प्रस्तावना – युवा शक्ति की आवश्यकता है। युवा ही देश की सर्वोपरि संपत्ति है। आज युवा की हर क्षेत्र में आवश्यकता है। चाहे वह समाज में हो, राष्ट्र के हित में हो राजनीति के क्षेत्र में हो, धार्मिक कार्य के क्षेत्र में हो, वैज्ञानिक हो, भौतिक हो, संपूर्ण क्षेत्र में युवा की आवश्यकता है। युवा आज के समय में प्रगतिशीलता से आगे बढ़ रहा है। लेकिन भौतिक विलासिता में वह पिछड़ा रह गया है। इसी कारण से विवेकानंद के समान युवाओं को बनाने के लिए युवा शक्ति को स्वामी विवेकानंद के विचारों का अनुसरण करने वाला युवा चाहिए, उन्हें बुरी आदतों को छोड़कर आदर्श युवा बनकर समाज में अपनी मिसाल पेश करना होगा। आज के परिपेक्ष में जागरुक एवं एक कर्मठ युवा की आवश्यकता है। इनमें जीति-जागती मिसाल तो देश के लिए सपने देखने वाले युवा की आवश्यकता है। वो भी खुली आँखों से सपने देखें जो कि परहित पर स्थान दे, राष्ट्र का उत्थान करें, ऐसे युवा की आवश्यकता है।

समस्त सृष्टि में युवाओं ही सबसे विकसित प्राणी है। युवा ने जब से होश संभाला तब से उसने सृष्टि को समझने का तथा जीवन और भी अधिक सुंदर ढंग से जीने का प्रयास किया। ईसा से हजारों साल पहले भारत में तथा सैकड़ों साल पहले यूनान में दार्शनिक चिंतन की व्यवस्थित रुप से शुरुआत हो चुकी थी। वैदिककाल से लेकर उपनिषदों तक हम भारत में दार्शनिक चिंतन का चरमोत्कर्ष देखते है। लेकिन यह मानना गलत होगा कि भारतीय दार्शनिक चिंतन उपनिषदों के दर्शन तक पहुँचकर रुक गया। शक्ति के बिना संस्कार का उद्धार नहीं हो सकता। क्या कारण है कि संसार के सब देशों में हमारा देश ही सबसे अधिक बलहीन और पिछड़ा हुआ है। इसका कारण यही है कि यहाँ शक्ति का निरादर होता है, उस अनुपम शक्ति का भारत में पुन: जाग्रत करने के लिए माँ का हैं, शरीर पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं है। बस और कुछ नहीं, वह इस दु:ख या विजय दिलाने में समर्थ साधनों की शिक्षा देता है, अगर इस तरह अपने शरीर पर नियंत्रण कर लोगे, तो संसार का सारा दु:ख दूर हो जाएगा। हर अस्पताल यही मनाता होगा कि अधिक से अधिक बीमार वहाँ आये। जब भी हम दान देने की इच्छा करते हो, तो तुम्हारे मन में रहेगा कि हमेशा तुम्हारी दया का पात्र कोई से भरा रहे, 'तो तुम्हारा आशय होना कि संसार दूसरों की भलाई के कार्य से परिपूर्ण रहें।'

योगी के अनुसार यदि तुम दु:ख का मूल कारण जान जाओं तो धर्म व्यावहारिक है। संसार के समस्त दु:ख का मूल इन्द्रियाँ है। क्या सूर्य चन्द्रमा नक्षत्र आदि में कोई रोग हैं, वह आग जो रसोई में काम आती है। युवाओं शक्ति योग संसार फैलाऐं और यदि तुम उसमें अपनी अंगुली जला लो, तो यह मूर्खता हैं। तुम यदि उससे रसोई बनाओं और इससे अपनी भूख मिटाओं तो तुम बुद्धिमान हो, इतना सा ही भेद है। परिस्थितियाँ न अच्छी होती है। न बुरी व्यष्टि मानव ही अच्छा या बुरा हो सकता है। संसार को भला या बुरा कहने का अभिप्राय क्या है। दु:ख और सुख केवल इन्द्रियाँ यवंत युवाओं के लिए है।

जन्म हुआ है और उन्हें केन्द्र बनाकर फिर से गर्मी और मैत्रेयी जैसी नारियों का जन्म संसार में होगा।

शक्ति जब कभी बुरे उद्देश्य के हेतु लगाई जाती है, तो वह आसुरी हो जाता है, उसका उपयोग सद्उपदेश्य के लिए होना चाहिए। अत: युगों की यह संचित शिक्षा तथा संस्कार जिनके ब्राह्मण संरक्षक होते आए है। अब साधारण जनता को देना पड़ेगा और चूंकि उन्होंने साधारण जनता को वह संपत्ति नहीं ही, इसलिए शक्ति संचय जितना आवश्यक है, शक्ति प्रसार भी उतना ही या उससे भी अधिक आवश्यक है। रक्त का एकत्र होना तो आवश्यक है, ही पर उसका यदि सारे शरीर में संचालन न हुआ तो मृत्यु निश्चित है। समाज के कल्याण के लिए कुल तथा जाति-विशेष में विद्या और शक्ति का एकत्र होना। वास्तविक शक्ति या शक्ति का पुजारी कौन हैं, जो यह जानता है कि जगत् में सर्वव्यापक महाशक्ति ईश्वर ही है और जो स्त्रियों को इस शक्ति का स्वरुप मानता है, वही शक्ति का पुजारी है।

बहुत से युवा ने मुझसे व्यावहारिक जीवन में वेदांत दर्शन की आवश्यकता पर कुछ बोलने के लिए कहा है। मैं तुम युवाओं से पहले ही कह चुका हैं, सिद्धांत बिल्कुल ठीक होने पर भी उसे कार्यरुप में परिणत करना एक समस्या हो जाती है। यदि उसे कार्य रुप में परिणत नहीं किया जा सकता, तो बौद्धिक व्यायाम के अतिरिक्त उसका और कोई मूल्य नहीं। अत: एवं वेदांत यदि धर्म के स्थान पर आरुढ़ होना चाहता हैं, तो उसे संपूर्ण रुप से व्यावहारिक होना चाहिए। हमें अपने जीवन की सभी अवस्थाओं में उसे कार्य रुप में परिणत करना चाहिए। केवल यही नहीं, अपितु आध्यात्मिक और व्यावहारिक जीवन के बीच जो एक काल्पनिक भेद हैं, और भी मिटा देना चाहिए, क्योंकि वेदांत एक अखण्ड वस्तु के संबंध में उपदेश देता है। वेदांत कहता है कि एक ही प्राण सर्वत्र विद्यमान है। धर्म के आदर्शो को संपूर्ण जीवन को आविष्ट करना, हमारे प्रत्येक विचार के भीतर प्रवेश करना और कर्म को अधिकाधिक प्रभावित करना चाहिए। मैं व्यावहारिक पक्ष पर क्रमश: प्रकाश डालूँगा। किन्तु ये व्याख्यान भावी व्याख्यानों की उपक्रमणिका के रुप में हैं, अत: पहले हमें वेदांत सिद्धांत का परिचय प्राप्त करना होगा और यह समझना होगा।

वेदांत आदर्श का उपदेश देता है और आदर्श वास्तविक की उपेक्षा कहीं अधिक उच्च होता है। युवाओं के जीवन में दो प्रकार की प्रवृत्तियाँ देखी जाती है। एक है, अपने आदर्श का सामंजस्य जीवन से करना और दूसरी है जीवन को आदर्श के अनुरुप उच्च बनाना। इन दोनों का भेद भली-भाँति समझ लेना चाहिए।

* (दर्शनशास्त्र) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

आसन सिद्ध होने पर किसी-किसी सम्प्रदाय के मतानुसार नाड़ी शुद्धि करनी पड़ती है। बहुत से युवाओं यह सोचकर कि यह राजयोग के अंतर्गत नहीं है। इसकी आवश्यकता स्वीकार नहीं करते, परन्तु जब शंकराचार्य जैसे भाष्यकार ने इसका विधान किया है, तब मेरे लिए भी इसका उल्लेख करना उचित जान पड़ता है। मैं श्वेताश्वतर उपनिषद् पर उनके भाष्य से इस संबंध में उनका मत उद्धृत करुँगा। प्राणायाम के जिस मन का शुद्ध होना। वही, मन ब्रह्म में स्थिर होता हैं। इसलिए शास्त्रों में प्राणायाम के विषय का उल्लेख है। पहले नाड़ी शुद्धि करनी पड़ती है। तभी प्राणायाम करने की शक्ति आती है। अंगूठे से दाहिना नथुना दबाकर बायें नथुने से यथाशक्ति वायु अंदर खीचों फिर बीम में तनिक देर भी विश्राम किये बिना बायां नथुना बंद करके दाहिने नथुने से वायु निकाले। फिर दाहिने नथुने से वायु ग्रहण करके बंद करके दाहिने नाक से वायु ग्रहण करके बायें से छोड़ना आदि।

युवा अपने सहजीवियों की भलाई को ही धर्माचरण मानते हैं। यदि मनुष्य कोई अस्पताल आदि बनवाने में मदद न दें, तो वह सोचने लगता हैं कि उनका कोई धर्म नहीं हैं। सभी एक सा ही करें ऐसी कोई बात नहीं हैं। इसी प्रकार दार्शनिक ज्ञान साधना न करने वाले की अवहेलना कर सकता हैं। भले ही लोग बीस हजार अस्पताल बनवा दें, ज्ञानी उन्हें देवताओं के पशु मात्र सिद्ध करेगा। भक्त के अपने ही विचार और मानदण्ड़ होते है। ईश्वर से प्रेम न करने वाले जैसे भी कर्म क्यों न करें, उनकी दृष्टि में श्रेष्ठ नहीं है। योगी का विश्वास आत्म संयम और अन्त: चित्त वृत्ति विजय पर रहता है। इस दिशा में आपकी सफलता कितनी बड़ी हैं। शरीर तथा इन्द्रियों पर कितना नियंत्रण हुआ हैं। योगी के ये ही प्रश्न रहते है। जैसा कहा गया हैं, हर युवा दूसरों को अपने आदर्श से ही परखता है। युवा लाखों डॉलर दान में क्यों न दे चुके हो या भारतीयों की भाँति चूहों-बिल्लियों को क्यों न अन्न खिला चुके हों। उनका कहना हैं कि मानव अपनी चिंता स्वयं कर सकता हैं, लेकिन बेचारे जीव जंतु ऐसा नहीं कर सकते। यही उनकी धारणा है, लेकिन योगा का चरम लक्ष्य अन्ततः चित्तवृत्ति निरोधा हैं और वह उसी कसौटी पर मानव को कसता है। हम व्यावहारिक धर्म के विषय में सदैव बातें किया करते हैं। लेकिन मानते यह है कि यह व्यावहारिकता हमारे अपने दृष्टिकोण के अनुरुप ही होनी चाहिए।

स्वामी विवेकानंद योगी कहता है कि तुम्हें इन सबके मूल तक पहुँचना होगा। संसार में दु:ख क्यों हैं, योगी उत्तर देता है, हमारी मूर्खता ही इसका कारण आसन-प्राणायामों के द्वारा शरीर की ग्रंथियों व मांसपेशियों में कर्षण, विकषण, आंकुचन प्रसारण तथा शिथिलीकरण की क्रियाओं द्वारा उनका आरोग्य बढ़ता है। जिससे संपूर्ण शरीर स्वस्थ हल्का एवं स्फूर्तिदायक बन जाता है। जब युवा शारीरिक व मानसिक रुप से स्वस्थ होता हैं, तो उसकी विचार धारा नकारात्मक से सकारात्मक बनती है।

युवावस्था मानव जीवन का अत्यंत महत्वपूर्ण काल है। इसी अवस्था में युवाओं की अन्तर्निहित शक्तियों का विकास होता है। अगर इस अवस्था में युवाओं को उचित मार्ग दर्शन ना मिलें तो उनकी सारी शक्ति का उपयोग गलत कार्यो में होगा। युवाओं में नैतिक शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए योग एक महत्वपूर्ण साधन हैं।

योग साधना से युवाओं के जीवन में उत्साह का संचार कर रूकते हैं। योग के द्वारा शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक और भावनात्मक रुप से उन्हें मजबूत बना सकते हैं। युवा ही राष्ट्र का नाम गौरान्वित कर सकता है। चित्तवृत्तियों पर नियंत्रण और उसका निरोध ही दर्शन शास्त्र में योग शब्द से विभूषित हुआ है। सत्य, अहिंसा, अस्तेय, मानवता, ईमानदारी आदि गुणों को भारतीय दर्शन में नैतिकता का दर्जा दिया गया है। योग ही वह प्रक्रिया है, जिससे आत्मचिंतन की प्रणाली यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि है।

साथ ही योग अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव भाईचारे प्रेम सहयोग की भावनाओं तथा विचारों के पोषण में सहयोगी होता है। योग वह माध्यम तथा साधन हैं, जो युवाओं में निश्चित ही नवीन ऊर्जा का संचार करेगा। योग के अभ्यास द्वारा पूरे विश्व में भौतिक मूल्यों के स्थान पर आध्यात्मिक तथा राष्ट्रीय पुनर्निर्माण योग युवाओं संभव है।

सदा अभ्यास आवश्यक है। तुम रोज देर तक बैठे हुए मेरी बात सुन सकते हो, परन्तु अभ्यास किए बिना तुम एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकते, सब कुछ साधना पर निर्भर है। प्रत्यक्ष अनुभूति बिना ये तत्व कुछ भी समझ में नहीं आते। स्वयं अनुभव करना होगा। केवल व्याख्या और मत सुनने से न होगा। फिर साधना में बहुत से विघ्न भी है। पहला तो व्याधिग्रस्त देह है। शरीर स्वस्थ न रहें, तो बाधाएँ आती है। अत: शरीर को स्वस्थ रखना आवश्यक है। दूसरा विघ्न है, संदेह हम जो कुछ नहीं देख पाते, उसके संबंध में संदेह उपस्थित हो जाता है। योगा शास्त्रोक्त सत्यता के संबंध में संदेह उपस्थित हो जाता है। योगशास्त्र के एक भाष्यकार ने कहा भी है। योगशास्त्र की सत्यता के संबंध में यदि एक बिल्कुल सामान्य प्रमाण भी मिल जाए, तो उतने से ही संपूर्ण योगशास्त्र पर विश्वास हो जाएगा। मान लो नासिका के अग्र भाग में तुम चित्त का संयम करने लगे तो थोड़े ही दिनों में तुम्हें दिव्य सुगंध मिलने लगेगी, इसी से तुम समझ जाओगे कि हमारा मन कभी-कभी वस्तु के प्रत्यक्ष संस्पर्श में न आकर भी उसका अनुभव कर लेता है, पर यह हमें सदा याद रखना चाहिए कि इन सिद्धियों का और कोई स्वतंत्र मूल नहीं, वे हमारे प्रकृत उद्देश्य के साधन में कुछ सहायता मात्र करती हैं। हमें याद रखना होगा कि इन सब साधनों का एकमात्र लक्ष्य एकमात्र उद्देश्य आत्मा की मुक्ति है। प्रकृति को पूर्णरुप से अपने अधीन कर लेना ही हमारा एकमात्र लक्ष्य है। इसके सिवा और कुछ भी हमारा प्रकृति लक्ष्य नहीं हो सकता। हम अवश्य ही प्रकृति के स्वामी होंगे, प्रकृति के गुलाम नहीं। शरीर या मन कुछ भी हमारे कभी नहीं हो सकते। हम यह कभी न भूलें कि शरीर हमारा है, हम शरीर की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पुस्तक - स्वामी विवेकानंद साहित्य चरित, पृ. क्र. 72 को देखिए।
2. पुस्तक - मैं विवेकानन्द बोल रहा हूँ लेखक-सं. गिरिज शरण सन् 2011, पेज नं. 120-121 को देखिए।
3. पुस्तक - स्वामी विवेकानंद योग संग्रह लेखक-अनुराधा चावला संस्करण, 2012, पृ.क्र. 22, 23 पेज को देखिए।
4. पुस्तक - लाइफ ऑफ विवेकानंद लेखक - रोमां रोला, सन् 1965 पृ.क्र. 74 पेज को देखिए।
5. पुस्तक - स्वामी विवेकानंद संचयन लेखक - सत्येन्द्रनाथ मजूदार सन् 1994, पृ.क्र. 32 पेज को देखिए।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

वेदवर्णित राष्ट्रधर्म

डॉ. सुरेन्द्र प्रसाद तिवारी *

प्रस्तावना – राष्ट्रधर्म एक व्यापक शब्द है। राष्ट्र शब्द समष्टि का द्योतक है। जो अपने अंदर समस्त प्राणीजगत को समेटे हुए है। राष्ट्र के अंदर रहने वाले समस्त मानव जाति का कल्याण, सुख, समृद्धि, वैभव आनन्द प्रदान करना राष्ट्र का प्रथम और सर्वोपरि कर्तव्य है। क्योंकि एक परिवार की पहचान परिवार के अंदर रहने वाले लोगों ये होती है। ठीक उसी प्रकार एक राष्ट्र की पहचान राष्ट्र के अंदर रहने वाले मनुष्यों के योगक्षेम और उनकी समृद्धि से होती है। जो हमें प्राचीन काल अर्थात् वेदों के काल से ही हमें वेदों से हमें वृहद् रूप ने मानव व राष्ट्रधर्म के विषय में चारों वेदों में व्यापक रूप से निरूपण किया गया है।

विषयवस्तु – विश्व के आदिग्रन्थ वेद में मनुष्य के सभी धर्मो का पूर्णत: विवेचन है। विश्व धर्म ने लेकर व्यक्ति धर्म तक समष्टि में व्यष्टि तक सभी धर्मो का निरूपण वैदिक वाङ्मय में है। आ ब्रह्मन ब्राह्मणों ब्रह्मवर्चयी जायताम। आ राष्ट्रे राजन्य शूद्र इथव्योऽतिव्याधी महारथी जायताम। योगक्षेमो न कल्पताम।।[1] (यजुर्वेद 22/22)

ब्राह्मण ब्रह्मतेज से सम्पन्न हो राष्ट्र में क्षत्रियगण शूरवीर, धमुर्धर, रोगमुक्त और महारथी हो। गायें दुधारू, बैल भारवहन में सक्षम, अश्व शीघ्रगामी स्त्रियां शोभामयी, रथी विजयशील से और यजमान का पुत्र निर्भय वीर हो। आवश्यकतानुसार वर्षा से वनस्पतियां फलवती हो। व्यास योगक्षेम थे।

अथर्ववेद में भी राष्ट्रेन्नति के उपाय बताये गये हैं। पृथ्वी सूक्त के अनुसार बहृत सत्य, उग्र, ऋत, ददीक्षा, तप, ब्रह्मयज्ञ पृथ्वी के धारण करते हैं। राष्ट्रभावना के मूलाधार है एक देश, एक केन्द्रीय शासन एक संस्कृति एक सभ्यता और एक भाषा वेदों में इनका सविस्तार वर्णन मिलता है। देश और राज्य के संगठनात्मक ऐक्य का नाम 'राष्ट्र' है। राष्ट्र देश की समग्रता, भावत्मक संगठन और राजनीतिक एकता का द्योतक है। यह इस तथ्य से प्रकट होता है कि ऋग्वेद में सामाजिक संगठन की पांच क्रमिक विकास भूमियाँ बतायी गयी है। 'कुल' कुलों का समूह 'ग्राम' ग्राम से 'विग' में वृहत्तर 'जन' जन राजा के शासन मंत्र से सीधा सम्बन्ध रखता होगा, क्योंकि राजा को जनरक्षक कहा गया है। राष्ट्र से भी वृहत्तार साम्राज्य होता है। इसके शासक को आदिराज, सम्राट, विराट कहा जाता है। ये अपना पद गौरव प्रदर्शन करने के लिए राजसूय, वाजपेय, भविष्य पुरुषमेध, सर्वमेध आदि यज्ञ करते थे। जो राष्ट्र को ऐक्य और समर्थ बनाते थे। राष्ट्र भावना में भौगोलिक एकता का विचार प्रमुख है। राजा भूमि की रक्षा करते रहने की पवित्र शपथ लेते थे कि पृथ्वीमाता। तुम मेरी हिंसा न करो और मैं तुम्हारी हिंसा न करूं। देश और राजा परस्पर हिंतैषी का भाव रखते थे। जैसे माता और पुत्र। किन्तु देश एक भावत्मक सत्ता भी है। कहा भी गया है कि 'प्रजा ही राष्ट्र है'। राष्ट्र के विचार में प्रजा का विचार ही सब कुछ है। प्रजा के हित और संरक्षण में ही राष्ट्र की सुरक्षा है। प्रजा की समृद्धि, धनधान्य सम्पन्नता, नीरोगता, शोभा और दीप्ति ही राष्ट्र का अधिकारी नहीं। जब प्रवाहित ही राष्ट्र का सर्वस्व है। तब प्रजा को ही अपना हित देखने का वास्तविक अधिकार ही है।

शोध प्रविधि – वेदवर्णित राष्ट्रधर्म इस शोध पत्र में द्वितीयक सामाग्री संकलन एवं धार्मिक पुस्तकों के माध्यम से अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। जिसके माध्यम से सामाग्री संकलन का आधार बनाया गया है।

उद्देश्य –

- राष्ट्र धर्म के मूल्यों का अध्ययन करना।
- धर्म की श्रेष्ठता का अध्ययन करना।
- मानवीय मूल्यों को अध्ययन करना।

व्यक्ति के लिए मानवीय जीवन का आधार धर्म है। यह वैचारिक आधार शिला को मानवीय जीवन की दृश्य को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की अवधारणा का मूल्य ही धर्म है। जिसके परिदृश्य का वर्णन ही मानवीय जीवन की लोक जनमानस का परिणाम दिया जाता है।

अनन्तं वत में वित्तं यस्य में नास्ति किन्चन,
मिथिलायां प्रदीप्तायां न में दह्यति किन्चन।[2]

इस जीवन में मानवीय ऐश्वर्य की दृष्टि भी अनन्त आनन्द की ओर प्रसारित होती है। क्योंकि मेरा यहाँ तनिक भी नहीं है। यहाँ तक कहा गया कि यदि सारी मिथिला जल जाये तो भी मेरा कोई नुकशान नहीं होगा। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि कोई भी राजा प्रजा के घरवार जलने से उसके प्रति कोई उदासीनता का भेद नहीं रख सकता है। क्योंकि इसका मूल तो धर्म है। धर्म के बिना राज्य की कल्पना नहीं की जा सकती है। जहाँ मानवीय मूल्य हो उसके समाहित करने धर्म की आवश्यकता होती है।

यया धर्ममधर्मं च कार्यं चाकार्यमेव च।
अयथावत्प्रजानाति बुद्धि: सा पार्थ राजसी।।[3]

मानव जिस कार्य के यथार्थ को नहीं जानता। उसकी बुद्धि धर्म के मार्ग को नहीं समझ पाती वह अधर्म का सहारा लेता है। सत्य और असत्य के मूल को नहीं जानने की कोशिस करता है। वह राजसी बुद्धि है। इसके मूल में जाना चाहिए। व्यक्ति को कर्तव्य और अकर्तव्य के भेद को जानना चाहिए। जहाँ मानव के कल्याण निहित है। राष्ट्र के धर्म को मूल्य समझकर राजा को ग्रहण करना चाहिए। इससे मानवीय मूल्यों का उद्‌भव धर्म से ही होना है। अन्यथा सब कुछ मूल्य विहीन है।

निष्कर्ष – निष्कर्षत: वेदवर्णित राष्ट्र धर्म में व्यक्ति के जीवन में मानवीय मूल्यों को बताया गया है। इसमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का सम्बन्ध प्रत्येक प्राणी से है। इसके बिना वह नहीं जी सकता। उसकी सबसे बड़ी दिशा इन मूल्यों में निहित है। जहाँ मानवीय मूल्यों को व्यक्ति पहचान गया। उसे परम सुख की प्राप्ति होती है। जहाँ जीवन का चरम सुख धर्म ही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. (यजुर्वेद 22/22)
2. शान्तिपर्व, 17/19
3. श्रीमद्भगवद्गीता, गीताप्रेस गोरखपुर, अ. 18/श्लोक 31/पृष्ठ 222

* अतिथि विद्वान् (संस्कृत) शासकीय स्वामी विवेकानन्द महाविद्यालय, त्योंथर, जिला-रीवा (म.प्र.) भारत

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

Einstein: Glimpses From Personal Life & Legacy

Ashok Kumar Verma*

Abstract - Albert Einstein (14 March 1879 – 18 April 1955) was a German-born theoretical physicist who is widely held to be one of the greatest and most influential scientists of all time. Best known for developing the theory of relativity, Einstein also made important contributions to quantum mechanics, and was thus a central figure in the revolutionary reshaping of the scientific understanding of nature that modern physics accomplished in the first decades of the twentieth century.[1][5] His mass–energy equivalence formula $E = mc^2$, which arises from relativity theory, has been called "the world's most famous equation".[6] He received the 1921 Nobel Prize in Physics "for his services to theoretical physics, and especially for his discovery of the law of the photoelectric effect",[7] a pivotal step in the development of quantum theory. His work is also known for its influence on the philosophy of science.[8][9] In a 1999 poll of 130 leading physicists worldwide by the British journal Physics World, Einstein was ranked the greatest physicist of all time.[10] His intellectual achievements and originality have made the word Einstein broadly synonymous with genius.[11]
Keywords-Einstein, scientist, physics, Nobel, prize, intellectual, genius.

Introduction- Born in the German Empire, Einstein moved to Switzerland in 1895, forsaking his German citizenship (as a subject of the Kingdom of Württemberg) the following year. In 1897, at the age of seventeen, he enrolled in the mathematics and physics teaching diploma program at the Swiss Federal polytechnic school in Zürich, graduating in 1900. In 1901, he acquired Swiss citizenship, which he kept for the rest of his life. In 1903, he secured a permanent position at the Swiss Patent Office in Bern. In 1905, he submitted a successful PhD dissertation to the University of Zurich. In 1914, he moved to Berlin in order to join the Prussian Academy of Sciences and the Humboldt University of Berlin. In 1917, he became director of the Kaiser Wilhelm Institute for Physics; he also became a German citizen again, this time as a subject of the Kingdom of Prussia.

In 1933, while he was visiting the United States, Adolf Hitler came to power in Germany. Horrified by the Nazi "war of extermination" against his fellow Jews,[12] Einstein decided to remain in the US, and was granted American citizenship in 1940.[13] On the eve of World War II, he endorsed a letter to President Franklin D. Roosevelt alerting him to the potential German nuclear weapons program and recommending that the US begin similar research. Einstein supported the Allies but generally viewed the idea of nuclear weapons with great dismay.[14]

In 1905, sometimes described as his annus mirabilis (miracle year), Einstein published four groundbreaking papers.[15] These outlined a theory of the photoelectric effect, explained Brownian motion, introduced his special theory of relativity—a theory which addressed the inability of classical mechanics to account satisfactorily for the behavior of the electromagnetic field—and demonstrated that if the special theory is correct, mass and energy are equivalent to each other. In 1915, he proposed a general theory of relativity that extended his system of mechanics to incorporate gravitation. A cosmological paper that he published the following year laid out the implications of general relativity for the modeling of the structure and evolution of the universe as a whole.[16][17] The middle part of his career also saw him making important contributions to statistical mechanics and quantum theory. Especially notable was his work on the quantum physics of radiation, in which light consists of particles, subsequently called photons. For much of the last phase of his academic life, Einstein worked on two endeavors that proved ultimately unsuccessful. Firstly, he advocated against quantum theory's introduction of fundamental randomness into science's picture of the world, objecting that "God does not play dice".[18] Secondly, he attempted to devise a unified field theory by generalizing his geometric theory of gravitation to include electromagnetism too. As a result, he became increasingly isolated from the mainstream of modern physics.

Albert Einstein was born in Ulm,[19] in the Kingdom of Württemberg in the German Empire, on 14 March 1879.[20][21] His parents, secular Ashkenazi Jews, were Hermann Einstein, a salesman and engineer, and Pauline Koch. In 1880, the family moved to Munich's borough of Ludwigsvorstadt-Isarvorstadt, where Einstein's father and his uncle Jakob founded ElektrotechnischeFabrik J. Einstein &Cie, a company that manufactured electrical

*Lecturer (Physics) Govt. College, Dholpur (Raj.) INDIA

equipment based on direct current.[19]

Albert attended a Catholic elementary school in Munich from the age of five. When he was eight, he was transferred to the Luitpold-Gymnasium (now known as the Albert-Einstein-Gymnasium [de]) where he received advanced primary and then secondary school education.[22]

In 1894, Hermann and Jakob's company tendered for a contract to install electric lighting in Munich, but without success—they lacked the capital that would have been required to update their technology from direct current to the more efficient, alternating current alternative.[23] The failure of their bid forced them to sell their Munich factory and search for new opportunities elsewhere. The Einstein family moved to Italy, first to Milan and a few months later to Pavia, where they settled in Palazzo Cornazzani.[24] Einstein, then fifteen, stayed behind in Munich in order to finish his schooling. His father wanted him to study electrical engineering, but he was a fractious pupil who found the Gymnasium's regimen and teaching methods far from congenial. He later wrote that the school's policy of strict rote learning was harmful to creativity. At the end of December 1894, a letter from a doctor persuaded the Luitpold's authorities to release him from its care, and he joined his family in Pavia.[25] While in Italy as a teenager, he wrote an essay entitled "On the Investigation of the State of the Ether in a Magnetic Field".[26][27]

Einstein excelled at physics and mathematics from an early age, and soon acquired the mathematical expertise normally only found in a child several years his senior. He began teaching himself algebra, calculus and Euclidean geometry when he was twelve; he made such rapid progress that he discovered an original proof of the Pythagorean theorem before his thirteenth birthday.[28][29][30] A family tutor, Max Talmud, said that only a short time after he had given the twelve year old Einstein a geometry textbook, the boy "had worked through the whole book. He thereupon devoted himself to higher mathematics ... Soon the flight of his mathematical genius was so high I could not follow." Einstein recorded that he had "mastered integral and differential calculus" while still just fourteen.[29] His love of algebra and geometry was so great that at twelve, he was already confident that nature could be understood as a "mathematical structure".

At thirteen, when his range of enthusiasms had broadened to include music and philosophy, Einstein was introduced to Kant's Critique of Pure Reason. Kant became his favorite philosopher; according to his tutor, "At the time he was still a child, only thirteen years old, yet Kant's works, incomprehensible to ordinary mortals, seemed to be clear to him."

In 1895, at the age of sixteen, Einstein sat the entrance examination for the Federal polytechnic school (later the EidgenössischeTechnischeHochschule, ETH) in Zürich, Switzerland. He failed to reach the required standard in the general part of the test, but performed with distinction in physics and mathematics.[34] On the advice of the polytechnic's principal, he completed his secondary education at the Argovian cantonal school (a gymnasium) in Aarau, Switzerland, graduating in 1896. While lodging in Aarau with the family of JostWinteler, he fell in love with Winteler's daughter, Marie. (His sister, Maja, later married Winteler's son Paul.

In January 1896, with his father's approval, Einstein renounced his citizenship of the German Kingdom of Württemberg in order to avoid conscription into military service. The Matura (graduation for the successful completion of higher secondary schooling) awarded to him in the September of that year acknowledged him to have performed well across most of the curriculum, allotting him a top grade of 6 for history, physics, algebra, geometry, and descriptive geometry. At seventeen, he enrolled in the four-year mathematics and physics teaching diploma program at the Federal polytechnic school. Marie Winteler, a year older than him, took up a teaching post in Olsberg, Switzerland.

The five other polytechnic school freshmen following the same course as Einstein included just one woman, a twenty year old Serbian, MilevaMariæ. Over the next few years, the pair spent many hours discussing their shared interests and learning about topics in physics that the polytechnic school's lectures did not cover. In his letters to Mariæ, Einstein confessed that exploring science with her by his side was much more enjoyable than reading a textbook in solitude. Eventually the two students became not only friends but also lovers.

Historians of physics are divided on the question of the extent to which Mariæ contributed to the insights of Einstein's annus mirabilis publications. There is at least some evidence that he was influenced by her scientific ideas,[38][39][40] but there are scholars who doubt whether her impact on his thought was of any great significance at all.

Marriages, relationships and children: Correspondence between Einstein and Mariæ, discovered and published in 1987, revealed that in early 1902, while Mariæ was visiting her parents in Novi Sad, she gave birth to a daughter, Lieserl. When Mariæ returned to Switzerland it was without the child, whose fate is uncertain. A letter of Einstein's that he wrote in September 1903 suggests that the girl was either given up for adoption or died of scarlet fever in infancy.

Einstein and Mariæ married in January 1903. In May 1904, their son Hans Albert was born in Bern, Switzerland. Their son Eduard was born in Zürich in July 1910. In letters that Einstein wrote to Marie Winteler in the months before Eduard's arrival, he described his love for his wife as "misguided" and mourned the "missed life" that he imagined he would have enjoyed if he had married Winteler instead: "I think of you in heartfelt love every spare minute and am so unhappy as only a man can be."

In 1912, Einstein entered into a relationship with Elsa Löwenthal, who was both his first cousin on his mother's side and his second cousin on his father's.When Mariæ

learned of his infidelity soon after moving to Berlin with him in April 1914, she returned to Zürich, taking Hans Albert and Eduard with her. Einstein and Mariæ were granted a divorce on 14 February 1919 on the grounds of having lived apart for five years. As part of the divorce settlement, Einstein agreed that if he were to win a Nobel Prize, he would give the money that he received to Mariæ; she had to wait only two years before her foresight in extracting this promise from him was rewarded.

Einstein married Löwenthal in 1919.In 1923, he began a relationship with a secretary named Betty Neumann, the niece of his close friend Hans Mühsam. Löwenthal nevertheless remained loyal to him, accompanying him when he emigrated to the United States in 1933. In 1935, she was diagnosed with heart and kidney problems. She died in December 1936.

A volume of Einstein's letters released by Hebrew University of Jerusalem in 2006added further names to the catalog of women with whom he was romantically involved. They included MargareteLebach (a married Austrian), Estella Katzenellenbogen, Toni Mendel (a wealthy Jewish widow) and Ethel Michanowski (a Berlin socialite), with whom he spent time and from whom he accepted gifts while married to Löwenthal. After being widowed, Einstein was briefly in a relationship with Margarita Konenkova, thought by some to be a Russian spy; her husband, the Russian sculptor Sergei Konenkov, created the bronze bust of Einstein at the Institute for Advanced Study at Princeton. Following an episode of acute mental illness at about the age of twenty, Einstein's son Eduard was diagnosed with schizophrenia.He spent the remainder of his life either in the care of his mother or in temporary confinement in an asylum. After her death, he was committed permanently to Burghölzli, the Psychiatric University Hospital in Zürich. Einstein graduated from the Federal polytechnic school in 1900, duly certified as competent to teach mathematics and physics. His successful acquisition of Swiss citizenship in February 1901 was not followed by the usual sequel of conscription; the Swiss authorities deemed him medically unfit for military service. He found that Swiss schools too appeared to have no use for him, failing to offer him a teaching position despite the almost two years that he spent applying for one. Eventually it was with the help of Marcel Grossmann's father that he secured a post in Bern at the Swiss Patent Office, as an assistant examiner – level III.

Patent applications that landed on Einstein's desk for his evaluation included ideas for a gravel sorter and an electric typewriter. His employers were pleased enough with his work to make his position permanent in 1903, although they did not think that he should be promoted until he had "fully mastered machine technology". It is conceivable that his labors at the patent office had a bearing on his development of his special theory of relativity. He arrived at his revolutionary ideas about space, time and light through thought experiments about the transmission of signals and the synchronization of clocks, matters which also figured in some of the inventions submitted to him for assessment.[15]

In 1902, Einstein and some friends whom he had met in Bern formed a group that held regular meetings to discuss science and philosophy. Their choice of a name for their club, the Olympia Academy, was an ironic comment upon its far from Olympian status. Sometimes they were joined by Mariæ, who limited her participation in their proceedings to careful listening.The thinkers whose works they reflected upon included Henri Poincaré, Ernst Mach and David Hume, all of whom significantly influenced Einstein's own subsequent ideas and beliefs.

Einstein's sabbatical as a civil servant approached its end in 1908, when he secured a junior teaching position at the University of Bern. In 1909, a lecture on relativistic electrodynamics that he gave at the University of Zurich, much admired by Alfred Kleiner, led to Zürich's luring him away from Bern with a newly created associate professorship.Promotion to a full professorship followed in April 1911, when he accepted a chair at the German Charles-Ferdinand University in Prague, a move which required him to become an Austrian citizen of the Austro-Hungarian Empire. His time in Prague saw him producing eleven research papers.

In July 1912, he returned to his alma mater, the ETH Zurich, to take up a chair in theoretical physics. His teaching activities there centred on thermodynamics and analytical mechanics, and his research interests included the molecular theory of heat, continuum mechanics and the development of a relativistic theory of gravitation. In his work on the latter topic, he was assisted by his friend, Marcel Grossmann, whose knowledge of the kind of mathematics required was greater than his own.

In the spring of 1913, two German visitors, Max Planck and Walther Nernst, called upon Einstein in Zürich in the hope of persuading him to relocate to Berlin. They offered him membership of the Prussian Academy of Sciences, the directorship of the planned Kaiser Wilhelm Institute for Physics and a chair at the Humboldt University of Berlin that would allow him to pursue his research supported by a professorial salary but with no teaching duties to burden him. Their invitation was all the more appealing to him because Berlin happened to be the home of his latest girlfriend, Elsa Löwenthal. He duly joined the Academy on 24 July 1913, and moved into an apartment in the Berlin district of Dahlem on 1 April 1914. He was installed in his Humboldt University position shortly thereafter.

The outbreak of the First World War in July 1914 marked the beginning of Einstein's gradual estrangement from the nation of his birth. When the "Manifesto of the Ninety-Three" was published in October 1914—a document signed by a host of prominent German thinkers that justified Germany's belligerence—Einstein was one of the few German intellectuals to distance himself from it and sign

the alternative, eirenic "Manifesto to the Europeans" instead.But this expression of his doubts about German policy did not prevent him from being elected to a two-year term as president of the German Physical Society in 1916. And when the Kaiser Wilhelm Institute for Physics opened its doors the following year—its foundation delayed because of the war—Einstein was appointed its first director, just as Planck and Nernst had promised.

Einstein was elected a Foreign Member of the Royal Netherlands Academy of Arts and Sciences in 1920, and a Foreign Member of the Royal Society in 1921. In 1922, he was awarded the 1921 Nobel Prize in Physics "for his services to Theoretical Physics, and especially for his discovery of the law of the photoelectric effect".[7] At this point some physicists still regarded the general theory of relativity sceptically, and the Nobel citation displayed a degree of doubt even about the work on photoelectricity that it acknowledged: it did not assent to Einstein's notion of the particulate nature of light, which only won over the entire scientific community when S. N. Bose derived the Planck spectrum in 1924. That same year, Einstein was elected an International Honorary Member of the American Academy of Arts and SciencesBritain's closest equivalent of the Nobel award, the Royal Society's Copley Medal, was not hung around Einstein's neck until 1925.[1] He was elected an International Member of the American Philosophical Society in 1930.

In 1907, Einstein reached a milestone on his long journey from his special theory of relativity to a new idea of gravitation with the formulation of his equivalence principle, which asserts that an observer in an infinitesimally small box falling freely in a gravitational field would be unable to find any evidence that the field exists. In 1911, he used the principle to estimate the amount by which a ray of light from a distant star would be bent by the gravitational pull of the Sun as it passed close to the Sun's photosphere (that is, the Sun's apparent surface). He reworked his calculation in 1913, having now found a way to model gravitation with the Riemann curvature tensor of a non-Euclidean four-dimensional spacetime. By the fall of 1915, his reimagining of the mathematics of gravitation in terms of Riemannian geometry was complete, and he applied his new theory not just to the behavior of the Sun as a gravitational lens but also to another astronomical phenomenon, the precession of the perihelion of Mercury (a slow drift in the point in Mercury's elliptical orbit at which it approaches the Sun most closely).

A total eclipse of the Sun that took place on 29 May 1919 provided an opportunity to put his theory of gravitational lensing to the test, and observations performed by Sir Arthur Eddington yielded results that were consistent with his calculations. Eddington's work was reported at length in newspapers around the world. On 7 November 1919, for example, the leading British newspaper, The Times, printed a banner headline that read: "Revolution in Science – New Theory of the Universe – Newtonian Ideas Overthrown".

With Eddington's eclipse observations widely reported not just in academic journals but by the popular press as well, Einstein became "perhaps the world's first celebrity scientist", a genius who had shattered a paradigm that had been basic to physicists' understanding of the universe since the seventeenth century.

1. General relativity and the equivalence principle: a theory of gravitation that was developed by Einstein between 1907 and 1915. According to it, the observed gravitational attraction between masses results from the warping of spacetime by those masses.
2. Gravitational waves the existence of which is possible under general relativity due to its Lorentz invariance which brings the concept of a finite speed of propagation of the physical interactions of gravity with it.
3. Hole argument and Entwurf theory which says that a general relativistic field theory is impossible.
4. Physical cosmology in which he discovered that the general field equations predicted a universe that was dynamic, either contracting or expanding.
5. Energy momentum pseudotensor in which he maintained that the non-covariant energy momentum pseudotensor was, in fact, the best description of the energy momentum distribution in a gravitational field.
6. Wormholes for which Einstein collaborated with Nathan Rosen to produce a model of a wormhole, often called Einstein–Rosen bridges.
7. Einstein–Cartan theory which says that in order to incorporate spinning point particles into general relativity, the affine connection needed to be generalized to include an antisymmetric part, called the torsion.
8. Equations of motion which was regarded by him as an "independent fundamental assumption" that had to be postulated in addition to the field equations in order to complete the theory.
9. Old quantum theory in which Einstein postulated that light itself consists of localized particles (quanta).
10. Quantized atomic vibrations through which Einstein proposed a model of matter where each atom in a lattice structure is an independent harmonic oscillator.
11. Wave–particle duality
12. Zero-point energy
13. Stimulated emission
14. Matter waves
15. Quantum mechanics
16. Unified field theory
17. Einstein–de Haas experiment

Objective Of The Study: The main objective of the study is to trace glimpses from the personal life of Einstein and to enlist the legacy in the form of his theories.

Method: The author went through the biographical details of Einstein through the published research papers and studies that led him to draw conclusion on Einstein's personal life and the legacy left by him for the generations to come.

Conclusion: Einstein became one of the most famous scientific celebrities after the confirmation of his general theory of relativity in 1919. Although most of the public had little understanding of his work, he was widely recognized and admired. In the period before World War II, The New Yorker published a vignette in their "The Talk of the Town" feature saying that Einstein was so well known in America that he would be stopped on the street by people wanting him to explain "that theory". Eventually he came to cope with unwanted enquirers by pretending to be someone else: "Pardon me, sorry! Always I am mistaken for Professor Einstein."

Einstein has been the subject of or inspiration for many novels, films, plays, and works of music. He is a favorite model for depictions of absent-minded professors; his expressive face and distinctive hairstyle have been widely copied and exaggerated. Time magazine's Frederic Golden wrote that Einstein was "a cartoonist's dream come true". Many popular quotations are often misattributed to him.

Awards and honors: Einstein received numerous awards and honors, and in 1922, he was awarded the 1921 Nobel Prize in Physics "for his services to Theoretical Physics, and especially for his discovery of the law of the photoelectric effect". None of the nominations in 1921 met the criteria set by Alfred Nobel, so the 1921 prize was carried forward and awarded to Einstein in 1922.[7]

Einstein, one of the greatest inventers of the world propounded many such theories that will always keep him alive in the hearts of the scientists. The world of Physics is incomplete without him and his theories. The more the time advances, the more will be his reputation.

References:-

1. Whittaker, E. (1 November 1955). "Albert Einstein. 1879–1955". Biographical Memoirs of Fellows of the Royal Society. 1: 37–67. doi:10.1098/rsbm.1955.0005. JSTOR 769242.
2. "The Gold Medal" (PDF). Royal Astronomical Society. Archived (PDF) from the original on 20 December 2016. Retrieved 20 December 2016.
3. "Membership directory". National Academy of Sciences. Archived from the original on 20 December 2016. Retrieved 20 December 2016.
4. Wells, John (3 April 2008). Longman Pronunciation Dictionary (3rd ed.). Pearson Longman. ISBN 978-1-4058-8118-0.
5. Yang, Fujia; Hamilton, Joseph H. (2010). Modern Atomic and Nuclear Physics. World Scientific. p. 274. ISBN 978-981-4277-16-7.
6. Bodanis, David (2000). $E = mc^2$: A Biography of the World's Most Famous Equation. New York: Walker.
7. The Nobel Prize in Physics 1921". Nobel Prize. Archived from the original on 3 July 2015. Retrieved 11 July 2016.
8. Howard, Don A., ed. (2014) [First published 11 February 2004]. "Einstein's Philosophy of Science". Stanford Encyclopedia of Philosophy. The Metaphysics Research Lab, Center for the Study of Language and Information (CSLI), Stanford University. Archived from the original on 13 April 2016. Retrieved 4 February 2015.
9. Howard, Don A. (December 2005). "Albert Einstein as a Philosopher of Science" (PDF). Physics Today. 58 (12): 34–40. Bibcode:2005PhT....58l..34H. doi:10.1063/1.2169442. S2CID 170769196. Archived (PDF) from the original on 28 August 2015. Retrieved 8 March 2015 – via University of Notre Dame, Notre Dame, IN, author's personal webpage.
10. "Physics: past, present, future". Physics World. 6 December 1999. Retrieved 1 August 2014.
11. "Result of WordNet Search for Einstein". 3.1. The Trustees of Princeton University. Archived from the original on 28 August 2015. Retrieved 4 January 2015.
12. Levenson, Thomas (9 June 2015). "The Scientist and the Fascist". The Atlantic. Archived from the original on 12 May 2015. Retrieved 23 August 2015.
13. Paul S. Boyer; Melvyn Dubofsky (2001). The Oxford Companion to United States History. Oxford University Press. p. 218. ISBN 978-0-19-508209-8.
14. "Albert Einstein on nuclear weapons | Wise International". wiseinternational.org. Retrieved 23 October 2014.
15. Galison (2000), p. 377.
16. "Scientific Background on the Nobel Prize in Physics 2011. The accelerating universe" (PDF). Nobel Media AB. p. 2. Archived from the original (PDF) on 16 May 2012. Retrieved 4 January 2015.
17. Overbye, Dennis (24 November 2015). "A Century Ago, Einstein's Theory of Relativity Changed Everything". The New York Times. Archived from the original on 1 January 2014. Retrieved 24 November 2015.
18. Robinson, Andrew (30 April 2015). "Did Einstein really say that?". Nature. 557 (30): 30. Bibcode:2015Natur.557...30R. doi:10.1038/d41586-018-05004-4. S2CID 14013938. Archived from the original on 9 November 2016. Retrieved 21 February 2016.
19. "Albert Einstein – Biography". Nobel Foundation. Archived from the original on 6 March 2007. Retrieved 7 March 2007.
20. "Albert Einstein (1879–1955)". Jewisth Virtual Library. Archived from the original on 9 March 2015. Retrieved 13 February 2016.
21. Isaacson, Walter (2009). "How Einstein Divided America's Jews". The Atlantic. Archived from the original on 26 January 2016. Retrieved 13 February 2016.
22. Stachel (2002), pp. 59–61.
23. Barry R. Parker (2003). Einstein: The Passions of a Scientist, Prometheus Books, p. 31
24. University of Pavia. "Einstein, Albert". Museo per la Storiadell'Università di Pavia. University of Pavia. Retrieved 7 January 2014.

25. Fölsing (1997), pp. 30–31.
26. Stachel et al. (2008), vol. 1 (1987), doc. 5.
27. Mehra, Jagdish (2001). "Albert Einstein's "First Paper"". Golden Age Of Theoretical Physics, The (Boxed Set Of 2 Vols). World Scientific. ISBN 978-981-4492-85-0. Retrieved 5 January 2016.
28. The Three-body Problem from Pythagoras to Hawking, MauriValtonen, Joanna Anosova, Konstantin Kholshevnikov, AleksandrMylläri, Victor Orlov, KiyotakaTanikawa, (Springer 2016), p. 43, Simon and Schuster, 2008
29. Isaacson (2007), p. 16.
30. Bloom, Howard (2012). The God Problem: How a Godless Cosmos Creates (illustrated ed.). Prometheus Books. p. 294. ISBN 978-1-61614-552-1. Retrieved 8 August 2016. Bloom, Howard (30 August 2012). Extract of page 294. Prometheus Books. ISBN 978-1-61614-552-1. Retrieved 8 August 2016.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

Shape of a Node in Tracing of Algebraic Curves

Anil Maheshwari* Bhuvnesh Kumar Sharma**

Abstract - Node is an important aspect of the phenomenon of tracing a curve.For a curve, a node is defined as a double point with two real and different tangents. Our main focus in this paper is to identify the shape of node while tracing an algebraic curve.Also, in this paper an assumption is presented for electrical circuits related with an algebraic curve.Somepractical examples are being presented here to explain the further details.
Keywords: Node, Curve tracing, Algebraic curve.

Introduction: Few of the researchers presented the various aspects of tracing different curves. A method for comparing curve tracing with curve extraction has been discussed by K. Raghupathy and T.W. Parks[1]. Procedure for handling tracing of a curve through the leading eigen vector of the matrix concerned with the curve has been discussed by E Bas and D Erdogmus [2].

In many articles of various books, the procedure for obtaining multiple points and describing their characteristics is explained. B V Ramana [3] explained the same for a multiple point of order two i.e. a double point in some detail. In this paper, shape of node (a kind of double point) in tracing of algebraic curves is discussed. Several important practical examples are given to explain the proposed study.

Further, an assumption is presented here for electrical circuits related with an algebraic curve.

Procedure of Curve Tracing and finding Nodes for an Algebraic Curve: As per [3], to trace an algebraic curve of the form

$$ay^n + (bx+c)\,y^{n-1} + (dx^2+ex+f)\,y^{n-2} + \ldots + u_n x = 0, \quad \ldots(1)$$

initially we have to define its symmetry and region of existence. Then we have to find all real asymptotes for the curve. After which, it is important to know that whether the given curve intersects with origin and other points of coordinate axes and if it intersects, then to know about all real tangents at these points. If we find two or more real tangents at any point, then the point is known as a multiple point. Any multiple point of order two is known as a double point. Now, we may obtain two different scenarios with a double point having two real tangents viz. both real tangents may be same or different. For two real and same tangents, the double point is known as a cusp and for two real and different tangents, the double point is known as a node.

In order to trace the curve, we have to combine all characteristics discussed above along with the basic mathematical and geometrical concepts.

Examples:

Example - 1 $x^3 + y^3 = 3axy$ ... (2)

For tracing above curve (2), we use the procedure as discussed above and obtain its sketch as shown below:

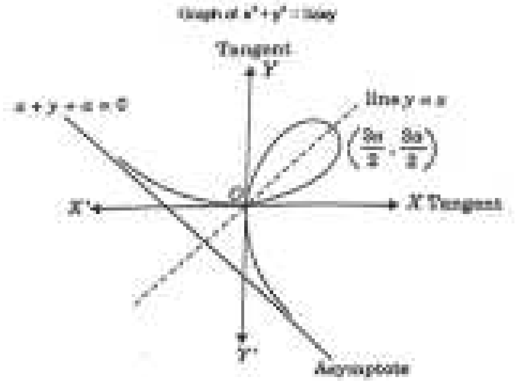

Example - 2 $y^2(a+x) = x^2(b-x)$ ... (3)

For tracing above curve (3), we use the similar procedure as discussed above and obtain its sketch as shown below:

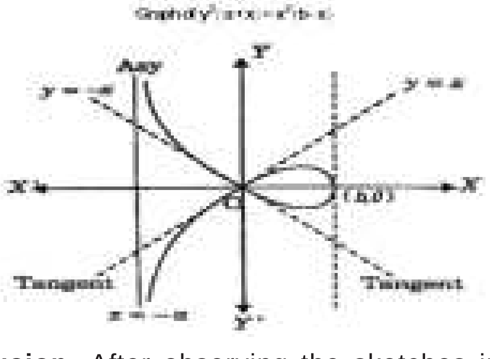

Conclusion: After observing the sketches in above examples, it is obvious to say that we obtain loop for these curves at node in particular. It can also be verified with many

*Engineering College, Ajmer (Raj.) INDIA
** Engineering College, Jhalawar (Raj.) INDIA

other examples. Also, the loop may exist in any quadrant or quadrants as per the other characteristics of the curve. Thus, it can be said that the thrust to know about shape of node in tracing of an algebraic curve ends in a loop.

By correlating above results, it is also assumed that if an electrical circuit can be designed for any algebraic curve, then the looping may be observed at any node junction of the circuit.

References:-

1. K. Raghupathy and T.W. Parks,Improved curve tracing in images. IEEE International Conference on Acoustics, Speech, and Signal Processing,May17-21,(2004) doi:10.1109/ICASSP.2004.1326611
2. E Bas and D Erdogmus,Principal Curve Tracing. Conference Proceedings of 18th European Symposium on Artificial Neural Networks, Bruges, Belgium, April 28-30, (2010)
3. B V Ramana, Curve Tracing: Curves in Cartesian Form, Higher Engineering Mathematics. McGraw Hill Education (India) Private Limited, 5.1 - 5.4 (2014) ISBN: 978-0-07-063419-0

****

A Research Study on the Challenges and Best Practices of Multi-Skill Development Among Human Resources Professionals

Dr. Syed Saleem Aquil*

Abstract - The traditional concept of management entails effectively utilising the workforce; however, the true essence of management lies in converting workforce and intelligence into efficient and productive human capital. Management represents a ubiquitous phenomenon, actively permeating every facet of life. Its principles are not confined to business organisations but extend to everyday activities.

As a fundamental practice, management is indispensable in traditional domains such as human resource management, personnel management, and industrial relations and in emerging areas like communication, counselling, training and development, and job enrichment.

In both manufacturing and service industries, the 'human resource' is not just a component, it's the most crucial human capital. While it's relatively easy to acquire materials, machines, methods, and money, the real challenge is in producing the 'right product' of good 'quality'. This requires high-quality human resources, in addition to the 4Ms, emphasising the pivotal role of human capital in quality production.
Keywords: Human Resource Management (HRM), Human Resource Development (HRD), Planning, Talent Management, Multi-skill development.

Introduction: The active involvement of human resource managers is important in formulating business plans. Objectives are based on the organisational plan. Assets having utility are classified as resources, which include tangible and intangible assets. Management principles are universally applicable, which enhance resource utilisation. Any excess object or entity possessing inherent utility is classified as a resource. These resources include tangible assets such as land, forests, coal, machinery etc. and intangible assets such as sound health, knowledge, freedom, mental ability and social harmony, all of which inherently possess utility.

Management goes beyond business entities, it is an all-pervasive concept that pervades all aspects of life. Its principles are not confined to boardrooms alone, but are equally relevant in clubs, families, schools, sports teams and social gatherings such as weddings, picnics and parties. Effective utilisation of physical, capital and human resources follows directly from applying these universal management principles and concepts.

Research Methodology: The primary purpose of this research paper is to conduct basic or fundamental research, also known as pure or fundamental research. This type of research is not driven by practical applications, but solely by the interest and desire to expand the knowledge base, thereby increasing our understanding of the subject.

The presented research is explanatory and generates new ideas and theories in various areas of human resource development and management.

Meaning of Management: Management encompasses more than mere task completion; it involves the cultivation of individuals through the purposeful application of work. A proficient manager, by understanding the significance of their role in the bigger picture, not only delegates responsibilities but also fosters the growth and learning of their team members, contributing to the overall success of the organization.

Management is the art and skill of strategizing, organizing, implementing, ongoing supervision, and inspiring a collective responsible for operating an entity or guiding human endeavours toward specific goals, resulting in high-quality, favourable outcomes in the shortest possible timeframe.

Human Resource Management and Development:

Human Resource and Human: Human relations is often referred to as human resources, focusing on the importance of morale within the organisation and the need to foster positive working relationships between management and the workforce. This is vital in the pursuit of increased organisational effectiveness and productivity. The term 'relations' itself encompasses various concepts that capture the essence of its meaning.

Understanding human relations provides a manager with leadership abilities. Every manager works with a group of personnel to achieve specific objectives through the labor force. Good human relations techniques such as active

* Asst. Professor, Kalyan P.G. College, Bhilai (C.G.) INDIA

listening, conflict resolution and team building naturally motivate the labor force to work better. Human relations is the relationship between an individual and a group of others. It means improving the ability of individuals to work together. Human resource management is a philosophy, while human resource development is an important part of it. It includes activities and processes undertaken to promote the intellectual, moral, psychological, cultural, social and economic development of individuals in an organization. This emphasis on personal development underlines the importance of each individual, making the audience feel valued and important.

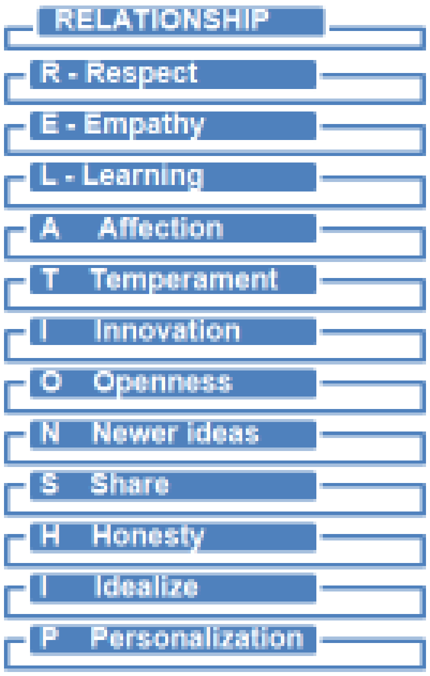

Aspects of Human Resource Management: The various aspects of human resource can be understood as follows,

Along with globalisation, the information revolution is also growing very fast. Organisations need to adapt to changes in technology and changing issues in people management. As a management practice, HRM includes all the traditional areas of personnel management and industrial relations and relatively new areas such as communication, counselling, training and development, and service promotion.

Industries (manufacturing or service) consider human resource as the most important input. It is quite easy to obtain materials, machines, methods and money (4Ms) and to hire men/women, but the difficulty lies in obtaining the 'right product', i.e., good quality. To make a quality product, 'quality human resources' is also required.

The term 'population' is considered 'human resource', a scarce resource in many countries. This resource needs to be converted into a gift or asset for the industries that employ it. Companies engaged in human capital management (i.e., talent management) focus on providing employees with attractive opportunities, selection, training, development, promotion and organisational welfare.

Talent Management: Talent management involves identifying individuals' inherent skills, qualities and personality traits and providing them with opportunities that enable them to serve in roles that progressively enhance job satisfaction, employability and overall quality of life. Each individual has unique talents best suited for specific job profiles, and misalignment of these talents with job requirements can impede job performance. The responsibility of management, particularly the HR department, lies in the judicious and careful recruitment of candidates. The challenge is not only to attract the best talent but also to retain it. Matching the right person to the right job is an established organisational requirement. HR officers must develop the practice of active listening. The following include best practices for resource development in various functional areas to facilitate multi-skill development:

1. Process of selecting and recruiting the best talent
2. Allocation of tasks and responsibilities based on the innate talents and skills of the employees
3. Arrangement of induction training for new employees and special training for experienced and skilled employees
4. Development of a sense of team spirit
5. A system of healthy and transparent communication within and outside the company
6. A system of periodic performance appraisal for employees
7. Appropriate policies for career advancement
8. Policies for employee placement and transfer
9. Policies for appreciating, recognising and rewarding merit
10. Providing job security for qualified employees

Organisations require employees with diverse skills and high motivation to succeed.

Conclusion: The challenge HR professionals face today is creating an enabling organisational environment for employees. The most critical aspects are performance appraisal, appreciation, recognition, and rewards.

Performance appraisal constitutes a fundamental process in evaluating employees' competencies, encompassing both overt and latent proficiencies. Its aim is to discern strengths and areas necessitating development. This assessment profoundly contributes to

augmenting organisational efficacy by harnessing the workforce's talents and potential.

It is very important for people in an organisation to understand what a word of appreciation can mean and what impact it will have on a person's life because moral upliftment is the best incentive to motivate a person to give his best.

An organisation or business house is like a joint family in which all the workers or employees are members of the same family. An organisation without manpower is useless because only when the minds are together can plans turn into action and action into achievements. It is most important for everyone to understand the logic of working together and helping each other.

Progressive growth is the dream of every individual, group, society, firm, and institution. Achievement is necessary to establish it. To achieve the goal, a target with a defined objective is imperative. A qualified and dedicated workforce is an asset of any organisation. Any achievement should be appreciated and rewarded in the form of praise, increments, gifts, etc., which will boost the morale of the person concerned.

Rewards are a positive achievement cycle; they act as a powerful driving force for future growth. Compensation for success includes salary components, various fringe benefits, performance-linked bonuses, stock options, etc. Rewards mean recognition of employees, individually and as members of groups, for their performance and acknowledgement of their contribution to the agency's mission.

When human resources are skillfully managed and developed, they become human talent capital. Human capital provides wealth and value to the organisation. Management must be innovative and proactive to develop talent into a skilful force.

References:-

1. K. Aswathappa, Ressources Humanos y Gestion Personal Tata McGraw Hill 131 – 176
2. Chris Dukes Contracta al Personal Adecuado, Summers Dale Publishers Ltd
3. Juan. M. Human Resource Management, McGraw Hill
4. Armstrong M., Human Resource Management Practical Manual, Decima Edition. 5. Chhabda T M Human Resource Management Dhanpat Rai & Co., Edition 4
6. Gupta C. D. Human Resource Management, Sultanchand, 3rd Edition

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Rajarao's Profound Exploration of Traditional Indian Themes in his Novels

Dr. Sitaram*

Abstract - Raja Rao, a renowned Indian writer, hailed from a distinguished Brahmin family and grew up in an environment that deeply valued education and literature. His father was a teacher and an ardent lover of literature, which played a significant role in shaping Raja Rao's early literary sensibilities .Raja Rao's contribution to Indian writing in English also lies in his innovative and experimental narrative techniques. He challenged traditional storytelling conventions and embraced a distinctive narrative style that blended elements of stream of consciousness, folklore, and oral storytelling. Raja Rao's debut novel, Kanthapura, published in 1938, is considered a seminal work in the field of Indian writing in English .Raja Rao developed a deep appreciation for the profound thematic exploration and nuanced character portrayals found in their works. These literary influences later found their way into his own writing, playing an instrumental role in shaping his unique narrative style and thematic choices.
Keywords- stream of consciousness, microcosm, realisation, exploration, enlightenment.

Introduction - The present paper presents Raja Rao as a a true pioneer who made a significant contribution to Indian writing in English by introducing traditional Indian themes and narratives that were deeply rooted in the country's rich cultural heritage. His works embraced the vibrant tapestry of Indian mythology, folklore, and history, capturing the essence of India's diverse cultural fabric. Raja Rao who stands out as a true an author of Indian writing in English. His unique writing style has left an indelible mark on Indian literature, celebrating and preserving India's rich literary heritage for generations to come .The novel is set in the fictional village of Kanthapura and depicts the impact of Gandhi's ideology and the Indian independence movement on the lives of the villagers. Through the eyes of the protagonist, Moorthy, Rao skillfully weaves together themes of nationalism, social change, and the empowerment of the marginalized sections of society. Kanthapura not only established Rao as a profound storyteller but also positioned him as a leading voice in the Indian literary landscape.Raja Rao's Kanthapura is one of the finest novels to come out of mid-twentieth century India. On the surface level, the novel 'Kanthapura' (1938) by Raja Rao recounts the rise of a Gandhian nationalist movement in a small South Indian village of the same name. The village is believed to be protected by a local deity named Kenchamma. The villagers frequently pray to her for help, perform ceremonies to honour her, and thank her for their good fortune. Kenchamma exemplifies the traditional religion that Kanthapura's people gradually come to leave behind.In the novel, the protagonist Moorthy is a Brahmin. Everybody in the village calls him as 'corner house Moorthy' or 'our Moorthy'. The villagers treat him as a 'small mountain' while Gandhi as 'big mountain'. Moorthy goes from door to door carrying the message of Gandhi even to the Pariah Quarter and makes known about the political, social, economic resurrections. The British government accuses Moorthy of provoking the townspeople to inflict violence and arrests him. While Moorthy spends the next three months in prison, the women of Kanthapura take charge, forming a volunteer corps under Rangamma's (major female character) leadership.Thus, 'Kanthapura' evokes a sense of community and freedom, construed as a spiritual quality which overcomes all bounds and crosses all barriers. In his foreword to Kanthapura .The novel describes the impact of Gandhi and the struggle for freedom on a small village in southern India. Rao never presents Mahatma Gandhi as a flesh-and-blood character in his novels; he shows Gandhi's impact through the influence of Moorthy, an educated young villager who has a mystic vision of the Mahatma. Kanthapura is a work of social realism, but it is not confined to that plane alone; as critic H. M. Williams has observed, "Kanthapura, which looks in many ways like a realistic epic of the freedom struggle, turns out on introspection to be the first of Raja Rao's explorations of the nature of India." R. Parthasarathy calls the novel a "microcosm of village India" and that was perhaps Rao's ultimate aim with Kanthapura.

Published in 1960, The Serpent and the Rope is considered a masterpiece and one of Raja Rao's most significant works. The novel delves into the complexities of identity, self-discovery, and the search for spiritual enlightenment. Set against the backdrop of Europe and India, the story follows the life of Rama, an Indian scholar studying in France, as he grapples with the turbulent forces

* Lecturer (English) Swami Vivekanand Govt. College, Khetri, Jhunjhunu (Raj.) INDIA

of love, identity, and the clash between Eastern and Western spiritual traditions.The book explores themes of reality, existence, and self-realization. Throughout the novel, protagonist Ramaswamy's thought process develops in line with Vedantic philosophy.It is an autobiographical account of the narrator, a young intellectual Brahman, and his wife seeking spiritual truth in India, France, and England. The novel takes Rao's first marriage and its disintegration as its subject. Reflecting the flavor and wholeness of the traditional Indian way of life, where fact and fable, philosophy and the matter-of-fact blend into one, this semi-autobiographical novel can be called timeless, just as India herself seems timeless and other-worldly by virtue of her unchanging rituals.Rama is described as a kind young man who is somewhat frail because of his tubercular lungs. He has been living and studying in France and has married a French woman, Madeleine. Rama plans to finish his thesis on the Albigensian heresy and then to move back to India, bringing Madeleine with him. Early on in the novel, from the moment Rama first references his wife, the reader gets a sense that something is not right in their marriage. Rao explores the theme of marriage through parallel instance: Tristan and Isolde, Abelard and Heloise, the Upanishadic story of sage Yajnyavalkya and Maitreyi, Satyavan and Savithri, Rama and Sita, and Krishna and Radha. Rao has said that the novel is an attempt at "a Pauranic recreation of Indian storytelling: that is to say, the story as a story is conveyed through a thin thread to which are attached (or which passes through) many other stories, fables and philosophical disquisitions, like a mala ".Family ties on both sides do not help, and Rama's trip back to India for his father's illness forcibly reminds him of the underlying contrasts between India and Europe, and of a certain conflict between them and himself. While there he meets his friend Pratap's fiancée, Savithri, an event which is to bring many forgotten questions to the surface and to alter the whole perspective of his life.

Published in 1965,The Cat and Shakespeare further showcased Raja Rao's exceptional storytelling abilities. It is also philosophical, but in the comic mode, and presents an authentic picture of life in India in the 1940s. It is a kind of sequel to The Serpent and the Rope, which posited mukti (salvation) through jnana (knowledge). The symbol of the cat is from the philosophy of Ramanujacharya, which lays emphasis on Divine Grace, and salvation through bhakti (devotion). Just as the kitten allows itself to be carried by the mother cat, so humanity can attain salvation by complete surrender to the Divine.The Serpent and the Rope shows the hero struggling for enlightenment and looking for a guru, The Cat and Shakespeare shows the grace of the guru in operation. Rao's Govindan Nair is far from the popular image of the holy man; that this guru is credible is a measure not only of Rao's talent as a novelist but also of his deep understanding of the Indian spiritual tradition and the concept of the jivanmukta, a person who has attained salvation while continuing with worldly life.The Cat and Shakespeare stands as a testament to Rao's skill in seamlessly intertwining the mundane with the metaphysical, leaving readers captivated by its profound themes and vivid characters. Raja Rao's The Chessmaster and His Moves, published in 1988, is a testament to his continued exploration of philosophical and metaphysical themes. The novel follows the life of the enigmatic chess master, Narasimha, who seeks to unravel the mystery of existence through the game of chess. Through intricate chess moves and profound dialogues, Rao delves into concepts such as fate, free will, and the interplay between destiny and human agency. The Chessmaster and His Moves solidifies Rao's legacy as a writer who fearlessly delved into the complex realms of human existence and philosophical inquiry.

One of the defining qualities of Raja Rao's literary style is his masterful use of symbolism and metaphor. His works are replete with rich, vivid imagery that adds depth and layers of meaning to his narratives. By infusing everyday objects, natural elements, and cultural symbols with deeper significance, Rao draws readers into his world, inviting them to explore the profound themes he seeks to convey. Through his skillful use of allegory, he transcends the limitations of language, enabling readers to experience a deeper level of understanding and connection with his works. Identity and self-discovery form recurring motifs in Raja Rao's works. His characters often go on introspective journeys, grappling with questions of personal identity, cultural heritage, and their place in the world. Through their struggles and self-exploration, Rao highlights the intricacies of human existence and the universal quest for a sense of belonging and purpose. He delves into the complexities of identity formation, portraying characters who are torn between tradition and modernity, East and West, and the individual and the collective. Raja Rao's deep spiritual inquiry finds expression in his works, which are often imbued with mysticism and philosophical contemplation. He probes the depths of the human spirit, exploring concepts of divinity, transcendence, and the ultimate longing for union with the divine. Rao's narratives depict characters who embark on spiritual journeys, seeking enlightenment and inner transformation. His works serve as metaphysical explorations, inviting readers to reflect on their own spiritual quests and the eternal quest for truth and enlightenment.

Conclusion- Raja Rao's contributions to Indian literature have not gone unnoticed. In recognition of his literary prowess, he received numerous accolades and awards throughout his career. He was honored with the Neustadt International Prize for Literature in 1988, further cementing his status as a literary luminary. Additionally, Rao was appointed as the Jawaharlal Nehru Professor of Indian Civilization and Culture at the University of Texas at Austin, where he had a profound impact on shaping the discourse on Indian literature and culture. Through his writings, Raja Rao provided a platform for the representation of Indian values and traditions. He portrayed Indian society and its various communities with sensitivity, celebrating the virtues

of communal harmony, spirituality, and the age-old wisdom encapsulated in Indian philosophical traditions. Rao's narratives often dealt with universal human values such as compassion, love, and the pursuit of truth, thereby offering readers a glimpse into the ethical and moral foundations of Indian culture. His works bridged the gap between cultures, fostering a deeper understanding and appreciation of Indian values among readers from diverse backgrounds. Raja Rao's exploration of cross-cultural themes stands as a testament to his ability to forge connections between disparate cultural traditions. By weaving together Eastern and Western elements in his narratives, Rao presents readers with a unique opportunity to reflect on the shared human experiences that transcend cultural boundaries. His works delve into themes such as love, loss, and the search for meaning, allowing readers from all backgrounds to find resonance and insight in his stories. Raja Rao's influence on contemporary Indian writers is undoubtedly profound. His innovative narrative techniques, his exploration of Indian cultural elements, and his philosophical inquiries have inspired a new generation of authors to delve into their own cultural heritage and create literature that reflects the complexities of modern India. Through his exploration of traditional Indian themes, incorporation of Indian philosophical concepts, and experimentation with narrative techniques, he revolutionized the literary landscape.

References:-

1. Iyengar, K. R. Srinivasa, Indian Writing In English, Indiana University: Sterling Publishers Pvt.Ltd, 2012.
2. Narasimhaiah, C.D. Raja Rao Indian Writer Series Vol. 4, the University of Michigan: Arnold-Heinemann India, 1973.
3. Prasad, Amar Nath and Kumar Singh, Nagendra, Indian Fiction in English: Roots and Blossoms,Volume 1, New Delhi: Sarup& Sons, 2007.
4. Sharma, Kaushal, Raja Rao: A Study of His Themes and Techniques, New Delhi: Sarup and Sons, 2005.

****

शहडोल जिले के पर्यटन एवं धार्मिक स्थल के महत्व का सामन्य परिचय

अमित सिंह भदौरिया*

प्रस्तावना – शहडोल मध्यप्रदेश का एक सम्भाग और जिला मुख्यालय है। शहडोल जिले की स्थापना 1956 में मध्य प्रदेश के पुनर्गठन के सांथ ही की गई थी। वर्तमान शहडोल जिले का क्षेत्रफल 6205 वर्ग किलोमीटर है और 2011 की जनगणना के अनुसार शहडोल जिले की जनसंख्या 10,66,063 है। शहडोल जिले में 886 गाँव और 391 ग्राम पंचायत हैं। शहडोल मध्य प्रदेश के उमरिया, अनूपपुर, सीधी, सतना और छत्तीसगढ़ के कोरबा और बिलासपुर जिलों से घिरा हुआ है। शहडोल जिले की समुद्र तट से अधिकतम ऊंचाई 1123 मीटर है। इस जिले की मुख्य नदी सोन नदी और जोहिला है। शहडोल जिला में 6 तहसील –ब्यौहारी , जयसिंहनगर, सोहागपुर, गोहपारु, बुढार, जैतपुर हैं। शहडोल जिले को विभाजित कर 1998 में उमरिया और 2003 अनूपपुर को जिला बनाया गया।

2008 में शहडोल को सम्भाग बनाया गया। 2008 में शहडोल सम्भाग के अंतर्गत जिला– उमरिया और जिला–अनुपपुर आते हैं। शहडोल जिले में कई घूमने योग्य दर्शनीय और पर्यटन स्थल हैं।

शहडोल के दर्शनीय और पर्यटन स्थल– शहडोल जिले में घूमने योग्य कई एतिहसिक ,धार्मिक और प्राकृतिक स्थान हैं जो पर्यटकों और सैलानियों और इतिहासकारों को अनायास ही अपनी और आकर्षित करते हैं। शहडोल के इन दर्शनीय और पर्यटन स्थलों में मुख्य हैं–

1. **विराट मंदिर सोहागपुर शहडोल –** शहडोल जिले के दर्शनीय पर्यटन स्थलों में प्रमुख है सोहागपुरका विराट मंदिरहै। विराट मंदिर को विराटेश्वरमंदिर भी कहा जाता है। विराट मंदिर का निर्माण 950 ईसवी से 1050 ईसवी के बीच कल्चुरी नरेश युवराज देव ने करवाया था। एकजनश्रुति के अनुसार यह महाभारत काल के राजा विराट की नगरी है। महाभारत काल में पाण्डव यहाँ आये थे। मंदिर के पास ही बाणगंगा में पातालतोड़ अर्जुन कुंड है। कहा जाता है की इस कुंड का निर्माण महाभारत काल में अर्जुन ने अपने तीर से किया था। अब यहाँ एक कुंड और बाणगंगा मंदिर है।

मंदिर के गर्भ गृह में शिवलिंग स्थापित है शिवलिंग के चारो ओर जलहरी बनी हुई है। मंदिर के प्रवेश द्वार के पास ही नंदी और सिंह की प्रतिमा है। मन्दिर में भगवान् विष्णु, ब्रम्हाजी, वीणावादिनी और गणेश जी की प्रतिमा स्थापित है। मंदिर के बाहरी दीवारों पर कुछ स्थानों पर पुरुषों और महिलाओं की कामुक प्रतिमाएं है जो देखने में खजुराहो के मंदिर की तरह ही हैं। कहा जाता है की मंदिर के का सामने का हिस्सा गिर गया था जिसे 70 साल पहले रीवा के महाराजा गुलाब सिंह ने ठीक करवाया था। अभी भी मंदिर एक तरफ झुका हुआ दिखलाई देता है। वर्तमान में मन्दिर का रख रखाव पुरातत्व विभाग कर रहा है और मंदिर को संरक्षित स्मारक घोषित किया गया है। विराट मंदिर के पास विवेकानंद गार्डन भी है। बाण गंगा में प्रतिवर्ष मकर संक्रान्ति को विशाल मेला लगता है। और पर्यटन स्थलों में से एक है।

शहडोल जिले का विराट मंदिर

2. बाणसागर डैम शहडोल– बाणसागर बांध शहडोल जिले के सबसे प्रमुख दर्शनीय शहडोल जिले स्थित बाणसागर मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश और बिहार की एकबहुउद्देशीय नदी घटी परियोजना है। बाणसागर परियोजना में सोन नदी पर विशाल बाँध बनाया गया है जो मध्यप्रदेश के शहडोल जिले के देवलोंद स्थान पर निर्मित है। बाणसागर बांध की आधारशिला 1978 में पूर्व प्रधानमंत्री स्व.श्री मोरारजी देसाई ने राखी थी और 2006 को प्रधानमन्त्री स्व. श्री अटल बिहारी बाजपेयी ने इसे देश को समर्पित किया था। सोन नदी पर निर्मित बाँध की ऊंचाई 67 मीटर है। बाँध की लंबाई 1020 मीटर है जिसमें 671.71 मीटर पक्का बाँध है। बाँध के डूब क्षेत्र में 336 गाँव आये थे जिनमे 79 गाँव पूरी तरह डूब क्षेत्र में आये और 257 गाँव आंशिक रूप से डूबे थे। बाणसागर बाँध का मुख्य उदेश्य खेती हेतु पानी और बिजली का उत्पादन करना है। बाणसागर से म.प्र. के 2490 वर्ग कि.मी., उत्तर प्रदेश के 1500 वर्ग की.मी. और बिहार के 940 वर्ग की.मी. की सिंचाई होगी। और इससे 935 मेगावाट बिजली का उत्पादन भी होगा। बाण सागर शहडोल से करीब 109 की.मी. और रीवा से 55 की.मी. दूर है। यह शहडोल जिले का प्रमुख पिकनिक स्पॉट है।

बाणसागर डैम

3. **माँ कंकाली देवी मंदिर शहडोल–** शहडोल जिला मुख्यालय से 10 किलोमीटर दूर अंतरा नामक गाँव में माँ कंकाली देवी का दरवार है जहाँ मातारानी सभी की मनोकामनाओं को पूरा करती है। माँ कंकाली देवी मंदिर में साल भर भक्तों की भीड़ रहती है। मंदिर के गर्भ गृह में माँ कंकाली, माँ शारदा और माँ सिंह वाहिनी बिराजमान हैं। कहा जाता है कि माँ कंकाली की प्रतिमा 10–11 वीं सदी के कल्चुरी कालीन है।माँ कंकाली की प्रतिमा 18 भुजाओं वाली है जिनका मुंह खुला हुआ, गले में मुंडमाला लटकी हैं , शरीर पर स्पष्ट पसलियाँ होने के कारण माता का नाम कंकाली पड़ा। माता के पेरों के पास योगनियाँ,दोनों हांथों में चंड –मुंड नामक दैत्य और परम्परागत

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

आयुधा धारण किये हुए हैं। माता के दरवार में लाल कपडे में नारियल बाँधाने से भक्तों की सभी मनोकामनायें पूर्ण होती हैं। माता के दरवार में कई मुख्यमंत्री हाजिरी लगाने आ चुके हैं। नवरात्री में भक्तों की अपार भीड़ रहती है और मंदिर में जवारे रखे जाते हैं और भण्डारों का भी आयोजन होता है।

कंकाली माता मंदिर ग्राम अंतरा

4. पंचमठा मंदिर सिंहपुर शहडोल– शहडोल जिला मुख्यालय से 15 किलोमीटर दूर सिंहपुर नामक स्थान पर यह मंदिर स्थित है। लोग इसे पाण्डव कालीन मंदिर मानते हैं। यहाँ 11 रूद्र शिवलिंग स्थापित थे और लोग 11 मार्ग से इनकी परिक्रमा करते थे अब 9 मार्ग ही बचे शेष 2 मार्ग नष्ट हो गए हैं। औरंगजेब के काल में मंदिर को बहुत नुकसान पहुचाया गया। मंदिर के दरवाजे पर बहुत ही सुन्दर नक्कासी उकेरी गई है। लगभग 12 वर्ष पहले इस मंदिर पर पुरातव विभाग ने ताला लगा दिया। मंदिर लगभग 11 वीं सदी का माना जाता है। पंचमठा मंदिर परिसर में माँ काली का मंदिर है, आसपास के गाँव के लोग इन्हें कुल देवी मानते हैं शादी का न्योता सबसे पहले माता के दरबार में भेजा जाता है। माता के दरबार में हमेशा भक्तो की भीड़ रहती है। यहाँ माता काली गणेश जी की योगनियों के संग माता सरस्वती भी बिराजमान हैं। मंदिर परिसर में राम जानकी मंदिर, शिव मंदिर, सती चबूतरा भी स्थापित है।

5. लखबरिया गुफा और मंदिर– लखबरिया गुफा शहडोल जिले के बुढ़हार तहसील के अंतर्गत लखबरिया नामक स्थान पर बनाई गई हैं। लखबरिया गुफा एक महत्त्वपूर्ण दर्शनीय स्थान और पर्यटन स्थल है। जनश्रुति के अनुसार पाण्डवों ने अपने अज्ञातवास का कुछ समय शहडोल जिले में बिताया और अरझुला क्षेत्र में एक लाख गुफाओं का निर्माण किया। एक लाख गुफाओं के कारण इस गुफा का नाम लखबरिया बड़ा। अब यहाँ मात्र 13 गुफाएँ ही शेष बची हैं। कहा जाता है की हर गुफा में एक शिवलिंग है परन्तु अधिाकांश गुफाओं के अन्दर का हिस्सा मिट्टी में दब गया है।

लखबरिया गुफा और मंदिर

6. क्षीर सागर शहडोल – क्षीर सागर भी शहडोल जिले के प्रमुख पर्यटन स्थल और पिकनिक स्पॉट में से एक है। शहडोल जिला मुख्यालय से करीब 20 किलोमीटर दूर है। इस स्थान पर जोहिला नदी और मुढ़ना नदी का संगम है। जोहिला नदी पवित्र नर्मदा नदी और सोन नदी के बाद अमरकंटक से निकलने वाली तीसरी नदी है जबकि मुड़ना नदीशहडोल की एक छोटी नदी है। चारो तरफ हरियाली से घिरा यह स्थान अनायास ही सैलानियों का मन मोह लेता है। इस स्थान पर संगम स्थल के पास रेत का विशाल मैदान है जो समुद्र के बीच के सामान दिखलाई देता है।

7. मरखी माता मंदिर जमुनिहा केशवाही– शहडोल जिले के केशवाही के पास जमुनिहा नामक स्थान पर मरखी माता का प्रसिद्ध मंदिर है। मरखी माता को धूमावती माता के नाम से भी जाना जाता है। इन्हें देवी की 7 वीं विधा माना जाता है। मंदिर में माता की प्राचीन प्रतिमा है। मरखी माता धूमावती के दरवार में भक्तों की सभी मन्नत पूरी होती हैं इसीलिये यहाँ दूर दूर से भक्त आते हैं। मरखी माता नवरात्री में यहाँ भक्तों की भीड़ देखने लायक होती है। पहले इस स्थान पर माता का बहुत ही छोटी से मढिया थी। 1988 में रामसंजीवन दुबे महाराज ने जिन्हें तनिया महाराज भी कहा जाता था इस स्थान पर मंदिर के अंदरूनी भाग का निर्माण करवाया था।

8. सरफा डैम शहडोल– सरफा डैम शहडोल जिला मुख्यालय से लगभग 15 किलोमीटर दूर है। यह डैम सरफा नदी पर बना है। इस डैम के निर्माण का उद्देश्य शहडोल शहर को पानी की आपूर्ति करना है। डैम के पास बहुत ही सुन्दर गार्डन बनाया गया है। डैम के पास पंप हाउस है। पंप हाउस से कुछ ऊपर फ़िल्टर प्लांट है। डैम से पहले पानी पंप हाउस में जाता है, इसके पश्चात पानी को फ़िल्टर प्लांट भेजा जाता है। पानी के फिल्टर हो जाने के बाद यहाँ से शहडोल शहर को भेजा जाता है। डैम के पास का दृश्य बहुत ही मनमोहक है। सरफा डैम शहडोल जिले के प्रमुख पर्यटन स्थल और पिकनिक स्पॉट में से एक है।

9. जिला पुरातत्व संग्रहालय शहडोल– शहडोल के जिला पुरातत्व संग्रहालय की स्थापना 1981 में की गई थी। यह शहडोल शहर के बीचो-बीच गाँधी स्टेडियम के पास कलेक्ट्रेट से कोतवाली मार्ग पर स्थित है। संग्रहालय में शहडोल, अनूपपुर और उमरिया और डिंडोरी जिले की मूर्तियाँ और कलाकृतियों को सहेज कर रखा गया है। यहाँ की कलाकृतियों में अधिकतर हिन्दू और जैन धार्म से सम्बंधित हैं। संग्रहालय में तीन दीर्घाएं हैं। संग्रहालय में पूर्व पाषाण ,मध्य पाषाण और नव पाषाण काल में आदि मानव द्वारा उपयोग में लाये गए पत्थर के औजार भी रखे गए हैं। पुरातत्व संग्रहालय शहडोल में लगभग 318 पाषाण प्रतिमाएँ एवं वास्तु शिल्पखण्ड, 143 कलचुरि कालीन रजत मुद्राएं 86 रजत व 3 ताम्र, मुगल कालीन मुद्राऐं, 326 ब्रिटिश कालीन मुद्राएं 21 जीवाश्म है। पुरातत्व संग्रहालय शहडोल में भगवान् शिव, उमा-महेश, गणेश जी की नृत्यरत प्रतिमा, भगवान् विष्णु, नरसिंह देव, बारह अवतार, देवी की कई प्रतिमायें , महावीर स्वामी और तीर्थंकर जी की कई प्रतिमाऐं रखी हुई हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ 6 करोड़ वर्ष पुराने पेड़ पौधों और जीवों के जीवाश्म भी सहेजकर रखे गए हैं।

10. माता सिंगवाहिनी भटिया वाली जैतपुर – शहडोल जिले के जैतपुर के पास भटिया में सिंह वाहिनी माता का मंदिर है जो शहडोल जिले का प्रमुख दर्शनीय स्थान है। मंदिर पहले बहुत छोटा था अभी मंदिर का जीर्णोधार किया गया है। मंदिर में माता की प्राचीन प्रतिमा बिराजमान है। मंदिर परिसर में कुछ छोटे-छोटे मंदिर भी हैं द्य मंदिर में भक्तों की सभी मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं द्य नवरात्र में भक्तो का भारी भीड़ होती है और मेला भी लगता है। मन्दिर में गणेश जी की प्राचीन प्रतिमा है।

माता सिंहवाहिनी भटिया वाली जैतपुर

इन स्थानों के अतिरिक्त शहडोल जिले में प्रसिद्ध धनपुरी का ज्वाला मुखी माता मंदिर, बुरहार का राम जानकी मन्दिर, बुरहार का श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, ब्योहारी के पास मऊ के चिपाढ नाथ हनुमान जी आदी प्रमुख धार्मिक घूमने योग्य धार्मिक स्थल हैं। शहडोल जिले के सोहागपुर में मध्य प्रदेश की सबसे बड़ी में कोयले की खदान हैं। शहडोल जिला और उमरिया जिला की सीमा के समीप शहडोल जिला मुख्यालय से 40 किलोमीटर दूर जोहिला नदी पर स्थित जोहिला जल प्रपात और छोटी-तुम्मी बड़ी बड़ी-तुम्मी पर्यटकों के लिये आकर्षण के स्थान हैं। शहडोल जिले के निकट विश्व प्रसिद्ध अमरकंटक और बांधवगढ़ राष्ट्रीय उद्यान ऐसे दर्शनीय पर्यटन स्थान हैं जहाँ पर्यटकों को जरुर जाना चाहिए। शहडोल जिला से उमरिया और अनूपपुर जिला बनने के पहले अमरकंटक और बांधवगढ़ शहडोल जिले का हिस्सा थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जिला सांख्यकी पुस्तिका वर्ष 2016
2. जिला सांख्यकी पुस्तिका वर्ष 2016,17,18
3. जिला पुस्तिका वर्ष 2016
4. भूगोल शहडोल वि.म. मिडा,
5. शहडोल जिले का भूगोल मित्रा.वि.म.
6. रीवा राज्य दर्पण- मजूमदार आर.सी.

****

Party System in India: One-Party Dominance System to Bi-Nodal Multiparty System

D.C. Chauhan*

Abstract : India has adopted the parliamentary system of government and political parties plays crucial role in the working of parliamentary system. The Indian party system has transformed from one-party dominance system to bi-nodal multi party system. The first phase from 1952 to 1966 was one-party dominance system, The second phase from 1969 to 1970 was breakdown of one-party system, The third phase from 1971 to 1976 was revival of one-party dominance system, the fourth phase from 1977 to 1979 was two party system, the fifth phase from 1980 to 1988 was revival of one-party dominance system, the Sixth phase from 1989 to 1990 was a multiparty system, the seventh phase from 1991 to 1996 was single party system, the eight phase from 1996 to 1999 was multiparty system, the ninth phase from 1999 to 2014 was bi-nodal multiparty system.
Keywords: One-party dominance system, two party dominance system, multiparty system, bi-nodal multiparty system.

Introduction - India has adopted the parliamentary system of government from Britain and it enshrined in the Constitution of India. Political parties plays crucial role in the working of parliamentary system. The nature of Indian party system have changing from one party dominance system to bi-nodal multi-party system. The rise of regional parties promoted the coalition government and a federal party system in the country. This scenario provides the relevance of this research paper. This paper critically analyse the various stages of Indian party system and its consequences on the Indian political system. We can critically analyse the nature of the Indian party system under the following phase.

1. One-Party Dominance System (1952-1966) : The first phase from 1952 to 1966 has been characterised as one party dominance system or the Congress system. The Indian National Congress was dominant position in this phase in terms of number of seats in the legislature, its organisational strength and its capacity to influence the all sections of Indian society. The Congress party was not only a political party, but it was a system which represented, adjusted and supported by various regions, religions, castes, classes and groups of Indian society. Thus, several scholars like W.H.Morris-Jones, Rajni Kothari and Stanely A.Kochanek have been popularised this term. Rajni Kothari argued that the term 'One Party dominance' expressed India's party system more accurately. He formulated a new conceptual category the 'Congress System' to categorised the Indian party system[1]. Socialist party, Bhartiya Jan Sangh, Swatantra party and Left parties were the main Opposition parties during this period. The first general election to the Lok Sabha was held in 1952, the Congress party won 364 seats with 45 percent votes.The Congress party got the massive mandate in the Lok Sabha and it got absolute majority in 18 out of 22 State legislative assemblies owing to the major role of the party in the Indian freedom movement, charismatic leadership of Jawaharlal Nehru and grass root organisation of the party. The 2nd general election to the Lok Sabha was held in 1957 again the Congress party, got massive mandate with 371 seats in the House. The 3rd general election to the Lok Sabha was held in 1962, the Congress party won 361 seats in the House. W.H.Morris-Jones observed, India had a party system characterised by dominance coexisting with competition but without a trace of alteration[2].But, the Congress party's dominance began to erode due to India's defeat in Sino-Indian war in 1962, economic crisis, price rising of essential commodities, weakening of party organisation and death of party leader, Jawaharlal Nehru on May 27, 1964. Social groups have been demanding share in political power. The Opposition parties occupied more political space with the help of defectors from the Congress party. Some regional pasties like the Dravida Munnetra Kazhagam (DMK) in Tamil Nadu, the Akali Dal in Punjab, the Muslim League in Madras and Kerala, the Republican Party and Workers party in Maharashtra, the Ganatantra Parishad in Orissa and the Jharkhand party in Bihar have been emerged.

2. The Breakdown of One- Party Dominance System (1967-1970): The dominance of the Congress party began to erode in the second half of the decade. The 4th general election to the Lok Sabha was held in 1967 and it ended the political dominance of the Congress party. The Congress party won 283 seats only with 40.8% votes in the Lok Sabha and it defeated in eight of the seventh State legislative

*Associate Professor (PoliticalScience) Govt. College, Bawal, Rewari (Haryana) INDIA

assembly elections. Hence, non- Congress coalition governments were installed in seven states. Hence, a number of Opposition parties in the market and competition. It revealed breakdown in the Congress system of reconciliation and consensus and set in motion a series of schisms that led to a historic split in the party in 1969[3]. It led internal dissension, factionalism defections and leadership crisis in the political parties. However, the Congress party was reorganised under the leadership of Indira Gandhi in early 1970s. The new Congress became centralised, personalised and it altered its political style from accommodation to confrontation. The Congress party faced a largely united opposition in the general election to the Lok Sabha in 1971.

3. One-Party Dominance System (1971-1976): The 5th Lok Sabha election was held in March, 1971. The Congress party focused on the voters of Scheduled Castes, Scheduled Tribes, Muslims, Youths and the party gave the message 'Garibi Hatao' under the leadership of Indira Gandhi. The success of India in Indo-Pak war (1971) increased the mass support of Prime Minister Indira Gandhi. However, the Opposition parties responded it and they appealed to the voters by their slogan 'Indira Hatao', but it could not influence the peoples. Hence, the Congress party was reversed by thumping majority. It won 352 seats with 44.5 percent of votes in the Lok Sabha. It restored the dominance of the Congress party. The alliance of the Swatantra party, the Jan Sangh, the Congress (O) and Praja Socialist party were badly defeated. While major regional parties like Bharatiya Kranti Dal in Uttar Pradesh, the Bengal Congress in West Bengal, the Shiv Sena in Maharashtra, the Shiromani Akali Dal in Punjab and the Utkal Congress in Orissa performed very poor. Thus, the Opposition parties were weakened by this election. The Congress party won the State legislative assembly election in March, 1972 with landslide victory. The Congress government headed by Indira Gandhi enacted the 24th Constitutional Amendment Act, 1971, which gave Parliament the power to amend any part of the Constitution of India including fundamental rights. Also, it made mandatory for the President to approve any Constitutional Amendment Bill. The amendment was passed to response to the judgment of Golaknath case (1967). The government enacted the 25th Constitutional Amendment Act, 1971, which limited the fundamental right to property and allowed the government to take private property for public use. It exempted any law giving effect to the Article 39(b) and (c) of the Directive Principles of State Policy from judicial review. The government enacted the 42nd Constitutional Amendment Act, 1976, which called Mini-Constitution of India as it made amended the Preamble to the Constitution, 40 Articles, the Seventh Schedule and it added14 new Articles and two new Parts to the Constitution of India. It added the words Socialist, Secular and integrity to the Preamble, Article 39 A, 43 A and 48A were added to the Directive Principles of State Policy, Fundamental Duties in Article 51, 5 items moved from State list to Concurrent list, the President was obligated to follow the Cabinet's advice, suspension of fundamental rights in external emergency, the High Courts' judicial power was curtailed, the creation of All India Judicial Service, Added Article 257A, 323A, 323B and so on. In fact, the authority within the Congress party became centralised and personalised in the hands of Prime Minister Indira Gandhi. Under her supervision, the Congress parliamentary board has nominated chief minister for resignation in Congress ruled states, solved the disputes between factions of the Congress legislative parties and nominated the party officials. Stanely A. Kochanek described, it a new political prosses as the Indira Gandhi created a pyramidical decision making structure in the party and government[4]. It weakened the intra- party democracy and institution of the Congress party. The new features has emerged in Indian party system like opportunism, alliance, defection and so on. In view of economic crises, total revolution of Jai Prakash Narayan (1974) against the Congress party government and the Allahabad High Court verdict on June 12, 1975 against prime minister, Indira Gandhi, the emergency was imposed on June 25, 1975. The Opposition parties criticised the emergency as destruction of democracy in the country[5]. It has negative consequences on the peoples'. Consequently, the Congress party defeated in the Lok Sabha election in 1977.

4. Two Party System (1977-1979) : The anti-emergency wave against Indira Gandhi-led Congress party government from 1975 were emerged the major changes in the Indian party system. Hence, Janata Morcha, Bharatiya Jan Sangh, Socialist Party, Bhartiya Lok Dal and Congress for Democracy came together and they formed, the Janata Party on January 23, 1977. In 6th general election to the Lok Sabha (1977), the Janata party promised to the peoples to revive democracy, restore their freedom and re-established judicial independence in the country. On the other hand, the Congress party promised stability and progress in the country. The Janata party and its allies won 330 seats in the Lok Sabha and it got an absolute majority in the House. The Congress party won 154 seats with 35 percent votes only in the Lok Sabha and it was declined of popular vote of the party. The Janata Party parliamentary party leader, Morarji Desai, took oath as the Prime Minister on March 24, 1977[6]. Also, the Janata party and its allies won in most of the state legislative assembly election in May, 1977. Hence, the Janata party became an alternative to the Congress party and a two level party system emerged in the country. As two political parties - the Janata party and the Congress party accounted for over 80 percent of votes and seats during the period 1977 to 1979. The Janata Party government enacted the 44th Constitutional Amendment Act, 1978, which restored the five-year term for the Lok Sabha and State Legislative Assemblies, removed the right to property as a fundamental right and made it a legal right, protected freedom of speech, it gave the President the power to send back the Cabinet's advice

for reconsideration, the word internal disturbance changed by armed rebellion in Article 352, it restored the Supreme Court's power to adjudicate disputes concerning the election to the President and Vice President, it reversed the 39thConstitutional Amendment. Obviously, the amendment was introduced to restore the democratic framework and fundamental rights that were undermined during the Emergency of 1975-77. However, the Janata party government toppled the opposition Congress party ruled seven state governments and dissolved their assemblies by the use of Article 356 of the Constitution. It was against the federal democracy in the country. The Congress party once again split and the Congress (Indira) was formed in January, 1978. On the other hand, the discontent, clash of personalities, divergent ideologies, defection and lust for power weakened the Janata party government and it was collapsed in June, 1979. In fact, this was a period of conflict, defection, divergence and destruction. It led the decay and fragmentation within ruling parties and opposition parties and the institutions. The Congress party supported to the Janata party (S) leader, Charan Singh, and he formed the government on July 28, 1979 with the outside support of the Congress (I) party[7]. In fact, the Janata party (S) was a party of defectors and it was not a recognised party in the Lok Sabha. The Congress (I) party pressurised the Janata party (S) government to abolish the prosecution courts which was trail the emergency cases. It was not fulfil by the Janata party (S) government. Hence, the Congress (I) party withdrew its support to the Janata Party (S) government. It forced the resignation of the Prime Minister, Charan Singh, in one month later before facing the Lok Sabha. It led the mid-term election to the Lok Sabha in January, 1980.

5. Revival of One -Party Dominance System (1980-1989) : The 7th Lok Sabha election was held in January, 1980. The Congress (I) party had promised to the peoples of political stability, purposeful governance and progress. The Congress (I) party won landslide victory with 353 seats, a two-thirds majority and 42.7 percent of the popular vote under the leadership of Indira Gandhi. The major causes of this success were the failure of Janata party government, divided opposition, strong leadership of Indira Gandhi, need of political stability and progress of the country. The opposition party was defeated badly. Thus, the Congress (I) government formed after 33 months in January, 1980 and Indira Gandhi returned to power as-the Prime Minister on January 14, 1980[8]. It restored the Congress (I) dominance. It was revival of one-party dominance system in the country. The Congress (I) government had implemented socio-economic welfare programs. However, the government advised the President to dismissal of the Opposition parties ruled nine state governments and to dissolve their state legislative assemblies in February, 1980 on the ground that they had lost their mandate in the Lok Sabha election. It was against the federal democracy in the country. The leaders of old Jan Sangh left Janata party because of their connection to the Rashtriya Savayam Sevak Sangh (RSS) and they formed the Bharatiya Janata Party (BJP) on April 6,1980[9]. The Congress (I) party surprisingly won massive victory in the eight state legislative assembly election by 60 percent of the seats in May, 1980. The divided opposition parties could not strongly protest against the arbitrary decision of Indira Gandhi government. However, the regional parties has arised in the several states during this period. The victory of opposition parties in Haryana, West Bengal, Kerala and Nagaland was setback to the Congress (I) party. The victory of Telugu Desam Party (TDP) in Andhra Pradesh and Janata Party in Karnataka has challenged the Congress (I) party dominance. Moreover, the authoritative working of Indira Gandhi had weakened the Congress (I) party organisation and institutions. The Sikh extremists in Punjab demanded a separate State, i.e., Khalistan from Union of India. It led widespread terriorism in Punjab and other regions. But, Indira Gandhi Government could not solve the problem. The Sikh body guards shoot the Prime Minister, Indira Gandhi, on October 31, 1984 in retaliation of operation blue star at Golden temple, Amritsar. Hence, the Congress (I) party elected Rajiv Gandhi its leader and he took oath as the Prime Minister on October 31, 1984[10].

The 8th general election to the Lok Sabha was held in December, 1984. The Congress (I) party gave message of maintenance of unity and integrity of the country and it won massive victory under the leadership of Rajiv Gandhi. The Congress (I) party won 415 seats with 48.1 percent of votes, an unprecedented majority in the Lok Sabha owing to sympathy wave of Indira Gandhi assassination. Also, the Congress (I) party won in many state legislative assembly election. The Opposition parties were defeated badly as the major opposition party the BJP won only 2 seats in the Lok Sabha and a regional party, i.e., Telugu Desam Party (TDP), became largest opposition party in the House with 30 seats. It reinforced the dominance of the Congress (I) party in the multi party system of the country. Hence, the Congress (I) parliamentary party leader, Rajiv Gandhi, took oath as Prime Minister on December 31, 1984.The Congress (I) government took some major decisions like establishment of the Ministry of Personnel, Public Grievances and Pensions,1985,enactment of the Anti-Defection Act, 1985, introduction of National Policy on Education, 1986, enactment of 61thConstitutional Amendment Act, 1988, which lowered the voting age from 21 year to 18 year, enactment of Prevention of Corruption Act, 1988, settlement of Punjab, Assam and Mizoram problems and it introduced the Information technology in the country. On the other hand, the Rajiv Gandhi government passed the Muslim Women (Protection and Divorce) Act, 1986 to overturning the Supreme Court judgment in Shah Bano case (1985), in which the Supreme Court gave a landmark judgment that a Muslim Women can seek maintenance from her husband under Section 125 of the Criminal Procedure Code. It counted as one of Rajiv Gandhi's most misguided decisions. Prime Minister,

Rajiv Gandhi, personalised and centralised the power in his hands, he frequently changed the chief ministers in Congress (I) ruled states, reshuffling his cabinet and he ignored the mass supported leaders of the party. Moreover, the corruption charges in Fairfax case (1986), and Bofors case (1987) had weakened the government and it eroded the mass support of the party. In July 1987 the Opposition parties disrupted the proceedings of the Parliament and they demanded resignation of Rajiv Gandhi government on the adverse remarks in the Comptroller and Auditor General of India (CAG) report. On the other hand. V. P. Singh, former Defence Minister with his supporters of Congress (I) party formed the Jan Morcha in 1987. He formed the National Front (NF) in August, 1988 along with some regional parties. The Janata Dal was formed on October 11, 1988 with the merger of Jan Morcha, Congress(S), Janata Party and Lok Dal under the leadership of V.P.Singh[11] . It was a centrist party. The Opposition parties including rightist BJP and Left parties altogether under the leadership of V.P.Singh.

6. Multi-Party System (1989-1990) : The 9th general election to the Lok Sabha was held in November, 1989. The election was contested between ruling Congress (I) party and opposition parties led by National Front. A hung Parliament has emerged and no single party was able to secure majority in the House. The Congress (I) party emerged as the single largest party with 197 seats and 39.5 percent votes in the Lok Sabha, but his leader, Rajiv Gandhi, refused to from the government. The Janata Dal emerged as the second largest party with 143 seats in the House. Hence, The Janata Dal- led National Front (NF) government was formed. The National Front parliamentary party leader, V.P. Singh, took oath as the Prime Minister on December 21, 1989[12]. The National Front (NF) was a group of centrist and regional parties like Janata Dal, Telugu Desam Party (TDP), Assom Gana Parishad (AGP), Dravida Munnetra Kazhagam (DMK),Jharkhand Mukti Morcha (JMM) and Congress (Socialist). The NF government was a minority-cum-coalition government with the outside support of the rightist BJP and the Left parties like Communist Party of India (CPI), Communist Party of India-Marxist (CPI-M), Indian Forward Bloc (IFB) and Revolutionary Socialist Party (RSP). Thus, the participation of regional parties in multiparty system with federal coalition government has provided an opportunity to regional parties to acquire a major role in the Union Government. As Balveer Arora observed, The growth and increased prominance of regional parties... to enhance the participation of the state in national policy making.[13] The NF government formed the National Agenda for Governance. It focused on Welfare of Scheduled Castes, Scheduled Tribes, farmers, minorities, labour class to achieve its objective of social justice. It tried to efficiency in administration, increasing in agriculture production ,it promoted industrial sector and it implemented the Mandal Commission Report .It enacted the Scheduled Castes and Scheduled Tribes (Prevention of Atrocities) Act,1989. However, the NF government weakened due to dissatisfaction its leaders Chandra Shekhar and Devi Lal and the Mandal and the Mandir politics. It was forced to Prime Minister, V.P. Singh, resign after less than a year in office. The NF government headed by V.P Singh was defeated by 142/346 votes on confidence motion in the Lok Sabha on November 7, 1990.[14] Consequently, Janata Dal was split and Chandra Shekhar became the leader of Janata Dal (Socialist). The Congress (I) supported to JD(S) leader, Chandra Shekhar, to form the government. Hence, the Janta Dal (S) leader, Chandra Shakhar, formed the government on November 10, 1990 with the outside support of the Congress (I) [15]. However, the Janta Dal (S) minority-cum-coalition government could not stable and it could not face the economic crisis of the Country. Subsequently, the Congress (I) party withdrew its support to the JD(S) government to fulfil its political interests. Hence, Chandra Shekhar government was forced to resign after four months period, but he advised the President to mid-term poll.

7. One-Party System (1991-1996) : The 10th Lok Sabha election was held in May-June, 1991. The assassination of Rajiv Gandhi on May 21, 1991 was a major swing of sympathy votes in favour of the Congress (I) party. Thus, the Congress (I) party emerged as the single largest party with 244 seats in the Lok Sabha, but its popular votes had declined from 39.5 percent to 36.4 percent. Thus, the Congress (I) party formed the government and its parliamentary party leader, P.V. Narsimha Rao, took oath as the Prime Minister on June 21, 1991[16]. The All India Anna Dravida Munetra Kazhagam (AIADMK), Muslim League, Kerala Congress (Mani group), Janata Dal (Gujarat) and Sikkim Sangram Parishad (SSP) supported the Congress (I) government. Later on, it obtained support from Telugu Desam Party (TDP), Jharkhand Mukti Morcha (JMM) and Rashtriya Lok Dal (RLD). The Congress (I) minority government headed by P.V.Narshimha Rao had initiated the economic reforms on July 24, 1991, he conducted the party's organization election and he provided the stable government to the country. It enacted 73rdConstitutional Amendment Act, 1992, which established the Panchayati Raj System and it enacted the 74th Constitutional Amendment Act, 1992, which gave Constitutional Status to the urban local bodies. These amendments strengthened the local level governance in the country. But, the Congress (I) government was unable to check on Ayodhya carnage on December 6,1992 and a series of corruption scandals. It weakened the Narsimha Rao government and it reduced the mass support of the Congress (I) party. In spite of that the Congress (I) government led by Narsimha Rao successfully solved the economic crisis, it improved the economic growth and it had completed its tenure of five years.

8. Multi-Party System (1996-1998) : The 11th general election to the Lok Sabha was held in May-June, 1996. A hung parliament has emerged and no any political party got absolute majority in the Lok Sabha. The BJP has

emerged the single largest party with 163 seats and 21 percent votes. Hence, the President, Shankar Dayal Sharma, invited the BJP parliamentary party leader, Atal Bihari Vajpayee, to form the government and he took oath as the Prime Minister on May 16, 1996.[17] But, the all other political parties decided not to support the BJP government because of thier so-called communal face. It forced the resignation of Atal Bihari Vajpayee government after 13 days. It was the shortest tenure of government in the parliamentary history of the country. The leaders of Janata Dal, Left parties and some regional parties to go hand altogether and they formed the United Front (UF). It was an alliance of 14 centrist, regional and left parties like Janata Dal, Samajwadi party,CPI, CPI-M, IFB, RSP, Tamil Manila Congress, DMK, TDP, AGP, All India Indira Congress (Tiwari-group), Karnataka Congress party and Madhya Pradesh Vikas Congress. It was a third front at national level politics of the country. Hence, the UF multi party coalition government was formed headed by H.D. Deve Gowda on June 1, 1996[18]. The Communist Party of India (CPI) was participated in the Union Council Ministers for the first time. The Congress (I) supported the UF government from the outside. It led federalisation and regionalisation of the Indian party system. Robert L. Hardgrave and Stanley A. Kochanek observed, These parties were led by strong regional leaders and highlighted the growing regionalisation of the Indian party system.[19] The UF allies formed the Common Minimum program (CMP). The UF government focused on welfare of farmers, SC, ST, OBC and Minorities. It introduced the Gujral doctrine for friendly relations with South Asian Countries. However, the UF coalition government could not took any major policy decision owing to personality of Prime Minister, H.D. Deve Gowda and contradictions among coalition partners. The Congress (I) party withdrew its support from the UF government on the issue of Central Bureau of Investigation (CBI) use against Congress (I) leaders. Later on, the Congress (I) party was agreed on the name of Inder Kumar Gujral as a consensus candidate for the post of Prime Minister. Hence, Inder Kumar Gujral formed the second UF coalition-cum-minority government. He took oath as the Prime Minister on April 21, 1997[20]. However, the Congress (I) party again withdrew its support from the UF government after the Jain Commission Report (1997) and refuse to drop the DMK ministers by the UF government. Hence, the country faced a bi-election to the Lok Sabha in 1998.

The 12th Lok Sabha election was held in March, 1998. The BJP has moderate and it dropped its Hindutava agenda and it expanded geographically in south and east and socially in SC, ST, OBC and poor. The BJP made alliance with regional parties to oppose the Congress (I) alliance. The fragmentation in the party system is continued as Mamta Benerjee formed the All India Trinamool Congress (TMC) in West Bengal, the Janata Dal (Hegde) was formed in Karnatka, the Biju Janata Dal (BJD) in Orissa and the Rashtriya Janata Dal (RJD) in Bihar were formed. A hung parliament has emerged. The BJP emerged as the single largest party with 179 seats and 25.5 percent votes in the Lok Sabha. The BJP and its allies won 254 seats with 37.1 percent votes. The Congress (I) party won 111 seats and 134 seats with its allies. Hence, the BJP-led minority-cum-coalition government headed by Atal Bihari Vajpayee was formed. Atal Bihari Vajpayee took oath as the Prime Minister on March 19, 1998[21]. The BJP allies were Shiv Sena, Shiromani Akali Dal, Samata Party, Lok Jan Shakti Party, Biju Janata Dal, All India Dravida Munnetra Kazhagam (AIADMK), Pattali Makkal Katchi (PMK), Trinamool Congress (TMC), Marumalarchi Dravida Munnetra kazhagam (MDMK), Telangana Rashtra Samithi (TRS), Arakshan Virodhi Party (AVP) etc. The BJP-led coalition government formed a National Agenda for Governance .The BJP dropped its Hindutva agenda like construction of Ram temple at Ayodhya, deletion of Article 370 from the Constitution and introduction of Uniform Civil Code for the support of its coalition partners. The BJP developed a consensus with its coalition partners for smooth functioning of the coalition government. However, Vajpayee government was forced to resign on April 17, 1999 as it defeated by one vote on the no – confidence motion on the floor of the Lok Sabha. It paved the mid-term election to the Lok Sabha.

9. Bi- Nodal Multi Party System (1999-2014) : The 13th Lok Sabha election was held in October, 1999. It was the third mid-term election within a period of four years. The BJP-led alliance formed the National Democratic Alliance (NDA). The NDA consisted 24 political parties named BJP, Shiv Sena, Shiromani Akali Dal, Samata party, Janata Dal (United), Lok Shakti, Janata Dal (Sharad group), Telugu Desam Party, Dravida Munnetra Kazhagam (DMK), Maharashtrawadi Gomantak Party (MGP), Telanga Rashtra Samithi (TRS), Marumalarchi Dravida Munnetra Kazhagam (MDMK), Pattali Makkal Katchi (PMK), MGR-Kazhagam, MGR-ADMK, Biju Janata Dal, Trinamool Congress(TMC), Janata Dal (Patel), Sikkim Democratic Front, Arunachal Congress, Manipur State Congress, Loktantrik Congress, Jantatntrik Bahujan Samaj Party, Himachal Vikas Party, Indian National Lok Dal and Democratic Bahujan Samaj Morcha. The NDA highlighted the foreign origin issue of Congress (I) president Sonia Gandhi and its Success in Kargil war (1999) and their campaign influenced the voters. On the other hand, the Congress (I) and its allies RJD, AIADMK, Kerala Congress (Mani group), Muslim League and Rastriya Lok Dal (RLD) responded with the promise of secularism, political stability, economic growth and welfare of weaker sections of the society. The United Front was disintegrated, because Left front reduced and H.D.Deve Gowda formed the Janata Dal (Secular). The BJP emerged as the single largest party with 182 seats and 23.8 percent votes. The NDA won 299 seats in the Lok Sabha. The Congress (I) won 111 seats with 28.4 percent votes and 134 seats with its allies in the House. Thus, the BJP-led NDA formed the government. The NDA parliamentary party leader, Atal Bihari Vajpayee, took oath as the Prime Minister

on October 13, 1999[22]. The ten allied parties were represented in the BJP-led NDA coalition government. The NDA-partners formed the National Agenda for Governance. Again, the BJP had moderate its Hindutava Agenda and it cooperated to the coalition partners. The NDA coalition government focused on the National Agenda for Governance. In spite of pressure from RSS, BJP organization and internal resistance of coalition partners like AIADMK, TMC and Samata Party, the NDA government provided political stability, good governance and 8.5 percent economic growth to the country. Moreover, the nuclear test at Pokhran in May, 1998, the emergence of information technology and business services industries created self confidence in the NDA leaders. Hence, the NDA leaders launch "India Shining "campaign. The coalition government decided to early election to the Lok Sabha to renew its mandate.

The 14th general election to the Lok Sabha was held in May, 2004. The BJP has formed the pre-poll alliance with 11 political parties and formed the NDA. The NDA consisted of twelve political parties named BJP, Shiv Sena, Shiromani Akali Dal, Janata Dal (United), Biju Janata Dal (BJD), All India Dravida Munnetra Kazhagam (AIADMK), Telugu Desam Party (TDP), Trinamool Congress (TMC), Indian Federal Democratic Party (IFDP), Sikkim Democratic Front (SDF) and National Democratic Front (NDF). The election was faught between two coalition of political parties like BJP and its allies on the one side and Congress (I)party and its allies on the another side. The Congress (I) emerged as the single largest party with 145 seats and its allies won 77 seats unexpectedly. Thus, the Congress (I) alliance won 222 seats in the Lok Sabha. The BJP-led NDA won 188 seats only in the Lok Sabha. Hence, the Congress (I) party and its allies formed the United Progressive Alliance (UPA) and they formed its Common Minimum Program (CMP). The UPA consisted 14 political parties named Congress(I), Nationalist Congress Party (NCP), Rashtriya Janata Dal (RJD), Dravida Munnetra Kazhagam (DMK), Pattali Makkal Katchi (PMK), Marumalarchi Dravida Munnetra Kazhagam (MDMK), Telangana Rashtra Samithi (TRS), Republican Party of India (RPI), National Conference, Lok Jan Shakti Party (LJP), Jharkhanda Mukti Morcha (JMM), Muslim League, Kerala Congress, Rajiv Congress, and People's Democratic Front (PDP). The Samajwadi party, Bahujan Samaj Party (BSP), CPI, CPI-M, IFB and RSP supported the coalition government from the outside. On the other hand, the BJP, the RSS and the fundamentalists criticised the Congress (I) president, Sonia Gandhi, on her foreign origins and demanded that a foreign-born Sonia Gandhi cannot accept as Prime Minister of India. Hence, Sonia Gandhi stepping aside and she nominated Manmohan Singh as Prime Minister of the country. Thus, the Congress (I)-led UPA formed the coalition government under the leadership of Manmohan Singh. He took oath as the Prime Minister on May 22, 2004.[23] The Congress (I) party was returned to power after eight years. The Congress (I) president, Sonia Gandhi, became the Chairperson of the National Advisory Council, a coalition co-ordinating body and she played a vital role in the working of UPA government. The UPA government improved the economic growth, it stressed sustainable development and it singed the agreement with USA, France, Japan, Russia, Germany, Britain, European Union, ASEAN, G-20 and BRICS. But, the coalition partners like CPI, CPI-M, IFB, RSP and BSP were opposed the 123 US-Indo Nuclear Agreement and they withdrew their support after three years from the UPA government. The Left parties has moved a no-confidence motion in the Lok Sabha against the UPA government, but it could not pass in the House by the support of Smajwadi party, RJD, DMK, PMK and National Conference etc. In fact, the coalition partners gave priority to their political interests rather than collective responsibly of the alliance. Even they did not share the seats in the Lok Sabha election in 2009 except of RJD, PMK and MDMK.

The 15th general election to the Lok Sabha was held in May, 2009. The Congress (I) party continued to emerge as the single largest party with 206 seats in the Lok Sabha. The Congress (I)-led UPA got a clear majority with 268 seats in the House. The UPA consisted 11 political parties including two national parties and nine regional parties named Congress (I), TMC, DMK, NCP, National Conference, Muslim League (Kerala), Jharkhanda Mukti Morcha (JMM), Viduthalai Chruthaigal Katchi (VCK), BPF, Kerala Congress (M) and Republican Party of India (RPI). The BJP won 116 seats and the NDA won 159 seats with 24.24 percent votes in the Lok Sabha. The BJP-led NDA consisted BJP, Janata Dal (United), Shiv Sena, Rashtriya Lok Dal (RLD), Shiromani Akali Dal (SAD), Assom Gana Parishad (AGP), Naga People's Front (NPF) etc. Hence, the Congress (I) party-led UPA formed the government. The UPA parliamentary party leader, Minoan Singh, again took oath as the Prime Minister on May 22, 2009.24 The UPA allies formed their Common Minimum Program (CMP). The UPA government maintained the economic growth, it saved the country from the worldwide economic Recession, it strengthened the friendly relations with USA, Russia, Britain, Japan, Germany, France, Canada and so on. It preferred the trade agreement with European Union, G-7, G-20, BRICS, ASEAN and SAARC. However, the UPA government faced several challenges like insurgency in Jammu & Kashmir and North-East, Naxalite challenge to internal security and so on. The intervention of UPA chairperson Sonia Gandhi and Congress (I) party leader Rahul Gandhi in the decision making of the UPA government made the three power centre, like Prime Minister Manmohan Singh, UPA Chairperson Sonia Gandhi and Congress (I) leader Rahul Gandhi. It weakened the UPA government. Moreover, 2G Spectrum scandal, Coal Blocks allocation scandal and corruption charges on UPA leaders defamed the UPA government. It downgraded the image of UPA government and it reduced the mass support of the Congress (I) party and its allies parties.

The 16th general election to the Lok Sabha was held in May, 2014. The BJP and its 25 pre-poll allies parties strongly criticised the personality cult and dynasty factor in Congress (I) party, black money, price rising of essential commodities and corruption charges on UPA leaders. It eroded the mass support of Congress (I) party and its allies parties. The BJP made Narendra Modi as an icon of the party, Gujarat model of economic development, Nationalism and Hindutava agenda by the support of Media and Corporate sector. It increased the mass support of the BJP and it won 282 seats with 31 percent votes surprisingly in the Lok Sabha. It was surplus majority in the House. On the other hand, the Congress (I) party won 44 seats with 19.3 percent votes in Lok Sabha. The UPA won 59 seats only in the House. Hence, the BJP-led NDA government was formed. It was one-party, i.e. BJP, dominated coalition government. The NDA parliamentary party leader, Narendra Modi, took oath as the Prime Minister on May 26, 2014.25The NDA consisted 28 rightist and centrist parties like BJP, Shiv Sena, Shiromani Akali Dal, Janata Dal (United), Lok Jan Sakti Party, TDP, TRS, DMDK, National Conference etc. The NDA coalition partners formed a Common Minimum Program (CMP). The Congress (I) parliamentary party leader, Mallikarjun Kharge, recognised as a Leader of Largest Party rather than Leader of Opposition Party in the Lok Sabha by the Speaker, because the Congress (I) party won 44 seats in the Lok Sabha, which was less 1/10 seats in the House. It weakened the Opposition parties in the House. Prime Minister, Narendra Modi, has personalised and centralised the power of government and party in his hands. His most favoured minister, Amit Shah, played a vital role in the Working of government and the BJP, The NDA government toppled the Opposition parties ruled state governments in Karnataka, Uttrakhand, Assam and Goa by the use of Article 356 of the Constitution to fulfil its political interests. It was against the federal democracy in the country. The Narendra Modi government was alleged for interference in the working of institutions like Election Commission of India (ECI), Enforcement Directorate (ED) and Central Bureau of Investigation (CBI), to fulfil its political interests. It undermines the democratic governance in the country. The NDA government took some major policy decisions like Make in India, Made in India on September 25,2014, Swachh Bharat Mission on October 2, 2014, Demonetisation of currency on November 8, 2016, construction of infrastructure, establishment of Goods and Services Tax (GST), 2017, and it promoted the Corporate sector. It stressed on national security, friendly relations with USA, France, Canada, Britain, China, Russia, Germany, European Union, BRICS, G-7, G-77, G-20, ASEAN and SAARC. However, the NDA government faced several challenges like naxallite problem, insurgency in Jammu & Kashmir and North-East, China's intervention in Indian Ocean, lock down in industries, low industrial growth, unemployment, price rising of essential commodities, agitation of farmers, corruption charges in the purchasing of Rafel Aircraft and so on. But, the NDA government and the BJP has survived owing to popularity and ability of Prime Minister Narendra Modi.

In fact, the bi-nodal multiparty system has been developed in the country that is BJP-led NDA and Congress (I) -led UPA. As Robert L. Hardgrave and Stanley A. Kochanek observed, "The Indian party system is entering a new era of "bi-nodal "coalition politics organised around the two largest national parties: the BJP and the Congress (I)."[26]

Conclusion: India has a plural and multi-cultural society, which is intermediated by multi party system in the country. The Indian party system has transformed from one party-dominance system to bi-nodal multi party system. The first phase from 1952 to 1966 was one-party dominance system or the Congress system, which was dominant by the Indian National Congress and other parties played marginal role in the Indian political system. The second phase from 1967 to 1970 breakdown of the one party system, the other political parties arised in the political process and the congress party decayed. The third phase from 1971 to 1976 was revival of one-party dominance as the Congress party again played a vital role in the Indian political system. The fourth phase from 1977 to 1979 was two party system, in which the Janata party and the Congress party played their role in the Indian political system. The fifth phase from 1980 to 1988 was a revival of one-party dominance system, the Congress (I) party played a vital role in the Indian political system. The sixth phase from 1989 to 1990 was a multi-party system, in which the coalition government formed, the national and regional parties played their role in the Indian political system and federal party system developed in the country. The seventh phase from 1991 to 1996 was a single party system, in which the Congress (I) party played a vital role in the Indian political system. The eighth phase from 1996 to 1999 was multi-party system, in which the BJP and other national parties and regional parties played their role in the Indian political system. The ninth phase from 1999 to 2014 was bi-nodal multi-party system, in which the BJP-led NDA and the Congress (I)-led UPA played their vital role in the Indian political system. The Indian party system should strengthening by inner-party democracy, clear ideology, accountability of coalition politics, electoral reforms and healthy democratic conventions for successful working of the parliamentary democracy in the country.

References:-

1. Kothari, Rajni,"The Congress system in India", *Asian Survey,* vol.4, no.12, December, 1964.
2. Jones-Morris, W.H., 'Dominance and Dissent: Their Inter-relations in the Indian Party System', in W. H. Morris-Jones, *Politics Mainly Indian* (Madras: Orient Longman, 1978), p.217.
3. Palmer, Norman D., "India's Fourth General Elections," *Asian Survey*, May 7, 1967, p.277.
4. Kochanek, Stanley A., 'Mrs. Gandhi's Pyramid: The

New Congress', in Zoa Hasan (ed.), *Parties and Party Politics in India*, Oxford University Press, New Delhi, 2011, p.440.

5. *Times of India*, New Delhi, June 27, 1975.
6. *Hindustan Times*, New Delhi, March 25, 1977.
7. *Times of India,* New Delhi, July 29, 1979.
8. *Indian Express,* New Delhi, By January 15, 1980.
9. *Hindustan Times,* New Delhi, April 7, 1980.
10. T*he Hindu,* Madras, November 1, 1984.
11. *Indian Express*, New Delhi, October 12, 1988.
12. Hindustan Times, New Delhi, December 22, 1989.
13. Arora, Balveer, "Political Parties and the Party System: The Emergenc of New Coalitions", in zoa Hasan (ed.), o*p. cit.,* p.505.
14. *Hindustan Times,* New Delhi, November 8, 1990.
15. *Indian Express*, New Delhi, November 11, 1990.
16. *Times of India,* New Delhi, June 22, 1991.
17. *Hindustan Times,* New Delhi, May 17, 1996.
18. *Indian Express*, New Delhi, June 2, 1996.
19. Hardgrave, Robert L. and Kochanek, Stanley A., *India: Government and Politics in a Developing Nation,* Seventh Edition, 2008, Thomson, Boston, p.329.
20. *The Hindu,* Madras, April 22, 1997,
21. *Times of India,* New Delhi, March 20, 1998.
22. *Hindustan Times*, New Delhi, October 14, 1999.
23. *The Hindu, Madras,* May 23, 2004,
24. *Hindustan Times*, New Delhi, May 23, 2009.
25. *Times of India,* New. New Delhi, May 27, 2014.
26. Hardgrave, Robert L. and Kochanek, Stanley A., *op. cit*, p. 368.

****

Indian Foreign Policy With Reference To The Emergence Of Non-Alignment

Dr. Abhimanyu Singh Chauhan*

Introduction - From the very moment of independence as a soreign shafe in the comity of nations, Idia had to be armed with a foreign policy free India's foreign policy touched the wider horizers of the world. Keeping in view her enghtened self-interst and preveiling circumsfences India relied on three means for achieving forign policy objectives Non-alignment the temper of perce and five ideas of coemfence panchsheet chester bowler says If was a geniun of Nehru, whose vision expended for begend the borders of his own counttry, that gave to the new born state a cohesent and vioble foreign policy. "If was a cafe gorical imperafive of that policy pat India's sense of independence, self respect and dignity must be resfored after centruries of domination. Nerefor, India didn't arrovafe wife military power blocs, attenmphing insfend adopt an independet and non-pootisen line on infernational imes. But of the same fire, Idia exfended her hand of friendship for and wide. Whre there in friendship, she has tried to spengther if and whese there in herpity, she had pied to overcome it.

Every country must view the world from the point of view of its own history, geography, inperts and traditions. the loss of freedom for hearly two cempories and the partition of country along com-mind lines repurally in fluenced the formulation of Idia forign policy. After the horrible emperience of several wasrs and in line with india's own pedpons inherited from buddhe and Gandhi, Indi'a attempted to the line of her capacity and ability, to further the course of peace and in fernational unders kinding.

As early as 1920, congress passed a rerdation on foreign policy emrening on behalf of the India people the dense to cooperafe with other options and deveth friendly relifions with heighbours in 1927, Nehru anerted that India' cannot be a party of any imporialint was under foreign rule. Jawahar lal Nehru dealt at lengthe with the policy in foreign affairs which lafer came to be kumar as non-alignment.

We may mike here the factors geographical, historical, infernal and enternal, wichi defermined the India foreign policy after she attened freedom, the emtence of strong neighbours and open spent count the nampled Idia to give due considersation in strateg preparation while pging to maintfriendship with neighbours. On the others hand due to her mined economy and need to mainkin pence for the develoment of economic an well on political institations, India needed peace of any cost and thin realinsation paved the way for the adoption of peace ful coenintence and non-aligned foreign policy. To get due arristence from box power blow that had emerged out of second world war, it was necessary for India to keep itself aloof from pro has hill blow and mainkain a belance rain could be done only through a policy of non-partisenship that in non alignment.

Emergence of Non- Alignment : In international secations, Non-Alignment manifests itself in three forms- an a foreign policy doctrine of the majority of developing compries, an a specfic orientation and on a polihed moraption of developing confries i.e. NAM. the emergence of Non-Alignment was a consequence of a whold number of in fernd and expernd factors. rain emerged soon after the w.w.II when newly freed Asian states began to elabook the basic principles of their foreign policy the prolemetion of non-aligment above all, was a rejectionty the young states of political cooperation with the imperialist powers. However, non-alignmentation in roof in the ariticationial struggle. After the over throwing colonial regimes, power in many states wan ammed by national bourgeoisie circeles and the economic political infersts of the bourgesie objectively bore an anti-imperilint chareeter. Rhinclanhad no derie to ge involved is a conflict behare the world socio-economic systems fearing such a conflict sought to eskblst equitable beonien coopertion with the socialist countries, rhes the non-alignment reflected the contrifugal tendencies inherent in the developing world coured by it diversity and developing socio-economic and political differentation.

Having won its independence after a long and struborn staggle against colonial rule Idia stood at the craddle of Non-Alignment by cosponsing the Banding conference of afre-Asian state in as far back on 1950' s.

Nehru under stood very well that future of Idia' or any other newly freednation depended largely on its ability to take an independent position in informational area. Having proclimed non-alignment on the foreign policy of Inda, Nehru Prove to consolidole Idia's International position devoting particular attention to the development of cooperation with other newly born states. rain policy was perceved by many observers an newprality But Nehru was later to emphasion on many ouasions that although Idia han proclaimed its dinorcation with any blor, thin didn't empty it newpolity,

* Lecturer (Political Science) S.M.B. Govt. College, Nathdwara (Raj.) INDIA

passiovity or irolation in world affairs norclaid if men sitting on fence.

Idia' viewed her foreign policy of non-digament as a news of activity translating the principles of pence ful coerintence into life. In the system of Idian foreign policy principles, a special place was outpied by the problem of peace & security in the region. profile thin, Idia's rejection of both hape and workpalt striken & hold and imaginative intiative Nehru the formulater of non- alignemnt sent we propose on for an possible to keep away from the power politics of groups aligned against one another which hadled in the past, two world wars and which mightagin lend to another hostility.

Indian foreign olicy marked by a constructive and sober approach to finding ways for rerlving awafe confliciting situations arising in different region of globe. It was thin non-partition policy.

of India that ledher play an all important role in the rerolving of koren crin. unmindful of U.S. might India condemned the united for shosoring a U.N. reatation seeting to enter into north koreh even the purpose of eviciting Norte koren forces form south kore wan fulfilled similar efforp were made by Idia' in congo

rhe positive charcter of Idi'as forign policy course was also mainfested in the fort that it embraced position which are esemtially antiinperidist and of not only rised thin slogen bed followed it. Idia ardently opposed to the Dutes coliamatation of Idoneria and made in apped to the U.N. in this regard. Cifewise Idia supported cibyen and Nanmibin demand for independence. She vehemently opposed to the raist policies of south africa and Israel and contried to abandone its diplomtic fies with there nations. If also opposed incrimint nation against Negors in the U.S. and white minerities zimbables.

India always shown fifth in peaceful coeminfence which in enemplified by the principle of panchsheel' the five ideas of peaceful coemtence of nations of the world and which wasn propounded by Idia alongwith chive in 1954. Even during pakintin aggrenation in kashiner in 1998 and by chine in 1962, India showed upmost restraist but at the same time defenced it eff countionrly.

Another feature of the Idia foreign policy was its sustained efforts to bring about dnarmement. Idia considered that driarment would not only free menking from the fear of extimtion but also release immense resocres all over the globe for development purpose, so dearly needed by under woued countires.

India forign policy simultaneourly tried to empence Idia's world image by playing important roles in international arence. If concluded pade path with neighbouring and other nations to brounder Idia's interes.

Rhin develoption to the cause of peace to the policy of non- alignment, struggle for securing justice and equality in both political and economic relations and to the course of eliminating any manifestation of colonialines or racism- there have been the landmarkes of Idia foreign policy from the day she altaired freedom and gined world wide appreciation. The efforts of Nehru to adopt on indepedent line in foreign affairs won undoubledly ——————— since we needed an environment of peace and pan quility to expand our self relience, any involvement in power poltion of option might have doined on that dmestphere. rin policy of Non- pignment raperally come under acid test during all these years and with the end of cold war and dimoppearnce of the blox has coft Idia's to review on policy and infact she can done so. changing world needs transfaction in policy but of the same fine our redimental frenchmenfales need not to be alfered altogether.

Ardeation history, Naalinal Nehru in formulation lench of foreign policy pancl sheed peaceful csemistence peaceful solation of world problems, aviding power flors and militory parts. an imperident and afraent pursing diarment promation of infertiona through UNO, elenation of Idia's Iternational Image enclation (cripical) .

Reference:-

1. Personal research.

****

Socio-Emotional Impact of the World of Warcraft

Dr. Chakrapani Upadhyay*

Introduction -This quantitative cross-sectional research work examines the social and emotional impact of the World of Warcraft (WOW) on compulsive game players. Research was conducted using online surveys which contained measures for demographics, gameplay, internet gaming disorder (IGD), depression, loneliness, self-esteem, generalized anxiety, and social anxiety.

Massively multiplayer online roleplaying game (MMORPG) are of interest in the study of problematic game play due to their reputation for being problematic both anecdotally and in research. World of Warcraft (WOW), released in 2004, is an MMORPG with millions of players (Statista, 2014). The game features players interacting with each other within a fantasy world via avatars. Players are encouraged to cooperate and compete with each other.

Addictive Nature Of Wow: WOW has a noxious degree of notoriety as being addictive. Hence there are a plethora of ameliorating options. There are dedicated websites where players share their stories of addiction, YouTube videos of players deleting their characters while talking about how the game addiction ruined their lives, and news articles about players lamenting their addiction to the game. WOW, which as a game should have had therapeutic value, ended up as a short cut to IGD.

IGD is defined as a "persistent and recurrent use" of internet-based games leading to clinically significant problems (APA, 2013). The disturbance must be within a 12-month period.

Consequences: There are many consequences to excessive WOW play which include physical, mental, social and emotional problems. These problems range from mild muscular discomfort, to feelings of isolation, symptoms of depression, and in rare cases, death. This section discusses some social and emotional consequences experienced by people affected by problematic play and related disorders. Big time gaming can provide social interaction for individuals who live far away from others with similar interests, providing feelings of camaraderie, companionship and even love in a virtual world. But in a real world, the scenario reverses. A systematic review by Mullan and Sublette (2010) found a trend between increased gaming ability and decreased ability to socialize in real life in their review of studies on problematic gameplay. The detrimental effects of video games are commonly observed in the loss of social network, poor marks in school, and work problems when compared to the isolated deaths due to health complications (Mullan & Sublette, 2010).

Feeling of loneliness is found to be significantly predictive of problematic game play (Lemmens et al., 2010). It can be very painful when the isolation becomes absolute and there is no perceived way out.

A two-year longitudinal study of 851 players by Lemmens, Valkenburg, and Peter (2011) found a significant correlative relationship between gaming and self-esteem. Lemmens et al. (2011) found that lower social skills and self-esteem were associated with pathological gaming six months later.

The researcher analyzed the construct of self-esteem with respect to gaming modalities. Previous research on the connection between self-esteem and IGD suggested that players would often play to ameliorate feeling low self-esteem and fulfill self-esteem needs (Lemmens, et al. 2011). The regression showed that self-esteem was not predictive of IGD ($p = 0.378$). There was no significant relationship ($p = 0.55$) between IGD and player guild membership. However, greater number of hours played per week ($p < 0.05$) was found to be predictive of IGD.

Similarity To Substance Abuse: The core components of addiction are non-resilience, mood modification (temper tantrums), intolerance, withdrawal symptoms, conflict, and relapse. The negative issues that are commonly associated with excessive video game use include conflict, withdrawal, relapse, and non-resilience (Wood, 2007), all of which are core components of addiction.

The impact on social behaviour was found similar to substance addiction. Problematic gaming has been seen to lead to lost friendships, divorces, family break ups, neglect of important family commitments, and relationship discord. The name of the forum, formed by some afflicted partners of hard-core gamers, Widows of WOW, speaks volumes of the alienation and isolation felt due to the addiction.

*Lecturer (Sociology) Government College, Nathdwara (Raj.) INDIA

Conclusion: Different user narratives paint very stark images of the socio-emotional toll of gaming on the stakeholders. The worst part of the story is that players continue to play despite acknowledging IGD in order to avoid feeling loss of community. Such players make repeated attempts to stop gaming, but relapse to rectify withdrawal symptoms. The vicious cycle begins once again and the negative behaviour pattern gets reinforced with each failed attempt. The above illustration however, is a simple speculation and the development of IGD is much more complex; especially with concurrent mental disorders contributing.

References:-

1. American Psychiatric Association. (2013). Internet gaming disorder, *Diagnostic and statistical manual of mental disorders* (5th edition). Retrieved from http://0dsm.psychiatryonline.org.darius.uleth.ca/doi/full/10.5555/appi.books.9780 890425596.Conditions forFurtherStudy
2. Lemmens, J. S., Valkenburg, P. M., Peter, J. (2011) Psychosocial causes and consequences of pathological gaming. *Computers in human behavior*. 27, 144- 152
3. Mullan, B., & Sublette, V. A. (2010, November 17). Consequences of play: A systematic review of the effects of online gaming. *Mental health and addiction*, 10, 3-23.
4. Statista (2014) Number of World of Warcraft subscribers from 1st quarter 2005 to 3rdquarter 2014. Statista: The Statistics Portal. Retrieved November 26th 2014 from http://www.statista.com/statistics/276601/number-of-world-of-warcraft-subscribers-by-quarter/
5. Wood, R. T. A. (2007). Problems with the concept of video game “addiction”: Some case study examples. *Mental health and addictions*, 6, 169-178.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64728)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) October to December 2017, Vol. III

अर्थशास्त्र का इतिहास : एक व्यापक अध्ययन

डॉ. दिलीप पीपाड़ा*

शोध सारांश – यह शोध लेख अर्थशास्त्र के ऐतिहासिक विकास की एक समग्र झलक प्रस्तुत करता है। अर्थशास्त्र की उत्पत्ति प्राचीन सभ्यताओं की सामाजिक और आर्थिक संरचनाओं से हुई, जहाँ यह जीवन के मूलभूत पक्षों जैसे –कृषि, व्यापार, श्रम और कर प्रणाली आदि से जुड़ा था। भारतीय संदर्भ में कौटिल्य का अर्थशास्त्र ग्रंथ इसका प्राचीन प्रमाण है, जबकि पश्चिम में प्लेटो, अरस्तू और बाद में एडम स्मिथ जैसे विद्धानों ने इसे दर्शन और तर्क के आधार पर विकसित किया। मध्यकालीन धार्मिक दृष्टिकोणों से होते हुए, आधुनिक काल में यह एक स्वतंत्र वैज्ञानिक अनुशासन के रूप में स्थापित हुआ। इस लेख में प्राचीन काल से लेकर समकालीन वैश्विक अर्थव्यवस्था तक की प्रमुख आर्थिक विचारधाराओं, सिद्धांतों और परिवर्तनों का विश्लेषण किया गया है, जिससे यह समझने में सहायता मिलती है कि वर्तमान आर्थिक प्रणाली किस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से विकसित होकर यहाँ तक पहुँची है।

प्रस्तावना – अर्थशास्त्र शब्द की उत्पत्ति यूनानी शब्द 'Oikonomia' से हुईहै, जिसका अर्थ है 'गृह प्रबंधन'। कालांतर में इस अवधारणा ने सामाजिक, राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर संसाधनों के उपयोग, उत्पादन,विनिमय, वितरण, राजस्व और खपत की नीतियों को शामिल करते हुए एक पूर्ण विज्ञान का रूप ले लिया। अर्थशास्त्र मानव जीवन का एक ऐसा अभिन्न अंग है, जो प्रारंभ से ही समाज की संरचना और विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है। यह केवल धन या संसाधनों के आदान-प्रदान का अध्ययन नहीं है, बल्कि यह इस बात की समझ भी प्रदान करता है कि मनुष्य अपने सीमित संसाधनों का उपयोग अधिकतम संतोष के लिए किस प्रकार करता है। अर्थशास्त्र का इतिहास हमें यह दिखाता है कि किस प्रकार विभिन्न सभ्यताओं, दार्शनिकों और नीतिकारों ने समय-समय पर आर्थिक विचारों को गढ़ा और उन्हें व्यवहार में उतारा। प्राचीन भारतीय ग्रंथों से लेकर आधुनिक वैश्विक पूंजीवाद तक, अर्थशास्त्र की अवधारणाएँ न केवल समय के साथ बदली हैं, बल्कि समाज की जरूरतों, राजनीतिक परिवर्तनों और तकनीकी विकास के अनुरूप विकसित होती गई हैं। इस लेख में हम अर्थशास्त्र के ऐतिहासिक विकास की विभिन्न धाराओं, विचारों और परिवर्तनों का विश्लेषण करेंगे।

प्राचीन काल का अर्थशास्त्र – प्राचीन काल का अर्थशास्त्र समाज के नैतिक, धार्मिक और राजनीतिक ढांचे से गहराई से जुड़ा हुआ था। उस समय आर्थिक गतिविधियाँ केवल लाभ कमाने तक सीमित नहीं थीं, बल्कि जीवन-व्यवस्था, न्याय और सामाजिक संतुलन का अभिन्न हिस्सा मानी जाती थीं। भारत में कौटिल्य का अर्थशास्त्र ग्रंथ न केवल शासन और नीति का मार्गदर्शक था, बल्कि उसमें कृषि, व्यापार, कर, श्रम और राजकोष संबंधी व्यवस्थाओं का विस्तृत वर्णन मिलता है। इसी प्रकार, प्राचीन ग्रीस में प्लेटो और अरस्तू जैसे दार्शनिकों ने भी अर्थव्यवस्था को नैतिकता और राज्य व्यवस्था से जोड़ा। यह काल आर्थिक सोच के बीज बोने का युग था, जिसने भविष्य की आर्थिक अवधारणाओं की नींव रखी। इस शोध सारांश में प्राचीन काल की आर्थिक नीतियों, दृष्टिकोणों और उनके सामाजिक प्रभावों का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

यूनानी विचार– यूनानी विचारधारा ने अर्थशास्त्र के प्रारंभिक दर्शन और नैतिक आधार को गहराई से प्रभावित किया। प्राचीन ग्रीस के दार्शनिकों विशेषत: प्लेटो और अरस्तू ने आर्थिक गतिविधियों को केवल लाभ अर्जन के माध्यम के रूप में नहीं, बल्कि समाज की नैतिक और राजनीतिक संरचना के एक आवश्यक अंग के रूप में देखा। प्लेटो ने अपने ग्रंथ 'द रिपब्लिक' में आदर्श राज्य की परिकल्पना करते हुए श्रम विभाजन और आर्थिक न्याय की अवधारणाएँ प्रस्तुत कीं। अरस्तू ने अपने ग्रन्थ 'पोलटिक्स' में धन के दो रूपों प्राकृतिक (आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु) और कृत्रिम (व्यापार के लिए) धन का विश्लेषण किया, और यसूद (ब्याज) को अनैतिक मानते हुए उसकी आलोचना की। यूनानी विचारों ने यह स्पष्ट किया कि अर्थव्यवस्था केवल वस्तुओं और सेवाओं का आदान-प्रदान नहीं, बल्कि सामाजिक कल्याण और नैतिक संतुलन की दिशा में एक साधन है। यह सारांश यूनानी अर्थशास्त्रीय दृष्टिकोणों की गहराई और उनके दीर्घकालिक प्रभावों का संक्षिप्त विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

मध्यकालीन आर्थिक विचार – मध्यकालीन काल में आर्थिक विचारधारा धार्मिक और सामंती संरचनाओं के प्रभाव में विकसित हुई। इस युग में आर्थिक गतिविधियाँ स्वतंत्र रूप से नहीं, बल्कि धार्मिक नैतिकता और सामंती नियंत्रण के अधीन संचालित होती थीं। यूरोप में चर्च का प्रभुत्व आर्थिक नीतियों पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, जहाँ 'न्यायपूर्ण मूल्य', 'सूद निषेध और यनैतिक व्यापार' जैसे सिद्धांतों पर बल दिया गया। इस काल के प्रमुख विचारकों जैसे थॉमस एक्विनास ने आर्थिक न्याय को धर्मशास्त्र के साथ जोड़ा। भारत में, इस समय मुगल शासन के अंतर्गत कृषि और व्यापार आधारित अर्थव्यवस्था का विस्तार हुआ, और साथ ही शाही कर व्यवस्था, बाजार नियंत्रण एवं व्यापार मार्गों का विकास देखने को मिला। यह काल आर्थिक स्थिरता के साथ-साथ सांस्कृतिक और व्यापारिक आदान-प्रदान का भी युग था। इस सारांश में मध्यकालीन अर्थशास्त्र की धार्मिक, नैतिक और प्रशासनिक संरचनाओं का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है, जो आगे चलकर आधुनिक आर्थिक सोच की नींव बने।

आधुनिक अर्थशास्त्र का उद्भव – आधुनिक अर्थशास्त्र का उद्भव अठारवीं शताब्दी में उस समय हुआ जब विज्ञान, तर्क और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की अवधारणाएँ समाज में तेजी से फैल रही थीं। इस युग ने अर्थशास्त्र को एक स्वतंत्र, विश्लेषणात्मक और सैद्धांतिक अनुशासन के

* अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय महाविद्यालय, नाथद्वारा, राजसंमद (राज.) भारत

रूप में स्थापित किया। एडम स्मिथ की कृति 'वेल्थ ऑफ नेशन'(1776) को आधुनिक अर्थशास्त्र की नींव माना जाता है, जिसमें 'स्वत: संचालित बाजार' और व्यक्तिगत हित के माध्यम से सामाजिक कल्याण की अवधारणा को प्रस्तुत किया गया। इसके पश्चात डेविड रिकार्डो, थॉमस माल्थस और जॉन स्टुअर्ट मिल जैसे क्लासिकल अर्थशास्त्रियों ने मूल्य निर्धारण, व्यापार, जनसंख्या और पूंजी के उपयोग और पूंजी निमार्ण की दर से आर्थिक विकास पर प्रभाव जैसे विषयों पर महत्वपूर्ण सिद्धांत विकसित किए। इस दौर में पूंजीवाद, मुक्त बाजार और आर्थिक स्वतंत्रता जैसे विचारों ने आर्थिक सोच को नई दिशा दी। इस प्रकार से यह आधुनिक अर्थशास्त्र की उत्पत्ति, उसके प्रमुख सिद्धांतों और विद्वानों के योगदान का संक्षिप्त विश्लेषण प्रस्तुत करता है।सतरहवीं और अठारवीं सदी में विज्ञान और तर्क की पुनर्जागरण लहर के साथ-साथ आर्थिक सोच में भी क्रांति आई।

एडम स्मिथ – एडम स्मिथ को आधुनिक अर्थशास्त्र का जनक माना जाता है, जिनकी प्रसिद्ध पुस्तक 'वेल्थ ऑफ नेशन' (1776) ने आर्थिक चिंतन को एक वैज्ञानिक और स्वतंत्र अनुशासन के रूप में स्थापित किया। स्मिथ ने 'स्वत: संचालित बाजार' (अदृश्य हाथ) की अवधारणा प्रस्तुत की, जिसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति अपने स्वार्थ की पूर्ति हेतु कार्य करता है, किंतु उसका यह प्रयास अनजाने में समाज के समग्र कल्याण में सहायक बनता है जैसे एक किसान अपने लाभ की दृष्टि से अधिक से अधिक उत्पादन करना चाहता है पर उसके इस प्रयास से देश के कुल उत्पादन मे भी वृद्धि होती है इसी प्रकार से एक उद्योगपति का भाव अधिक से अधिक उत्पादन करने का होता है जिससे देश के उत्पादन मे भी वृद्धि होती है । उन्होंने श्रम विभाजन , मूल्य सिद्धांत, और सीमित सरकारी हस्तक्षेप जैसे सिद्धांतों को व्याख्यायित किया, जो आगे चलकर पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की आधारशिला बने। उनके विचारों ने व्यापार की स्वतंत्रता, प्रतिस्पर्धा और उत्पादन की कुशलता को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस प्रकार से एडम स्मिथ के प्रमुख आर्थिक सिद्धांतों और उनके दूरगामी प्रभावों का संक्षिप्त विश्लेषण प्रस्तुत करता है, जो आज भी वैश्विक आर्थिक नीतियों को प्रभावित करते हैं।

डेविड रिकार्डो, थॉमस माल्थस, और जॉन स्टुअर्ट मिल आदि का योगदान – आधुनिक अर्थशास्त्र के विकास में डेविड रिकार्डो, थॉमस माल्थस और जॉन स्टुअर्ट मिल जैसे विचारकों ने गहरा प्रभाव डाला। डेविड रिकार्डो ने अपने 'सापेक्ष लाभ' सिद्धांत के माध्यम से अंतरराष्ट्रीय व्यापार की व्यवहारिक नींव रखी और 'भूमि लगान' के सिद्धांत द्वारा आय वितरण पर प्रकाश डाला। थॉमस माल्थस ने जनसंख्या वृद्धि और संसाधनों की सीमितता के बीच के तनाव को उजागर करते हुए अपनी जनसंख्या का सिद्धांत प्रस्तुत किया, जो बाद के आर्थिक और सामाजिक विमर्शों में अत्यंत प्रभावशाली सिद्ध हुआ। वहीं, जॉन स्टुअर्ट मिल ने नैतिकता, स्वतंत्रता और उपयोगिता सिद्धांत को अर्थशास्त्र में शामिल करते हुए इसे सामाजिक न्याय और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के साथ संतुलित करने का प्रयास किया। इन तीनों विद्वानों के विचारों ने क्लासिकल अर्थशास्त्र को एक सशक्त और बहुआयामी दृष्टिकोण प्रदान किया, जो आज भी आर्थिक सिद्धांतों और नीतियों की बुनियाद माने जाते हैं।

समकालीन आर्थिक विचारधाराएँ – समकालीन आर्थिक विचारधाराएँ बीसवीं शताब्दी की सामाजिक, राजनीतिक और वैश्विक घटनाओं से गहराई से प्रभावित रही हैं। महामंदी के दौर में जॉन मेनार्ड कीन्स ने पारंपरिक अर्थशास्त्र को चुनौती देते हुए सरकार की सक्रिय भूमिका की वकालत की और 'कीन्सियन अर्थशास्त्र' की आधारशिला रखी, जो आज भी आर्थिक मंदी से निपटने का एक प्रमुख दृष्टिकोण है। इसके विपरीत, मिल्टन फ्राइडमैन और अन्य नव-शास्त्रीय अर्थशास्त्रियों ने मौद्रिक नीति और मुक्त बाजार की प्राथमिकता पर बल दिया। वहीं, कार्ल मार्क्स ने पूंजीवाद की आलोचना करते हुए वर्ग संघर्ष और श्रमिक शोषण पर आधारित 'मार्क्सवादी अर्थशास्त्र' का सिद्धांत प्रस्तुत किया, जिसने वैकल्पिक आर्थिक व्यवस्थाओं की सोच को जन्म दिया। समकालीन युग में वैश्वीकरण, तकनीकी विकास, पर्यावरणीय संकट और असमानता जैसे मुद्दों ने आर्थिक सोच को और भी व्यापक, जटिल और बहुआयामी बना दिया है।

जॉन मेनार्ड कीन्स – जॉन मेनार्ड कीन्स बीसवीं शताब्दी के सबसे प्रभावशाली अर्थशास्त्रियों में से एक थे, जिनकी विचारधारा ने पारंपरिक क्लासिकल अर्थशास्त्र को चुनौती दी और आधुनिक आर्थिक नीतियों की दिशा बदल दी। 1930 के दशक की महामंदी के दौरान, जब वैश्विक अर्थव्यवस्था चरम संकट में थी और बेरोजगारी चरम पर पहुँच गई थी, तब कीन्स ने 'द जनरल थ्योरी ऑफ ऐम्पलोयमेंट इंन्टरेस्ट एंड मनी' (1936) ग्रंथ के माध्यम से यह सिद्ध किया कि अर्थव्यवस्था को केवल बाजार की 'स्वत: संतुलन' या किसी अदृश्य हाथ की कल्पना कर और व्यक्तिगत स्वार्थ की भावना से सामाजिक लाभ होने की शक्ति पर नहीं छोड़ा जा सकता। उन्होंने यह तर्क दिया कि मंदी की स्थिति में सरकार को सार्वजनिक व्यय, रोजगार सृजन और मौद्रिक नीति के माध्यम से मांग को प्रोत्साहित करना चाहिए। कीन्स का मानना था कि सक्रिय सरकारी हस्तक्षेप से ही आर्थिक स्थिरता और पूर्ण रोजगार प्राप्त किया जा सकता है। उनके सिद्धांतों ने 'कीन्सियन अर्थशास्त्र' को जन्म दिया, जिसने युद्ध के बाद कई दशकों तक विश्व की प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं की नीतियों को मार्गदर्शन प्रदान किया।

कार्ल मार्क्स– कार्ल मार्क्स एक क्रांतिकारी विचारक, दार्शनिक और अर्थशास्त्री थे, जिन्होंने पूंजीवादी व्यवस्था की आलोचना करते हुए आर्थिक सोच की एक वैकल्पिक धारा प्रस्तुत की। उनकी प्रमुख रचना यदास केपिटल में उन्होंने यह विश्लेषण किया कि पूंजीवाद में श्रमिकों का शोषण निहित है, जहाँ पूंजीपति वर्ग श्रमिकों के श्रम से अधिशेष मूल्य 'अतिरेक मूल्य' अर्जित करता है और संपत्ति की असमानता लगातार बढ़ती जाती है। मार्क्स के अनुसार अब तक का इतिहास वर्ग संघर्षों का इतिहास है, और पूंजीवाद का अंत एक सामाजिक क्रांति द्वारा होगा, जिससे एक वर्गविहीन, समाजवादी व्यवस्था की स्थापना होगी। उन्होंने उत्पादन के साधनों पर सामाजिक स्वामित्व, श्रम के मूल्य और ऐतिहासिक भौतिकवाद जैसी अवधारणाओं को विकसित किया, जिनका प्रभाव न केवल अर्थशास्त्र पर, बल्कि समाजशास्त्र, राजनीति और वैश्विक आंदोलनों पर भी पड़ा। मार्क्सवादी अर्थशास्त्र ने विकासशील देशों, श्रमिक आंदोलनों और साम्यवादी विचारधाराओं को प्रेरित किया, और आज भी यह असमानता व सामाजिक न्याय जैसे विषयों पर गहन विचार का आधार बना हुआ है।

मिल्टन फ्राइडमैन –मिल्टन फ्राइडमैन बीसवीं शताब्दी के एक प्रमुख अमेरिकी अर्थशास्त्री थे, जिन्होंने नव-शास्त्रीय अर्थशास्त्र और मुक्त बाजार प्रणाली के प्रबल समर्थक के रूप में वैश्विक अर्थनीति को गहराई से प्रभावित किया। उन्होंने 'मौद्रिकवाद' की अवधारणा को आगे बढ़ाया, जिसके अनुसार मुद्रा की आपूर्ति को नियंत्रित करना आर्थिक स्थिरता के लिए अत्यंत आवश्यक है। फ्राइडमैन ने कीन्सियन अर्थशास्त्र की उस धारणा का विरोध किया, जिसमें सरकार के हस्तक्षेप को आवश्यक माना गया था। इसके विपरीत, उन्होंने तर्क दिया कि अत्यधिक सरकारी हस्तक्षेप से आर्थिक अक्षमता और मुद्रास्फीति बढ़ती है। उन्होंने स्वतंत्र बाजार व्यवस्था, व्यक्तिगत

स्वतंत्रता और सीमित सरकार का समर्थन किया, और यह विश्वास जताया कि बाजार स्वयं को संतुलित करने की क्षमता रखता है। उनकी पुस्तक 'केपिटलिज्म एंड फ्रीडम' मे यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि आर्थिक स्वतंत्रता राजनीतिक स्वतंत्रता का आधार होती है। फ्राइडमैन के विचारों ने विशेष रूप से 1970 और 1980 के दशक की आर्थिक नीतियों जैसे कि अमेरिका और ब्रिटेन में उदारीकरण और निजीकरण पर गहरा प्रभाव डाला।

भारत में आधुनिक आर्थिक विकास – भारत में आधुनिक आर्थिक विकास का प्रारंभ औपनिवेशिक काल से जुड़ा हुआ है, जब ब्रिटिश शासन के दौरान देश की पारंपरिक अर्थव्यवस्था को एक नया रूप दिया गया। हालांकि इस काल में बुनियादी ढांचे जैसे रेलवे, डाक सेवा और वाणिज्यिक कृषि का विकास हुआ, लेकिन यह विकास मुख्यतः ब्रिटिश हितों की पूर्ति के लिए था, न कि भारतीय समाज के समग्र उत्थान के लिए। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत ने योजना आधारित अर्थव्यवस्था का मार्ग अपनाया, जिसमें समाजवादी सोच के अंतर्गत सार्वजनिक क्षेत्र, भारी उद्योगों और केंद्रित योजना निर्माण को प्राथमिकता दी गई। प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू की अगुवाई में पंचवर्षीय योजनाओं की शुरुआत हुई, जिनका उद्देश्य औद्योगीकरण, गरीबी उन्मूलन और आत्मनिर्भरता प्राप्त करना था। 1991 में आर्थिक उदारीकरण की नीतियों के तहत भारत ने वैश्विक अर्थव्यवस्था के लिए अपने द्वार खोले, जिससे विदेशी निवेश, निजीकरण और मुक्त व्यापार को बढ़ावा मिला। इस परिवर्तन ने भारत की अर्थव्यवस्था को तीव्र गति से विकासशील राष्ट्रों की पंक्ति में खड़ा कर दिया। आज भारत एक मिश्रित अर्थव्यवस्था के रूप में वैश्विक मंच पर अपनी भूमिका को लगातार मजबूत कर रहा है।

निष्कर्ष – उपरोक्त आधार पर यह कहा जा सकता है कि अर्थशास्त्र का इतिहास मानव समाज के विकास की कहानी का एक महत्वपूर्ण अध्याय है, जो हमें यह समझने में सहायता करता है कि कैसे विभिन्न युगों, विचारधाराओं और परिस्थितियों ने आर्थिक सोच और नीतियों को आकार दिया। प्राचीन काल में जहाँ अर्थशास्त्र धर्म, नैतिकता और शासन से जुड़ा हुआ था, वहीं आधुनिक युग में यह एक विश्लेषणात्मक और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के रूप में उभरा। एडम स्मिथ, कीन्स, मार्क्स, फ्राइडमैन जैसे महान विचारकों ने अपने-अपने समय में अर्थशास्त्र को नई दिशा दी और समाज की जटिल आर्थिक समस्याओं के समाधान प्रस्तुत किए। भारत में भी आर्थिक विचारधारा का समृद्ध इतिहास रहा है, जो प्राचीन ग्रंथों से लेकर स्वतंत्रता के बाद की योजनाओं और 1991 के उदारीकरण तक विस्तृत है। आज जब विश्व निरंतर बदलती आर्थिक चुनौतियों जैसे आर्थिक, सामाजिक,राजनीतिक,प्रादेशिक असमानता, जलवायु परिवर्तन और वैश्विक अस्थिरता का सामना कर रहा है, तब इतिहास से प्राप्त आर्थिक ज्ञान और अनुभव हमें अधिक न्यायपूर्ण, संतुलित और समावेशी विकास की दिशा में सोचने की प्रेरणा देते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. कौटिल्य - अर्थशास्त्र
2. एडम स्मिथ- 'वेल्थ ऑफ नेशन'
3. जान मैनार्ड कीन्स ने य द जनरल थ्योरी ऑफ ऐम्पलोयमेंट इंन्टरेस्ट एंड मनी
4. कार्ल मार्क्स 'दास केपिटल'
5. भारत सरकार - आर्थिक सर्वेक्षण (वर्षवार)

****

राजा रणमत सिंह का ऐतिहासिक परिचय

डॉ. फिरोज मोहम्मद शेख*

प्रस्तावना – लाल रणमत सिंह कोठी खानदान से संम्बन्धित हैं तथा कोठी वालों का सम्बन्ध रीवा नरेशों से रहा है। अत: ठा. रणमत सिंह के खानदान का वंश वृक्ष जानने के लिए हमें कोठी राज्य के बारे में जानना आवश्यक है।

कर्णदेव के छोटे भाई कंधर देव को कसौटा इलाका भाई–बॉट में मिला था। लेकिन आधुनिक शोधार्थियों के अनुसार गहोरा के सातवें राजा भदेयचन्द्र देव के सबसे छोटे पुत्र चन्द्र सेन को कसौटा का इलाका भू–भाग बॉटें में मिला। कोठी राज्य कसौटा के घराने से ही पैदा हुआ है। कसौटा के महाराजा कल्याण सिंह के इकलौते पुत्र फतेह सिंह जी थे। फतेह सिंह के पॉच पुत्र थे जिनमे दूसरे नम्बर के पुत्र मकरंद राय थे। तथा इन्हीं के वंशज कोठी के संस्थापक माने जाते हैं।

मकरंद राय को कसौटा राज्य में अमिलिया ठिकाना मिला हुआ था, किन्तु गृह कलह के कारण ये अमिलिया ठिकाने का परित्याग करके सुहावल राज्य में दीवान के पद पर कार्यरत हो गए। अत: महाराजा सुहावल ने उनकी सेवाओं से प्रसन्न हो कर अपने राज्य का एक हिस्सा (लगभग आधा) इन्हें दे दिया, यही कालान्तर में कोठी राज्य बना। कोठी के राज्य का रूप धारण करने का इतिहास निम्नानुसार है।

मकंरद राय के दो पुत्र हुए (1) भगवंत राय (2) जगत राय। जगत राय की मित्रता रीवा के महाराजा अमर सिंह के ज्येष्ठ पुत्र फतेहसिंह से थी। ज्येष्ठ पुत्र होने के बावजूद भी रीवा की गद्दी उनके छोटे भाई अनूप सिंह को मिली , क्योंकि अनूप सिंह बड़ी रानी के पुत्र थे और फतेह सिंह छोटी रानी के लड़के थे। ऐसा कहा जाता है कि फतेह सिंह को रीवा में अच्छा नहीं लगता था अत: वह अक्सर अमिलिया में ही अपने मित्र जगत राय के पास रहते थे। अमर सिंह के स्वर्गवास के समय जब अनूप सिंह को शासन की बागडोर सौंपी गयी। उस समय वह मात्र 16 वर्ष के नाबालिग राजा थे। इस समय रीवा राज्य की परिस्थिति डॉवांडोल थी। परिस्थिति का लाभ उठाकर 1640 ई. में ओरक्षा के बुंदेला राजा जुझार सिंह के भाई पहाड़ सिंह ने एक विशाल सेना के साथ रीवा पर आक्रमण कर दिया। अनूप सिंह शासन का भार कुछ सरदारों पर छोड़कर बाँधवगढ़ आ गए। इस समय फतेह सिंह अमिलिया में जगत राय के यहाँ थे। जब उन्हें अनूप सिंह के बाँधवगढ़ भाग जाने का समाचार मिला तो वे तत्काल सेना का संगठन कर जगत राय के साथ रीवा के लिए रवाना हुए और रीवा आकर यहाँ के सैनिकों को भी साथ लेकर पहाड़ सिंह पर भीषण आक्रमण किया। इसका परिणाम यह हुआ कि पहाड़ सिंह को पराजित होकर रीवा से भागना पड़ा। फतेह सिंह ने इसके बाद बाँधवगढ़ से अनूप सिंह को लाकर पुन: रीवा की गद्दी पर बैठाया और स्वयं जगत राय को साथ लेकर चाचा इन्द्रजीत सिंह के पास चले गए जो कि पथरहट के इलाकेदार थे।

इन्द्रजीत सिंह से फतेह सिंह को निर्वाह के 42 गाँव मिले, जिनमें तीसा का परगना भी शामिल था। इसी बीच फतेह सिंह का विवाह उचेहरा के परिहार राजा पृथ्वी सिंह की पुत्री रमण कुमारी के साथ हुआ ओर पृथ्वी सिंह ने फतेह सिंह को सोहाबल समेत 12 गाँव दहेज में दिए , किन्तु ये गाँव कर देने वाले सन्यासियों के अधिकार में थे। इससे फतेह सिंह को सन्यासियों की सत्त समाप्त कर देने के लिए संघर्ष करना पड़ा और इसमें वे सफल भी हुये। इस संघर्ष में जगत राय नें फतेह सिंह को पूरा सहायोग दिया था। तद्रुपरान्त दोनों लोगों ने आपसी सहयोग के द्वारा और भी समीपवर्ती इलाकों पर आक्रमण करके कब्जा कर लिया और सोहाबल को राजधानी बनाया अब सोहाबल राज्य में – (1) सोहाबल (2) दुर्जनपुर (3) बैसा (4)सिंहपुर (5) रौढ़ा (6) डेहुटा (7) झाली (8) रैगाँव (9) भाजीखेर (10) जसो (11) तीसा , इस प्रकार कुल 11 परगने सम्मलित हो गए थे इसके अन्तगर्त 483 गाँव थे तथा कुल वार्षिक आमदनी लगभग 16,70,000 रूपये थी।

फतेहसिंह की इस महान सफलता में जगत राय का विशेष हाथ था। उन्होंने प्रत्येक युद्ध में फतेह सिंह की सहायता की थी। इससे फतेह सिंह ने 'तीसा' परगना जगतराय को निर्वाह के लिए दिया। इसी 'तीसा' परगने से 1852 ईसवीं में कोठी राज्य की स्थापना हुई। जिसके वास्तविक संस्थापक जगत राय थे। इस परगने में 30 गाँव समाहित थे।

(ii) मनकहरी के बघेल – रघुराज सिंह के समय के तत्कालीन लेखक मौलवी रहमान अली ने अपनी पुस्तक ' तोहफा ए खान बहादुर' में लिखा है कि जगत राय के चार पुत्र हुये।

(1) अंगद राय (2) भारथ शाह (3) उदवंत सिंह (4) चतुर शाह

अंगदराय कोठी के शासक बनाए गए और दूसरे पुत्र भारथ शाह को मनकहरी गाँव भाई–बाँट में मिला। कई अन्य लेखों में भारथ शाह का नाम भारत शाह भी लिखा हुआ मिलता है। इस प्रकार मनकहरी के बघेलों का संस्थापक मैं भारथ शाह को मानता हूँ।

भारत शाह अत्यंत पराक्रमी और वीर योद्धा थे। कोठी राज्य का विस्तार व उसका नाम रोशन करने में उन्होंने बड़ी सहायता की। इन्होंने कई युद्धों में भाग लिया और विजय प्राप्त की। इनके पुत्र हठी सिंह हुए , जिन्होंने कोठी के शासकों की ही सहायता नहीं की बल्कि बुन्देलखण्ड और रीवा राज्य के शासकों को भी युद्ध में सहायता पहुँचायी। ये लोग इनके युद्ध कौशल से काफी प्रभावित थे। हठी सिंह के दो पुत्र हुए– (1) खुमान सिंह (2) केसरी

* व्याख्याता (इतिहास) हाडारानी राजकीय महाविद्यालय, सलूम्बर, जिला उदयपुर (राज.) भारत

सिंह। खुमान सिंह ने अपने पिता के साथ कई युद्धों में भाग लिया और अपने युद्ध कौशल का प्रदर्शन किया। बुन्देलखण्ड के महाराजे इनकी युद्ध निपुणता से अत्यंत प्रभावित थे। चूँकि इन्होंने बुन्देलखण्ड के राजाओं की कई युद्धों में सहायता की थी। अत: पन्ना तथा अजयगढ़ के राजाओं ने खुमान सिंह को 1796 ई. में जागीरें भी प्रदान की थी।10 मनकहरी ग्राम में निवास के लिये इन्होने एक सुदृढ़ गढ़ी का निर्माण भी कराया था जिसके भग्नावशेष आज भी देखने को मिलते हैं। ' स्वतंत्रता संग्राम के अमर सेनानी वीर रणमत सिंह' पुस्तक के लेखक श्री रत्नाकांत का मानना है कि यह गढ़ी 150 फीट लम्बी, 120 फीट चौड़ी ओर 20 फीट ऊँची थी तथा दीवाल 3 फीट मोटी थी। चारों कोनों में चार बुरजे बने थे, जिनमें बैठकर युद्ध करने की सुविधा थी तथा इसके चारों ओर गहरी खाई खुदी हुई थी, जिसमें पानी भरा रहता था। इसका मुख्य द्वार उत्तर की ओर था। यह निकास द्वार 7 फीट लम्बा, 10 फीट ऊँचा है तथा चौखट पत्थर की बनी है। दरवाजे के ऊपर तिनदुअरिया है, यह जमीन से 35 फीट ऊँची है। खुमान सिंह ने रीवा के अनेक युद्धों में भी अपने शौर्य का प्रदर्शन किया था।

हठी सिंह के दूसरे पुत्र केसरी सिंह रीवा के तत्कालीन शासक अजीत सिंह के यहाँ आ गए थे। इनको हटिया ग्राम (जिला-सतना) जागीर में मिला था इनके अधिकांश वंशज रीवा राज्य की सेवा में रहे।

केसरी सिंह बड़े प्रतापी योद्धा थे। इनकी पन्ना, अजयगढ़, नागौद तथा रीवा में हिस्सेदारी थी। हालांकि 'रीवा राज्य दप्रण' जो कि जीतन सिंह द्वारा लिखा गया है, में उल्लेख किया गया है कि इन लोगों के पास 5 लाख वार्षिक आमदनी वाली जागीर थी। किन्तु इनके वर्तमान वंशज श्री विक्रमजीत सिंह का मानना है कि संभवत: इतनी रकम की वसूली के ठेके खुमान सिंह और केसरी सिंह लिया करते थे न कि इतनी आय की जागीरें इनके पास थी। खुमान सिंह ने अपनी एक मात्र पुत्री का विवाह नागौद नरेश के साथ कर दिया था और इस विवाह के उपरान्त ही इन्होंने नागौद की जागीर का परित्याग कर दिया था, क्योंकि हिन्दुस्तानी परम्परा के अनुसार लड़की ब्याह देने के उपरान्त नागौद राज्य का पानी भी वे ग्रहण नहीं कर सकते थे।

इसी वीर सेनानी केसरी सिंह के सात पुत्र हुये जो क्रमानुसार (1) बलभद्र सिंह (2) शिवराज सिंह (3) कमोद सिंह (4) कंधर सिंह (5) महीपत सिंह (6) सावन्त सिंह (7) भूप सिंह थे।

यहाँ यह बात स्पष्ट कर देना मैं उचित समझता हूँ कि कई अन्य लेखकों ने महीपत सिंह को खुमान सिंह का पुत्र बतलाया है। किन्तु रहमान अली द्वारा लिखित 'तोहफा-ए-खान बहादुर' नामक पुस्तक जो कि शासकों के वंश पर पूर्ण विवरण लिपिबद्ध करने के लिये लिखी गयी थी, में स्पष्ट लिखा है कि महिपत सिंह, केसरी सिंह के पाँचवें नम्बर के पुत्र थे।

सन् 1802 ईसवी में बघेलों और गहरवारों के मध्य सितलहा की लड़ाई में केसरी सिंह के बड़े पुत्र बलभद्र सिंह बुरी तरल घायल हो गये थे। रीवा राज्य की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए प्रख्यात नैकहाई के युद्ध में शिवराज सिंह ने 1796 ई. में बड़ी वीरता का परिचय दिया व शहीद हो गए। इस उपलक्ष्य में रीवा के महाराजा अजीत सिंह ने धौचट ग्राम उन्हें मुड़वार में दिया था। कमोद सिंह ने भी नैकहाई के युद्ध में अपूर्व शौर्य व बल का प्रदर्शन किया था। जिसके उपलक्ष्य में कमोद सिंह को धोधर , रीवा में रहने के लिए एक भवन दिया गया जिसके अवशेष आज भी विद्यमान हैं। कंधर सिंह (कुंवर सिंह) तथा सावंत सिंह को कठवरिया ग्राम रीवा की ओर से पवाई में मिला था। भूप सिंह ने भी नैकहाई के युद्ध में भाग लिया। सावंत सिंह के पुत्र प्रतिपाल सिंह हुए तथा प्रतिपाल सिंह के पुत्र अजीत सिंह पैदा हुए। इन्हीं अजीत सिंह ने अपने चाचा रणमत सिंह को 1857 के विद्रोह में अभूतपूर्व सहयोग प्रदान किया था तथा स्वयं भिल्लासांय की लड़ाई में शहीद हुए।

(iii) रणमत सिंह का वंश वृक्ष – वीर सेनानी केसरी सिंह के पांचवे नम्बर के पुत्र महिपत सिंह थे। ये भी अत्यंत ही साहसी योद्धा थे। इनके दो पुत्र हुए (i) रणमत सिंह (ii) जबर सिंह।

महिपति सिंह काफी स्वाभिमानी प्रकृति के योद्धा थे। इन्होंने अपने बड़े भाई कमोद सिंह से अलहदा होकर रीवा के पुश्तैनी मकान से एक फर्लांग दूर पूर्व में घोघर में ही एक नये घर का निर्माण किया। 160-70 वर्ष पुराने इस प्राचीन मकान में ठा. रणमत सिंह के वशंज लाल विक्रमजीत सिंह आज भी यहीं रहते हैं। महिपति सिंह रीवा महाराजा विश्वनाथ सिंह की सेवा में कर्मचारी थे। सेवाकाल के ही दौरान 1836 ई. में महाराज से महिपति सिंह का मनोमालिन्य हो गया। मनोमालिन्य का कारण था राज्य के अधिकारियों द्वारा यह आपत्ति की जाना कि, राज्य की सेवा के लिए उनका निजी घोड़ा अनुपयुक्त है। इस बात को लेकर विवाद इतना बढ़ गया कि महिपति सिंह महाराज से रूष्ट होकर प्रतिज्ञा कर बैठे कि मैं इस राज्य में पानी तक नहीं पिऊँगा। अतएव अपने परिवार को साथ लेकर, नौकर-चाकरो और माल असबाब के साथ वे रीवा राज्य से बाहर निकल गए। संभवत: राज्य के पश्चिमोत्तर छोर पर स्थित सिमरिया होते हुए पन्ना राज्य में चले जाने का उनका इरादा था। सिमरिया लाल जगमोहन सिंह का इलाका था जो रीवा महाराजा के निकटतम भाई बन्धु थे। किन्तु लाल जगमोहन सिंह से रीवा महाराज का पुराना वैमनस्य चला आ रहा था। यहाँ तक कि बाँदा के नवाब अली बहादुर को रीवा पर चढ़ाई करने और यशवंत राव नायक के सेनापत्तित्व में फौज को नैकहाई तक आक्रमण करने के लिए प्रेरित करने में लाल जगमोहन सिंह का बहुत बड़ा हाथ था। यशंवत राव नायक ने उन्हें अपना दामाद बनाने और अपनी पुत्री को उनसे ब्याह देने का निश्चय कर लिया था। चूंकि महिपति सिंह महाराजा रीवा से नाराज होकर जा रहे थे इसलिए रीवा महाराजा को नीचा दिखानें के लिए भी जगमोहन सिंह नें महिपति सिंह को अपने यहॉ रोक लिया और बियारी ' करने का आग्रह किया। महिपति सिंह ने यह शर्त रखी कि मैं खाना तभी खाऊॅगा जब कि मेरी आजीविका के लिये कोई मुस्तकिल (स्थाई) साधन दिया जाय। अस्तु लाल जगमोहन सिंह ने उन्हें वृत्ति के तौर पर एक गॉव कुम्हरा (जिला रीवा) देना स्वीकार किया । इस गाँव में इनके उत्तराधिकारी आज भी रहते हैं व खेती कर रहे है। जगमोहन सिंह द्वारा प्रदत्त वृत्त कुम्हरा के पाट की प्रतिलिपी श्री विक्रमजीत सिंह बघेल, जोकि कुम्हरा में ही रहते है, के पास देखी जा सकती है। कोठी की पैत्रिक पवाई राज्य से हिस्सा बॉट में इन्हें मनकहरी गाँव भी मिला हुआ था जहॉ पर कि इनका स्वामित्व बरकरार था। मनकहरी की सम्पत्ति का उपभोग गदर के समय तक तथा सम्भवत: उसके बाद के कुछ वर्षो तक रणमत सिंह और जबर सिंह करते रहे। किन्तुं जब कोठी राज्य में आना जाना छूट गया तो मनकहरी गॉव राज सात कर लिया गया। जबर सिंह के दो पुत्र हुये (1) रणजीत सिंह (2) शत्रुदमन सिंह।

रणजीत सिंह के पुत्र हुए उदय सिंह तथा इन्हीं उदय सिंह के पुत्र हैं,

लाल विक्रमजीत सिंह जो कि आजकल घोघर नदी के किनारें स्थित रणमत सिंह के पुराने मकान में निवास कर रहे हैं। 1857 के विद्रोह के समय इसी मकान में लाल रणमत सिंह की माता यहाँ रहनें के लिए आयीं थीं तथा शहीद होनें से पूर्व ठाकुर रणमत सिंह ने इसी मकान में अपनी माता से अंतिम भेंट की थी। विक्रमजीत सिंह जी के पास से मुझे उनके वंश के सम्बन्ध मे प्रमाणिक जानकारी तथा आसवर्न द्धारा उनकी माँ को रीवा प्रवास की अनुमति आदि के ठोस प्रमाण मिले है। जिसकी प्रतिलिपि परिशिष्ट में सलंग्न है।

रणमत सिंह का वंशवृक्ष निम्नानुसार है –

- महिपति सिंह
  - रणमत सिंह
    - सुभाव कुँवरि (पुत्री)
      - रणजीत सिंह
        - उदय सिंह
          - विक्रमजीत सिंह
            - धर्मजीत सिंह
  - जबर सिंह
    - शत्रुदमन सिंह
      - विजय सिंह
      - जय सिंह
      - निरंजन सिंह
      - मदन सिंह

****

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. विक्रम सिंह बघेल – रीवा के बघेल राज्य का पर राष्ट्र संम्बन्ध (1360–1859)